

મળવાનું ઠેકાણું :

શ્રી અ. ભા. શ્વે. સ્થાનકવાસી
જેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ
ગ્રીન લોજ પાસે, રાજકોટ.

સુધક

સુધક

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત : ૨૪૮૩

વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૩

ઈસ્વી સન : ૧૯૫૭

સુધક

મણિલાલ છગનલાલ શાહ
ધી નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ
લીકાંટા રોડ : : અમદાવાદ

શ્રી-વધ્માન-અમણ-સંઘના આચાર્યશ્રી

પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આ પે લ

સ મ મ તિ પ ત્ર

*

ઉપરાંત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

ખીજ સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યો

*

તે મ જ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા કેલેજના પ્રોફેસરો

તે મ જ

શાસ્ત્રજ્ઞ શ્રાવકોના અભિપ્રાયો

કે. શ્રીન લોજ પાસે
ગરેડીયા કુવારોડ
રાજકોટ : સૌરાષ્ટ્ર

}

શ્રી. અખિલ ભારત ઋવે. સ્થા. જૈન.
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

जैनागमवेत्ता जैनधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामजी
महाराज तथा न्याय व्याकरण के ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००८
श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ
श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाणपत्र निम्न प्रकार है—

सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई
पुण्णमासी १५ सुक्कवारो छुहियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरिउवा-
सगमुत्तस्स अगारधम्मसंजीवणीनामिया वित्ती पंडियमूलचंदवासाओ अज्जोवंतं
सुया, समीईणं, इयं वित्ती जहाणामं तहा गुणेवि धारेइ, सच्चं, अगाराणं तु इमा
जीवण (संजमजीवण) दाई एव अत्थि । वित्तिकत्तुणा मूलमुत्तस्स भावो उज्जु-
सेलीओ फुडीकओ, अहय उवासयस्स सामण्णविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,
कम्मपुरिसट्ठवाओ समणोवासयस्स धम्मददत्ता य, इच्चाइविसया अस्सि फुडरीइओ
वण्णिया, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठुप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिट्ठिओवि
सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्ठमाण-भरहवासस्स य कत्तुणा विसय-
प्पयारेण चित्तं चित्तितं, पुणो सक्कवपाढीणं, वट्ठमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए
भासीणं य परमोवयारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तुणो एयं कज्जं
परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेयजणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुत्तस्स अवलोयणमईव
लाहप्पयं, अविउ सावयस्स तु (उ) इमं सत्थं सव्वस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो
अणेगकोडीसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अच्चंतपरिस्समेण जइजणतोवरि असीमो-
वयारो कडो, अहय सावयस्स वारस नियमा उ पत्तेयजणस्स पढणिज्जा अत्थि,
जेसिं पहावओ वा गहणाओ आया निव्वाणाहिगारी भवइ, तहा भवियव्वयावाओ
पुरिसकारपरक्कमवाओ य अवस्समेव दंसणिज्जो, किंवहुणा इमीसे वित्तीए पत्तेय-
विसयस्स फुडसदेहिं वण्णणं कयं, जइ अन्नोवि एवं अम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं
भवेज्जा तथा नाणस्स चरित्तस्स तहा संघस्स य खिप्पं उदयो भविस्सई, एवं हं मन्ने॥

भवईओ-

उवज्झाय-जइणमुणि-आयाराम, पंचनईओ,

सम्मतिपत्र

(भाषान्तर)

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज-

शुक्ल (पूर्णिमा) शुक्रवार बुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्द्रजीने पण्डितरत्न मुनि श्रीधासीलाल-
जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका
पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम-
तथागुणवाली-अच्छी बनी है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री-
संयमरूप जीवनको देनेवाली ही है। टीकाकारने मूलसूत्र के भावको
सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा आवकका सामान्य धर्म क्या है ?
और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे
बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप कर्म-पुरुषार्थ-वाद और आवकको
धर्मके अन्दर दृढता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण
इसमें भलीभांति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती
है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीर के समय जैनधर्म
किस जाहोजलाली पर था ? और वर्तमान समय जैनधर्म किस
स्थितिमें पहुंचा है ? इस विषयका तो टीका चित्र ही चित्रित कर दिया
है। फिर संस्कृत जाननेवालों को तथा हिन्दीभाषाके जाननेवालोंको
भी पूरा लाभ होगा, क्यों कि टीका संस्कृत है उसकी सरल हिन्दी
कर दी गई है। इसके पढ़नेसे कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि
वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकार का
यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्रको मध्यस्थ भावसे पढ़ने-
वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें आवकों (गृहस्थों) का
तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकार को कोटिशः धन्यवाद दिया
जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैन-जनताके ऊपर असीम
उपकार किया है। इसमें आवकके बारह नियम प्रत्येक पुरुषके पढ़ने
योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा
मोक्षका अधिकारी होता है। तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार-

पराक्रमवाद हरएकको अवश्य देखना चाहिये। कहां तक कहें इस टीकामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे बताये गये हैं। हमारी सुसंप्राय (सोई हुईसी) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान चारित्र तथा श्रीसंघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूं—

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी.



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८
श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं. मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रके
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज कृत श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका अतिरमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थसे तैयार किया है सो आप धन्यवादके पात्र हैं। आप जैसे व्यक्तियोंकी समाजमें पूर्ण आवश्यकता है। आपकी इस लेखिनीसे समाजके विद्वान् साधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको अत्यानन्द हुआ, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाजमें भी ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे लिये बड़े गौरवकी बात है।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर.



श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रकी 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर
जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय
जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका

सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीकावाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनि श्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म. ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रामाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलों को सरल बनाने में काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूंगा कि ये वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्रमें दी गई अनमोल शिक्षायों से अपने जीवन को शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।

श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्ट द्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं पहुंचने पर समाचार देंगे।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म. ठाने ६ मुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म. सा. ठाने ४ की हमारी ओरसे वन्दना अर्ज कर मुखशाता पूर्णें।

पूज्य श्री घासीलालजी म. जी का लिखा हुआ (विपाकसूत्र) महाराज-श्रीजी देखना चाहते हैं इसलिये १ कापी आप भेजनेकी कृपा करें, फिर आप को वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहां से मिले वहां से १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देनेकी कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक

प्यारेलाल जैन

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि
श्री आत्मारामजी महाराज (पंजाब)का आचाराङ्गसूत्रकी
आचारचिन्तामणि टीका पर

सम्मति-पत्र ।

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री घासीलालजी (महाराज) की बनाई हुई श्रीमद् आचाराङ्ग सूत्रके प्रथम अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका-न्याय सिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रम से अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित रूप से मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक प्रतिपादन अधिक मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि-जिज्ञासु महोदय इसका भली-भांति पठन द्वारा जैनागम - सिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को हर्षित करेंगे, और इसके मनन से दक्ष जन चार अनुयोगों का स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा आचार्यवर्य इसीप्रकार दूसरे भी जैनागमों के विशद विवेचन द्वारा श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उपकार कर यशस्वी बनेंगे ।

वि. सं. २००२

मृगसर सुदि १

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम

लुधियाना पंजाब शुभमस्तु



बीकानेरवाला समाजभूषण शास्त्रज्ञ भेरूदानजी शेठिआनो अभिप्राय



आप शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।
इससे जैनजनता को काफी लाभ पहुँचेगा ।

(ता. २८-३-५६ना पत्रमांथी)

॥ श्रीः ॥

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-जैनाचार्य-पूज्य-श्री आत्मारामजी-
महाराजानां पञ्चनद-(पंजाब)स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा-
मर्थबोधिनीनामटीकायामिदम्-

सम्मतिपत्रम् .

आचार्यवर्यैः श्री वासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थ-
बोधिनीनाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः सरला
सुबोधिनी च तथा सारवर्त्याप । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सुभिर्निर्वाण-
पदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञानदर्शन-चारित्र्याणि
सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुक्विर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय जैना-
गमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च
वृत्तीर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां
सूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ।”
इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा
लुधियाना. }

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः ।

(श्री दशवैकालिकसूत्रका सम्मतिपत्र)

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

सम्मतिपत्रम्.

मए पंडियमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-मूलचन्दवासवारा पत्ता पंडिय-रयण-मुणि-घासीलालेण विरइया सक्कय-हिंदी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नाम-सुत्तस्स आगारमणिमंजूसा वित्ती अवलो-इया, इमा मणोहरा अत्थि, एत्थ सदाणं अइसयजुत्तो अत्थो वणिणओ विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती दीसइ ! आगारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुब्बं उल्लेहो कडो, तहा अहिंमाए सरूवं जे जहा-तहा न जाणंनि तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा पत्तेयविसयाणं फुडरूवेण वण्णणं कडं, तहा मुणिणो अरिहत्ता इमाए वित्तीए अवलोयणाओ अइसय-जुत्ता सिज्झइ ! सक्कयछाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दट्ठवा । अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिरयणाणं सबभावो समाजस्स अहोभगं अत्थि, किं ? उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ, अम्हकेरं साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि तेसिं पुणोवि उदओ भविस्सइ जस्स कारणाओ भविक्कप्पा मोक्खस्स जोग्गो भवित्ता पुणो निव्वाणं पाविहिइ अओहं आगारमणि-मंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो धन्नवायं देमि— ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन-
शुक्लत्रयोदशी-मङ्गले
(अलवर स्टेट)

इइ-
उवज्झाय-जहण-मुणी, आगारामो
(पंचनईओ)

ऐसेही :—

मध्यभारत सैलाना-निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी श्रम-
णोपासक जैन लिखते हैं कि :—

श्रीमान् की की हुई टीकावाला उपासकदशांग सेवकके दृष्टि-
गत हुआ, सेवक अभी उसका मनन कर रहा है यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग-
सुन्दर एवम् उच्चकोटि का उपकारक है ।

निरयावलिका का सम्मतिपत्र,
आगमवारिधि-सर्वतन्त्ररवतन्त्र-जैनाचार्य-पूज्यश्री
आत्मारामजी महाराजकी तरफ का आया हुवा

सम्मतिपत्र

लुधियाना. ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्दजी पानाचन्दजी । सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला ! निरयावलिका विषय पूज्यश्रीजीका स्वास्थ्य ठीक न होने से उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है आपको भेज रहे हैं । कृपया एक कोपी निरयावलिकाकी और भेज दीजिये और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहें !

भवदीय गुजरमल-यन्त्रवंतराय जैन

॥ सम्मतिः ॥

(लेखक : - जैनमुनि पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराज)

सुन्दरबोधिनीटीकया समलंकृतं हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम् , संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संस्कृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर - पूज्यश्री घासीलालजी महाराजानां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो धन्यवादाहर्हाश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्री कन्हैयालालजी मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादाहर्हा स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमदिना समलंकृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्यास्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफलयिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।

श्री उपासकदशज्ञ सूत्र परत्वे जैन समाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण
महान् विद्वान् संतोऽपि तेमज विद्वान् श्रावकोऽपि सम्मतिओ समर्पी
छे तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे.

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमा का पत्र, श्रुतज्ञान के
भंडार आगमरत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००७ श्री उपाध्याय श्री
आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य
श्री मुनि हेमचन्द्रजी महाराज.
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डित रत्न श्री
१००८ श्री भागचंदजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डित रत्न श्री १००७
श्री त्रिलोकचंदजी महाराज.
- (३) खिचन-से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८
श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) वालाचोर-ता. १४-११-३६ का पत्र, परम प्रसिद्ध भारतरत्न श्री
१००८ श्री शतावधानी श्री रतनचंदजी महाराज.
- (५) बम्बई-ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री
कवि नानचंदजी महाराज.
- (६) आगरा-ता. १८-१२-३६, जगत् बल्लभ श्री १००८ जैनदिवाकर
श्री चौथमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी
श्री प्यारचन्दजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद-(दक्षिण) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थिरपदभूषित
भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज तथा प्रसिद्ध वक्ता श्री १००७
श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर-ता. २७-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांत-
स्वभावी श्री १००८ श्री पूज्य श्री खूबचन्दजी महाराज.
- (९) अम्बाला-ता. २९-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजावकेशरी श्री
१००८ श्री पूज्य श्री रामजी महाराज.

(१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.

(११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ सुश्रावक श्रीयुक् माधवलालजी.



ता० २५-११-३६

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुवा उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहां विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांती में विराजमान हैं आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी बन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछे आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मती मंगाई उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमान में स्थानकवासी समाज में अनेकानेक विद्वान मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचने का साहस जैसा घासीलालजी महाराज ने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों हैं संस्कृत प्राकृत हिन्दी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं जैन समाज में ऐसे विद्वानोंका गौरव बढ़े यही शुभ कामना है आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा ।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती



आगरा से:—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्धवक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानि गणीजी श्री प्यारचन्दजी महाराजने इस पुस्तकको अतीव पसन्द की है ।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खचिन से लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूं।

परन्तु :—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की वास्तव में ऐसे उत्तम व सबके समझने योग्य ग्रन्थों की बहुत आवश्यकता है और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा सकते हैं—ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्रकाशसे यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकार में दीपावली का अनुभव करती हुई महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति में अग्रसर होती रहेगी।



ता. २९-११-३६

अम्बाला (पंजाब)

पत्र आपका मिला श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी-रामजी महाराज की सेना में पढ़ कर सुना दिया। आपकी भेजी हुई उपासकदशाद्र सूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरु की एक २ प्रति भी प्राप्त हुई। दोनों पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं। ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है। इन पुस्तकों से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है। आपका यह पुरुषार्थ सराहनीय है।

आपका

शशिभूषण शास्त्री

अध्यापक जैन हाई स्कूल

अम्बाला शहर

शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्ववारिधि, धैर्यवान् श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज साहेबने सूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग सूत्रकी टीका लिखने में बड़ा ही परिश्रम किया है । इस समय इस प्रकार प्रत्येक सूत्रों की संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्धहिन्दी अनुवाद होने से भगवान् निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रस का लाभ मिल सकता है ।



वालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पंडित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि :—

उत्तरोत्तर जोतां मूल सूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कर्यो छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरुरी लेवा जेवुं छे, बली करांचीना श्री संवे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा बजावी छे.



बम्बई शहरमें विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है ।



खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पंडित रत्न मुनिश्री समर्थमलजी महाराज श्री फराते हैं कि—विद्वान् महात्मा पुरुषोंका प्रयत्न सराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गसूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुन्दरता से लिखी है ।



श्री वीतरागाय नमः॥

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्म दिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जै-
नाचार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणवन्दन स्वीकार हो ।

अपरञ्च समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर
शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा
कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी जैनाचार्य
ने नहीं किया ।

आपने स्थानकवासीजैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह
कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना
करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्ति प्रदान
करें ता कि आप जैन समाज के ऊपर और भी उपकार करते रहें और
आप चिरञ्जीव हों ।

हम हैं आप के मुनि तीन

मुनि सत्येन्द्रदेव—मुनि लखपतराय—मुनि पद्मसेन

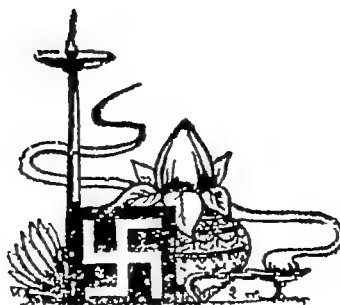


इतवारी बाजार
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराजश्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रों का सेट देखा और कह मारमिक स्थलोंको पढा, पढ़ कर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी।

वास्तव में मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी महा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घर में होना आवश्यक है।

साहित्यरत्न
मोहनमुनि सोहनमुनि जैन



શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રનું સમ્મતિ પત્ર

શ્રમણ સંઘના મહાન આચાર્ય આગમ વારિધિ સર્વતન્ત્ર સ્વતંત્ર જૈનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.



મે તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ વ્યાસ (નાગૌર મારવાડવાલા) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ધાસીલાલજી મુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું આ ટીકા સુદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ સારી રીતે વિશેષભાવ લઈને સમજાવવામાં આવેલ છે.

તેથી વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે પરમ ઉપકાર કરવાળી છે. ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો સારો ઉલ્લેખ કરેલ છે. જે આધુનિક-મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, હયામાં પાપ સમજે છે તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે. આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.

આ વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત છાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદરચ્છેદ સુખોપદાયક બનેલ છે.

પ્રત્યેક જ્ઞાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું. અમારી સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિ રત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે સુમત્રાય—સુતેલો સમાજ અને હુમત્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થશે. અમો વૃત્તિકારને વારંવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૯૦ કાલ્પન શુકલ
તેરસ મંગળવાર
(અલવર સ્ટેટ)

૪૪
ઉવજાગ્ય જઈણ
મુણી આચારામો
પંચનઈઓ

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંતળકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદણ મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલા હતા ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.

૪

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજદ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારનું જે કાર્ય થઈ રહ્યું તે કાર્ય જૈન સમાજ તેમાં ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીજૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતિની જડને મજબુત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ ભોગ દેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ ભગીરથ કાર્ય જલ્દીથી જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

૫

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના

સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવરશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છની સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમાં હશેો નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્માશ-ધનમાં લીન હશેો.

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી ભાવના છે દશવૈકલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે ટીકા ખૂબ સુદર, સરળ અને પંડિતજનોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સાથે સાથે ટીકા વિનાના મુળ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે અને પૂજ્ય આચાર્ય ગુરૂદેવને આંખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સાફ છે એજ.

આસો શુક ૧૦, મંગળવાર તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઇચ્છતો,
દયા મુનિના પ્રણિપાત.

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પંડિત રત્ન ભાઈચંદ મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી

રાણપુર તા. ૧૬-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર પંડિત રત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખસમાધીમાં હશે.

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુંદર થઈ રહ્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ. આપના પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાંક સૂત્રો જોયાં. સુંદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે સૂત્રપ્રકાશનનું કામ ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને લવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળપ્રદ્યાચારી
પૂં શ્રી ભાઈચંદ મહારાજની
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના
પાયવંદન સ્વીકારશે.

*

તા. ૧૧-૫-૫૬

વીરમગામ

ગચ્છાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના આત્માર્થી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય ખીચનથી આવેલ તા ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્ધૃત.

પૂજ્ય આચાર્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર અને સરળ ભાષામાં થાય છે. તે સાહિત્ય; પંડિત મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ, સમય ઓછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શક્યા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય જોયું છે, તે બહુ જ સારું અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને અનુરૂપ લાગે છે. આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં સ્થાનકવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકૂળ છે. આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ
મુ. ખીચન.

*

લીબડી સંપ્રદાયના સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામા સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમ પદનાં અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ શાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમા પણ કરી રહ્યા છે તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે. વંદનીય છે, તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ધણી પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે જેમ પૂજ્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાનપ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમા સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સુચના છે કે:—

શાસ્ત્રોદ્ધારક પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ધાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ કરી રહેલ છે. તેમાં સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે. તેને પહોંચી વળવા માટે સાઈ સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સુચના છે કે:—શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા બે ત્રણ જણાઓ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેળવેશ બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જે કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે. વ્યાપારીઓ, ધધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો સલાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકુળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ સરલતાથી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આતરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમાં એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઈચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાઓ વિનંતી કરી અમદાવાદ પધારવા, અને ત્યાં અનુકુળતા મુજબ બે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમાં જામજોધપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે, તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક.

કરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક દેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને દીર્ઘાયુ રાખી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે. ॐ અસ્તુ

ચાતુર્માસ સ્થળ, લીંબડી	}	લી
સાં. ૨૦૧૦ શ્રાવણ વદ ૧૩ ગુરુ.		સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

*

શ્રી વર્ધમાન સંપ્રદાયના પૂજ્ય શ્રી પુનમચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશારદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે. તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે, આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ઘણી જ સુદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી યુક્ત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરે એ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આવા મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલૌકિક છે. તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું ભગીરથકાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એ જ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ	}	મુનિ પૂર્ણચંદ્રજી
તા. ૨૨-૪-૫૬ રવિવાર		
મહાવીર જયંતિ		

*

ખંભાત સંપ્રદાયના મહાસતી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લગતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલભાઈ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ સાહેબ અગિલ ભારત ષ્વેન સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

મુ. અમદાવાદ

અમો અત્રે દેવગુરૂની કૃપાએ યુગરૂપ છીએ. વિ. મા આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પેઢીનાં સૂત્રોમાથી ઉપાસકદશાંગસૂત્ર, આચારાંગસૂત્ર, અનુત્તરોપપાતિકસૂત્ર

દશવિકાલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણું જ લાભદાયિક છે. તે વાંચન ઘણું જ સુંદર અને મનોરંજન છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અઘાત પુરૂષાર્થે કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણું લાભનું કારણ છે.

હંસ સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના લેહથી નિખાલસ ભાવનાઓ અવલોકન કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. માટે દરેક લબ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતા-પોતાના ઘરમાં વસાવાની સુદર તકને ચુકશો નહિ. કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરાને પુઠીરૂપ સૂત્રો મળવાં બહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યને આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરણું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ

લી. શારદાબાઈ સ્વામી

ખંભાત સંપ્રદાય.

*

બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ અં ભં શ્વેં સ્થાં જૈનશાસ્ત્ર ઉદ્ધાર સમિતિ

સું રાજકોટ

અત્રે ખીરાજતા ગું ગુંના લંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આઢિઠાણાં બન્ને સુખશાતામાં ખીરાજે છે, આપને સુચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ ભાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં તે સૂત્રો તમામ આઢોપાન્ત વાંચ્યાં મનન કર્યા અને વિચાર્યા છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખુબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઝરણાઓથી આત્મરૂપ વાડીને વિકસિત કરશે. ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દાન લેવ્યું આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશે તેવી આશા છે.

એન્જ લિ. બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી
મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામી
ના ફરમાનથી લી જોડીદાસ ગણેશભાઈ—ધધુકા
સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ

*

અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન
પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં લાખાંતરો કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાસ થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી હિંદી લાખાઓના નિબળાત છે, એ એમનો ટુક પરિચય કરતા સહજ જણાઈ આવે છે. શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના, શિષ્ય વર્ગોના અને વિશેષમા ત્રણ પંડિતોનો સહયોગ મળ્યો છે, તે જોઈ મને આનંદ થયો. સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેસરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી સમાજમાં વિદ્વત્તા ઘણી ઓછી છે, તે દિગંબર મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા સમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના લય વગર, કહી શકું. પૂ. મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો સારા આપવામાં આવ્યા છે, લાખા શુદ્ધ છે એમ ચોક્કસ કહી શકું છું, ગુજરાતી લાખાતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલા છે. મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના લાખાંતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગંજ, વડોદરા
તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬

કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ
એમ. એ.

મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં. આ સૂત્રો ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે અને સાથે સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે સંસ્કૃતટીકા અને ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એકસરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર ગ્રંથોમાં પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલાં ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વદ્જન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખિનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજી ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજાં ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાંજ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રી આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ

સોપ્રીયા કોલેજ, મુંબઈ

*

રાજકોટની ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

જગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, શ્રી વિપાકશ્રુત વિ મેં જોયાં.

આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબુ જણાઈ આવે છે. એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અબળાણી નથી. આપણે બાણીએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટિના છે. તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, આટલા ગહન અને સર્વશાસ્ત્ર સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂઠાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટિના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણાં અહોભાગ્ય છે. યત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવના ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલાં સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જ્ઞાસુ, સુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધારણ માણસ સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ, મરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સંકળાયેલા જોઈએ છીએ એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કદપના કરી શકાય તેમ છે તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રી આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે- મને આશા છે કે જો દરેક સુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલો શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો. રસિકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી
એમ. એ. એલ. એલ. ખી.
ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજ
રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર)

*

મુંબઈ અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ લિનાસર કોન્ફરન્સ તથા સાધુ સંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ

હાલ જે વખતે શ્રી. શ્રવેતાંબર સ્થાનકવાસી જૈન સઘ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત દીર્ઘદૃષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદ્દી અધિવેશમાં સર્વાનુમતે સાહિત્ય મંત્રી નીમ્યા છે તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે અ. ભા. શ્રવે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ થઈ રહ્યું છે. જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચાર મંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે અને છેલ્લામાં છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એમ. એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે તે શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટીના કામને આ સંમેલન તથા કોન્ફરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પડિતની અને નાણાંની-પોતાની પાસેના ફંડમાંથી અને જાહેર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઇચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કોન્ફરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કોઈ ત્રુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાનિધ્યમાં જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલ્લે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે જોવા પ્રમુખ સાહેબને ભલામણ કરે છે.

(સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬)

*

**સ્વતંત્ર વિચારક અને નિહર લેખક ‘જૈન સિદ્ધાંત’ના તંત્રીશ્રી
શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય**

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજને સૌરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના એક પત્રમાં મને લખેલું કે—

“આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ જોવામાં આવતા નથી. લાંબી તપાસને અંતે મેં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા. શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા. શ્રાવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાંચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા. એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી યથાર્થ જ હોય એમા

નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ છે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ઘાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજે શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે. ત્યારે સામાન્ય હિંદી વાંચકને હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આપું સૂત્ર સરળતાથી સમજાય જાય છે.

કેટલાકનો એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું કામ થઈ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. બીજા કોઈપણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ ભગવાન મહાવીરે તે વખતની લોક ભાષામાં (અર્ધ માગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવાં તેમજ સમજવામાં ઘણાં સરળ છે.

માટે કોઈપણ વાંચકને એનો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાંખવો અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને ચૂકવું નહિ. એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવાં.

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું છે અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે બીજાં છ સૂત્રો લખાયેલ પૃથ્થાં છે, જે સૂત્રો-અનુયોગદ્વાર અને ઠાણાંગ સૂત્રો-લખાય છે તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઇચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમનાં સૂત્રો ધરમા વસાવે એમ ઇચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાન્ત’ પત્ર - મે ૧૯૫૫

શ્રુત ભક્તિ

(પૂં આચાર્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મં સાં ની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર)

દ. સં. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

તાં ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય, જ્ઞાનદિવાકર પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધ, સ્વપર કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે.

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી, પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજેએ શ્રુત પરપરાએ સાચવી રાખ્યો શ્રુતપર-પરાથી સચવાતું જ્ઞાન જ્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવદિગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધ માગધી પાલી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા મુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે, પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આંખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને સત્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સફલાચે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે સત્ સંકલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરખ વહેતી કરી છે. આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે. અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે. અને સંસાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાન કાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્ય ધર્મીઓ હબરો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિંદુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેકડો નહિ પણ હબરો ટીકા ગ્રંથો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઈબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ

ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી, તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ઓછી કિંમતે વેચી ધર્મ-સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લિમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રન્થ કુરાનનું અનેક ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે. આપણે પૈસા પરનો મોહ ઉતારી લગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ. અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાંપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. સમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૫૭ ભરી સમીતીના સભ્ય બનવું જોઈએ. ધાર્મિક અનેક ખાતાંઓના મુકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું— જ્ઞાન પ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો—લગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ. જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા જૈન તા. ૫-૭-૫૬)

*

શ્રી. અ. ભા. ૧વે. સ્થા જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખશ્રી વગેરે. રાણપુર પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્ય ભૂમિ પર ન્યારથી સાત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનિત પગલા થયાં છે ત્યારથી ઘણા લાંબા કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે. અને જે પ્રવચનની પ્રલાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમો સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાલ લે છે, મને તો સમન્વય છે કે સાધુજી છઠે ગુણસ્થાનકે હોય છે. પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાત્ર-સાત સાધુઓ જો સ્થાનકવાસી જૈનસમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતા જરાએ વાર ન લાગે. સમાજ-કાશમાં સ્થા. જૈન સંપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળહળી નીકળે પ. ..ણુ વો દિન....

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને મારી એક નમ્ર સુચના છે કે—પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે; અને કાર્યપ્રણાલિકા ચુવાનોને શરમાવે તેવી છે. તેમને ગામોગામ વિહાર કરવા અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણી શારીરિક-માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે, તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે ન્યાના શ્રાવકો ભક્તિ વાળા હોય. વાડાનાં રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય એવા કોઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રબંધ કરવો જોઈએ. ખીલત કોઈ એવા સ્થળની અનુકુળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડતા કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપું છું. ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમના સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશોજી. લી. સદાપંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

રૂ. ૧૦,૦૦૦) આપનાર આદ્ય મુરખખીશ્રી,
સમિતિના પ્રમુખ; દાનવીર શેઠશ્રી,



શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ.

સમિતિના પ્રમુખ અને આદ્ય સુરબ્ધીશ્રી શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસનો ડુંક પરિચય

*

શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસનો જન્મ ઈ. સ. ૧૯૦૧ નાં ઓગસ્ટની ત્રીજી તારીખે તેમનાં મોસાળ ચોરવડોદરામાં થયો હતો.

વિદ્યાર્થી અવસ્થામાંજ એમનામાં રહેલી તીવ્ર બુદ્ધિ જુદી તરી આવતી હતી. ઈ. સ. ૧૯૧૯ માં અમદાવાદ કેન્દ્રમાંથી મેટ્રીક પાસ થનાર પ્રથમ દસ વિદ્યાર્થીઓમાંના તેઓ એક હતાં. ત્યારબાદ ઈ. સ. ૧૯૨૩માં અર્થશાસ્ત્રનો વિષય લઈ તેઓ B. A. થયા. એ જમાનામાં બહુ થોડાં ધનિક કુટુંબો ઉચ્ચ અભ્યાસમાં રસ લેતા હતા

એજ્યુએટ થયા બાદ તુરંતજ એમના ઉપર ધંધાની જવાબદારી આવી પડી. યુવાન વય, તિવ્ર બુદ્ધિ, વિશાળ વાંચન અને મનને તેમને નવીજ દ્રષ્ટિ આપી હતી અને તેમની સમક્ષ આવના ઉદ્યોગના અનેક વિકટ સવાલોને તેમણે બહુ કુશળતાથી ઉકેલવા માંડ્યા. ૧૯૪૫ માં એ અમદાવાદ મિલ માલિક મંડળના પ્રમુખ બન્યા. હિંદની તેમજ ખાસ કરીને ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રનાં વેપારનાં પ્રાણ પ્રશ્નોનાં તળપદા અભ્યાસે મિલમાલિક મંડળના પ્રમુખ તરીકેની કામગીરીને વધુ દીપાવી.

૧૯૪૮ થી હિંદી વેપારી મહામંડળના તેઓ સભ્ય છે અને ૧૯૫૪-૫૫ અને ૧૯૫૫-૫૬નાં વર્ષ માટેના દેશના આ સૌથી મોટા વેપારી મહામંડળના તેઓ અનુક્રમે ઉપપ્રમુખ અને પ્રમુખ હતા. આજે તો ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રને ખૂબજ ઉપયોગી નિવડેલી તેમની અસાધારણ શક્તિઓને દેશવ્યાપી ક્ષેત્ર મળ્યું છે.

૧૯૩૮-૩૯માં ઇન્ટરનેશનલ લેબર ઓર્ગેનિઝેશન (I. L. O.)માં ભાગ લેવા ગયેલ ભારતીય પ્રતિનિધિ મંડળના તેઓ સરકાર તરફથી નિયુક્ત થયેલ સલાહકાર હતા. ૧૯૪૬ માં અને ૧૯૪૮માં બુરોલ્સ અને જીનીવા મુકામે ભરાયેલ I. L. O. માં તેઓએ માલિકોના પ્રતિનિધિ તરીકે અગત્યનો ભાગ લીધો હતો.

સામાન્ય નિયમ છે કે શ્રી અને સરસ્વતીને બહુ સંબંધ હોતો નથી. શ્રી શાંતિલાલ અને તેમનું કુટુંબ આમાં અપવાદરૂપ છે. ધનપતિ હોવા છતાં એ સાહિત્ય અને સંસ્કારિતાના પૂજક છે. એમની વિનમ્રતા અને સાદાઈ હંજુએ

એ જાળવી રહ્યા છે અનેક શિક્ષણ સંસ્થાઓ માટે આજે પણ એ પોતાની અનેકવિધ પ્રવૃત્તિઓમાંથી સમય બચાવી લે છે, એજ તેમનાં વિદ્યાપ્રેમનો સચોટ પુરાવો છે. ઉદ્યોગ તો તેમને વારસામા જ મળ્યો છે અને એ વારસાને તેમણે શોભાવ્યો છે.

એમની દૃષ્ટિ આજનાં પ્રશ્નોને વૈજ્ઞાનિક રીતે છણવાની તો છે જ પણ આવતી કાલને પણ તેઓ એ જ વૈજ્ઞાનિક અને વ્યવહારિક દૃષ્ટિથી નિહાળતાં હોય છે અને એટલે જ તો એમના સંચાલન તળે ચાલતી ચાર મિલો કાપડ ઉદ્યોગમાં સુદર પ્રતિષ્ઠા જમાવી શકેલ છે. આ ઉપરાંત જુદી જુદી વ્યાપારી પ્રવૃત્તિઓ કરતી ઘણી કંપનીઓમાં તેઓ ડીરેક્ટર તરીકે રહી યોગ્ય માર્ગ-દર્શન અને દોરવણી આપી રહ્યા છે. સૌરાષ્ટ્ર કાંઈનેન્સીયલ કોર્પોરેશનનાં તેઓ ડીરેક્ટર છે સૌરાષ્ટ્ર મિલ માલિક મંડળમાં તો તેઓ તેમની સ્થાપના થઈ ત્યારથી ઉંડો રસ દાખવે છે. હજુ હમણાં સુધી સતત પાંચ પાંચ વર્ષ સુધી તેનાં પ્રમુખપદે રહી તેમણે સૌરાષ્ટ્રના આ ઉદ્યોગની કંરેલી સેવાઓ ખરેખર અભિનંદનને યોગ્ય છે. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં તેઓ પ્રમુખ છે અને તેની પ્રવૃત્તિમાં ઘણા ઉત્સાહથી હંમેશાં મદદ કરી રહ્યા છે. આ ઉપરાંત અનેક જૈન ને જૈનેતર સામાજિક સંસ્થાઓને તેઓ સેવાઓ આપી રહ્યા છે



આદ્ય મુરબીશ્રી ભાણુવડનિવાસી શેઠ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયાનું જીવનચરિત્ર

આ સંસ્થાને રૂ. ૬૦૦૦) છ હજાર જેવી રકમનું વાતવાતમાં દાન આપનાર સ્વ. શ્રીમાન્ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયા ભાણુવડનિવાસીનું હુંક જીવનચરિત્ર અત્રે આપવા પ્રયાસ કરીએ છીએ. સૂત્રમાં તેઓશ્રીનો ફેટો આપવા માટે તેઓશ્રીની હયાતીમાં વાત થયેલ, પરંતુ તેઓ આ જાતની જાહેરાતથી વિરુદ્ધ હતા. તેમના અવસાન બાદ તેમના સુપુત્રો આગળ પણ ફેટાની માગણી કરી પરંતુ તેઓએ પણ તેમના પૂ. પિતાજીના પગલે ચાલી ફેટો આપવામાં નારાજ બતાવી. એટલે તેઓશ્રીનું હુંક જીવન આપીએ છીએ. આશા છે કે આવા ઉદાર અને વિચારશીલ મહાનુભાવના જીવનમાંથી વાચકોને ઘણું મળી રહેશે.

જન્મસ્થાન—ઘડેચી (જોખામંડળ) તા. ૨૫-૧૧-૧૮૮૫

પિતાનું નામ—વારીયા કાલીદાસ મેઘજીભાઈ

માતાનું નામ—કેસરબાઈ

અભ્યાસ—ભાણુવડ અને પોરબંદરમાં રહી ફક્ત ગુજરાતી જરૂરત પૂરતું લખ્યા

પરદેશગમન—માત્ર બાર વર્ષની વયે તેમના કાકા નથુભાઈ મેઘજીને ત્યાં જોલા ખાતે અનુલવ મેળવવા રહ્યા દરમ્યાન જોલા (શ્રી. સોમાલીલેન્ડ) જીબુટી (કેન્યા સોમાલીલેન્ડ) એડન અને ઇથીઓપીઆ તરફ પણ અનુલવ મેળવ્યો.

પ્રથમ ભાગીદારી—બુલહારમાં શ્રી. કાલીદાસ વેલજીના ભાગમાં લખ્યા પરંતુ સંવત ૧૯૬૭માં તે દુકાન વીટી લીધી અને લગ્ન માટે સ્વદેશ આવ્યા.

લગ્ન—સંવત ૧૯૬૭ માં તેમનાં લગ્ન બાબુના ગામ ગુંદા મુકામે ખૂબ જ પ્રતિષ્ઠિત કુટુંબ મહેતા સુદરજી પ્રેમજીના જ્યેષ્ઠ પુત્ર ભોવાન સુદરજીનાં સુપુત્રી મણીબેન સાથે થયાં.

પરિવાર—અત્યારે તેમના પાંચે પુત્રો શ્રી લાલચંદભાઈ, જયચંદ્રભાઈ, નગિન-દાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ અને વલ્લભદાસભાઈ એ પાંચે ભાઈઓ તેઓશ્રીનો બહેનો વ્યવહાર અને વ્યાપાર બરાબર સુયોગ્ય રીતે સંભાળી રહ્યા છે.

ભાગીદારી—લગ્ન પછી સં. ૧૯૬૮ માં પાછા પરદેશગમન થયું. શરૂમાં વસનજી નથુભાઈ કુ. ના નામથી પેઢી ચાલતી હતી તેમાં તેઓ ભાગમાં લગ્યા. તેમાં શ્રી વારીયા નથુભાઈ મેઘજી, શ્રી વારીયા નથુભાઈ મુળજી, શ્રી વારીયા હરખચંદ કાલીદાસ, દ્રેફ્ટરીયા દેવજી જીવાભાઈ તથા શા. વસનજી હીરજીભાઈ એમ પાંચ ભાગીદાર હતા તે પેઢી સંવત ૧૯૭૨ માં જુદી થઈ અને શ્રી વસનજી હીરજી કે જે સ્વયંજી આગળ વધ્યા હતા તેમણે પોતાની પેઢી શા વસનજી હીરજીના નામથી જુદી કરી અને શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી પેઢી જોલવામાં વારીયા નથુભાઈ મુળજી જેટલો જ હીસ્સો હરખચંદભાઈનો હતો.

ઉપરની પેઢી—ઉપરોક્ત નામથી એટલે કે શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી જે પેઢી શરૂ થઈ તેના પ્રાણસમા શ્રીયુત હરખચંદભાઈ તેમના જીવનના અંત સુધી રહ્યા હતા અત્યારે પણ તે નામને શ્રી નથુભાઈ મુળજી તેમજ શ્રી હરખચંદ કાલીદાસના વારસો ઝળહળાવી રહ્યા છે. દૂર દૂરના દેશાવરોમાં એકઠાઈ લગભગ ૪૫ વર્ષ થયાં કામકાજ ચાલે છે. તેના સંચાલનની દોર શ્રી હરખચંદભાઈના હાથમાં અંત સુધી રહી હતી અને તેઓશ્રીના અવસાન પછી પણ તેમના દોરેલા ચીલા ઉપર પેઢીનો વ્યવહાર સરળ રીતે અત્યારે પણ ચાલે છે અત્યારના સુકાનીઓએ પોતાના પૂર્વજ શ્રી નથુભાઈ તથા શ્રી હરખચંદભાઈના અકિત કરેલ માર્ગે પોતાની સફર ચાલુ રાખી છે અને તે સદાયે અવિચળ રહે તેવું આશિર્વાચન કોઈ પણ હિન્દી ઉચાર્યા વિના રહી શકે નહીં તેવી તેની ઉત્તમ છાપ ત્યાં પડી છે અને તે નર્યું સત્ય જ છે.

હિન્દની શાન—વર્ષો થયાં એકઠાઈ ‘ ખીઝનેસ ’ ચાલતું હોવા છતાં એક શાહ સોદાગરની જેમ નથુભાઈ મુળજીની પેઢી ઉત્તરોત્તર કુલતી ફાલતી રહી છે વ્યાપારી આંટ અને ધનજતનો એ નાદર નમુનો આજે પણ એ જ ધીર ગભીરપણે પોતાનું કાર્ય ધપાવે જાય છે. એકધારી લગભગ અડધી સદી થયાં ચાલતી આ પેઢીને રજ માત્ર ડાઘ લાગ્યો નથી તે તો સૌ કોઈ જાણે છે અને શાહ નથુભાઈ મુળજીની પુરાણી પેઢી માટે આજે પ્રત્યેક હિન્દી અભિમાન લઈ શકે છે. તેમાં શ્રી નથુભાઈ વારીયાનું ધર્મપ્રધાનપણું અને શ્રી. હરખચંદભાઈનું દુરદેશીપણું, કાર્યપ્રણાલીની ઉત્તમતા અને એક-નિષ્ઠા મુખ્ય ગણાય.

વાંચન અને મનન—ઉપરની વાતો તો તેમના વ્યાપારી જીવનની સંક-
ળતા અને એક નાનામાં નાની વ્યક્તિ આગળ કઈ રીતે વધી શકે છે
તેનો આછો ખ્યાલ આપવા પૂરતી થઈ, ત્યારે તેની બીજી એક ખાસ
બાજુ છે અતિ સામાન્ય અભ્યાસ પરંતુ સ્વાનુભવે મેળવેલ જ્ઞાનસિદ્ધિ. જે
કાળમાં અણખેડાયેલા દેશોમાં આવવા જવાનાં સાધનો પણ ન હતાં,
એડન સુધીની મુસાફરી પછી જેલા બરબરા જવામાં નાના વહાણોથી
સફર થતી, જીબુટીથી ઇથોપિયા જવામાં દીરહવા પછી (બગલ) ખચ્ચરો
ઉપર અને પગપાળા મુસાફરી થતી. દેશો બધા ખુબ જ જંગલી
અવસ્થામાં હતા તેવા યુગમાં હિમ્મત હાર્યા વિના આંગળીને વેઢે
ગણાય તેટલા હિન્દીઓ વ્યાપારમાં આગળ વધ્યા હતા તે યુગમાં શ્રી
હરખચંદ્રભાઈ હતા. ખુબ જ અધિકારમાંથી પ્રકાશ મેળવવાનો હતો.
અત્યારે ઇથોપિયાના પાટનગર આડીસ અબાબા જવા માટે Air રસ્તે
૧૦ થી ૧૨ કલાકમાં પહોંચાય છે ત્યારે તે જમાનામાં આગબોટ,
વહાણ બડબડપાંચમ જેવી રેલ્વે અને તે પછી ખચ્ચરો ઉપર અને
થોડુંક પગપાળા અગર તો ગધેડા ઉપર પણ સફર કરવી પડતી. જુનો
જમાનો હતો એટલે હિન્દુ તરિકેનો ધર્મ જાળવવામાં પણ લોકો
ચુસ્ત હતા, કોઈનું અડેલું ખવાય નહીં રસોઈ તૈયાર હોય પણ એક
સોમાલી કે આરબ અગર ઇથોપિયનનો હાથ અડકી જાય
એટલે ખાવાનું તેને આપી દઈ કડાકા કરવા પડે અગર તો પલાળેલા
ચણા કે મકાઈ ખાઈને ગુજરો કરવો પડે તેવા જમાનામાં શ્રી હર-
ખચંદ્રભાઈએ ખુબ જ ધંધાકિય સફળતા મેળવી હતી તે સામાન્ય
વાત તો નથી જ, અને પોતે ખુબ જ ઓછું ભણ્યા હોવા છતાં ભણ-
તર કરતાં ગણતર તેઓમાં ઘણું હતું. સાહિત્ય અને તે પણ ધાર્મિક
અને ગુજરાતી શિષ્ટ સાહિત્યનું વાંચન મનન એટલું બધું તેઓએ
કરેલું કે પોતાનો અભ્યાસ બહુ જ ઓછો છે એમ તેઓ ખુલાસો કરે
ત્યારે જ ખમર પડે, અભણ્યા માણસને તો તેમનું અંગ્રેજી જ્ઞાન પણ સાડું
હશે તેમ લાગતું. વ્યાપારી તાર લખવા ઓછા શબ્દોમાં ઘણું સમજાવી
દેવું ઉપરાંત અંગ્રેજી પત્ર વ્યવહારના બહારથી આવતા પત્રો આંટીધુંટી
સહિત હોય તો પણ ચથેચ્છ રીતે સમજી લેવામા તેઓ એટલા બધા
પારગત થઈ ગયેલા કે જોનારને તેમની શક્તિ ઉપર માન થઈ જતું. અને
તેઓ નિખાલસ ભાવથી જ્યારે કહેતા કે હું તો માત્ર ગુજરાતી ચાર પાંચ
ચોપડી ભણ્યો છું એમ વાત થતી ત્યારે તે માન અને કગણુ વધી જતું.

અભ્યાસી—ધાર્મિક ઉંડામાં ઉંડું જ્ઞાન તેમણે વાંચનથી મેળવેલું. દેશ પરદેશની વાતો થતી હોય ત્યારે તેમના આગળ પ્રખર અભ્યાસીઓ પણ અંખા પડતા, વર્તમાન પત્રોનો શોખ તેમનો અજોડ હતો. દેશ પરદેશના નાણાક્રિય વહેવારો અને હુડિયામણની વાતો સાંભળીએ ત્યારે તેમના જ્ઞાનના અગાધપણની સાંભળનારને અતિ ઉત્તમ છાપ પડતી.

ધાર્મિક—ધાર્મિક અભ્યાસ તેમનો એટલો બધો બહોળો હતો કે તેમના આગળથી રોજ અવનવું બાણવા મળતું દરેક ધર્મનો અભ્યાસ તેમણે જીજ્ઞાસાવૃત્તિથી કર્યો હતો. ધર્મે તેઓ ચુસ્ત સ્થાનકવાસી શ્વેતાંબરી જૈન હતા છતાં ધર્માધતાનો તેમનામા અશ પણ ન હતો. માફ એટલું સાફ એમ નહીં પણ સાફ એટલું માફ એમ માનતા તેથી કદાબ્રહ્મી-પણુ તેમનામા જનમ્યું જ ન હતું. જૈન ધર્મના દરેક પ્રીરકા ઉપર તેમને માન હતું. શ્વેતાંબર મંદિરમાર્ગે ભાઈઓના વરઘોડાઓમા તેઓ આનંદ અને ઉત્સાહથી જતા, પ્રસંગ આવે ભાઈચારો નભાવવા વ્યવહારપણાનો ઉપયોગ કરી દેરાસરમા ધી બોલવાનો પ્રસંગ આવે ત્યારે પણ તેઓ ઉત્સાહથી બોલતા. વરઘોડામાં પોતાના ઘરની પુત્રવધુઓને કળશ લેવડાવતાં તેમને અનેરો આનંદ મળતો, જૈન ધર્મના દરેક પ્રીરકાઓની એકતાના તેઓ પ્રખર ચાહક હતા છેલ્લે છેલ્લે સૌરાષ્ટ્રમાં જૈન શ્વેતામ્બર તેરાપંથી સાધુઓ આવતા અને એમને સૌરાષ્ટ્રના જૈનો અને જૈન સાધુઓ તેરાપંથી સાધુને સ્થાન અને આહારપાણી ન આપવાં તેવો પ્રયાસ જોર શોરથી કરતા તે જાળતને પોતે ગાંડપણુ માનતા અને પોતાના ઘેર તેરાપંથી સાધુઓને માનથી ગોચરી આપતા સમાજથી જરા પણ ડરતા નહીં. ‘વિચારલેદ તો દરેક જગ્યાએ બુદ્ધિવાદી લોકોમાં હોય મુખર્નિ વિચારલેદ શાનો ?’ આમ તેઓ કહેતા પરંતુ એવા વિચારલેદોને લઈને સાધુનું અને તે પણ પરદેશી સાધુઓનું અપમાન કરવું તેમાં માનવતા ક્યાં રહી ? જૈનત્વ ક્યાં રહ્યું ? તેમ તેઓએ જામનગરમાં એક વખત કહેલું તે મને બરાબર યાદ છે.

પ્રેમાળ—અસત્ય અગર તો જુઠું દુગો આચરનાર તરફ તેમને ઘણો જ રોષ હતો એટલે ઉગ્રતાથી આવા લોકોની બખર લઈ નાખતા છતાં તેનું દિલ દુભાવ્યું તે કીક ન કર્યું તેમ માની તે જ વ્યક્તિ સાથે પ્રેમ અને મમત્વથી વાતો કરતા જીજ્ઞાસુ સાફ જોઈ તેઓ બરેબર રાચતા તેમની આખમા પ્રેમનું અમૃત ભારે.

ભાર લેયું હતું. પોતાને ત્યાં નોકરી કરી ગએલ મુનિમ કે કોઈ પણ વ્યક્તિ કમાણી કરીને ખુબ જ આગળ આવે, સારા અને સંસ્કારી થાય વ્યવહારમાં સવાયા થાય તેને ત્યાં લગ્ન પ્રસંગ હોય અગર તો સારામાં સારાં મકાનો તેણે કર્યાં હોય તેવા પ્રસંગે જવાનું થાય ત્યારે તેમના આનંદનો અવધી થઈ જતો. તે વખતે તેઓની આંખોનું અમૃત જેમણે નજરોનજર જોયું હશે તે તેમને જીવનભર નહીં ભૂલે. આવી એક મહાન્ વિભૂતિના જીવનનો ટુક સાર જ આપી શકાય. સાંગોપાંગ જીવન તો ક્યાંથી લખાય ?

કાળ—જનમ્યું તે જવાનું જ તે કુદરતનો ક્રમ છે તેને આધીન તો સારા નરસા દરેકને થવું જ પડે. સંવત ૨૦૦૭માં તેઓશ્રી ૬૮ વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવી ક્ષણભંગુર દેહને છોડી ગયેલા. પરંતુ તેમની સુવાસ સદાય પ્રસરતી જ રહેવાની. લાણુવડ જેવડા નાનકડા ગામમાં અને આસપાસના ગામોમાં જ્યાં જ્યાં તેઓ ગએલા અગર તો તેમનું કાર્યક્ષેત્ર હતું ત્યાં ત્યાં તેમના અવસાનથી સન્નાટો છાઈ ગયેલો. એમનું મૃત્યુ વીશ વર્ષના કંધોતરનો શોક હોય તેવો શોક સર્વત્ર આપતું ગયેલું. નામ ઠામના લોભ વિના કરેલાં તેમનાં ગુપ્ત દાનો એટલાં બધાં હતાં કે તેમના જવાથી નાના મોટા દરેકને એકસરખી ખોટ લાગતી હતી. છતાં તેઓ જીવંત જીવી ગયા. આવું ધન્ય જીવન અને ધન્ય મૃત્યુ જોઈને આર્નધ્યાન રૌદ્રધ્યાન ધરવું તે કરતાં તેમના જેવા થવાના પ્રયત્નો કરવા. અને તેમના અમર આત્માની શાન્તિ માટે પ્રાર્થના કર્યા સિવાય બીજો માર્ગ જ ક્યાં છે ? ઐ શાન્તિ ! શાન્તિ ! ! શાન્તિ ! ! !



આદ્ય સુરજીત્રી કોઠારી હરગોવીંદલાઈ જેચંદનો કુંકે પરિચય

✽

પુ૦ શ્રી ૧૦૦૮ ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધારતા પ્રાતઃસ્મરણીય સ્તવનાવલી રાજકોટના રહીશ શુદ્ધ શ્રાવક વૃતધારી જેચંદ અજરામર કોઠારીના સુપુત્ર હરગોવિંદ કાકા તરફથી ૨૦૦૩ માં છપાવવામાં આવી અને તે હિંદલરમાં જાહેર મૂકી તેનો ઉપયોગ હાલ સર્વ જૈન જૈનેતર કરી રહેલ છે. કાકા રાજકોટમાં જ નહિ પણ સૌરાષ્ટ્ર, કચ્છ, ગુજરાત, મુંબઈ, દિલ્હી સુધી એક અનેક ઉત્સાહી પુરૂષ છે. એમનો પ્રભુ અને રાજ ઉપર ઘણો જ સારો પ્રભાવ છે. વેસ્ટર્ન ઈન્ડિયા સ્ટેટ એજન્સી અને ગુજરાત સ્ટેટસ મહીકાંઠા, સાબરકાંઠા બનાસકાંઠામાં રેસીડેન્સીમાં પણ કાકા પ્રત્યે ઘણો જ સારો ભાવ છે. તેઓને ધર્મ પ્રત્યે ઘણી જ સારી ધગશ હોઈ અગત ખર્ચે પોતાના ઘર આંગણે ધર્મ ધ્યાન માટે પોષધશાળા બધાવી છે તેમજ આજી નદીને કિનારે વિશાળ વ્યાખ્યાન ભુવન હોલ બે માળનો પાચ હજાર માણસો વ્યાખ્યાન સાલળી શકે તેવો બંધાવેલ છે. ઉદાર દિલના સખી માણસ છે. કોઈ પણ ગરીબ ગુન્હાહીત માણસ દાદ માગવા આવે તો તરત જ બનતા ઉપાયે તેમને મદદ આપવા ચોવીસ કલાક તૈયાર રહે છે. કાકાનું કુટુંબ પણ ઘણું જ ધર્મીય છે. તેમનાં ધર્મપત્નિ શ્રીમતી અબડ સૌભાગ્યવતી રૂક્મણીબેન વહેવારદક્ષ પ્રેમાળુ અને પૂર્ણ ધર્માત્મા છે સાધુ, સાધ્વી પ્રત્યે તથા દરેક કુટુંબ સજ્જન સ્નેહી અને સ્વધર્મીઓ મહેમાનો સાથે ઘણો જ સારો ઉચિત વહેવાર રાખવામાં પૂર્ણ નિષ્પન્ન છે. નિત્ય પોતાની ધર્મ પરાયણતા પ્રત્યે જ વફાદાર રહે છે.

પૂ૦ ઘાસીલાલજી મહારાજ આદી થાણા છ (સમીરમુનિ, કનૈયાલાલ મુનિ દેવમુનિ, તપસ્વી માંગીલાલ, મદનલાલજી) મેવાડથી દામનગરના રહીસ દામોદરભાઈના આગ્રહથી ખાલનપુર નહીં રોકાતા તેમણે વિહાર શરૂ કર્યો, અને મોરબી મુકામે તપસ્વી મદનલાલજી અને માંગીલાલજીની ૭૧ ઉપવાસની તપશ્ચર્યા આતુ-માસમાં થયેલી જે પ્રસંગે રાજકોટથી હરગોવિંદકાકા કુટુંબ સહિત ગોકળ અષ્ટમીને દીવસે દર્શનાર્થે આવ્યા અને રાજકોટ પધારવાની વિનંતી કરી. અને નવેમ્બર ૧૯૪૬ માં ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધાર્યા કાકાના વ્યાખ્યાન ભુવનમાં ખીરાન્યા બાંને તપસ્વીજીએ માસખમણની તપશ્ચર્યા કરી. સ્થાનિક રાજકોટ સકલ સઘે ઘણું જ ભક્તિભાવ બતાવ્યો. અને રતાગઢ ખેડાના રહીશ જવારલાલજી ઉર્ફે ચાંદમલજી ભંડારીની ૨૦૦૨ તા. ૨૭-૧-૪૭ના રોજ દીક્ષા વસ તપશ્ચર્યાને

ડૉ. પરપણુ આપનાર આદ્ય મુરખીશ્રી,



ડૉ. ઠાડી હરજોવિંદભાઈ જેચંદ
રાજકોટ.

દીવસે હોવાથી સંઘમાં વધારે ઉત્સાહ આનંદ આવ્યો. મહાસુદિ એકમથી પાંચમ સુધી ૬ વરઘોડાઓ જુદે જુદે ઠેકાણેથી ચડ્યા. મહા સુદી ૪ ના દિવસે કાકાને ઘેરથી દીક્ષા ઉત્સવનો વરઘોડો રાજકોટ ઠાકોર સાહેબ પ્રદ્યુમ્નસિંહજી અને કુ. શ્રી બનેસિંહજીની સંપૂર્ણ મદદથી રાજેશ્રીના ઠાઠને પણ વટાવી જાય તે રીતે સરકારી અને સ્ટેટ બેન્ક પોલીસ ઘોડેસ્વાર ગાડીઘોડા મોટરો તથા હજારો જૈન જૈનેતર માનવમેદની સાથે આખા શહેર સદરના રસ્તા પર ફર્યો હતો. પાંચમના દિવસે તપગચ્છના ચાંદીના રથમાં દીક્ષાર્થીને બેસાડી ૪ ચાર બેલ જોડેલ રથને કાકા પોતે સારથી બની હાંકતા હતા. બંને દીવસે સોના રૂપાનાં કુંડ તથા પૈસા દિક્ષીત ઉડાવી રહેલ હતા. ઠેકાણે ઠેકાણે પોલીસો ગોઠવવામાં આવી હતી. આ સરઘસ શહેર સદરમાં ફરી જુળીલી બાગમાં આવ્યું અને દસ હજાર માણુ-સોની હાજરીમાં ૫૦ શ્રી ઘાસીલાલજીની જેનેશ્રાય નીચે દીક્ષા આપવામાં આવી તે પ્રસંગે શાંતિ જળવાયેલી. આ પ્રસંગે બંને દીવસોએ ફેાટાઓ તથા જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની કમિટિના ફેાટાઓ લેવામાં આવ્યા અને ૩૦-૧-૪૭ના દીવસે શાસ્ત્રોદ્ધારની મિટીંગ મળી જેમાં કાકા તરફથી સૂત્રને માટે રૂપીઆ પાંચ હજારની ભેટ મળી તે ઉપરાંત પ્રસંગોપાત સૂત્ર માટે જુદી ભેટ રોકડી રકમની આપવામાં આવી છે તેમજ જીવદયાના પ્રખર હિમાયતી ૫૦ ૧૦૦૮ જેઠમલજી મં. ની નેશ્રાય નીચે તન મન ધનથી જીવદયાનું કાર્ય કરે છે અને જીવદયાનું પત્ર પોતાને ખર્ચે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી હિંદલરમાં તેમજ યુરોપ અમેરીકા આફ્રીકામાં મોકલે છે હાલ પોતે સેવાલાવી કાર્યની પ્રવૃત્તિ કાયમ કર્યા કરે છે.

રાજકોટની ફ્લોર મીલોના ઓનરરી પ્રમુખ : જૈન બોર્ડીંગના ઓનરરી કાર્યકર્તા તથા જીવદયા મંડળના મંત્રી અને S. P. C A. ના મંત્રી, રાજકોટ શહેરી મંડળના સેક્રેટરી તરીકે ઓનરરી સેવા કરી દરેકને પોતાની સેવાનો સાથ આપવામાં તન મન ધનથી કોઈની પણ સેવા કરવામાં કાયમ તત્પર રહે છે.

આદ્ય સુરખીશ્રી મહુમ ધારશીલાઈ જીવનલાઈનો કુંક પરિચય

મરહુમ ધારશીલાઈ જીવનલાઈ શાહ, જેનો ઓઈલ જીનપ્રેસ સાથે આ સૈકાની શરૂઆતથી સંબંધ, પુના સાતે ડીવીઝનના જુદા જુદા સ્થળોના જુનામાં જુના અને અગ્રગણ્ય એજન્ટ તરીકે બાણીતા છે તેનો જન્મ કાઠીયાવાડમાં પીપળીયા ગામમાં થયેલ, માત્ર પ્રાથમિક કેળવણી લઈ, ૧૧ વર્ષની નાની ઉંમરે આગળ વધવાની ધગશ સાથે, માત્ર ખીસ્સામાં ૨ રૂ. જેટલી નજીવી રકમ સાથે વતન છોડ્યું મુંબઈ આવી મનજી નથુલાઈની પેઢીમાં ઓશીસ બોય તરીકે નોકરી લીધી, ત્યાં ઉત્તરોત્તર દરેક કામમાં ખંત રાખી અંતોષ આપતાં તેમને પુના મોકલવામાં આવ્યા. પુનાથી કરમાલા આવી ખલા ઉપર તેલ ઉપાડી ફેરી પણ કરી અને ત્યાંના સબ એજન્ટોને એકદમ પ્રમાણીકપણે સખત કામ બતાવી, કરમાલા ગામમાં તેલની સબડીલર-શીપ પ્રાપ્ત કરી ધીરે ધીરે તે જ પ્રમાણે મહેનત ચાલુ રાખતાં ૧૯૩૧માં ન્યારે બર્માશિલ અને એસ. વી. ઓ. મી. વચ્ચે ભાવની હરીફાઈ ઉપડી ત્યારે પોતાની સતત સેવા બતાવી બર્માશિલ પાસેથી ઘડીયાલ બક્ષીસ મેળવી અને તે લાઈનના તમામ કાર્યવાહકોની ચાહના પ્રાપ્ત કરી.

ધીરે ધીરે પોતાની ખંતથી તેવી જ એજન્સીઓ લીપ્ટન કું, સીમેન્ટ કું., આઈ. સી. આઈ. વીગેરેની પણ મેળવી પોતાના વ્યાપારની સારી જમાવટ કરી.

સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં સારા આબરૂદાર શહેરી તરિકે વગ તેમજ ચાહના મેળવી અને લોકસેવા પણ સાથેસાથ ચાલુ રાખી કરમાલા મ્યુનિસિપલ પ્રેસીડન્ટ થયા સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં દેશહિતના અનેક કામોમાં તન, મન, ધનથી સારી સેવા બજાવી.

તેનું જ્ઞાનગી જીવન પણ બહુ સાદું હોવાથી બધા તેને ચાહતા અને ધંધામાં સારો લાભ મળ્યો અને તે જ પ્રમાણે સેવાના તથા ધર્માદાના અનેક કાર્યોમાં સારી રકમો વાપરી.

પોતાના કુટુંબના વડા તરીકે પણ કુટુંબીજનો, સગાં, સંબંધીઓને દરેક રીતે માર્ગદર્શન આપી જુદા જુદા ધંધા તેમજ એજન્સીઓ વિગેરે મેળવી સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરવામાં ઘણો પરિશ્રમ લીધો.

યાંત્રિક ખેતીની પ્રગતીના કાર્યસર વિલાયત જઈ આવ્યા, અમેરીકા જવા પણ ધારણા હતી. ત્યાં લંડનમાં ૧૪-૭-૪૯ ના રોજ હૃદયબંધ પડી જતાં સ્વર્ગવાસ કર્યો. તેમની પાછળ બહોળું કુટુંબ, ઘણાં સગાં તેમજ સ્નેહીઓ મૂકી ગયેલ છે. જેઓ સર્વને પોતાની મીઠી યાદગીરી મુકી જીવનનું સાર્થક કરી ગયેલ છે.

રૂ. ૫૦૦૧૭ આપનાર આદિ સુરજીશ્રી,



(સ્વ.) શેઠ ધારસીભાઈ જીવણભાઈ
સોલાપુર.



॥ आचाराङ्गसूत्रके २, ३, ४ अध्ययनों की विषयानुक्रमणिका ॥

(द्वितीय अध्ययन-प्रथम उद्देश)

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ प्रथमाध्ययन के साथ द्वितीय अध्ययनका सम्बन्धकथन, द्वितीय अध्ययन के छहों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । १-३
- २ द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ४-५
- ३ शब्दादि कामगुण ही मूलस्थान अर्थात् मोहनीयादि के आश्रय हैं, उन शब्दादि-कामगुणों से युक्त प्राणी परितापयुक्त बना रहता है, और उसकी उस परिस्थितिमें जो भावना रहती है उसका वर्णन । ६-२८
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २९
- ५ शब्दादिकामगुणमोहित प्राणी वृद्धावस्थामें मूढताको प्राप्त करता है - इसका वर्णन । ३०-५६
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ५७
- ७ वृद्धावस्था में उस मनुष्य की जो दशा होती है-उसका वर्णन । ५८-७२
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ७२-७३
- ९ मनुष्य की वृद्धावस्थामें जो दुर्दशा होती है उसे विचार कर संयम-पालन में मुहूर्तमात्र भी प्रमाद न करे । ७४-८६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ८७
- ११ प्रमादी पुरुषों के कार्य का वर्णन । ८८-९५
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ९६
- १३ माता पिता या पुत्र कोई भी इहलोक-सम्बन्धी और परलोक-सम्बन्धी दुःखों से बचाने में समर्थ नहीं हैं । ९६-९७
- १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । ९८
- १५ असंयत पुरुष उपभोगके लिये धनसंग्रह करता है और उपभोग के समय उसे कासश्वासादि रोग हो जाते हैं, उस समय उसके माता पिता और पुत्र कोई भी रक्षक नहीं होते हैं । ९९-१००

विषय

पृष्ठाङ्क

- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र। १००
- १७ वृद्धावस्थामें कोई रक्षक नहीं होता और बाल्यावस्था भी पराधीन होने के कारण दुःखमय ही है—ऐसा विचार कर युवावस्था को ही संयमपालन का योग्य अवसर समझना चाहिये। १०१-१२२
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। १२२
- १९ वार्द्धक्य और रोगों से जब तक श्रोत्रादि इन्द्रियों के परिज्ञान नष्ट नहीं हुए हैं, तभी तक चारित्र्यानुष्ठानमें प्रवृत्त हो जाना चाहिये। १२३-१२७
- ॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १- प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन। १२८
- २- प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। १२९-१३०
- ३- संसारकी असारता को जाननेवाला मुनि संयमविषयक अरतिको दूर कर क्षणमात्रमें मुक्त हो जाता है। १३१-१३७
- ४- द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। १३८
- ५- जिनाज्ञा से बहिर्भूत साधु मुक्तिभागी नहीं होता। १३९-१४४
- ६- तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। १४५
- ७- 'अनगार' कौन कहलाते हैं। १४६-१५४
- ८- चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। १५४
- ९- विषयासक्तिवश परितप्त होकर धन की स्पृहासे दण्डसमारम्भ करनेवाला मनुष्य का वर्णन। १५५-१५९
- १०- पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। १५९
- ११- संयमी को दण्ड समारम्भ नहीं करना चाहिये। उद्देश समाप्ति। १६०-१६२

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ द्वितीय उद्देश के साथ तृतीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन ।	१६३
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र ।	१६४
३ पण्डित को उच्च कुलकी प्राप्ति से द्वेष नहीं करना चाहिये; और न नीच कुलकी प्राप्तिसे क्रोध ही करना चाहिये ।	१६५-१७०
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	१७१
५ किसी भी प्राणीका अहित नहीं करना चाहिये । प्राणियों के अहित करनेवालों की दुरवस्था का वर्णन ।	१७२-१८६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	१८६
७ उच्चकुलाभिमानी मनुष्य प्राणियोंका अहित करके जन्मान्तर में कोई अन्धता आदि फल पाकर सकलजननिन्दित होता हुआ, और कोई खेत-घर-धनधान्य-स्त्री आदि परिग्रहमें आसक्त हो तप आदिकी निन्दा करता हुआ विपरीत बुद्धिवाला हो जाता है ।	१८७-१९४
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	१९४
९ संयमियों के कर्त्तव्य का निरूपण ।	१९५-२०६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	२०७
११ असंयमियों के जीवन स्वरूपका वर्णन ।	२०७-२१४
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।	२१४-२१५
१३ असंयमीका अन्यायोपार्जित धन नष्ट हो जाता है, और कुटुम्ब की चिन्ता से व्याकुल वह असंयमी कार्याकार्य को नहीं जानता हुआ विपरीतबुद्धियुक्त हो जाता है ।	२१५-२२१
१४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र ।	२२१
१५ 'सुखको चाहनेवाला मूढमति असंयमी मनुष्य दुःखही भोगता है' इस बातको भगवान महावीर स्वामीने स्वयं प्ररूपित किया है—इस प्रकार सुधर्मा स्वामी का कथन ।	२२२-२२६
१६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र ।	२२७

विषय

पृष्ठाङ्क

- १७ पश्यक-तीर्थकर गणधर आदि नरकादि गतिके भागी नहीं होते हैं, बाल-अज्ञानी जीव तो नरक आदि गति के भागी ही निरन्तर होते रहते हैं—इसका प्रतिपादन और उद्देश-समाप्ति । २२७-२३५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २३६
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २३७-२३८
- ३ वृद्धावस्था में ही श्वासकासादि रोग होते हैं, ऐसी बात नहीं ! ये तो युवावस्था में भी होते हैं । उस रोगावस्था में उस प्राणी का रक्षक कोई सगा-सम्बन्धी नहीं होता है, और न वही प्राणी उस रोगावस्था से आक्रान्त अपने सगे-सम्बन्धीका रक्षक हो सकता है । २३८-२४०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २४१
- ५ भोगसाधन धनकी विनाशशीलताका वर्णन । २४१-२४२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २४२-२४३
- ७ भोगसाधन धन विनश्वर है; अतः भोगकी स्पृहा और भोगके विचारका भी परित्याग कर देना चाहिये । २४३-२५५
- ८ चौथे सूत्रका अवतरण और चौथा सूत्र । २५६
- ९ 'कामभोग का आसेवन महा भयस्थान है' ऐसा जानकर अन-
गार क्या करे ? इसका उपदेश तथा उद्देश-समाप्ति । २५६-२६१

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥

*

॥ अथ पञ्चमोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ चतुर्थ उद्देशके साथ पञ्चम उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २६२-२६४
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २६४
- ३ गृहस्थ कर्मसमारम्भ जिन हेतुओं से करते हैं, उन हेतुओं का प्रतिपादन । २६५-२६८
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २६९
- ५ भविष्यमें उपभोग के लिये पदार्थों के संग्रहमें प्रवृत्त गृहस्थों के बीच संयमाराधनमें तत्पर अनगार को किस प्रकार रहना चाहिये । २६९-२७२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २७३
- ७ साधुको क्रयण, क्रापण और उसके अनुमोदन से रहित होना चाहिये । २७३-२७५
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । २७६
- ९ हननकोटित्रिक और क्रयणकोटित्रिकसे रहित साधुका वर्णन । २७६-२८३
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २८३
- ११ साधुको एषणीय आहारके सदृश एषणीय वस्त्रपात्रादि भी गृहस्थसे ही याचना चाहिये । २८४
- १२ षष्ठ सूत्रका अवतरण और षष्ठ सूत्र । २८५
- १३ 'मुनिको मात्राज्ञ होना चाहिये' इसका वर्णन । २८५-२९१
- १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । २९१
- १५ श्रुतचारित्र्यरूप इस मार्गको आर्योंने प्रवेदित किया है । इस मार्ग पर स्थित हो कर जिस प्रकार कर्म से उपलब्ध न हो वैसा करना चाहिये । २९१-२९२
- १६ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र । २९२
- १७ हिरण्य-सुवर्णादि तथा शब्दादि काम दुरुल्लब्ध हैं । इन कामों को चाहनेवाले पुरुषकी जो दशा होती है उसका वर्णन । २९३-२९९
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । २९९

विषय

पृष्ठाङ्क

- १९ ज्ञाननेत्रयुक्त मुनिका वर्णन । २९९-३०७
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३०७
- २१ साधुको कामभोगाशासे युक्त नहीं होना चाहिये; क्यों कि कामभोगाशासे युक्त साधु बहुमायी हो कर लोभ और वैर बढ़ा-नेवाला होता है। वह अपनेको अमर समझता है, इष्ट-विनाश-आदि कारण से वह उच्च स्वर से रुदन करता है । ३०८-३१३
- २२ ग्यारहवां सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ३१३
- २३ बाल-अज्ञानी परतैर्थिक कामभोगस्पृहाकी चिकित्सा कामभोग-सेवनही कहते हैं; इसलिये वे हननादिक क्रियासे युक्त होते हैं। परन्तु अनगार ऐसे नहीं होते हैं। उद्देश-समाप्ति । ३१४-३१८

॥ इति पञ्चमोद्देशः ॥

*

॥ अथ षष्ठोद्देशः ॥

- १ पञ्चम उद्देशके साथ षष्ठ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । ३१९
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३१९
- ३ षड्जीवनिकाय के उपघातका उपदेश नहीं देनेवाले अनगार कभी भी पापाचरण नहीं करते । ३२०-३२१
- ४ द्वितीय सूत्र का अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३२१
- ५ जो छ जीवनिकायों या छ व्रतों में से किसी एक की विराधना करता है वह छहों की विराधना करता है। सुखार्थी वह वाचाल होता है, और अपने दुःखसे मूढ़ हो वह सुख के बदले दुःख ही पाता है। वह अपने विप्रमादसे अपने व्रतों को विपरीत प्रकार से करता है, अथवा वह अपने संसारको बढ़ाता है, या एकेन्द्रियादिरूप अवस्था को प्राप्त करता है। इसलिये चाहिये कि प्राणियों को जिनसे दुःख हो ऐसे दुःखजनक कर्मों का आचरण नहीं करे। इस प्रकार के कर्मों के अनाचरण से कर्मोपशान्ति होती है। ३२२-३३१

विषय

पृष्ठाङ्क

- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३३२
- ७ ममत्वबुद्धि से रहित हो मनुष्य रत्नत्रययुक्त अनगार होता है । ३३२-३३४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३३४
- ९ मेधावी मुनि ममत्वबुद्धिको छोड़कर, लोकस्वरूप को जानकर आहारादिमूर्च्छारूप संज्ञा से रहित हो संयमानुष्ठान में पराक्रम करे । ३३४-३३६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ३३६
- ११ कर्मविदारण करनेमें समर्थ, पुत्रकलत्रादिको त्यागनेवाले वीर चारित्रविषयक अरति और शब्दादिविषयक रतिको दूर कर देते हैं; क्योंकि वे अनासक्त होते हैं; अत एव वे शब्दादिविषयों में रागयुक्त नहीं होते । ३३७
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३३८
- १३ मुनि इष्टानिष्ट शब्दादि विषयों में रागद्वेष न करता हुआ असंयमजीवन सम्बन्धी प्रमोदको दूर करे, मौन ग्रहणकर कर्मक्षपण करे । सम्यक्तत्त्वदर्शी वीर मुनि प्रान्त और रूक्ष अन्न सेवन करते हैं । प्रान्त-रूक्ष अन्न सेवन करनेवाले मुनि कर्मका विनाश कर ओघन्तर, तीर्ण और मुक्त होते हैं । ऐसे ही मुनि विरत कहलाते हैं । ३३८-३४३
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ३४३
- १५ दुर्बल मुनि भगवान्की आज्ञाका विराधक हो कर तुच्छता एवं ग्लानिको प्राप्त करता है, और भगवान्की आज्ञाका आराधक सुबल मुनि तुच्छता एवं ग्लानि को नहीं पाते हैं और तीर्थङ्कर गणधर आदि से प्रशंसित होते हैं । यह सुबल मुनि लोकसंयोग से रहित हो मुक्तिगामी होते हैं । ३४३-३४७
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ३४७
- १७ शारीरिक-मानसिक दुःखजनक कर्मों का जहां जिस प्रकार से बन्ध होता है, मोक्ष होता है, और विपाक होता है । उन सर्वो

विषय

पृष्ठाङ्क

का तीर्थङ्कर गणधर आदिने प्ररूपण किया है। कुशल मुनि बन्ध और मोक्षके उपायों को सर्वदा समझाते हैं। उन बन्ध और मोक्षके उपायों को जान कर भव्य आस्रवद्वारों से दूर रहे। जो मुनि अन्य दर्शनों में श्रद्धान नहीं रखते हैं—जो मुनि अनन्यदर्शी होते हैं—वे अनन्याराम होते हैं और जो अनन्याराम होते हैं वे अनन्यदर्शी होते हैं। कुशल मुनिका उपदेश पुण्यात्मा और तुच्छात्मा दोनों के लिये बराबर होता है। ऐसे मुनिका उपदेश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार ही होता है। ३४८-३५४

- १८ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ३५५
- १९ धर्मोपदेशक श्रोताकी परीक्षा करके धर्मोपदेश करे। ऐसा धर्मोपदेशक ही प्रशंसित होता है। यह मुनि अष्टविधकर्मपाशसे बद्ध जीवों को छुड़ाता है, सभी दिशाओं में सर्वपरिज्ञाचारी होता है और हिंसादि स्थानों से लिप्त नहीं होता है। कर्मों के नाश करने में कुशल, बन्धप्रमोक्षान्वेषी—रत्नत्रय का अन्वेषणशील—वह मुनि न बद्ध है न मुक्त है। ३५६-३६३
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३६४
- २१ तीर्थङ्कर, सामान्य केवली और रत्नत्रययुक्त साधुओं ने जैसा आचरण किया है वैसा ही आचरण दूसरे साधु करें, तीर्थङ्करादिकोंने जिस आचरणको प्रतिषिद्ध माना है उस आचरण से दूर रहें। ३६४-३६६
- २२ ग्यारहवें सूत्र का अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ३६७
- २३ पश्यक—तीर्थङ्कर गणधरादिक नरकादिगतिके भागी नहीं होते, बाल-अज्ञानी तो निरन्तर होते रहते हैं। उद्देशसमाप्ति। ३६७
- द्वितीयाध्ययनसमाप्ति । ३६७
- २४ द्वितीय अध्ययन की टीकाका उपसंहार । ३६८

॥ इति द्वितीयाध्ययनम् ॥

॥ अथ तृतीयाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयाध्ययन के साथ तृतीय अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन,
चारों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । ३६९-३७०
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३७१
- ३ अमुनि सर्वदा सोते रहते हैं, और मुनि सर्वदा जागते रहते हैं । ३७१-३८०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३८०
- ५ दुःखजनक प्राणातिपातादि कर्म अहितके लिये होते हैं; इसलिये
प्राणातिपातादि कर्मों से विरत रहना चाहिये । ३८०-३८४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३८४
- ७ जो शब्दादि विषयों में रागद्वेषरहित है—ऐसा ही प्राणी आत्म-
वान्, ज्ञानवान्, व्रतवान्, धर्मवान् और ब्रह्मवान् होता है ।
ऐसा ही प्राणी षड्जीवनिकायस्वरूप लोकके परिज्ञानसे युक्त
होता है । वही मुनि कहलाता है । वही धर्मवित् और ऋजु है,
एवं वही आवर्त्त और स्रोतके संबन्धको जानता है । ३८५-३८८
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३८९
- ९ आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धके जाननेवाला मुनि बाह्य और
आभ्यन्तर ग्रन्थिसे रहित, अनुकूल और प्रतिकूल परीषद्‌हों को
सहन करनेवाले, संयम विषयक अरति और शब्दादि विषयक
रति की उपेक्षा करनेवाले होते हैं, और वे परिषद्‌हों की
परुषता को पीडाकारक नहीं समझते हैं । वे सर्वदा श्रुतचारित्र-
रूप धर्म में जागरूक रहते हैं, दूसरों का अपकार नहीं करना
चाहते हैं । वे वीर अर्थात् कर्मविदारण करने में समर्थ होते हैं ।
इस प्रकारके मुनि दुःख के कारणभूत कर्मोंसे मुक्त हो जाते हैं । ३८९-३९१
- १० पाँचवें सूत्रका अवतरण और पाँचवाँ सूत्र । ३९२
- ११ जरा और मृत्युके वशमें पडा हुआ मनुष्य सर्वदा मूढ बना
रहता है, इसलिये वह श्रुतचारित्र धर्म को नहीं जानता है । ३९२

विषय

पृष्ठाङ्क

- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३९२
- १३ आत्मकल्याणार्थी मनुष्य आतुर प्राणियों को देखकर, अप्रमत्त हो, संयमाराधनमें तत्पर रहे—इस प्रकार संयमाराधनमें तत्पर रहनेके लिये शिष्यको आज्ञा देना । ३९३
- १४ सप्तम सूत्र । ३९४
- १५ ' यह संसारपरिभ्रमणरूप दुःख सावधक्रियाके अनुष्ठानसे होता है, ऐसा जानकर आत्मकल्याणके लिये अभ्युद्यत रहो ' इस प्रकार शिष्यके प्रति कथन । मायी और प्रमादी वारंवार नरकादियातना को प्राप्त करता है । जो पुरुष शब्दादि-विषयोंमें रागद्वेषरहित होता है, माया एवं प्रमाद से दूर रहता है, वारंवार मरणजनित दुःखके आने की आशंकासे भयभीत रहता है; वह श्रुतचारित्र धर्ममें जागरूक हो मरणसे छूट जाता है । ३९४-३९५
- १६ अष्टम सूत्र । ३९५
- १७ संसारी जीवोंके दुःखोंके जाननेवाले, कामभोगजनित प्रमादोंसे रहित, पाप कर्मों से निवृत्त वीर पुरुष आत्माके उद्धार करनेमें समर्थ होते हैं । ३९६
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ३९६
- १९ जो शब्दादि विषयोंमें होनेवाला सावध कर्म के ज्ञाता हैं वे निरवद्य क्रियारूप संयममें होनेवाले दुःखोंके सहन की उप-योगिता को भी जाननेवाले हैं, और जो निरवद्यक्रियारूप संयममें दुःखोंके सहन की उपयोगिता को जाननेवाले हैं वे शब्दादिविषयोंमें होनेवाले सावध कर्म के भी ज्ञाता हैं । ३९७-३९९
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३९९
- २१ कर्मरहित मुनिको नारकादि व्यवहार नहीं होता है; क्यों कि उपाधिका जनक कर्म है । ३९९-४०१
- २२ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४०२
- २३ कर्मको संसारका कारण जानकर कर्मके कारण प्राणातिपातादि का त्याग करे । ४०२-४०३

- २४ बारहवाँ सूत्र । ४०३
- २५ मुनि कर्मस्वरूपका पर्यालोचन कर सर्वज्ञ-जिन सम्बन्धी उपदेश, या संयमको स्वीकार कर रागद्वेषसे रहित हो वीतराग हो जाते हैं । ४०३
- २६ तेरहवाँ सूत्र । ४०४
- २७ कर्मके कारण रागद्वेषका ज्ञानपूर्वक परित्याग कर, संसारी लोगों को विषयकषायों से व्यामोहित जान कर, तथा विषयाभिलाष-रूप लोकसंज्ञाका वमन कर मतिमान् मुनि संयमाराधनमें तत्पर रहे, संयम ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे । उद्देशसमाप्ति । ४०४-४०५

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन, और द्वितीय उद्देशका प्रथम सूत्र । ४०६
- २ प्राणियों के जन्मवृद्धिका विचार करो; सभी प्राणियों को सुखप्रिय होता है और दुःख अप्रिय होता है — इस वस्तु को समझो । इस प्रकार विचार करनेवाला प्राणी अतिविद्य हो कर — 'निर्वाणपद या वहां तक पहुंचानेवाले सम्यग्दर्शन आदि परम हैं' ऐसा जान कर परमार्थदर्शी बनकर सावद्य कर्म नहीं करता । ४०६-४०९
- ३ द्वितीय सूत्र । ४१०
- ४ इस मनुष्यलोकमें बन्धन के कारणभूत मनुष्यों के साथ के सम्बन्धों को छोड़ो । आरम्भजीवी मनुष्य ऐहिक-पारलौकिक दुःखोंको भोगनेवाले होते हैं । कामभोगों में अभिलाषा रखने-वाले जीव अष्टविध कर्मों का संचय करते रहते हैं और काम-भोगादिजन्य कर्मरजसे संश्लिष्ट हो बारंवार गर्भगामी होते हैं । ४१०-४११
- ५ तृतीय सूत्र । ४११

विषय

पृष्ठाङ्क

६ अज्ञ मनुष्य मनोविनोद के निमित्त प्राणियोंका संहार कर आनंद मानता है। वालों-अज्ञों का संग व्यर्थ है। उनके संग से तो द्वेषकी ही वृद्धि होती है।

४११-४१२

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।

४१३

८ वालों के संगसे द्वेष ही बढ़ता है; इस हेतु अतिविद्य-सम्यग्ज्ञानवान् प्राणी परम की, अर्थात्-सिद्धिगति नामक स्थान की अथवा सर्वविरतिरूप चारित्र्य की सत्ता को जान कर, नरक-निगोदादिके विविध दुःखोंके ज्ञानसे युक्त हो, पापानुबन्धी कर्म नहीं करता है, न दूसरों से कराता है, न करनेवाले का अनुमोदन ही करता है। वह धीर मुनि, अग्र और मूल का विवेक कर के, कर्मों का छेदन कर निष्कर्मदर्शी हो जाता है।

४१३-४१५

९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।

४१६

१० यह निष्कर्मदर्शी मरणसे मुक्त हो जाता है, केवली होकर दूसरों को भी मुक्त करता है। इहलोकादि भय को देखनेवाला यही मुनि कहलाता है। मुनि परमदर्शी, विविक्तजीवी और उपशान्त आदि हो कर, पण्डितमरणकी आकाङ्क्षा करता हुआ संयमाराधनमें तत्पर रहे।

४१६-४१८

११ छठा सूत्र।

४१८

१२ पापकर्म बहुत प्रकारके कहे गये हैं, उनको दूर करनेके लिये संयम में धृति धरो। संयमपरायण मेधावी मुनि समस्त पाप कर्मोंका क्षण करता है।

४१८-४१९

१३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र।

४१९-४२०

१४ अनेक विषयों में आसक्तचित्त संसारो पुरुषों की इच्छाकी पूर्ति नहीं होती। ऐसे पुरुष अन्यवधादिरूप पापकर्मों में ही निरत रहते हैं।

४२०-४२४

विषय

पृष्ठाङ्क

- १५ आठवाँ सूत्र । ४२४
- १६ इन अन्यवधादिकों का सेवन करके भरतादि—जैसे कोई २
इन्हें निस्सार समझ कर संयमाराधन में तत्पर हुए हैं । इसलिये
इनको निस्सार समझ कर ज्ञानी इनका सेवन नहीं करे । ४२४-४२५
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४२५
- १८ देव भी जन्ममरणशील होते हैं; इसलिये उनके सुख को भी
नश्वर समझ कर श्रुतचारित्रधर्मका सेवन करो । ४२६
- १९ दशम सूत्र । ४२७
- २० श्रुतचारित्र धर्म के आराधनमें तत्पर मुनि किसी की हिंसा न करे,
न दूसरों से हिंसा करावे और न हिंसा करनेवाले की अनु-
मोदना ही करे । ४२७
- २१ ग्यारहवाँ सूत्र का अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र । ४२७
- २२ स्त्रियों में अनासक्त, सम्यग्ज्ञानदर्शन चारित्रिके आराधन में तत्पर
तथा पाप के कारणभूत कर्मों से निवृत्त मुनि वैषयिक सुख की
जुगुप्सा करे । ४२७-४२८
- २३ बारहवाँ सूत्र । ४२९
- २४ क्रोधादि का नाश करे, लोभ का फल नरक समझे, प्राणियों की
हिंसा से निवृत्त रहे, मोक्ष की अभिलाषा से कर्मों के कारणों को
दूर करे । ४२९-४३०
- २५ तेरहवाँ सूत्र । ४३१
- २६ इस संसारमें समय की प्रतीक्षा न करते हुए तत्काल ही
बाह्याभ्यन्तर ग्रन्थि को जान कर परित्याग करे; स्रोत को जान
कर संयमाचरण करे, इस दुर्लभ नरदेह को पाकर किसी की
भी हिंसा न करे । उद्देशसमाप्ति । ४३१-४३३

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयोद्देशके साथ तृतीयोद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, और प्रथम सूत्र । ४३४
- २ सन्धिको जान कर लोकके क्षायोपशमिक भावलोक के विषयमें प्रमाद करना उचित नहीं है । अथवा—सन्धि को जान कर लोक को—पङ्जीवनिकायरूप लोक को—दुःख देना ठीक नहीं है । ४३५
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४३५
- ४ अपनेको जैसे सुख प्रिय है और दुःख अप्रिय, उसी प्रकार सभी प्राणियों को है । इसलिये किसी भी प्राणी की न स्वयं घात करे, न दूसरों से घात करावे, न घात करनेवाले की अनुमोदना ही करे । ४३५-४३६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ४३७
- ६ मुनित्व किसे प्राप्त होता है । ४३७-४४०
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४४०-४४१
- ८ ज्ञानी पुरुष चारित्र्यमें कभी भी प्रमाद न करे, जिनप्रवचनोक्त आहारमात्रा से शरीर-यापन करे । ४४१-४४२
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ४४३
- १० मुनि उत्तम, मध्यम एवं अधम इन सभी रूपों में वैराग्ययुक्त होवे । ४४४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४४५
- १२ जो मुनि जीवोंकी गति और आगतिको जान कर रागद्वेषसे रहित हो जाता है, वह समस्त जीवलोकमें छेदन, भेदन, दहन और हनन-जन्य दुःखों से रहित हो जाता है । ४४५-४४७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ४४८
- १४ मिथ्यादृष्टि जीव भूतकाल और भविष्यत्काल सम्बन्धी अवस्थाओं को नहीं जानते हैं । उन्हें यह नहीं ज्ञात होता कि इसका भूत-काल कैसा था और भविष्यत्काल कैसा होगा ?, कोई २ मिथ्यादृष्टि तो ऐसा कहते हैं कि जैसा इस जीवका अतीतकाल था वैसा ही भविष्यत्काल होगा । ४४८

- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४४९
- १६ तत्त्वज्ञानी जीव अतीतकालिक और भविष्यत्कालिक पदार्थों का चिन्तन नहीं करते, वे तो वर्तमानकाल के ऊपर ही सावधानता से दृष्टि रखते हैं । इसलिये मुनि विशुद्धाचारी या अतीतानागत कालके संकल्प से रहित हो कर, निरतिचार संयमकी आराधना कर पूर्वोपार्जित सकल कर्मोंका क्षण करे । ४५०-४५१
- १७ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ४५१-४५२
- १८ अरति और आनन्दकी असारता का विचार कर, उनके विषय में विचलित न होता हुआ ध्यान मार्ग में विचरण करे, तथा सभी प्रकार के हास्योंका परित्याग कर आलीनगुप्त होते हुए संयमानुष्ठान में तत्पर रहे । ४५२-४५५
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४५५
- २० पुरुष अपना मित्र अपने ही है। बाहरमें मित्र खोजना व्यर्थ है। ४५५-४५७
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४५७-४५८
- २२ जो पुरुष कर्मों के दूर करनेकी इच्छावाला है वह कर्मों को दूर करनेवाला है और जो कर्मों को दूर करनेवाला है वह कर्मों के दूर करने की इच्छावाला है । ४५८-४५९
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४५९-४६०
- २४ अपनी आत्माको बाह्य पदार्थों से निवृत्त कर, उसे ज्ञानदर्शन-चारित्र्य से युक्त कर पुरुष दुःखसे मुक्त हो जाता है । ४६०-४६१
- २५ तेरहवां सूत्र । ४६१
- २६ सत्यको-अर्थात्-गुरु की साक्षिता से गृहीत श्रुतचारित्र्य धर्म सम्बन्धी ग्रहणी और आसेवनी शिक्षा को, अथवा आगमको विस्मृत न करते हुए तदनुसार आचरण करो । सत्यका अनुसरण करनेवाला मेधावी संसार समुद्रका पारगामी होता है और ज्ञानादियुक्त होने से श्रुतचारित्र्य धर्मको ग्रहण कर वह मुनि मोक्षपददर्शी होता है । ४६२

विषय

पृष्ठाङ्क

- २७ चौदहवें सूत्रका अवतरण और चौदहवां सूत्र । ४६३
- २८ रागद्वेष का वशवर्त्ती जीव क्षणभङ्गुर जीवनके परिवन्दन, मानन और पूजनके लिये प्राणातिपात आदि असत्कर्मों में प्रवृत्ति करते हैं। इस प्रकार वे परिवन्दन, मानन और पूजनके विषय में प्रमादशील हो जाते हैं, प्रमादी हो जन्म जरा मरणरूप दुःखार्णव में अपने को डुबो देते हैं, अथवा—इस प्रकार वे उन परिवन्दनादिकों में आनन्द मानते हैं; परंतु वे परिवन्दनादिक उनके हितके लिये नहीं होते । ४६३-४६४
- २९ पन्द्रहवें सूत्रका अवतरण और पन्द्रहवां सूत्र । ४६४-४६५
- ३० ज्ञानचारित्र्ययुक्त मुनि दुःखमात्रासे स्पृष्ट होकर भी व्याकुल नहीं होता । हे शिष्य ! तुम पूर्वोक्त अर्थ अथवा वक्ष्यमाण अर्थ को अच्छी तरह समझो । रागद्वेषरहित मुनि लोकालोक प्रपञ्च से मुक्त हो जाता है । उद्देशसमाप्ति । ४६५-४६६

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्ध प्रतिपादन और प्रथम सूत्र । ४६७-४३८
- २ शुभाध्यवसायपूर्वक संयमके आराधनमें तत्पर मुनि क्रोध, मान माया और लोभको दूर करनेवाला होता है; यह बात तीर्थङ्करों ने कही है । तीर्थङ्करों के उपदेशका अनुसरण करनेवाला साधु आदान का—अष्टादश पापस्थानों का, अथवा कपायों का—वसन करनेवाला और स्वकृत कर्मों का नाश करनेवाला होता है । ४६८-४७२
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४७२-४७३
- ४ जो एक को जानता है वह सबको जानता है, जो सबको जानता है वह एकको जानता है । ४७४-४७५
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ४७५

विषय

पृष्ठाङ्क

- ६ प्रमादी को सबसे भय रहता है और अप्रमादी को किसी से भी नहीं । ४७५-४७७
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४७७-४७८
- ८ जो एकका उपशम करता है वह बहुतका उपशम करता है,
जो बहुतका उपशम करता है वह एकका उपशम करता है । ४७८-४७९
- ९ पांचवें सूत्रका अवतरण और पांचवां सूत्र । ४७९
- १० धीर मुनि-पङ्जीवनिकायलोकके दुःखकारण कर्मोंको जानकर,
पुत्रकलत्रादि तथा हिरण्यसुवर्णादिकी ममता छोड़कर चारित्रिको
ग्रहण करते हैं और परसे पर जाते हैं, ऐसे मुनि अपने जीवन
की अभिलाषा नहीं रखते हैं । ४८०-४८५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४८५
- १२ एकका विवेचन करते हुए दूसरोंका भी विवेचन करता है,
दूसरोंका विवेचन करते हुए एकका भी विवेचन करता है । ४८६-४८७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ४८७
- १४ मोक्षाभिलाषरूप श्रद्धावाला, जैनागमके अनुसार आचरण करता
हुआ, मेधावी अप्रमत्त संयमी क्षपकश्रेणीको प्राप्त करता है । ४८७-४८८
- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४८८
- १६ पङ्जीवनिकायके स्वरूपको जिनोक्त प्रकारसे जानकर, जिससे
पङ्जीवनिकाय लोकको किसी प्रकारका भय न हो उस प्रकारसे
संयमाराधन करे । ४८८-४८९
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४८९
- १८ शस्त्र परसे पर है और अशस्त्र परसे पर नहीं है । ४८९-४९१
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४९१
- २० भावशस्त्र परसे पर होता है, अर्थात्-जो क्रोधदर्शी होता है
वह क्रमशः तिर्यग्दर्शी=निगोदभवसम्बन्धी दुःखोंको देखनेवाला
होता है । ४९२-४९४
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४९४

विषय

पृष्ठाङ्क

- २२ पूर्वोक्त मेधावी मुनिको चाहिये कि क्रोधसे लेकर मोह तकके भावशक्तियों का परित्याग कर क्रोधादिकके फलभूत गर्भदुःखादिसे लेकर निगोददुःखपर्यन्त सभी दुःखोंको दूर करे—यह बात भगवान् तीर्थङ्करने कही है । ४९४-४९५
- २३ वारहवें सूत्रका अवतरण और वारहवां सूत्र । ४९५
- २४ क्रोधादिको दूर करनेवाला अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षण करनेवाला होता है । ४९६
- २५ तेरहवें सूत्रका अवतरण और तेरहवां सूत्र । ४९६
- २६ पश्यकको, अर्थात्—केवलीको उपाधि, अर्थात्—द्रव्योपाधि भावोपाधि, अथवा—कर्मजनित नरकादिभव होता है क्या ?; पश्यकको उपाधि नहीं है । उद्देशसमाप्ति । ४९६-४९९

॥ इति तृतीयाध्ययनम् ॥

*

॥ अथ चतुर्थाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

- १ तृतीय अध्ययनके साथ चतुर्थ अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन । ५००
- २ प्रसङ्गतः सम्यक्त्वका निरूपण । ५००
- ३ सम्यक्त्व शब्दकी सिद्धि, सम्यक्त्वका लक्षण, सम्यक्त्वके लक्षणके विषयमें वादियों की विप्रतिपत्तिका निरसन । ५००-५११
- ४ सम्यक्त्वका द्वैविध्य और दशविधत्वका सविस्तर विवरण । ५१२-५२८
- ५ सम्यक्त्वकी स्थिति । ५२९
- ६ सम्यक्त्वके प्रादुर्भावकी व्यवस्था । ५२९-५३०
- ७ सम्यक्त्वका अन्तरकाल । ५३०
- ८ सम्यक्त्वका फल । ५३१-५५९
- ९ सम्यक्त्वप्राप्तिका क्रम । ५५९-५७२

विषय

पृष्ठाङ्क

- १० सम्यक्तत्वमोहनीयका स्वरूप । ५७३-५७५
- ११ मिश्रमोहनीय । ५७६
- १२ मिथ्यात्वमोहनीय । ५७६-५८४
- १३ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ५८५
- १४ सभी तीर्थङ्करोंद्वारा प्रतिपादित सम्यक्तत्वका निरूपण । ५८५-५८८
- १५ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ५८९
- १६ यह सर्वप्राणातिपातविरमणादिरूप धर्म-शुद्ध, नित्य और शाश्वत है । इस धर्मको भगवान् ने पञ्चजीवनिकायरूप लोकको दुःख-दावानलके अन्दर जलते हुए देखकर प्ररूपित किया है । भगवान् ने इस धर्मका प्ररूपण उत्थित अनुत्थित आदि सर्वोंके लिये किया है । ५८९-५९३
- १७ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ५९३
- १८ भगवान् का वचन सत्य ही है, भगवान् ने वस्तुका स्वरूप जिस प्रकार प्रतिपादन किया है वह वस्तु वैसी ही है-इस प्रकारके श्रद्धानलक्षण सम्यक्तत्वका प्रतिपादन केवल आर्हतागममें ही कहा गया है; अन्यत्र नहीं ! ५९३-५९४
- १९ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ५९५
- २० उस सम्यक्तत्वको प्राप्त कर, धर्मको उपदेश-आदि उपायद्वारा जान कर सम्यक्तत्वको प्रशम-संवेगादिद्वारा प्रकाशित करे, सम्यक्तत्वका परित्याग न करे । ५९५-५९६
- २१ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ५९७
- २२ ऐहिक और पारलौकिक इष्ट-अनिष्ट शब्दादि विषयोंमें वैराग्य रखे । ५९७
- २३ छठा सूत्र । ५९८
- २४ लोकैषणा न करे । ५९८-५९९
- २५ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ५९९
- २६ जिसको लोकैषणा नहीं है उसको सावध-व्यापारमें प्रवृत्ति कहाँसे

हो ! अथवा—जिसको यह सम्यक्त्वपरिणति नहीं है उसको सावधान्यगुणानसे रहित करनेवाली विवेकयुक्त परिणति कहाँसे हो ! ५९९-६००

२७ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ६००

२८ इस सम्यक्त्वको जो मैंने कहा है उसे तीर्थङ्करोंने देखा है, गणधरोंने सुना है, लघुकर्मा भव्यजीवोंने माना है; ज्ञानावरणीय के क्षयोपशमसे भव्यजीवोंने जाना है । ६००-६०१

२९ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६०१

३० जिनवचनमें श्रद्धारूप सम्यक्त्वके अभावसे मातापिता आदिके साथ सांसारिक संबन्ध रखता हुआ, मृत्युद्वारा उनसे विद्युक्त होता हुआ, या शब्दादि विषयोंमें आसक्ति करता हुआ मनुष्य एकेन्द्रियादिक भवों में भटकता रहता है । ६०१

३१ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६०२

३२ दिन-रात मोक्षप्राप्तिके लिये उद्योगयुक्त और सर्वदा उत्तरोत्तर प्रवर्द्धमान हेयोपादेयविवेकपरिणामसे युक्त होते हुए तुम प्रमत्तों को—असंयतोंको आर्हत धर्मसे बहिर्भूत समझो; और पञ्चविध प्रमादोंसे रहित हो मोक्षप्राप्तिके लिये अविच्छिन्न प्रयत्न करो, अथवा—अष्टविध कर्मशत्रुओंको जीतनेके लिये प्रराक्रम करो । उद्देशसमाप्ति । ६०२-६०४

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देशके साथ द्वितीय उद्देशका संबन्ध—प्रतिपादन; प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६०५

२ जो आस्रव—कर्मबन्धके कारण हैं वे परिस्रव—कर्मनिर्जराके कारण हो जाते हैं, और जो परिस्रव—कर्मनिर्जराके कारण हैं वे आस्रव—

कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं। जो अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हैं वे अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं, जो अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हैं वे अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हो जाते हैं।

६०६-६१५

३ द्वितीय सूत्र।

६१५

४ 'जो आस्रव हैं वे परिस्रव हैं जो परिस्रव हैं वे आस्रव हैं, जो अनास्रव हैं वे अपरिस्रव हैं जो अपरिस्रव हैं वे अनास्रव हैं'-इन पदोंको जानता हुआ ऐसा कौन मुनि है जो षड्जीवनिकायको बँधते हुए और मुक्त होते हुए जिनागमानुसार जान कर, तथा सभी तीर्थङ्करोंद्वारा भिन्न-भिन्नरूपसे प्रतिबोधित बन्धकारण और निर्जराकारणको जानकर धर्माचरणमें प्रवृत्त न हो !

६१५-६१६

५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।

६१६

६ प्रवचनज्ञानसे युक्त मुनि, हेयोपादेयको तथा यथोपदिष्ट धर्म को जाननेवाले संसारियोंके लिये उपदेश देते हैं। ज्ञानीका उपदेश सुनकर, आर्त्त अथवा प्रमत्त भी प्रबुद्ध हो जाते हैं। मैंने जो कुछ कहा है और मैं जो कुछ कहता हूँ वह सत्य ही हैं। मैंने यह सब भगवान्से सुनकर ही कहा है। मोक्षाभिलाषीको इसमें सम्यक्त्व-श्रद्धान रखना चाहिये।

६१६-६२०

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।

६२०-६२१

८ संसारी जीव मृत्युसे नहीं बच सकते। वे धर्मसे बहिर्भूत होनेके कारण इच्छाके अधीन रहते हैं, अति-असंयमी होते हैं, काल-मृत्युसे गृहीत होते हैं, अथवा-आगामी वर्षमें या उसके बाद के वर्षोंमें धर्माचरण करनेके संकल्प करते रहते हैं, और धान्यादि संग्रह करनेमें ही लगे रहते हैं; ऐसे संसारी जीव अनन्तवार एकेन्द्रियादिक भवोंमें जन्म लेते रहते हैं।

६२१-६२४

९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।

६२४

१० इस लोकमें कितनेक जीवोंको बारंवार उत्पन्न होनेके कारण

- उनसे परिचय हो जाता है, नरकादि स्थानोंमें उत्पन्न हुए वे जीव नरकादि सम्बन्धी दुःखों का अनुभव करते हैं। ६२४-६२५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र। ६२५
- १२ क्रूरकर्म करनेवाला जीव बहुतकाल तक नरकमें रहता है और क्रूरकर्म नहीं करनेवाला जीव कभी भी नरकमें नहीं जाता है। ६२६
- १३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। ६२७
- १४ चतुर्दशपूर्वधारी और केवलज्ञानीके कथनमें थोड़ासा भी अन्तर नहीं होता ! ६२७-६२८
- १५ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र। ६२८
- १६ इस मनुष्यलोकमें कितनेक श्रमण ब्राह्मण—‘सभी प्राणी, सभी भूत, सभी जीव और सभी सत्त्व हनन करनेयोग्य हैं, हनन करने के लिये आज्ञा देनेयोग्य हैं, हनन करनेके लिये ग्रहण करने योग्य हैं और विषशस्त्रादिद्वारा मारने योग्य हैं; इसमें कोई दोष नहीं है’ इस प्रकार कहते हैं। यह सब अनार्यवचन ही है। ६२८-६३१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। ६३२
- १८ सभी प्राणी, सभी भूत—आदि हनन करनेके योग्य हैं, इत्यादि जो कोई श्रमण—ब्राह्मण कहते हैं, उनका यह कथन अनार्यवचन है’ इस प्रकार आर्योंका कथन है। ६३२-६३३
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र। ६३४
- २० ‘सभी प्राणी, सभी भूत आदि हनन करनेयोग्य नहीं हैं—इत्यादि कथन आर्योंका है’—इस प्रकार स्वसिद्धान्तप्रतिपादन। ६३५-६३६
- २१ ग्यारहवाँ सूत्रका अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र। ६३६
- २२ दुःख जैसे अपने लिये अप्रिय है उसी प्रकार वह सभी प्राणी, भूत—आदिके लिये भी अप्रिय है। अतः किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। उद्देशसमाप्ति। ६३६-६३८

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

- १ द्वितीय उद्देशके साथ तृतीय उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६३९
- २ धर्मसे बहिर्भूत लोगोंकी उपेक्षा करो, ऐसे लोगोंकी उपेक्षा करनेवाला मनुष्य ही विद्वान है । ६३९-६४०
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६४१
- ४ विद्वान मनुष्य मनोवाक्कायके सावधव्यापाररूप दण्डके त्यागी होते हैं, अष्टविध कर्मोंके त्यागी होते हैं, उनके शरीर शोभा संस्कार आदिसे रहित होते हैं, अतएव वे सरल होते हैं एवं आरम्भजनित दुःखोंके अभिज्ञ होते हैं । विद्वानके इस स्वरूपको सम्यक्तत्त्वदर्शी-केवलीने कहा है । ६४१-६४६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ६४६-६४७
- ६ सम्यक्तत्त्वदर्शी मुनि-सर्वज्ञ, यथावस्थित अर्थको प्रतिबोधित करने-वाले तथा अष्टविध कर्मोंको दूर करनेमें कुशल होते हुए सभी प्रकारसे कर्मोंको जानकर ज्ञ और प्रत्याख्यानरूप दो प्रकारकी परिज्ञाको कहते हैं । ६४७-६४८
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६४८
- ८ इस मनुष्यलोकमें आर्हत आगमका श्रवण, मनन और समाराधन करनेवाला, हेयोपादेयके विवेकमें निपुण, रागद्वेषरहित मनुष्य आत्माको स्वजन-धन-शरीरादिसे भिन्न समझकर शरीरमें आस्था न रखे । ६४९-६५४
- ९ पञ्चम सूत्र । ६५४
- १० तपस्या-आदिके द्वारा शरीरका शोषण करे, शरीरको जीर्ण बना दे । ६५४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६५५
- १२ जैसे अग्नि जीर्णकाष्ठोंको भस्म कर डालती है उसी प्रकार आत्मा के शुभ परिणाम सम्यग्दर्शनादिमें सावधान और शब्दादि

विषय

पृष्ठाङ्क

- विषयोंमें रागरहित मनुष्य ज्ञानावरणीयादि अष्टविध कर्मोंको भस्म कर डालता है । ६५५
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ६५६
- १४ मुनि इस मनुष्यलोकको परिमित आयुवाला जानकर प्रशम गुणकी वृद्धि करके क्रोधादि कषायोंका त्याग करे । ६५६
- १५ आठवां सूत्र । ६५७
- १६ हे मुनि ! क्रोधादिवश त्रिकरण-त्रियोगसे प्राणातिपात करनेसे जो प्राणियोंको दुःख होता है, या क्रोधादिसे प्रज्वलित मनवाले जीवको जो मानसिक दुःख होता है उसको समझो, और क्रोधजनित कर्मविपाकसे भविष्यत्कालमें जो दुःख होता है उसे भी समझो । ऐसे क्रोधी व्यक्ति भविष्यत्कालमें नरकनिगोदादि-भवंसंवन्धी दुःखोंको भोगते हैं । दुःखागमके भयसे कांपते हुए जीवोंको तुम दयादृष्टिसे देखो । ६५७-६६१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६६१
- १८ जो भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशमें श्रद्धायुक्त हैं, और उनके उपदेश को धारण करनेके कारण क्रोधादिकषायरूप अग्निके प्रशान्त हो जानेसे जीतीभूत हो गये हैं, अतएव जो पापकर्मोंके विषयमें निदानरहित हैं, वे ही मोक्षमुखके भागी कहे गये हैं । ६६१-६६४
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६६४
- २० हे शिष्य ! जिसलिये क्रोधादिकषायोंसे युक्त जीव अनन्त दुःख पाता है, इसलिये तुम आर्हतागम परिशीलन-जनित सम्यग्ज्ञानसे युक्त अतिविद्वान् होकर क्रोधादिकषायजनित सन्तापसे अपनेको बचाओ । उद्देशसमाप्ति । ६६४-६६५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ तृतीय उद्देशके साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६६६
- २ मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयमको छोड़कर और संयमको प्राप्तकर, शरीरको प्रथम प्रव्रज्याकालमें साधारण तपसे, बादमें प्रकृष्ट तपसे, और अन्तमें पण्डित मरणद्वारा शरीरत्यागकी इच्छासे युक्त हो मासार्द्धमास क्षपणादि तपोंसे पीडित-कृश करे । ६६६-६६७
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६६८
- ४ उपशमका आश्रयण करके कर्मविदारणमें समर्थ, संयमाराधनमें खेदरहित, जीवनपर्यन्त संयमाराधनमें तत्पर और समिति एवं सम्यग्ज्ञानादि गुणोंसे युक्त हो कर मुनि सर्वदा संयमाराधनमें प्रयत्नयुक्त रहे । ६६८
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ६६८-६६९
- ६ मोक्षगामी वीरोंका यह संयमरूप मार्ग कठिनापूर्वक सेवनीय है । ६६९
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६६९
- ८ अन्तप्रान्त आहारादिसे और अनशनादिसे अपने शरीरके मांस शोणितको सुखाओ । इस स्वशरीरशोषक मोक्षार्थी पुरुषको तीर्थङ्करोंने कर्मविदारण करनेमें समर्थ और श्रद्धेयवचन कहा है । और जो ब्रह्मचर्य महाव्रतमें तत्पर होकर कर्मोपचयका क्षपण करता है वह भी श्रद्धेयवचन है । ६६९-६७०
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ६७०
- १० साधु विषयोंसे अपनी इन्द्रियोंको हटा कर भी ब्रह्मचर्यमें स्थित हो कर भी और श्रद्धेयवचन हो कर भी यदि शब्दादि विषयभोगोंमें आसक्त होता है तो वह बाल अपने कर्मबन्धको काटनेमें समर्थ नहीं होता ! वह बाल मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयम सम्बन्धको नहीं छोड़ पाता ! आत्महितको

नहीं जाननेवाला उस बालको भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशरूप
प्रवचनका अथवा सम्यक्त्वका लाभ नहीं होता !

६७०-६७५

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।

६७५

१२ जिसको पूर्वकालमें सम्यक्त्व नहीं मिला है और भविष्यत्कालमें
भी जिसे सम्यक्त्व नहीं मिलनेवाला है उसे वर्त्तमानमें सम्यक्त्व
कहांसे मिले ?

६७५-६७७

१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ।

६७७

१४ जो भोगविलाससे रहित होता है वही जीवाजीवादि पदार्थोंका
सम्यग्ज्ञाता तत्त्वज्ञ आरम्भसे उपरत होता है । यह आरम्भसे
उपरमण होना ही सम्यक्त्व है । इस आरम्भोपरमणसे जीव घोर
दुःखजनक कर्मबन्धको, वधको और दुस्सह शारीरिक परितापको
नहीं पाता है । अथवा जिस आरम्भसे जीव घोर दुःखजनक
कर्मबन्ध और वधको तथा दुस्सह शारीरिक मानसिक परिताप
को पाता है ।

६७७-६८०

१५ आठवें सूत्रका अवतरण आठवां सूत्र ।

६८०

१६ हिरण्यरजत मातापिता आदिका सम्बन्धरूप अथवा प्राणातिपात-
रूप ब्राह्म आस्रवको और विषयाभिलाषरूप आन्तर स्रोतको रोक
कर इस लोकमें मनुष्योंके बीच मोक्षामिलापी हो सावद्यव्या-
पारका परित्याग करे । अथवा इस लोकमें मनुष्योंके बीच ब्राह्म
स्रोतको छिन्न कर निष्कर्मदर्शी हो जावे ।

६८०-६८२

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र ।

६८२

१८ ज्ञानावरणीयादिक कर्म अवश्यमेव स्व-स्वफलजनक होते हैं-ऐसा
जानकर आर्हतागमजनित सम्यग्ज्ञानवान् मुनि कर्मबन्धके कारण
सावद्य व्यापारको छोड़ता है ।

६८२-६८३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र ।

६८३

२० हे शिष्य ! जो कोई कर्मविदारण करनेमें उत्साहयुक्त, समिति-
युक्त, स्वहितमें उद्योगयुक्त अथवा-सम्यग्ज्ञानादियुक्त, सर्वदा

संयमाराधनमें सावधान, हेयोपादेयके ऊपर सर्वदा दृष्टि रखने-
वाले, अव्याबाध आनन्दस्वरूप मोक्षके अभिलाषी और कषायों
से निवृत्त होते हुए यथावस्थित लोककी-कर्मलोक अथवा विप-
यलोककी उपेक्षा करते हुए थे, वे चाहे पूर्व-आदि कसी भी
दिशामें रहे हुए हों; सत्य मार्गमें ही स्थित थे ।

६८४-६८७

२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र ।

६८७

२२ वीर-समित-आदि विशेषणोंसे युक्त उन महापुरुषोंके ज्ञानका
वर्णन हम आगे करेंगे । क्या उनको उपाधि है ? पश्यकको उपाधि
नहीं होती है । उद्देशसमाप्ति ।

६८७-६८८

२३ चतुर्थ उद्देशकी टीकाका उपसंहार ।

६८९-६९०

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥



अंशुद्धम्

शुद्धम्

पृष्ठम्

पंक्तिः

तात्पर्यम् । “ वहुं परधरे

तात्पर्यम् । तथा—‘ गृहस्था
मे=मह्यम् अनशनादिकं न
ददाति’ इति हेतोः वीरो न
न कुप्येत्=न कोपं कुर्यात् ।

“ वहुं परधरे—

२६०

२

—आदानाकोपनम् ,

, आदानाकोपनम् ,

२६१

१

प्राथेयं

पाथेयं

२६८

२

सर्वामगन्धम्=अशु—

सर्वामगन्धम्=सर्वम् अशु—२७१

८

आदिस्समाणे

अदिस्समाणे

२७३

२

आदिस्समाणे

अदिस्समाणे

२७३

३

आदिश्यमानः

अदिश्यमानः

२७३

५

‘आदिश्यमान’ इति ।

‘अदिश्यमान’ इति

२७३

७

आदिश्यमानः

अदिश्यमानः

२७३

८

द्रव्यक्षेत्रकालभावपेक्षया

द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षया

२७८

५

—रनेपणीयमयि

रनेपणीयमपि

२८३

४

लद्धुं

लद्धु

२८५

५

माद्येत

माद्येत्

२८५

८

स्निह्यात्

स्निह्येत्

२८५

८

—मवप्स्येत्

—मवप्स्येत्

२८५

९

माद्येत

माद्येत्

२८६

८

माद्येत

माद्येत्

२८७

१

स्निह्यात्

स्निह्येत्

२८८

१

अवप्स्येत्=

अवप्स्येत्=

२८८

३

कुशलो

कुसलो

२९१

५

ना—

प्रा—

३२३

८

तं

तत्

३३४

८

‘त’—मित्यादि ।

‘त’—दित्यादि ।

३३४

१०

अष्टमम्

शुद्धम्

पृष्ठम्

पंक्तिः

तं	तत्	३३४	१०
सहइ	सहई	३३६	७
सहइ	सहई	३३६	७
अचइ	अच्चेइ	३४३	६
पसुचइ	पनुचइ	३४३	६
वर्त्तयेत्	वर्त्तकः	३४३	७
यस्य दुर्वसुः	यस्य स दुर्वसुः	३४३	१०
वर्तमानः	वर्त्तकः	३४४	२
अणोद्घातन-	अणोद्घातन-	३५६	३
घटते=	घटते,	३६४	९
वयवं	वेयवं	३८४	७
दुःखा	दुःखा	३८९	४
बिदित्वा	बिदित्वा	४०५	१
मतिमान्=	मतिमान् मेधावी=	४०५	१
रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते	रागद्वेषरहित इत्यर्थः, सर्वलोके=समस्तजीवलोके न छिद्यते	४४६	७
पुञ्चे	पुञ्चं	४४८	२
एतनुदर्शी	एतनुदर्शी	४५०	६
सृष्टो सन्	सृष्टः सन्	४६५	६
सम्यक्त्वं	सम्यक्त्वं	५४४	५
ज्ञानावरणीया-	ज्ञानावरणीया-	५६१	१०
काष्ठहारादय-	काष्ठहारादय-	५९२	६
तिर्थकरै-	तिर्थकरै-	५९४	८
तत्पूरतो	तत्पूरतो	५९६	४
-कर्तव्य-	-कर्तव्य-	५९७	१
पुद्गल परिणा-	पुद्गलपरि-	५९७	८
बालग्लाना-	बालग्लाना-	६०९	४
भवे देवे दित्यर्थः	भवेदेवेत्यर्थः ।	६१६	४

तत्र निखिलजीवभेदेन सकलोपाधिरहितेनोत्तमगुणरञ्जितेन स्वीकृतपञ्चमहा-
तेन पट्कायसंयमोपस्थितमतिना मुनिना स्वजनादिषु नाभिप्लव्धो विधेय इति
दर्शयति सूत्रकारः—“जे गुणे” इत्यादि.

न, वचन और काय से विरति परिणाम ही जगता रहेगा। पंचम
देशमें—समस्त प्रकार के सावध कार्यों से परे रहनेवाले उस संयमी को
अपने स्वीकृत संयमयात्रानिर्वाह के लिये, जो अपने निमित्त बनाये हुए
माहारपानी आदि में प्रवृत्त हैं उनकी नेश्रायमें विहार करना चाहिये।
उठवें उद्देश में—लोक के नेश्राय से विहार करते हुए भी उसके मनमें
अपने परिचित अपरिचित परिजनों से मिलने के लिये उत्सुक परिणाम
हीं होना चाहिये, इन्हीं सब बातों का इन छह उद्देशों में विशेषरूप
खुलासा किया जावेगा।

इसमें सर्वप्रथम प्रथम उद्देशका प्रारंभ करने के लिये सूत्रकार—जीवों
भेदज्ञानसे समन्वित, सकल उपाधि से रहित, उत्तमोत्तमगुणविशिष्ट,
पञ्चमहाव्रताराधक, छहकाय के जीवों की रक्षा करने में दत्तावधान, संयमी
अपने आपसजन मातापितादिक में ममताभाव नहीं रखना चाहिये।
सका विवेचन करते हैं—‘जे गुणे से मूलद्वारे’ इत्यादि।

तेना। इहयमां तेना प्रति सदा मन-वचन अने कथाथी विरतिपरिणाम न जगता
रहेथे। (५) पांथमा उद्देशमां—समस्त प्रकारना सावध कार्योथीद्वर रहेतार ते संयमीअ
पोताना स्वीकृत संयमयात्रा—निर्वाह माटे ने पोताना निमित्ते गनावेला आहार-
पाणी आदिमां प्रवृत्त छे तेनी नेश्रायमा विहार करवो जेधअ। (६) छट्ठा उद्देशमां
लोअनी नेश्राये विहार करवा छतां मनमां पोताना परिचित अने अपरिचित
परिजनोथी भणवाने उत्सुकता राखे नहि। आ जधी बातोना आ छ उद्देशमां—
विशेष रूपथी खुलासा करवामां आवथे

अमां सर्वप्रथम-प्रथम उद्देशना प्रारंभ करवाने माटे सूत्रकार—जिवाना
भेदज्ञानथी समन्वित, सकल उपाधिथी रहित, उत्तमोत्तमगुणविशिष्ट, पंच-
महाव्रताराधक, छ कथना छवोनी रक्षा करवामां दत्तावधान संयमी मुनिने पोताना
आप्तजन-मातापितादिकमा ममताभाव नहि राखवो जेधअ। तेनुं विवेचन करे छे
—‘जे गुणे से मूलद्वारे’ इत्यादि।

मूलम्—जे गुणे से मूलदूठाणे, जे मूलदूठाणे से गुणे इति
 से गुणदूठी महया परियावेणं पुणो पुणो वसे पमत्ते, तंजहा—
 माया मे पिया मे भइणी मे भज्जा मे पुत्ता मे धूआ मे ण्हुसा
 मे सहि-सयण-संगंथ-संथुआ मे विवित्तुवगरणपरिवट्टणभोयण-
 छायाणं मे, इच्चत्थं गढिए लोए वसे पमत्ते अहो य राओ य
 परितप्पमाणे कालाकालसमुदुट्ठाई संजोगदूठी अदुठालोभी आ-
 लुम्पे सहसाकारे विणिविट्ठचित्ते एत्थ सत्थे पुणो पुणो ।

छाया—यो गुणः समूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद्गुणः, इति स गुणार्थी महता
 परितापेन पुनः-पुनः वसति प्रमत्तः, तद्यथा—माता मे पिता मे भगिनी मे भार्या मे
 पुत्रा मे दुहिता मे स्नुषा मे सखिस्वजनसंग्रन्थसंस्तुता मे, विवित्तोपकरणपरि-
 वर्तनभोजनाच्छादनं मे, इत्यर्थे गृद्धो लोको वसति प्रमत्तः अहश्च रात्रिं च परि-
 तप्यमानः कालाकालसमुत्थायी संयोगार्थी अर्थालोभी आलुम्पः सहसाकारः विनि-
 वेष्टचित्तः अत्र शस्त्रे पुनः पुनः ॥१॥

शब्दार्थ—जो मुनि छहकाय के जीवों के स्वरूप को भली-भाँति
 जानकर कृत कारित अनुमोदित एवं मन, वचन, कायसे उनके आरंभ
 का त्याग कर देता है वह अपने कर्तव्यमार्ग का ज्ञाता कहा जाता है
 और वही गुणस्थान एवं मूलस्थान के ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोक
 पर विजय प्राप्त करनेवाला होता है। अथवा—अपनी बुद्धि से या दूसरे
 किसी के कथन से अथवा तीर्थंकरों के उपदेश से या किसी आचार्य के
 समीप सुनकर यह जान लेता है कि जो गुण है वही मूलस्थान है।
 जो मूल है वही गुणस्थान है। इसलिये वह गुणार्थी अपरिमित दुःखसे

शब्दार्थ—जे मुनि छ कायना लुपोना स्वइपने लली लांती न्हाणीने कृत-
 कारित अनुमोदित अने-मन, वचन कायाथी तेना आरंभने त्याग करे छे ते-
 पोताने-कर्तव्य-मार्गने ज्ञाता कहेवाय छे, अने ते गुणस्थान तेमज भूण
 स्थानना ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोकपर विजय प्राप्त करना थाय छे. अथवा—
 पोतानी बुद्धिथी अगर भीज केछना कथनथी अथवा तीर्थंकरोना उपदेशथी
 अथवा आचार्यने समीपे सोलणीने जे न्हाणी ले छे के जे गुण छे ते भूणस्थान
 छे. जे भूण छे ते गुणस्थान छे भारे ते गुणार्थी-अपरिमित दुःखथी गण-

રાગદ્વેપરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન હોતા હૈ। ઇસ પ્રકાર વહ ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમેં આસક્ત હોતા હુઆ યહ માનતા હૈ કિ-યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા પુત્ર હૈ, યહ મેરી પુત્રી હૈ, યહ મેરી વહુ હૈ, યે મેરે મિત્ર હૈ। યે મેરે માતામહ આદિ હૈ, યે મેરે સંબંધી જનોં કે સંબંધીજન હૈ, યે મેરે પરિચિત વન્ધુ હૈ, યે મેરે સુન્દર ઉપકરણ હૈ, યહ મેરા વિનિમય-એક વસ્તુકો વેંચકર ઉસકે પ્રાપ્ત મૃત્યુ સે ખરીદા હુઆ પદાર્થ હૈ, યે મેરે યાને કે પદાર્થ હૈ, યે મેરે પહિરને કે કપડે હૈ। ઇસ પ્રકાર યહ જીવ ઇન પૂર્વોક્ત પદાર્થોં મેં હી પ્રમાદી બના હુઆ હૈ। ઓર ઇનકે લિયે હી રાત-દિન શારીરિક, માનસિક એવં વાચનિક અનેક કષ્ટોં કો સ્થેલતા હુઆ કાલ-અકાલકે વિચાર સે રહિત હોકર મનમાના કાર્ય કરતા રહતા હૈ। કારણ કિ યહ સંયોગ કા અભિલાષી હૈ। ઇસલિયે સવ પ્રકારસે ધનકા અભિલાષી બના હુઆ હૈ। અનુચિત માર્ગ સે બી ધન કે સંગ્રહ કરને મેં જરા બી સંકોચ નહીં કરતા હૈ। લોભરૂપી મહાસર્પ સે ગ્રસિત હો કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કે જ્ઞાન સે રહિત હો કર જિસ કિસી બી રીતિસે જો ધનકા સંગ્રહ કરતા હૈ ઉસકા નામ આલુમ્પ હૈ-યહ જીવ પ્રમાદી બનકર ઇસી પ્રકાર સે ધન કે સંગ્રહ કરને મેં લવલીન હોતા રહતા હૈ। ઇસ તરહ યહ

દ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન થાય છે. આ પ્રકારે તે ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમા આસક્ત થઈને માને છે કે-આ મારી માતા છે. આ મારો પુત્ર છે, આ મારી પુત્રી છે, આ મારી વહુ છે, આ મારો મિત્ર છે, આ મારા માતામહ આદિ છે. આ મારા સંબંધીજનોના સંબંધીજન છે, આ મારા પરિચિત બંધુ છે, આ મારા સુંદર ઉપકરણ છે, આ મારો વિનિમય-એક વસ્તુને વેચીને તેની કિંમતથી ખરીદેલી વસ્તુ-છે, આ મારો ખાવાનો પદાર્થ છે, આ મારા પહેરવાના કપડા છે. આ પ્રકારે આ જીવ આવા પૂર્વોક્ત પદાર્થોમા જ પ્રમાદી બનેલો છે, અને તેના માટે જ રાતદિન, શારીરિક, માનસિક અને વાચનિક અનેક કષ્ટોને ઉઠાવતો કાળ અકાળના વિચારથી રહિત થઈને મનમાન્યુ કાર્ય કરવા લાગે છે, કારણ કે તે સંયોગનો અભિલાષી છે. તેથી બધા પ્રકારથી ધનનો અભિલાષી બની રહે છે. આ અનુચિત માર્ગથી પણ ધનનો સંગ્રહ કરવામાં જરા પણ સંકોચ કરતો નથી. લોભરૂપી મહાસર્પથી ગ્રસિત હોઈને કર્તવ્ય અકર્તવ્યના જ્ઞાનથી રહિત થઈને હોઈ પણ રીતે જે ધનનો સંગ્રહ કરે છે તેનું નામ આલુમ્પ છે. આ જીવ પ્રમાદી બનીને આ પ્રકારથી ધનનો સંગ્રહ કરવામાં રચ્યો થયો રહે છે, આ

ટીકા—અસ્યાધ્યયનસ્ય અનન્તરપરમ્પરસૂત્રૈરિત્થં સમ્બન્ધઃ—અનન્તરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—ષટ્કાયસ્વરૂપં સમ્યગ્જ્ઞાત્વા ત્રિકરણત્રિયોગેન તદારમ્ભં પરિત્યજતિ સ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા ભવતિ, સ એવ ચ ગુણમૂલસ્થાનજ્ઞાનપૂર્વકં કષાયાદિલોકવિજયી ભવતિ । પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—સ્વબુદ્ધ્યા પરવ્યાકરણેન તીર્થદ્ધરોપદેશાદન્યેષાં

અપને હિત ઔર અહિત કા કુછ ખી વિચાર ન કર સહસાકર્મકારી હો જાતા હૈ ઇસ પ્રકાર યહ શબ્દાદિવિષયોં મેં આસક્તચિત્ત હો ઉનકે રક્ષણકે સાધનોંકો સંગ્રહ કરનેકે લિયે અપને હિત ઔર અહિત કે વિવેક સે વિકલ બન રાત-દિન છહકાયકે જીવોંકે ઉપસર્દન કરનેમેં હી બારમ્બાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।

ટીકાર્થઃ—ઇસ અધ્યયન કા અનન્તર ઔર પરમ્પર સૂત્રોંસે સંબંધ હૈ—ઉસમેં અનન્તર સૂત્રોંકા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કા સ્વરૂપ અચ્છી તરહ જાનકર કૃત કારિત ઔર અનુમોદિત એવં મન, વચન ઔર કાયસે ઉનકે આરંભ કા ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી અપને કર્તવ્ય કો નિર્દોષ રીતિસે પાલતા હૈ, ઔર વહી અપને તપસંયમ મેં પૂર્ણરૂપ સે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ । એસા વહ સંયમી જન ગુણસ્થાન ઔર મૂલસ્થાન કો જાનતા હુઆ કષાયાદિકરૂપ લોક પર વિજય પ્રાપ્ત કરને વાલા હો જાતા હૈ । પરમ્પર સૂત્રોંસે ઇસ અધ્યયન કા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—વહ સંયમી જન અપની બુદ્ધિ સે યા દૂસરોં કે કથન સે અથવા તીર્થકર

રીતે પોતાના હિત અને અહિતનો જરા પણ વિચાર ન કરતાં સહસા કર્મકારી થઈ બાધ છે. તેવી જ રીતે તે શબ્દાદિ વિષયોમાં આસક્ત ચિત્ત કરીને તેના રક્ષણને માટે રક્ષણના સાધનોનો સંગ્રહ કરવામાં પોતાના હિતાહિતનો વિચાર કર્યા વગર બુધ્ધિગુણ રાતદિવસ છકાયના જીવોનું ઉપસર્દન (ઘાત) કરવામાં જ વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે.

ટીકાર્થઃ—આ અધ્યયનનો અનન્તર અને પરમ્પર સૂત્રોથી સંબંધ છે. તેમાં અનન્તર સૂત્રોના સંબંધ આ પ્રકાર છે—

જે મુનિ છકાયના જીવોનું સ્વરૂપ સારી રીતે જાણીને કૃત કારિત અને અનુમોદિત તેમજ મન, વચન, કાયથી તેના આરંભનો ત્યાગ કરે છે, તે પોતાના કર્તવ્યને નિર્દોષ રીતિથી પાળે છે, અને તે પોતાના તપસંયમમાં પૂર્ણરૂપથી નિષ્ણાત બને છે. એવો તે સંયમીજન ગુણસ્થાન અને મૂળસ્થાનનો જાણકાર કષાયાદિકરૂપ લોકપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા હોય છે. પરમ્પર સૂત્રોમાં આ અધ્યયનનો સંબંધ આ પ્રકાર છે—તે સંયમીજન પોતાની બુદ્ધિથી અગર બીજાના કથનથી અથવા તીર્થકર પ્રણના ઉપદેશથી અથવા બીજા કોઈ આચાર્યની પાસેથી

વા કેપાશ્ચિદાચાર્યાદીનાં સમીપે ગત્વા જાનીયાત્ । કિં તદિત્યાહ 'જે ગુણે' ઇત્યાદિ । યો ગુણઃ । ગુણ્યતે=આવર્ત્યતે-ચતુર્ગતિપુ ગમનાગમનાદિરૂપેણ પરિણમ્યતે આત્માડનેનેતિ ગુણઃ ।

પ્રમુ કે ઉપદેશ સે યા અન્ય કિસી આચાર્ય કે સમીપ સુનકર યહ જાન લેતા હૈ કિ જો ગુણ હૈ વહી મૂલસ્થાન હૈ ઇત્યાદિ । ચાર ગતિયો-નરકગતિ, તિર્યચ્ચગતિ, મનુષ્યગતિ ઓર દેવગતિ-મેં ગમન ઓર આગમન રૂપ સે આત્મા જિસકે દ્વારા ભ્રમણ કરતા હૈ ઉસકા નામ ગુણ હૈ । ઇસ ગુણ શબ્દકા વાચ્યાર્થ-શબ્દાદિક વિષય હોતા હૈ । યહ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયકા અપના-અપના સ્વતંત્ર ગુણ હૈ ।

જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કો અપને આપ યા કિસી કે ઉપદેશ સે જાનકર છકાય કે આરંભ સે વિરત હોતા હૈ વહ મુનિ અપને અંગીકૃત સંયમ કા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા હોનેસે કુશલ માના જાતા હૈ । છકાય કે આરંભ સે નિવૃત્તિ તથ તક સંભવ નહીં હો સકતી કિ જય તક વહ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં-ચાહે વે મનોજ્ઞ હોં-ચાહે અમનોજ્ઞ-રાગદ્વેષ કરને કા ત્યાગ નહીં કરે, અતઃ યહ નિશ્ચિત્ત હૈ કિ છહકાય કે આરંભ કા ત્યાગ, પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં રાગદ્વેષ કે ત્યાગ કરને સે હી હોતા હૈ । ઇનકે વિષયોં મેં લોલુપી ઉનકે આરંભ કા

સાલગી એવું બણે છે કે 'જે ગુણ છે તે મૂળસ્થાન છે' ઇત્યાદિ. ચાર ગતિઓ નરકગતિ, તિર્યચ્ચગતિ, મનુષ્યગતિ અને દેવગતિમાં ગમન અને આગમનરૂપથી આત્મા જે દ્વારા ભ્રમણ કરે છે તેનું નામ ગુણ છે. આ ગુણ-શબ્દનો વાચ્યાર્થ (મુખ્ય અર્થ) શબ્દાદિક વિષય થાય છે. તે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનો સ્વતંત્ર ગુણ છે.

જે મુનિ છ કાયના જીવોના સ્વરૂપને પોતાની બાતે, અગર બીજાના ઉપદેશથી બાણીને છ કાયના આરંભથી વિરત થાય છે, તે મુનિ પોતાના અંગીકૃત સંયમનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરનાર હોવાથી કુશળ માનવામાં આવે છે. જ્યાં સુધી પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો જે મનોજ્ઞ કે અમનોજ્ઞ હોય તેમાં રાગ દ્વેષ રાખે ત્યાં સુધી છ કાયના આરંભથી નિવૃત્તિ થતી નથી. તેથી તે નિશ્ચિત છે કે-છકાયના આરંભનો ત્યાગ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં રાગ દ્વેષનો ત્યાગ કરવાથી જ થાય છે. તેના વિષયોમાં મગ્ન રહેનાર તેના આરંભનો ત્યાગ કરી શકતા નથી.

યદ્વા ગુણ્યતે=વિશિષ્યતે નિશ્ચયનયેન શુદ્ધસ્વરૂપોઽપ્યાત્મા નરામરતિર્યગાદિ-
ભેદેન મિથ્યતે યેનેતિ ગુણઃ—શબ્દાદિરૂપઃ કામગુણઃ । સ એવ મૂલસ્થાનમ્ ।

મૂલસ્થાનપદસ્ય વ્યુત્પત્તિભેદેન વહવોઽર્થા ભવન્તિ । યથા—મૂલં=મોહનીયં
ત્યાગ નહીં કરી શકતા—“ ન યારંભો વિના વહા—ન ચારમ્ભો વિના વધાત્ ”
ઇસ વાક્ય કે અનુસાર વિના હિંસા કે આરંભ નહીં હોતા—જહાં હિંસા હૈ
વહાં સર્વ પ્રકારસે સંયમ કા આરાધન નહીં હૈ । અતઃ નિર્દોષ સંયમ કો
પાલને કે લિયે છહકાય કે જીવોં કે આરંભ કરનેકા ત્યાગ અવશ્યર
કરના પડતા હૈ ।

ગુણ શબ્દકા અર્થ—શબ્દાદિક વિષય હૈ, ક્યોંકિ ઇન્હીંકે સેવન
સે યહ આત્મા ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં ભટકતા ફિરતા હૈ । આના—જાના
યહી તો એક બડા ભારી ગમનાગમન કા ચક્કર ઇસ જીવ કે પીછે પડા
હુઆ હૈ । કમી નરકમેં જાકર રોતા હૈ તો કમી માનવપર્યાય કી પ્રાપ્તિ
સે વિષયભોગોમેં અપને જન્મ કો નિષ્ફલ કર દેતા હૈ, કમી સ્વર્ગમેં
જાકર વહાં કી દિવ્ય ક્રદ્ધિ આદિ પાકર ઇટલાતા ગર્વિષ્ઠ હોતા હૈ, તો
કમી પશુપર્યાય મેં જાકર બિલખતા હૈ ।

યહી વાત—“ યો ગુણઃ ” ઇન શબ્દોંસે સૂત્રકારને પ્રકટ કી હૈ ।

મૂલસ્થાન શબ્દકા અર્થ પ્રકટ કરને કે લિયે ટીકાકાર કહતે હૈં કિ
મૂલસ્થાન શબ્દ કે વ્યુત્પત્તિ કે ભેદ સે અનેક અર્થ હોતે હૈં, જૈસે—“ મૂલં

“ ન યારંભો વિના વહા ” ન ચારમ્ભો વિના વધાત્ ”

આ વાક્ય અનુસાર હિંસા વિના આરંભ થતો નથી. ત્યાં હિંસા છે ત્યાં
સર્વ પ્રકારથી સંયમનું આરાધન નથી, માટે નિર્દોષ સંયમ પાળવામા છકાય
હોવોનો આરંભ કરવાનો ત્યાગ અવશ્યર કરવો પડે છે.

ગુણ શબ્દનો અર્થ—શબ્દાદિક વિષય છે, કારણ કે તેના સેવનથી આ
આત્મા ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા ભટકતો ફરે છે બળું—આવળું એ તો એક ભારી
ગમનાગમનનું ચક્કર આ હોવાના પાછળ પડ્યું છે. કેઈ વખત નરકમાં જઈ
રહે છે તો ક્યારેક માનવપર્યાયની પ્રાપ્તિથી વિષયભોગોમાં પોતાના જન્મને
નિષ્ફળ કરે છે ક્યારેક સ્વર્ગમાં જઈ ત્યાંની દિવ્યક્રદ્ધિ આદિ ભોઈને ગર્વિષ્ઠ
થાય છે ક્યારેક પશુપર્યાયમાં જઈ રહે છે.

આ વાત—“ યો ગુણ. ” આ શબ્દોથી સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે. મૂળસ્થાન
શબ્દનો અર્થ પ્રકટ કરવાને ટીકાકાર કહે છે કે—મૂળસ્થાન શબ્દના વ્યુત્પત્તિના
લેહથી અનેક અર્થ થાય છે. જેમ—“ મૂલં સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રય કારણમ્ ”

તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ । અથવા સંસારસ્ય મૂલભૂતત્વાન્મૂલમિવ મૂલં કારણં જ્ઞાના-
વરણાદિરુપમષ્ટવિધં કર્મ, તસ્ય સ્થાનમાધારઃ । યદ્વા મૂલમિતિ નરામરનારકતિર્ય-
ગ્લક્ષણસ્ય સંસારસ્ય કારણં કષાયાસ્તેષાં સ્થાનમાશ્રયો મૂલસ્થાનમ્, યતો મનો-
જ્ઞામનોઙ્ગશબ્દાદિપ્રાપ્તૌ કષાયાણામુદયો ભવતિ તેન સંસાર ઇતિ ।

યદ્વા ‘મૂલ’-મિતિ પ્રધાનં, ‘સ્થાન’-મિતિ કારણં, મૂલં ચ તત્સ્થાનં ચેતિ
મૂલસ્થાનં, શબ્દાદિક એવ કામગુણઃ, કષાયા વા પ્રધાનં કારણં સંસારસ્ય ભવતી-
ત્યાશયઃ ।

સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ કારણમ્ ” અર્થાત-મૂલ નામ સંસાર કા હૈ
સ્થાન નામ કારણ કા હૈ-સંસાર કે જો કારણ હૈં ઉનકા નામ મૂલસ્થાન
હૈ । વે શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય હૈં । અથવા-મૂલ-મોહનીય કા જો
સ્થાન-આશ્રય હૈં ઉસકા નામ મૂલસ્થાન હૈં । અથવા-સંસારકા મૂલ સ્વરૂપ
હોનેસે મૂલકે જૈસા જો હૈં, વહ મૂલ હૈં-જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકાર કે
પૌદ્ગલિક કર્મોંકા નામ મૂલ હૈં ઓર ઉસકા જો આધાર હૈં ઉસકા નામ
મૂલસ્થાન હૈં । અથવા-મૂલ નામ-મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યચ્ચગતિ ઓર
નરકગતિરૂપ સંસારકે કારણભૂત કષાયોંકા મી હૈં, ઉનકે અધાર કા
નામ મૂલસ્થાન હૈં, વે શબ્દાદિક વિષય હૈં, ક્યોંકિ મનોઙ્ગ ઓર અમનોઙ્ગ
શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ હોને પર કષાયોંકા ઉદય હોતા હૈં ઓર ઇસીસે
જીવકો સંસાર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં ।

પ્રધાન કારણકો મી મૂલસ્થાન કહતે હૈં, સંસાર કે પ્રધાન કારણ
શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય હૈં ।

અર્થાત્ મૂળ નામ સંસારનું છે સ્થાન નામ કારણનું છે. સંસારનું જે કારણ છે
તેનું નામ મૂળસ્થાન છે. તે શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય છે, અથવા મૂળ-
મોહનીયનું જે સ્થાન-આશ્રય છે તેનું નામ મૂળસ્થાન છે, અથવા સંસારનું
મૂળ સ્વરૂપ હોવાથી મૂળના જેવું છે, તે મૂળ છે જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના
પૌદ્ગલિક કર્મોંનું નામ મૂળ છે, અને તેનો જે આધાર છે તેનું નામ મૂળસ્થાન
છે. અથવા મૂળ નામ, મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યચ્ચગતિ અને નારકગતિરૂપ
સંસારના કારણભૂત કષાયો પણ છે, તેના આધારનું નામ મૂળસ્થાન છે, તે
શબ્દાદિક વિષય છે કારણ કે મનોઙ્ગ અને અમનોઙ્ગ શબ્દાદિક વિષયોની પ્રાપ્તિ થવાથી
કષાયોનો ઉદય થાય છે, અને તેથી જીવને સંસારની પ્રાપ્તિ થાય છે.

પ્રધાન કારણને પણ મૂળસ્થાન કહે છે. સંસારનું પ્રધાન કારણ શબ્દાદિક
વિષય અથવા કષાય છે,

ગુણ-મૂલ-સ્થાનયોઃ પરસ્પરમપેક્ષા વર્તતે યથા-યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલ-સ્થાનં તદ્ ગુણઃ इति तदुपात्तानां विषयकपायादीनामण्डपक्षिवद् अनादिः कार्यकारण-भावो यथा-पक्षितोऽण्डम्, अण्डाच्च पक्षी संजायते । एवमेव मूलस्थानाद्गुणो, गुणाच्च मूलस्थानमिति ।

अत्र च सप्तम्यन्तपाठमाश्रित्यैवं योजना—यो गुणे गुणेषु वा वर्तते स मूल-स्थाने मूलस्थानेषु वा वर्तते, यथात्मा शब्दादिके कामगुणे वर्तते स एव संसार-मूले कपायादिस्थाने वर्तते—इति, एवं दर्शितरीत्या गुणमूलस्थानानां कार्यकारण-

ગુણ ઓર મૂલસ્થાન, इनकी परस्पर में अपेक्षा है, इस बातको प्रकट करने के लिये “यो गुणः स मूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद् गुणः” यह वाक्य भगवान् ने कहा है । जिस प्रकार पक्षी से अण्डा पैदा होता है और अण्डासे पक्षी पैदा होता है उसी प्रकार मूलस्थान से गुण और गुणसे मूलस्थान होता है । इनका यह परस्पर कार्य-कारणभाव अनादि कालका है । पंचेन्द्रिय के विषयोंसे जीवको कषायभाव और कषायभावसे पंचेन्द्रियोंके विषयका ग्रहण होता है । “जे गुणे से मूलद्वारे” इस वाक्यमें “जे ” की छाया “यः” मानकर “गुणे” को सप्तमी विभक्तिका एक-वचन मानकर इस प्रकारसे भी अर्थ किया जा सकता है कि जो गुणमें स्थित है वह मूल स्थानमें स्थित है । अर्थात्—जो आत्मा शब्दादिक पांच इन्द्रियोंके विषय में लवलीन है वही आत्मा संसारके मूल कारण कषायादि स्थानमें लवलीन है । इस प्रकार इस पद्धति से गुण और मूल स्थानोंका परस्परमें सूत्रकारने कार्य-कारणभाव प्रकट किया है । “इति ” शब्द

ગુણ અને મૂળસ્થાન, એની પરસ્પરમાં અપેક્ષા છે, આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ ” આ વાક્ય લગવાને કહ્યું છે—જે પ્રકારે પક્ષીથી ઇંડુ પેદા થાય છે અને ઇંડીથી પક્ષી પેદા થાય છે તે પ્રકાર મૂળસ્થાનથી ગુણ અને ગુણથી મૂળસ્થાન થાય છે. તેનો પરસ્પર કાર્ય-કારણ ભાવ અનાદિ કાળનો છે. પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી જીવને કષાયભાવ અને કષાયભાવથી પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય ગ્રહણ થાય છે. “જે ગુણે સે મૂલદ્વારે” આ વાક્યમાં “જે ”ની છાયા “યઃ” માનીને “ગુણે”ને સપ્તમી વિભક્તિનું એકવચન માનીને આ પ્રકારે પણ અર્થ થાય છે કે જે ગુણમાં સ્થિત છે તે મૂળસ્થાનમાં સ્થિત છે. અર્થાત્ જે આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં રાચેલો છે તે આત્મા સંસારનું મૂળ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમાં રાચેલો છે. આ પ્રકારે આવી પદ્ધતિથી ગુણ અને મૂળસ્થાનનો પરસ્પરમાં સૂત્રકારે કાર્યકારણ-

ભાવો વર્ણિતઃ । “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાન તદ્ ગુણઃ” —ઇત્યનેન કિમા-
યાતમિત્યાદ્—“ઇતિ સ ગુણાર્થી” ઇતિ ।

ઇતિર્હેતૌ, યતો હિ સંસારસ્થાઃ સર્વેઽપિ પ્રાણિનો ગુણાર્થિનઃ સન્તિ, અનાદિકાલત્
આત્મનો મોહાવેશેનાવેષ્ટિતત્વાત્, અતઃ સ ગુણાર્થી કષાયાદિમૂલસ્થાને વર્તતે ।
ગુણસ્ય=શબ્દાદિગુણસ્ય અર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય સ ગુણાર્થી । યદ્વા-ગુણે=શબ્દાદૌ
અર્થોઽનુરાગો યસ્ય સ ગુણાર્થી । સર્વો હિ પ્રાણિગણઃ પ્રાયશઃ કામગુણાર્થી ભવતિ ।
શબ્દાદિગુણગણસ્યાભામે તં મુહુરિચ્છતિ, સમ્પ્રાપ્તસ્ય નાશે ચ શોકાવિષ્ટો ભવતિ ।
મહતા=અપરિમિતેન પરિતાપેન=માનસિકકાયિકવાચિકેન દુઃસ્વેન પ્રમત્તઃ, પ્રમાદોઽઞ્ચ
રાગદ્વેપરૂપસ્તદ્વાન્ પ્રાણી વિષયેષુ રાગાધિક્યેન પ્રવર્તતે, ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તાવિનિષ્ટોપગમે
હેત્વર્થ મેં હૈ—ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ—સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી
હૈ, ક્યોંકિ યે અનાદિકાલ સે હી મોહ કે આવેશ સે યુક્ત હૈં, ઇસલિયે
ગુણાર્થી આત્મા-કષાયાદિ મૂલસ્થાન મેં સ્થિત હી હૈ, શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોં
કા વિષય જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ, અથવા શબ્દાદિક વિષયોં મેં જિસે
અનુરાગ હૈ વહ ગુણાર્થી હૈ । પ્રાયઃ સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક
વિષયોં કા પ્રાર્થી હોતા હૈ ઉનકે નહીં મિલને પર ઉન્હેં પ્રાપ્ત કરનેકી વહ
વાર ૨ ચેષ્ટા કરતા રહતા હૈ । મિલને પર વે નષ્ટ ન હો જાવેં—ઇસ પ્રકાર
કા વહ પ્રયત્ન ભી કરતા રહતા હૈ । યદિ પ્રાપ્ત હુએ વે નષ્ટ હો જાતે હૈં—તો
‘उनके अभाव में अत्यंत शोकाकुल वह मानसिक वाचिक और कायिक
कष्टों को झेलता है । सत्य है, प्रमत्त-रागद्वेषाविष्ट आत्मा विषयों में
रागकी अधिकता से ही तो प्रवृत्ति करता है । तथा इष्ट वस्तुके नहीं प्राप्त
होने पर अथवा प्रतिकूल वस्तु के मिलने पर उस विषयसे द्वेष करता

ભાવ પ્રકટ કર્યો છે. “ઇતિ” શબ્દહેત્વર્થમાં છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે—સંસારના
સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી છે, કારણ કે તે અનાદિકાળથી મોહના આવેશથી યુક્ત છે
માટે ગુણાર્થી આત્મા કષાયાદિ મૂલસ્થાનમાં સ્થિત જ છે, શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિ-
યોનો વિષય જેનું પ્રયોજન છે તે, અથવા શબ્દાદિક વિષયોમાં જેને અનુરાગ છે
તે ગુણાર્થી છે સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક વિષયોના પ્રાર્થી થાય છે, તેના
અભાવમાં તેની પ્રાપ્તિ માટે વારવાર ચેષ્ટા કરતા જ રહે છે મળવાથી ફરી તેનો
નાશ ન થાય તેનો પ્રયત્ન કરતા રહે છે. કદાચ પ્રાપ્ત થયેલાઓનો નાશ થાય
તો તેના અભાવમાં તે અત્યંત શોકાકુળ બને છે, અને માનસિક વાચિક અને
કાયિક કષ્ટોને ભોગવે છે સત્ય છે, પ્રમત્ત રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોમાં રાગની
અધિકતાથી જ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તથા ઇષ્ટ વસ્તુ પ્રાપ્ત નહિ થવાથી અથવા પ્રતિકૂળ

ચ તં વિષયં દ્વેષ્ટિ । એવંવિધઃ સંસ્ત્ર પુનઃ પુનઃ=વારં વારં વસતિ=વિષયાસત્ત્યા
તિષ્ઠતિ, મૂર્છિતો ભવતીત્યર્થઃ । રાગદ્વેષો હિ યત્ર યત્ર પ્રાયશો ભવતસ્તત્તદર્શયતિ ।
તદ્વથા—“માતા મે પિતા મે” ઇત્યાદિ ।

‘ઇયં મે માતા, અયં મે પિતા’ એવંરૂપો માતરિ પિતરિ ચ રાગસ્તુ સંસારેડ-
નાદિકાલતો મોહનીયસદ્ભાવાદ્ વાલ્યાવસ્થાયાં લાલનપાલનાદિકારકલાચ્છોપ-
જાયતે । રાગાવિષ્ટચેતા હિ ચિન્તયતિ—કથં મયિ જીવતિ સતિ મે માતા-પિતરૌ
શ્રુત્પિપાસાદિકં દુઃસ્વમનુભવતઃ—ઇતિ, ઇત્યં વિચિન્ત્ય વહુપ્રાણિસંહારજનિતપાપવાન્
કૃષિવાણિજ્યસેવાદિરૂપાં વૃત્તિં સ્વીકરોતિ । સમુદ્રમપિ દુરુલ્લઙ્ગં ગોષ્પદં મન્વાનો દ્વીપા-
દ્વીપાન્તરં પરિભ્રમતિ । અઠાર્યશતમપિ કરોતિ । અહો કીદશં રાગસ્ય સામ્રાજ્યમ્ ? ।

હૈ । इस प्रकार वह उन विषयों में आसक्ति-परिणाम से ही प्रवृत्ति करता
रहता है । संसारी जीवों के राग और द्वेष के विषयभूत पदार्थों को सूत्रकार
स्पष्ट करते हुए कहते हैं—“माता मे” इत्यादि । यह मेरी माता है, यह मेरा
पिता है, इस प्रकार का उनमें इस जीव को जो राग होता है उसका प्रधान
कारण मोह है, वह मोह इस संसारमें अनादिकाल से इस जीव के साथ
लगा हुआ है । तथा दूसरा कारण बाल्यावस्था में उन्होंने इसका पालन
पोषण किया है । रागाविष्ट यह जीव सदा यही विचारता रहता है कि मेरे
जीते-जी मेरे माता-पिता कभी भी भूख प्यास आदि से जनित दुःखोंका
अनुभव न करें । इस ख्यालसे वह कृषि, वाणिज्य आदि अनेक आरंभों
को करता है, जिससे हिंसादिजन्य अनेक पापोंका संचय करता
रहता है, दुर्बलंध्य समुद्रको भी पारकर एक द्वीपसे दूसरे द्वीपोंमें जाकर

વસ્તુ મળવાથી તે વિષયમાં દ્વેષ કરે છે. આ પ્રકારે તે આવા વિષયોમાં આસક્તિ-
પરિણામથી પ્રવૃત્તિ કરે છે. સંસારી જીવોના રાગ અને દ્વેષના વિષયભૂત પદાર્થોને
સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે અને કહે છે—“માતા મે” ઇત્યાદિ. આ મારી માતા છે,
આ મારા પિતા છે. આ પ્રકારે જીવને જે રાગ થાય છે તેનું પ્રધાન કારણ મોહ
છે. આ મોહ આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી જીવની સાથે લાગેલો છે. તથા બીજું
કારણ બાલ્યાવસ્થામાં તેણે તેનું પાલન કર્યું છે. રાગાવિષ્ટ આ જીવ હમેશાં
એ જ વિચારતો રહે છે કે મારા માતા પિતા મારા જીવતાં કોઈ વખત પણ
ભૂખ તરસથી દુઃખી ન થાય. આવા ખ્યાલથી તે કૃષિ, વાણિજ્ય, આદિ અनेક
આરંભ કરે છે જેનાથી હિંસાદિજન્ય અनेક પાપોનો સંચય કરે છે. દુર્બલંધ
સમુદ્રને ઓળંગીને એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપોમાં જઈ વ્યાપાર ધંધા નિમિત્તે

“મગિની મે માર્યા મે પુત્રા મે દુહિતા મે સ્તુપા મે” । ઇતિ ।

મગિની=સ્વસા, સા મે=મમં, અસ્યાં રાગકારણં તુ સમાનમાતાપિતૃજત્વમ્ । માર્યાયાં રાગસ્તુ યાવજ્જીવં સ્વાનુકૂલ્યેન વર્તનશીલત્વાત્ । પુત્રે ચ રાગકારણં સેવાદિકાર્યપ્રવર્તકત્વમ્ । સ્તુપા=પુત્રવધૂઃ તસ્યાશ્ચ રાગકારણં સકલગૃહકાર્યસમ્પાદકત્વમ્, પુત્રાદ્યુત્પાદનદ્વારા પૌત્રાદિસુખાદ્યનુભવકર્તૃત્વશ્ચ । ચેતસિ ચ મૂઠો વિચિન્તયતિ—કદા મે પુત્રો મવિતા, કદા મદીયમઢ્ઢમલઢ્ઢરિપ્યતિ । જાતે પુત્રે ચ કથમયં વિદ્યાધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ । પત્ની કદા માં સુખિતા આનન્દયિષ્યતિ । કદા મે દુહિતા દૌહિત્રં જનયિષ્યતિ, શ્વશુરકુલે ધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ ન વેતિ । તદર્થં ચાનેકવ્યાપાર ધંધા કે નિમિત્ત ઇમણ કરતા હૈ । પૈસા કમાને કે લિધે અનેક અકાર્ય મી કર ઢાલતા હૈ । દેખો રાગકા સામ્રાજ્ય કૈસા આશ્ચર્યકારી હૈ ।

યહ મેરી બહિન, ઇસ પ્રકાર ડસમેં રાગકા કારણ ઇક માતા-પિતાસે ઉત્પન્ન હોના હૈ । સ્ત્રીમેં રાગકા હેતુ યહ હૈ કિ—જીવન મર તક વહ અપને અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરતી હૈ । પુત્રમેં રાગ હોનેકા કારણ યહ હૈ કિ વહ રાતદિન સેવાદિકાર્યમેં તલ્લીનતા રખતા હૈ । પુત્રીમેં મી—યહ અપનેસે પૈદા હુઈ યહી રાગકા કારણ હૈ । સમ્પૂર્ણ ઘરકે મારકો સંભાલને તથા પુત્રાદિકોં કો ઉત્પન્ન કરને દ્વારા પૌત્રાદિસુખકા અનુભવ કરાનેસે પુત્રવધુ મેં રાગ હોતા હૈ । પુત્ર-કલ-ત્રાદિ મેં મહામૂઢ બનકર યહ જીવ વિચારતા હૈ—મેરે પુત્ર કવ હોગા, કવ મેરી ગોદી કો વહ સુશોભિત કરેગા, કૈસે વહ વિદ્યાધ્યયન ઇવં ધનાદિક પ્રાપ્ત કરેગા, મેરી સ્ત્રી કવ મુઢે સ્વયં સુખ ચૈન મોગતી હુઈ આનંદિત કરેગી । મેરી પુત્રી કવ દોહિતે કો જન્મ દેગી, વહ અપને શ્વશુરગૃહ મેં

ભ્રમણ કરે છે પૈસા કમાવા માટે અનેક અકાર્ય પણ કરે છે. બુધો! રાગનું સામ્રાજ્ય કેવું આશ્ચર્યકારી છે?

આ મારી બહેન છે, એ પ્રકારના રાગનું કારણ એક માતા-પિતાથી ઉત્પન્ન થવું તે. સ્ત્રીમાં રાગનું કારણ, જીવનભર તે પોતાના અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરે છે. પુત્રમાં રાગનું કારણ તે રાતદિવસ સેવાદિકાર્યમાં તલ્લીનતા રાખે છે. પુત્રીમાં પણ રાગનું કારણ પોતાથી પેદા થઈ છે માટે. સંપૂર્ણ ઘરના ભાર સંભાળવામાં તથા પુત્રાદિકોની ઉત્પત્તિ દ્વારા પૌત્રાદિસુખનો અનુભવ કરાવવાથી પુત્રવધુમાં રાગ પેદા થાય છે. પુત્રકલત્રાદિમાં મહામૂઢ બનીને આ જીવ વિચારે છે કે—મારે પુત્ર ક્યારે થશે, ક્યારે મારી ગોદીમાં તે બેસીને મને સુશોભિત કરશે, કેવી રીતે તે વિદ્યાધ્યયન તેમજ ધનાદિક પ્રાપ્ત કરશે. મારી સ્ત્રી ક્યારે તેણી સુખચેન ભોગવતી મને આનંદિત કરશે. ક્યારે મારી પુત્રી દોહિતને જન્મ આપશે, તેણીના

સાવધાનુષ્ઠાનપરાયણો ભવતિ । असौ ममकारमहाग्रहगृहीतस्वान्तो नितान्तं परित-
पति । रागान्धो हि रागग्रहग्रहिलः परमरमणीयमपि सम्यग्ज्ञानादिकं व्यर्थमेवेति
निश्चिन्वानो मोहशय्याशयानो भार्यापुत्रभगिनीगृहक्षेत्रारामरमणीयमपि रमणीयं
मन्यते ।

તથા ‘સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે’ ઇતિ । સખા ચ સ્વજનશ્ચ સંગ્રન્થશ્ચ
સંસ્તુતથેતિ ઇતરેતરયોગદ્વન્દ્વસમાસઃ । સખા=મિત્ર, સ્વજનો=માતામહાદિઃ, સંગ્રન્થઃ=
સ્વજનસ્યાપિ સમ્બન્ધી યથા-માતામહશ્યાલકાદિઃ । સંસ્તુતો મુહુર્મુહુર્દર્શનસમ્મેલના-
ધનકી અધિકારિણી હોગી યા નહીં । ઇસ પ્રકાર યહ સમ્ભત્વરૂપી મહા-
ગ્રહ-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત હોકર રાતદિન ડનકી ચિન્તામેં હી અપને
भीतर ही भीतर जलता रहता है, ठीक है रागसे अंधा हुआ प्राणी असु-
न्दर भी परपदार्थों को सुन्दर माने तथा उपादेय-सुन्दर पदार्थों को हेय-
असुन्दर माने, इसमें कौनसी अचरजकी बात है । संसारमें सम्यग्ज्ञा-
नादिक इस जीवके उपादेय धर्म हैं-उन्हें यह रागरूपी ग्रह से ग्रस्त
होकर अशोभनीय मानता है, तथा जो स्त्री, पुत्र, भगिनी, घर-क्षेत्र
आदि अशोभनीय परपदार्थ हेय हैं, उन्हें मोहरूपी प्रबल मदिराके नशे
से आकुलितबुद्धि होता हुआ रमणीय-उपादेय मान रहा है । तथा
“सखि-स्वजन-संग्रन्थ-संस्तुता मे” सखा-मित्र, स्वजन-मातामहादि,
संग्रन्थ-स्वजन के संबंधीजन, संस्तुत-बारम्बार देखने से मेल मिलाप
से जिनके साथ परिचय हुआ है वे, अथवा-पूर्व में परिचित पिता
काका वगैरह, पश्चात्-परिचित ससुर साले वगैरह, ये मित्र स्वजन

શ્વશુરગૃહમાં ધનની અધિકારિણી થશે કે નહિ ? આ પ્રકાર તે મમત્વરૂપી મહાગ્રહ
-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત બનીને રાતદિન તેની જ ચિંતામાં પોતાના ભીતરની
અદર જ જળતો રહે છે. ઠીક છે, રાગથી અંધ બનેલા પ્રાણી અસુદર પણ પર-
પદાર્થોને સુંદર માને તથા ઉપાદેય-સુદર પદાર્થોને હેય - અસુદર માને, આમાં
કોઈ અચરજની વાત નથી સંસારમાં સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક આ જીવનો ઉપાદેય ધર્મ
છે. તેને રાગરૂપી ગ્રહથી અશોભનીક માને છે. તથા જે સ્ત્રી, પુત્ર, ભગિની, ઘર, ક્ષેત્ર
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હોય છે, તેને મોહરૂપી પ્રબળ મદિરાના નશાથી આકુળિત
બુદ્ધિ થઈ રમણીય-ઉપાદેય માને છે તથા “સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે”
સખા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ, સંગ્રન્થ-સ્વજનના સંબંધીજન, સંસ્તુત-
વારંવાર દેખવાથી, મેળમેળાપથી જેની સાથે પરિચય થયો છે તે, અથવા
પૂર્વમાં પરિચિત પિતા, કાકા વિગેરે, પાછળથી પરિચિત સસરા સાળા વિગેરે. આ

દિના પરિચિતઃ પિતા પિતૃવ્યાદિઃ । પશ્ચાત્સંસ્તુતઃ=શ્વશુરશ્યાલકાદિઃ । ઇતિ ચેમે મે સર્વે સર્વદા સુખિનો ભવેયુરિતિ ચિન્તયન્ રાગગ્રસ્તો ભવતિ ।

‘વિવિક્તોપકરણપરિવર્તનભોજનાચ્છાદનં મે’ વિવિક્તં=મુન્દરં મનોહરં પ્રભૂતં વા ઉપકરણં=ગૃહારામાદિકં હસ્ત્યશ્વરથાસનપલ્લ્યાદિકં ચ, પરિવર્તનં=વિનિમયઃ હસ્ત્યશ્વાદે-મહાર્ઘસમયે વિક્રયણમ્, તન્મૂલ્યેનૈવ સુલભસમયે ચાનેકેષાં ક્રયણમ્ । મયૈવૈકેન હસ્તિનાઽનેકે હસ્ત્યાદયઃ સમ્પાદિતાઃ-ઇત્યાદિલક્ષણં પરિવર્તનમ્ । કચિત્

સંગ્રન્થ સંસ્તુત મેરે હૈં ઓર इनके लिये भी यह “ ये सदा सुखी होंगे ” इस प्रकार विचार करता हुआ राग से ग्रस्त होता है । अपने संबंधीजन को तथा संबंधीजन के संबंधीजन को सुखी होने की कल्पना करना संयमी जन के लिये राग होनेसे बंध का ही कारण शास्त्रकारों ने प्रकट किया है । इस प्रकार का राग मोहकी पर्याय होने से संयमी जन के लिये स्वानुभूति में बाधक होता है, अतः इससे निवृत्ति ही सर्वश्रेष्ठ है ।

‘વિવિક્તવગરણ’—ઇત્યાદિ-મનોહર અથવા પ્રચુર ઉપકરણરૂપ ઘર, વર્ગીચા, હસ્તી, અશ્વ, રથ, આસન, પલંગ વગેરે વસ્તુએ વિવિક્ત ઉપકરણ કહલાતે હૈં । પરિવર્તન શબ્દ કા અર્થ વિનિમય હૈ, તેજી કે સમય હસ્તિ વગેરે પદાર્થોં કા વેચના તથા મંદી કે સમય ડસી પૈસે સે અનેક હસ્ત્યાદિક પદાર્થોં કા ખરીદના યહ વિનિમય હૈ । કહીં “ વિચિત્ર ” યહ પાઠાન્તર મી હૈ-જિસકા અર્થ હોના હૈ કિ ઘર મેં શોભા કે લિયે અનેક

મિત્ર, સ્વજન, સંગ્રન્થ, સંસ્તુત મારા છે. તેને માટે પણ તે “ તેઓ સદા સુખી રહે ” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને રાગથી ગ્રસ્ત થાય છે. પોતાના સંબંધીજનના તથા સંબંધીના સંબંધી તેના સુખની કલ્પના કરવી સંયમીજનને માટે રાગરૂપ હોવાથી બંધનું જ કારણ શાસ્ત્રકારે પ્રકટ કર્યું છે. આ પ્રકારનો રાગ મોહની પર્યાય હોવાથી સંયમીજનને માટે સ્વાનુભૂતિમાં બાધક થાય છે માટે તેમાં નિવૃત્તિ જ સર્વશ્રેષ્ઠ છે.

વિવિક્તોપકરણ—ઈત્યાદિ-મનોહર અથવા પ્રચુર ઉપકરણરૂપ ઘર, બગીચા હસ્તી, અશ્વ, રથ, આસન, પલંગ વિગેરે વસ્તુઓને વિવિક્ત ઉપકરણ કહે છે. પરિવર્તન શબ્દનો અર્થ વિનિમય છે. તેજના સમયમાં હસ્તિ વિગેરે પદાર્થોનું વેચવું અને મંદિના સમયમાં તે પૈમાથી હસ્તિ આદિ પદાર્થોનું ખરીદવું તે વિનિમય છે, કેઈ ઠેકાણે “ વિચિત્ર ” આવું પાઠાન્તર પણ છે જેનો અર્થ

‘વિચિત્રે’-તિ પાઠઃ । તત્ર વિચિત્રમુપકરણં ગૃહાદૌ શોભાર્થં વહુશિલ્પિવિનિર્મિતં નાનાવિધં નયનમનોહારિ વસ્તુજાતં મયૈવ સમ્પાદિતમ્ ।

ભોજનં=મોદકાદિકં, મયૈવેદ્યં ભોજ્યં શુક્તમ્ । આચ્છાદનં=વસ્ત્રમ્=એકેન્દ્રિય-નિષ્પન્નં કાર્પાસાદિકં, વિકલેન્દ્રિયનિષ્પન્નં ચીનાંશુકાદિકં, પંચેન્દ્રિયનિષ્પન્નં રત્ન-કમ્બલાદિકમ્, એતત્સર્વં કદાચિદપિ મા વિનાશમાપ્નુયાત્ । યત્ર યત્ર વિષયે રાગસ્ત-કારીગરો દ્વારા નિર્મિત નેત્ર ઓર મન કો લુભાનેવાલી અનેક પ્રકાર કી વસ્તુઓ કા સંગ્રહ કરના । પ્રમત્ત-દશા-સમ્પન્ન પ્રાણી એસા ગર્વ કરતા હૈ કિ મૈને હી ઇસ ઘર મેં એક હાથી કી જગહ અનેક હાથિયોં કા સંગ્રહ કિયા હૈ, તથા પહિલે ઇસ ઘરમેં શોભા કે લિયે કોઈ સુન્દર વસ્તુ નહીં થી વહ મૈને હી અબ ઇન તમામ નેત્ર ઓર મન કો લુભાનેવાલી વસ્તુઓં કો એકત્રિત કિયા હૈ ।

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન હૈ । આચ્છાદન નામ વસ્ત્ર કા હૈ । એકેન્દ્રિય સે નિષ્પન્ન કાર્પાસ (સૂતી) આદિક, વિકલેન્દ્રિયોં સે પૈદા હુઆ ચીનાંશુક (રેશમી) વગૈરહ, તથા પંચેન્દ્રિયોં સે બનાયા ગયા રત્ન-કમ્બલાદિક પદાર્થ મેરે કમી નષ્ટ ન હો જાવેં । ઇસ પ્રકાર કે વિચારોં સે વહ મોહી જીવ સદા સંતસ રહા કરતા હૈ । પ્રતિકૂલ ભોજન મિલને પર પહિલે સુન્દર ખાધે ગયે ભોજન કી યાદ કર વ્યાકુલ-ચિત્ત હો જાતા હૈ, સોચતા હૈ-મૈને પહિલે એસા ભોજન કમી નહીં કિયા, સુન્દર ૨ મોદ-કાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થોં કા હી સેવન કિયા હૈ । યહ સબ ઇસ પ્રકાર કી

એ થાય છે કે ઘરમા શોભાને માટે કારીગરોદ્વારા આંખ અને મનને લોભાવવા-વાળી અનેક પ્રકારની વસ્તુઓનો સંગ્રહ કરવો

પ્રમત્તદશાસમ્પન્ન પ્રાણી એવો ગર્વ કરે છે કે-મેં આ ઘરમાં એક હાથીની જગ્યા અનેક હાથિઓનો સંગ્રહ કર્યો છે, તથા પહેલાં આ ઘરમાં શોભા માટે કોઈ સુન્દર વસ્તુ ન હતી પણ મેં જ હમણા આ તમામ નેત્ર તથા મનને લોભાવવાળી વસ્તુઓ લેગી કરી છે

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન છે. આચ્છાદન નામ વસ્ત્ર છે. એકેન્દ્રિ-યથી નિષ્પન્ન સૂતરાઉ આદિક, વિકલેન્દ્રિયોથી પૈદા થયેલા રેશમી વિગેરે, તથા પંચે-ન્દ્રિયોથી બનાવેલા મારા રત્નકંબલાદિક પદાર્થોનો નાશ ન થઈ જાય, આવા પ્રકારના વિચારોથી તે મોહી જીવ સદા સંતસ રહે છે. પ્રતિકૂળ ભોજનના મળવાથી પહેલાં સુન્દર ખાધેલાં ભોજનની યાદ કરીને વ્યાકુળચિત્ત થાય છે. અને વિચારે છે કે-મેં પહેલા આખું ભોજન કોઈ વખત ખાધું નથી સુન્દર મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થો જ

સ્યૈવેષ્ટતાત્તસ્યાલાભે દ્વેષ ઉપજાયતે, અતો યસ્મિન્ રાગસ્તસ્મિન્નેવ દ્વેષો ભવતિ-इति स्वभावसिद्धम् । इत्यर्थं गृद्धो लोक इत्येवमर्थयेतेषामर्थं मातापितृ-पुत्रभार्यादिष्वेव रागादिकारणेषु यावज्जीवति तावत्प्रमत्तो 'ममेमे, एषां चाह'-मित्यनिशं रागादिमान् अज्ञानमोहितचित्तो वसति=तिष्ठति तत्र मूर्च्छां प्राप्नोती-

વિચારધારા કા પ્રધાન કારણ પદાર્થોં મેં અતિશય ઉસકી ગૃહ્ણતા હી હૈ । ક્યોંકિ હસસે હી ઉસે જિસ ૨ વિષય મેં રાગ હોતા હૈ વહી ઉસે હૃષ્ટ પ્રતીત હોતા હૈ । અનિષ્ટ પ્રાપ્ત હોને પર યા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મિલને પર ઉસકી આત્મા મેં ઉસસે દ્વેષ કી આવના જાગૃત હોતી હૈ । હસ પ્રકાર હન રાગાદિકોં કે કારણભૂત હન માતા પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોં મેં ગૃહ્ણ બના હુઆ યહ જીવલોક જબ તક જીતા હૈ તબ તક પ્રમત્ત-દશાયુક્ત હી બના રહતા હૈ । 'યે પદાર્થ મેરે હૈ-મૈં હનકા હૂં' હસ પ્રકાર કી કલ્પના સે રાત્રિદિન રાગાદિક ભાવોં સે લિપ્ત બનકર અજ્ઞાન સે આચ્છાદિત હો ઉન્હોં પદાર્થોં મેં આસક્ત હોતા રહતા હૈ । 'મમકાર' યહ જીવોં કા એક પ્રબલ શત્રુ હૈ । બકરે કી તરહ "મૈં-મૈં" હસ પ્રકાર કે શબ્દ કો કરતા હુઆ યહ જીવ અન્ત મેં કસાઈ કે તુલ્ય હસ ભયંકર કાલ કે દ્વારા ગ્રસિત હો જાયા કરતા હૈ । મમકાર કો પ્રબલ શત્રુ હસ લિયે બતલાયા ગયા હૈ કિ જિસ પ્રકાર અપને બલિષ્ઠ શત્રુ કે સમક્ષ જીવ વિવેક-શૂન્ય બન વાવલા જૈસા હો જાતા હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર હસ મમકાર કે સમક્ષ ભી જીવ અપને હિત ઔર અહિત કે ભાન સે રહિત હો ઉન્મત્ત

પાધેલાં છે. આ બધા પ્રકારની વિચારધારાનું મુખ્ય કારણ પદાર્થોમાં તેની અતિશય ગૃહ્ણતા જ છે. કારણ કે આથી તેને જે જે વિષયમાં રાગ થાય છે તેથી તે ઈષ્ટ પ્રતીત થાય છે. અનિષ્ટ પ્રાપ્ત થવાથી અથવા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મળવાથી તેના આત્મામાં તેથી દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે. આ પ્રકાર આવા રાગાદિકના કારણભૂત માતા-પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોમાં ગૃહ્ણ બનીને બન્યા સુધી આ જીવલોક જીવે છે ત્યાં સુધી પ્રમત્તદશાયુક્ત રહે છે. 'આ પદાર્થ મારો છે, હું તેનો છું' આવા પ્રકારની કલ્પનાથી રાત્રિદિવસ રાગાદિક ભાવોથી લિપ્ત બનીને અજ્ઞાનથી આચ્છાદિત જ્ઞાનવાળા હોઈ તેવા પદાર્થોમાં આસક્ત હોય છે મમકાર એ જીવોનો એક પ્રબળ શત્રુ છે. બકરાની માફક "મૈં-મૈં" આ પ્રકારના શબ્દ બોલતા બોલતા આ જીવ અતમા કસાઈ તુલ્ય ભયંકર કાળદ્વારા ગ્રસિત બને છે મમકારને પ્રબળ શત્રુની ઉપમા તે માટે આપી છે કે જેમ પોતાના બલિષ્ઠ શત્રુ સમક્ષ જીવ વિવેકશૂન્ય બની બાવળો (ગાંડો) બને છે, ઠીક તે પ્રકાર આ મમકારની સમક્ષ પણ જીવ પોતાના હિતાહિતાના ભાનથી રહિત થઈ ઉન્મત્ત જેવો બને છે. તે વખતે

ત્યર્થઃ । મમકારો હિ પ્રાણિનો મહાઙ્ગત્રુઃ, મમશબ્દં કુર્વાણો હિ કરાલકાલવ્યાલ-
કવલિતો ભવતિ પ્રાણિગણઃ । યથા ચોક્તમ્ ।

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે વન્ધુવર્ગો મે ।

इति मे-मे-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

इति कृत-मे-मे-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥

જૈસા બન જાતા હૈ । ઉસે ઉસ સમય હસ બાત કા બી ધ્યાન નહીં હોતા
કિ મેરા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ઓર ઇન પરપદાર્થોં કા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ? કસાઈ
કા બકરા જિસ પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરતા હુઆ કસાઈ કે દ્વારા અંત મેં
મૌત કે ઘાટ ઉતાર દિયા જાતા હૈ ડસી પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરનેવાલા
યહ જીવ બી અન્ન મેં એક ન એક દિન હસ દુષ્ટ ભયંકર કાલ કે દ્વારા
મારા જાતા હૈ । કહા બી હૈ—

“અશનં મે વસનં મે, જાયા મે વન્ધુવર્ગો મે ।

इति ‘मे-मे’-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥ १ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહ-કલત્ર-વર્ગો મે

इति कृत-‘मे-मे’-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥ २ ॥

પુત્ર-કલત્ર-પરિગ્રહ-મમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્,

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥ ३ ॥ ” इति ।

इनका अर्थ ऊपर आ चुका है ।

તેને એ પણ ધ્યાન નથી હોતું કે માફે સ્વરૂપ શું છે અને આ પરપદાર્થોનું સ્વરૂપ
શું છે ? કસાઈનો બકરો જેમ “મૈ-મૈ” કરતો કસાઈદ્વારા અંતમાં મૌતને તાળે થાય
છે તે પ્રકારે “મૈ-મૈ” કરવાવાળા આ છવ પણ અંતમાં એક દિવસ આ દુષ્ટ ભયંકર
કાળદ્વારા મરે છે. કહ્યું પણ છે—

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે વન્ધુવર્ગો મે ।

इति ‘मे-मे’-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥ १ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

इति कृत-‘मे-मे’-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥ २ ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

कृमिक इव कोशकार, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥ ३ ॥ इति ॥

આનો અર્થ ઉપર આવેલ છે,

इति ममकारग्राहगृहीतविग्रहेण पुरुषेण सततं चिन्त्यते । शब्दादिविपयासक्तो नरो मातापित्राद्यर्थं धननिवहोपार्जनपरो दुःखमेवानुभवति । सदैव परितप्यमानो भ्रमतीत्याह—“अहश्च रात्रिञ्च परितप्यमानः” । अहो=दिनं रात्रिं, चशब्दात्पक्षमास-

इन्द्रियों के शब्दादिक विषयों में गृह्य पुरुष इन माता पिता आदि को सुखी करने के लिये धनादि कमाने के अभिप्राय से सदा दुःख का ही अनुभव करता है और रातदिन संक्लिष्टपरिणामी हो उसके संग्रह की चिन्ता में इतस्ततः घूमता है, एवं शारीरिक और कायिक अनेक कष्टों का सामना करता है ।

“अहश्च रात्रिं च ” यहाँ पर “ च ” शब्द से पक्ष-मास-ऋतु-वर्ष आदि का ग्रहण होता है । विचारता रहता है कि कब ऐसा अवसर मिले कि जब मैं बाहर जाऊँ और क्रय विक्रय की वस्तुओं को खरीद बेच कर उनसे खूब लाभ उठाऊँ । कौनसी ऐसी जगह है जहाँ इस वस्तु की अधिक खपत होनेसे विक्री तेजी से होती है । कौनसी चीज खरीदने में इस समय अधिक फायदा होगा?, तथा कौनसी वस्तुका संग्रह करने से भविष्य में अधिक लाभ होगा?, इत्यादि बातों की ही उसके हृदय में सदा उथल-पुथल मची रहती है । यहाँ तक कि सोते समय में अथवा सोते हुए उसे इसी बात के स्वप्न आते हैं और कभी २ वह इन्हीं विचारों को लेकर बड़बड़ाने भी लगता है । उसे निद्रा भी ठीक २ नहीं आती । विचारा

પાંચ ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક વિષયોમાં ગૃહ્યપુરુષ માતા-પિતા આદિને સુખી કરવાના હેતુથી ધન કમાવામાં જ હમેશા દુઃખનો અનુભવ કરે છે. અને રાત દિવસ વ્યાકુળ બની તેના સંગ્રહની ચિંતામાં અહીં-તહીં ઘૂમ્યા કરે છે, અને શારીરિક માનસિક અને કાયિક અનેક કષ્ટોનો સામનો કરે છે.

“અહશ્ચ રાત્રિં ચ ” આ ઠેકાણે “ ચ ” શબ્દથી પક્ષ, માસ, ઋતુ, વર્ષ આદિનું ગ્રહણ થાય છે. વિચારતો રહે છે કે કયારે એવો વખત મળે ન્યારે હું બહાર જઉં અને કયવિકેયની વસ્તુઓને ખરીદી વેચી તેનાથી ખૂબ લાભ ઉઠાવું. એવી કયા જગ્યા છે જ્યાં અમુક વસ્તુઓ સસ્તી મળતી હોય તથા એવી કયા જગ્યા છે જ્યાં આ વસ્તુઓ અધિક ખપત હોવાથી તેણથી વેચાઈ જાય આ વખતે કઈ ચીજ ખરીદવાથી ફાયદો થશે, તથા કઈ વસ્તુનો સંગ્રહ કરવાથી ભવિષ્યમાં અધિક લાભ થશે, ઇત્યાદિ વાતોની તેના હૃદયમાં સદા ઉથલપાથલ મચી રહે છે. એટલે સુધી કે સુવા વખતે તથા સુતા સુતાં તેને આ વિષયના સ્વપ્ના આવે છે અને કોઈ વખતે તે આવા વિચારોથી બડબડવા પણ લાગે છે. તેને નિદ્રા પણ ઠીક

तुवर्षादिकं ग्राह्यम् । प्रवृत्तसावधानुष्ठानः परि=सर्वतः, तप्यमानः=शारीरिकमानसिक-
वाचिकदुःखेन क्लिश्यमानः अन्तर्दाहदग्धो भवतीति यावत् ।

कदा मे विदेशगमनं ? कदा कुत्र भाण्डनयने मे लाभो भविता ? कीदृशश्च क्रय-
विक्रयावसरः ? इत्यनिशं तप्यमानः । पुनः कथम्भूतः ? कालाकालसमुत्थायी,
कालः=कार्यकरणावसरः, अकालस्तद्विपरीतः, सम्-सर्वथा उत्थातुं शीलं यस्येति स
समुत्थायी, कालाकालयोः समुत्थायी कालाकालसमुत्थायी । यथैवावसरे करोति
तथैवानसरेऽपि करोतीत्यर्थः । यद्वा यथाऽनवसरे न करोति तथैवावसरेऽपि न
करोति । मातापितृपुत्रभार्याद्यर्थनिखिलकार्यव्यासक्तान्यमनस्कतया ग्रहग्रहिल इव
कालाकालज्ञानकलाविकलो भवति ।

रात दिन इन्हीं विचारों में मग्न बनकर संतप्त होता रहता है । काल और
अकाल का वह कुछ भी विचार नहीं करता, उसके जैसा ही अवसर वैसा
ही अनवसर, उसके लिये अवसर और अनवसर में कोई भेद नहीं ।
वह तो अपनी इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति किया करता है । अथवा जिस
प्रकार भूताद्याविष्ट प्राणी भले बुरे की परीक्षा नहीं कर सकता है, वह तो
मनमाना ही काम करता है, उसी प्रकार मातापिता आदि सांसारिक
पदार्थों में ही आसक्त मन वाला प्राणी अन्य आत्महितकारी कार्यों से
उपेक्षितवृत्तिवाला बन काल-अकाल की ज्ञानकलासे सदा विकल ही
बना रहता है । अवसर न होने पर जिस प्रकार कार्य नहीं करता उसी
प्रकार अवसर में भी कार्य नहीं करता, जभी कार्य करने की इच्छा जागृत
हुई चाहे समय हो चाहे असमय हो कार्य करने लग जाता है । जैसे कोई
अरिमर्दन नाम का राजा जो शत्रुओं को नष्ट करने में शक्तिशाली था

आवती नहीं जियारा रातदिन आवा न विचारोभा मग्न भनी संतप्त थाय छे,
काण अकाणने ते नरा पणु विचार करतो नहीं, तेने जेवो अवसर तेवो न
अनवसर, तेने भाटे अवसर अने अनवसरमा केई लेह नहीं, ते तो पोतानी
धृच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति करे छे, अथवा जेम भूताद्याविष्ट-(भूतना पणगाड-
वाणा) लदा-भूराणे विचार नहीं करी शकता ते तो मनमान्यो काम करे छे, ते
प्रकारे माता-पिता आदि सासारिक पदार्थोभा न आसक्त मनवाणां प्राणी अन्य
आत्महितकारी कार्योधी उपेक्षित वृत्तिवाणा भनी काण-अकाणनी ज्ञानकलाथी
डमेशा विकल न भने छे, अवसर नहि होवाथी जेम कार्य नहीं करता तेम
अवसरमा पणु कार्य नहीं करता पणु न्यां धृच्छा थर्छ के समय-असमय जेयां
विना काम करवा लागे छे, जेम अरिमर्दन नामने राजा समयने जाणुकार नहि

इति ममकारग्राह्यहीतविग्रहेण पुरुषेण सततं चिन्त्यते । शब्दादिविषयासक्तो नरो मातापित्राद्यर्थं धननिबहोपार्जनपरो दुःखमेवानुभवति । सदैव परितप्यमानो भ्रमतीत्याह—“अहश्च रात्रिश्च परितप्यमानः” । अहो=दिनं रात्रिं, चशब्दात्पक्षमास-

इन्द्रियों के शब्दादिक विषयों में गृह्य पुरुष इन माता पिता आदि को सुखी करने के लिये धनादि कमाने के अभिप्राय से सदा दुःख का ही अनुभव करता है और रातदिन संक्लिष्टपरिणामी हो उसके संग्रह की चिन्ता में इतस्ततः घूमता है, एवं शारीरिक और कायिक अनेक कष्टों का सामना करता है ।

“अहश्च रात्रिं च ” यहाँ पर “ च ” शब्द से पक्ष-मास-ऋतु-वर्ष आदि का ग्रहण होता है । विचारता रहता है कि कब ऐसा अवसर मिले कि जब मैं बाहर जाऊँ और क्रय विक्रय की वस्तुओं को खरीद बेच कर उनसे खूब लाभ उठाऊँ । कौनसी ऐसी जगह है जहाँ इस वस्तु की अधिक खपत होनेसे विक्री तेजी से होती है । कौनसी चीज खरीदने में इस समय अधिक फायदा होगा?, तथा कौनसी वस्तुका संग्रह करने से भविष्य में अधिक लाभ होगा?, इत्यादि बातों की ही उसके हृदय में सदा उथल-पुथल मची रहती है । यहाँ तक कि सोते समय में अथवा सोते हुए उसे इसी बात के स्वप्न आते हैं और कभी २ वह इन्हीं विचारों को लेकर बड़बड़ाने भी लगता है । उसे निद्रा भी ठीक २ नहीं आती । विचारा

પાંચ ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક વિષયોમા ગુથાયેલો પુરુષ માતા-પિતા આદિને સુખી કરવાના હેતુથી ધન કમાવામાં જ હમેશા હુ.ખનો અનુભવ કરે છે અને રાત-દિવસ વ્યાકુળ બની તેના સંગ્રહની ચિંતામા આડીં-તડીં ધૂમ્મા કરે છે, અને શારીરિક માનસિક અને કાયિક અનેક કષ્ટોનો સામનો કરે છે.

“અહશ્ચ રાત્રિં ચ ” આ ઠેકાણે “ ચ ” શબ્દથી પક્ષ, માસ, ઋતુ, વર્ષ આદિનું ગ્રહણ થાય છે. વિચારતો રહે છે કે કયારે એવો વખત મળે ન્યારે હું બહાર જાઉં અને કયવિકંચની વસ્તુઓને ખરીદી વેચી તેનાથી ખૂબ લાભ ઉઠાવું એવી કયા જગ્યા છે ન્યા અમુક વસ્તુઓ સસ્તી મળતી હોય તથા એવી કયા જગ્યા છે ન્યા આ વસ્તુઓ અધિક ખપત હાવાથી તેજથી વેચાઈ જાય. આ વખતે કઈ ચીજ ખરીદવાથી ફાયદો થશે, તથા કઈ વસ્તુનો સંગ્રહ કરવાથી ભવિષ્યમા અધિક લાભ થશે, ઇત્યાદિ વાતોની તેના હૃદયમા સદા ઉથલપાથલ મચી રહે છે. એટલે સુધી કે સુવા વખતે તથા સુતાં સુતાં તેને આ વિષયના સ્વપ્ના આવે છે અને કોઈ વખતે તે આવા વિચારોથી બડબડવા પણ લાગે છે. તેને નિદ્રા પણ ઠીક

તુવર્ષાદિકં ગ્રાહ્યમ્ । પ્રવૃત્તસાવધાનુષ્ઠાનઃ પરિ=સર્વતઃ, તપ્યમાનઃ=શારીરિકમાનસિક-
વાચિકદુઃસ્વેન ક્ષિયમાનઃ અન્તર્દાહદગ્ધો ભવતીતિ યાવત્ ।

કદા મે વિદેશગમનં ? કદા કુત્ર માણ્ડનયને મે લાભો ભવિતા ? કીદશશ્ચ ક્રય-
વિક્રયાવસરઃ ? इत्यनिशं तप्यमानः । पुनः कथम्भूतः ? कालाकालसमुत्थायी,
कालः=कार्यकरणावसरः, अकालस्तद्विपरीतः, सम्-सर्वथा उत्थातुं शीलं यस्येति स
समुत्थायी, कालाकालयोः समुत्थायी कालाकालसमुत्थायी । यथैवावसरे करोति
तथैवानसरेऽपि करोतीत्यर्थः । यद्वा यथाऽनवसरे न करोति तथैवावसरेऽपि न
करोति । मातापितृपुत्रभार्याद्यर्थनिखिलकार्यव्यासक्तान्यमनस्कतया ग्रहग्रहिल इव
कालाकालज्ञानकलाविकलो भवति ।

રાત દિન इन्हीं विचारों में मग्न बनकर संतप्त होता रहता है । काल और
अकाल का वह कुछ भी विचार नहीं करता, उसके जैसा ही अवसर वैसा
ही अनवसर, उसके लिये अवसर और अनवसर में कोई भेद नहीं ।
वह तो अपनी इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति किया करता है । अथवा जिस
प्रकार भूताद्याविष्ट प्राणी भले बुरे की परीक्षा नहीं कर सकता है, वह तो
मनमाना ही काम करता है, उसी प्रकार मातापिता आदि सांसारिक
पदार्थों में ही आसक्त मन वाला प्राणी अन्य आत्महितकारी कार्यों से
उपेक्षितवृत्तिवाला बन काल-अकाल की ज्ञानकलासे सदा विकल ही
बना रहता है । अवसर न होने पर जिस प्रकार कार्य नहीं करता उसी
प्रकार अवसर में भी कार्य नहीं करता, जभी कार्य करने की इच्छा जागृत
हुई चाहे समय हो चाहे असमय हो कार्य करने लग जाता है । जैसे कोई
अरिर्मर्दन नाम का राजा जो शत्रुओं को नष्ट करने में शक्तिशाली था

આવતી નથી. બિચારા રાતદિન આવા જ વિચારોમાં મગ્ન બની સંતપ્ત થાય છે.
કાળ અકાળનો તે જરા પણ વિચાર કરતો નથી. તેને જેવો અવસર તેવો જ
અનવસર, તેને માટે અવસર અને અનવસરમાં કોઈ ભેદ નથી, તે તો પોતાની
ઇચ્છાનુસાર અનર્ગળ પ્રવૃત્તિ કરે છે. અથવા જેમ ભૂતાદ્યાવિષ્ટ-(ભૂતના વળગાડ-
વાળાં) ભલા-ખૂરાનો વિચાર નથી કરી શકતા તે તો મનમાન્યો કામ કરે છે. તે
પ્રકારે માતા-પિતા આદિ સાંસારિક પદાર્થોમાં જ આસક્ત મનવાળા પ્રાણી અન્ય
આત્મહિતકારી કાર્યોથી ઉપેક્ષિત વૃત્તિવાળા બની કાળ-અકાળની જ્ઞાનકલાથી
હંમેશાં વિકળ જ બને છે. અવસર નહિ હોવાથી જેમ કાર્ય નથી કરતા તેમ
અવસરમાં પણ કાર્ય નથી કરતા પણ જ્યાં ઇચ્છા થઈ કે સમય-અસમય જોયાં
વિના કામ કરવા લાગે છે. જેમ અરિમર્દન નામનો રાજા સમયનો બાણકાર નહિ

યથા કથિદરિમર્દનનામા નરાધિપો વિપક્ષપક્ષદલનદક્ષોઽપ્યવસરાનભિજ્ઞો નગરીં સિંહાદિશ્વાપદાકુલિતામલોક્યાપિ વહુષુ પ્રાણિગણેષુ નાશમુપગતેષુ પશ્ચાચ્ચ રક્ષાર્થં પ્રાકારં કારિતવાન્ તથૈવ કાલાકાલસમુત્થાયી ચાવસરાનવસરાનભિજ્ઞો ભવતીતિ ભાવઃ ।

યસ્તુ સમ્યક્ કાલોત્થાયી સ ચ કાલપરિજ્ઞાનાર્થં સતતં સાવધાનો યથાવસરં સકલાં ક્રિયાં વિદધાતિ । કિન્તુ યથા જન્માદેરકાલો નાસ્તિ તથા ધર્મેઽપિ નાઽકાલઃ, “ધમ્મો હિ બુદ્ધેહિં પરિસેવિયવ્વો” ઇતિ વચનાત્ । યો હિ રાગવાન્ સ કાલાકાલસમુત્થાયી કિમર્થમિત્યાહ—“સંયોગાર્થી” સંયુજ્યતે, સંયોજનં વા સંયોગઃ, સોઽર્થઃ—પ્રયોજનં યસ્યાસ્તીતિ સંયોગાર્થી । સંયોગઃ=શબ્દાદિવિષયઃ, માતાપિત્રાદિમિશ્ર સંયોગસ્તદર્થી=તત્પ્રયોજનવાન્ ।

પરન્તુ અનવસરજ્ઞ હોને સે ઉસને અપની પ્રજાકી રક્ષા ઉસ સમય—જવ કિ ઉસે સિંહાદિ નષ્ટ-ઘટ્ટ કર રહે થે; નહીં કી, પશ્ચાત્ જવ લોગ હર તરહ સે વર્વાદ હો ચુકે તવ ઉસ સમય જોકિ ઉનકી રક્ષા કા અવસર નહીં થા ઉસને રક્ષા કે લિયે નગર કા કોટ બનવા દિયા । જિસ પ્રકાર વહ રાજા કાલાકાલસમુત્થાયી હોને સે વિવેકી નહીં માના જા સકતા, ઉસી પ્રકાર જો પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી હોતા હૈ વહ ભી અવસર ઔર અનવસર કા યથાર્થ જ્ઞાતા નહીં હોતા, જો કાર્ય કે ઉચિત કાલ મેં કાર્ય કરને કે સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ નિરન્તર અવસર કે અનુસાર હી સાવધાન હોકર ઉસી સમય મેં સમસ્ત ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ । રાગવાન પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી ક્યોં હોતા હૈ ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—“સંયોગાર્થી” ઇત્યાદિ । વહ સંયોગાર્થી હૈ । સંયોગ હી જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ સંયોગાર્થી હૈ શબ્દાદિક વિષયોં કે સાથ,

હોવાથી ત્યારે સિંહાદિ હિંસક પ્રાણી પ્રજાનો નાશ કરી રહ્યાં હતા ત્યારે પ્રજાની રક્ષા કરી નહિ પણ ત્યારે પ્રજાની ખરબાદી થઈ ગઈ ત્યારે જે કે અવસર નહિ હોવા છતાં પ્રજાની રક્ષા માટે કોટ બનાવ્યો. તે જે પ્રકારે તે રાજા કાળાકાલસમુત્થાયી હોવાથી વિવેકી મનાતો નથી તે પ્રકારે જે પ્રાણી કાળાકાળસમુત્થાયી છે તે પણ સમય અસમયનો જ્ઞાતા નથી, જે કાર્યના ઉચિત કાળમાં કાર્ય કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે નિરંતર અવસર અનુસાર જ સાવધાન થઈ તે સમયમાં સમસ્ત ક્રિયાઓ કરે છે. રાગવાળો પ્રાણી કાળાકાળસમુત્થાયી કેમ બને છે ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—“સંયોગાર્થી” ઇત્યાદિ. તે સંયોગાર્થી છે. સંયોગ જ જેનું પ્રયોજન છે તે સંયોગાર્થી છે. શબ્દાદિક વિષયોમાં તેમ જ માતાપિતાદિકની

યદ્વા હસ્ત્યશ્વરથઋલગ્નમિત્રદ્વિપદચતુષ્પદાદિરૂપઃ સંયોગસ્તત્પ્રયોજનવાન્ । યતઃ સંયોગાર્થી અતएव કાલાકાલસમુત્થાયી, ઇતિ હેતુર્ગર્ભ વિશેષણમ્ । સંયોગવ્યગ્રતયૈવાનવગતકાલાકાલવ્યવસ્થા ઇતિ યાવત્ । અતएव અર્થાલોભી-અર્થો ધનં કુપ્યમકુપ્યં ચેતિ, તત્ર સુવર્ણાદિભિન્નં રત્નાદિ કુપ્યમ્, સુવર્ણરજતાદિરૂપમકુપ્યં ચેતિ ભેદઃ । આ=સમન્તાત્ સર્વત્ ઇતિ યાવત્, લોભો=લાલસા વિદ્યતે યસ્ય સ આલોભી અર્થસ્યા-લોભી અર્થાલોભી, અત્રાપિ કાલાકાલસમુત્થાયીતિ વિશેષણમ્ । યસ્માદ્ધનાભિલાષી તસ્માત્કાલાકાલસમુત્થાયી, અનિર્જાતકાલાકાલનિયમઃ, યો હિ ધનં કામયતે

અથવા માતાપિતાદિક કે સાથ જો સંબંધ હૈ । ઉસી કા નામ સંયોગ હૈ । અથવા-હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહ કે સાથ સંબંધ મી સંયોગ હૈ । તત્પ્રયોજનવાન્ પ્રાણી સંયોગાર્થી કહલાતા હૈ । યહ સંયોગાર્થી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ । કાલાકાલ-સમુત્થાયી હોને મેં સંયોગાર્થિત્વ યહ હેતુ હૈ । સંયોગ મેં વ્યગ્રતા હી કાલાકાલ કી અવ્યવસ્થા કા કારણ હોતી હૈ । “અર્થાલોભી”-સર્વ પ્રકાર સે અર્થ કા અભિલાષી જો હોતા હૈ-વહ અર્થાલોભી હૈ । કુપ્ય ઓર અકુપ્ય કે ભેદ સે ધન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । રત્નાદિક કુપ્ય હૈ । સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય હૈ । અર્થ-આ-લોભી-હસ પ્રકાર હસ વાક્ય મેં પદચ્છેદ કરને સે યહ અર્થ નિષ્પન્ન હોતા હૈ કિ જો આ-સર્વ પ્રકાર સે અર્થલોભી હૈ । યહાં પર મી ‘કાલાકાલસમુત્થાયી’ હસ વિશેષણ કી યોજના કર લેની ચાહિયે । હસસે યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ યહ ધનાભિલાષી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ, કાલ ઓર

સાથે જે સંબંધ છે તેનું નામ સંયોગ છે, અથવા હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહની સાથે સંબંધ પણ સંયોગ છે એવા પ્રયોજનવાળો પ્રાણી સંયોગાર્થી કહેવાય છે. તે સંયોગાર્થી છે માટે કાળાકાલસમુત્થાયી છે. કાળાકાલસમુત્થાયી હોવામા સંયોગાર્થીત્વ હેતુ છે, સંયોગમાં વ્યગ્રતા જ કાળાકાળની અવ્યવસ્થાનું કારણ થાય છે “અર્થાલોભી” બધા પ્રકારે અર્થનો અભિલાષી થાય છે. તે અર્થ-લોભી છે. કુપ્ય અને અકુપ્યના ભેદથી ધન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે. રત્નાદિક કુપ્ય છે, સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય છે. ‘અર્થ-આ-લોભી’ આ પ્રકારે આ વાક્યમાં પદચ્છેદ કરવાથી એવો અર્થ નિષ્પન્ન થાય છે કે જે આ સર્વ પ્રકારથી અર્થ-કુપ્ય અને અકુપ્યરૂપ દ્રવ્યનો લોભી-અભિલાષી-છે તે અર્થલોભી છે આ ઠેકાણે પણ ‘કાળાકાલસમુત્થાયી’ આ વિશેષણની યોજના કરવી જોઈ એ તેથી એ ફલિતાર્થ થાય-છે કે ધનાભિલાષી છે માટે કાળાકાલસમુત્થાયી છે. કાળ અને અકાળના

સોઽવસરાદિકં ન કિમપિ જાનાતિ । અનવસરમપિ શોભમાનાવસરમેવ મન્યમાનો
યસ્માત્કસ્માદ્ યેન કેન પ્રકારેણાર્થં વાઙ્મતિ । અર્થલુબ્ધો હિ સતતમર્થોપાર્જન-
વ્યાસક્તમાનસઃ પ્રાપ્તપિ મુશલધારાઘર્ષરિતે કાલે દુરધિગતજલસ્થલસુપથવિપથયાં
પદમપિ ગન્તુમક્ષમાયાં ક્ષમાયાં વાણિજ્યાર્થં નાત્રાપારપારાવારમપિ તિતીર્ણીપાદ-
દ્વીપાન્તરે ગમનાગમનાદિકં કરોતિ, સર્વત્ર ધનલોભ એવ કારણમ્ । ધનાર્થી પ્રાણમપિ

અકાલ કે નિયમ કા જ્ઞાતા નહીં હૈ । જો ધનકા અભિલાષી હોતા હૈ વહ
સમય કી પ્રતીક્ષા નહીં કિયા કરતા હૈ । ધનાર્જન કરને કા અવસર નહીં
હોને પર ભી યહ “ ધન કમાને કા સુન્દર અવસર હી હૈ ” એસા માન
કર જિસ કિસી ભી રીતિ સે ધન કી અભિલાષા કિયા કરતા હૈ । જો
દ્રવ્ય કા લુબ્ધક હોતા હૈ વહ નિરન્તર દ્રવ્ય કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્ત-
ચિત્ત બન કર વર્ષાકાલ મેં મૃસલધાર પાની વરસને પર ભી રાત્રિ કે
સમય હી ઉસ ભૂમિ મેં કિ જિસમેં જલ સ્થલ સમમાર્ગ ઓર વિષમમાર્ગ
કી કુછ ભી સ્વર નહીં પડતી ઓર જહાં એક કદમ ભી ચલના વડા
મુશ્કિલ હોતા હૈ એસી ભૂમિ મેં ભી વ્યાપાર કે લિયે ગાડી આદિ કિસી
સાધન દ્વારા એક નગર સે દૂસરે નગર મેં, ઓર નૌકા સે અપાર સમુદ્ર કો
ભી પાર કર એક દ્વીપ સે દૂસરે દ્વીપ મેં આતા જાતા રહતા હૈ । પ્રાણોં કો
ભી સંકટ મેં ઢાલ ધનાભિલાષી ધન કમાને કે લિયે દુર્ગમ પ્રદેશો મેં
જાકર ધન કા ઉપાર્જન કરતા હૈ, ઉસમેં સિર્ફ ધન કા લોભ હી કારણ
હૈ । દ્રવ્યલોલુપી અપને પ્રાણોં કી વાજી લગાકર ભી ઇધર ઉધર દ્રવ્ય

નિયમનો જ્ઞાતા નથી, જે ધનનો અભિલાષી છે તે સમયની પ્રતીક્ષા કરતો નથી,
ધન ઉપાર્જન કરવાનો અવસર નહિ હોવા છતાં “ ધન કમાવાનો સુંદર અવસર
છે ” એમ માની કોઈ પણ પ્રકારે ધનની અભિલાષા કર્યા કરે છે જે દ્રવ્યનો
લુબ્ધક હોય છે તે નિરંતર દ્રવ્ય ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત બની વર્ષાકાળમાં
મૃસલધાર પાણી વરસતો હોય છતાં રાત્રિ સમય તે ભૂમિમાં કે ન્યા જળ સ્થળ
સમમાર્ગ અને વિષમમાર્ગની કાંઈ પણ બળર પડતી નથી અને ન્યાં એક ડગલું
પણ ભરવું મુશ્કેલ થઈ પડે છે તેવી ભૂમિમાં પણ વ્યાપાર કરવા ગાડા આદિ
કોઈ સાધનદ્વારા એક ગામથી બીજા ગામમાં અને નૌકાથી અપાર સમુદ્રનો પણ
પાર કરી એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપમાં આવે જાય છે, પ્રાણને પણ જોખમમાં મૂકીને
ધનાભિલાષી ધન કમાવા દુર્ગમ પ્રદેશોમાં જઈ ધનનું ઉપાર્જન કરે છે તેમાં ફક્ત
ધનનો લોભ જ કારણ છે. દ્રવ્યલોલુપી પોતાના પ્રાણના ભોગે પણ અહીં-તહીં

તળવન્મન્યમાનો મુહુર્મમતિ । ઉપાર્જિતાર્થરક્ષણાય રાત્રાવપિ ચૌરાદિભયાન્ન નિદ્રા-
મનુભવતિ । મમ્મણશ્રેષ્ઠિવદુઃખી ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

‘ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

કો કમાને કે હી લ્યાલ સે ધૂમતા હૈ તથા ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કે રક્ષણ કે
લિયે રાત્રિમેં બી ચૌરાદિક કે ભય સે યથેચ્છ નિદ્રા નહીં લેતા । મમ્મણ
સેઠ કી તરહ દુઃખ કા હી અનુભવ કરતા હૈ । કહા બી હૈ:—

“ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

મુદ્ધક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વહ્નય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીન મેં ગડે હુણે અપને ધનકો કબી
બાહર નિકાલતા હૈ કબી ફિર જમીન મેં ગાડતા હૈ કબી પેટી આદિ મેં
રખતા હૈ । વહ ચોર આદિ કે ભય સે રાતકો સોતા નહીં ઓર દિન મેં
બી શંકા કરતા રહતા હૈ કિ ‘મેરે ધન કો કોઈ ચુરા ન લે જાય ।’ વહ
ધન કો ઢાટ કર ડપર સે લીપતા હૈ, તથા ડસ લીપે હુણે પર ડસ ધન કો

દ્રવ્ય કમાવાના ખ્યાલથી રખડતો ફરે છે, તથા કમાયેલા દ્રવ્યનું રક્ષણ કરવા રાત્રિના
સમયમાં ચૌરાદિકના ભયથી સુખથી નિદ્રા પણ લેતો નથી. મમ્મણ શેઠ માદ્ધ
દુઃખને જ અનુભવ કરે છે કહ્યું છે કે:—

“ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિત-પ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

મુદ્ધક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વહ્નય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીનમાં દાટેલું પોતાનું ધન કોઈ વખત બહાર
કાઢે છે, કોઈ વખત જમીનમાં દાટે છે, ક્યારેક પેટી આદિમાં રાખે છે, વળી
રાત્રે ચોર આદિના ભયથી સુતો નથી અને દિવસે પણ શંકા કરે છે કે—“મારું
ધન કોઈ ચોરી ન જાય ” વળી ધનને દાટીને ઉપરથી લીંચે છે, તથા તે લીંચેલી

મુદ્ધસ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો, જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધ્યામિ ।
 નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્ધ્ય ॥ ૨ ॥ અપિ ચ-
 જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ ત્રિપત્તિષુ ।
 મોહયન્તિ ચ સમ્પત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવ્રહ્માઃ ? ॥ ૩ ॥

પુનરપ્યર્થાલોભિનોઽનુચિતકરણે પ્રવૃત્તિં દર્શયતિ-“આલુમ્પઃ” ઇતિ, આ-
 સમન્તાલુમ્પતીત્યાલુમ્પો લુણ્ટાકો હઠાદ્વનાપહારકઃ, સ ચ લોભમહાશીવિપદદ્વો
 વિસ્મૃતકર્તવ્યાકર્તવ્યો ધનમેવાર્જનીય-મિતિ મન્યમાનઃ કદુકકદુકતરવિપાકજનકં

પહિચાનને કે લિખે પુનઃ પુનઃ મુદ્રા-નિશાન કરતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ વહ
 ન પૂરા રાતા હૈ ન અચ્છા રાને કે લિખે પ્રવૃત્ત હોતા હૈ નથા વોલતા હૈ
 કિ-મેં આજ ન સ્નાન કરૂંગા ઓર ન ઘર પર હી રહ સકૂંગા, ક્યોંકિ આજ
 મુદ્ધે વહુત કામ કરના હૈ ॥ ૨ ॥ યહ ધન ઉપાર્જનકાલ મેં દુઃખ ઉત્પન્ન
 કરનેવાલા હૈ, ઉસકે નષ્ટ હોને પર વહ પરમદુઃખ કા કારણ હોતા હૈ,
 વઢ જાને પર વહ મોહકપાય કો વઢાતા હૈ તો ફિર કહો કિ ધન સુખકા
 કારણ કૈસે હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકના । અર્થ અનર્થ કા હી
 મૂલ હૈ કિન્તુ સુખ કા નહીં ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી ઓર મી અયોગ્યકાર્ય મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ઇસે પ્રકટ
 કરતે હૈ-આલુમ્પઃ-‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-ઇતિ આલુમ્પઃ લુણ્ટાકઃ
 હઠાદ્વનાપહારકઃ’ જો જવર્દસ્તી સે દૂસરોં કા ધન લૂટે-ઉસે આલુમ્પ
 કહતે હૈ । લૂટ યહ ઇસલિખે મચાતા હૈ કિ યહ લોભરૂપી મહાસર્પ સે
 ડસા હુઆ રહતા હૈ । અનઃ ઇસે અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કા કુચ્છ મી માન

જગ્યા ઉપર તે ધનની પિછાણ માટે નિશાની પણ કરે છે ॥ ૧ ॥ તે પુરૂં ખાતો
 પણ નથી તેમજ સાફ ખાવાને પ્રવૃત્ત થતો નથી. અને ખોલે છે કે-હું આને
 સ્નાન કરવાનો નથી તેમજ ઘેર પણ રહેવાનો નથી, કારણકે આને મારે ઘણું
 કામ છે (૨) આ ધન, ઉપાર્જનકાળમાં હું બ ઉત્પન્ન કરવાવાળું છે અને તેનો
 નાશ થવાથી વધારે હું બનું કારણ થાય છે. વધી જતા ઉપર તે મોહકપાયનો
 વધારો કરે છે તો હવે કહો ! ધન સુખનું કારણ કેવી રીતે થાય ? અર્થાત્ થઈ
 શકતું નથી. અર્થ અનર્થનું જ મૂળ છે પણ સુખનું નહિ ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી વળી અયોગ્ય કાર્યમાં પણ પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પ્રકટ કરે છે -
 આલુમ્પઃ ‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-ઇતિ આલુમ્પઃ-લુણ્ટાક હઠાદ્વનાપહારકઃ’
 જે જખરાઈથી ખીબનું ધન લુંટે-તેને આલુમ્પ કહે છે. લુટ તે એવી મથાવે
 છે કે જાણે લોભરૂપી મહાસર્પથી ડસાયેલો હોય, અને તેવે વળતે કર્તવ્યા-

निर्लाञ्छन—गलकर्तन—गृहदाहादिकं क्रूरकर्म करोति 'धनमेव सारं' मन्यमानो हि सततं तल्लाभाय मोहाविष्टो भ्रमति । स चार्थलाभाय किं करोतीत्याह—“सहसाकारं” इति आर्षत्वात्कर्तरि घञ् । सहसा करोतीति सहसाकारः । स्वहिताहितमविचार्य कर्मकारी । यथा मृगादिः क्षेत्रे जालादिकं विलोक्यापि तमवज्ञाय धान्यादिभक्षण-लोभेन स्ववधमप्यविचार्य जाले बद्धो भवति म्रियते च पश्चात्तेनैव निमित्तेन । तथैव लोभाकुलितचेता धनलाभपरायणः स्वपरप्राणघातकर्मपि कर्म करोति । अर्थलाभाय नहीं रहता, उस समय एक यही उसका लक्ष्य रहता है कि किसी भी तरह से द्रव्य एकत्रित करना चाहिये । इस ख्याल से वह भयंकर से भी भयंकर भविष्यत्कालीन कटुक विपाक की परवाह न करके लोक-निन्दित निर्लाञ्छन, दूसरों का गला घोटना, दूसरों का घर-बार फूंकना आदि क्रूर कर्म कर डालता है । 'संसार में सार वस्तु एक द्रव्य ही है' ऐसा मान कर निरंतर उसके लाभ के लिये मोहाधीन हो घूमता रहता है । और इसके लाभ के लिये वह “सहसाकारः” हिताहित के विवेक से विकल हो अयोग्य कर्म करने के लिये तत्पर हो जाता है । जैसे मृगादि पशु क्षेत्र में विस्तीर्ण जाल को देख कर भी उसकी कुछ भी परवाह न कर धान्यादिक खाने के लोभ से अपने वध (मृत्यु) की भी उपेक्षा कर जाल में फंस जाते हैं और उसी में फंसे २ मर जाते हैं । उसी प्रकार लोभ से आकुलितमति होकर धन के लाभ के लिये तत्पर हुआ जीव भी स्व और पर के प्राणों को घात करने वाले क्रूर कर्मों को किया करता है । द्रव्य के लाभ के लिये प्रयत्नशील बना हुआ यह प्राणी जिस प्रकार

कर्तव्यनुं कर्तुं पशु लान नहि राभता इक्षत अेक न लक्ष्य राभे छे के के कर्तुं पशु प्रकारे द्रव्य अेकत्रित करी लउ आवा न्यालथी ते लयंकरमां लयंकर लविष्यत्कालीन कटुक विपाकनी परवाह पशु न करतां लोकनिन्दित-निर्लाञ्छन, भीलनुं गणुं दयावतुं, भीलनुं घर भाणवु, आदि क्रूर कर्म करे छे 'संसारमां सार वस्तु अेक द्रव्य न छे' अेवुं मानीने निरंतर तेनी प्राप्ति माटे मोहाधीन थर्ध इरतो रहे छे. द्रव्यप्राप्ति माटे ते “सहसाकारः” हिताहितना विवेकथी विकल थर्ध अयोग्य कर्म करवा तत्पर थाय छे. जेम मृगादि पशु क्षेत्रमां विस्तीर्ण जालने देभीने पशु तेनी परवाह नहि करता धान्यादिक भावाना दोलथी पोताना मृत्युनी पशु उपेक्षा करी जालमां इसे छे अने तेनी अहर इथीने तेमां न भरे छे. ते प्रकारे दोलथी आकुलितमतिने जनीने धनना लाल माटे तत्पर थयेल लव पशु पोताना अने भीलना प्राणुने घात करवामां क्रूर कर्मेने करे छे; द्रव्यना लाल माटे प्रयत्नशील जनी ते प्राणी जेम धन कभावाना

પ્રયત્નમાનો હિ યથોપાયન્ પશ્યતિ તથા નાપાયન્ । અર્થાતુરો હિ ન સ્વજનાદિક-
મપિ ગણયતિ તમપિ વશ્ચયતિ । પુનરર્થાલોભી કીદૃશો ભવતીત્યાહ—“ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ”
ઇતિ, વિ=વિવિધં નિવિષ્ટમ્ અનેકથા સ્થિતં ધનાર્જને ચિત્તં યસ્ય સ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ।

ચદ્વા—માતાપિત્રાદ્યભિસમ્બન્ધે વિનિવિષ્ટં ચિત્તમન્તઃકરણં યસ્ય સ વિનિ-
વિષ્ટચિત્તઃ, સતતં તસ્ય ચિત્તે ધનલાભાભિનિવેશ ઉપજાયત ઇતિ ભાવઃ । એવંભૂતઃ
કિં કરોતીત્યાહ—“ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” ઇતિ । અત્ર=અસ્મિન્ માતાપિતૃભ્રાતૃ-
ભગિની-ભાર્યા-પુત્ર-દુહિતૃ-સ્ત્રુપા-મિત્ર-પિતૃવ્ય-શ્વશુર-હસ્ત્ય-શ્વાદિકે, શબ્દાદિ-
કામગુણે વા વિનિવિષ્ટચિત્તઃ શસ્ત્રે=પડ્જીવનિકાયોપમર્દનલક્ષણે પુનઃ પુનઃ પ્રવર્તતે ।
રાગાદ્યાવિષ્ટચેતા સંયોગાર્થી અર્થાલોભી આલુમ્પઃ સહસાકારસ્ત્ર વિનિવિષ્ટચિત્તઃ પડ્-
જીવનિકાયસ્યારમ્ભે વારં વારં પ્રવર્તત ઇતિ સૂત્રાશયઃ ॥ ૧ ॥

ધન કમાને કે ઉપાયોં કી ઓર દેખતા હૈં ઉસ પ્રકાર સે કષ્ટોં કી તરફ
નહીં દેખતા, અર્થાત્ પ્રાણી અપને નિજ જન કી ખી ઇજ્જત નહીં કરતા,
પ્રત્યુત ઉન્હેં ખી ઠગને કી ફિરાક મેં રહતા હૈં । ક્યોંકિ વહ “ વિનિવિષ્ટ-
ચિત્તઃ ” અનેક પ્રકાર સે ધન કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્તચિત્તવાલા
હોતા હૈં । હસ પ્રકાર વહ “ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” માતા, પિતા, ભાઈ,
બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસુર ઓર હસ્તિ આદિ
પદાર્થોં મેં અથવા શબ્દાદિકવિષયોં મેં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તહીંન બનકર
પડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈં ।
હસ સૂત્ર કા ફલિતાર્થ યહ હુઆ કિ રાગાદિકોં મેં તહીંનચિત્તવાલા
સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ સહસાકારી પ્રાણી, ઉન ૨ પદાર્થોં મેં
તત્પર હોકર પડ્જીવનિકાય કે આરંભ મેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ॥૧॥

ઉપાયો તરફ જ દેખે છે તે પ્રમાણે કષ્ટો તરફ દેખતો નથી અર્થાત્ પ્રાણી પોતાના
નિજ જનની પણ ધન્ય કરતો નથી, ઉદ્દુ તેને પણ લુટવાની ફિકર કરે છે,
કારણકે તે “ વિનિવિષ્ટચિત્ત ” અનેક પ્રકારથી ધન ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત-
ચિત્તવાળો થાય છે. આ પ્રકારે તે “ અત્ર શસ્ત્રે પુન પુન ” માતા, પિતા,
ભાઈ, બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસુર અને હસ્તિ આદિ
પદાર્થોમાં અથવા શબ્દાદિકવિષયોમાં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તહીંન બનીને પડ્જીવ-
નિકાયના ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમાં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. આ સૂત્રનો ફલિતાર્થ
એ થાય છે કે રાગાદિકોમાં તહીંનચિત્તવાળા સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ
સહસાકારી પ્રાણી તેવા પદાર્થોમાં તત્પર બનીને પડ્જીવનિકાયના આરંભમાં
વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. ૧

યદિ મનુષ્યો દીર્ઘાયુરજરામરો વા ભવેત્તદા યુક્તો માતા-પિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞ-
સ્તસ્ય, કિન્તુ નૈવમસ્તિ। મનુષ્યશિરસિ ચ મૃત્યુરનિશં ભ્રમતિ। જરાજીર્ણસ્ય
કર્તવ્યાકર્તવ્યશૂન્યસ્ય પ્રાણિનો વાર્ધકે માતાપિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞેઽપિ તદર્થપ્રયાસાક્ષ-
મત્વેન મૂઢતા જાયતે इति दर्शयति—“अप्यं च” इत्यादि।

મૂલમ્—અપ્યં ચ खलु आउयं इहमेगोसिं माणवाणं, तं जहा
सोयपरिणणोहिं परिहायमाणोहिं, चक्रवुपरिणणोहिं परिहाय-
माणोहिं, घाणपरिणणोहिं परिहायमाणोहिं, रसणपरिणणोहिं
परिहायमाणोहिं, फासपरिणणोहिं परिहायमाणोहिं, अभिक्कंतं
च खलु वयं संपेहाय तओ से एगया मूढभावं जणयइ (सू. २)

यदि मनुष्य दीर्घायु होता अथवा अजर अमर होता तो माता-
पितादिक में इसका ममत्व करना भी युक्तियुक्त था, किन्तु ऐसा तो
है नहीं क्योंकि निरन्तर ही इसके मस्तक पर मृत्यु घूमती रहती है।
और जरा से समयानुसार यह जीर्णकाय भी होता रहता है। इस परि-
स्थिति में मृत्यु और जरा के वश में पड़े हुए इसके हृदय में सदा
आकुल-व्याकुल परिणामों की परिणति जागृत होती रहती है तब उसमें
ही रातदिन मग्न हुआ यह जब स्वयं अपने कर्तव्याकर्तव्य के बोध से
ही विकल रहता है तब यह अपने सगे-सम्बन्धी मातापितादिक का
अभिष्वंग-संबंध होने पर भी अपनी तरफ से उनके लिये थोड़ा सा
भी प्रयास-उद्यम नहीं कर सकता है, जब प्रयास नहीं कर सकता है
तब वह किंकर्तव्यमूढ़ बन जाता है। इसी बातको सूत्रकार प्रकट
करते हैं:—‘अप्यं च खलु आउयं’ इत्यादि।

કદાચ મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોત અથવા અજર અમર હોત તો માતાપિતાદિકમા
તેનું મમત્વ કરવું યુક્તિયુક્ત હતું પણ એવું તો છે નહિ, કારણકે નિરંતર તેના
માથા ઉપર મોત ભમે છે, અને ઘડપણથી સમયાનુસાર તે જીર્ણકાય પણ થાય
છે. આવી પરિસ્થિતિમાં મૃત્યુ અને જરાની વશમાં પડેલો તેના હૃદયમાં હમેશાં
આકુળ-વ્યાકુળ પરિણામોની પરિણતિ જાગૃત રહે છે તેમા જ રાતદિવસ મગ્ન
થએલો તે પોતે પોતાના કર્તવ્યા-કર્તવ્યના બોધથી જ વિકળ રહે છે ત્યારે તે
પોતાના સગાં સબંધી માતા પિતાદિકના અભિષ્વંગ-સંબંધ હોવા છતાં પણ
પોતાની તરફથી તેમને માટે થોડો પણ પ્રયાસ કરી શકતો નથી:—ત્યારે પ્રયાસ
કરી શકતો નથી ત્યારે તે કિંકર્તવ્યમૂઢ બની જાય છે. પૂર્વોક્ત વાતને જ સૂત્રકાર
પ્રકટ કરે છે—‘અપ્યં ચ खलु आउयं’ इत्यादि

છાયા—અલ્પં ચ खलु आयुष्कर्मिहैकेपां मानवानाम् । तद्यथा—श्रोत्रपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, चक्षुःपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, घ्राणपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, रसन-परिज्ञानैः परिहीयमानैः, स्पर्शपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य ततः स एकदा मूढभावं जनयति ॥ २ ॥

ટીકા—અલ્પં=સ્તોકં, ‘ચ’ શબ્દેન દીર્ઘાયુષ્કપરિગ્રહઃ । खलु શબ્દોડવધારણે, ‘આયુઃ’ પૂર્વકૃતકર્મભોગાર્થમૈતિ=સમાગચ્છતીત્યાયુઃ । यद्वैति=સમાગચ્છતિ સ્વકૃત-કર્મપ્રાપ્તનરકાદિગતિસ્થિતજન્તોઃ પ્રતિવન્ધકતામિત્યાયુઃ, भवस्थितिहेतुः कर्मपुद्गल-पुञ्जमित्यर्थः । आयुर्हि सुखदुःखाधारं देहस्थितं जीवं तत्तद्गतौ धरति । उक्तञ्च—

“दुःखं न देइ आज, न वि य सुहं देइ चउमुवि गईसु ।

दुक्खसुहाणाधारं, धरइ देहद्वियं जीवं ॥ ૧ ॥”

છાયા—दुःखं न ददात्यायुर्नापि च सुखं ददाति चतसृष्वपि गतिषु ।

दुःखसुखानामाधारं, धरति देहस्थितं जीवम् ॥ इति ।

इस संसार में कितनेक मनुष्यों की आयु अल्प है, पूर्ण आयु को भोगते हुए भी जब यह प्राणी वृद्धावस्थासंपन्न होता है तब इसकी श्रोत्र-इन्द्रिय अपने विषय के ग्रहण करने में असमर्थ हो जाती है, चक्षु-इन्द्रिय रूप के देखने में क्षीण शक्तिवाली हो जाती है, घ्राण-इन्द्रिय सुगंध-दुर्गन्ध के बोध करने से विमुख हो जाती है, रसना-इन्द्रिय ५ प्रकार के रसास्वादनरूप अपने कार्य से शिथिल बन जाती है और स्पर्शन-इन्द्रिय भी ८ प्रकार के स्पर्श को बतलाने में अक्षम हो जाती है । इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रियाँ जब इस अवस्था में अपने २ कर्तव्य से विमुख हो जाती हैं, तब यह प्राणी उस अवस्था में कर्तव्याकर्तव्य के ज्ञान से शून्य हो जाता है ।

આ સંસારમાં કેટલાક મનુષ્યોની આયુ ઓછી છે પૂર્ણ આયુને ભોગવતો છતાં પણ જ્યારે તે પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેની શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પોતાનો વિષય ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય, રૂપ દેખવામાં ક્ષીણશક્તિવાળી થાય છે. ઘ્રાણઇન્દ્રિય સુગંધ દુર્ગંધનો બોધ કરવામાં વિમુખ થઈ જાય છે. રસના-ઇન્દ્રિય પાંચ પ્રકારના રસાસ્વાદન રૂપ પોતાના કાર્યથી શિથિલ બની જાય છે અને સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય પણ આઠ પ્રકારના સ્પર્શ બતાવવામાં અક્ષમ થાય છે આ પ્રકારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય જ્યારે આ અવસ્થામાં પોત-પોતાના કાર્યથી વિમુખ થાય છે ત્યારે આ પ્રાણી આ અવસ્થામાં કર્તવ્યાકર્તવ્યના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે.

ટીકાર્થ:—સૂત્ર મેં “અપ્પં ચ” યહાં પર જો “ચ” શબ્દ હૈં ઉસસે દીર્ઘ આયુ કા ભી ગ્રહણ હોતા હૈં । “ચલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય અર્થ મેં આયા હૈં । પૂર્વકૃત કર્મ કે ભોગને કે લિયે જો જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈં વહ આયુ હૈં અથવા જિસકે દ્વારા જીવ ઇક ગતિ સે દૂસરી ગતિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં વહ આયુ હૈં અથવા અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મ કે અનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિ મેં રહનેવાલે જીવ કો જો અપની સ્થિતિ તક ઓર દૂસરી ગતિ મેં ન જાને દેવે વહ આયુ હૈં । અથવા-અજ્ઞાલિ મેં રહે હુણ જલ કી તરહ જો પ્રતિક્ષણ હાસ કો પ્રાપ્ત હો વહ આયુ હૈં । ઇન તમામ વ્યુત્પત્તિયોં દ્વારા યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈં કિ જો કર્મ-પુદ્ગલપુજ્જ ઇસ જીવ કો પ્રાપ્ત હુણ ભવ મેં રોક રખે વહ આયુ હૈં । ક્યોં કિ સુખ દુઃખ કા આધારભૂત ઓર દેહ મેં રહને વાલે જીવ કો આયુ હી ઉસ ૨ ગતિ મેં અપને ઉદયપર્યન્ત રોકે રહતા હૈં । આયુ કર્મજીવ કો ચારોં હી ગતિયોં મેં ન તો દુઃખ દેતા હૈં ઓર ન વૈષયિક સુખ હી દેતા હૈં । કિન્તુ જો જીવ જિસ ગતિ કે આયુ કો બાંધ કર ઉસ પર્યાય કા ભોગ કરતા હૈં સુખ દુઃખ કે આધારભૂત ઉસ જીવકો વહ ઉસ ગતિ મેં ઉસ વિવક્ષિત પર્યાય મેં રોકે રખતા હૈં ।

ટીકાર્થ:—સૂત્રમાં “અપ્પં ચ” આ ઠેકાણે જે “ચ” શબ્દ છે તેનાથી દીર્ઘ આયુતું ગ્રહણ થાય છે “ચલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય-અર્થમાં આવ્યો છે. પૂર્વકૃત કર્મ ભોગવવાને જે જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તે આયુ છે, અથવા જે દ્વારા જીવ એક ગતિથી બીજી ગતિમાં જાય છે તે આયુ છે, અથવા પોતાના દ્વારા કરેલા કર્માનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિમાં રહેવાવાળા જીવને જે પોતાની સ્થિતિ સુધી બીજી ગતિમાં ન જવાદે તે આયુ છે, અથવા અંજલિમાં રહેલાં પાણીની માફક જે પ્રતિક્ષણ ઘટતું જાય છે તે આયુ છે આવી તમામ વ્યુત્પત્તિયો દ્વારા એ નિષ્કર્ષ નિકળે છે કે જે કર્મપુદ્ગલપુંજ આ જીવને પ્રાપ્ત થએલા ભવમાં રોકી રાખે તે આયુ છે, કારણકે સુખ-દુઃખના આધારભૂત અને દેહમાં રહેનાર જીવને આયુ જ તે તે ગતિમાં પોતાના ઉદયપર્યન્ત રોકી રાખે છે, આયુકર્મ જીવને ચારે ગતિમાં દુઃખ અને વૈષયિક સુખ નથી આપતું પણ જે જીવ જે ગતિની આયુને બાંધીને તે પર્યાયનો ભોગ કરે છે. સુખ દુઃખના આધારભૂત તે જીવને તે ગતિમાં વિવક્ષિત પર્યાયમાં રોકી રાખે છે.

પુરુષસ્યાયુર્વિદ્યુદિવ ક્ષણમહ્નુરં, તૈલરહિતો દીપો યથા સ્વલ્પેનૈવ કાલેન નાશ-
મેતિ તથાઽઽયુરપિ તત્તદ્ભવસમ્બન્ધિભોગ્યકર્માભાવે સ્વલ્પેનૈવ કાલેન સમાપ્તિમુપ-
ગच्छति । આયુર્હિં જલતરન્નમિવ, જલસ્થિતેન્દુપ્રતિવિમ્બમિવ, વિદ્યુદિવ ધર્તુમશ્કયં
ભવતીત્યાયુપોઽલ્પત્વં માનવાનામિત્યભિપ્રાયમેવ મનસિ નિધાય દર્શયતિ—“ઈહ એકેષાં
માનવાનામલ્પમાયુષ્કમ્ ” । અત્રૈકેષામિતિ કથનેન સંયમરહિતાનાં સાવધાનુષ્ઠાનેન
દીર્ઘમપ્યાયુરલ્પમિવ ભવતિ, તથૈવ સંયમિનાં ચ સ્વલ્પમપ્યાયુર્નિરવધાનુષ્ઠાનેન દીર્ઘા-

જિસ પ્રકાર તૈલસે રહિત દીપક થોડે હી સમય મેં બુઝ જાતા હૈ
ઉસી પ્રકાર આયુકર્મ બી તત્તદ્ભવસમ્બન્ધી કર્મ પુઢ્ઢલોં કે અભાવસે
થોડેસે હી કાલમેં સમાપ્ત હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર જલકી તરન્ન ઔર
પાનીમેં પ્રતિવિમ્બિત ચન્દ્રમા કા પ્રતિવિમ્બ, અથવા વિજલી લાલ પ્રયત્ન
કરને પર બી નહીં સ્થિર કિયે યા ઠહરાયી જા સકતી હૈં ઉસી પ્રકાર
તત્તદ્ભવસમ્બન્ધી આયુકી સમાપ્તિ હોને પર ઉસે એક ક્ષણ બી ફિર નહીં
બઢાયા યા ઠહરાયા જા સકતા । ઈસી અભિપ્રાય કો ચિત્તમેં ધારણ કર
સૂત્રકારને—“ઈહ એકેષાં માનવાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” યહ કહા હૈ ।
અવ ઈસી વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—

યહાં પર કિતનેક મનુષ્યોં કા જો આયુ અલ્પ કહા ગયા હૈ ઉસસે
યહ સમજના ચાહિયે કિ જો મનુષ્ય રાત-દિન સાવધકાર્યોં કે અનુ-
ષ્ઠાનમેં હી લવલીન હો રહે હૈં—સંયમભાવસે રહિત હૈં ઉન મનુષ્યોં કા
દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ બી ઉસ અનુષ્ઠાનસે અલ્પ જૈસા હો જાતા હૈ, તથા
સંયમી જીવોં કા અલ્પ બી આયુકર્મ નિરવધ અનુષ્ઠાનસે દીર્ઘ જૈસા હો

જેવી રીતે તેલ વગરનો દીવો થોડાજ સમયમાં ખુઝાઈ જાય છે તે પ્રકારે
આયુકર્મ પણ તત્તદ્ભવસંબંધી કર્મપુદ્ગલોના અભાવથી થોડાજ કાળમાં
સમાપ્ત થાય છે. જેમ પાણીનું મોળું, અને ચન્દ્રમાનો પાણીમાં પડતો પ્રતિબિમ્બ,
અથવા વિજળી લાખ પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ સ્થિર કરાતી નથી તેવી રીતે
તત્તદ્ભવસંબંધી આયુની સમાપ્તિ થવાથી તે એક પણ ક્ષણ રોકી અગર વધારી
શકાતું નથી. આ અભિપ્રાય ચિત્તમાં ધારણ કરી સૂત્રકારે “ઈહ એકેષાં માન-
વાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” એમ કહ્યું છે હવે આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે:—

આ જગ્યાએ કેટલાક મનુષ્યોની જે આયુ અલ્પ કહેવામાં આવી છે તેથી
એમ સમજવાનું છે કે જે મનુષ્ય રાત્રિનિ સાવધ કાર્યોના અનુષ્ઠાનમાં જ રહેલો
રહે છે, સંયમભાવથી રહિત છે તેવા મનુષ્યોના દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ પણ આવા
અનુષ્ઠાનથી ટુંકા જેવા થઈ જાય છે, તથા સંયમી જીવોના ટુંકા પણ આયુકર્મ

યુરિવ વર્તતે, દીર્ઘકાલિકજન્મમરણોચ્છેદેનાયુષઃ સાફલ્યાત્ । इह=સંસારે એકેષાં
=કતિપયાનાં માનવાનામાયુરલ્પં ભવતીત્યન્વયઃ । આયુષોડલ્પત્વશ્ચ ક્ષુલ્લકભવાપેક્ષ-
યાડન્તર્મુહૂર્તમાત્રં જઘન્યમ્ । ચ શબ્દાદધિકં ચોત્તરોત્તરસમયાદિવૃદ્ધ્યા યુગલિકમા-
શ્રિત્ય પલ્યોપમત્રયપરિમિતં ભવતિ । પલ્યોપમત્રયાયુરપિ સંયમકાલાભવાદધિકમ-
પ્યલ્પમેવ ।

અન્તર્મુહૂર્તાદારમ્ય દેશોનર્પૂર્વકોટિપરિમિતાયુષિ સંયમાયુષ્કસ્યાલ્પત્વાત્તદ-
પ્યલ્પમેવ ભવતિ ।

જાતા હૈ । દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણ કે વિનાશ સે હી તો આયુ કી
સફલતા હૈ ।

“અલ્પં ચ ક્ષલુ આયુષ્કમ્ इह एकेषां मानवानाम् ॥ यहां पर
“इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति” इस प्रकार अन्वय
લગાના યાહિયે । આયુકી અલ્પતા ક્ષુલ્લક-સબસે છોટે-ભવકી અપેક્ષાસે
પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ક્યોંકિ મનુષ્ય ઔર તિર્યંચોં કે આયુકર્મકી
સ્થિતિ શાસ્ત્રમેં દો પ્રકારસે વર્ણિત હૈ-(૧) જઘન્ય ઔર (૨) ઉત્કૃષ્ટ ।
જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તકી હૈ, ઔર ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિ
કી વૃદ્ધિસે લગા કર ત્રીન પલ્ય કી હૈ । યહ યુગલિયોં કી અપેક્ષાસે હૈ ।
ભોગભૂમિ મેં જીવકો સંયમ કી પ્રાપ્તિ હોનેકા અવસર હી નહીં હૈ, ઇસ
લિયે ત્રીન પલ્ય પરિમિત દીર્ઘ આયુ મી અલ્પ જૈસા હી હૈ, અર્થાત્
ઉસસે જીવકા નિજ કોઈ મી પરમાર્થ નહીં સધતા, કેવલ ભોગાદિકોં કે
ઉપભોગસે હી વહ નિષ્ફલ હો જાતા હૈ । સંયમારાધન સે હી કાલ કે

નિરવધ અનુષ્ઠાનથી દીર્ઘ જેવા થાય છે દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણના વિનાશથી જ
આયુની સફળતા છે

“અલ્પં ચ ક્ષલુ આયુષ્કમ્ इह एकेषां मानवानाम्”

અહીં “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति”

આ પ્રકારે અન્વય લગાડવો જોઈએ આયુની અલ્પતા ક્ષુલ્લક-બધારથી
નાના-સવની અપેક્ષાથી પ્રકટ કરેલ છે કારણકે મનુષ્ય અને તિર્યંચોના આયુ-
કર્મની સ્થિતિ શાસ્ત્રમા જે પ્રકારે વર્ણિત છે (૧) જઘન્ય અને (૨) ઉત્કૃષ્ટ.
જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિની વૃદ્ધિથી
લગાવી ત્રણ પલ્યની છે, આ યુગલિયાની અપેક્ષાથી છે. ભોગભૂમિમા જીવને
સંયમની પ્રાપ્તિ થવાનો અવસર નથી, માટે ત્રણ પલ્યની પરિમિત દીર્ઘ આયુ
પણ અલ્પ જેવી છે. અર્થાત્ તેથી જીવનો નિજ કોઈ પણ પરમાર્થ સધાતો
નથી, કેવળ ભોગાદિકોના ઉપભોગથી જ તે નિષ્ફળ થાય છે. સંયમારાધનથી જ

યદ્વા ત્રિપલ્યોપમપરિમિતમપ્યાયુરલ્પમેવ, યતોઽન્તર્મુહૂર્ત વિહાય શેપસર્વસ્યાપ્યા-
યુષોઽપવર્તનશીલત્વાત્, પ્રતિક્ષણમાયુષઃ ક્ષીયમાણત્વાચ્ચ । અપવર્તનં નામ દીર્ઘ-
સ્થિતિકાલિકકર્મપરમાણૂનપગમય્ય તેષાં હ્રસ્વસ્થિતિકાલિકતાસમ્પાદનમ્ । આયુશ્ચ
સોપક્રમ-નિરુપક્રમભેદેન દ્વિવિધમ્, ઉક્તશ્ચ ભગવતા ભગવત્યામ્—

“જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ? ગોયમા ! જીવા સોવક્ક-
માડયાવિ ણિરુવક્કમાડયાવિ ” ઇતિ (ભગવતી. શ. ૨૦ ડ. ૧૦)

છાયા —જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં સોપક્રમાયુષ્કા નિરુપક્રમાયુષ્કાઃ ? ગૌતમ !
જીવાઃ સોપક્રમાયુષ્કા અપિ નિરુપક્રમાયુષ્કા અપિ ॥ ઇતિ ॥

એક ક્ષણ તક કી સફલતા માની ગઈ છે । उसी प्रकार अन्तर्मुहूर्त्तसे
लगा कर देशोनपूर्वकोटि-देश उन एक करोड पूर्व-परिमित आयु
प्राप्त होने पर भी उसमें संयम कालका अभाव होने से वह भी अल्प ही है ।

अथवा—अन्तर्मुहूर्त्तकाल परिमित आयुको छोड़ कर शेष समस्त
आयु अपवर्त्तनशील-होने से और क्षण २ में आयुका क्षय होने से त्रिप-
ल्योपम परिमित-तीन पल्योपम का-आयु भी अल्प ही है ।

दीर्घकालिक आयुકર્મ કે પરમાણુઓં કો ચીંચ કર થોડી સ્થિતિ-
વાલે આયુકર્મ કે પરમાણુઓં મેં સ્થાપિત કરને કા નામ અપવર્તન છે ।

સોપક્રમ ઓર નિરુપક્રમ કે ભેદ સે આયુ દો પ્રકાર કા છે । મગ-
વતી સૂત્રમેં મગવાનને યહી વાત કહી છે—

“જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા?, ગોયમા !
જીવા સોવક્કમાડયા વિ ણિરુવક્કમાડયા વિ” ઇતિ । (મ. શ. ૨૦ ડ. ૧૦)

કાળની એક ક્ષણ સુધીની સફળતા મનાય છે, તે પ્રકાર અન્તર્મુહૂર્તથી લગાવી
દેશોનપૂર્વ કોટિ-દેશ ઉન એક કરોડ પૂર્વ-પરિમિત આયુ પ્રાપ્ત થવાથી પણ
તેમાં સંયમકાળનો અભાવ હોવાથી તે પણ અલ્પ છે, અથવા અન્તર્મુહૂર્તકાળપરિ-
મિત આયુને છોડીને શેષ સમસ્ત આયુ અપવર્તનશીલ હોવાથી અને ક્ષણક્ષણમાં
આયુનો ક્ષય હોવાથી ત્રિપલ્યોપમપરિમિત ત્રણ પલ્યોપમ આયુ પણ અલ્પ છે.

દીર્ઘકાલિક આયુકર્મના પરમાણુઓને જે ચીને થોડી સ્થિતિવાળા આયુકર્મના
પરમાણુઓમાં સ્થાપિત કરવાનું નામ અપવર્તન છે

સોપક્રમ અને નિરુપક્રમના ભેદથી આયુ બે પ્રકારની છે ભગવતી સૂત્રમાં
ભગવાને આ વાત કહી છે.—

“જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ?,
ગોયમા ! જીવા સોવક્કમાડયા વિ ણિરુવક્કમાડયા વિ”

ઇતિ (મ. શ. ૨૦ ડ. ૧૦).

સોપક્રમાયુર્નામ અપ્રાપ્તકાલસ્યાયુષો નિર્જરણમ્ । તદ્વિન્નં નિરુપક્રમાયુઃ । યદા
જીવઃ સ્વાયુષસ્તૃતીયભાગે તૃતીયભાગતૃતીયભાગે વા જઘન્યત એકેન દ્વાભ્યાં વોત્કૃષ્ટતઃ
સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરથવાઽન્તર્મુહૂર્ત્તપ્રમાણસ્વરુપેઽન્તકાલે સ્વાત્મપ્રદેશનાડિકાન્ત-
ર્વર્તિન આયુષ્કર્મવર્ગણાપુદ્ગલાન્પ્રયત્નવિશેષેનાયુષ્કતયા રચયતિ તદા નિરુપક્રમાયુ-
ર્ભવતિ, તદ્વિન્નં સોપક્રમાયુઃ । આકર્ષશ્ચ તથાવિધેન પ્રયત્નેન કર્મપુદ્ગલોપાદાનમ્ ।
નનુ કથમેકેન દ્વાભ્યાં ત્રિભિઃ સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરાયુર્વધ્નાતીતિ વેદાહ—

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ-આયુવાલે હોતે હૈં યા નિરુપક્રમ-આયુવાલે ?
હે ગૌતમ ! જીવ દોનોં પ્રકાર કે આયુવાલે હોતે હૈં સોપક્રમઆયુવાલે
મી હોતે હૈં ઓર નિરુપક્રમઆયુવાલે મી ।

જીવકો જિતના અપને ભવકે આયુકા બંધ હુઆ હૈં ઉતને કા ઉદ્યા-
નુસાર ભોગ હુએ વિના હી કિસી નિમિત્ત કે વશ પહિલે હી ક્ષય
હોનેકા નામ સોપક્રમ આયુ હૈં । હસસે વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ હૈં ।

જિસ સમય જીવ અપની આયુ કે તૃતીય ભાગમેં અથવા તૃતીય ભાગ
કે મી તૃતીય ભાગમેં કમસે કમ એક યા દો આકર્ષોં સે જ્યાદા સે
જ્યાદા સાત યા આઠ આકર્ષોંસે અથવા અન્તસમય કે અન્તર્મુહૂર્ત્ત-પ્રમાણ-
કાલમેં અપની આત્માકે પ્રદેશોં કી નાડિકા કે મીતર રહે હુએ આયુકર્મકી
વર્ગણા કે પુદ્ગલસ્કન્ધોંકો પ્રયત્નવિશેષ સે આયુપને પરિણમાતા હૈં ઉસ
સમય નિરુપક્રમ આયુ કા બન્ધ હોતા હૈં । હસસે વિપરીત સોપક્રમ આયુ
કા બન્ધ હોતા હૈં । ઉસ પ્રકાર કે પ્રયત્ન સે કર્મપુદ્ગલોં કા ગ્રહણ કરના
આકર્ષ હૈં ।

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ આયુવાળા હોય છે કે નિરુપક્રમ આયુવાળાં ?
હે ગૌતમ ! જીવ બન્ને પ્રકારની આયુવાળા થાય છે. સોપક્રમ આયુવાળા પણ
થાય છે અને નિરુપક્રમ આયુવાળાં પણ થાય છે.

જીવને જેટલો પોતાના ભવની આયુનો બંધ થયો છે તેટલાનો ઉદ્યાનુસાર
ભોગ થયા વગર કેઈ નિમિત્તથી પહેલાં જ ક્ષય હોવાનું નામ સોપક્રમ આયુ
છે, તેનાથી વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ છે. જે વખતે જીવ પોતાની આયુના તૃતીય
ભાગમાં અથવા તૃતીય ભાગના પણ તૃતીય ભાગમાં ઓછામાં ઓછાં એક અગર
બે આકર્ષોંથી વધારેમાં વધારે સાત અગર આઠ આકર્ષોંથી અથવા અન્ત સમયના
અન્તર્મુહૂર્ત્ત પ્રમાણ કાળમાં પોતાના આત્માના પ્રદેશોની નાડિની અંદર રહેલાં
આયુકર્મની વર્ગણાના પુદ્ગલસ્કન્ધોને પ્રયત્નવિશેષથી આયુપણે પરિણામે છે,
તે સમય નિરુપક્રમ આયુનો બંધ કરે છે તેનાથી વિપરીત સોપક્રમ આયુ બાધે
છે. આ પ્રકારના પ્રયત્નથી કર્મપુદ્ગલોનું ગ્રહણ કરવું આકર્ષ છે.

યદા જીવસ્ત્રીત્રેણાયુર્વન્ધાધ્યવસાયેન જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધાતિ તદૈકેનૈવાકર્ષેણ વન્ધાતિ । મન્દેન દ્વાભ્યામાકર્ષાભ્યાં, મન્દતરેણ ત્રિભિરાકર્ષૈઃ, મન્દતમેન ચાધ્યવસાયેન ચતુર્ભિઃ પશ્ચભિઃ પઙ્કભિઃ સપ્તભિસ્ત્ક્રુષ્ટેનાષ્ટાભિર્વાઽઽકર્ષૈર્જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધાતિ ।

એવં ગતિસ્થિત્યવગાહનાપ્રદેશાનુભાવનામનિધત્તાયુષ્કાણ્યપિ જીવો વન્ધાતિ । નિધત્તં હિ આયુષા સહ જાતિગત્યાદીનાં નિયમત્ત એકરૂપેણ વન્ધનમિતિ । ઉક્તશ્ચ—

‘ જીવા ણં મંતે ! જાહનામનિધત્તાઉયં કદ્દિં આગરિસેદ્દિં પકરંતિ ? ગોયમા ! જહન્નેણં એકકેણ દોદ્દિં વા તિદ્દિં વા ઉકોસેણં અદ્દિં ’ ઈતિ ॥

છાયા—જીવાઃ સ્વહુ મદન્ત ! જાતિનામનિધત્તાયુષ્કં કતિભિરાકર્ષૈઃ—પ્રકુર્વન્તિ ? ગૌતમ ! જઘન્યેન એકેન દ્વાભ્યાં વા ત્રિભિર્વા ઉત્કર્ષેણાષ્ટભિઃ । ઈતિ ।

શક્કા—યહ જીવ કૈસે એક આકર્ષસે અથવા દો આકર્ષોસે એવં ત્રીન અથવા સાત આઠ આકર્ષોસે આયુ વાંધતા હૈ ?

ઉત્તર—જિસ સમય જીવ આયુ વાંધને કે તીવ્ર અધ્યવસાય સે જાતિનામનિધત્ત આયુ કા વંધ કરતા હૈ ઉસ સમય એક આકર્ષ સે હી ઉસકા વન્ધ કરતા હૈ, મન્દ અધ્યવસાય સે દો આકર્ષો સે, મન્દતર અધ્યવસાય સે ત્રીન આકર્ષો સે, મન્દતમ અધ્યવસાય સે પાંચ છહ ઓર સાત ઓર ડ્યાદા સે ડ્યાદા આઠ આકર્ષો સે જાતિનામનિધત્ત આયુ કા વંધ કિયા કરતા હૈ । હસી તરહ સે ગતિ-સ્થિતિ-અવગાહના-પ્રદેશ-અનુભાવ-નામનિધત્ત આયુઓં કા મી યહ જીવ વન્ધ કરતા હૈ । આયુવંધ કે સાથ અન્ય જાતિ ગતિ આનુપૂર્વી આદિ કા નિયમ સે જો વંધ હોતા હૈ ઉસકા નામ નિધત્ત હૈ, કહા મી હૈ—

આ જીવ કેવી રીતે એક આકર્ષથી અથવા બે આકર્ષોથી તેમજ ત્રણ અથવા સાત આઠ આકર્ષોથી આયુ બાંધે છે ?

જે વખતે જીવ આયુ બાંધવાના તીવ્ર અધ્યવસાયથી જાતિનામનિધત્ત આયુનો બંધ કરે છે, તે વખતે એક આકર્ષથી જ તેનો બંધ કરે છે, મદ અધ્યવસાયથી બે આકર્ષોથી, મન્દતર અધ્યવસાયથી ત્રણ આકર્ષોથી, મન્દતમ અધ્યવસાયથી પાંચ, છ, સાત અને વધારેમા વધારે આઠ આકર્ષોથી જાતિનામનિધત્ત આયુનો બંધ કરે છે. આવી રીતે ગતિ-સ્થિતિ-અવગાહના-પ્રદેશ-અનુભાવ-નામનિધત્ત આયુઓનો પણ એ જીવ બંધ કરે છે આયુબંધની સાથ અન્ય જાતિ ગતિ આનુપૂર્વી આદિનો નિયમથી જે બંધ થાય છે તેનું નામ નિધત્ત છે. કહ્યું છે કે:—

सोपक्रमायुश्चोपक्रमकारणैर्दण्डकशाशस्त्ररज्जुवह्निजलपतनविषव्यालशीतोष्णारति-
भयक्षुत्पिपासाव्याधिमूत्रपुरीषनिरोधातिभोजनाजीर्णभोजनघर्षणश्वासप्रतिरोधनपीड-
नरूपैरकाले यस्यायुषो नाशस्तत् ।

उक्तञ्च—दण्ड—कस—सत्थ—रज्जू, अग्नी—उदग—पडणं विसं वाला ।

सी—उण्हं अरइ भयं, खुहा पियासा य वाही य ॥ १ ॥

मुत्तपुरीसनरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणं बहुसो ।

घंसण—घोलण—पीलण, आउस्स उवक्कमा एए ॥ २ ॥

छाया—दण्डः कशा शस्त्रं रज्जुरग्निरुदकं पतनं विषं व्यालाः ।

शीतमुष्णमरतिर्भयं क्षुत्पिपासा च व्याधिश्च ॥ १ ॥

मूत्रपुरीषनिरोधो जीर्णोऽजीर्णो च भोजनं बहुशः ।

घर्षणं घोलनं पीडनमायुष उपक्रमा एते ॥ २ ॥ इति ।

“जीवा णं भंते ! जाइनामनिघत्ताउयं कतिहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ।” इति ।

इस सूत्र का अर्थ पूर्वोक्तरूप से ही है ।

सोपक्रम आयु वह है जिसका—उपक्रम के कारणभूत दण्ड, चाबुक, शस्त्र, रज्जु, अग्नि, जल, विष, सर्प, शीत, उष्ण, अरति, भय, क्षुधा, तृष्णा, व्याधि, मूत्र-पुरीष-लघुनीत बडीनीत—का निरोध, अतिभोजन, अजीर्ण भोजन, डोरी आदि बांधकर घसीटना, श्वास का निरोध और यंत्र आदि में पीडना आदि से अकाल में ही अन्त हो जाय, कहा भी है—

“दंड-कस-सत्थ-रज्जू-अग्नी-उदग-पडणं-विसं-वाला ।

सी-उण्हं-अरइ-भयं, खुहा पिवासा य वाही य ॥ १ ॥

“जीवा णं भंते ! जाइनामनिघत्ताउयं कतिहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ।” इति ।

आ सूत्रनो अर्थ पूर्वोक्त ३५थी न छे.

सोपक्रम आयु ते छे जेना उपक्रमना कारणभूत दंड, चाबुक, शस्त्र, रज्जु, अग्नि, नल, विष, सर्प, शीत, उष्ण, अरति, भय, क्षुधा, तृषा, व्याधि, मूत्र-पुरीष,—लघुनीत—बडीनीत नो निरोध, अतिभोजन, अजीर्ण भोजन, डोरी आदि बांधीने घसीटवुं, श्वासनो निरोध अने यंत्र आदिथी पीडवुं, आदीथी अक्र-णमा न अत थाय. उहुं छे—

“दंड-कस-सत्थ-रज्जू, अग्नी उदग पडणं विसं वाला ।

सी-उण्हं अरइ भयं, खुहा पिवासा य वाही य ॥ १ ॥

एतेन संयमरहितमानवानां स्वल्पमेवायुस्तत्र शतशो विघ्नसमूहाः । तथा हि मनुजानामायुः प्रायशः शतवर्षपरिमितं भवति । तदर्द्धं रात्रिषु गतम्, अवशिष्टार्द्धं च बालत्वे वृद्धत्वे च न श्रुतचारित्रधर्माचरणकर्तृत्वं जीवस्य भवति । कियदवशिष्टमायुर्नानाविधरोगशोकवियोगादिभिरेवाक्रान्तं भवति, कस्मात्तर्हि सौख्यं प्राणिनां भवेत् ।

मुत्त-पुरीसनिरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणे बहुसो ।

घंसण घोलण पीलण, आउस्स उवक्कमा एण ॥ २ ॥

अर्थ पहले आचुका है ।

अतः संयमरहित जीवों का दीर्घकालिक आयु भी अल्प जैसा ही है, इसमें भी हजारों विघ्न आते रहते हैं । विचारिये तो—

इस पञ्चम काल में ज्यादा से ज्यादा सौ वर्ष का आयु है । इस सौ वर्ष के आयु का हिसाब लगाया जाय तो पता लगेगा कि आधा आयु तो सोते २ व्यतीत हो जाता है बाकी जो आधा बचता है उसमें बाल-अवस्था वृद्धावस्था आती है । इन अवस्थाओं में जीव किसी भी प्रकार से धर्मादिक शुभ कार्यों का आचरण नहीं कर सकता । अनेक प्रकार के रोग शोक और वियोगादिजन्य दुःख इसके अवशिष्ट जीवन को सदा त्रस्त किये रहते हैं । यौवन अवस्था में स्त्री का प्रेम इसे आराम नहीं लेने देता । इस पर यह छन्द है—

“ बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणीरत रह्यो ।

अर्धमृतक सम वृद्धापनो, कैसे रूप लखे अपनो ॥ १ ॥

मुत्त-पुरीस-निरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणे बहुसो ।

घंसण घोलण पीलण आउस्स उवक्कमा एण ॥ २ ॥

અર્થ પહેલા આવેલ છે.

માટે સંયમરહિત જીવોની દીર્ઘકાલિક આયુ પણ અલ્પ જોવી જ છે, તેમાં પણ હજારો વિઘ્નો આવે છે વિચારીએ તો આ પાંચમાં કાળમાં વધારેમાં વધારે સો વર્ષની આયુ છે આ સો વર્ષની આયુનો હિસાબ કરીએ તો માત્રમ પંદરે કે અડધી આયુ તો સુવામાં જ જાય છે બાકીની બે અડધી આયુ છે તેમાં બાલઅવસ્થા અને વૃદ્ધાવસ્થાનો સમાવેશ છે આ અવસ્થાઓમાં જીવ કોઈ પણ પ્રકારે ધર્માદિક શુભ કાર્યોનું આચરણ કરી શકતો નથી. અनेક પ્રકારના રોગ-શોક અને વિયોગાદિજન્ય દુઃખ તેના અવશિષ્ટ જીવનને સદા ત્રસ્ત કરતા રહે છે. યૌવન અવસ્થામાં સ્ત્રીનો પ્રેમ તેને આરામ લેવા દેતો નથી, આ ઉપર છંદ છે:—

एतादृशस्वल्पायुषः कृते च शिरसि परिभ्राम्यदनेकमहाविपत्तिकलापः संयो-
गाद्यर्थी विवेकविकलो मानवोऽनिशमितस्ततः परिभ्रमति । स्वल्पेनैव कालेनायुषः
क्षयोऽवश्यं भावीत्यहो मौढ्यं प्राणिनो यदर्थं सततं परितप्यमानो धावतीति भावः ।

यह हालत है इस जीव की; फिर कहो इसे सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? फिर भी इतनी छोटी सी आयु को लेकर यह अनेक प्रकार की शिर पर घूमनेवाली आपत्तिविपत्तियों का कुछ भी ख्याल न कर रात-दिन पर पदार्थों के अपनाने में ही मस्त हो रहा है, और अपने कर्तव्य का कुछ भी ख्याल कहीं कर रहा है । अन्त में आयु के समाप्ति होने पर मृत्युशय्या पर विलाप करते हुए इस जीव का कोई भी रक्षक नहीं होगा । वे सब कुटुम्बी-जिनके लिये यह रात-दिन परिश्रम करके अपने खून का पानी कर रहा था-इससे जुदे हो जावेंगे और इसे फाल्गुन मास की होली की तरह चिता में जला देंगे ।

इस प्रकार आयु की अल्पता को देखता हुआ यह जो नहीं चेत रहा है यही एक इसकी बड़ी भारी मूर्खता है । जो इससे जुदे हो जाने वाले हैं उन्हीं के लिये यह रात-दिन महा परिश्रम करने में लगा हुआ है । इसकी इस महा अज्ञानता पर ज्ञानियों को बड़ा भारी आश्चर्य होता है । यहां तक-“अप्यं खलु आउयं इहमेगेसिं माणवाणं” इस वाक्य का अर्थ हुआ है ।

“ वालपનમે જ્ઞાન ન લહ્યો, તરુણ સમય તરુણીરત રહ્યો ।

અર્ધમૃતકસમ વૃદ્ધાપનો, કૈસે રૂપ લલ્લે અપનો ॥ ૧ ॥

આવી હાલત છે આ જીવની હવે કહો તેને સુખ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થાય ? આટલી થોડી આયુ હોવા છતાં તે અનેક પ્રકારની શિર પર ઘૂમવાવાળી આપત્તિ વિપત્તિઓનો પણ જરા ખ્યાલ ન કરતાં રાત-દિન પર પદાર્થોને અપનાવવામાં જ મગ્ન રહે છે, અને પોતાના કર્તવ્યનો જરા પણ ખ્યાલ કરતો નથી અંતમાં આયુની સમાપ્તિ થવાથી મૃત્યુશય્યા પર વિલાપ કરે છે. આ જીવનો કોઈ પણ રક્ષક થશે નહિ. આ બધા કુટુંબીજનો માટે પોતાના લોહીનું પાણી કરતો હતો તેનાથી જુદો થઈ જશે અને તેને ફાગણ માસની હોળી માફક ચિતામાં સળગાવી દેશે.

આ પ્રકારે આયુની અલ્પતાને દેખીને પણ ચેતતો નથી, એજ એક, જીવની મૂર્ખતા છે. જેનાથી જુદું થવાનું છે તેવાઓના માટે રાત-દિન પરિશ્રમ ઉઠાવે છે. આ તેની અજ્ઞાનતા ઉપર જ્ઞાનીઓને મોટું આશ્ચર્ય થાય છે. અહીં સુધી-

“ અપ્યં खलु आउयं इहमेगेसिं माणवाणं ” આ વાક્યનો અર્થ થયો છે.

દण્ડકશાદિરૂપોપક્રમાભાવેऽપિ પુનસ્તે વાર્દ્ધકકાલવ્યાલકવલિતા માનવા મર-
ણાદપિ ગુરુતરાં દુર્દશામનુભવન્તિ । સકલાનિ ચેન્દ્રિયાણિ જરામિભૂતતયા શિથિ-
લતાં ગતાનિ, તરુણાયમાનયા ચ તૃષ્ણયા વ્યાકુલા મૂઢા ભવન્તીતિ દર્શયતિ—“તથ-
થે”-તિ । વાર્દ્ધક્યે સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં સ્વકાર્યકરણાક્ષમતા જાયતે તદા “શ્રોત્રપરિ-
જ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ” શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતાન્ પુદ્ગલાનિતિ શ્રોત્રમ્ । તત્ત્વ
દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધમ્ । તત્ર કદમ્બપુષ્પસદૃશં દ્રવ્યાત્મકં, ભાવરૂપં હિ ભાષાદ્રવ્ય-
ગ્રહણલઘ્યુપયોગસ્વભાવાત્મકમ્ ।

દણ્ડ કશા આદિરૂપ ઉપક્રમ કે અભાવ સે યદિ આયુ કી
પૂર્ણતા મી જીવ કો ગ્રાસ હુઈ તો યહ જીવ વૃદ્ધાવસ્થા મેં મરણાન્તિક
કષ્ટો કો ભોગતા હૈ, યહી વાત આગે કે વાક્યોં સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ ।

જવ યહ વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન હોતા હૈ ઉસ સમય ઇસકા શ્રોત્રેન્દ્રિય-
જન્ય જ્ઞાન બિલકુલ અલ્પ હો જાતા હૈ, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર ઇસકી
શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થા મેં કામ દેતી થી ઉસ પ્રકાર સે ઇસ અવસ્થા મેં
નહીં દેતી । ઇસ સમય જવકિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયાં શિથિલ હો જાતી હૈ તવ
એક चीज ઇસકી તરુણ હોતી રહતી હૈ વહ હૈ ઇસકી તૃષ્ણા—“તૃષ્ણા
ચ તરુણાયતે” ।

“શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્” ભાષાવર્ગણા
કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલોં કો જો સુનતા હૈ ઉસકા નામ શ્રોત્ર હૈ । વહ
શ્રોત્ર દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ । જિસકા આકાર
કદમ્બ પુષ્પ કે સમાન હૈ વહ દ્રવ્ય શ્રોત્ર હૈ, જિસકે દ્વારા ભાષાવર્ગણા

દંડ કશા આદિ રૂપ ઉપક્રમના અભાવથી કદાચ આયુની પૂર્ણતા પણ
જીવની પુરી થઈ તો આ જીવ વૃદ્ધાવસ્થામાં મરણાન્તિક કષ્ટોને ભોગવે છે આ
વાત આગળના વાક્યોથી સ્પષ્ટ છે.

ત્યારે તે વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેનું શ્રોત્રેન્દ્રિયજ્ઞાન બિલકુલ
અલ્પ થઈ જાય છે અર્થાત્ જે પ્રકારે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થામાં કામ દેતી હતી
તે પ્રકારે વૃદ્ધાવસ્થામાં દેતી નથી. આ સમયે દરેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થઈ જાય
છે ત્યારે એક જ ચીજ તેની તરુણ રહે છે, તે ફક્ત તૃષ્ણા. “તૃષ્ણા ચ તરુણાયતે” ।

“શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્” ।

ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલોને જે સુણે છે (સંભળે છે)
તેનું નામ શ્રોત્ર છે. તે શ્રોત્ર દ્રવ્ય અને ભાવથી જે પ્રકારે છે. જેનો આકાર
કદમ્બપુષ્પ સમાન છે, તે દ્રવ્ય શ્રોત્ર છે. જે દ્વારા ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં

પરિ=સર્વતો ઘટપટાદિશબ્દવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ=પરિજ્ઞાનાનિ શ્રોત્રેણ પરિ-જ્ઞાનાનિ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનિ, તૈઃ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ, વાર્ધ્વક્યેન પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાણૈ-રેકદાત્મનો મૂઢતાં જનયતિ, इत्युत्तरेण सम्बन्धः । वार्ध्वक्ये च श्रोत्रेन्द्रियस्य शिथिलतामुपगतस्य क्षीयमाणस्वशक्तिकस्य शब्दादिविषयग्रहणे चाक्षमता संजायते, येन च बधिरो भवति, घटं टमिव शृणोति न शृणोति वेति तात्पर्यम् । एवं रोगेणापि श्रोत्रपरिज्ञानानि क्षीयमाणानि भवन्तीति बोध्यम् । एवं सर्वत्र योज्यम् ।

કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલસ્કન્ધોં કા ગ્રહણ ક્રિયા જાતા હૈ વહ ભાવશ્રોત્ર હૈ । ઇસકે ખીં દો ભેદ હૈ—(૧) લબ્ધિ, ઓર (૨) ઉપયોગ । ભાષા કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલસ્કન્ધોં કો જાનનેરૂપ જો ક્ષયોપશમ હૈ ઉસકા નામ લબ્ધિ હૈ, અર્થાત્ શબ્દોં કે જાનને કી શક્તિ કા નામ લબ્ધિ હૈ, ઓર ઉન શબ્દોં કે જાનનેરૂપ આત્મા કા જો વ્યાપાર-પ્રયત્નવિશેષ હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । પરિજ્ઞાન શબ્દ કા અર્થ હૈ—સર્વ પ્રકાર સે અથવા સબ તરફ સે ઘટ પટ આદિ શબ્દોં કા વિષય કરને વાલા જ્ઞાન । વૃદ્ધાવસ્થા મેં શ્રોત્રજન્ય જ્ઞાન ક્ષીણપ્રાય હો જાતા હૈ—કોઈ કહતા કુછ હૈ વૃદ્ધ સુનતા કુછ હૈ, અતઃ ઇસ અવસ્થા મેં ઇસ પ્રકાર કી હાલત આત્મા મેં મૂઢતા કો ઉત્પન્ન કરતી હૈ । “ એકદા આત્મનો મૂઢતાં જનયતિ ” ઇસ ઉત્તર પદકા સમ્બન્ધ પ્રત્યેક કે સાથ લગા લેના ચાહિયે, અર્થાત્—“ વાર્ધ્વક્યે પરિહીય-માનૈઃ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ અભિક્રાન્તં વયઃ સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ, પરિહીય-માનૈઃ ચક્ષુર્જ્ઞાનૈઃ અભિક્રાન્તં વયઃ સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ, ” ઇત્યાદિ ।

પરિણત પુદ્ગલ સ્કન્ધોને ગ્રહણ કરે છે તે ભાવશ્રોત્ર છે. તેના પણ બે ભેદ છે—(૧) લબ્ધિ, અને (૨) ઉપયોગ ભાષાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલસ્કન્ધોના બાણુવારૂપ ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લબ્ધિ છે, અર્થાત્ શબ્દોની શક્તિનું બાણુનું તેનું નામ લબ્ધિ, અને તે શબ્દોને બાણુવારૂપ આત્માનો જે વ્યાપાર-યત્નવિશેષ છે તેનું નામ ઉપયોગ પરિજ્ઞાન શબ્દનો અર્થ, સર્વ પ્રકારથી અથવા સર્વ તરફથી ઘટ પટ આદિ શબ્દોનો વિષય કરવાવાળું જ્ઞાન. વૃદ્ધાવસ્થામાં શ્રોત્રજન્ય જ્ઞાન ક્ષીણપ્રાય થાય છે. કોઈ કહે છે કાંઈ અને વૃદ્ધ બાણુસ સાંભળે છે બીજું, તેથી આ અવસ્થામાં આ પ્રકારની હાલત આત્મામાં મૂઢતાને ઉત્પન્ન કરે છે.

“ એકદા આત્મનો મૂઢતાં જનયતિ ” આ ઉત્તરપદનો સંબંધ પ્રત્યેકની સાથે લગાડવો બેઈએ, અર્થાત્ “ વાર્ધ્વક્યે પરિહીયમાનૈઃ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ અભિક્રાન્તં વયઃ સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ, પરિહીયમાનૈઃ ચક્ષુર્જ્ઞાનૈઃ અભિક્રાન્તં વયઃ સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ ” ઇત્યાદિ,

ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનૈઃ-ચક્ષુષા મસૂરસંસ્થાનેન પરિજ્ઞાનાનિ-શુક્લનીલાદિરૂપવિષયકાણિ ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિદીયમાનૈઃ=નચ્યમાનૈઃ । ઘ્રાણપરિજ્ઞાનૈઃ-ઘ્રાણેત

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થા મેં બહિરા હો જાતા હૈ, ક્યોંકિ ઉસ સમય ઇસકી શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ જિસસે અપને વિષય કો સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતી, અર્થાત્ ઇસ સમય પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિકવિષયોં કો ગ્રહણ કરને મેં ક્ષીણશક્તિ-(નાકાવિલ) હો જાતી હૈ, અતઃ વહુ ઉન્હેં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હોતી હૈ, ઇસીકારણ સે બહિરા વ્યક્તિ ઘટ (ઘડા) શબ્દ કહે જાને પર ઉસે પટ (વસ્ત્ર) શબ્દ જૈસા સુનતા હૈ, અથવા ધીરે ચોલને પર નહીં 'મી સુનતા હૈ । જિસ પ્રકાર વૃદ્ધાવસ્થા કે કારણ સબ ઇન્દ્રિયોં શિથિલ હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર રોગાદિક કારણોં સે મી ઉનમેં શિથિલતા આજાતી હૈ, યદ સ્વયં સમજ્ઞ લેના ચાહિયે, ઔર ઇસકા સમ્બન્ધ મી પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી પરિહીનતા કે સાથ જોડ લેના ચાહિયે । અર્થાત્-જિસ પ્રકાર શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં સ્વવિષયગ્રહણરૂપ વ્યાપાર કે પ્રતિ પરિહીનતા કા કારણ રોગાદિક સે ઉત્પન્ન શિથિલતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય મેં મી અપને-અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને રૂપ વ્યાપાર કી પરિહીનતા મેં રોગાદિક કારણ હૈ ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કા આકાર મસૂર કી દાલ કે તુલ્ય હૈ, ઇસકા વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ હૈ, ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થામાં બહેરો થાય છે, કારણકે તે વળતે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, જે પોતાના વિષયને સ્પષ્ટ રૂપથી નથી જાણતી, અર્થાત્ આ વખતે દરેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિક વિષયને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિહીન થાય છે અને તેને ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે આ કારણે બહેરો માણસ ધડાને વસ્ત્ર શબ્દના રૂપમાં સાંભળે છે અને હળવેથી બોલવા આવે તો સાંભળતો નથી. જેમ વૃદ્ધાવસ્થાના કારણે સ્પષ્ટ ઇન્દ્રિયો શિથિલ બને છે તે પ્રકારે રોગાદિક કારણોથી પણ તેમાં શિથિલતા આવે છે તે પોતાની મેળે જાણવું નેઈએ, અને તેનો સબંધ પણ દરેક ઇન્દ્રિયની પરિહીનતા સાથે જોડવો નેઈએ, અર્થાત્ જેમ શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં સ્વવિષય ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપાર પ્રતિ પરિહીનતાનું કારણ રોગાદિકથી ઉત્પન્ન થતી શિથિલતા છે તેમ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપારની પરિહીનતામાં રોગાદિક કારણ છે.

ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો છે. તેનો વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ છે. આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિય ન્યારે

અતિમુક્તકકુસુમાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-ગન્ધવિષયકાણિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=પરિત્યજ્યમાનૈઃ। રસનપરિજ્ઞાનૈઃ-રસનેન ક્ષુરપ્રાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-મધુરતિક્તાદિરસવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાનૈઃ। સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ-સ્પર્શન-સ્પર્શનેન્દ્રિયેણ નાનાવિધાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-શીતોષ્ણસ્પર્શાદિવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=વિલીયમાનૈઃ। इति सकलानामपीन्द्रियाणां वार्द्धक्येन रोगोदयेन च स्वस्वविषयग्राहकशक्तयः परिक्षीणा भवन्तीति भावः। अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य स एकदा मूढभावं जनयतीत्युत्तरेणान्वयः। श्रोत्रचक्षुर्ग्राणरसनस्पर्शनाना-

ચક્ષુઃ-ઇન્દ્રિય જબ શુક્લ-નીલાદિરૂપ અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે રિક્ત હો જાતી હૈ; ગ્રાણ-ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ કે સમાન હૈ, વહ જબ હસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે અપને ગન્ધગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે શૂન્ય હો જાતી હૈ, રસના-ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર સ્વરૂપાં કે સદૃશ હૈ, ઓર જો મધુર, તિક્ત આદિ રસોં કો વિષય કરતી હૈ વહ બી જબ હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિ કારણોં સે અપને વિષયકો ગ્રહણ કરનેવાલે જ્ઞાનમેં અસમર્થ હો જાતી હૈ; સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર નિયત નહીં હૈ કિન્તુ અનેક પ્રકારકે આકાર કો ધારણ કરનેવાલી હૈ, ઓર જિસકા વિષય આઠ પ્રકાર કા શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ હૈ વહ જબ હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિક કારણોંસે શિથિલ હો જાતી હૈ તબ હસ આત્મામેં મૂઢતા ઉત્પન્ન હોતી હૈં યહ અનુભવસિદ્ધ વાત હૈ। મૂઢતા ઉત્પન્ન હોનેકા કારણ યહી હૈ કિ હસ હાલતમેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય અપને ૨ વિષયકો ગ્રહણ કરને કે બોધસે વિકલ હો જાતી

શુક્લ-નીલાદિ રૂપ પોતાના વિષયને મહણના જ્ઞાનથી રિક્ત થાય છે, ગ્રાણ-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ સમાન છે. તે ન્યારે આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાને ગન્ધ મહણ કરવાના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે, રસના-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર તાવેથા જેવો છે અને જે મધુર, તિક્ત આદિ રસોનો વિષય કરે છે તે પણ આવી અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાના વિષયને મહણ કરવાના જ્ઞાનમાં અસમર્થ થાય છે, સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર નિયત નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના આકારને ધારણ કરે છે અને જેના વિષય આઠ પ્રકારના શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ છે તે પણ આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી શિથિલ થાય છે ત્યારે આત્મામાં મૂઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે અનુભવસિદ્ધ વાત છે. મૂઢતા ઉત્પન્ન રવાનું કારણ એ છે કે આવી હાલતમાં ઢરેક બધી

ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનૈઃ-ચક્ષુષા મસૂરસંસ્થાનેન પરિજ્ઞાનાનિ-શુક્લનીલાદિરૂપવિષયકાણિ ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=નગ્યમાનૈઃ । પ્રાણપરિજ્ઞાનૈઃ-પ્રાણેન

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થા મેં બહિરા હો જાતા હૈ, ક્યોંકિ ઉસ સમય ઇસકી શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ જિસસે અપને વિષય કો સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતી, અર્થાત્ ઇસ સમય પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિકવિષયોં કો ગ્રહણ કરને મેં ક્ષીણશક્તિ-(નાકાવિલ) હો જાતી હૈ, અનઃ વહ ઉન્હેં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હોતી હૈ, ઇસીકારણ સે બહિરા વ્યક્તિ ઘટ (ઘડા) શબ્દ કહે જાને પર ઉસે પટ (વસ્ત્ર) શબ્દ જૈસા સુનતા હૈ, અથવા ધીરે વોલને પર નહીં ભી સુનતા હૈ । જિસ પ્રકાર વૃદ્ધાવસ્થા કે કારણ સવ ઇન્દ્રિયાં શિથિલ હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર રોગાદિક કારણોં સે ભી ઉનમેં શિથિલતા આજાતી હૈ, યહ સ્વયં સમજ લેના ચાહિયે, ઔર ઇસકા સમ્બન્ધ ભી પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી પરિહીનતા કે સાથ જોડ લેના ચાહિયે । અર્થાત્-જિસ પ્રકાર શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં સ્વવિષયગ્રહણરૂપ વ્યાપાર કે પ્રતિ પરિહીનતા કા કારણ રોગાદિક સે ઉત્પન્ન શિથિલતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય મેં ભી અપને-અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને રૂપ વ્યાપાર કી પરિહીનતા મેં રોગાદિક કારણ હૈ ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કા આકાર મસૂર કી દાલ કે તુલ્ય હૈ, ઇસકા વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ હૈ, ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થામા બહેરો થાય છે, કારણકે તે વખતે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, જે પોતાના વિષયને સ્પષ્ટ રૂપથી નથી જાણતી, અર્થાત્ આ વખતે દરેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિક વિષયને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિહીન થાય છે અને તેને ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે. આ કારણે બહેરો પ્રાણુસ ધડાને વસ્ત્ર શબ્દના રૂપમાં સાંભળે છે અને હળવેથી બોલવા આવે તો સાંભળતો નથી જેમ વૃદ્ધાવસ્થાના કારણે સઘળી ઇન્દ્રિયો શિથિલ બને છે તે પ્રકારે રોગાદિક કારણોથી પણ તેમાં શિથિલતા આવે છે તે પોતાની મેળે જાણવું બેઠાયે, અને તેનો સંબંધ પણ દરેક ઇન્દ્રિયની પરિહીનતા સાથે જોડવો બેઠાયે, અર્થાત્ જેમ શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં સ્વવિષય ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપાર પ્રતિ પરિહીનતાનું કારણ રોગાદિકથી ઉત્પન્ન થતી શિથિલતા છે તેમ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનાં વિષયને ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપારની પરિહીનતામાં રોગાદિક કારણ છે.

ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો છે તેનો વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ છે આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિય ન્યારે

અતિમુક્તકકુંસુમાંકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-ગન્ધવિષયકાણિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=પરિત્ય-
જ્યમાનૈઃ। રસનપરિજ્ઞાનૈઃ-રસનેન ક્ષુરપ્રાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-મધુરતિક્તાદિરસવિષય-
કાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાણૈઃ। સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ-સ્પર્શન-સ્પર્શન-
ન્દ્રિયેણ નાનાવિધાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-શીતોષ્ણસ્પર્શાદિવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ,
પરિહીયમાનૈઃ=વિલીયમાનૈઃ। ઇતિ સકલાનામપીન્દ્રિયાણાં વાર્દ્ધક્યેન રોગોદયેન ચ
સ્વસ્વવિષયગ્રાહકશક્તયઃ પરિક્ષીણા ભવન્તીતિ ભાવઃ। અભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ
સમ્પ્રેક્ષ્યં સ એકદા મૃદુભાવં જનયતીત્યુત્તરેણાન્વયઃ। શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણરસનસ્પર્શનાના-

ચક્ષુઃન્દ્રિય જ્ય શુક્લ-નીલાદિરૂપ અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન
સેં રિક્ત હો જાતી હૈ; ગ્રાણ-ન્દ્રિય-જિસકા આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ
કે સમાન હૈ, વહ જ્ય હસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે
અપને ગન્ધગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે શૂન્ય હો જાતી હૈ, રસના-ન્દ્રિય-
જિસકા આકાર સુરપાં કેં સદૃશ હૈ, ઓર જો મધુર, તિક્ત આદિ રસોં
કો વિષય કરતી હૈ વહ ભી જ્ય હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિ કારણોં
સે અપને વિષયકો ગ્રહણ કરનેવાલે જ્ઞાનમેં અસમર્થ હો જાતી હૈ; સ્પર્શન-
ન્દ્રિય-જિસકા આકાર નિયત નહીં હૈ કિન્તુ અનેક પ્રકારકે આકાર કો
ધારણ કરનેવાલી હૈ, ઓર જિસકા વિષય આઠ પ્રકાર કા શીત-ઉષ્ણ
આદિ સ્પર્શ હૈ વહ જ્ય હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિક કારણોંસે શિથિલ
હો જાતી હૈ ત્ય હસ આત્મામેં મૃદતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ યહ અનુભવસિદ્ધ
વાત હૈ। મૃદતા ઉત્પન્ન હોનેકા કારણ યહી હૈ કિ હસ હાલતમેં પ્રત્યેક
ન્દ્રિય અપને ૨ વિષયકો ગ્રહણ કરને કે બોધસે વિકલ હો જાતી

શુક્લ-નીલાદિ રૂપ પોતાના વિષયને ગ્રહણના જ્ઞાનથી રિક્ત થાય છે, ગ્રાણ-
ન્દ્રિય જેનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ સમાન છે. તે ત્યારે આ અવસ્થામાં
અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાને ગન્ધ ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે,
રસના-ન્દ્રિય જેનો આકાર તાવેથા જેવો છે અને જે મધુર, તિક્ત આદિ રસોનો
વિષય કરે છે તે પણ આવી અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાના વિષયને
ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનમાં અસમર્થ થાય છે, સ્પર્શન-ન્દ્રિય જેનો આકાર નિયત
નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના આકારને ધારણ કરે છે અને જેના વિષય આઠ
પ્રકારના શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ છે તે પણ આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક
કારણોથી શિથિલ થાય છે ત્યારે આત્મામાં મૃદતા ઉત્પન્ન થાય છે તે અનુભવસિદ્ધ
વાત છે. મૃદતા ઉત્પન્ન રવાનું કારણ એ છે કે આવી હાલતમાં દરેક બધી

ચિત્ત્વ હસ્તમિત્યાદ્યનેકપ્રકારા । આભ્યન્તરા તુ નિર્વૃત્તિઃ સર્વેષાં સમાના ભવતિ । ચતુર્ણામેવેન્દ્રિયાણાં વાહ્યાભ્યન્તરભેદો ભવતિ, ન સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્યેતિ વોદ્યમ્ । ઉપ-
ક્રિયત ઇત્યુપકરણમ્, ઉપકરણેન્દ્રિયશ્ચ સ્વહ્ગસ્થાનીયવાહ્યનિર્વૃત્તેઃ સ્વહ્ગધારાસદૃશ-
સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપાઽભ્યન્તરનિર્વૃત્તેશ્ચ શક્તિવિશેષઃ । અનુપઘાતાનુગ્રહાભ્યાં નિર્વૃત્તી-
ન્દ્રિયસ્યોપકારિત્વેનોપકરણમ્ । તદપિ વાહ્યાભ્યન્તરનિર્વૃત્ત્યુપકારકત્વેન દ્વિવિધમ્ ।
નિર્વૃત્ત્યુપકરણરૂપમ્ભયમેતત્પુદ્ગલપરિણામાત્મકમપિ સદિન્દ્રિયશબ્દવ્યવહારં લભતે ।

और किसीकी छोटी । आभ्यन्तर निर्वृत्ति समस्त इन्द्रियों की एकसी होती है । निर्वृत्ति-इन्द्रिय के जो बाह्य और आभ्यन्तर भेद किये हैं वे स्पर्शन-इन्द्रिय को छोड़ कर शेष चार इन्द्रियों के ही हैं, ऐसा समझ लेना चाहिये ।

द्रव्येन्द्रिय का जो दूसरा भेद उपकरण है उसका अर्थ 'निर्वृत्ति का जो उपकार करे' यह है । यह स्वङ्ग-तलवार-स्थानीय बाह्यनिर्वृत्ति तथा उसकी धारास्थानीय स्वच्छतरपुद्गलसमूहरूप आभ्यन्तर निर्वृत्ति की एक विशेष शक्ति है-जो अनुपघात और अनुग्रह से निर्वृत्ति-इन्द्रिय की उपकारिका मानी गई है ।

यह उपकरण द्रव्येन्द्रिय भी आभ्यन्तर और बाह्य निर्वृत्ति का उप-कारक होने की वजहसे दो प्रकार की है-(१) आभ्यन्तर-उपकरण और (२) बाह्य-उपकरण । आभ्यन्तर निर्वृत्ति का जो उपकार करे वह आभ्यन्तर-उपकरण और बाह्य निर्वृत्तिका जो उपकार करे वह बाह्य-उप-करण है । निर्वृत्तिरूप और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय यद्यपि पुद्गलपरिणामा-

નિર્વૃત્તિ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની એક સરખી છે નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયના જે બાહ્ય અને આભ્યન્તર ભેદ છે તે સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને છોડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોના છે તેમ સમજવાનું છે

દ્રવ્યેન્દ્રિયનો બીજો ભેદ ઉપકરણ છે, એનો અર્થ 'નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે' એ છે આ તલવારસ્થાનીય બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો તથા તેની ધારાસ્થાનીય સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિની એક વિશેષ શક્તિ છે જે અનુપઘાત અને અનુગ્રહથી નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયની ઉપકારિકા મानी છે.

આ ઉપકરણ દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ આભ્યન્તર અને બાહ્ય નિર્વૃત્તિનું ઉપકારક હોવાથી બે પ્રકારનું છે (૧) આભ્યન્તર ઉપકરણ, અને બાહ્ય ઉપકરણ, આભ્ય તર નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે આભ્યન્તર ઉપકરણ છે અને બાહ્યનિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે બાહ્ય ઉપકરણ છે. નિર્વૃત્તિ રૂપ અને ઉપકરણ રૂપ દ્રવ્યેન્દ્રિય

તત્ત્વ ભાવેન્દ્રિયસહયોગં પ્રાપ્ત્યૈવાત્મનઃ સાહાય્યં કરોતિ પ્રસ્થક્રાપ્તવત્ 'પાયલીકાઠ' ઇતિ ભાષા । આત્મપરિણતિરૂપં ભાવેન્દ્રિયમપિ લબ્ધ્યુપયોગભેદાદ્વિવિધમ્, તત્ર તત્ત-
દિન્દ્રિયાવારકર્મણાં ક્ષયોપશમો લબ્ધિઃ । ઇન્દ્રિયાણાં સ્વસ્થવિષયેષુ પરિચ્છેદ્યવ્યા-
પાર ઉપયોગઃ । અત્ર લબ્ધૌ વર્તમાનાયાં સત્યાં નિર્વૃત્યુપકરણોપયોગાનાં ત્રયાણામપ્ય-
પેક્ષા । નિર્વૃત્તૌ વર્તમાનાયાં સત્યામુપકરણોપયોગયોરપેક્ષા । સત્યુપકરણે ચોપયો-
ત્મક હૈ તો મી ઉસકા જો ઇન્દ્રિય શબ્દસે વ્યવહાર કિયા ગયા હૈ ઉસકા
મતલબ યહી હૈ કિ યહ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાનમેં સહાયક હૈ, ક્યોંકિ
વિના દ્રવ્યેન્દ્રિય કે આત્મા કો પદાર્થજ્ઞાન નહીં હો સકતા । યહી કારણ
હૈ કિ વિગ્રહગતિ મેં ભાવેન્દ્રિયકે હોને પર મી દ્રવ્યેન્દ્રિય કે અભાવમેં
જીવકો બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન નહીં હોતા । દ્રવ્યેન્દ્રિય યદપિ આત્માકો પદા-
ર્થજ્ઞાન કરાનેમેં સહાયક હૈ તો મી વહ ભાવેન્દ્રિય કે સહયોગ કે વિના
આત્માકો પદાર્થબોધમેં સહાયક નહીં હો સકતા ।

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય મી લબ્ધિ ઓર ઉપયોગકે ભેદ સે
દો પ્રકાર કી હૈ । ડન-ડન ઇન્દ્રિયોં કો આવરણ કરનેવાલે કર્મોંકા
જો ક્ષયોપશમ હૈ ઉસકા નામ લબ્ધિ હૈ । ઇવં ઇન્દ્રિયોંકા અપને ૨ વિષયોં
કે જાનને રૂપ જો વ્યાપાર હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । આત્મામેં લબ્ધિ-
જાનને કી યોગ્યતા-હોનેપર મી ઉસે નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ ઇવં ઉપયોગ કી
અપેક્ષા રહતી હૈ । લબ્ધિ કે હોતે હુપ મી ઇનકે વિના આત્માકો પદાર્થ-

યદપિ પુદ્ગલપરિણામાત્મક છે તો પણ તેનો જે ઇન્દ્રિય શબ્દથી વ્યવહાર કરેલ
છે તેનું કારણ એ છે કે તે આત્માને પદાર્થજ્ઞાનમાં સહાયક છે, કારણકે દ્રવ્ય
ઇન્દ્રિય વિના આત્માને પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી, એજ કારણ છે કે વિગ્રહગતિમાં
ભાવેન્દ્રિય થવાથી પણ દ્રવ્યેન્દ્રિય ના અભાવમાં જીવને બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી.
દ્રવ્યેન્દ્રિય યદાપિ આત્માને પદાર્થજ્ઞાન કરાવવામાં સહાયક છે, તો પણ તે
ભાવેન્દ્રિયના સહયોગ વિના પદાર્થબોધમાં આત્માનો સહાયક થઈ શકતો નથી.

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય પણ લબ્ધિ અને ઉપયોગના ભેદથી બે
પ્રકારે છે તે તે ઇન્દ્રિયોના આવરણ કરનાર કર્મોના જે ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ
લબ્ધિ છે. ઇન્દ્રિયોના ચોત-ચોતાના વિષયોને જાણવા રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું
નામ ઉપયોગ છે.

આત્મામાં લબ્ધિ-જાણવાની યોગ્યતા-હોવા છતાં તેને નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ,
અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે લબ્ધિના હોવા છતાં પણ તેના વિના આત્માને પદાર્થ-

ચિત્ત્વ હ્રસ્વમિત્યાદ્યનેકપ્રકારા । આભ્યન્તરા તુ નિર્વૃત્તિઃ સર્વેષાં સમાના ભવતિ । ચતુર્ણામેવેન્દ્રિયાણાં બાહ્યાભ્યન્તરભેદો ભવતિ, ન સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્યેતિ વોદ્યમ્ । ઉપક્રિયત ઇત્યુપકરણમ્, ઉપકરણેન્દ્રિયઞ્ચ સ્વહૃગ્સ્થાનીયબાહ્યનિર્વૃત્તેઃ સ્વહૃગ્ધારાસંદેશ-સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપાઽભ્યન્તરનિર્વૃત્તેશ્ચ શક્તિવિશેષઃ । અનુપઘાતાનુગ્રહાભ્યાં નિર્વૃત્તી-ન્દ્રિયસ્યોપકારિત્વેનોપકરણમ્ । તદપિ બાહ્યાભ્યન્તરનિર્વૃત્ત્યુપકારકત્વેન દ્વિવિધમ્ । નિર્વૃત્ત્યુપકરણરૂપમુભયમેતત્પુદ્ગલપરિણામાત્મકમપિ સદિન્દ્રિયશબ્દવ્યવહારં લભતે ।

और किसीकी छोटी । आभ्यन्तर निर्वृत्ति समस्त इन्द्रियों की एकसी होती हैं । निर्वृत्ति-इन्द्रिय के जो बाह्य और आभ्यन्तर भेद किये हैं वे स्पर्शन-इन्द्रिय को छोड़ कर शेष चार इन्द्रियों के ही हैं, ऐसा समझ लेना चाहिये ।

द्रव्येन्द्रिय का जो दूसरा भेद उपकरण है उसका अर्थ ‘निर्वृत्ति का जो उपकार करे’ यह है । यह स्वङ्ग-तलवार-स्थानीय बाह्यनिर्वृत्ति तथा उसकी धारास्थानीय स्वच्छतरपुद्गलसमूहरूप आभ्यन्तर निर्वृत्ति की एक विशेष शक्ति है-जो अनुपघात और अनुग्रह से निर्वृत्ति-इन्द्रिय की उपकारिका मानी गई है ।

यह उपकरण द्रव्येन्द्रिय भी आभ्यन्तर और बाह्य निर्वृत्ति का उप-कारक होने की वजहसे दो प्रकार की है-(१) आभ्यन्तर-उपकरण और (२) बाह्य-उपकरण । आभ्यन्तर निर्वृत्ति का जो उपकार करे वह आभ्यन्तर-उपकरण और बाह्य निर्वृत्तिका जो उपकार करे वह बाह्य-उप-करण है । निर्वृत्तिरूप और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय यद्यपि पुद्गलपरिणामा-

નિર્વૃત્તિ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની એક સરખી છે. નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયના જે બાહ્ય અને આભ્યન્તર ભેદ છે તે સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને છોડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોના છે તેમ સમજવાનું છે.

દ્રવ્યેન્દ્રિયનો બીજો ભેદ ઉપકરણ છે, એનો અર્થ ‘નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે’ એ છે આ તલવારસ્થાનીય બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો તથા તેની ધારાસ્થાનીય સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિની એક વિશેષ શક્તિ છે જે અનુપઘાત અને અનુગ્રહથી નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયની ઉપકારિકા માની છે.

આ ઉપકરણ દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ આભ્યન્તર અને બાહ્ય નિર્વૃત્તિનું ઉપકારક હોવાથી બે પ્રકારનું છે (૧) આભ્યન્તર ઉપકરણ, અને બાહ્ય ઉપકરણ, આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે આભ્યન્તર ઉપકરણ છે અને બાહ્યનિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે બાહ્ય ઉપકરણ છે. નિર્વૃત્તિ રૂપ અને ઉપકરણ રૂપ દ્રવ્યેન્દ્રિય

તત્ત્વ ભાવેન્દ્રિયસહયોગં પ્રાપ્યૈવાત્મનઃ સાહાય્યં કરોતિ પ્રસ્થકાષ્ટવત્ 'પાયલીકાઠ' ઇતિ ભાષા । આત્મપરિણતિરૂપં ભાવેન્દ્રિયમપિ લબ્ધ્યુપયોગભેદાદ્વિવિધમ્, તત્ર તત્ત-દિન્દ્રિયાવારકકર્મણાં ક્ષયોપશમો લબ્ધિઃ । ઇન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વવિષયેષુ પરિચ્છેદ્યવ્યા-પાર ઉપયોગઃ । અત્ર લબ્ધૌ વર્તમાનાયાં સત્યાં નિર્વૃત્ત્યુપકરણોપયોગાનાં ત્રયાણામપ્ય-પેક્ષા । નિર્વૃત્તૌ વર્તમાનાયાં સત્યામુપકરણોપયોગયોરપેક્ષા । સત્યુપકરણે ચોપયો-

ત્મક હૈ તો भी उसका जो इन्द्रिय शब्दसे व्यवहार किया गया है उसका मतलब यही है कि यह आत्माको पदार्थज्ञानमें सहायक है, क्योंकि बिना द्रव्येन्द्रिय के आत्मा को पदार्थज्ञान नहीं हो सकता । यही कारण है कि विग्रहगति में भावेन्द्रियके होने पर भी द्रव्येन्द्रिय के अभावमें जीवको ब्राह्म पदार्थज्ञान नहीं होता । द्रव्येन्द्रिय यद्यपि आत्माको पदार्थज्ञान करानेमें सहायक है तो भी वह भावेन्द्रिय के सहयोग के बिना आत्माको पदार्थबोधमें सहायक नहीं हो सकता ।

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય भी लब्धि और उपयोगके भेद से दो प्रकार की है । उन-उन इन्द्रियों को आवरण करनेवाले कर्मोंका जो क्षयोपशम है उसका नाम लब्धि है । एवं इन्द्रियोंका अपने २ विषयों के जानने रूप जो व्यापार है उसका नाम उपयोग है । आत्मामें लब्धि-जानने की योग्यता-होनेपर भी उसे निर्वृत्ति, उपकरण एवं उपयोग की अपेक्षा रहती है । लब्धि के होते हुए भी इनके बिना आत्माको पदार्थ-

યધપિ પુદ્ગલપરિણામાત્મક છે તો પણ તેનો જે ઇન્દ્રિય શબ્દથી વ્યવહાર કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે તે આત્માને પદાર્થજ્ઞાનમાં સહાયક છે, કારણકે દ્રવ્ય ઇન્દ્રિય વિના આત્માને પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી, એજ કારણ છે કે વિગ્રહગતિમાં ભાવેન્દ્રિય થવાથી પણ દ્રવ્યેન્દ્રિય ના અભાવમાં જીવને બ્રાહ્મ પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી. દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યાપિ આત્માને પદાર્થજ્ઞાન કરાવવામાં સહાયક છે, તો પણ તે ભાવેન્દ્રિયના સહયોગ વિના પદાર્થબોધમાં આત્માનો સહાયક થઈ શકતો નથી.

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય પણ લબ્ધિ અને ઉપયોગના ભેદથી બે પ્રકારે છે તે તે ઇન્દ્રિયોના આવરણ કરનાર કર્મોના જે ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લબ્ધિ છે. ઇન્દ્રિયોના પોત-પોતાના વિષયોને જાણવા રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું નામ ઉપયોગ છે.

આત્મામાં લબ્ધિ-જાણવાની યોગ્યતા-હોવા છતાં તેને નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ, અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે. લબ્ધિના હોવા છતાં પણ તેના વિના આત્માને પદાર્થ-

ગસ્યાપેક્ષેતિ વિજ્ઞેયમ્ । અત્રાયં વિશેષઃ—શ્રોત્રં દ્વાદશયોજનાગતં શબ્દં ગૃહ્ણતિ, ચક્ષુરપિ સાતિરેકૈકવિંશતિલક્ષયોજનસ્થિતં રૂપં ગૃહ્ણતિ, અન્યાનિ ત્રીણીન્દ્રિયાણિ નવયોજનાગતસ્વરત્રવિષયગ્રાહકાણિ ભવન્તિ । જઘન્યતસ્તુ ચક્ષુરઙ્ગુલસંખ્યેયમાગમિતદેશવર્તિરૂપં ગૃહ્ણતિ । અન્યાનિ ચત્વારીન્દ્રિયાણિ ચાઙ્ગુલાસંખ્યેયમાગમિતદેશસ્થિતં સ્વસ્વવિષયં ગૃહ્ણન્તીતિ ભાવઃ । તત્ર શ્રોત્રાદીનાં ચતુર્ણાં પ્રાપ્ત્યકારિત્વં, શબ્દાદિપુદ્ગલાનાં કર્ણાદિસંયોગેનૈવ નિર્ણયાત્ । ચક્ષુપશ્ચાપ્રાપ્ત્યકારિત્વં રૂપસ્ય સંયોગં વિના દૂરત એવ નિશ્ચયાદિતિ વિશેષઃ ।

બોધ નહીં હોતા હૈ । ઈસી પ્રકાર નિર્વૃત્તિ કે હોને પર મી ઉસે ઉપકરણ ઓર ઉપયોગકી અપેક્ષા રહા કરતી હૈ, ઓર ઉપકરણ કે સદ્ભાવમેં ઉપયોગ કી । શ્રોત્ર-ઇન્દ્રિય ચારહ યોજન સે આયે હુએ શબ્દ કો ગ્રહણ કરતી હૈ । ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કુછ અધિક ૨૧ ઇક્કીસ લાખ યોજન સ્થિત રૂપ કો જાનતી હૈ । બાકી કી ત્રીન ઇન્દ્રિયાં નવ યોજન સે આયે હુએ અપને ૨ વિષય કો ગ્રહણ કરનેવાલી હોતી હૈ । યહ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોં કા વિષય વતલાયા હૈ । જઘન્ય કી અપેક્ષા ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અઙ્ગુલ કે સંખ્યાતવેં ભાગમેં સ્થિત રૂપકો ગ્રહણ કરતી હૈ । બાકી કી ચાર ઇન્દ્રિયાં અઙ્ગુલકે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ દેશમેં રહે હુએ અપને ૨ વિષય કો જાનનેવાલી હૈ ।

સ્પર્શન, રસન, ઘ્રાણ ઓર શ્રોત્ર, યે ચાર ઇન્દ્રિયાં અપને ૨ પૌદ્ગલિક વિષયોં કો છ (સ્પર્શ) કર હી જાનતી હૈ ઇસ લિયે યે પ્રાપ્ત્યકારી હૈ ।

બોધ થતો નથી, એ પ્રકારે નિર્વૃત્તિ થવા છતાં પણ તેને ઉપકરણ અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે, અને ઉપકરણના સદ્ભાવમાં ઉપયોગની રહે છે

શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય બાર યોજનથી આવેલા શબ્દને ંગુલ કરે છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય કાંઈકે અધિક એકવીસ લાખ યોજનથી રૂપ જાણે છે બાકીની ત્રણ ઇન્દ્રિયો નવ યોજનથી આવેલાં પોત-પોતાનાં વિષયને ંગુલ કરી શકે છે. આ ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોનો વિષય બતાવ્યો છે જઘન્યની અપેક્ષા ચક્ષુઇન્દ્રિય અંગુળના સંખ્યાતમાં ભાગમાં સ્થિત રૂપને ંગુલ કરે છે બાકીની ચાર ઇન્દ્રિયો અંગુળના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ દેશમાં રહેલાં પોત-પોતાનાં વિષયને જાણે છે.

સ્પર્શન, રસન, ઘ્રાણ અને શ્રોત્ર, આ ચાર ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાનાં પૌદ્ગલિક વિષયોનો સ્પર્શ કરી જાણે છે માટે એ પ્રાપ્ત્યકારી છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય પોતાના વિષયને સ્પર્શ કર્યા વિના જાણી લે છે માટે તે અપ્રાપ્ત્યકારી છે, અર્થાત્ આ

નન્વિન્દ્રિયાણ્યેવ વસ્તુ નિર્ણેતું પ્રભવન્તુ કિમધિકેનાતિરિક્તાત્મસ્વીકારેણેતિ
ચેન્ન, તત્તદિન્દ્રિયનાશેડપિ તત્તદિન્દ્રિયપૂર્વાનુભૂતાર્થસ્મરણસ્યાન્યથાનુપપત્ત્યાડતિરિ-
ક્તસ્યાત્મનોડ્વશ્યં સિદ્ધેઃ । આત્મનો વિજ્ઞાનોત્પત્તૌ શ્રોત્રાદીનિ પ્રકૃષ્ટોપકારકાણિ
ભવન્તિ, તેન કરણરૂપકારકતયા તૃતીયા વિમક્તિઃ સિદ્ધચતિ, તતોડનેન શ્રોત્રેણ મયા
શબ્દઃ શ્રુતઃ, અનેન ચ મન્દતરઃ શબ્દઃ શ્રુતઃ, ઇત્યાદયઃ પ્રયોગાઃ સઙ્ગચ્છન્તે ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અપને વિષય કો વિના હુણ (સ્પર્શ કિયે) હી જાન લેતી હૈ
અતઃ વહ અપ્રાપ્યકારી હૈ, અર્થાત્ યહ ઇન્દ્રિય અપને સાથ અપને વિષય
કા સંયોગ હુણ વિના દૂરસે હી અપને રૂપ-વિષય કા પ્રકાશક હૈ ।

શઙ્કા-ઇન્દ્રિયોં કો હી અપને ૨ વિષયરૂપ જ્ઞેય કા નિર્ણય કરનેવાલી
માનલેની યાહિયે, ડનસે અતિરિક્ત આત્માકે માનનેકી કયા આવશ્યતા હૈ ? ।

ઉત્તર-યહ વાત કહના ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ-જવ ઇન્દ્રિયાં નષ્ટ
હો જાતી હૈ તવ ડનકે દ્વારા પૂર્વાનુભૂત પદાર્થકા સ્મરણ હોતા હૈ । યદિ
ઇન્દ્રિયાં હી પદાર્થ કી જ્ઞાતા માની જાયેં તો ફિર જો ડનકે વિનાશ હોને
પર અનુભૂત પદાર્થ કી સ્મૃતિ હોતી હૈ વહ નહીં હોની યાહિયે અતઃ અન્ય-
થાનુપપત્તિ (જિસકે નહીં હોને પર નહીં હોના) રૂપ અનુમાન સે ઇન્દ્રિ-
યોંકે અતિરિક્ત આત્માકે અસ્તિત્વકી સિદ્ધિ હોતી હૈ ।

શઙ્કા-યદિ ઇન્દ્રિયોં સે ભિન્ન આત્માકે અસ્તિત્વ કી સ્વીકૃતિ માની
જાવેગી તો ફિર “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” ઇત્યાદિ જો વ્યવહાર
હોતા હૈ વહ નહીં હોના યાહિયે ।

ઇન્દ્રિય પોતાની સાથે પોતાના વિષયનો સંયોગ થયા વિના દૂરથી જ પોતાના
રૂપ વિષયનો પ્રકાશક છે.

શંકા-ઇન્દ્રિયોનેજ પોત-પોતાના વિષયરૂપ જ્ઞેયનો નિર્ણય કરનાર માનવી
જેઇએ એથી અતિરિક્ત આત્માને માનવાની શું આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર-આમ કહેવું વ્યાજબી નથી. કારણકે જ્યારે ઇન્દ્રિયો નષ્ટ થાય છે
ત્યારે તેના દ્વારા પૂર્વાનુભૂત પદાર્થનું સ્મરણ થાય છે. કદાચ ઇન્દ્રિયોનેજ પદાર્થની
જ્ઞાતા માનવામાં આવે તો પછી જે તેના વિનાશ પછી અનુભૂત પદાર્થની સ્મૃતિ
થાય છે તે થવી જોઇએ નહિ માટે અન્યથાનુપપત્તિ (જેના નહિ હોવાથી નથી થતું)
રૂપ અનુમાનથી ઇન્દ્રિયોથી અતિરિક્ત આત્માના અસ્તિત્વની સિદ્ધિ થાય છે.

શંકા-કદાચ ઇન્દ્રિયોથી ભિન્ન આત્માના અસ્તિત્વની સ્વીકૃતિ માનવામાં આવે
તો પછી “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” ઇત્યાદિ જે વ્યવહાર થાય
છે તે થવો જોઇએ નહિ

નન્વેવં કરણત્વાદિન્દ્રિયસ્વીકારે તુ વાકપાણિપાદપાયૂપસ્થાનામપિ કરણ-
ત્વાદિન્દ્રિયત્વમન્યત્ર સ્વીકૃતમિદાપિ કુતો નાભિહિતમિતિ ચેન્ન, આત્મનો વિજ્ઞાનો-
ત્પત્તૌ તેષાં પ્રકૃષ્ટોપકારકત્વાભવાદિન્દ્રિયત્વસ્યાસિદ્ધેઃ, સામાન્યતઃ કરણત્વાદિન્દ્રિ-
યત્વસ્વીકારે તુ સ્વસ્વવ્યાપારવત ઉદરાદેરપિ કરણત્વાદિન્દ્રિયત્વાપત્તેશ્ચ ।

ઉત્તર—શઙ્કા ઠીક છે પરંતુ વિચારને પર સ્વતઃ હી હસ શઙ્કાકા
સમાધાન હો જાતા છે, ક્યોંકિ ઇન્દ્રિયાં આત્માકે જ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ મેં
પ્રકૃષ્ટ સાધક હેં હસ કારણ વહા પર “ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે”
ઇત્યાદિ મેં કરણ રૂપ કારક પને તૃતીયા વિભક્તિ કા પ્રયોગ હોતા છે ।
જમી યે આત્માકે વિજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિમેં પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક હેં તમી તો
'મૈને હસ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયસે મન્દ શબ્દ સુના ઓર હસ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયસે
મન્દતર શબ્દ સુના-ઇત્યાદિ પ્રયોગ ઠીક વેઠ જાતે હેં ।

શઙ્કા—આત્માકે વિજ્ઞાન રૂપ કાર્યકી ઉત્પત્તિ મેં અત્યન્ત સાધક
હોનેસે સ્પર્શનાદિકોં કો યદિ આપ ઇન્દ્રિય રૂપસે સ્વીકાર કરતે હેં તો
ફિર વાક્, પાણિ, પાદ, પાયુ (ગુદા), ઓર ઉપસ્થ (જનનેન્દ્રિય), હન
કો મી ઇન્દ્રિયરૂપસે આપકો સ્વીકાર કરના ચાહિયે, ક્યોંકિ યે મી
આત્માકે અપને ૨ અનુરૂપ કાર્યમેં પ્રકૃષ્ટ સાધક હોતે હેં હસીલિયે
સાંખ્ય સિદ્ધાન્તમેં ઇન્હેં ઇન્દ્રિયરૂપસે સ્વીકાર કિયા છે ફિર આપને ઇન્હેં
ઇન્દ્રિયરૂપસે યહાં પર ક્યોં સ્વીકાર નહીં કિયા ? ।

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે, પરંતુ વિચારવાથી આપમેળે જ તે શકાનુ સમાધાન થાય
છે કારણકે ઇન્દ્રિયો આત્માને જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં પ્રકૃષ્ટ સાધકો છે. આ
કારણે ત્યાં “ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે” ઇત્યાદિકારણત્વ રૂપ કારકપણે
ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ થાય છે, માટે બ્યારે આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં
પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક છે તેથી જ મેં આ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દ શબ્દ સાંભળ્યો અને
આ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દતર શબ્દ સાંભળ્યો ઇત્યાદિ પ્રયોગ ઠીક બેસે છે.

શંકા—આત્માના વિજ્ઞાન રૂપ કાર્યની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત સાધકાહોવાથી સ્પર્શ-
નાદિકોને કદાચ આપ ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર કરો છો તો પછી વાક્, પાણિ,
પાદ, પાયુ (ગુદા) અને જનનેન્દ્રિય આ સઘણાંને ઇન્દ્રિય રૂપે આપે
સ્વીકારવાં બેઠાં એ કારણકે આ બધા આત્માને પોત-પોતાના અનુરૂપ કાર્યથી
પ્રકૃષ્ટ સાધક થાય છે માટે સાંખ્ય સિદ્ધાન્તમાં તેઓને ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર્યા
છે તો પછી આપે ઇન્દ્રિય રૂપે આ ઠેકાણે કેમ સ્વીકાર ન કર્યો ?

ननु श्रोत्रेणैव रूपादीनामपि कथं न प्रत्यक्षमिति चेन्न, इन्द्रियाणां भिन्न-भिन्न-विषयकत्वेन तत्तदिन्द्रियेण स्वस्वविषयकातिरिक्तज्ञानासम्भवात् ।

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है, यहां पर तो आत्माके लिये जो विज्ञानकी उत्पत्तिमें अत्यन्त उपकारक हैं वे इन्द्रियाँ हैं और वे स्पर्शन आदि हैं, वाक् पाणि वगैरह सांख्यादि सिद्धान्तकी मानी हुई इन्द्रियाँ आत्माको विज्ञानकी उत्पत्तिमें श्रोत्र आदि की तरह प्रकृष्ट उपकारक नहीं हैं अतः उन वाक् आदि में इन्द्रियत्वका व्यपदेश ही सिद्ध नहीं होता। सामान्य रीतिसे जो यह बात मान ली जावे कि—जो करण होते हैं वे इन्द्रियाँ होती हैं अतःकरण होनेसे वाक् पाणि वगैरहमें भी इन्द्रियत्व स्वीकार करलेना चाहिये, तो फिर इस प्रकारसे आत्माके लिये अपने २ व्यापारमें निरत उदरादिक—पेट वगैरह—को भी करण होने से इन्द्रिय मानना पड़ेगा, तब इन्द्रियों की जो सांख्यादि सिद्धान्तकारोंने ११ ग्यारह संख्या नियत की है वह सिद्ध नहीं होगी, इससे भी अधिक इन्द्रियाँ इस प्रकार सिद्ध होती हैं ।

शङ्का—श्रोत्र इन्द्रियसे ही रूपादिक अन्य इन्द्रियों के विषयों का प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता ?

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं, कारण कि प्रत्येक इन्द्रिय का अपना

उत्तर—आम કહેવું ઠીક નથી. અહીંતો આત્માને જે વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત ઉપકારક છે તે ઇન્દ્રિયો છે અને તે સ્પર્શનઆદિ છે. વાક્ (વાણી) પાણિ (હાથ), વિગેરે સાંખ્યાદિ સિદ્ધાંતની માનેલી ઇન્દ્રિયો આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં શ્રોત્ર આદિની માફક પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક નથી માટે તે વાક્ આદિમાં ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ જ સિદ્ધ થતો નથી. સામાન્ય રીતિથી જે આ વાત માની લેવા આવે કે જે કરણ થાય છે તે ઇન્દ્રિયો હોય છે માટે કરણ થવાથી વાક્, પાણિ વિગેરેમાં પણ ઇન્દ્રિયત્વનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ તો પછી આ પ્રકારે આત્માને માટે પોત-પોતાના વ્યાપારમાં સામાન્ય રુપે કરણ થવાવાળાં ઉદરાદિક—પેટ વિગેરેનું પણ ઇન્દ્રિયપણું માનવું પડે ત્યારે ઇન્દ્રિયોની જે સાંખ્ય સિદ્ધાન્તકારોએ અગીયાર સંખ્યા નક્કી કરેલ છે તે સિદ્ધ થતી નથી, તેથી પણ અધિક ઇન્દ્રિયો આવી રીતે સિદ્ધ થાય છે.

શંકા—શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી જ રૂપાદિક અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયોની પ્રત્યક્ષ કેમ થતાં નથી ?

ઉત્તર—આમ કહેવું ઠીક નથી. કારણકે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોત-પોતાનો વિષય

નન્વેવં તર્હિ રસપ્રતીતિકાલે શીતોષ્ણકર્કશકઠોરાદિસ્પર્શજ્ઞાનમપિ કથં ભવ-
તીતિ ચેદાહ—સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્ય સર્વવ્યાપિત્વેન રસનેન્દ્રિયપ્રદેશેઽપિ તસ્ય સત્ત્વેન
રસપ્રતીતિકાલેઽપિ સ્પર્શજ્ઞાનસ્ય સુલભત્વાત્ ।

નનુ શ્રોત્રાદિવન્મનસઃ કુતો નેન્દ્રિયત્વમિતિ ચેદાહ—

વિષય નિયત હૈ અતઃ વહ દૂસરે વિષયકી ગ્રાહક નહીં હો સક્તી ।
શાસ્ત્રકાર ભી તો યહી કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિયાં ભિન્નઃ વિષયવાલી હૈં ઇસ
લિયે વે અપનેઃ વિષયકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંકે વિષયકી બોધક
નહીં હોતી હૈં ।

શઙ્કા—યદિ યહી બાત સ્વીકાર કી જાવે તો ફિર રસના ઇન્દ્રિય સે
રસકે જ્ઞાનકે સમયમેં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠોરાદિક સ્પર્શકા જો જ્ઞાન
હોતા હૈ વહ કૈસે હોગા ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વ વ્યાપક હૈ ઇસલિયે રસના ઇન્દ્રિયકે
પ્રદેશમેં ભી ઉસકી સત્તા હોને સે રસ પ્રતીતિકે સમયમેં ભી સ્પર્શકે
જ્ઞાનકી સુલભતા હોતી હૈ ।

શઙ્કા—જિસ પ્રકાર શ્રોત્રાદિકોં મેં ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ હોતા હૈ
ઉસી પ્રકાર મનમેં ભી ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ ક્યોં નહીં હોતા હૈ ? ।

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયાં અપનેઃ વિષયકો ગ્રહણ કરનેમેં જિસ
પ્રકાર સ્વતન્ત્ર હૈં ઉસ પ્રકાર મન નહીં હૈ, ક્યોંકિ વહ ઉન ઇન્દ્રિયોંકા

નિયત છે તેથી તે બીજા વિષયની આડક યનતી નથી. શાસ્ત્રકાર
પણ એમ કહે છે કે ઇન્દ્રિયો ભિન્ન ભિન્ન વિષયવાળી છે માટે તેઓ
પોત-પોતાના વિષય સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયની બોધક થતી નથી.

શંકા—માનો, આ વાત સ્વીકારવામાં આવે તો પછી રસના ઇન્દ્રિયથી રસના
જ્ઞાનનાં સમયમાં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠણાદિક સ્પર્શનું જે જ્ઞાન થાય
છે તે કેમ થાય છે ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વવ્યાપક છે, માટે રસના ઇન્દ્રિયના પ્રદેશમાં પણ
તેની સત્તા હોવાથી રસપ્રતીતિના સમયમાં પણ સ્પર્શના જ્ઞાનની
સુલભતા થાય છે

શંકા—જે પ્રકારે શ્રોત્રાદિકોમાં ઇન્દ્રિયના વ્યપદેશ થાય છે તેમ મનમાં પણ
ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ કેમ થતો નથી ?

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયો ગ્રહણ કરવામાં જે પ્રકારે
સ્વતંત્ર છે તે પ્રકારે મન નથી. કારણકે તે તે ઇન્દ્રિયોનું ઉપકારક માત્ર

શ્રોત્રાદીનિ ચ શબ્દાદિવિષયગ્રહણે સ્વતન્ત્રાણિ સન્તિ, મનસ્તુ તેપામુપકારિ-
માત્રં, સ્વતન્ત્રતયા તસ્ય પદાર્થનિર્ણાયકત્વામાવાત્ । યતસ્તત્તદિન્દ્રિયનિર્ણીતપદાર્થ
એવ તસ્ય પ્રવૃત્તિર્ભવતિ નાતસ્તસ્યેન્દ્રિયત્વં ભવિતુમર્હતિ । એકસિંશ્ચ સમય એકેને-
ન્દ્રિયેજૈક એવોપયોગો ભવતિ, એકસમયે ઉપયોગદ્વયાસમ્ભવાત્ ।

નન્વેવં તર્હિં પર્યટ (‘પાપડ’ ઇતિ માપાપસિદ્ધપદાર્થ) મક્ષણકાલે પञ્ચભિ-
રિન્દ્રિયૈઃ સર્વં જ્ઞાનં ભવતિ યથા—શ્રોત્રેણ શબ્દં શૃણોતિ, ચક્ષુષા રૂપં પશ્યતિ, ગ્રાણેન
ઉપકારક માત્ર હૈ । યહ વિના ઇન્દ્રિયોંસે જાને પદાર્થ કા સ્વતન્ત્ર રૂપસે
નિર્ણાયક નહીં હોતા હૈ, ક્યોંકિ ભિન્ન ભિન્ન ઇન્દ્રિયોં સે નિર્ણીત પદાર્થ
મેં હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ઇસલિયે ઉસમેં સ્વતન્ત્ર રૂપસે ઇન્દ્રિયપના
નહીં હૈ । એક સમય મેં એક ઇન્દ્રિયસે એક હી ઉપયોગ હોતા હૈ—એક
સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે ।

શઙ્કા—યદિ એક સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે હૈં તો ફિર જિસ
સમય પાપડ ખાયા જાતા હૈં ઉસ સમય જો પञ્ચેન્દ્રિય—જન્ય ઉસકા
જ્ઞાન હોતા હૈં વહ નહીં હોના ચાહિયે ?, દેઘિયે—ખાતે સમય પાપડકી
ચર—ચર આવાજ હોતી હૈં અતઃ ઇસ શબ્દ કા શ્રોત્રેન્દ્રિયસે પ્રત્યક્ષ હોતા
હૈં, ઉસ સમય ચક્ષુ—ઇન્દ્રિય ઉસકે રૂપકી બોધિકા હોતી હૈં । ગ્રાણ—ઇન્દ્રિય
ઉસકે ગન્ધકી, રસના—ઇન્દ્રિય ઉસકે રસકી ઓર સ્પર્શન—ઇન્દ્રિય ઉસકે
કર્કશ કઠોર આદિ સ્પર્શ કો બોધિકા હોતી હૈં । યે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયસે એક
હી સમયમેં ઉસર વિષયકે ભિન્નર બોધ હોતે હૈં, સો ક્યોં હોતે હૈં ? ।

છે, તે ઇન્દ્રિયોથી જાણ્યા વગર પદાર્થનો સ્વતંત્ર રૂપે નિર્ણાયક થતું
નથી, કારણકે જુદી જુદી ઇન્દ્રિયોથી નિર્ણીત પદાર્થમાં જ તેની પ્રવૃત્તિ
છે માટે તેમાં સ્વતંત્ર રૂપે ઇન્દ્રિયપણું નથી. એક સમયમાં એક ઇન્દ્રિયથી
એક જ ઉપયોગ થાય છે. એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી.

શંકા—કહાય એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી તો પછી જે વખતે પાપડ
ખાવામાં આવે છે તે સમયે જે પચેન્દ્રિયજન્ય તેનું જ્ઞાન છે તે ન હોવું
જોઈએ ? દેખો, ખાતી વખતે પાપડનો ચર—ચર અવાજ થાય છે અને
તે શબ્દ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી પ્રત્યક્ષ છે તે વખતે ચક્ષુઇન્દ્રિય તેના રૂપની બોધક
થાય છે, ગ્રાણુઇન્દ્રિય તેના ગંધની, રસના ઇન્દ્રિય તેના રસની, અને સ્પર્શન
ઇન્દ્રિય તેના કર્કશ કઠણ આદિ સ્પર્શની બોધક થાય છે તે પ્રત્યેક
ઇન્દ્રિયથી એક જ સમયમાં તે તે વિષયનો ભિન્ન ભિન્ન બોધ થાય છે તો
શા માટે થાય છે ?

નન્વેવં તર્હિ રસપ્રતીતિકાલે શીતોષ્ણકર્કશકઠોરાદિસ્પર્શજ્ઞાનમપિ કથં ભવતીતિ ચેદાહ—સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્ય સર્વવ્યાપિત્વેન રસનેન્દ્રિયપ્રદેશેઽપિ તસ્ય સત્ત્વેન રસપ્રતીતિકાલેઽપિ સ્પર્શજ્ઞાનસ્ય સુલભત્વાત્ ।

નનુ શ્રોત્રાદિવન્મનસઃ કુતો નેન્દ્રિયત્વમિતિ ચેદાહ—

વિષય નિયત હૈ અતઃ વહ દૂસરે વિષયકી ગ્રાહક નહીં હો સકતી । શાસ્ત્રકાર મી તો યહી કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિયાં ભિન્નર વિષયવાલી હૈં ઇસ લિયે વે અપનેર વિષયકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંકે વિષયકી બોધક નહીં હોતી હૈં ।

શઙ્કા—યદિ યહી વાત સ્વીકાર કી જાવે તો ફિર રસના ઇન્દ્રિય સે રસકે જ્ઞાનકે સમયમેં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠોરાદિક સ્પર્શકા જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ કૈસે હોગા ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વ વ્યાપક હૈ ઇસલિયે રસના ઇન્દ્રિયકે પ્રદેશમેં મી ડસકી સત્તા હોને સે રસ પ્રતીતિકે સમયમેં મી સ્પર્શકે જ્ઞાનકી સુલભતા હોતી હૈ ।

શઙ્કા—જિસ પ્રકાર શ્રોત્રાદિકોં મેં ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ હોતા હૈ ડસી પ્રકાર મનમેં મી ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ કયોં નહીં હોતા હૈ ? ।

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયોં અપનેર વિષયકો ગ્રહણ કરનેમેં જિસ પ્રકાર સ્વતન્ત્ર હૈં ડસ પ્રકાર મન નહીં હૈ, કયોંકિ વહ ડન ઇન્દ્રિયોંકા

નિયત છે તેથી તે બીજા વિષયની આહુક બનતી નથી. શાસ્ત્રકાર પણ એમ કહે છે કે ઇન્દ્રિયો ભિન્ન ભિન્ન વિષયવાળી છે માટે તેઓ પોત-પોતાના વિષય સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયની બોધક થતી નથી.

શકા—માનો, આ વાત સ્વીકારવામાં આવે તો પછી રસના ઇન્દ્રિયથી રસના જ્ઞાનનાં સમયમાં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠણાદિક સ્પર્શનું જે જ્ઞાન થાય છે તે કેમ થાય છે ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વવ્યાપક છે, માટે રસના ઇન્દ્રિયના પ્રદેશમાં પણ તેની સત્તા હોવાથી રસપ્રતીતિના સમયમાં પણ સ્પર્શના જ્ઞાનની સુલભતા થાય છે.

શકા—જે પ્રકારે શ્રોત્રાદિકોમાં ઇન્દ્રિયના વ્યપદેશ થાય છે તેમ મનમાં પણ ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ કેમ થતો નથી ?

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયો ગ્રહણ કરવામાં જે પ્રકારે સ્વતન્ત્ર છે તે પ્રકારે મન નથી. કારણકે તે તે ઇન્દ્રિયોનું ઉપકારક માત્ર

શંકા—કહાય એક સમયમા જે ઉપયોગ થતા નથી તો પછી જે વખતે પાપડ ખાવામા આવે છે તે સમયે જે પંચેન્દ્રિયજન્ય તેનું જ્ઞાન છે તે ન હોવું જોઈએ ? દેખો, ખાતી વખતે પાપડનો ચર-ચર અવાજ થાય છે અને તે શબ્દ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી પ્રત્યક્ષ છે તે વખતે ચક્ષુષ્ઠેન્દ્રિય તેના રૂપની ઓધક થાય છે, ઘ્રાણુષ્ઠેન્દ્રિય તેના ગંધની, રસના ઇન્દ્રિય તેના રસની, અને સ્પર્શન ઇન્દ્રિય તેના કર્કશ કઠણ આદિ સ્પર્શની ઓધક થાય છે તે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયથી એક જ સમયમા તે તે વિષયનો ભિન્ન ભિન્ન ઓધ થાય છે તો શા માટે થાય છે ?

ગન્ધં જિગ્રતિ, રસનેન રસમાસ્વાદયતિ, સ્પર્શનેન કર્કશકઠોરાદિકં સ્પૃશતિ, इति કથમેકસ્મિન્ સમયે શબ્દાદિવિષયકજ્ઞાનં સંજાયતે ? इति चेन्न, સમયભેદેऽપિ કમલપત્રશતવેધનવત્સૂક્ષ્મતયા તસ્ય જ્ઞાતુમશક્યત્વાત્ ।

एष चापयोगक्रमः—आत्मा मनसा युज्यते, मनश्चेन्द्रियेण, इन्द्रियाणि च विषयसंयुक्तानि भूत्वा तत्तद्विषयग्राहकाणि भवन्ति, अतो मनसोऽन्तःकरणत्वं सर्वानुगामित्वञ्चोपपद्यते ॥

उत्तर—इन पांच इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानोंमें भी समयका भेद अवश्य है परन्तु यह समयका भेद अति सूक्ष्म होनेसे जाना नहीं जाता है । जिस प्रकार कमलके सैंकड़ों पत्ते तीर के ऊपर रखकर वेधने से वे 'एक साथ ही विंध गये' ऐसा बोध होता है परन्तु वे एक साथ नहीं विंधे, एक साथ विंधनेका उनमें भ्रम ही होता है, क्रम-क्रमसे ही वे विंधते हैं परन्तु उनके विंधनेका समय अति सूक्ष्म होनेसे उसमें क्रमिकताका बोध नहीं होता । उपयोगका क्रम इस प्रकार है—आत्मा मनसे संबंधित होता है, मन इन्द्रियों से, इन्द्रियाँ पदार्थोंसे संबंधित होकर अपने-विषयकी ग्राहक होती हैं; इसीलिये मनका, 'अन्तःकरण' यह संज्ञा सार्थक है, क्योंकि यह अन्तरङ्ग करण है और इन्द्रियाँ बहिरंग करण हैं । प्रत्येक इन्द्रियके साथ इसका क्रमर से ही गमनरूप सम्बन्ध है इसलिये यह सर्वानुगामी है ।

ઉત્તર:—આ પાંચ ઇન્દ્રિયોથી થવાવાળાં જ્ઞાનમા પણ સમયનો લેહ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી જાણી શકાતો નથી. જેમ કમલના સેંકડો પત્તા વિંધવાથી તે 'એક સાથ જ વિંધાઈ ગયા' એવો બોધ થાય છે, પરંતુ તેઓ એકી સાથ વિંધાએલ નથી, એકી સાથ વિંધાવાનો તેમાં ખાલી ભ્રમજ છે. ક્રમ ક્રમથી જ તે વિંધાય છે, પરંતુ તેના વિંધાવાનો સમય અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમાં ક્રમિકતાનો બોધ થતો નથી ઉપયોગનો ક્રમ આ પ્રકારે:— છે. આત્મા મનથી સંબંધિત છે, મન ઇન્દ્રિયોથી ઇન્દ્રિયો પદાર્થોથી સંબંધિત થઈ પોત-પોતાના વિષયની ગ્રાહક થાય છે માટે મનની 'અંતઃકરણ' એ સંજ્ઞા સાર્થક છે, કારણકે તે અન્તરંગ કરણ છે અને ઇન્દ્રિયો બહિરંગ કરણ છે. પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની સાથ તેનો ક્રમ-ક્રમથી જ ગમન રૂપ સંબંધ છે માટે તે સર્વાનુગામી છે.

इन्द्रियविषयको विचारो गतः, साम्प्रतं प्रकृतार्थमनुसरामः । वृद्धावस्थायां रोगोदये च सर्वेषामिन्द्रियाणां स्वस्वसामर्थ्यहीनतामवलोक्य स प्राणी मौढ्यमापद्यते, इति दर्शयति—‘ अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य स एकदा मूढभावं जनयति ’ इति । प्राणिनां कालकृता बाल्ययौवनादिरूपा शरीरावस्था वयस्तत् अभिक्रान्तम्—अतिक्रान्तम्, यद्वा अभि=जरामृत्यु अभिमुखीकृत्य क्रान्तं=प्राप्तं, तिस्रो हि मानवानामवस्था भवन्ति, तासु च बाल्य—यौवनद्वयमतीतं विलोक्य सकलेन्द्रियसामर्थ्यस्य क्षीणतां मृत्युकालसामीप्यञ्च समालोच्य ततः=तदनन्तरं स प्राणी, एकदा=वृद्धाव-

यहां तक इन्द्रिय सम्बन्धी विचार किया, अब प्रकृत अर्थका प्रतिपादन करते हैं—

वृद्धावस्था में अथवा किसी के रोगादि कारण जब यह प्राणी समस्त इन्द्रियोंको अपने२ विषयोंके ग्रहण करने में शक्तिविकल देखता है, तब यह कर्त्तव्यमूढ बन जाता है, इस बातका वर्णन करते हैं—“ अभिक्रान्तं च खलु वयं ” इत्यादि ।

प्राણियोंकी कालकृत जो बाल्य—यौवनादि रूप अवस्था होती है उसका नाम वय है, उसको अभિક્રान्त—अभि=जरा और मृत्युके संमुख क्रान्त=प्राप्त देखकर यह प्राणी एकदा=वृद्धावस्था अथवा रोगोदयमें मूढ-भाव=कर्त्तव्याकर्त्तव्यके विवेककी शून्यताको प्राप्त होता है ।

પ્રાણિયોંકી ત્રીન પ્રકાર કી અવસ્થાઈ હૈં—એક બાલ્યાવસ્થા, દૂસરી યૌવનાવસ્થા, ઓર ત્રીસરી વૃદ્ધાવસ્થા । ઇનમૈં બાલ્ય ઓર તરુણ અવ-

આટલે સુધી ઇન્દ્રિયસંબંધી વિચાર કર્યો, હવે પ્રકૃત અર્થનું પ્રતિપાદન કરે છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા કોઈ રોગાદિક કારણે જ્યારે પ્રાણી સમસ્ત ઇન્દ્રિયોને પોતપોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિવિકલ દેખે છે ત્યારે તે કર્તવ્યમૂઢ બને છે. આ વાતનું વર્ણન કરે છે. “ અભિક્રાન્તં ચ ખલુ વયં ” ઇત્યાદિ ।

પ્રાણિયોની કાલકૃત જે બાલ્ય-યૌવનાદિરૂપ અવસ્થા છે તેનું નામ વય છે. તેનું અભિક્રાન્ત-અભિ=જરા અને મૃત્યુના સંમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખીને પ્રાણી એકદા-વૃદ્ધાવસ્થા અથવા રોગોદયમાં કર્તવ્યા-કર્તવ્યના વિવેકની શૂન્યતાને પ્રાપ્ત થાય છે.

પ્રાણીઓની ત્રણ પ્રકારની અવસ્થા છે એક બાલ્યાવસ્થા, બીજી યૌવનાવસ્થા અને ત્રીજી વૃદ્ધાવસ્થા, તેમાં બાલ્ય અને તરુણ અવસ્થાને વ્યતીત દેખીને

સ્થાયાં રોગોદયે ચાત્મનો મૂઢતાં=કર્તવ્યકર્તવ્યવિચારશૂન્યતાં જનયતિ=અજ્ઞાનમાત્રં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ । પ્રતિસમયં શ્રોત્ર-ચક્ષુ-ઘ્રાણ-રસન-સ્પર્શન-વિજ્ઞાનૈઃ સકલૈરેકૈકશો વા, દેશતઃ સર્વતો વા નશ્યમાનૈઃ કરણરૂપૈઃ કર્તવ્યમૂઢો ભવતિ ।

યદ્વા-‘સોયપરિણાણેહિં, પરિહીયમાણેહિં’ ઇત્યાદૌ પ્રથમાર્થે તૃતીયાઽઽર્પ-ત્વાત્તદા તાનિ પરિજ્ઞાનાનિ ક્ષીયમાણાનિ કર્તૃરૂપાણિ મૂઢતાં જનયન્તીત્યર્થો ભવતિ ।

સ્થાકો વ્યતીત દેશકર વૃદ્ધાવસ્થા કો સકલ ઇન્દ્રિયોંકી શક્તિસે રિક્ત, એવં મૃત્યુકાલ કે સમીપ આઈ હુઈ દેશ કર ઉસ કાલમેં યહ પ્રાણી મૂઢ ભાવકો પ્રાપ્ત હોતા રહતા હૈ-‘મેરા કર્તવ્ય ક્યા હૈ ઓર અકર્તવ્ય ક્યા હૈ’ ઇસ વાતકા ઉસ સમય વિચાર હી જાતા રહતા હૈ । ઉસ સમય શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના ઓર સ્પર્શન, યે સમસ્ત ઇન્દ્રિયોં અપનેર વિષયકે જ્ઞાનસે ક્રમર કરકે અથવા એકહી સાથ, યા કુછ-કુછ અંશમેં રિક્ત હો જાતી હૈં ફિર ઇસે કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્યકા ભાન ભી કૈસે હો સકતા હૈ, ક્યોંકિ કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કા ભાન ઇન્દ્રિયોં દ્વારા હી ગ્રહણ કિયે હુએ વિષયોંમેં માનસિક વિચારધારા સે હોતા હૈ । જવ વે ઇન્દ્રિયોં અપનેર વિષયકે બોધસે વિકલ બનજાતી હૈં તવ ઉનકે વિષયોં મેં જો માનસિક વિચારધારા બંધતી થી વહ કૈસે બંધ સકેગી ? અતઃ યહ ઉસ સમય ઇસ પ્રકાર કે બોધસે રહિત હોકર એક તરહ કા ઉન્મત્ત જૈસા કર્તવ્યમૂઢ હો જાતા હૈ ।

અથવા-આર્ષવાક્ય હોને સે-“સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં”

વૃદ્ધાવસ્થાને સકળ ઇન્દ્રિયની શક્તિથી રિક્ત અને મૃત્યુકાળ નજીક આવેલી દેખીને આ કાળમાં પ્રાણી મૂઢ લાવને પ્રાપ્ત થાય છે. ‘મારું કર્તવ્ય શું છે અને અકર્તવ્ય શું છે’ એ વાતનો તે સમયે તેવો વિચાર જ વિચારાય નથી, તે વખતે શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના અને સ્પર્શન, આ બધી ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના જ્ઞાનથી ક્રમે ક્રમે અથવા એકી સાથે, અથવા થોડા થોડા અંશમાં રિક્ત થાય છે. પછી તેને કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યનું ભાન કેવી રીતે રહે, કારણ કે કર્તવ્ય અકર્તવ્યનું ભાન ઇન્દ્રિયોદ્વારા જ ગ્રહણ કરેલાં વિષયોમાં માનસિક વિચારધારાથી થાય છે, જ્યારે આ ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના બોધથી વિકલ અને છે ત્યારે તેના વિષયોમાં જે માનસિક વિચારધારા બંધાતી હતી તે કેવી રીતે બંધાઈ શકે ? માટે તે વખતે તે આ પ્રકારના બોધથી રહિત થઈને એક પ્રકારનો ઉન્મત્ત અને કર્તવ્યમૂઢ થાય છે.

અથવા-આર્ષવાક્ય હોવાથી-સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં ” ઇત્યાદિ

વૃદ્ધો હિ સન્તતં ચિન્તાનુત્તમઃ પ્રણટેન્દ્રિયસામર્થ્યઃ શ્રુત્પિપાસાતુરસ્તરૂપાચ્ચમાનતૃષ્ણા-
ભિભૂતઃ કલ્યાણસરણિવિચ્ચુતો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ૨ ॥

વૃદ્ધાવસ્થાયાં કીદૃશી દશા જાયતે ? इत्याह—‘ जेहिं वा सद्धिं ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જેહિં વા સદ્ધિં સંવસદ્ધિ તેઽવિ ણં ઇગયા નિયગા પુઠ્ઠિવિ
પરિવયંતિ, સોઽવિ તે નિયણ પચ્છા પરિવણ્ણા, નાલં તે તવ
તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ
વા, સે ન હાસાણ, ન કિઙ્કાણ, ન રહ્ણાણ, ન વિભૂસાણ ॥ ૩ ॥

છાયા—યૈર્વાં સાર્દ્ધં સંવસતિ તેઽપિ સ્વલુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વં પરિવદન્તિ,
સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા,
ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, સ ન હાસાય, ન ક્રીડાયૈ, ન રતયે, ન
વિભૂષાયૈ ॥ ૩ ॥

इत्यादि वाक्यों में प्रथमा विभक्ति के स्थानमें तृतीया विभक्ति का
प्रयोग किया है । अतः प्रथमा विभक्ति का आश्रय लेकर उसका
अर्थ इस प्रकार होगा—नष्ट होनेवाले वे श्रोत्रादिक-परिज्ञान, उस
समय—वृद्धावस्था या रोगोदयमें इस जीवको कर्त्तव्यमूढ बना देते हैं,
क्योंकि वृद्ध उस समय निरन्तर चिन्तासे जलता रहता है, उसके
प्रत्येक इन्द्रिय की शक्ति नष्ट हो जाती है, वह क्षुधा तृषासे पीड़ित
रहता है, उसके तृष्णा की वृद्धि होती रहती है, ऐसी हालतमें उसे
आत्मकल्याण की बात ही नहीं सुहाती, अतः वह कल्याणमार्गसे बहुत
ही दूर रहता है, अर्थात् वह आत्मकल्याण नहीं कर सकता ॥ २ ॥

વાક્યોમાં પ્રથમા વિભક્તિના સ્થાનમાં ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ કરેલ છે,
માટે પ્રથમા વિભક્તિનો આશ્રય લઈ તેનો અર્થ આ પ્રકાર થશે—નષ્ટ
થનારા તે શ્રોત્રાદિક-પરિજ્ઞાન તે વળત-વૃદ્ધાવસ્થા અગર રોગોદયમાં જીવને
કર્ત્તવ્યમૂઢ બનાવે છે, કારણ કે વૃદ્ધ તે વળતે નિરંતર ચિન્તાથી બળતો રહે છે.
તેની પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની શક્તિ નષ્ટ થાય છે, તે ક્ષુધા તૃષાથી પીડિત રહે છે.
તેના તૃષ્ણાની વૃદ્ધિ થતી જ રહે છે. આવી હાલતમાં તેને આત્મકલ્યાણની
વાત જ સારી લાગતી નથી માટે તે કલ્યાણ માર્ગથી ઘણો દૂર રહે છે. અર્થાત્
તે આત્મકલ્યાણ કરી શકતો નથી ૨

खलु एकदा निजकाः पूर्वं परिवदन्तीति, ते चिरपरिपालिता अपि स्त्रीपुत्रभृत्यादयः
खलु=निश्चयेन एकदा=वृद्धावस्थायां रोगोदये च निजकाः=आत्मीयाः परिवदन्ति=
तिरस्कुर्वन्तीत्यर्थः । तं पूर्वोपकारिणं वृद्धं सम्प्रति शत्रुमिव मन्यन्त इति भावः ।

“अयं वाचालः परुषवागू न म्रियते, नापि मौनं तिष्ठति, नापि स्थानान्तरं गच्छति,

પુત્ર भाई और भार्या के साथ यह बड़े अनुरागसे रहता है, और जिनका
इसने अपनी जवानी अवस्थाके समय सर्व प्रकारसे धनादिक के अर्जन
द्वारा बड़े आदरके साथ संरक्षण किया है, पालन-पोषण किया है ऐसे
वे आत्मीय जन भी अपने इस उपकारी जनका इस वृद्धावस्थामें, अथवा
इसके रोगाक्रान्त हो जाने पर तिरस्कार करने लगते हैं, वे इसके प्रति
इस प्रकारसे व्यवहार करते हैं जैसे कोई अपने शत्रुके साथ व्यवहार
करता है । नौकर चाकर भी इसकी एक भी बात नहीं सुनना चाहते
हैं, अथवा सुनकर भी वे उसकी बातका कोई महत्त्व ही नहीं समझते ।
घरवाले उस समय यही कहते हैं कि-इसकी इस अवस्थामें बुद्धि मारी
गई है, ‘साठ वर्षमें मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है’ यह बात सत्य
है, इसे बोलने तकका भी अब तमीज नहीं है-रात दिन बड़बडाता
ही रहता है, हर एकसे यद्वा-तद्वा कठोर वचन बोल दिया करता है,
क्या करें, इसे मौन भी नहीं आती है, इससे हजारों बार कह दिया है
कि ज्यादा मत बोला करो, चुप रहा करो, परन्तु यह नहीं मानता, रात-
दिन यहीं पर अड़ा बैठा रहता है, इससे इतना भी नहीं बनता कि

રાગથી રહે છે અને જેનો તેણે પાંતાની જીવાન અવસ્થાને સમયે સર્વ પ્રકારથી
ધનાદિક કમાઈને આદરથી રક્ષણ કર્યું છે. એવા તે આત્મીય જન પણ પાંતાના
આવા ઉપકારી માણસનો આ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગા-ક્રાન્ત થવાથી તેનો
તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે તેના પ્રતિ એવા પ્રકારથી વ્યવહાર કરે છે
કે જાણે પાંતાના શત્રુની સાથે વ્યવહાર કરતા હોય. નોકર-ચાકર પણ તેની
કોઈ વાત સાંભળતા નથી, અથવા સાંભળે તો તેની વાતનો કોઈ મહત્ત્વ સમજતા
નથી. ઘરવાળા આ સમયમાં એ કહે છે કે-એની આ અવસ્થાએ બુદ્ધિ મારી
ગઈ છે. “સાઠ વર્ષે” મનુષ્યની બુદ્ધિ ભ્રષ્ટ થાય છે.” આ વાત સત્ય છે, જેને
બોલવાનો પણ ઢગ નથી, રાત-દિવસ બડ-બડ કર્યા કરે છે. દરેકથી
જેમ-તેમ ખરાબ ખરાબ શબ્દો બોલી નાખે છે. શુ કરવું એને મોત પણ આવતી
નથી. એને હજાર વાર કહ્યું કે આજું બોલો નહિ, ચુપ રહ્યા કરો, પરંતુ એ
માનતો જ નથી, રાત-દિન આ ઠેકાણે અહો લગાવી બેસી જ રહે છે, એનાથી

સ્વદ્વાદિકમપિ ન પરિત્યજતિ इत्येवं नानाविधकठोरवाक्यैस्तर्जन्यादिना तर्जयन् “किमनेन वंराकेणे”-त्येवं सततं तं धिक्कुर्वन्ति । अन्येषां का वार्ता किन्तु स्वय-
मपि स्वात्मानं नाद्रियते, तथा हि-उत्थातुकामोऽपि नोत्थातुं शक्नोति, श्रोतुं द्रष्टुं
घ्रातुमास्वादयितुं स्पृष्टुमिच्छति, परन्तु तत्तदिन्द्रियसामर्थ्यस्य परिक्षीणतया न
शृणोति शब्दं, न पश्यति रूपं, न जिघ्रति गन्धं, नापि रसमास्वादयति, न चैव कर्कशक-
यहांसे दूसरी जगह भी जाकर बैठ जावे, जब देखो तब खाट पर ही
पड़ा रहता है, यों तो इसके कोई मतलब ही नहीं है, क्योंकि कमा कर
तो हम ही लाते हैं । इस प्रकार के अनेक कठोर वचनोंसे अथवा तर्जनी
ऊंगली दिखाकर इसका अनादर करते हैं, उसे सदा धिक्कारा करते हैं ।

इस अवस्थामें दूसरोंकी क्या बात कहना, अर्थात् दूसरे व्यक्ति
अथवा अपने सगे संबंधी लोग इस वृद्धकी सेवा चाकरी आदर सत्कार
न करे तो कोई अचरज की बात नहीं, परन्तु यह स्वयं अपने शरीर
सम्बन्धी कार्य करनेमें भी असमर्थ हो जाता है-यह उठना चाहता है
तो भी उठ नहीं सकता, सुननेकी, देखनेकी, सूंघनेकी और चखनेकी
तथा छूनेकी इच्छा करता है तो भी अपनी उनर पदार्थोंको विषय कर-
नेवाली इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण होनेसे न शब्द को सुन सकता है, न
रूपको देख सकता है, न गन्धको सूंघ सकता है, न रसको चख सकता
है और न कर्कश कठोर आदि स्पर्शको पहचान सकता है ।

એટલું પણ નથી બનતું કે અહીંયાથી ઉઠી બીજી જગ્યાએ જઈ બેસે. જ્યારે
દેખો ત્યારે ખાટ પર જ પડી રહે છે. આમ તો એને કોઈ મતલબ જ નથી,
કારણ કે કમાઈ કમાઈને તો અમે લાવીએ છીએ. આવા પ્રકારના અનેક
કઠોર વચનોથી અથવા અંગુઠો બતાવી બતાવીને તેનો અનાદર કરતા જ રહે છે
અને તેને ધિકાર્યા જ કરે છે.

આ અવસ્થામાં બીજાની શું વાત કહેવી - અર્થાત્ બીજી વ્યક્તિ અને
પોતાનાં સગાં સગંધી લોક આ વૃદ્ધની સેવા ચાકરી આદર સત્કાર ન કરે તો
કોઈ અચરજની વાત નહિ. પરંતુ તે પોતે પોતાના શરીર સંબંધી કાર્ય કરવામાં
પણ અસમર્થ બને છે. તે ઉઠવા ચાહે છે તો પણ ઉઠી શકતો નથી, સાલગવાની
દેખવાની સૂંઘવાની અને ચાખવાની તથા સ્પર્શની ઇચ્છા કરે છે તો પણ પોતાની
તે તે પદાર્થોથી વિષય કરવાવાળી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ ક્ષીણ હોવાથી ન તો શબ્દને
સાંભળી શકતો, ન તો રૂપને દેખી શકતો, નથી ગંધને પારખી શકતો, નથી
રસને ચાખી શકતો અને કઠોર તેમજ કર્કશ સ્પર્શને પીછાણી શકતો નથી.

ઠોરાદિકં સ્પૃશતિ । ઇતિ નાનાવિધાં દુર્દશામનુભૂય નવદ્વારેભ્યો ત્રિણિઃ સૃતં કર્ણમલાદિકં ઘૃણાસ્પદં વસ્તુ દર્શં દર્શમત્યર્થં ક્લાન્તમના ભવતિ તતઃ ‘કથમેતાદૃશસ્ય મમ મરણં નાયાતી-’ત્યનિશં ચ્વદ્ધારૂઢઃ કાસશ્વાસાદિરોગાભિભૂતઃ કફાવૃત્તશય્યાવસનાદિકો મુહુરુપતપ્તો ભવતીતિ નિજશરીરં સ્વસ્મૈ સર્વથા ન રોચતે । ઉક્તશ્ચ—

એસી અનેક પ્રકારકી દુર્દશાકો ભોગના હુઆ યહ વૃદ્ધ સદા ચિત્તમેં સન્તપ્ત હોતા રહતા હૈ । તથા શરીર કે નવ દ્વારોંસે સદા નિકલનેવાલે કાનકે મેલ તથા ચેંચાર આદિ અપવિત્ર વસ્તુઓંકો દેખ-દેખ કર નિત્ય ગ્લાનિ કરતા રહતા હૈ પરન્તુ કર કુછ નહીં સકતા, યહ તો યહી વિચારતા હૈ કિ મેરી મૃત્યુ કબ આવે, તાકિ ઇસ દુઃસ્વસે છુટકારા મિલ જાવે, પરન્તુ ઇસકે ઇસ વિચારસે કુછ હોના જાના નહીં હૈ, યહ તો વિચારા અપની ચ્વટિયા પર પડા-પડા હી કફ ચ્વૉસી શ્વાસ આદિ રોગોંસે દુઃસ્વિત હોતા રહતા હૈ, કફ આદિ મલોંકો યહ બાહર ફેંકનેકી ઇચ્છા કરતા હૈ તો બી શારીરિક અશક્તિ કી વજહસે વે કપડોં પર હી ગિર જાતે હૈ, બાહરમેં મલત્યાગકી ભાવના હોનેપર બી ઉઠનેકી અશક્તિ કી વજહ સે ચ્વટિયા પર હી ટટી પેશાબ હો જાતી હૈ, યહ ઉસમેં હી લથ-પથ હો કર પડા રહતા હૈ ઓર દુઃસ્વી બી હોતા હૈ, પરન્તુ કર-ધર કુછ નહીં સકતા । એસી પરિસ્થિતિમેં ઇસે સ્વયં બી અપના શરીર રુચિકર પ્રતીત નહીં હોતા । કહા બી હૈ—

એવી અનેક પ્રકારની દુર્દશાને ભોગવતાં તે વૃદ્ધ સદા ચિત્તમાં સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, તથા શરીરના નવ દ્વારોથી સદા નીકળતાં કાનનો મેલ તથા ખેંચાર આદિ અપવિત્ર વસ્તુઓને દેખીને નિત્ય ગ્લાનિ ભોગવ્યા કરે છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. એ તો એ જ વિચારે છે કે મારી મૃત્યુ ક્યારે આવે જેથી આ દુઃખથી છુટકારો મળી જાય, પરંતુ તેના આ વિચારથી કંઈ બની શકતું નથી. એ તો વિચારો ખાટલા ઉપર પડ્યો પડ્યો કફ-ખાંસી શ્વાસ આદિ રોગોથી દુઃખી થતો રહે છે. કફ આદિ મળોને તે ખાંડેર ફેંકવાની ઇચ્છા કરે છે તો પણ શારીરિક અશક્તિથી તે તેના કપડા ઉપર જ પડી જાય છે. બાહર મલ ત્યાગની ભાવના હોવા છતાં પણ ઉઠવાની અશક્તિથી ખાટલા ઉપર જ ઝાડો પેશાબ થઈ જાય છે તે તેમાં જ લથ-પથ પડ્યો રહે છે, અને દુઃખી પણ થાય છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને પોતાને પણ પોતાનું શરીર રુચિકર પ્રતીત થતું નથી. કહ્યું છે—

શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ॥
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,—
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥
 શરીરં સદ્ભોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ॥
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥

સકલપરિવારો વૃદ્ધાવસ્થાયાં જુગુપ્સતે તદ્વિપયે કથાનકમત્ર, તથા હિ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,—
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥
 શરીરં સદ્ભોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે,
 જરાયાં હા ! કષ્ટં, તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।
 અર્થ સ્પષ્ટ છે ॥

વૃદ્ધાવસ્થામેં ઉસકે સમસ્ત અપને જન હસસે ઘૃણા કરને લગજાતે
 હૈં, હસ વિષયમેં એક કથા લિખી જાતી હૈ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥
 શરીરં સદ્ભોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણા સ્ત્રી ન ભજતે,
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।
 અર્થ ખુલ્લો છે.

વૃદ્ધાવસ્થામા તેના સમસ્ત પોતાના જન જેનાથી ઘૃણા કરવા લાગી જાય
 છે. આ વિષયમાં એક કથા આપવામાં આવી છે:—

आसीद्राजगृहे नगरे गुणगणविभूषितः संसारसारसुचारुसौन्दर्यालङ्कृतो निखिल-
गजवाजिरथवसनविभवोपार्जको 'देवदास'—नामा कश्चिच्छ्रेष्ठी । स च यौवने भा-
ग्यातिरेकेण दशकोटिमितसुवर्णमुद्रां वाणिज्यकर्मणा समर्ज्य सकलस्त्री-पुत्रादि-
परिपोषकश्चन्द्र इवाहादकस्तेषां बभूव । तस्य चत्वारः पुत्रा आसन् । स एकदा
वार्द्धके रत्नादिकं सकलधनं विभज्य पुत्रेभ्यः समर्प्य निश्चिन्तोऽभूत्स्वयम् । पुत्रा
अपि निज-निजपत्नीः पितृशुश्रूषार्थं समादिश्य स्वस्वकार्यसमासक्ता अभूवन् । गतेषु

राजगृह नामके प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामक एक सेठ रहता था
जो अनेक गुणों से अलङ्कृत था । जिसका शरीर संसारमें सारबुद्धिको
उत्पन्न करानेवाले सुन्दर सौन्दर्यसे सुशोभित था । जिसका घर हाथी
घोड़ों और रथोंसे सदा भरा-हुवा था । सुन्दर २ कीमती वस्त्रोंकी जिसके
यहां पर कमी नहीं थी । सम्पत्ति जिसकी दासी थी । किसी समय
उसने यौवन अवस्थामें शुभ कर्मके उदयसे व्यापारके जरिये दस करोड़
सुवर्ण मुद्राओंका उपार्जन किया । वह स्त्री-पुत्रादिक परिजनोंके लिये
चन्द्रमाकी तरह आनन्द उत्पन्न करता था । उसके चार पुत्र थे । उसने
एक समय अपनी वृद्धावस्थामें अपनी धनसम्पत्ति अपने समस्त पुत्रों
को बाँट दी और उनकी तर्फसे स्वयं निश्चिन्त हो गया । वे पुत्र भी
अपनी २ स्त्रियोंको “तुम हमारे पिताकी अच्छी तरहसे सेवा करना”
ऐसा आदेश देकर अपने २ काममें लग गये । कुछ दिनोंके बाद बड़े
पुत्र की स्त्री अपने ससुर की सेवा करने में आलस्य करने लगी । पुत्र

राजगृह नामका प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामको एक सेठ रहते तो હતો. જે
અનેક ગુણોથી અલકૃત હતો. જેનું શરીર સંસારમાં સારબુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરવા-
વાળા સુંદર સૌન્દર્યથી સુશોભિત હતું, જેના ઘરે સુંદર કીમતી વસ્ત્રોની કમીના
ન હતી જેનું ઘર હંમેશા હાથી-ઘોડા અને રથોથી ભરેલું રહેતું હતું. સંપત્તિ
જેની દાસી હતી. એક વખત તેણે યૌવન અવસ્થામાં શુભ કર્મના ઉદયથી
વ્યાપારથી દસ કરોડ સુવર્ણમુદ્રા કમાયો. તે સ્ત્રી પુત્રાદિક પરિજનો માટે ચંદ્ર-
માની માફક આનંદ ઉત્પન્ન કરતો હતો. તેને ચાર પુત્રો હતા. તેણે એક વખત
પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં પોતાની ધનસંપત્તિ પોતાના સમસ્ત પુત્રોમાં વહેંચી આપી,
અને તેમના તરફથી બિલકુલ નિશ્ચિત થઈ ગયો. તે પુત્ર પણ પોતપોતાની
સ્ત્રીઓને “તમે અમારા પિતાની સારી રીતે સેવા કરજો” એવો આદેશ આપીને
પોતપોતાના કામે લાગી ગયા. થોડા સમય પછી મોટા પુત્રની સ્ત્રી પોતાના
સસરાની સેવા કરવામાં આળસ કરવા લાગી. પુત્ર જે વખત ઘર આવે અને

ચ કતિપયેષુ દિવસેષુ સા જ્યેષ્ઠપુત્રવધૂસ્તસ્ય શુશ્રૂષાયાં સાલસા વભૂવ । યદા પુત્રો ગૃહમાગત્ય પિતરં કુશલં શુશ્રૂષાદિ ચ પૃચ્છતિ તથા સ્થવિરઃ કથયતિ-નેયં સ્તુષા માં શુશ્રૂષતે । સા તુ પત્યા નિર્ભર્ત્સિતા સ્વામિનમાહ-ભવતાં ન મમોપરિ વિશ્વાસોઽસ્તિ તતશ્ચાન્યા એવ શુશ્રૂવન્તામ્ । તતશ્ચાન્યા સ્તુષા તદીયસેવાકર્મણિ નિયુજ્યમાનાઽપિ તથૈવ કૃતમન્દાદરા પુનઃ સ્વપતિર્ભર્ત્સિતા સેવાધર્માદિરતા વભૂવ । એવમન્યા સ્તુષા દુહિતા પૌત્રી પૌત્રો મૃત્યવર્ગાશ્ચ ક્રમેણ સેવાત ઉપરતા આસન્ । તતશ્ચ સતતમનુત્તમો ગુરુતરસ્વેદચિન્ત્રો ગ્રહગૃહીતં ઇવ દુઃસ્વશતમનુભવતિ । તતઃ સર્વૈઃ પરિત્યક્ત એકપદમપિ

જિસ સમય ઘર આકર અપને પિતાસે કુશલ સમાચાર તથા સેવા કરને કી વાત પૂછતા તો વહ વૃદ્ધ કહતા કિ 'માઈ' કયા કહૂં યહ વહૂ તો મેરી જરા ભી ટંહલ નહીં કરતી હૈ । ઇસ વાતકો સુન કર જબ ઉસકા પતિ ઉસસે નારાંજ હોતા તો વહ અપને પતિસે કહતી કિ યદિ આપકા મેરે ઊપર વિશ્વાસ નહીં હૈ તો આપ અપને પિતા કી સેવા દૂસરી વહૂસે કરા કર્યો નહીં લેતે ? । ઇસ પ્રકાર ઉસકે કહને પર જબ ઉસને પિતા કી સેવા કે લિયે દૂસરી વહૂ કો નિયુક્ત કિયા તો વહ ભી પહિલી વહૂ જૈસી હી ઉસકી સેવામેં મન્દ આદરવાલી હોને લગી તવ ઉસકે ભી પતિને ઉસકો બુરા 'ભલા' કહા તો વહ ભી ઉસકી સેવા કરને સે વિમુખ હો ગયી । ઇસી પ્રકાર અન્ય ઔર ભી વંહુઈ તથા પુત્રી, પૌત્રી એવં નૌકર ચાકર ભી ઉસકી સેવા કરને સે ક્રમ ૨ સે વિમુખ બન ગયે । જબ યહ અપની હાલત ઉસે વૃદ્ધને દેહી તો ઉસકે ચિત્તમેં વહુત હી જ્યાદા સન્તાપ હુઆ ઔર વહૂ અત્યન્ત સ્વેદચિન્ત્ર હો પાગલ જૈસા બન કર અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકા

પિતાને કુશલ સમાચાર તથા સેવા કરવાની વાત પૂછે ત્યારે તે વૃદ્ધ કહેતો કે ભાઈ શું કહું ? આ વહુ તો મારી જરા પણ ખાતર ધરદાસ કરતી નથી, આવી વાત સાંભળીને ન્યારે તેનો પતિ તેણીથી નારાજ થાય છે ત્યારે તેણી પોતાના પતિને કહે છે કે તમને મારા ઉપર વિશ્વાસ નથી તો પછી તમારા પિતાજીની સેવા બીજી વહુથી કેમ કરાવતાં નથી ? આવા પ્રકારના તેણીના કહેવા પરથી ન્યારે તેણે પિતાની સેવા માટે બીજી વહુને નિયુક્ત કરી તો તે પણ પહેલી વહુની માફક તેની સેવામાં મન્દ મન્દ આદરવાલી થવા લાગી. ત્યારે તેનો પતિ પણ ન્યારે તેને ભણે બુરું કહેતો તો તે પણ તેની સેવા કરવાથી વિમુખ બની જતી. આ પ્રકારે બીજી વહુઓ તથા પુત્ર, પૌત્રી અને નોકર ચાકર પણ તેની સેવા કરવામાં ક્રમે-ક્રમે વિમુખ બની ગયાં ન્યારે આ પોતાની હાલત તે વૃદ્ધ દેખી તો તેના ચિત્તમાં ઘણો જ સન્તાપ પેદા થયો અને તે અત્યંત ખેદચિન્ત્ર

गन्तुमक्षमस्तृणकुब्जीकरणेऽप्यसमर्थः शय्यासविधे कृतमूत्रपुरीषोऽतिमलिनवसनो
विगलितदशनः कुक्कुरपिण्डमिवाहर्निशं भोजनं लभमानो वृद्धश्चेतसि व्यचिन्तयत्
—‘अहं यौवने धनार्जनपरायणः कुटुम्बपोषणपरः कदापि कल्याणमार्गं नाराधितवान्
किमधुना करोमि कोऽपि मां न गणयति, ते पूर्वमुपलालिताश्चिरपालिताः पुत्रादि-
परिवारा आत्मसाधनविकलितं कृतकलकलं मामुपहसन्तीत्येवं भृशं विलपति, पश्चात्ता-

अनुभव करने लगा, सब घरवालों ने उसे छोड़ दिया। वह विलकुल
कमजोर हो गया। एक पैर भी चलनेकी उसमें शक्ति नहीं रही। वह
अपनी खाटके पास ही मल-मूत्र का त्याग करने लगा। वस्त्र भी उसके
अत्यन्त मलिन रहने लगे। उसके दाँत पहिलेसे ही गिर चुके थे। घर-
वालों में से भी किसीका उसके प्रति जरा भी स्नेह नहीं रहा। भोजन
भी उसे अनादरपूर्वक दिया जाने लगा। इस अपनी हालत को देख कर
वह विचार करने लगा कि-हाय ! मैंने यौवन अवस्थामें धन कमानेमें
ही अपना समय व्यतीत किया, कुटुम्बके भरण-पोषण करने में ही
चित्तको लगाया, कल्याण मार्गकी तर्फ सदा उदासीन रहा, उसकी
थोड़ीसी भी आराधना नहीं की, अब इस अवस्थामें मैं क्या कर सकता
हूँ। इतना सब कुछ करने पर भी तो ये लोग मेरी तर्फ जरा भी ध्यान
नहीं देते। जिनका मैंने पहिले अच्छी तरह से लालन-पालन किया,
और जिनके साथ मेरा घनिष्ठ प्रेम रहा है। संसारमें जिन्हें आत्मीय

अनी गांडानी भाइँक अनी अनेक प्रकारना कष्टोने अनुभव करवा लाग्यो. अघा
घरवाणाय्ते तेने छोडी दीघो. ते भीलकुल कमजोर थई गयो. ओके उगलुं पणु
आलवान्नी तेनामां शक्ति न रई. ते पोताना आटलानी पासे न आडा पेशाअने
त्याग करवा लाग्यो. तेना वस्त्रो पणु भेला रडेवा लाग्या. तेना दाँतो पडेलाथी
न पडी गया हुता. घरवाणामांथी डोर्छनो पणु तेना प्रति नरा नेटलो पणु
प्रेम ना रह्यो. लोअन पणु तेने अनादरपूर्वक आपवामां आवतुं हुतुं. आ पोतानी
हालतने देणीने ते विचार करवा लाग्यो के—“हाय ! में यौवन अवस्थां धन
कमावामां न पोतानो समय व्यतीत कर्थो. कुटुंअनुं लरणु पोषणु करवामां न
चित्तने लगाव्युं. कल्याणमार्गनी तरई सदा उदासी रह्यो, तेनुं थोडुं पणु
आराधन न कर्थुं हुवे आवी अवस्थां हुं शुं करी शकुं ? आटलुं आटलुं
करवा छतां पणु आ लोके भारो तरई पणु नेता नथी. नेनुं में पडेलां सारी
रीते लालन-पालन अने नेनी साथे भारो घनिष्ठ प्रेम रह्यो छे, संसारमां नेने

પાનુત્તમઃ ‘કથં શીઘ્રં ન મ્રિયે’ ઇતિ વારં-વારં વદન્ વિષીદતિ ચ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં કૃષિવાણિજ્યગજવાજિરથાદિવિષયા જિજ્ઞાસા જાગર્તિ, પ્રત્યહં પૃચ્છતિ પુત્રાદિકં, પરં પુત્રેણ ‘તિષ્ઠ તિષ્ઠ જાલ્મ ! કાક ઇવાસ્તુદાં ગિરં કિં મુધા પ્રલપસિ ? કિં તે જ્ઞાતેન ? કિમત્ર તવ પ્રયોજનમ્ ? મૌનં કૃત્વા યન્મિલતિ વાશનવસનાદિકં તદ્ ગૃહાણ ’ ઇત્યાદિનાનાવિધપરુપવાગ્મિર્મૂયોભૂયસ્તર્જિતો મર્ત્તિસતશ્ચ ભવતિ ।

કહતે હૈં વે હી મેરી ઉપેક્ષા કર રહે હૈં તો અવ ઓર કૌન એસા હૈ જો આત્મસાધનાસે રહિત મુઝ અભાગે કી ઓર ધ્યાન દેગા ? યે સવ લોગ મુઝે દેઝ ૨ કર હૈસતે હૈં, હાય ! અવ મૈં ક્યા કરૂં ? ઇત્યાદિ રૂપ સે વહ વિલાપ કરને લગા, ઓર પશ્ચાત્તાપકી અગ્નિમેં જલતા હુવા “ મૈં શીઘ્ર ક્યોં નહીં મર જાતા હૂં ” ઇસ પ્રકાર વારંવાર વિચારને લગા ઓર દુઃખી હોને લગા ।

જવ જવ વહ ઇસ અવસ્થામેં કૃષિ, વાણિજ્ય, હાથી, ઘોડા ઓર રથ આદિ કે વિષયમેં અપને પુત્રોં સે પૂછતા તો વે ઇસસે કહતે કિ-અરે ! વઢ-વઢ ક્યોં કરતે હો ? ચુપ-ચાપ ક્યોં નહીં બેઠે રહતે હો ? તુમકો ઇન્સે અવ ક્યા મતલબ હૈ ? વ્યર્થ હી કૌણ કે સમાન હમકો નહીં સુહા-નેવાલી વાણી ક્યોં બોલતે હો ?, ક્યા હો રહા હૈ, ક્યા નહીં હો રહા હૈ ?; ઇસકે જાનનેકી તુમ્હેં ક્યા જરૂરત હૈ ?, ઇસ પ્રકાર કે જાનને સે મી તુમ્હારા કૌનસા સ્વાર્થ સિદ્ધ હોતા હૈ ?, તુમ તો ચુપ હી રહા કરો, ઓર જો કુછ મી રાને-પીને કો મિલ જાતા હૈ ડસીમેં સન્તોષ રખવો । ઇત્યાદિ

આત્મીય કહે છે તે જ મારી ઉપેક્ષા કરી રહ્યાં છે. તો હવે એવો દોષ છે જે આત્મસાધનાથી રહિત મારા જેવા અભાગીની તરફ ધ્યાન આપે ? આ બધા લોકો મને દેખીને હસે છે. હાય ! હવે હું શું કરું ? ઇત્યાદિ રૂપથી તે વિલાપ કરવા લાગ્યો અને પશ્ચાત્તાપની અગ્નિમાં જલીને “ હું જલદી કેમ મરતો નથી ? ” આ પ્રકારે વારંવાર વિચારવા લાગ્યો અને દુઃખી થવા લાગ્યો.

બ્યારે બ્યારે તે આ અવસ્થામાં ખેતી, વ્યાપાર, હાથી, ઘોડા અને રથ આદિ વિષયમાં પોતાના પુત્રોથી પૂછતો તો તેઓ કહેતા કે—“અરે ! બડબડ શું કર્યા કરો છો ? ચુપચાપ કેમ બેસતા નથી ? તમારે તેનાથી શું મતલબ છે ? ખાલી કાગડા સમાન અમારે નહિ સાલળવા જેવી વાણીને સંલગાવો છો. ‘ શુ થઈ રહ્યું છે ? શુ નથી થઈ રહ્યું ? ’ એ બધું બાણવાની તમારે શું જરૂર છે ? આ પ્રકારનું બાણવાથી પણ તમારો કયો સ્વાર્થ સિદ્ધ થવનો છે ? તમે તો ચુપ જ રહ્યા કરો અને જે કંઈ પણ ખાવા પીવાનું મળે છે તેમાં સંતોષ રાખો ” ઇત્યાદિ

વૃદ્ધાવસ્થાયાં વહુપલપનશીલો નિજપરિવારકૃતાનનાદરાન્ યસ્મૈ કસ્મૈચિદપિ પ્રાતિવેશિકાય કથયતીતિ દર્શયતિ—‘ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ ’ ઇતિ, સઃ=વૃદ્ધોઽપિ તાન્=પુત્ર-કલત્ર-મૃત્યાદીન્ નિજકાન્=આત્મીયાન્, પશ્ચાત્=વૃદ્ધાવસ્થાયાં, પરિવદતિ=પરિભવતિ, પૂર્વં યાન્ પુત્રાદીન્ પોષયિતું ધનોપાર્જનાસક્તઃ ‘ સ્ત્રી પુત્રાદિભરણમેવ શ્રેયઃ ’ ઇતિ મત્ત્વા વિહિતનિશ્ચિલનર્થનિવહો વ્યગ્રવિગ્રહઃ કલ્યાણમાર્ગ-

અનેક પ્રકાર કે કઠોર વચનોંસે વારંવાર વે ઉસકા તિરસ્કાર કરતે હુણ ઉસ વૃદ્ધ સેઠકો દુઃખિત કરતે થે ।

વૃદ્ધાવસ્થામેં એક તો મનુષ્યકો સ્વભાવતઃ પહિલે કી અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આજાતી હૈ અતઃ અપને સગે સંબંધિયોં દ્વારા જો કુછ મી અનાદરસૂચક વ્યવહાર ઉસકે સાથ હોતા હૈ વહ જબ તક અપને પહો-સિયોંસે ન કહ દે તબ તક ઉસે શાન્તિ મી નહીં મિલતી, અબ હસી વાતકો સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈ—“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ” વહ વૃદ્ધ ઉન અપને પુત્ર કલત્ર ઓર નૌકર ચાકર આદિ અપને આત્મીય જનોં કી હસ પ્રકાર સે નિન્દા કરને લગતા હૈ કિ જિનકે પાલન-પોષણ કરને મેં મૈને જરા મી કસર નહીં કી, જિનકી સેવામેં રાત દિન એક કર દિયા, યહ સમજ કર કિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કા પાલન-પોષણ કરના હી સર્વોત્તમ કાર્ય હૈ । મૈને ધન ઉપાર્જન કરનેમેં મી કુછ કસર નહીં રહી, સંસાર ભર કે સબ અનર્થ કિયે ઓર આકુલવ્યાકુલ ચિત્ત બન અસાવધાનીપૂર્વક અપની પ્રવૃત્તિ ચાલૂ રહી, ઓર અમી તક મી મૈ

અનેક પ્રકારનાં કઠોર વચનોથી વારંવાર તેઓ તેનો તિરસ્કાર કરીને તે વૃદ્ધ શેઠને હુણી કરતા હતા.

વૃદ્ધાવસ્થામાં એક તો મનુષ્યને સ્વભાવતઃ પહેલાની અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આવે છે માટે પોતાના સગા સંબંધીઓ દ્વારા જે કાંઈ પણ અનાદરસૂચક વ્યવહાર તેની સાથે થાય છે, તે જ્યાં સુધી પોતાના પાડોશીઓને તે ન કહે ત્યાં સુધી તેને શાંતિ થતી નથી. હવે આ વાતને સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે—

“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ”

તે વૃદ્ધ તે પોતાના પુત્ર કલત્ર અને નૌકર આદિ પોતાના આત્મીયજનોની આ પ્રકારે નિન્દા કરવા લાગે છે કે—જેનું પાલન પોષણ કરવામાં મેં જરા પણ કસર નહિ રાખી, જેની સેવામાં રાત દિવસ એકજ માન્યો, એવું સમજીને કે સ્ત્રી પુત્રાદિકોનું પાલન પોષણ કરવું એ સર્વોત્તમ કાર્ય છે. મેં ધન ઉપાર્જન કરવામાં કાંઈ કસર રાખી નહિ સંસારભરના સર્વ અનર્થ કર્યા, અને આકુળ-

પાનુત્તમઃ ‘કથં શીઘ્રં ન મ્રિયે’ ઇતિ વારં-વારં વદન્ વિપીદતિ ચ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં કૃષિવાણિજ્યગજવાજિરથાદિવિપયા જિજ્ઞાસા જાગર્તિ, પ્રત્યહં પૃચ્છતિ પુત્રાદિકં, પરં પુત્રેણ ‘તિષ્ઠ તિષ્ઠ જાલ્મ ! કાક ઇવાસ્તુદાં ગિરં કિં મુધા પ્રલપસિ ? કિં તે જ્ઞાતેન ? કિમત્ર તવ પ્રયોજનમ્ ? મૌનં કૃત્વા યન્મિલતિ ચાશનવસનાદિકં તદ્ ગૃહાણ ’ ઇત્યાદિનાનાવિધપરુષવાગ્મિર્ભૂયોભૂયસ્તર્જિતો મર્ત્તિસતશ્ચ ભવતિ ।

કહતે હૈં વે હી મેરી ઉપેક્ષા કર રહે હૈં તો અવ ઓર કૌન એસા હૈં જો આત્મસાધનાસે રહિત મુદ્ધ અભાગે કી ઓર ધ્યાન દેગા ? યે સવ લોગ મુદ્ધે દેવ ૨ કર હૈંસતે હૈં, હાય ! અવ મૈં કયા કરૂં ? ઇત્યાદિ રૂપ સે વહ વિલાપ કરને લગા, ઓર પશ્ચાત્તાપકી અગ્નિમેં જલતા હુવા “મૈં શીઘ્ર ક્યોં નહીં મર જાતા હૂં” ઇસ પ્રકાર વારંવાર વિચારને લગા ઓર દુઃખી હોને લગા ।

જવ જવ વહ ઇસ અવસ્થામેં કૃષિ, વાણિજ્ય, હાથી, ઘોડા ઓર રથ આદિ કે વિષયમેં અપને પુત્રોં સે પૂછતા તો વે ઇસસે કહતે કિ-અરે ! વડ-વડ ક્યોં કરતે હો ? ચુપ-ચાપ ક્યોં નહીં બેઠે રહતે હો ? તુમકો હનસે અવ કયા મતલબ હૈં ? વ્યર્થ હી કૌણ કે સમાન હમકો નહીં સુહા-નેવાલી વાણી ક્યોં વોલતે હો ?, કયા હો રહા હૈં, કયા નહીં હો રહા હૈં ?; ઇસકે જાનનેકી તુમ્હેં કયા જરૂરત હૈં ?, ઇસ પ્રકાર કે જાનને સે મી તુમ્હારા કૌનસા સ્વાર્થ સિદ્ધ હોતા હૈં ?, તુમ તો ચુપ હી રહા કરો, ઓર જો કુછ મી ખાને-પીને કો મિલ જાતા હૈં ઊસીમેં સન્તોષ રક્વો । ઇત્યાદિ

આત્મીય કહે છે તે જ મારી ઉપેક્ષા કરી રહ્યાં છે. તો હવે એવો કોણ છે જે આત્મસાધનાથી રહિત મારા જેવા અભાગીની તરફ ધ્યાન આપે ? આ બધા લોકો મને દેખીને હસે છે. હાય ! હવે હું શુ કરું ?” ઇત્યાદિ રૂપથી તે વિલાપ કરવા લાગ્યો અને પશ્ચાત્તાપની અગ્નિમાં જલીને “હું જલદી કેમ મરતો નથી ?” આ પ્રકારે વારંવાર વિચારવા લાગ્યો અને દુઃખી થવા લાગ્યો.

જ્યારે જ્યારે તે આ અવસ્થામાં ખેતી, વ્યાપાર, હાથી, ઘોડા અને રથ આદિ વિષયમાં પોતાના પુત્રોથી પૂછતા તો તેઓ કહેતા કે-“અરે ! બડબડ શુ કર્યા કરો છો ? ચુપચાપ કેમ ખેસતા નથી ? તમારે તેનાથી શું મતલબ છે ? ખાલી કાગડાં સમાન અમારે નહિ સાલળવા જેવી વાણીને સાલળાવો છો. ‘શું થઈ રહ્યું છે ? શું નથી થઈ રહ્યું ?’ એ બધું બાણવાની તમારે શું જરૂર છે ? આ પ્રકારનું બાણવાથી પણ તમારો કયો સ્વાર્થ સિદ્ધ થવનો છે ? તમે તો ચુપ જ રહ્યા કરો અને જે કાંઈ પણ ખાવા પીવાનું મળે છે તેમાં સંતોષ રાખો” ઇત્યાદિ

વૃદ્ધાવસ્થાયાં વહુપ્રલપનશીલો નિજપરિવારકૃતાનનાદરાન્ યસ્મૈ કસ્મૈચિદપિ પ્રાતિવેશિકાય કથયતીતિ દર્શયતિ—‘ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ ’ ઇતિ, સઃ=વૃદ્ધોઽપિ તાન્=પુત્ર-કલત્ર-મૃત્યાદીન્ નિજકાન્=આત્મીયાન્, પશ્ચાત્=વૃદ્ધાવસ્થાયાં, પરિવદતિ=પરિભવતિ, પૂર્વં યાન્ પુત્રાદીન્ પોષયિતું ધનોપાર્જનાસક્તઃ ‘ સ્ત્રી પુત્રાદિભરણમેવ શ્રેયઃ ’ ઇતિ મત્વા વિહિતનિશ્ચિલનર્થનિવહો વ્યગ્રવિગ્રહઃ કલ્યાણમાર્ગ-

અનેક પ્રકાર કે કઠોર વચનોંસે વારંવાર વે ઉસકા તિરસ્કાર કરતે હુણ ઉસ વૃદ્ધ સેઠકો દુઃખિત કરતે થે ।

વૃદ્ધાવસ્થામેં એક તો મનુષ્યકો સ્વભાવતઃ પહિલે કી અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આજાતી હૈ અતઃ અપને સગે સંબંધિયોં દ્વારા જો કુછ મી અનાદરસૂચક વ્યવહાર ઉસકે સાથ હોતા હૈ વહ જવ તક અપને પડોસિયોંસે ન કહ દે તવ તક ઉસે શાન્તિ મી નહીં મિલતી, અવ હસી વાતકો સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈ—“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ” વહ વૃદ્ધ ઉન અપને પુત્ર કલત્ર ઔર નૌકર ચાકર આદિ અપને આત્મીય જનોં કી હસ પ્રકાર સે નિન્દા કરને લગતા હૈ કિ જિનકે પાલન-પોષણ કરને મેં મૈને જરા મી કસર નહીં કી, જિનકી સેવામેં રાત દિન એક કર દિયા, યહ સમજ્ઞ કર કિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કા પાલન-પોષણ કરના હી સર્વોત્તમ કાર્ય હૈ । મૈને ધન ઉપાર્જન કરનેમેં મી કુછ કસર નહીં રહી, સંસાર ભર કે સવ અનર્થ કિયે ઔર આકુલવ્યાકુલ ચિત્ત બન અસાવધાનીપૂર્વક અપની પ્રવૃત્તિ ચાલૂ રહી, ઔર અમી તક મી મૈ

અનેક પ્રકારનાં કઠોર વચનોથી વારંવાર તેઓ તેનો તિરસ્કાર કરીને તે વૃદ્ધ શેઠને દુઃખી કરતા હતા.

વૃદ્ધાવસ્થામાં એક તો મનુષ્યને સ્વભાવત પહેલાની અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આવે છે માટે પોતાના સગાં સંબંધીઓ દ્વારા જે કાંઈ પણ અનાદરસૂચક વ્યવહાર તેની સાથે થાય છે, તે બધાં સુધી પોતાના પાડોશીઓને તે ન કહે ત્યાં સુધી તેને શાંતિ થતી નથી. હવે આ વાતને સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે—

“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ”

તે વૃદ્ધ તે પોતાના પુત્ર કલત્ર અને નોકર આદિ પોતાના આત્મીયજનોની આ પ્રકારે નિંદા કરવા લાગે છે કે—જેનું પાલન પોષણ કરવામાં મેં જરા પણ કસર નહિ રાખી, જેની સેવામાં રાત દિવસ એકજ માન્યો, એવું સમજીને કે સ્ત્રી પુત્રાદિકોનું પાલન પોષણ કરવું એ સર્વોત્તમ કાર્ય છે. મેં ધન ઉપાર્જન કરવામાં કાંઈ કસર રાખી નહિ. સસારભરના સર્વ અનર્થ કર્યા, અને આકુળ-

અટ્ટો જાતોઽહં, ત એવ સામ્પ્રતં મમાશનવસનાદિકાર્યેઽપિ વિમનસો ભવન્તીતિ મહત્કષ્ટમ્, કિમધિકેન મદ્વચનમપિ તેષાં વિપાયતે, इत्येवंविधवाक्यैर्निजपरिवारान् वृद्धो धिक्करोतीति भावः । अतो हे आत्मन् ! ‘ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वेति ’ ‘ त्राणाय वा ’ दौर्बल्यपीडादिरूपापदुद्धरणाय, शरणाय वा= निर्भयावस्थानाय वा न अलं=समर्थाः । अत्र वा-शब्दोऽर्थान्तरद्योतकस्तेन कदाचि-

જિનકે કારણ કલ્યાણમાર્ગસે દૂર રહ્યા વેહી અવ મેરે खाने-पीने पहिने के इन्तजाम करनेमें भी मन नहीं लगा रहे हैं, यह कितने कष्ट की बात है? अरे ! अधिक क्या कहा जाय उन लोगोंको तो अब मेरा बोलना भी विष जैसा मालूम पड़ता है । इस प्रकार के वचनोंसे वह वृद्ध उन आत्मीय जनों की निन्दा करता है और उन्हें धिक्कारता है, इसलिये सूत्रकार कहते हैं कि—

“ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा ” इति ।

हे आत्मन् ! जिन पर पदार्थोंका तूने अपनी रक्षाके ख्याल से पालन पोषण किया है वे कोई तेरी इस वृद्धावस्थाजन्य दुर्बलतासे अथवा उस समयमें होनेवाले अनेक कष्टरूप आपत्तियों से तेरा उद्धार नहीं कर सकते हैं और न तुझे शरण देने के लिये ही समर्थ हो सकते हैं । इस वाक्यमें जो “ वा ” शब्द आया है वह इस बातका सूचक है कि यदि पूर्व पुण्यके उदयसे कोई ऐसे आत्मीय जन मिले हों जो मातापिताके

વ્યાકુળ ચિત્ત રાખી અસાવધાનીપૂર્વક પોતાની પ્રવૃત્તિ ચાલુ રાખી, અને હજી સુધી પણ મેં જેના કારણે કલ્યાણ માર્ગથી દૂર રહ્યો તે આજ મારા ખાવામાં-પીવામાં પહેરવામાં સગવડ કરી આપવાજરા પણ મન લગાડતા નથી, તે કેટલા દુઃખની વાત છે ? અરે ! અધિક શું કહેવું, તે લોકોને તો હવે મારૂં બોલવું પણ ઝેર જેવું લાગે છે, આ પ્રકારના વચનોથી તે વૃદ્ધ તે આત્મીય જનોની નિંદા કરે છે અને તેને ધિક્કારે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

“ નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ

હે આત્મન્ ! જે પરપદાર્થોનું તે પોતાની રક્ષા માટે પાલન પોષણ કર્યું છે તે કેઈ તારી આ વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુર્બલતાથી અથવા આ સમયમાં થનાર અનેક કષ્ટરૂપ આપત્તિઓથી તારો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી, અને તેને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. આ વાક્યમાં જે “વા” શબ્દ આવ્યો છે તે આ વાતનો સૂચક છે કે કદાચ પૂર્વ પુણ્યના ઉદયથી કેઈ આવા આત્મીય જન મળ્યા હોય જે માતા-પિતાની વૃદ્ધાસ્થામાં લક્ષિત કરતા હોય, તેમની દરેક પ્રકારની સેવા

તૂર્વપુણ્યોદયેન વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુત્રાદયોઽતિભક્તાસ્તવાપમાનં નૈવ કુર્વન્તિ તથાપિ તે વૃદ્ધાવસ્થાજનિતદુઃખપરિમોચકા ન ભવિતુમર્હન્તીતિ તાત્પર્યમવગમ્યતે ।

અથ યદિ પુત્રકલત્રાદયઃ સેવાપરા દુઃખભારભરમગ્નાઃ સન્તીત્યાલોચ્ય તેષાં દુઃખોદ્ધારાય તવ ચેતસિ ચિન્તા સ્યાદપિ તથાપિ તદુદ્ધારઃ કર્તુમશક્ય ઇતિ દર્શયતિ— ‘ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વે’—તિ, ત્વં વૃદ્ધો ન તેષાં દુર્દશાપદુદ્ધારકો નાપિ તદાશ્રયો ભવિતુમર્હસિ સામર્થ્યાભાવાદિતિ ભાવઃ ।

વૃદ્ધાવસ્થા મેં મીં અતિભક્ત હોં, ઉનકી હર તરહસે સેવા ચાકરી કરનેમેં કોઈ કર-કસર ન રગ્વતે હોં, ઉનકા જરા મીં તિરસ્કાર નહીં કરતે હોં તો મીં હસ વૃદ્ધાવસ્થામેં હોનેવાલે જો અનેક કષ્ટ હૈં ચાહેં વે શારીરિક હોં ચાહેં માનસિક હોં, ચાહેં વાચિક હોં ઉનસે વે ઉનકા ઉદ્ધાર નહીં કર સકતે ।

વૃદ્ધાવસ્થામેં યદિ વહ વૃદ્ધ ચાહે કિ-મેં-અપને સેવક પુત્ર કલત્રાદિકોં કા જો રાત દિન મેરી સેવા કરનેમેં હી લગે રહતે હૈં, ઓર જો વિચારે દુઃખોં સે પીડિત હો રહે હૈં મૈં ઉન્હેં કષ્ટસે નિર્મુક્ત કરદૂં ’ તો હસ પ્રકારકા મીં ઉસકા વિચાર કરના વ્યર્થ હી હૈ, હસી વાતકો પ્રકટ કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈં—“ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા” ઇતિ । માર્હ ! વૃદ્ધાવસ્થામેં તુજે હસ પ્રકારકી ચિન્તા કરના ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ તુમ સ્વયં અશક્ત હો તવ તુમ ઉન દુર્દશામેં ફંસે હુઅ અપને પુત્ર કલત્રાદિકોં કે ઉદ્ધારક કૈસે હો સકતે હો ઓર કૈસે ઉનકે

આકરી કરવામા કોઈપણ પ્રકારની કસર રાખતા ન હોય, તેનો જરા પણ તિરસ્કાર કરતા નથી તો પણ આ વૃદ્ધાવસ્થામા થનાર જે કષ્ટો છે ભલે તે શારીરિક હોય કે માનસિક હોય, અગર વાચિક હોય, તેનાથી તેઓ તેમનો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી.

વૃદ્ધાવસ્થામાં કદાચ તે વૃદ્ધ આહે કે—‘હું મારા સેવક પુત્ર કલત્રાદિકો, જે રાત દિવસ મારી સેવા કરવામાં જ લાગ્યા રહે છે અને જે બિચારા દુઃખોથી પીડિત થઈ રહ્યા છે, હું તેમને કષ્ટથી નિર્મુક્ત કરી દઉં ’ તો તેનો આ પ્રકારનો પણ વિચાર વ્યર્થ જ છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા સૂત્રકાર કહે છે—

“ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા” ઇતિ

ભાઈ ! વૃદ્ધાવસ્થામાં તારે આ પ્રકારની ચિંતા કરવી ઠીક નથી, કારણ કે તું પોતે અશક્ત છે ત્યારે તું આવી દુર્દશામાં ફસેલાં પોતાના પુત્ર કલત્રાદિકોનો

ત્રાણ-શરણપદયોરર્થસ્તુક્ત એવ । અત્રાપિ ત્રા-શબ્દેન તવ પુત્ર-કલત્રાદયો
યદિ દુઃસ્વમગ્નાસ્ત્વત્સેવાપરા અપિ સ્યુસ્તથાપિ ન તેષાં ત્વં રક્ષકો ભવિતું શક્નોપિ,
इत्येवं गम्यते । स्वकार्यिककार्यकरणेऽप्यसमर्थस्त्वं कथं महायाससाध्यं तेषां
भरणपोषणादिकार्यं कर्तुमध्यवस्यसीति भावः ।

સ તસ્યામવસ્થાયાં સ્વયં હાસયોગ્યો નાન્યં જનમુપહસિતું પ્રભવતીતિ દર્શયતિ-
'સ ન હાસાયે-' તિ, સઃ=વૃદ્ધો હાસાય નિન્દિતાચારમુપહસિતું ન યોગ્યો ભવતિ ।

આશ્રયપ્રદાતા હો સકતે હો, તુમ તો સ્વયં હસ સમય રક્ષા કરને યોગ્ય
एवं आश्रय पाने योग्य हो रहे हो ।

હસ સૂત્રમેં भी जो 'वा' शब्द आया है उससे यह बोध होता है
कि-तेरे पुत्र कलत्रादिक यदि दुःस्वमग्न हैं और तेरी सेवामें भी तत्पर
हैं तो भी तूं उनका रक्षक नहीं हो सकता, क्योंकि जब तूं स्वयं अपना
शारीरिक कार्य करने तकमें भी असमर्थ हो रहा है तो फिर कैसे महाकष्ट-
साध्य उनके भरण-पोषण आदि कार्य करनेके लिये विचार कर सकता है ।

વૃદ્ધ अपनी अवस्थामें स्वयं हँसीका पात्र है वह दूसरोंकी हँसी
कैसे कर सकता है ? इसका वर्णन करते हैं-“स न हासाय” जो स्वयं
ही हँसी-मजाक का पात्र होता है वह दूसरोंकी हँसी भी कैसे कर सकता
है अतः कोई यदि निन्दित आचारवाला है तो वह उसकी हँसी करनेके
योग्य ही नहीं है ।

ઉદ્ધારક કેવી રીતે બની શકે છે, અને કેવી રીતે તેને આશ્રય આપી શકાય. તમે
પોતે આ સમયે રક્ષા કરાવવા યોગ્ય અને આશ્રય લેવા યોગ્ય છો.

આ સૂત્રમાં પણ જે 'વા' શબ્દ આવ્યો છે તેનાથી એ બોધ થાય છે કે
તારા પુત્ર કલત્રાદિક કદાચ દુઃખમગ્ન છે અને તારી સેવામાં પણ તત્પર છે તો
પણ તું તેમનો રક્ષક બની શકતો નથી. કારણ કે જ્યારે તું સ્વયં પોતાના
શારીરિક કાર્ય કરવામાં અસમર્થ છે તો પછી કેવી રીતે મહાકષ્ટસાધ્ય તેનું
ભરણ પોષણ આદિ કાર્ય કરવા વિચાર પણ કરી શકે.

વૃદ્ધ પોતાની અવસ્થામાં સ્વયં હાંસીને પાત્ર છે, તે બીજાની હાંસી કેવી
રીતે કરી શકે ? તેનું વર્ણન કરે છે:-“સ ન હાસાય” જે સ્વયં હાંસી મનકરના
પાત્ર છે તે બીજાઓની હાંસી કેવી રીતે કરી શકે, માટે કોઈ કદાચ નિન્દિત
આચારવાળા છે તો તેઓ તેની હાંસી કરવાને યોગ્ય જ નથી.

યઃ સ્વયમુપહાસપાત્રં સ કથમન્યમુપહસેદિતિ તાત્પર્યમ્ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુરુષઃ ક્રીડા-
કરણાક્ષમો ભવતિ, યદા કામચેષ્ટાભિભૂતો ભવતિ તદા સ પ્રાણપણેનાપિ યુવતિ
કામયતે પરં સા નિજાનન્દાક્ષમં તં વિદિત્વાઽવહેલયતીતિ દર્શયતિ—‘ ન ક્રીડાયૈ ન
રતયે ’ ઇતિ, ક્રીડા=અક્ષાદિનાં खेलनं, લઙ્ઘનપ્રધાવનાસ્ફોટનાદિકં વા, તસ્યૈ ન સ
પ્રમવતિ । રતિર્નામ વનિતાવિષયક આલિંગનાદિનાનારૂપઃ ક્ષણિકસુખવિશેષસ્તસ્યૈ
ન સમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં યુવતિં વશીકર્તુ ન પારયતિ પ્રત્યુત ‘ ન લજ્જતેઽયં
પલિતકેશોઽચારુવેશો મમ હૃદયેશો બુભૂર્દુહિતૃતુલ્યામપિ મામભિકામયતે ’
ઇત્યાદિવાક્યૈસ્તં સા મર્તસ્યતિ ।

યુવતિં લઙ્ઘુકામો ધૃતભૂષણોઽપિ ન શોભત ઇતિ દર્શયતિ—‘ ન વિભૂપાયૈ ’ ઇતિ,
વિભૂપા=કટકકુણ્ડલકેયૂરાઘલઙ્કારરૂપા, તસ્યૈ સ ન યોગ્યો ભવતિ, વૃદ્ધસ્ય વિભૂપા
ન શોભત ઇતિ ભાવઃ ।

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” ઇસ સૂત્રમેં યહ પ્રકટ કિયા હૈ કિ વૃદ્ધા-
વસ્થામેં પુરુષ ક્રીડા કરનેમેં અસમર્થ હો જાતા હૈ તથા વહ વિષયસેવનકે
ભી યોગ્ય નહીં રહતા હૈ ।

યહાં ક્રીડા કા અર્થ અક્ષાદિકોં-પાસોં-સે લેખના, લાંઘના, દૌડના
તથા વ્યાયામ કરના, ઇત્યાદિ હૈ । યહ ક્રીડા વૃદ્ધ કૈસે કર સકતા હૈ ?
ક્યોં કિ વહ વૃદ્ધાવસ્થા મેં બિલકુલ અસક્ત હો જાતા હૈ । રતિ કા અર્થ હૈ
આલિંગનાદિક । ઇસકા ભી ઉપભોક્તા વહ નહીં હો સકતા કારણ કિ
વૃદ્ધાવસ્થામેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ । અર્થાત્ શોભાકે લિયે
ધારણ કિયે ગયે અલંકાર ભી ઇસે કમી શોભા પ્રદાન નહીં કર સકતે ।
કહે, કુણ્ડલ, કેયૂર-ભુજબન્ધ આદિ અલંકાર ઉસકી શોભા કે અભિ-
વર્દ્ધક ન હોકર પ્રત્યુત ઉસકે લિયે હાસ્ય કે કારણ હી બનતે હૈ । કહા ભી હૈ—

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” આ સૂત્રમાં એ પ્રગટ કરેલ છે કે વૃદ્ધાવસ્થામાં પુરુષ
ક્રીડા કરવાને અસમર્થ બની જાય છે તથા તે વિષયસેવન માટે પણ યોગ્ય રહેતો નથી.

આ ઠેકાણે ક્રીડાનો અર્થ અક્ષાદિકો-પાસાઓથી ખેલવું, ઠેકવું, કુદવું, દોડવું
તથા વ્યાયામ કરવો, ઇત્યાદિ છે. આ ક્રીડા વૃદ્ધ કેવી રીતે કરી શકે, કારણ કે
તે વૃદ્ધાવસ્થામાં બિલકુલ અશક્ત થઈ જાય છે. રતિનો અર્થ છે આલિંગનાદિક
તેના પણ ઉપભોક્તા તે બની શકતો નથી, કારણ કે વૃદ્ધાવસ્થામાં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયો
શિથિલ બને છે. અર્થાત્ શોભા માટે પણ ધારણ કરેલાં અલંકાર પણ તેને શોભા
આપી શકતાં નથી કડા, કુંડલ, કેયૂર-ભુજબન્ધ આદિ અલંકાર તેની શોભામાં
વૃદ્ધ કરતા નથી પણ તેના માટે હાસ્યનું કારણ બને છે. કહ્યું છે કે.—

उक्तञ्च—“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विभ्रमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विडम्बनां याति परां तदा सः” ॥१॥ इति

एवं च वृद्धावस्थायां निजतनयवनितादिति रस्कृतस्य जराजर्जरितदेहस्य क्रीडा-
रतिविभूषादिकं न किमपि शोभत इति सूत्राशयः ॥ ३ ॥

उक्तमप्रशस्तमूलस्थानं, संप्रति प्रशस्तमूलस्थानमाह—यद्वा—यतस्ते पुत्रकलत्रादयो
नालं मे त्राणाय वा शरणाय वा भवितुमर्हन्तीति विचार्य धीरः क्षणमपि न प्रमादं
कुर्यादिति दर्शयति—‘इच्छेवं’ इत्यादि ।

“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विभ्रमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विडम्बनां याति परां तदा सः ॥१॥” इति ।

इस प्रकार इसको न भूषण शोभा देते हैं—न इसकी हँसी ही
इसकी सुन्दरता बढ़ा सकती है, न विभ्रम—विलास ही यह कर सकता है,
इसके अपने पास में रहे हुए जन भी कहने में नहीं रहते । अगर वह
ऊपर की बातों में प्रवृत्ति करे तो वह इस वृद्धावस्था में विडम्बना पाता
हुवा अपने पुत्र—स्त्री आदि से तिरस्कार को ही पाता है, तथा जरासे
जर्जरित काय बने हुए इसके लिये क्रीडा—रति—विभूषादिक कुछ भी
शोभा नहीं देते ॥ ३ ॥

अप्रशस्त मूलस्थानों का वर्णन हो चुका, अब प्रशस्त मूलस्थानों
का वर्णन किया जाता है, अथवा—वे पुत्र कलत्रादिक मेरी रक्षा के लिये
या मुझे शरण प्रदान करने के लिये समर्थ नहीं हो सकते हैं, ऐसा विचार

“न भूषण भाति न हास्यमस्य, न विभ्रमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विडम्बनां याति परां तदा सः” ॥ १ ॥ इति ।

आ प्रकारे तेने भूषण शोभा देता नथी. तेनी डांसी पण तेनी सुंदरता
वधारी शकती नथी. ते विलास पण करी शकतो नथी. तेनी पास रહેता भाणुसो
पण तेना कडेवाभां रહેता नथी. अगर ते ऊपर कडेली वातोभां प्रवृत्ति करे तो
ते आ वृद्धावस्थाभां विडम्बना पावनीने पोताना पुत्र स्त्री आदिथी तिरस्कार न
पावे छे. तथा घडपणथी जर्जरित शरीर अनेकुं डोष तेना भाटे क्रीडा, रति,
विभूषादिक केछ पण शोभा भाटे योग्य नथी

अप्रशस्त मूलस्थानोनुं वर्णन थर्क युक्तुं. हवे प्रशस्त मूलस्थानोनुं
वर्णन करे छे:—अथवा ते पुत्र कलत्रादिक भारी रक्षा भाटे अगर मने शरण
प्रदान करवा भाटे समर्थ अनी शकता नथी, ओवो विचार करी धीर वीर पुत्रपुत्र

મૂલમ્—ઇચ્છેવં સમુદ્ઘિષ્ઠ અહોવિહારાણ, અંતરં ચ ચલુ ઇમં સંપેહાણ ધીરે મુહુર્ત્તમવિ ણો પમાયણ વઓ અચ્છેતિ જોવ્વણં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇત્યેવ સમુત્થિતઃ અહોવિહારાય અન્તરં ચ ચલુ ઇમં સંપેક્ષ્ય ધીરો મુહુર્ત્તમપિ નો પ્રમાદયેત્, વયોજ્જ્યેતિ યૌવનં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

કર ધીર વીર પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ એક ક્ષણ મી પ્રમાદ ન કરે—
ઇસી વાતકી પુષ્ટિ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

“ઇચ્છેવ સમુદ્ઘિષ્ઠ” ઇત્યાદિ—યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર-મિત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ યહ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર મેં લવલીન રહતા હૈ ઓર જબ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તબ વહ ઉન સકલ કાર્યોં કે વેદને મેં અસમર્થ હો જાતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમ પાલન કરને કે લિયે ઉદ્યુક્ત હુઆ સંયમી મુનિ સંયમ કો પાલન કરને કે ઇસ અવસર કા અચ્છી તરહ વિચાર કર એક મુહુર્ત્ત મી પ્રમાદ ન કરે, ક્યોં કિ આયુ ઓર યૌવન દોનોં વીત રહે હૈ ।

સૂત્ર મેં “ઇત્યેવં” યહ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથન કી પુષ્ટિ કરતા હૈ, અર્થાત્—જબ યહ વાત પ્રમાણિત હો ચુકી કિ યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર મિત્ર કલ-ત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ પ્રાણી સાવધકાર્યોં કે કરને મેં લવલીન હોતા હૈ પરન્તુ વહી પ્રાણી જબ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તબ ઉન સમસ્ત કાર્યોં કે કરને મેં અપને કો સર્વથા અસમર્થ પાતા હૈ, જબ યહ હાલત હૈ

કર્તવ્ય છે કે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતની પુષ્ટિ કરવા સૂત્ર-કાર કહે છે કે—

“ઇચ્છેવ સમુદ્ઘિષ્ઠ” ઇત્યાદિ, યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર-મિત્રાદિકમાં આસક્ત બનીને આ પ્રાણી સાવધ વ્યાપારમાં લવલીન રહે છે અને ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે તે એ બધા કાર્યોંને કરવામાં અશક્ત બની જાય છે, એવો વિચાર કરી સંયમ પાલન કરવા માટે ઉદ્યુક્ત થઈને સંયમી મુનિ સંયમનું પાલન કરવાને આ અવસરનો સારી રીતે વિચાર કરી એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કરે, કારણ કે આયુષ્ય અને યૌવન બન્ને વીતી જાય છે.

સૂત્રમાં “ઇત્યેવ” આ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથનની પુષ્ટિ કરે છે. અર્થાત્ ન્યારે આ વાત પ્રમાણભૂત બની ચૂકી છે કે યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોં આસક્ત બનેલ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર કરવામાં લવલીન થાય છે. પરંતુ તે પ્રાણી ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે આ બધા કાર્યોં કરવામાં પોતાને સર્વથા અસ-

ટીકા—‘इत्येवम्’ इतिशब्दः पूर्वप्रदर्शितवस्तुसूचकस्तेन यौवने पुत्रकलत्रासक्तः सावधानुष्ठानरतः स एव वृद्धावस्थायां सकलकार्याक्षमो भवतीत्यर्थः । एवं=यथो-पदर्शितेन प्रकारेण ‘समुत्थितः अहोविहाराय’ इति ।

अहो इत्याश्चर्यजनको विहारो=विहरणं यस्मिन् सः=अहोविहारः संयमानुपालनं, तस्मै=तदर्थं समुत्थितः=सम्यगुक्तः सन् मुहूर्तमपि न प्रमादयेदित्यनेन सम्बन्धः ।

તો વહુ હસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ કો દૂર કરને કે લિયે યહ સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કિ વહુ સંયમ મેં અપને કો લગા દે, કારણ કિ સંયમ કા અનુષ્ઠાન કરના હી હસ રોગકા ઇલાજ હૈ, હસકે પાલન-સેવન કિયે વિના યહ ભવર કા રોગ દૂર નહીં હો સકતા-સંયમારાધન મનુષ્ય-ગતિ કે સિવાય અન્ય ઔર કિસી બી ગતિ મેં હો નહીં સકતા-હસલિયે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ કિ હસ સંયમરૂપી ઔષધિ કા પાન બી વહી કર સકતા હૈ જો ધીર હો-પરીષદ ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર બી જો અપને કર્તવ્યપથ સે જ્યુત નહીં હોતા હો, ઉસકા નામ સિદ્ધાન્ત કી પરિ-ભાષા મેં ધીર હૈ । હસી વાત કી પુષ્ટિ-“અહોવિહારાય” હસ પદસે તથા “ધીરે” હસ પદ સે સૂત્રકારને કી હૈ । અહોવિહાર શબ્દ કા અર્થ સંયમ હૈ, કારણ કિ હસમેં વિચરણ કરનેવાલા પ્રાણી દેહ મેં મમત્વબુદ્ધિ રાખનેવાલોં કે લિયે આશ્ચર્ય પેદા કરનેવાલા હોતા હૈ, ઉસ કી અનેક પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા એવં કાયકલેશાદિક બાહ્ય તપકો દેગ્ધ કર સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત હો જાતે હૈ, વે વિચારતે હૈ-ધન્ય હૈ હસ

મર્થ માને છે. ન્યારે આવી હાલત છે તો તે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને દૂર કરવા માટે સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કે સંયમમાં પોતાને લગાવી દે, કારણ કે સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવું તે જ આ રોગનો ઉપાય છે. તેનું પાલન-સેવન કર્યા વગર આ ભવોભવનો રોગ મટતો નથી. સંયમારાધન, મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કોઈ ગતિમાં થઈ શકતું નથી. તેથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે આ સંયમરૂપી ઔષધિનું પાન તે કરી શકે છે જે ધીર છે અને પરીષદ ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ જે પોતાના કર્તવ્યથી દૂર થતાં નથી. તેનું નામ સિદ્ધાન્તની પરિભાષામાં ધીર છે. આ વાતની પુષ્ટિ—“અહોવિહારાય” આ પદથી તથા “ધીરે” આ પદથી સૂત્રકારે કરેલ છે. અહોવિહાર શબ્દનો અર્થ સંયમ છે, કારણ કે તેમાં વિચરણ કરવાવાળાં પ્રાણી દેહમાં મમત્વબુદ્ધિ રાખવાવાળાંઓને માટે આશ્ચર્ય પેદા કરવા-વાળા હોય છે. તેની અનેક પ્રકારની તપશ્ચર્યા અને કાયકલેશાદિક બાહ્ય તપને દેખીને સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત થાય છે તે વિચારે છે-ધન્ય છે

સંયમી જન કો, હસ પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા કો-જિસસે શરીર પર મી મમતા નહીં રહતી હૈ, અતઃ હસ પ્રકાર કા સંયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનનીજઠરે શયનં” હસ મહારોગ કા અચૂક મહૌષધ હૈ । ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે હે પ્રાણી ! તૂં એક મુહૂર્ત કી મી દેરી મત કર, મત સોચ હસ બાતકો કિ-“અમી તો રાને પીને કે દિન હૈ-એશ-આરામ ભોગને કા યહ સમય હૈ, બાદ જબ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી । તબ સંયમારાધન કરલૂંગા ” કારણ કિ કૌન કહ સકતા હૈ કિ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી । વૃદ્ધાવસ્થા આને કે પહિલે હી યદિ તૂં હસ પર્યાય સે પર્યાયાન્તરિત હો ગયા તો ફિર તેરી યહ કલ્પના કોરી હી રહ જાવેગી । તથા વૃદ્ધાવસ્થા મેં જબ કિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ, શરીર મી અશક્ત બન જાતા હૈ, કરને કી ભાવના હોને પર મી જિસમેં કુછ મી કરતે ધરતે નહીં બનતા તો હસ સંયમ કા આરાધન હો મી કૈસે સકતા હૈ । યદિ પહિલે સે સંયમારાધન કી શક્તિ આત્મામેં આઈ હુઈ હો તો વૃદ્ધાવસ્થા મેં સંયમારાધન પૂર્વસંસ્કાર કે વશ સે હો મી જાય, પરન્તુ હસ પ્રકાર કી યોગ્યતા તો તૂંને અમીતક પ્રાપ્ત હી નહીં કી, યહ યોગ્યતા જબ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બલવાન થી, શરીર મી સશક્ત થા, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઔર

તે સંયમીજનને, આ પ્રકારની તપશ્ચર્યાને, જેથી શરીરમાં પણ મમતા રહેતી નથી. માટે આ પ્રકારનું સંયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનની-જઠરે શયનં” આ મહારોગનું જરૂર મહા ઔષધ છે, તેની પ્રાપ્તિ માટે હે પ્રાણી, તું એક ક્ષણ પણ ઢીલ ન કર. એ વાતનો વિચાર પણ ન કર કે-“હમણા તો ખાવા પીવાના દિવસો છે-એશઆરામ ભોગવવાનો સમય છે, ન્યારે વળી વૃદ્ધાવસ્થા આવશે ત્યારે સંયમારાધન કરી લઈશ.” કારણ કે કોણ કહી શકે છે કે વૃદ્ધાવસ્થા આવશે. વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પહેલાં જ કદાચ તું આ પર્યાયથી પર્યાયાન્તરિત થઈ ગયો તો પછી તારી આ કલ્પના નકામી જ રહી જવાની. અને વૃદ્ધાવસ્થામાં ન્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, શરીર પણ અસક્ત બને છે, કરવાની ભાવના હોવા છતાં પણ કાંઈ પણ કરી શકતો નથી તો પછી આ સંયમનું આરાધન કેવી રીતે બની શકે. કદાચ પહેલાથી સંયમારાધનની શક્તિ આત્મામાં આવી ગઈ હોત તો વૃદ્ધાવસ્થામાં સંયમારાધન પૂર્વ સંસ્કારને વશથી થઈ પણ બચ પરંતુ આ પ્રકારની યોગ્યતા તો તને હજી સુધી પ્રાપ્ત જ નથી થઈ. આ યોગ્યતા ન્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બળવાન હતી, શરીર પણ સશક્ત હતું, દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાળ-ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂળ હતી, તે અવસ્થામાં આવી શકત.

ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂલ થી ઉસ અવસ્થા મેં આતી, પરંતુ વહ અવસ્થા તો તૂને મિત્ર પુત્ર કલત્રાદિકોં મેં આસક્તિ કે વશવર્તી હોકર ગમા દી ઔર સાવધાનુષ્ઠાનોં કે કરને સે અપની આત્મપરિણતિ કો કલુષિત કર દિયા, તવ ભલા, કહો તો સહી, સહસા યહ કાર્ય તુઘ્ન સે અવ કૈસે બન સકેગા ? । ઇસ પર સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે ભવ્ય પ્રાણી ! તૂ “ મુહુત્તમવિ નો પમાયણ ” ઁક મુહૂર્ત મી પ્રમાદ મત કર, ઔર મન વચન ઁવં કાય સે, તથા કૃત કારિત ઔર અનુમોદના સે, અર્થાત્ નવ કોટિ સે ઇસ સંયમ કા આરાધન કર, કનક કામિની આદિ પદાર્થ જિન્હેં તૂ ભ્રમકે વશ સે અમી તક અપને માનતા આયા હૈ, ઔર જિનકે પાને મેં તથા પાલન પોષણ કરને મેં તૂને અપને હિત ઔર અહિત કા મી વિવેક લુપ્ત કર દિયા હૈ, ભલા ! ઁનકે સ્વરૂપ કા વિચાર કર ઔર દેઘ્ન કિ ઇનકે સંયોગ સે તેરી આત્મા મેં કહાં તક શાન્તિ જાગૃત હોતી હૈ ? યદિ ઁ વાસ્તવિક શાન્તિ પ્રદાન કરને મેં અસમર્થ હૈં તો તૂ ઇનકા નવકોટિ સે પરિત્યાગ કર દે, ઇસ પરિત્યાગ સે તેરી આત્મા મેં વહ અપૂર્વ સંસ્કાર જાગૃત હોગા જો તેરી ઇન દીનદશા કા અન્ત કરનેવાલા હો જાયગા, ઇન પદાર્થોંકા ભોગ અથવા સંગ્રહ ઁજાકો ઁજુજલાને કે સમાન હૈ-જિસ પ્રકાર ઁજાકો ઁજુજલાનેવાલા વ્યક્તિ

પરંતુ તે અવસ્થા તો તેં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોંમાં આસક્તિને વશવર્તી બની ગુમાવી અને સાવધાનુષ્ઠાનો કરવાથી પોતાની આત્મપરિણતિને કલુષિત કરી, તારે ભલા કહો તો ખરા; સહસા આ કાર્ય તારથી હવે કેવી રીતે બની શકશે?, આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે કે:—હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું “ મુહુત્તમવિ નો પમાયણ ” એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કર અને મન વચન અને કાયાથી તથા કૃત, કારિત અને અનુમોદનાથી અર્થાત્ નવ કોટિથી આ સંયમનું આરાધન કર, કનક કામિની આદિ પદાર્થ જેને તું ભ્રમવશ હજી સુધી પોતાના માનતો આવ્યો છે અને જેને મેળવવામાં અને પાલન પોષણ કરવામાં તે પોતાના હિત અહિતનો પણ વિવેક લુપ્ત કરી નાખેલ છે. ભલા ! તેના સ્વરૂપનો વિચાર કર અને દેખ કે તેના સંયોગથી તારા આત્મામાં કયા સુધી શાન્તિ બંધન થાય છે. કદાચ તે વાસ્તવિક શાન્તિ પ્રદાન કરવામાં અસમર્થ છે તો તુ તેનો નવકોટિથી પરિત્યાગ કરી દે. આ પરિત્યાગથી તારા આત્મામાં અપૂર્વ સંસ્કાર બંધન થશે તો આ તારી દીનદશાનો અંત કરી દેશે, આ પદાર્થોનો ભોગ અથવા સંગ્રહ ખુબલીને ખણવા બરાબર છે જે પ્રકારે ખુબલીને ખણવાવાળો વ્યક્તિ, તે વખતે ખણવાથી આનંદ આવે તેમ માને છે. અને કહ્યું પણ છે.—

खुजलाते समय आनंद में गोते लगाने लगता है और कहा भी है—

“जो नहीं मजा देखा हलवा पुरी खाने में, सो मजा देखा एक खाज के खजुवाने में”

ज्यों ही उस खुजलाने रूप कार्य को बंद कर देता है तो उसको जो जलनरूप वेदना होती है वह वही जानता है, इसी प्रकार इन विषयों का सेवन भी है, ऐसा विचार कर मन, वचन आदि रूप नव कोटि से इनका त्याग कर। इसी बातकी पुष्टि “अहो विहारण” इस पद में लगा हुआ “अहो” यह पद करता है यह तो निश्चित है कि आत्मा में पूर्व संस्कार जितना कार्य करते हैं उतना वर्तमान संस्कार नहीं। बच्चा जब माता के पेट से उत्पन्न होता है तो उसकी स्तन्यपानप्रवृत्ति में पूर्व संस्कार ही सर्व प्रथम काम करता है। हम यह भी प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं कि कुंभकार अपने घटरूप कार्य को निष्पन्न करने के लिये चाक में जवर्दस्त भ्रमी पैदा करता है, यह जवर्दस्त भ्रमी सिर्फ वर्तमान में ही उसने उसमें उत्पन्न नहीं की है, किन्तु एक के बाद एक जो वह उसमें भ्रमी किया करता है—वारंवार उसे दंड से घुमाता है उससे ही यह उत्पन्न हुई है, इसी भ्रमीरूप संस्कार के द्वारा उसने घटरूप अपने कार्य को निष्पन्न किया है, इसी प्रकार आत्मा भी पूर्व पूर्व पर-पदार्थों के भोगने आदि रूप वासना-संस्कार से सांसारिक परपदार्थों को भोगने

“जो नहीं मजा देखा हलवा पुरी खानेमें, सो मजा देखा एक खाजके खजुवानेमें”

ન્યારે તે ખણવારૂપ કાર્યને બંધ કરવામાં આવે અને પછી તેની જે જલનરૂપ વેદના થાય છે તે તેજ બાણે છે. તે પ્રકારે આ વિષયોનું સેવન પણ છે. તેવો વિચાર કરી મન વચન આદિ રૂપ નવ કોટિથી તેનો ત્યાગ કરીદે. આ વાતની પુષ્ટિ “અહો વિહારણ” આ પદમાં લાગેલા “અહો” એ પદ કરે છે. એ તો નિશ્ચિત છે કે આત્મામાં પૂર્વસંસ્કાર જેટલું કાર્ય કરે છે તેટલું વર્તમાન સંસ્કાર નહિ બચ્યું ન્યારે માતાના પેટથી ઉત્પન્ન થાય છે તો તેની સ્તન્યપાન-પ્રવૃત્તિમાં પૂર્વસંસ્કાર જ સર્વ પ્રથમ કામ કરે છે. અમે એ પણ પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરીએ છીએ કે કુભાર પોતાના ઘટરૂપ કાર્યને નિષ્પન્ન કરવા માટે ચાકમાં જવર્દસ્ત ભ્રમી પેદા કરે છે, આ જવર્દસ્ત ભ્રમી ફક્ત વર્તમાનમાં જ તેને તેમાં ઉત્પન્ન કરેલ નથી પણ એકની પછી એક જે તે તેમાં ભ્રમી કર્યા કરે છે—વારંવાર લાકડીથી ઘુમાવ્યા કરે છે તેથી જ તે ઉત્પન્ન થયેલ છે, આ ભ્રમીરૂપ સંસ્કાર દ્વારા તેણે ઘટરૂપ પોતાના કાર્યને નિષ્પન્ન કર્યું છે, તે પ્રકારે આત્મા પણ પૂર્વ પૂર્વ પરપદાર્થોના ભોગવવા આદિરૂપ વાસના-સંસ્કારથી સાંસારિક

અથવા અપનાને કી ઓર હુકતા હૈ। इन संस्कारों को सर्वथा प्रक्षीण करने की शक्ति यदि कहीं है तो वह सिर्फ एक संयम में ही है, इस संयम का आराधन नव कोटि से ही होना चाहिये, ऊपर की दिखावटीसे नहीं। “अहो विहाराय” इस पदमें जो “अहो” यह शब्द है वह आश्चर्य वाचक है, पूर्वोक्त प्रकार से एक तो इस पदकी सार्थकता प्रकट की है, दूसरे इस प्रकार से भी इस पदकी सार्थकता टीकाकार प्रकट करते हुए कहते हैं कि—यह भी एक आश्चर्य की बात है कि जब यह आत्मा सांसारिक वासनाओं से वासित था। उस समय किसी को अपना मित्र, किसी को अपना शत्रु मानकर रातदिन राग और द्वेष के फंदे में आपाद-शिख-एडी से चोटी तक जकड़ा हुआ था, इष्टानिष्ट पदार्थों की कल्पना से रात-दिन आर्त रौद्र ध्यान करने में मस्त रहता था, परन्तु ज्यों ही संयम की बागडोर इसके हाथ में आती है यह उस प्रकार की कल्पना से सर्वथा रहित हो जाता है, कारण कि पदार्थों में इष्ट की कल्पना इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थों में ही होती है, प्रतिकूल पदार्थों में अनिष्ट की कल्पना। पर जब संयम की बागडोर इसे प्राप्त हो जाती है तब क्या तो अनु-कूल क्या प्रतिकूल सब एक हो जाते हैं—एक जैसे ही मालूम पड़ते हैं।

પરપદાર્થોને લોગવવા તથા અપનાવવાની તરફ જ બુદ્ધિ છે આ સંસ્કારોને સર્વથા પ્રક્ષીણ કરવાની શક્તિ કદાચ કોઈ જગ્યાએ હોય તો તે ક્રિયા સંયમમાં જ છે. આ સંયમનું આરાધન નવકોટિથી હોવું જોઈએ, ઉપર ઉપરના દેખાવ પુરતું ન હોવું જોઈએ.

“અહો વિહારાય” આ પદમાં જે “અહો” એ શબ્દ છે તે આશ્ચર્ય-વાચક છે, પૂર્વોક્ત પ્રકારથી એક તો આ પદની સાર્થકતા પ્રગટ કરી છે. બીજું આ પ્રકારથી પણ આ પદની સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રગટ કરીને કહે છે કે—એ પણ એક આશ્ચર્યની વાત છે કે જ્યારે આ આત્મા સાંસારિક વાસનાઓથી વાસિત હતો તે વખતે કોઈને પોતાને મિત્ર, કોઈને પોતાનો શત્રુ માનીને રાત દિવસ રાગ અને દ્વેષથી પુરેપુરો પગથી માથા સુધી ફસાએલો હતો, અર્થાત્ જકડાએલો હતો. ઇષ્ટ અનિષ્ટ પદાર્થોની કલ્પનાથી રાતદિવસ આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કરવામાં મસ્ત રહેતો હતો. પરંતુ જ્યાં સંયમની લગામ તેના હાથમાં આવે છે ત્યાં તે એવા પ્રકારની કલ્પનાથી સર્વથા રહિત થાય છે. કારણ કે પદાર્થોમાં ઇષ્ટની કલ્પના ઇન્દ્રિ-યોના અનુકૂળ પદાર્થોમાં જ થાય છે. પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં અનિષ્ટની કલ્પના. પરંતુ જ્યારે સંયમની દોરી તેને પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ બધું એક

આશ્ચર્યકારિત્વશ્ચાત્ર ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ કનકકામિન્યાદિસકલવસ્તુપરિત્યાગિત્વેન ।
યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મિત્રભાવેન । અથવાઽન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાઽષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽ-
પ્યનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન વોદ્યમ્ ।

લગામ હી તો ઘોડે કો વૈઠને વાલે કે અધીનસ્થ કરતી હૈ, ઇન્દ્રિયાંરૂપી ઘોડે મી ઇસી સંયમ કી વાગડોર-લગામ સે આત્મા કે અધીન બન જાતે હૈ, તવ “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ વહ નિન્દા ઓર પ્રશંસાકો તથા માન ઓર અપમાનકો સમાન સમજતા હૈ । યહ કહને કી હી વાત નહીં હૈ-અનુભવ સિદ્ધ વિષય હૈ । કયા સંયમિયોં કે સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કર વૈઠે હુણ નહીં સુને હૈ ?, સંયમ વહ અંજન હૈ કિ જિસકે લગતે હી આંતર ચક્ષુઓંકી યહ કલ્પના કિ “ યહ મિત્ર હૈ, યહ શત્રુ હૈ ” બિલકુલ નષ્ટ હો જાતી હૈ । યહ સંયમી જીવ યદ્યપિ બાહ્ય જગત મેં વિચરણ કરતા હૈ તો મી બાહ્ય જગત મેં વહ જલ મેં કમલ કી તરહ અલિસ હી રહતા હૈ, અતઃ શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ આદિ સમસ્ત કલ્પનાઓં કો મમત્વજન્ય બુદ્ધિ કા વિકાર માનકર વહ ઉનસે ઇકદમ પરે હો જાતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાય કો લેકર ટીકાકાર ને “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” ઇસ પદ સે ઇસકા ખુલાસા કિયા હૈ । સમતાભાવ સંયમકા સર્વપ્રથમ ગુણ હૈ । જિસ

જ થઈ જાય છે-એક જ જેવું માલૂમ પડે છે. લગામ જ તો ઘોડાને બેસનારના અધીનમાં કરે છે. ઇન્દ્રિયો રૂપી ઘોડા પણ આ સંયમરૂપ લગામથી આત્માને આધીન થઈ રહે છે ત્યારે “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ તે નિંદા અને પ્રશંસાને તથા માન અને અપમાનને સમાન સમજે છે એ કહેવાની જરૂર રહેતી નથી, કારણ કે આ અનુભવસિદ્ધ વિષય છે. શું સંયમીઓના સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કરીને બેઠેલાં નથી સાંભળ્યાં ?, સંયમ તે અંજન છે કે જેનાથી આંતરચક્ષુઓની એ કલ્પના કે “ આ મિત્ર છે, આ શત્રુ છે ” બિલકુલ નષ્ટ થઈ જાય છે. તે સંયમી જીવ હજી સુધી બાહ્ય જગતમાં વિચરણ કરે છે તો પણ તે બાહ્ય જગતમાં તે જલમાં કમલની માફક અલિસ જ રહે છે, માટે શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ, એ બધી કલ્પનાઓ મમત્વજન્ય બુદ્ધિને વિકાર માનીને તે તેનાથી એકદમ દૂર થઈ જાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ટીકાકારે “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” એ પદથી તેનો ખુલાસો કરેલ છે. સમતાભાવ સંયમનો સર્વપ્રથમ ગુણ છે, જેમ સૂર્યના ઉદયથી અંધકારનો નાશ

પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદિત હોને પર અંધકાર કા અભાવ હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમરૂપી સૂર્ય કે ઉદિત હોતે હી આત્મા સે વિષમતા કી કલ્પના-રૂપ અંધકાર વિલીન હો જાતા હૈ ।

ઇસ પ્રકાર સે ખી ‘અહો વિહારાણ’ ઇસ સૂત્રમેં ‘અહો’ પદ કી સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્ર-સંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મિનટ કે સમયકો એક મુહૂર્ત કહતે હૈ, ઇસ મુહૂર્ત કે ખીતર કે સમયકો અન્તર્મુહૂર્ત કહતે હૈ । યહ અસંખ્યાત સમયોં કા એક કાલ હૈ । સમય, વ્યવહારકાલ કા સબ સે સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સા હૈ । કાલ દો પ્રકાર કા હૈ ૧-નિશ્ચયકાલ, ૨-વ્યવહારકાલ । સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ સબ વ્યવહાર કાલ હૈ । વર્તના જિસકા લક્ષણ હૈ વહ નિશ્ચયકાલ હૈ, ક્યોં કિ શાસ્ત્રમેં ‘વટ્ટણાલક્ષણો કાલો’ કહા હૈ ।

સદ્ગાવોં સે યદિ અષ્ટસમયમાત્ર ખી સંયમ કા આરાધન કર લિયા જાવે તો વહ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । હમ દેખતે હૈ—અગ્નિ કી થોડી સી ખી ચિનગારી જબ રૂઝ કે પુંજપર પડ જાતી હૈ તો વહ ઉસે ભસ્મ કર દેતી હૈ । ઇસી પ્રકાર અષ્ટસમયમાત્ર

થાય છે તે પ્રકારે સંયમરૂપી સૂર્યના ઉદયથી આત્માથી વિષમતાની કલ્પનારૂપ અંધકારનો નાશ થાય છે

આ પ્રકારથી પણ “અહો વિહારાણ” આ સૂત્રમાં ‘અહો’ પદની સાર્થ-કતા ટીકાકાર પ્રગટ કરે છે—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મીનીટના સમયને એક મુહૂર્ત કહે છે. આ મુહૂર્તના ભીતરના સમયને અન્તર્મુહૂર્ત કહે છે. તે અસંખ્યાત સમયોના એક કાળ છે, સમય, વ્યવહાર કાળનો બધાથી સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સો છે કાલ બે પ્રકારનો છે. ૧ નિશ્ચયકાલ, ૨ વ્યવહારકાલ, સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ બધો વ્યવહારકાલ છે, વર્તવું બેનું લક્ષણ છે તે નિશ્ચયકાળ છે, કારણ કે શાસ્ત્રમાં ‘વટ્ટણાલક્ષણો કાલો’ કહેલ છે

સદ્ભાવોથી કદાચ અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું આરાધન કરી લેવામાં આવે તો તે અનંત કર્મોની નિર્જરણું કારણ માનેલ છે અને દેખીએ છીએ અગ્નિની થોડી પણ ચિનગારી જ્યારે રૂના ઢગલા ઉપર પડી જાય છે તે બધું રૂ બાળી નાખે છે, તે પ્રકારે અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું સેવન જીવોના અનન્ત કર્મોના નિર્જરણું કારણ બને છે તેમાં કઈ અચરજની વાત છે ?

કિં કૃત્વા સંયમાનુપાલનતત્પરો ભવેદિત્યાહ—‘અન્તરં ચ खलु इमं सम्प्रेक्ष्य’
 इमं=तपःसंयमकरणरूपम् अन्तरम्=अवसरम्, च=समुच्चये, खलु=निश्चयेन सम्प्रेक्ष्य
 =सम्यग्दृष्ट्वा अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्मार्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिलाभसर्वविरति-
 प्राप्तिरूपावसरोऽनादौ संसारे जीवेन लब्ध इत्यनुभूय “धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमाद-
 येत्” धीरः=परीषहोपसर्गसहने दृढः संयमी नो प्रमादयेत्=प्रमादं न कुर्यात् ।

भी સંયમ કા સેવન જીવોં કે અનન્તકર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ હો તો
 હસ મેં કૌનસી અચરજ કી વાત હૈ ? ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોં સે બી જિતને કર્મોં કી નિર્જરા નહીં કર
 સકતા હૈ ઉતને કર્મોં કી નિર્જરા ત્રીન ગુપ્તિ કે ધારક-સંયમી મહાત્મા
 ઉચ્છ્વાસ માત્ર મેં કર દેતા હૈ, યહ સવ મહિમા સંયમ કી હી હૈ ઇસી
 લિયે સંયમ ભાવ અચરજકારી હૈ । ઇસલિયે મનુષ્ય-જન્મ કો સફલ
 બનાને કે લિયે યહ આવશ્યક કર્તવ્ય હૈ કિ સંયમ કા આરાધન કિયા
 જાવે । યહ દૃઢ વિશ્વાસ રાખના ચાહિયે કિ-સંયમપ્રાપ્તિ કી યોગ્યતા
 મનુષ્યજન્મ મેં હી હૈ, ઇસમેં બી યદિ અનાર્યક્ષેત્ર મેં જન્મ હુવા વહાં અનાર્યોં
 કી સંગતિ મિલી તો જિસ પ્રકાર કડવી તુંબડી કે સંગ સે દૂધ કી હાલત
 હોતી હૈ ઠીક યહી હાલત ઇસ આત્મા કી બી હો જાતી હૈ । રાતદિન
 દુર્વિચારોં કા ઉનકી સંગતિ મેં પડને સે તાંતા લગા રહતા હૈ, ધર્મ કર્મકા
 ઉસ અવસ્થા મેં ભાન નહીં રહતા-બેહોશી કા નશા હી સવાર રહતા હૈ,
 મેરા શુભ કર્તવ્ય ક્યા હૈ ? હેય ક્યા હૈ ? ઉપાદેય ક્યા હૈ ? અભક્ષ્ય ક્યા હૈ ?
 અભક્ષ્ય ક્યા હૈ ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોં કા વિચાર ઉસસે દૂર રહતા હૈ ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોથી પણ જેટલા કર્મોની નિર્જરા નથી કરી શકતો
 તેટલા કર્મોની નિર્જરા ત્રણ ગુપ્તિના ધારક સંયમી મહાત્મા ઉચ્છ્વાસમાત્રમાં
 કરી લે છે, આ બધો મહિમા સંયમનો જ છે. માટે સંયમભાવ અચરજકારી
 છે, માટે મનુષ્યજન્મને સફળ બનાવવા માટે એ આવશ્યક કર્તવ્ય છે કે સંય-
 મનું આરાધન કરવામાં આવે એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ કે-સંયમ-
 પ્રાપ્તિની યોગ્યતા મનુષ્યજન્મમાં જ છે. તેમાં પણ કદાચ અનાર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ
 થયો ત્યાં અનાર્યોની સંગતિ મળી તો જે પ્રકારે કડવી તુંબડીના સંગથી દૂધની
 હાલત થાય છે ઠીક તે જ હાલત આ આત્માની પણ થાય છે, રાતદિવસ દુર્વિ-
 ચારોનું તેની સંગતિમાં પડવાથી તાંતો લાગ્યો રહે છે, ધર્મકર્મનું આ અવ-
 સ્થામાં ભાન નહિ રહેતું હોવાથી બેહોશીનો નશો રહ્યા કરે છે માટે શુભ કર્તવ્ય
 શું છે ? હેય શું છે ? ઉપાદેય શું છે ? અભક્ષ્ય શું છે ? અભક્ષ્ય શું છે ? ઇત્યાદિ સમસ્ત

જયે હસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ અનાયોં કૈ સંગ સે ઉપસ્થિત હોતી હૈ તથ વહાં પર સંયમ જૈસી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કી પ્રાપ્તિ કૈસે હો સકતી હૈ ? કિન્તુ નહીં । યદિ આર્યક્ષેત્ર મૈં જન્મ હુવા તો ખી દુષ્કુલ મૈં જન્મ મિલા તો વહાં ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી; કારણ કિ વહાં પર હતની યોગ્યતા હી નહીં કિ જિસસે સંયમભાવકો ધારણ કરને કી ભાવના જાગૃત હો, હિંસા, ઘ્રૂઠ, ચોરી, કુશીલ ઓર પરિગ્રહ જૈસે પાંચ આસ્રવોં કા હી વિશેષતર વહાં સંગ્રહ હોતા રહતા હૈ જિસસે ઉસ મનુષ્યજન્મ કા પાના ન પાને કૈ હી તુલ્ય હો જાતા હૈ । મનુષ્ય પર્યાય ખી મિલી, આર્યક્ષેત્ર મિલા ઓર ઉત્તમ કુલમૈં જન્મ મિલા, પરન્તુ જો મૂલ મૈં હી કમી હુઈ તો ઉસ જન્મ સે ખી ક્યા લાભ હો સકતા હૈ ? અતઃ વહ જન્મ તખી સફલ હો સકતા હૈ જો બોધિ કી પ્રાપ્તિ હો । યદિ બોધિ કી પ્રાપ્તિ હી ન હુઈ તો સર્વવિરતિ કહાં સે હોગી । સર્વવિરતિ-સાધુકા ચારિત્ર હી શ્રેય કી પ્રાપ્તિકા પ્રધાન કારણ કહા ગયા હૈ હસલિયે હન તમામ વાતોં કી પ્રાપ્તિ કી ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા જાનકર ધીર પુરુષ કો વાહિયે કિ વહ અપને જન્મ કો સફલ કરને કૈ લિયે સંયમારાધન કૈ પ્રતિ મુહૂર્ત માત્ર ખી પ્રમાદ નહીં કરે । હસી વાત કા ટીકાકારને-“અનન્તકાલદુર્લભમાનુ-

વાતોને વિચાર તેનાથી દૂર રહે છે. ન્યારે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે ત્યારે આ ઠેકાણે સંયમ જેવી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? બંડે નહિ જ. કદાચ આર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ થયો તો પણ દુષ્કુલમાં જન્મ થયો તો ત્યાં પણ તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી, કારણ કે તે જગ્યાએ એટલી યોગ્યતા જ નથી કે જેનાથી સંયમભાવને ધારણ કરવાની ભાવના જાગૃત થાય. હિંસા, જુઠ, ચોરી, કુશીલ અને પરિગ્રહ જેવા પાંચ આશ્રવોનું જ વિશેષતર ત્યાં સંગ્રહ થયા કરે છે તેથી તે મનુષ્યજન્મ મળ્યો ના મળ્યા બરાબર જ થઈ જાય છે. મનુષ્યપર્યાય પણ મળી આર્યક્ષેત્ર મળ્યું. ઉત્તમ કુળમાં જન્મ પણ મળ્યું. પરંતુ મૂળમાં જ કમીના બની તો તે જન્મથી જ કયો લાભ મળી શકે ? માટે તે જન્મ ત્યારે સફળ બની શકે છે ન્યારે તેનાથી બોધિની પ્રાપ્તિ થાય કદાચ બોધિની પ્રાપ્તિ જ ન થઈ તો સર્વવિરતિ ક્યાંથી થશે. સર્વવિરતિ-સાધુનું ચારિત્ર જ શ્રેયની પ્રાપ્તિનું પ્રધાન કારણ કહેવામાં આવ્યું છે, માટે આ તમામ વાતોની પ્રાપ્તિની ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા બાણીને ધીર પુરુષને બોધ્યે કે પોતાના જન્મને સફળ કરવા સંયમારાધન પ્રતિ મુહૂર્ત માત્ર પણ પ્રમાદ ન કરે, આ વાતનો ટીકાકારે-

વજન્મા-સર્વ્યક્ષેત્ર-શોભનકુલોત્પત્તિ-બોધિલાભ-સર્વવિરત્તિપ્રાપ્તિરૂપા-વસરોઽનાદૌ સંસારે જીવેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्” इन पङ्क्तियोंसे खुलाशा किया है। अर्थात् दुर्लभ मनुष्य-जन्म, आर्यक्षेत्र, उच्चकुल में जन्म, बोधिका लाभ, सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्तिरूप अवसर जीवने अनन्तकालसे प्राप्त किया है, ऐसा विचार कर धीर वीर संयमीजन मुहूर्त मात्र भी संयमाराधन करने में प्रमाद-शील न बनें। मनुष्यजन्म का पाना बहुत ही दुर्लभ है। इसकी दुर्लभता शास्त्रकारोंने दश १० दृष्टान्तों से शास्त्रमें प्रकट की है। प्रथम तो मनुष्यजन्म की प्राप्ति होना दुर्लभ है, उसमें भी आर्यक्षेत्र में जन्म मिलना यह और भी महादुर्लभ है, आर्यक्षेत्र में भी उच्चकुल में जन्म पाना यह और भी दुर्लभ है, इस में भी बोधिका लाभ होना और कठिनतर है, इसमें भी सर्वविरतिरूप चारित्र का आराधन करना और भी दुर्लभ-तम है, अतः इस अनादि संसार में यदि इस पूर्ण साधनसामग्रीकी प्राप्ति तेरे हाथ आई है तो हे प्राणी! तू संयमभाव से एक मुहूर्त भी प्रमादी मत बन, धीर वीर होकर इसका-किनने ही उपसर्ग आवे किनने ही चाहे परीषहों का ढेर तेरे मार्ग में आडा पड़ा हो तो भी आराधन

“अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्माऽऽर्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिलाभसर्वविरतिप्राप्ति-रूपावसरोऽनादौ संसारे जीवने लब्धः, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्” આ પંક્તિઓથી ખુલાસો કરેલ છે, અર્થાત્ દુર્લભ મનુષ્યજન્મ, આર્યક્ષેત્ર, ઉચ્ચકુળમાં જન્મ, બોધિનો લાભ, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિરૂપ અવસર છવે અનંતકાળથી પ્રાપ્ત કરેલ છે. એવો વિચાર કરી ધીર વીર સંયમી જન મુહૂર્ત માત્ર પણ સંયમારાધન કરવામાં પ્રમાદશીલ ન બને. મનુષ્યજન્મનું મળવું ઘણું જ દુર્લભ છે, તેની દુર્લભતા શાસ્ત્રકારોએ ૧૦ દૃષ્ટાન્તોથી શાસ્ત્રમાં પ્રગટ કરી છે. પ્રથમ તો મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે, તેમાં પણ આર્યક્ષેત્રમાં જન્મ મળવો એ મહાદુર્લભ છે, આર્યક્ષેત્રમાં પણ ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ થવો એ પણ દુર્લભ છે, તેમાં પણ બોધિનો લાભ થવો ઘણું જ કઠિનતર છે. તેમાં પણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આરાધન કરવું તે દુર્લભતમ છે. માટે આ અનાદિ સંસારમાં કદાચ આ પૂર્ણ સાધન સામગ્રીની પ્રાપ્તિ તારે હાથે આવી છે તો હે પ્રાણી! તું સંયમભાવથી એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદી બનીશ નહિ. ધીર વીર થઈ તેમાં કેટલાએ ઉપસર્ગ આવે અને ગમે તેટલા પરિષદોના ઢગલા તારા માર્ગમાં આડા આવે તો પણ સંયમનું આરાધન કર. જેથી પ્રાપ્ત થયેલો આવો અવસર તારા

છદ્મસ્થોપયોગો મુહૂર્તમાત્રમવતિષ્ટતે, તેનાત્ર મુહૂર્તમિતિ કથિતમ્ ; શાસ્ત્રસમ્મતં તુ સમયમાત્રમપીત્યર્થઃ “ સમયં ગોચમ મા પમાયણ ” ઇતિ વચનાત્ ।

પૂર્વપુણ્યોદયેન માનવજન્મ લબ્ધવાન, તત્રાપિ સંસારાસારતાસમાલોચનેન વિરતો ભૂત્વા ક્ષણમપિ પ્રમાદી ન ભવેદિત્યત્ર હેતુમુપદર્શયતિ—“ અત્યેતિ વયો યૌવન વા ” ઇતિ, વયઃ=કૌમારયૌવનાદિ અત્યેતિ=અતિગચ્છતિ વ્યતીતં ભવતીત્યર્થઃ, યૌવનં વા વ્યતિગચ્છતિ, વયોમધ્યેऽપિ યૌવનસ્ય સત્ત્વાત્પુનરુપાદાનં તસ્યૈવ પ્રાધાન્યં નાન્યસ્યેતિ જ્ઞાપનાય, ધર્માર્થકામાદિસાધનાનાં તદધીનત્વાત્, મેઘચ્છાયાસન્ધ્યારાગવદ્ યૌવનં સ્પલ્પકાલસ્થાયીતિ મત્વા યથા વ્યર્થં તન્ન વ્યતીયાત્તથા સંયમિના ચાપ્રમાદિના કાર્યમિતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

કર, તાકિ પ્રાસ હુઆ યહ અવસર તેરે હાથ સે ન નિકલને પાવે । પરી-ષહ, ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર મી જો સંયમ પથસે વિચ્છલિત ન હો ઉસકા હી નામ ધીર હૈ । સચા ધીર વીર વહી હૈ—જો ઇસ પવિત્ર સંયમ કા આરાધન કર અપને જન્મકો સફલ બનાતા હૈ ।

યહાં પર જો ‘ એક મુહૂર્ત મી પ્રમાદ ન કરે ’ એસા કહા હૈ વહ છદ્મસ્થ જીવોં કે ઉપયોગ કી અપેક્ષા કથન સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ છદ્મસ્થોં કા ઉપયોગ એક મુહૂર્ત તક હી સ્થિર રહતા હૈ—ફિર ઉપયોગાન્તર હો જાતા હૈ ।

શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો ઇસ વાત કા પ્રતિપાદન કરતા હૈ કિ એક સમય મી પ્રમાદ મત કરો—“ સમયં ગોચમ ! મા પમાયણ ”—હે ગૌતમ એક સમય મી પ્રમાદી મત બન ।

હસલિયે સૂત્રકાર ઇસ વાત કા વિચાર કર સંબોધન કરતે હુણ કહતે હૈં કિ—હે પ્રાણિ ! કિસી વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદય સે હી તુજે ઇસ દુર્લભતમ

હાથથી આલ્યો ન બન્ય. પરીપહ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં જે સંયમમાર્ગથી વિચ્છલિત ન થાય તેનું નામ જ ધીર છે. સાચો ધીર વીર તે છે જે આ પવિત્ર સંયમનું આરાધન કરી પોતાના જન્મને સફળ બનાવે છે.

આ ઠેકાણે જે ‘ એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદ ન કરે ’ એવું કહ્યું છે તે છદ્મસ્થ જીવોના ઉપયોગની અપેક્ષા કથન સમજવું જોઈએ. કારણ કે છદ્મસ્થોનો ઉપયોગ એક મુહૂર્ત સુધી જ સ્થિર રહે છે પછી ઉપયોગાન્તર થઈ જાય છે. શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો આ વાતનું પ્રતિપાદન કરે છે કે એક સમય પણ પ્રમાદ ન કરે. “ સમયં ગોચમ ! મા પમાયણ ” હે ગૌતમ ! એક સમય પણ પ્રમાદી ન બન.

આના માટે સૂત્રકાર આ વાતનો વિચાર કરી સંબોધન કરી કહે છે કે—હે પ્રાણી ! કોઈ વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદયથી જ તને આ દુર્લભતમ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ

મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ હુઈ છે તો તેને સફળ બનાવવાના કાલે તે સંસારની અસારતાના વિચાર કર, તાકિ તેના મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને । સંસારની અસારતાના વિચારની તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરતા છે । જિન પદાર્થોના કાલે યહ રાત દિન એક કર ઢાલતા છે, ડન પદાર્થોના જબ સ્વરૂપ વિચાર કરતા છે તો નિયમતઃ ડસકા ચિત્તમાં ડનસે વિરક્તિભાવ જાગૃત હોતા છે, દૃષ્ટિકા ભેદની તો વિરક્તિભાવ છે । જિન પદાર્થોના પરિણમનમાં યહ અપના પરિણમન માનતા થા, તથા પ્રાપ્તિ ન હોને પર આકુલિત હો ડઠતા થા, ડન્હીં પદાર્થોમાં અસારતા યા તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત હોને પર ડનસે ડસકી દૃષ્ટિ બદલ જાતી છે ઓર ‘ભોગોના કા નિમિત્ત સે આત્મામાં કર્મના કા બન્ધ હોતા છે’ એસા સમજ કર ડનસે ડદાસીન વૃત્તિ ધારણ કર લેના છે, તબ જિસ પ્રકાર એક ઘાસના કા નિનસેમાં સાધારણ મનુષ્યના ભી ન રાગ હોતા છે ઓર ન દ્વેષ હોતા છે, ઠીક ડસી પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પરપદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ હોને સે ડસકી હો જાતી છે, તબ યહ પ્રત્યેક પદાર્થના કા પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપની રહતા છે, આકુલિત યા મોહી નહીં બનતા । યહી પરિસ્થિતિ ડસે સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપસે સ્થિર રહતી છે અતઃ યહ એક ક્ષણ ભી પ્રમાદી નહીં બનતા, ડસી વાતના કા રુલાશા-“ અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ ” ડસ વાક્ય સે સૂચ-

છે તો તેને સફળ બનાવવા માટે તું સંસારની અસારતાના વિચાર કર, જેથી તારું મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને. સંસારની અસારતાના વિચાર જ તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરે છે, જે પદાર્થો માટે તે રાત દિવસ એક કરી નાખે છે, ત્યારે તે પદાર્થોનું સ્વરૂપ વિચાર કરે છે તો નિયમતઃ તેના ચિત્તમાં તેનાથી વિરક્તિભાવ જાગૃત થાય છે. દૃષ્ટિનો ભેદ તે જ વિરક્તિભાવ છે. જે પદાર્થોના પરિણમનમાં તે પોતાનું પરિણમન માનતો હતો તથા પ્રાપ્તિ ન થવાથી આકુલિત બનતો હતો, તે પદાર્થોમાં અસારતા અગર તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત થવાથી તેનાથી તેની દૃષ્ટિ બદલી જાય છે, અને “ભોગોના નિમિત્તથી આત્મામાં કર્મનો બંધ થાય છે” એવું સમજીને તેનાથી ઉદાસીનવૃત્તિ ધારણ કરી લે છે, ત્યારે જે પ્રકારે એક ઘાસના તણબલા માટે સાધારણ મનુષ્યને પણ રાગ થતો નથી તેમ દ્વેષ થતો નથી, ઠીક તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પર પદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ થવાથી તેની થઈ જાય છે. ત્યારે તે પ્રત્યેક પદાર્થના પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ જ રહે છે, આકુલિત અગર મોહી બનતો નથી. આ પરિસ્થિતિ આ સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપથી સ્થિર રાખે છે, માટે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદી બનતો નથી. આ વાતનો

કારને કિયા હૈ । પ્રમાદી નહીં ઘનને મેં યહ હૈતુરુપસે કથન કિયા હૈ । કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓં કા નામ વય હૈ, સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-
 દેલો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોં મેં રાગી દ્રેષી યા મોહી હોતેર કૌમાર
 યૌવનાદિ કઈ પૂર્વ ભવોં કી અવસ્થાઈં વ્યતીત હો ચુકી હૈં, પરંતુ તૂને
 અપના કુછ બી સુધાર નહીં કિયા, અતઃ યહ વર્તમાન સમય જો તુજે મિલા
 હૈં હસે સફલ કરને કી કોશિશ કર, હસ ભવકી બી યે બાલયૌવનાદિ
 અવસ્થાઈં વ્યતીત હો જાનેવાલી હૈં—સ્થિર રહનેવાલી નહીં હૈં, હસ લિખે અબ
 તો હનસે અપના કુછ કલ્યાણ કરલે । માના કિ—બાલ અવસ્થા મેં અલ્પ-
 જ્ઞાન હોને સે આત્મા કલ્યાણમાર્ગ કે પથ પર અગ્રસર ન હો સકે તો બી
 યૌવન અવસ્થા મેં તો હો સકતા હૈ, પરંતુ તૂ તો ઉસે બી વ્યર્થ જો બૈઝતા
 હૈ, ક્યોં કિ સબ અવસ્થાઓં મેં યૌવન અવસ્થા કી હી મુખ્યતા હૈ, હસ
 અવસ્થા મેં હી યહ પ્રાણી સબ કુછ કરતા રહના હૈ, ધર્મ, અર્થ ઔર કામાદિ
 સાધન સબ હસી અવસ્થા મેં પ્રાપ્ત કિયે જાતે હૈં, હસી જ્યાલ સે ‘વય’
 હસ મેં ઉસકા સમાવેશ હોનેપર બી “યૌવન” હસ પદ કા પૃથક્
 રુપસે ગ્રહણ કિયા હૈ, અતઃ વહ યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત ન હો હસ
 પ્રકાર સે સંયમી પુરુષ કો વહ અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત હોકર

ખુલાસો—“અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ ” આ વાક્યથી સૂત્રકારે કહેલ છે. પ્રમાદી
 નહિ બનવામા આ હેતુરૂપથી કથન કરેલ છે કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓનાં
 નામ વય છે. સૂત્રકાર કહે છે કે—દ્રેષો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોમાં રાગી દ્રેષી
 અગર મોહી થતા કૌમાર—યૌવનાદિ અનેક પૂર્વભવોની અવસ્થાઓ વ્યતીત થયેલ
 છે. પરંતુ તેં પોતાનો કાંઈ પણ સુધાર કર્યો નહિ, માટે આ વર્તમાન સમય જે
 તને મળેલ છે તેને સફળ કરવાની કોશિશ કર. આ ભવની પણ એ બાલ યૌવનાદિ
 અવસ્થાઓ વ્યતીત થઈ જવાની છે—સ્થિર રહેવાવાળી નથી, માટે હવે તો તેનાથી
 પોતાનું કલ્યાણ કરી લ્યો. માનીલ્યો કે—બાલ અવસ્થામાં અલ્પજ્ઞાન હોવાથી આત્મા
 કલ્યાણ માર્ગમાં અગ્રેસર ન બની શકે તો પણ યૌવન અવસ્થામાં તો બની
 શકે છે, પરંતુ તું તો તેને પણ વ્યર્થ ખોઈ ખેસે છે, કારણ કે બધી અવસ્થા
 ઓમાં યૌવન અવસ્થાની જ મુખ્યતા છે. આ અવસ્થામાં જ પ્રાણી કાંઈકે પણ
 કરી શકે છે. ધર્મ, અર્થ અને કામાદિ સાધન બધું આ અવસ્થામાં પ્રાપ્ત થાય
 છે, એ ખ્યાલથી ‘વય’ તેમા તેનો સમાવેશ હોવા છતાં પણ “યૌવન” આ
 પદનું પૃથક્ રૂપથી ગ્રહણ કરેલ છે. માટે તે યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત
 ન થાય એ પ્રકારથી સંયમી પુરુષે તે અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત બની

‘સંયમાનુપાલનં શ્રેયઃ’ इति यो न जानाति पुत्रकलत्रासक्तः संसारासारसरणि-
मनुवर्तमानोऽनाराधितकल्याणमार्गोऽसंयमजीविताभिनिवेशवान् प्राणी बहुशः सत्त्वो-
पघातकारिणीं क्रियां करोतीति दर्शयति—“ जीविष ”—इत्यादि ॥

મૂલમ્—જીવિષ્ ઇહ જે પ્રમત્તા સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા
વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા ઉત્તાસદ્ધતા અકડં કરિસ્સામિત્તિ મળ્લમાળે
॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—જીવિત્ત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ સ હંતા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા
અપદ્રાવયિતા ઉત્ત્રાસકોઽકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સફલ વના લેની યાહિયે, ક્યોંકિ યહ અવસ્થા સદા સ્થાયી નહીં હૈ, સંધ્યા-
રાગ ઓર મેઘછાયાકી તરહ સ્વલ્પકાલ મેં હી દેખતે ૨ નષ્ટ હોજાનેવાલી
હૈ, અતઃ ઇસકી સફલતા કરને મેં હી બુદ્ધિમાની હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો વ્યક્તિ ઇસ બાત કો નહીં સમજતા હૈ કિ—‘સંયમ કા પાલન
કરના હિતાવહ હૈ’ વહ પુત્ર કલત્રાદિ પદાર્થોં મેં આસક્તચિત્ત હોકર ઇસ
અસાર સંસાર મેં હી ભ્રમણ કરતા રહતા હૈ, કલ્યાણમાર્ગ કા આરાધન
નહીં કરને કે કારણ અસંયમ જીવન મેં હી વહ અપના સમય વ્યતીત
કરતા હૈ, ઓર સંયમ જીવન ધારણ કરને કી બાત કહે જાને પર વહ
અપને દુરભિનિવેશ કે વશવર્તી હો ઉસ તર્ફ જરા બી ધ્યાન નહીં દેતા,
તથા એસે ૨ કાર્ય કરતા રહતા હૈ કિ જિનકે કરને મેં અનેક ત્રસ જીવોં
કા ઘાત હોતા હૈ ઇસી બાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

સફળ બનાવી લેવી જોઈએ, કારણ કે આ અવસ્થા સદા સ્થાયી નથી, સંધ્યાના
રાગ અને મેઘછાયા ની માફક સ્વલ્પકાળમાં જ દેખતાં-દેખતાં નષ્ટ થવાવાળી
છે, માટે તેની સફળતા કરવામાં જ બુદ્ધિમાની છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે વ્યક્તિ, ‘સંયમનું’ પાલન કરવું તે હિતાવહ છે’ તેમ સમજતો નથી તે
પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોમાં આસક્તચિત્ત થઈ આ અસાર સંસારમાં જ ભ્રમણ
કરતો રહે છે, કલ્યાણ માર્ગનું આરાધન નહિ કરવાના કારણે અસંયમ જીવનમાં
તે પોતાનો સમય વ્યતીત કરે છે. અને સંયમ જીવન ધારણ કરવાની વાત કહેવા
ઉપર તે દુરભિનિવેશવશવર્તી હોઈ તેના તરફ જરા પણ ધ્યાન આપતો નથી.
તથા એવું કાર્ય કરતો રહે છે કે જે કરવામાં અનેક ત્રસ જીવોનો ઘાત થાય
છે તે વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

ટીકા—“ જીવિત્ત્વે હહ યે પ્રમત્તાઃ ” ઇતિ, હહાસ્મિન્ જીવિતે પ્રત્યહં વ્યોઽતિ-
ક્રમેઽપ્યસંયમજીવિતે, પ્રમત્તાઃ=વિષયકષાયે પ્રમાદવન્તો ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ, પ્રમત્તો
હિ પ જીવનિકાયોપમર્દને પ્રવૃત્તોઽનેકાનર્થકરી વિવિધાં વિરુદ્ધાં સાવધાં ક્રિયાં
વિદધાતીત્યાહ—“ સ હન્તા ” ઇતિ સઃ=શબ્દાદિવિષયગૃહઃ પ્રમાદી હન્તા=પૃથિવ્ય-
પ્તેજોવાયુવનસ્પતિઞ્જસાનાં પ્રાણિનાં નાશકઃ ‘ છેત્તા ’ વનસ્પતિપ્રમૃતીનાં, કર્ણનાસિ-
કાદીનાં ચ, ‘ મેત્તા ’ પૃથિવ્યાદિનિકાયાનાં, ‘ લુમ્પયિતા ’ ગ્રન્થિભેદનાદિના,
‘ વિલુમ્પયિતા ’ ગ્રામઘાતાદિકર્મણા, ‘ અપદ્રાવયિતા ’ વિપશક્ષાદિપ્રયોગેણ મારકઃ,
‘ ઉત્ત્રાસકઃ ’ લોષ્ટપ્રક્ષેપાદિનોદ્વેજકો લોકાનાં ભવતીતિ સર્વત્ર યોજ્યમ્ ।

‘ જીવિત્ત્વે હહ જે ’ ઇત્યાદિ । હસ જીવન મેં જો પ્રમાદી બના હુઆ હૈ
વહ ‘ યહ કાર્ય મેરે પૂર્વજોને નહીં કિયા હૈ, હસે મૈં કરૂંગા ’ એસા સમજકર
ત્રસ સ્થાવર જીવોં કા ઘાતક હોતા હૈ, ઉનકા છેદન કરનેવાલા હોતા હૈ,
ઉનકા ભેદન કરનેવાલા હોતા હૈ, ઉનકા લુમ્પન કરનેવાલા હોતા હૈ,
વિલુમ્પન કરનેવાલા હોતા હૈ, અપદ્રાવક હોતા હૈ, ઉત્ત્રાસક હોતા હૈ ।

જીવન ઉનકા હી સફલ હૈ જો હસ અલ્પજીવન મેં ભી સંયમ દ્વારા
અપના આત્મહિત કર લેતે હૈં । ધન્ય હૈ ઉન મહાત્માઓં કો જો વિપુલ
વિભૂતિ કે ભોક્તા હોકર ભી ઉસે જીર્ણ તૃણ કે સમાન છોડ દેતે હૈં,
ઔર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રસર હો જાતે હૈં, ચક્રવર્તિયોં યા તીર્થ-
કરોં કે પાસ કિસ વસ્તુકી કમી થી, જિનકા વૈભવ અતુલ્ય થા, છહ
ખંડકી વિભૂતિકે જો ભોક્તા થે, દેવતા તથા હિન્દ્ર જિનકી સેવા મેં સદા

‘ જીવિત્ત્વે હહ જે ’ ઇત્યાદિ આ જીવનમાં જે પ્રમાદી બનેલ છે તે ‘ આ
કાર્ય મારા પૂર્વજોએ કરેલ નથી એ હું કરીશ ’ એવું સમજીને ત્રસ સ્થાવર
જીવોનો ઘાતક થાય છે, તેનું છેદન કરવાવાળો થાય છે, તેનું ભેદન કરવાવાળો
થાય છે, તેનું લુમ્પન કરવાવાળો થાય છે, વિલુમ્પક થાય છે, અપદ્રાવક થાય છે,
ઉત્ત્રાસક થાય છે.

જીવન તેનું જ સફળ છે જે આ અલ્પ જીવનમાં પણ સંયમદ્વારા પોતાનું
આત્મહિત કરી લે છે. ધન્ય છે તે મહાત્માઓને જે વિપુલ વિભૂતિના ભોક્તા
બનીને પણ તેને જીર્ણ તૃણની સમાન છોડી દે છે, અને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં
અગ્રસર થાય છે. ચક્રવર્તિઓ અગર તીર્થંકરોની પાસે કંઈ વસ્તુની ખોટ હતી,
જેનો વૈભવ અતુલ્ય હતો. છ ખંડની વિભૂતિના જે ભોક્તા હતા દેવતા અને
ઇન્દ્ર જેની સેવામાં સદા ઉપસ્થિત રહેતા હતા. એક દશુ માત્ર પણ જેણે સાંસ-

અત્ર મૂલે પૂર્વે ‘પ્રમત્તાઃ’ ઇતિ બહુવચનપ્રસંગે હનતેત્યાદૌ સર્વત્રૈકવચનં તુ જાત્યેકત્વવિવક્ષયા વિજ્ઞેયમ્ । અનેકાનર્થકરક્રિયાપ્રદર્શનં ચ સંસારાભિષ્વજ્જપરઃ કાલાકાલસમુત્થાયી સતતં પરહનનાદિરૂપાં નાનાવિધાં ક્રિયાં કરોતીત્યર્થબોધનાયેતિ તાત્પર્યમ્ ।

ઉપસ્થિત રહેતે થે । એક ક્ષણ માત્ર ખી જિન્હે સાંસારિક કષ્ટ કા અનુ-ભવ નહીં હોતા થા, વે ખી હસ સંયમ જીવન કી પ્રાપ્તિ કે લિયે ઉસે તૃણવત્ ત્યાગ કર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રગામી હુણ ।

યહ જાની હુઙ ચાત હૈ કિ-સબ ભરત ચક્રવર્તી જૈસે નહીં હૈ । જહાં આરંભ ઓર પરિગ્રહ કા નિવાસ હૈ, વહાં શાન્તિમય જીવન નહીં, નિરા-કુલતામય આત્મપરિણતિ નહીં, યત્નાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહીં, ઇન્દ્રિય-સંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જૈસી સુંદર વસ્તુકે વહાં પર દર્શન નહીં । રાતદિન આધિ-વ્યાધિ ઓર ઉપાધિ કે ભાર સે દબા હુઆ યહ પ્રાણી આત્મિક શાંતિકે સવ્વે નિર્મલ સ્રોત સે વચ્ચિત હી રહા કરતા હૈ-સિર્ફ ઘૂઠી કલ્પના સે હી અપને કો સુખી ઓર શાંતિ કા ઉપભોક્તા માનતા રહતા હૈ । જહાં જિતના અધિક આરંભ હોગા વહાં ઉતના હી અધિક જીવોં કા ઉપમર્દન હોગા । આરંભ પરિગ્રહ કે સદ્ભાવ મેં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હી નહીં હો સકતી । અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિકા નામ હી પ્રમત્ત દશા હૈ । હસ પ્રમત્ત દશાકી નિવૃત્તિ, સર્વચિરતિરૂપ સંયમ કે અનુષ્ઠાન વિના નહીં હો સકતી !, ક્યોં કિ સંયમકે અનુષ્ઠાન મેં ત્રસ ઓર સ્થાવર

રિક કષ્ટનો અનુભવ કરેલ નથી. તે પણ આ સંયમ જીવનની પ્રાપ્તિ માટે તેનો તૃણવત્ ત્યાગ કરી આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં અગ્રગામી થયા.

એ જાણેલી હકીકત છે બધા ભરત ચક્રવર્તી જેવા નથી. ન્યા આરંભ અને પરિગ્રહનો નિવાસ છે કે ત્યાં શાંતિમય જીવન નહિ. નિરાકુલતામય આત્મ-પરિણતિ નહિ યત્નાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહિ. ઇન્દ્રિયસંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જેવી સુંદર વસ્તુનું ન્યાં દર્શન નથી. રાત-દિવસ આધિ-વ્યાધિ અને ઉપાધિના ભારથી દબાએલો આ પ્રાણી આત્મિક શાંતિના સાચા નિર્મળ સ્રોતથી દૂર જ રહ્યા કરે છે. ફક્ત ઘૂઠી કલ્પનાથી જ પોતાને સુખી અને શાંતિનો ઉપભોક્તા માનતો રહે છે. ન્યા જેટલો અધિક આરંભ થશે ત્યાં તેટલું જ અધિક જીવોનું ઉપમર્દન થશે. આરંભ પરિગ્રહના સદ્ભાવમાં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ જ બની શકતી નથી, અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિનું નામ જ પ્રમત્તદશા છે. આ પ્રમત્તદશાની નિવૃત્તિ-સર્વચિરતિરૂપ સંયમના અનુષ્ઠાન વિના બની શકતી નથી, કારણ કે સંયમના અનુ-

જીવોંકે ઉપમર્દન કા ત્યાગ નવકોટિસે હો જાતા હૈ ।

इस संयमाराधन के लिये यह नहीं कहा जा सकता है कि-अभी समय नहीं है, समय आने पर संयमका आराधन कर लेंगे। वे तो एक बहाना लेकर संयमाराधन से विमुख हो रहे हैं, उनकी यह आत्माकी कमजोरी है, जब तक यह कमजोरी नहीं हटाई जावेगी, तब तक असंयम जीवन से छुटकारा भी नहीं मिल सकता है। संयमाराधन के सम्मुख होने के लिये आत्मकमजोरी को जानने की और जान कर उसे दूर करने की सख्त आवश्यकता है। हम जानते हैं कि हमारे घरमें सांप घुसा बैठा है परन्तु जब तक उसे हम नहीं निकाल देते तब तक हमारा जानना हमारे लिये किस मतलब का ।

जीवन अल्प है। स्त्री पुत्रादिकों की प्राप्ति इस जीवको अनन्त वार हो चुकी है। संयोग और वियोग, ये दो ही नाटक संसार के पर्दे पर होते रहते हैं। हमारे साथ जो जन्मे थे वे चले गये, हम भी कभी न कभी चले जावेंगे, परन्तु सर्वविरति-संयमाराधन का अवसर इस जीव को हाथ नहीं आया। यदि आया होता तो-जो हमारा भव भवमें संसार में चक्कर लग रहा है-वह कभी का बंद हो जाता, अतः जब जीवन

ખ્ધાનમાં ત્રસ અને સ્થાવર જીવોના ઉપમર્દનનો ત્યાગ નવ કોટિથી થઈ જાય છે.

આ સંયમારાધન માટે એમ કહેવામાં નથી આવતું કે હમણા સમય નથી પણ સમય આવશે ત્યારે સંયમનું આરાધન કરી લેશું. એ તો એક બહાનું માત્ર છે. જે સમયનું બહાનુ લઈ સંયમારાધનથી વિમુખ થઈ જાય છે તે તેના આત્માની કમજોરી છે. જ્યાંસુધી એ કમજોરી દૂર કરવામાં નહિ આવે ત્યાંસુધી અસંયમ જીવનથી છુટકારો પણ મળી શકતો નથી.

સંયમારાધનસન્મુખ હોવા માટે આત્મકમજોરી બાજીવાની અને બાજીને તેને દૂર કરવાની સખ્ત આવશ્યકતા છે અને બાજીએ છીએ કે અમારા ઘરમાં સાપ ઘુસેલો છે પરંતુ જ્યાં સુધી અમે તેને નહિ બહાર નિકાલીએ ત્યાં સુધી અમારું બાજુપણું નકામું છે.

જીવન અલ્પ છે. સ્ત્રી પુત્રાદિકોની પ્રાપ્તિ આ જીવને અનંતવાર થયેલ છે. સંયોગ અને વિયોગ, એ બે સંસારના પર્દા પર નાટક થતાં જ રહે છે. અમારી સાથે જે જન્મ્યા હતાં તે આલી ગયાં, અમે પણ ક્યારેક આત્મા બંધીશું, પરંતુ સર્વવિરતિ-સંયમારાધનનો અવસર આ જીવને હાથ નહિ આવ્યો. કદાચ આવ્યો હોત તો જે અમારા ભવોભવના સંસારમાં ચક્કર લાગી રહ્યા છે તે ક્યારના

ક્ષણભંગુર હૈ તો ઉસકે દ્વારા સંયમકી જિતની ખી આરાધના હો સકે શુદ્ધ મન, વચન ઓર કાચ સે કર લેની ચાહિયે, હસી મેં બુદ્ધિમાની હૈ । શુદ્ધ આરાધિત થોડા ખી સંયમ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જેરા કા કારણ માના ગયા હૈ । જિસ પ્રકાર સંતસ લોહેકા ગોલા પાનીકો ચારોં ઓર સે ળીંચતા હૈ, ઉસી તરહ અસંયમ જીવન ખી વિષયકષાયોં કે દ્વારા ચારોં ઓર સે કાર્મણવર્ગનાઓંકો ળીંચકર ઉન્હેં કર્મરૂપ સે પરિણત કર ઉનસે લિસ હોતા રહતા હૈ । અસંયમી કાર્મણવર્ગનાઓંકો ળેંચ ઉન્હેં કર્મરૂપ મેં ક્યોં પરિણમાતા હૈ ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

‘ જીવિણ હહ જે પમત્તા સે હંતા ’ હત્યાદિ ।

નિરન્તર આયુષ વ્યતીત હો રહી હૈ—અંજલિ મેં રલ્લે હુણ જલ કી તરહ ક્ષણ ૨ મેં આયુકર્મ કી સ્થિતિ ઘટ રહી હૈ—ફિર ખી પ્રાણી અસંયમ-જીવનવાલા હી બના હુઆ હૈ, વિષય ઓર કષાયોં મેં લવલીન હો રહા હૈ, રાતદિન વિકથા ઓર કષાય ંવં પાંચહન્દ્રિયોં કે વિષય સેવન કરને મેં હી જુટા હુઆ હૈ । પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા હોતા હૈ—સકષાય યોગવાલા હોને સે હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દન કરને મેં હોતી રહતી હૈ । ઉસે હસ બાતકા જરા ખી વિચાર નહીં આતા કિ મેરી

પણ બંધ થઈ જાત. માટે જ્યારે જીવન ક્ષણભંગુર છે તો તે દ્વારા સંયમની જેટલી પણ આરાધના થઈ શકે તેટલી શુદ્ધ મન-વચન-કાયાથી કરી લેવી જોઈએ. તેમા જ બુદ્ધિમાની છે. શુદ્ધ આરાધિત થોડો પણ સંયમ અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ બનાય છે. જે પ્રકારે સંતસ લોહનો ગોળો ચારે બાજુથી પાણીને ખેંચે છે, તે પ્રકારે અસંયમ જીવન પણ વિષય કષાયોદ્વારા ચારે તરફથી કામણ વર્ગણુઓને ખેંચીને તેને કર્મરૂપ પરિણમન કરી તેનાથી લિસ થઈ જાય છે. અસંયમી કામણ વર્ગણુઓને ખેંચી તેને કર્મરૂપ શા માટે પરિણમાવે છે ? તેનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે—‘ જીવિણ હહ જે પમત્તા સે હંતા ’ ઇત્યાદિ

નિરંતર આયુષ્ય વ્યતીત થઈ રહું છે, અંજળીમાં રાખેલા પાણી માફક કણ કણમાં આયુકર્મની સ્થિતિ ઘટી રહી છે તો પણ પ્રાણી અસંયમ જીવનવાળા જ બની રહે છે. વિષય અને કષાયોમાં જ લવલીન થઈ રહે છે. રાતદિન વિકથા અને કષાય અને પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય સેવન કરવામાં જ મગ્યા રહે છે. પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા થાય છે સકષાય યોગવાલા હોવાથી જ તેની પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાયનું ઉપમર્દન કરવામાં જ બની રહે છે. તેને આ વાતનો જરા પણ વિચાર આવતો નથી કે—

હસ પ્રવૃત્તિ સે ત્રસ અથવા સ્થાવર જીવોંકા ઘાત હો રહા હૈ । અનેક અનર્થકારી સાવચ ક્રિયાઓં કો વહ કરતે હુઅ નહીં હિચકતા હૈ । હસ લિયે વહ પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોં મેં શુદ્ધ બનકર ઁન-ત્રસ સ્થાવર જીવોંકા હનન કરનેવાલા હોતા હૈ । જહાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હૈ વહાં પ્રમત્તયોગ હોને સે હિંસા હોતી હી હૈ, હસલિયે પ્રમાદી વ્યક્તિ ‘હંતા’ કહા જાતા હૈ । જો રાતદિન અપની પ્રવૃત્તિ કો કુત્સિત કરનેવાલી ક્રિયાઓં કે સેવન મેં લગાતા રહતા હૈ વહ ઁક પ્રકાર સે ઁસ તર્ફ સે હતના વિવેક-શૂન્ય હો જાતા હૈ કિ ફિર ઁસે ઁસ કામ સે જરા ભી ઘૃણા યા સંકોચ નહીં હોતા, દયા જૈસી વસ્તુ ઁસકે હૃદય મેં દેખને કો હી નહીં મિલતી । જિસ પ્રકાર ઠક ૨ શબ્દ હોતે રહને પર ભી ઠઠેરે કા કવૃતર નિર્ભય હોકર અપને સ્થાન પર બૈઠા રહતા હૈ અર્થાત્ ઁસ જગહ ઁસે બૈઠને મેં જરા ભી સંકોચ નહીં હોતા હૈ, ઁસી પ્રકાર જો વાર વાર હિંસા-ઝૂઠ-આદિ પાંચ આશ્રવોં કે સેવન કરને મેં તત્પર રહતે હૈં વે હતને દયારહિત ઁર ઁસ કાર્ય કે કરને મેં હતને વિવેકશૂન્ય બન જાતે હૈં કિ ઁન કામોં કો કરતે હુઅ જરા ભી નહીં લજાતે, યા ઁનકે કિયે વિના ઁન્હેં ચૈન નહીં પડતા । યદિ વે બાહર મેં ઁસ તરહ કી પ્રવૃત્તિ ન ભી કરેં તો ભી ઁનકી માનસિક પ્રવૃત્તિ

મારી આ પ્રવૃત્તિથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોના ઘાત થઈ રહ્યો છે. અનેક અનર્થ-કારી પાપમય ક્રિયાઓને કરતાં જરા પણ થડકતો નથી. માટે તે પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોમા શુદ્ધ બનીને આ ત્રસ સ્થાવર જીવોના ઘાત કરવાવાળો બને છે, જ્યાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ છે ત્યા પ્રમત્ત યોગ હોવાથી હિંસા થયા કરે છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ ‘હંતા’ કહેવાય છે જે રાતદિવસ પોતાની પ્રવૃત્તિને કુત્સિત કરવાવાળી ક્રિયાઓના સેવનમા લગાડતો રહે છે. તે એક પ્રકારે એક તરફથી એવો વિવેકશૂન્ય થઈ જાય છે કે તેને તે કામથી જરા પણ ઘૃણા અગર સંકોચ થતો નથી. દયા જેવી વસ્તુ તેના હૃદયમાં દેખવામાં આવતી નથી. જે પ્રકારે ઠક ઠક શબ્દ થવા છતાં પણ કસારાની જગ્યા પાસેનું કબુતર નિર્ભય બની પોતાના સ્થાન પર જ બેસી જ રહે છે અર્થાત્ તે જગ્યા ઉપર બેસવામા તેને જરા પણ સંકોચ થતો નથી, તે પ્રકારે જે વારંવાર હિંમા, ભુલ, આદિ પાંચ આશ્રવોનું સેવન કરવામાં તત્પર રહે છે તે એટલા દયારહિત અને તે કાર્ય કરવામાં વિવેકશૂન્ય બની જાય છે કે તેવા કામો કરવામાં તે જરા પણ લાજ ભર્યાદા રાખતો નથી, અગર તેવા કામ કર્યા વિના તેને ચેન પડતું નથી. કદાચ તે બહારમાં તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ન કરે તો પણ માનસિક પ્રવૃત્તિ તેની સુતાં ઉઠતાં બેસતાં

સોતે ઉઠતે બેઠતે ઉસ તરફ સચેત બની રહતી હૈ । શાસ્ત્રકારોં ને હિંસા કે મુખ્ય દો ભેદ કિયે હૈ—૧ દ્રવ્યહિંસા ઓર ૨ ભાવહિંસા । પ્રાણિયોં કે અપનેર યોગ્ય પ્રાણોં કા વિયોગ કરના દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અન્તઃકરણકી કલુષિત વૃત્તિ કરના ભાવહિંસા હૈ । પર્યાપ્તાવસ્થા મેં એકેન્દ્રિય જીવોં કે ૪ પ્રાણ હોતે હૈ, દ્વીન્દ્રિય જીવોં કે ૬, તેન્દ્રિય જીવોં કે ૭, ચતુરિન્દ્રિય જીવોં કે ૮, અસંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય જીવોં કે ૯ ઓર સંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય જીવોં કે ૧૦ । એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ ઓર બાદર કે ભેદ સે દો પ્રકાર કે હોતે હૈ । સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જો ઇસ લોક મેં સર્વત્ર વ્યાપ્ત હૈં ઉનકા કિસી મી નિમિત્ત સે ઘાત નહીં હોતા હૈ, બાદર એકેન્દ્રિય જીવોંકા હી ઘાત હોતા હૈ । અતઃ પ્રમાદી વ્યક્તિ અપની પ્રવૃત્તિ સે પૃથિવી-કાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક ંવં વનસ્પતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોં કા તથા દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કા ઘાતક માના ગયા હૈ । રાગાદિક ભાવોં કા ઉદ્રેક પ્રત્યેક અવસ્થામેં રહતા હૈ, ઇનકે વિના કોઈ મી પ્રાણી જીવોં કે ઘાત કરને મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોતા, અતઃ ઇનકી ઉદ્રેકતા હી ભાવહિંસા હૈ । અથવા રાગાદિકોં કી ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા હૈ, અતઃ પ્રમાદી વ્યક્તિ બાહરમેં હિંસાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્ત ન મી હો તો મી વહ

તે તરફ જ સચેત બની રહે છે. શાસ્ત્રકારોએ હિંસાના મુખ્ય બે ભેદ કહ્યાં છે. ૧ દ્રવ્યહિંસા, અને ૨ ભાવહિંસા. પ્રાણીઓના પોતપોતાના યોગ્ય પ્રાણોના વિયોગ કરવું તે દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અન્તઃકરણની કલુષિત વૃત્તિ કરવી તે ભાવહિંસા છે. પર્યાપ્તાવસ્થામા એકેન્દ્રિય જીવોને ૪ પ્રાણ હોય છે, બેઈન્દ્રિય જીવોને ૬, તેન્દ્રિય જીવોને ૭, ચોરેન્દ્રિય જીવોને ૮, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૯ અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૧૦

એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ અને બાહરના ભેદથી બે પ્રકારના હોય છે, સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જે આ લોકમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેનો કોઈ પણ નિમિત્તથી ઘાત થતો નથી. બાહર એકેન્દ્રિય જીવોનો ઘાત થાય છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ પોતાની પ્રવૃત્તિથી પૃથિવીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોનો તથા બેઈન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોનો ઘાતક માનેલ છે. રાગાદિક ભાવોનો ઉદ્રેક પ્રત્યેક અવસ્થામાં રહે છે. તેના વિના કોઈ પણ પ્રાણી જીવોનો ઘાત કરવામાં પ્રવૃત્ત નથી થતો. માટે તેની ઉદ્રેકતા જ ભાવહિંસા છે. અને રાગાદિકોની ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા છે માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ બહારમાં હિંસાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત ન હોય તો પણ તે પ્રમત્ત હોવાથી હિંસક માનવામાં

કિમર્થં ચૈતાન્ વ્યાપારાન્ વિદ્યાતીત્યાહ—‘અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ’
 इति, यदन्यैः पूर्वैः सद्भिर्न कृतं=नानुष्ठितं तत्सर्वं करिष्यामि=विधास्यामि, इति मन्य-
 मानः=स्वीकुर्वाणः सन् हननादिकर्मकर्ता भवति । पुत्रकलत्रासक्तोऽप्राप्तविविध-
 विभवोऽनर्थकरं कर्म करिष्यामीति निश्चित्य हननादौ प्रवर्तते ।

પ્રમત્ત હોને સે હિંસક માના જાતા હૈ। इसीलिये प्रमादी को शास्त्रकारों ने
 हिंसक कहा है। प्रमादी जिस प्रकार पांचइन्द्रियों के विषय में लोलुपी बन
 कर त्रस स्थावरों का घात करता है उसी प्रकार वह उनका छेदन भेदन
 भी करता है। फिर वह लुम्पयिता—किसी की गांठ काटना, खिसा कत-
 रना आदि कार्य करता है, विलुम्पयिता—ग्रामघातादि कार्य करता है,
 अपद्रावयिता—विष शस्त्रादि के प्रयोग से किसीको मारता है, उत्त्रास-
 यिता—कंकर पत्थर फेंकर किसीको डराता है। अनेक अनर्थों को करनेवाली
 हनन-छेदन-भेदन आदि क्रियाओं का जो यहां पर प्रदर्शन किया है
 उसका अभिप्राय सिर्फ इतना ही है कि जो संसार में ही फँसा है वह
 कालाकाल के ज्ञान से रहित होकर पर जीवों के विषय में अनेक अनर्थों को
 पैदा करनेवाली अनेकप्रकार की घातादिक क्रियाओं को निरन्तर करता
 रहता है। शंका—अनर्थकारी क्रियाओं को यह प्राणी क्यों करता है ?

उत्तर—“ अकृतं करिष्यामીति मन्यमानः ” अर्थात्—‘ जो पहिले
 अन्य पूर्वजों ने कार्य नहीं किये हैं वे सब मैं करूँगा’ इस अभिप्राय के
 वशवर्ती होकर ही यह प्राणी उन अनर्थोत्पादक क्रियाओं के करने में

આવે છે. માટે પ્રમાદીને શાસ્ત્રકારોએ હિંસક કહ્યો છે, પ્રમાદી જે પ્રકારે પાંચ
 ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોલુપી બનીને ત્રસ સ્થાવરોનો ઘાત કરે છે તે પ્રકારે તે
 તેનું છેદન ભેદન પણ કરે છે, પછી તે લુમ્પયિતા—કોઈની ગાંઠ કાપવી, ખિસ્સુ
 કાતરવું, આદિ કાર્ય કરે છે. વિલુમ્પયિતા—ગ્રામઘાતાદિ કાર્ય કરે છે. અપદ્રાવયિતા
 —વિષ શસ્ત્રાદિઓના પ્રયોગથી કોઈને મારે છે. ઉત્ત્રાસયિતા—કંકર પથ્થર ફેંકીને
 કોઈને ડરાવે છે, અનેક અનર્થોને કરવાવાળી, હુણવું, છેદવું, ભેદવું, આદિ ક્રિયા-
 ઓનું જે આ ઠેકાણે પ્રદર્શન કર્યું છે, તેના અભિપ્રાય રૂપે એટલો જ છે કે
 જે સંસારમાં જ રહેલા છે તે કાલાકાલના જ્ઞાનથી રહિત બની પર છુવો
 વિષે અનેક અનર્થોને પેદા કરવાવાળી અનેક પ્રકારની ઘાતાદિક ક્રિયાઓને નિરં-
 તર કરતા રહે છે. શંકા—અનર્થકારી ક્રિયાઓને આ પ્રાણી કેમ કરે છે ?
 ઉત્તર—“ અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ”

અર્થાત્ ‘જે પહેલાનાં અન્ય પૂર્વજોએ કાર્ય નથી કર્યું’ તે બધું હું કરીશ.’
 આવા અભિપ્રાયને વશવર્તી બનીને તે પ્રાણી તેવા અનર્થોત્પાદક ક્રિયાઓને કર-

યદ્વા-યદન્યૈઃ કૈરપ્યાશ્ચર્યગૃહોદ્યાનાદિકં પૂર્વં ન કૃતં તત્સર્વં કરિષ્યામીતિ મન્ય-
માનઃ પ્રયતત્ત્વેતિ તાત્પર્યમ્ । સતતં વ્યગ્રો ભૂત્વા નાનાવિધશસ્ત્રોપઘાતપ્રવૃત્તો
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । યહ સંસારમેં ફંસા હૈ-સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બના હુઆ
હૈ । અનેકે નિર્વાહ કે લિયે સર્વપ્રથમ દ્રવ્યકી હસે જરૂરત હોતી હૈ પરન્તુ
નિર્વાહ લાયક સાધનોંકો કરતે હુએ ભી મનમાના દ્રવ્ય હસે પ્રાપ્ત નહીં
હોતા હૈ, હસલિયે હસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે યહ ન્યાય અન્યાય માર્ગકા
વિચાર ન કર યેન કેન પ્રકારેણ દ્રવ્ય કે સંગ્રહકે લિયે હનનાદિ ક્રિયાઓં
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

અથવા—“અકૃતં કરિષ્યામિ” હસકા યહ ભી અર્થ હોતા હૈ કિ
‘જો મકાન વગૈરહ, અથવા વગીચા વગૈરહ હમારે પૂર્વજોને નહીં કરવાયે
અન્હેં અવ મેં કરવાઝંગા’ એસા સોચ કર જવ વહ અનેકી તૈયારી કરાને
મેં પ્રયત્નશીલ હોતા હૈ હસ સમય જિસ સ્થાન પર હસે વગીચા વગૈરહ
કી તૈયારી કરાની હૈ હસ સ્થાન કી વહ સફાઈ કરાને મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ।
યદિ હસ સ્થાન પર કોઈ ઝાડી વગૈરહ ઁડી હોતી હૈ તો યહ હસે કટ-
વાતા હૈ, અથવા જો શક્ય હોતા હૈ તો હસે સ્વયં ભી કાટતા હૈ । હસ
પ્રકાર યહ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બનકર અકૃત કે કરાને
મેં લગ જાતા હૈ, અતઃ હસ સ્થિતિ મેં વહ ષડ્જીવનિકાય કા ઘાતક
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

વામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. તે સંસારમાં ફસેલા છે. સ્ત્રી-પુત્રાદિકોમાં ગૃહ્ બનેલા છે.
તેના નિર્વાહ માટે સર્વ પ્રથમ દ્રવ્યની તેને જરૂરત પડે છે, પરંતુ નિર્વાહલાયક
સાધનોને કરતાં છતાં પણ મનમાન્યું દ્રવ્ય તેને પ્રાપ્ત થતું નથી માટે તેની
પ્રાપ્તિ માટે તે ન્યાય અન્યાય માર્ગનો પણ વિચાર ન કરીને યેન કેન પ્રકારેણ
દ્રવ્યના સંગ્રહ માટે હણવાદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.

અથવા—“અકૃતં કરિષ્યામિ” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—‘જે મકાન
વિગેરે અથવા બગીચા વિગેરે અમારા પૂર્વજોએ નહિ બનાવ્યા તે હું બનાવીશ’
એવો વિચાર કરીને બ્યારે તે તેની તૈયારી કરાવવામાં પ્રયત્નશીલ થાય છે તે
વખતે જે સ્થાન પર તેને બગીચા વિગેરેની તૈયારી કરાવવાની છે તે સ્થાનની
તે સફાઈ કરાવવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે કદાચ તેવા સ્થાનપર કોઈ ઝાડી વિગેરે આડું
બડું હોય તો તેને તે કપાવી નાંખે છે, અથવા જે શક્ય હોય છે તેને પોતે
કાપે છે. આ પ્રકાર આ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોમાં ગૃહ્ બની અકૃત કરવામાં
લાગી બંધ છે માટે આ સ્થિતિમાં તે ષડ્જીવનિકાયનો ઘાતક થાય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

एवं हननादि प्रकारानुचितव्यापारकरणोद्यतो द्वीपान्तरगमनेऽपि समग्रकार्य-
साधनभूतप्रभूतधनालाभाद्विवर्णवेताः किं करोतीति दर्शयति—“जेहिं वे”—त्यादि॥

मूलम्—जेहिं वा सार्द्धं संवसइ ते वा णं एगया नियगा
ते पुर्विं पोसेंति, सो वा ते नियगे पच्छा पोसिज्जा, नालं ते
तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमं पि तेसिं नालं ताणाए वा
सरणाए वा ॥ सू० ६ ॥

छाया—यैर्वा सार्द्धं संवसति, ते वा खलु एकदा निजकास्तं पूर्वं पोषयन्ति,
स वा तान् निजकान् पश्चात्पोषयति नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि
तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘यैर्वेति’ यैः=मातापित्रादिभिः सार्द्धं संवसति=प्रेम्णा निवसति ते खलु=
निश्चयेन, एकदा=बाल्ये वयसि निजकाः=स्वकीयाः मातापित्रादयः, तं=पुत्रादिकं
पूर्वं=बाल्यावस्थायां पोषयन्ति, वा-शब्दोऽप्यर्थे स वा=सोऽपि तान्=मातापित्रादीन्,
निजकान्=आत्मीयान्, पश्चात्=वृद्धावस्थायां धनादिना पोषयति किन्तु ते=माता-
पित्रादयः तव नालं त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय
वा, ऐहिक-पारत्रिक-दुःखोदयेषु न कोऽपि पोष्यः पोषको वा कस्यापि त्राण
शरणभूतो भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

इस तरह हननादि प्रकारवाले अनुचित व्यापारों के करने में उद्यत
यह प्राणी धन कमाने की इच्छा से अन्य दूसरे द्वीपों में भी जाता है, परन्तु
यदि वहां पर भी समग्र कार्यका साधनभूत प्रभूत धन अर्थात् यथेच्छ
धनका लाभ जब इसे नहीं होता है तब यह अतिशय खेदविन्न होता है
और इस परिस्थिति में यह क्या करता है सो प्रकट करते हैं—

‘जेहिं वा सार्द्धं संवसइ’ इत्यादि । अर्थ स्पष्ट है ।

આવી રીતે હણવાના પ્રકારવાળા અનુચિત વ્યાપારો કરવામાં પ્રયત્નશીલ
તે પ્રાણી ધન કમાવાની ઇચ્છાથી બીજા અન્ય દ્વીપોમાં પણ જાય છે, પરંતુ કદાચ
ત્યાં પણ સમગ્ર કાર્યનું સાધનભૂત પ્રભૂત ધન અર્થાત્ યથેચ્છ ધનનો લાભ ન્યારે
ત્યાં પણ મળતો નથી તો તે ઘણો બિચાર થઈ જાય છે, અને આ પરિસ્થિતિમાં
તે શું કરે છે તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે:—‘ જેહિં વા સાર્દ્ધ સંવસઈ ’ ઇત્યાદિ
અર્થ ખુલ્લો છે.

વિશેષાર્થ—જિન માતાપિતા આદિકોં કે સાથ યહ રહતા હૈ વે इसकी बाल्य अवस्था में सर्वप्रथम सेवा-चाकरी करते हैं, इसकी सहायता करते हैं, इसका पालन पोषण करते हैं। वह भी जब युवावस्था आदि से ममृद्ध हो जाता है तब इन अपने मातापिता आदिकी वृद्धावस्था में धन आदि से सहायता, सेवा, या इनका पालन पोषण करता है। इस प्रकार पारस्परिक पोष्यपोषक भाव होने पर भी यह उनकी रक्षा के लिये, अथवा उनको शरण देने के लिये समर्थ नहीं होता है, वे भी इसकी रक्षा के लिये, अथवा इसके शरण देने के लिये समर्थ नहीं होते हैं।

સંસાર કી યહ રીતિ હૈ—પ્રત્યેક પ્રાણી અપને ૨ કુટુંબિયોં કી—સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કી મોહાધીન હો હરતરહ સે સેવા શુશ્રૂષા સંરક્ષણ પાલન પોષણ કિયા કરતા હૈ । યહ વૃત્તિ સિર્ફ મનુષ્યોં મેં હી નહીં હૈ, પશુ-પક્ષિયોં તક મેં ભી ઇસી પ્રકાર કી પાઈ જાતી હૈ । વે ભી ઇષ્ટ કે સંયોગ મેં હર્ષાંતે હૈ ઓર અનેકે વિયોગ મેં દુઃખી હોતે હૈ । જૈસે ચિડિયા ઘોસલે મેં રહતી હૈ ઓર વચ્ચાવચ્ચી દેતી હૈ, જબ વાહર સે રાના લેકર આતી હૈ તબ ઉસકે છોટે ૨ વચ્ચે ઉસે દેખતે હી ચૈ—ચૈ કર વાહર નિકલતે હૈ ઓર ઉસકે આસ પાસ ફુદક ૨ કર ઉસકી ઓર અપની ૨ ચંચુ ખોલકર

વિશેષાર્થ—જે માતાપિતા આદિની સાથે તે રહે છે તે તેની બાલ્ય અવસ્થામાં સર્વ પ્રથમ સેવા ચાકરી કરે છે તેની સહાયતા કરે છે, તેનું પાલન-પોષણ કરે છે, તે પણ ન્યારે યુવાવસ્થા આદિથી સમૃદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે પોતાના માતાપિતા આદિની વૃદ્ધાવસ્થામાં ધન આદિથી સહાયતા, સેવા, અને તેમનું પાલન-પોષણ કરે છે. આ પ્રકારે પારસ્પરિક પોષ્ય-પોષક ભાવ હોવા છતાં પણ તે તેમની રક્ષા માટે કે શરણ દેવામાં સમર્થ થતો નથી, તેમજ તેઓ પણ તેની રક્ષા અને શરણ દેવામાં અસમર્થ બને છે.

સંસારની એ રીતિ છે કે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતાપોતાના કુટુંબીઓની સ્ત્રી-પુત્રાદિકોની મોહાધીન થઈ દરેક પ્રકારથી સેવા, શુશ્રૂષા, સંરક્ષણ પાલન પોષણ કર્યા કરે છે. આવી વૃત્તિ ઈક્ષત મનુષ્યોમાં જ છે તેમ નહિ પણ પશુપક્ષીઓમાં પણ છે તેમ દેખવામાં આવે છે તેઓ પણ ઇષ્ટ સંયોગમાં હર્ષ પામે છે અને તેના વિયોગમાં દુઃખી થાય છે. જેમ ચકલીઓ માળામાં રહે છે અને બચ્ચાં બચ્ચી દે છે, અને ન્યારે બહારથી ખાવાનું લઈ આવે છે ત્યારે તેના નાના નાનાં બચ્ચાં તેને દેખતાં જ ચૈ—ચૈ કરી બહાર નીકળે છે અને તેની આસપાસ ફુદવા માટે છે અને તેની તન્દ્ર પોતાપોતાની ચાચ ખોલીને બેસી જાય છે. તે પોતાની ચાચથી

યથા સ્વજનાદિર્ન તવ ત્રાણાય પ્રભવતિ તથૈવ કષ્ટસમ્પાદિતં સુરક્ષિતં ધનમપિ ન ત્રાણાયેતિ દર્શયતિ—“ઉવાઙ્યે”—ત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉવાઙ્યસેસેણ વા સંનિહિસંનિચઓ કિજ્જઇ ઇહ-મેગેસિં અસંજયાણ ભોયણાણ, તઓ સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્જંતિ, જેહિં વા સહ્ધિં સંવસઇ તે વા ણં ઇગયા નિયગા તં પુવ્વિં પરિહરંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિહરિજ્જા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—ઉપાદિતશેષેણ વા સન્નિધિસંનિચયઃ ક્રિયતે, ઇહૈકેપામસંયતાનાં ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પન્નન્તે, યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તે વા खलु एकदा निजकास्तं पूर्वं परिहरन्ति, स वा तान् निजकान् पश्चात्परिहरति, नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा ॥ सू० ७ ॥

વૈઠ જાતે હૈં । વહ અપની ચંચુ સે ઇનકી ચંચુ મેં કુછ खाना धर देती है, वे खा जाते हैं, बड़े खुश होते हैं ।

જવ પશુપક્ષિયોં કી યહ પરિસ્થિતિ હૈ તો ફિર મનુષ્ય જો સમ-હદાર પ્રાણી માના ગયા હૈ ઉસકી અપને ઇષ્ટ વંધુ જનોં કે—પુત્રાદિકોં કે પાલન પોષણ કરને કી વૃત્તિ સવસે વઢ કર હો ઇસમેં કોઈ આશ્ચર્ય જૈસી વાત નહીં, કિન્તુ ઇહલોક પરલોક સમ્બન્ધી દુઃખોં કા ઉદય હોને પર નવે તેરે ત્રાણ ઔર શરણ હોતે હૈ ઔર ન તૂં ઉનકેલિયે ત્રાણ ઔર શરણ હો સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

તેની આંત્રમાં કાઇક આવાનું ધરે છે તે તેઓ ખાઈ જાય છે અને ઘણું ખુશ થાય છે.

ન્યારે પશુ પક્ષિઓની આ પરિસ્થિતિ છે તો પછી મનુષ્ય તો સમજદાર વ્યક્તિ માનવામાં આવે છે તેને પોતાના ઇષ્ટ બધુ જનોને, પુત્રાદિકોને પાળવામાં વૃત્તિ બધાથી વધારે હોઇ શકે તેમાં કોઈ આશ્ચર્યની વાત નથી. પરંતુ આલોક પરલોક સંબંધી દુઃખોનો ઉદય થવાથી નથી તું તેમનો ત્રાણ અને શરણ દેવામાં સમર્થ થતો, અને નથી તેઓ તને ત્રાણ અને શરણ દેવામાં સમર્થ થતાં ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘ઉપાદિતે’—‘ત્યાદિ’ રૂપસંસારે એકેપાં=કૃતિપયાનામ્, અસંયતાનાં=ગૃહસ્થાનાં સન્નિધિસંનિચયઃ=સન્નિધેર્વિંધમાનધનસ્ય સંનિચયઃ=અકત્રીકરણં, યદ્વા—સંનિચયો=વાહુલ્યમ્, ઉપભોગ્યધનસમૂહ इति યાવત્, ઉપાદિતશેષેણ=ઉપાદિતસ્ય=ઉપશુક્તસ્ય શેષેણ=અવશિષ્ટભાગેન ભોજનાય=ભોજનમુપભોગસ્તસ્મૈ=તદર્થ ક્રિયતે । યદ્વા—અસંયતાના-મિત્યત્રાર્પત્વાત્તૃતીયાર્થે ષષ્ઠી, તેન ચોપાદિતશેષેણ સદ્ગ્રહલિપ્તુભિઃ કૈરપ્યસંયતૈર્નાનાવિધસાવદ્યક્રિયોપાર્જિતમનર્થજનકં ધનં સમ્પાદ્ય ભવિષ્યત્કાલે કુટુમ્બપોષણાય સ્વોપભોગાય વા ક્રિયત इत्यર્થઃ । સંસારમૂર્ચ્છિતો ગૃહસ્થો ભવિષ્યત્કાલે ઉપભોગાર્થં ધનસંચયં કરોતીતિ ભાવઃ । કિન્તુ સોઽપિ ધનસંચયો ન તસ્યોપભોગાયેત્યાહ—‘તતઃ’ इत्याદિના, તતો=ધનસંચયાનન્તરમુપભોગકાલ इति યાવત્, તસ્યોપભોક્તુરેકદા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવનિમિત્તપ્રકટવેદનીયકર્મોદયે ‘રોગ-સમુત્પાદાઃ’ રોગાણાં=કાસશ્વાસરાજયક્ષ્મકુષ્ઠાર્શાદીનાં સમુત્પાદાઃ=પ્રાદુર્ભાવાઃ

૧ ઉપપૂર્વકાત્ ‘અદ્’-ઘાતોઃ સ્વાર્થેણિચિત્તઃ ।

જિસ પ્રકાર સ્વજન વગેરહુ ઇસ જીવકે રક્ષક નહીં હો સકતે હૈં ઉસી પ્રકાર કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન મી ઇસકા રક્ષક નહીં હોતા હૈં ઇસી વાત કો સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘ઉવાહ્યસેસેણ વા’ इत्यादि । ઇસ સંસાર મેં કિતનેક અસંયત સંસારી જીવ અપને ઉપભોગ કે લિયે નાના પ્રકાર કી સાવધ ક્રિયાઓં દ્વારા અનર્થકારી ધનકા ઉપાર્જન કર રાને પીને સે અવશિષ્ટ ધનકા સંચય કરતે હૈં ઓર ઉસકા ઉપભોગ કરતે સમય ઇચ્છાનુકૂલ આહાર વિહાર કરતે હૈં, પરન્તુ જબ અસાતા કા ઉદય આતા હૈં તબ ઉનકે શરીર મેં કાસ-શ્વાસ આદિ અનેક પ્રકારકે રોગ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । ઇસ અવસ્થા મેં ઇસકે નેત્ર ઓર નાસિકા સે પાની ગિરને લગતા હૈં, કુષ્ઠ

જે પ્રકારે સ્વજન વિગેરે આ જીવના રક્ષક નથી બની શકતા તે પ્રકારે કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન પણ તેનું રક્ષક બનતું નથી આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—

‘ઉવાહ્યસેસેણ વા’ इत्यादि—આ સંસારમા કેટલાક અસંયત સંસારી જીવ પોતાના ઉપભોગ માટે નાના પ્રકારની સાવધ ક્રિયાઓદ્વારા અનર્થકારી ધનનું ઉપાર્જન કરી ખાવા-પીવાથી અવશિષ્ટ ધનનો સંચય કરે છે, અને તેનો ઉપભોગ કરી તે સમય ઇચ્છાનુકૂળ આહાર વિહાર કરે છે, પરંતુ જ્યારે અસાતાનો ઉદય આવે છે ત્યારે તેના શરીરમા કાસ શ્વાસ આદિ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે, આ અવસ્થામા તેના નેત્ર અને નાસિકાથી પાણી નીકળવા લાગે છે.

સમુત્પદ્યન્તે=જાયન્તે, ધનોપભોગે માનવાનાં સ્વેચ્છાહારક્રીડાદિના ઘટિતિ ધાતુ-
વૈષમ્યોદયાન્નાનાવિધરોગા ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

તતઃ કિં ભવતીત્યાહ—‘યૈર્વા સાર્દ્ધ’—મિત્યાદિ । યૈઃ=પુત્રકલત્રાદિભિઃ સાર્દ્ધ
સંવસતિ ત એવ નિજકાઃ=આત્મીયા એકદા=રોગાભિભવે પૂર્વ=પ્રથમં પરસ્પરરોગ-
સંસર્ગભયાત્ તં ગલત્ત્રેવનાસિકં વિશીર્ણપાણિપાદં રોગિણં પરિહરન્તિ । કદાચિત્
સ વા=સોઽપિ પશ્ચાત્ તાન્ નિજકાન્=આત્મીયાન્ પુત્રકલત્રાદીન્ પરિહરતિ, કિન્તુ યદિ
કથञ્ચિત્તે શુશ્રૂપણપરા અપિ ન તવ રક્ષકાઃ, નાપિ તેષાં ત્વં રક્ષકઃ, એહિક-પારત્રિક-
દુઃસ્વવિમોચનાય પરસ્પરં સમર્થા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

યાવદ્વાર્ધક્યાદિકં નાયાતં તાવદેવ શ્રુતચારિત્રાદિલક્ષણે ધર્મે યત્નઃ કર્તવ્ય
ઇતિ દર્શયતિ—‘એવં જાણિતુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એવં જાણિતુ દુઃસ્વં પત્તેયં સાયં, અણભિક્કંતં ચ સ્વલુ
વયં સંપેહાણ, સ્વળં જાણાહિ પંડિયા ! ॥ સૂ. ૮ ॥

હાયા—એવં જાત્વા દુઃસ્વં પ્રત્યેકં સાતમ્, અનભિક્કાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય
ક્ષણં જાનીહિ પંડિત ! ॥ સૂ. ૮ ॥

આદિ રોગ કે કારણ હાથ પૈર ગલને લગતે હૈં, ઉસ સમય ઇસકે અપને
કુદુમ્બી-પુત્ર કલત્રાદિક-ભી ‘હમકો ભી રોગ ન લગ જાય’ ઇસ ભય સે
ઇસે છોડ દેતે હૈં । અથવા કિસી સમય યહ ભી કિસી કારણવશ ઉન્હેં
છોડ દેતા હૈ । યદિ પરસ્પર કોઈ કિસીકો ન ભી છોડે તો ભી એહિક
ઔર પારત્રિક દુઃસ્વોં સે કોઈ કિસી કી રક્ષા નહીં કર સકતા હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

જય તક વૃદ્ધાવસ્થા વગૈરહ નહીં આઈ હૈ તવ તક શ્રુતચારિત્રરૂપ
ધર્મ સેવન કરને મેં પ્રયત્ન કરતે રહના યાહિયે । ઇસી વાતકો સૂત્રકાર
પ્રદર્શિત કરતે હૈ—

કુપ્લં આદિ રોગના કારણે હાથ પગ ગળવા લાગે છે, તે વખત તેના પોતાના
કુદુંબી-પુત્રકલત્રાદિક પણ ‘અમને પણ રોગ ન લાગી નય’ આ લયથી તેને
છોડી દે છે. અથવા કોઈ વખત તે પણ કોઈ કારણવશ તેઓને છોડી દે છે.
કદાચ પરસ્પર કોઈ કોઈને ન પણ છોડે તો પણ એહિક અને પારત્રિક દુઃખોથી
કોઈ કોઈની રક્ષા કરી શકતા નથી. ॥ સૂ. ૭ ॥

ન્યા સુધી વૃદ્ધાવસ્થા વિગેરે નથી આવી ત્યા સુધી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ
સેવન કરવામા પ્રયત્ન કરતો રહેવો જોઈએ, આ વાતને સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે:—

टीका—हे पण्डित !—हे परमार्थज्ञ—मेधाविन् ! एवं—“ केऽपि स्वजनादयस्त्राणाय वा शरणाय वा न भवन्ति ” इति पूर्वोक्तप्रकारेण प्रत्येकं=प्रत्येकप्राणिनः सर्वेषां प्राणिनामित्यर्थः, दुःखं, तथा सातं=सुखं च ज्ञात्वा=‘ स्वकृतशुभाशुभकर्मविपाकानुभवोऽवश्यं भवती ’—तिबुद्ध्वा अनभिक्रान्तम्=अव्यतीतं वयः=शरीरस्य कालकृतावस्थां संपेक्ष्य=परिवाददोषवतो वार्द्धक्यस्य, पोषणदोषवतो बाल्यस्य, परिहारदोषवतो रोगस्य च दूरवर्त्तित्वं यत्रास्ति तादृशं वयः समालोच्य, क्षणम्=अवसरं जानीहि=बुध्यस्व हे पण्डित ! इति सम्बन्धः ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि । हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थ के जाननेवाले मुनि ! कोई भी स्वजनादिक एक दूसरे को त्राण और शरण के लिए समर्थ नहीं हो सकता है । इसप्रकार पूर्वोक्त रीति से प्रत्येक प्राणी के सुख दुःख को जानकर—अर्थात् अपने किये हुए पुण्य-पाप का फल अवश्य भोगना पड़ता है, ऐसा समझकर तथा अवस्था को भी अनभिक्रान्त देख कर, तथा जब तक रोगादि का उदय नहीं हुआ है—सब इन्द्रियां अपनी २ शक्ति में समर्थ हैं और स्वजनादिकों ने नहीं छोड़ा है अर्थात् जबतक स्वजनादि आदर करते हैं तबतक ही आत्मा का श्रेय साध लेना चाहिये, ऐसी अवस्था को अर्थात् परिवाद—दोषयुक्त वृद्धावस्था, पोषण—दोषवाली बाल्यावस्था और परिहार—दोषवाली रोगावस्था को सोचकर तू संयमाराधन के अवसरको भली—भाँति जान ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि—हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसंपन्न ! हे परमार्थना भाषुकार मुनि ! केवल पाशु स्वजनादिक ओर धीनने त्राण अने शरण भाटे समर्थ बनता नहीं. आ प्रकार पूर्वोक्त रीतिथी प्रत्येक प्राणीना सुख दुःखने भाषुने अर्थात् ‘ पोताना करेला पाप पुन्यना इण अवश्य भोगववा पडे छे ’ अणुं समलने तथा अवस्थाने पाशु अनलिक्रान्त देखीने, तथा न्यां सुधी रोगादिकने उदय थयो नहीं, यधी इन्द्रियो पोतपोतानी शक्तिमा समर्थ छे, अने स्वजनादिके छोडेल नहीं, अर्थात् न्यासुधी स्वजनादि आदर करे छे त्यासुधी आत्मानुं श्रेय साधी लेवुं नेछे अणुं अणुं अवस्थाने अर्थात् परिवाददोषयुक्त वृद्धावस्था, पोषण-दोषवाणी आत्यावस्था अने परिहारदोषवाणी रोगावस्थाने सोचीने तुं संयमाराधनना अवसरने ललिलाति भाषु.

ચાહે સુખી હો ચાહે દુઃખી હો-પ્રત્યેક મનુષ્યે તેને કૃત-કિયે હુણ શુભાશુભ કર્મના ફળના ભોગ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ। યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ વિના ફળ દિયે કર્મ કમી મી નષ્ટ નહીં હોતે। આત્મા કો જો પૌદ્ગલિક વર્ગનાઈ પરતન્ત્ર કરતી હૈ, ઉનકા નામ હી કર્મ હૈ। હસ લોક મેં કજ્જલ કી કુપ્પી કી તરહ સર્વત્ર કાર્મણવર્ગનાઈ ભરી હુઈ હૈ-યે પૌદ્ગલિક હૈ। આત્મા કે ક્રોધાદિ કષાયો કે નિમિત્ત સે ઉનમેં સ્થિતિવન્ધ ઓર અનુભાગવન્ધ રૂપ ફળ દેને કી શક્તિ આતી હૈ। કર્મવન્ધ કી શાસ્ત્રકારોને ૪ પ્રકાર કી અવસ્થાઈ વતલાઈ હૈ। ૧ પ્રકૃતિવન્ધ, ૨ સ્થિતિવન્ધ, ૩ અનુભાગવન્ધ ઓર ૪ પ્રદેશવન્ધ। જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મો મેં આત્મા કે ઉન ૨ ગુણો કે ઘાત કરને કી જો શક્તિ હૈ ઉસ કા નામ પ્રકૃતિવન્ધ હૈ। પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવ કા હૈ। જિસ પ્રકાર નીમકા સ્વભાવ કડુવા હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે જ્ઞાન ગુણ કો ઘાત કરને કા હોતા હૈ, દર્શનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે દર્શનગુણ કો ઘાત કરને કા હૈ, વેદનીય કર્મકા સ્વભાવ આત્મા કો સુખ ઓર દુઃખ દેનેકા હૈ, મોહનીય કર્મકા સ્વભાવ, આત્માકે સ્વભાવ કો પરપદાર્થો મેં ગૃહ્થ વનાને કા હૈ,

લલે સુખી હોય યા દુઃખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ કર્મના ફળને ભોગવવું પડે છે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે ફળ આપ્યા વિના કર્મ કોઈ વખત નાશ થતાં નથી.

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગણા પરત્ર કરે છે તેનું નામ જ કર્મ છે. આ લોકમાં કાળજની શીશી માફક સર્વત્ર કાર્મણ વર્ગણાએ ભરેલી છે. એ પૌદ્ગલિક છે. આત્માના ક્રોધાદિ કષાયોના નિમિત્તથી તેમા સ્થિતિબંધ અને અનુભાગ બંધરૂપ ફળ દેવાની શક્તિ આવે છે. કર્મબંધની શાસ્ત્રકારોએ ૪ પ્રકારની અવસ્થાઓ બતાવેલી છે. ૧ પ્રકૃતિબંધ, ૨ સ્થિતિબંધ, ૩ અનુભાગબંધ, અને ૪ પ્રદેશબંધ જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોમાં આત્માના તે તે ગુણની ઘાત કરવાની જે શક્તિ છે તેનું નામ પ્રકૃતિબંધ છે પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનું છે. જેમ લીંબડાનો સ્વભાવ કડવો હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના જ્ઞાનગુણનો ઘાત કરવાનું હોય છે દર્શનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના દર્શનગુણનો ઘાત કરવાનો છે. વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને દુઃખ આપવાનો છે. મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં

આયુ કર્મકા સ્વભાવ નિયત સમય તક જીવકો ઉસ ૨ પર્યાયમેં રોક રાખને કા હૈ, નામ કર્મકા સ્વભાવ ચિત્રકાર કી तरह શરીરાદિકોં કો અનેક રૂપમેં પરિણમાને કા હૈ, ગોત્રકા સ્વભાવ ઊંચ નીચ કુલમેં પૈદા કરાને કા તથા અન્તરાય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે વીર્ય કે ઘાત કરને કા હૈ । પ્રદેશબંધ વહ હૈ—જિસકી વજહ સે દૂધ ઓર પાની કી तरह આત્મા ઓર કર્મ કે અનન્તાનન્ત પ્રદેશોં કા એકીભાવ જૈસા સંબંધ હો જાતા હૈ । યહ દોનોં પ્રકાર કા બંધ, મન વચન કાય કે યોગોં સે હોતા હૈ । સ્થિતિબંધ—કર્મોં મેં આત્મા કે સાથ રહને કી મર્યાદા કો કહતે હૈ । ફલ દેને કી શક્તિ કી હીનાધિકતા કો અનુભાગબંધ કહતે હૈ । યે સ્થિતિબંધ ઓર અનુભાગબંધ કષાયોં સે હોતે હૈ । કર્મોંકા આત્માકે સાથ બંધ હોતા હૈ, ઇસકા યહ મતલબ નહીં હૈ કિ આત્મા કર્મ હો જાતા હૈ, અથવા કર્મ આત્મા રૂપ હો જાતે હૈ । પ્રત્યેક દ્રવ્યમેં એક અગુરુ—લઘુ નામકી શક્તિ રહા કરતી હૈ, જિસકી વજહ સે એક દ્રવ્ય દૂસરે દ્રવ્યરૂપ નહીં હો સકતા । ઇસ શક્તિ કે સદ્ભાવ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપનેસ્વરૂપ મેં સદા કાયમ બના રહતા હૈ । હર એક દ્રવ્ય મેં ઇન છહ ગુણોં કા કિ જિનકો સામાન્ય ગુણ કહતે હૈ સદા નિવાસ રહતા હૈ । (૧) અસ્તિત્વ—ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય

ગૃહ બનાવવાનો છે. આયુકર્મનો સ્વભાવ નિયત સમય સુધી જીવને તે તે પર્યાયમાં રોકી રાખવાનો છે. નામકર્મનો સ્વભાવ ચિત્રકારની માફક શરીરાદિકોને અનેક રૂપમાં પરિણમાવવાનો છે. ગોત્રનો સ્વભાવ ઉંચ નીચ કુળમાં પૈદા કરાવવાનો અને અન્તરાય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના વીર્યનો ઘાત કરવાનો છે પ્રદેશબંધ તે જ છે, જેની મારફત દૂધ અને પાણી માફક આત્મા અને કર્મને અનન્તાનન્ત પ્રદેશોનો એકીભાવ જેવો સંબંધ થઈ જાય છે એ બંને પ્રકારના બંધ મન વચન કાયાના યોગોથી થાય છે. સ્થિતિબંધ—કર્મોમાં આત્માની સાથે રહેવાની મર્યાદાને કહે છે, ફળ દેવાની શક્તિની હીનાધિકતાને અનુભાગબંધ કહે છે. એ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ કષાયોથી થાય છે. કર્મોનો આત્મા સાથે બંધ થાય છે, તેનો એ મતલબ નથી કે આત્મા કર્મ બની જાય છે, અથવા કર્મ આત્મારૂપ બની જાય છે પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં એક અગુરુલઘુ નામની શક્તિ રહ્યા કરે છે, જેની મારફત એક દ્રવ્ય બીજા દ્રવ્યરૂપ બની શકતું નથી. આ શક્તિના સદ્ભાવથી પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાના સ્વરૂપમાં સદા કાયમ બની રહે છે દરેક દ્રવ્યમાં આ છ ગુણો કે જેને સામાન્ય ગુણ કહે છે તે સદા નિવાસ કરી રહેલા છે ૧ અસ્તિત્વ—આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ નથી થતો.

ચાહે સુખી હો ચાહે દુઃખી હો-પ્રત્યેક મનુષ્યે કો અપને કૃત-કિયે હુણ શુભાશુભ કર્મ કે ફલ કા ભોગ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ। યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ વિના ફલ દિયે કર્મ કમી ભી નષ્ટ નહીં હોતે। આત્મા કો જો પૌદ્ગલિક વર્ગણાઈ પરતન્ત્ર કરતી હૈ, અનકા નામ હી કર્મ હૈ। ઇસ લોક મેં કજ્જલ કી કુળ્લી કી તરહ સર્વત્ર કાર્મણવર્ગણાઈ ભરી હુઈ હૈ-યે પૌદ્ગલિક હૈ। આત્મા કે ક્રોધાદિ કપાયોં કે નિમિત્ત સે અનમેં સ્થિતિબન્ધ ઔર અનુભાગવન્ધ રૂપ ફલ દેને કી શક્તિ આતી હૈ। કર્મવન્ધ કી શાસ્ત્રકારોંને ૪ પ્રકાર કી અવસ્થાઈ વતલાઈ હૈ। ૧ પ્રકૃતિ-વન્ધ, ૨ સ્થિતિવન્ધ, ૩ અનુભાગવન્ધ ઔર ૪ પ્રદેશવન્ધ। જ્ઞાનાવરણીયા-દિક અષ્ટવિધ કર્મોં મેં આત્મા કે અન ૨ ગુણોં કે ઘાત કરને કી જો શક્તિ હૈ અસ કા નામ પ્રકૃતિવન્ધ હૈ। પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવ કા હૈ। જિસ પ્રકાર નીમકા સ્વભાવ કઢુવા હોતા હૈ અસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે જ્ઞાન ગુણ કો ઘાત કરને કા હોના હૈ, દર્શના-વરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે દર્શનગુણ કો ઘાત કરને કા હૈ, વેદ-નીય કર્મકા સ્વભાવ આત્મા કો સુખ ઔર દુઃખ દેનેકા હૈ, મોહનીય કર્મકા સ્વભાવ, આત્માકે સ્વભાવ કો પરપદાર્થોં મેં ગૃહ્થ વનાને કા હૈ,

ભલે સુખી હોય યા દુઃખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ કર્મના ફળને ભોગવવું પડે છે. એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે ફળ આપ્યા વિના કર્મ કોઈ વખત નાશ થતા નથી.

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગણા પરત્ર કરે છે તેનું નામ જ કર્મ છે આ લોકમા કાજળની શીશી માફક સર્વત્ર કાર્મણ વર્ગણાઓ ભરેલી છે. એ પૌદ્ગલિક છે. આત્માના ક્રોધાદિ કપાયોના નિમિત્તથી તેમા સ્થિતિબંધ અને અનુભાગ બંધરૂપ ફળ દેવાની શક્તિ આવે છે કર્મબંધની શાસ્ત્રકારોએ ૪ પ્રકારની અવસ્થાઓ બતાવેલી છે. ૧ પ્રકૃતિબંધ, ૨ સ્થિતિબંધ, ૩ અનુભાગબંધ, અને ૪ પ્રદેશબંધ. જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોમા આત્માના તે તે ગુણની ઘાત કરવાની જે શક્તિ છે તેનું નામ પ્રકૃતિબંધ છે. પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનું છે. જેમ લીંબડાનો સ્વભાવ કડવો હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના જ્ઞાનગુણનો ઘાત કરવાનું હોય છે. દર્શનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના દર્શનગુણનો ઘાત કરવાનો છે વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને દુઃખ આપવાનો છે. મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં

આયુ કર્મકા સ્વભાવ નિયત સમય તક જીવકો ઉસ ૨ પર્યાયમેં રોક રાખને કા હૈ, નામ કર્મકા સ્વભાવ ચિત્રકાર કી તરહ શરીરાદિકોં કો અનેક રૂપમેં પરિણમાને કા હૈ, ગોત્રકા સ્વભાવ ઝંચ નીચ કુલમેં પૈદા કરાને કા તથા અન્તરાય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે વીર્ય કે ઘાત કરને કા હૈ । પ્રદેશબંધ વહ હૈ—જિસકી વજહ સે દૂધ ઓર પાની કી તરહ આત્મા ઓર કર્મ કે અનન્તાનન્ત પ્રદેશોં કા ઈકીભાવ જૈસા સંબંધ હો જાતા હૈ । યહ દોનોં પ્રકાર કા બંધ, મન વચન કાય કે યોગોં સે હોતા હૈ । સ્થિતિબંધ—કર્મોં મેં આત્મા કે સાથ રહને કી મર્યાદા કો કહતે હૈં । ફલ દેને કી શક્તિ કી હીનાધિકતા કો અનુભાગબંધ કહતે હૈં । યે સ્થિતિબંધ ઓર અનુભાગબંધ કષાયોં સે હોતે હૈં । કર્મોંકા આત્માકે સાથ બંધ હોતા હૈ, ઈસકા યહ મતલબ નહીં હૈ કિ આત્મા કર્મ હો જાતા હૈ, અથવા કર્મ આત્મા રૂપ હો જાતે હૈં । પ્રત્યેક દ્રવ્યમેં ઈક અગુરુ—લઘુ નામકી શક્તિ રહા કરતી હૈ, જિસકી વજહ સે ઈક દ્રવ્ય દૂસરે દ્રવ્યરૂપ નહીં હો સકતા । ઈસ શક્તિ કે સદ્ભાવ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપને સ્વરૂપ મેં સદા કાયમ બના રહતા હૈ । હર ઈક દ્રવ્ય મેં ઇન છહ ગુણોં કા કિ જિનકો સામાન્ય ગુણ કહતે હૈં સદા નિવાસ રહતા હૈ । (૧) અસ્તિત્વ—ઈસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય

ગૃહ બનાવવાનો છે. આયુકર્મનો સ્વભાવ નિયત સમય સુધી જીવને તે તે પર્યાયમાં રોકી રાખવાનો છે. નામકર્મનો સ્વભાવ ચિત્રકારની માફક શરીરાદિકોને અનેક રૂપમાં પરિણમાવવાનો છે. ગોત્રનો સ્વભાવ ઊંચ નીચ કુળમાં પૈદા કરાવવાનો અને અન્તરાય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના વીર્યનો ઘાત કરવાનો છે. પ્રદેશબંધ તે જ છે, જેની મારફત દૂધ અને પાણી માફક આત્મા અને કર્મને અનન્તાનન્ત પ્રદેશોનો એકીભાવ જેવો સંબંધ થઈ જાય છે એ બંને પ્રકારના બંધ મન વચન કાયાના યોગાથી થાય છે. સ્થિતિબંધ—કર્મોમાં આત્માની સાથે રહેવાની મર્યાદાને કહે છે, કૃણ દેવાની શક્તિની હીનાધિકતાને અનુભાગબંધ કહે છે. એ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ કષાયોથી થાય છે કર્મોનો આત્મા સાથે બંધ થાય છે, તેનો એ મતલબ નથી કે આત્મા કર્મ બની જાય છે, અથવા કર્મ આત્મારૂપ બની જાય છે. પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં એક અગુરુલઘુ નામની શક્તિ રહ્યા કરે છે, જેની મારફત એક દ્રવ્ય બીજા દ્રવ્યરૂપ બની શકતું નથી. આ શક્તિના સદ્ભાવથી પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાના સ્વરૂપમાં સદા કાયમ બની રહે છે દરેક દ્રવ્યમાં આ છ ગુણો કે જેને સામાન્ય ગુણ કહે છે તે સદા નિવાસ કરી રહેલા છે. ૧ અસ્તિત્વ—આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ નથી થતો.

કા કમી નાશ નહીં હોતા, (૨) વસ્તુત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય ક્ષણ ૨ મેં કુછ ન કુછ કામ કિયા હી કરતા હૈ । (૩) દ્રવ્યત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય મેં એકસી વ ભિન્ન પ્રકાર કી અવસ્થાએ બદલા કરતી હૈ, (૪) અગુરુલઘુત્વ-ઇસકે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય સદા અપની મર્યાદા મેં હી રહતા હૈ-કોઈ ભી ઇસકા ગુણ દૂસરે ગુણરૂપ નહીં હો સકતા, કોઈ દૂસરા ગુણ ભી ઇસમેં બાહર સે આકર નહીં મિલ સકતા, (૫) પ્રદેશવત્ત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્યકા કોઈ ન કોઈ આકાર અવશ્ય હોતા હૈ, (૬) પ્રમેયત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય કિસી ન કિસી જ્ઞાનકા વિષય હોતા રહતા હૈ ।

આત્મા ઓર પુદ્ગલ મેં એક એસી વૈભાવિક શક્તિ હૈ કિ જિસસે યે દોનોં અનાદિકાલ સે અન્યોન્યસંપૃક્ત હોને કે કારણ સ્વભાવ સે અન્યથા હોને રૂપ વિભાવ અવસ્થા મેં પડે હુએ હૈ । ઇનકી યહ વિભાવ અવસ્થા અનાદિકાલ કી હૈ-આજ નહિ પૈદા નહીં હુઈ હૈ, ઇસી સે જીવ મેં પુદ્ગલ કે નિમિત્ત સે વિભાવ-અન્યથાભાવ રૂપ પરિણમન ઓર વિભાવ-દશાસંપન્ન જીવ કે નિમિત્ત સે પુદ્ગલ મેં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન હુઆ કરતા હૈ । ઇનકા યહ પરિણમન અનાદિકાલકા હૈ-આજકા નહીં ।

૨ વસ્તુત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય ઘણ-ઘણમાં કાંઈને કાંઈ કામ કર્યા જ કરે છે. ૩ દ્રવ્યત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યમાં એક અને ભિન્ન પ્રકારની અવસ્થાઓ બદલાય કરે છે. ૪ અગુરુલઘુત્વ-એના નિમિત્તથી દ્રવ્ય સદા પોતાની મર્યાદામાં જ રહે છે, કોઈ પણ તેના ગુણ બીજા ગુણરૂપ બની શકતો નથી, અને બીજા ગુણ પણ તેમાં બહારથી આવી મળી શકતો નથી ૫ પ્રદેશવત્ત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યને કોઈ ને કોઈ આકાર અવશ્ય થાય છે ૬ પ્રમેયત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય કોઈ ને કોઈ જ્ઞાનનો વિષય થઈ રહે છે

આત્મા અને પુદ્ગલમાં એક એવી વૈભાવિક શક્તિ છે કે જેનાથી એ બંને અનાદિ કાળથી અન્યોન્ય સંયુક્ત હોવાને કારણે સ્વભાવથી અન્યથા હોવારૂપ વિભાવ અવસ્થામાં પડેલ છે, તેની આ વિભાવ અવસ્થા અનાદિ કાળની છે. આજ નવી પેદા થયેલ નથી.

એનાથી હવમાં પુદ્ગલના નિમિત્તથી વિભાવ-અન્યથા ભાવરૂપ પરિણમન અને વિભાવદશાસંપન્ન હવના નિમિત્તથી પુદ્ગલમાં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન થયા કરે છે. તેનું આ પરિણમન અનાદિ કાળનું છે. આજનું નહિ.

પ્રશ્ન—યદિ આત્મા પહેલે શુદ્ધ થા એસા માન લિયા જાત્રે તો કયા હાનિ હૈ ?

ઉત્તર—બડી ભારી હાનિ હૈ । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા મેં કર્મ કે સંબંધ કે પહેલે આત્મા શુદ્ધ ઠહરેગા, ઓર ફિર ઉસકો કર્મકા સંબંધ માનને સે સિદ્ધાત્માઓં કો બી કર્મ કા સંબંધ માનના પડેગા । એસા તો હૈ નહીં—શુદ્ધ મેં અશુદ્ધતા આ સકતી નહીં । સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા હૈ । અશુદ્ધ સે શુદ્ધ હોતા હૈ, ઇસીલિયે વન્ધ સે હી મોક્ષ કહા ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ કે ફલ દેને કી કોઈ વિશેષ વિધિ હૈ ?

ઉત્તર—હાં, હૈ । જવ કર્મ વંધતે હૈં તવ ઉનકે પકને કે લિયે કુછ કાલ ચાહિયે, વાંધે હુએ કર્મ ઉસી સમય ઉદયમેં નહીં આને લગતે । ઇનકા હિસાબ તો ચેતમેં પડે હુએ વીજ કી તરહ હૈ । જિસ પ્રકાર ચેત મેં વોયા ગયા વીજ કુછ કાલ કે વાદ હી પકતા હૈ ઠીક ઇસી પ્રકાર વાંધે હુએ કર્મ કો પકને મેં બી સમય લગતા હૈ । ઇસ સમયકા નામ અવાધાકાલ હૈ । ઇસ અવાધાકાલ કા યહ હિસાબ હૈ કિ—એક કોડા-કોડી સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મ મેં ઉસકા અવાધાકાલ ૧૦૦ વર્ષ કા પડતા હૈ, સત્તર ૭૦ કોડાકોડી સાગર કી સ્થિતિવાલે મોહકર્મ મેં ૭૦૦૦ વર્ષકા

પ્રશ્ન—કદાચ આત્મા પહેલાં શુદ્ધ હોતા તેમ માની લેવામાં આવે તો શું હરકત છે ?

ઉત્તર—ધણી ભારી હાનિ છે આ પ્રકારની માન્યતામાં કર્મના સંબંધના પહેલા આત્માને શુદ્ધ માનવું પડશે. અને પછી તેને કર્મનો સંબંધ માનવાથી સિદ્ધાત્માઓને પણ કર્મનો સંબંધ માનવો પડશે. એવું તો છે નહિ. શુદ્ધમાં અશુદ્ધતા આવી શકતી નથી સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા છે અશુદ્ધથી શુદ્ધ છે. માટે બંધથી જ મોક્ષ કહેવાય છે

પ્રશ્ન—કર્મના ક્ષણ દેવાની બીજી કોઈ વિશેષ વિધિ છે ?

ઉત્તર—હા. છે ન્યારે કર્મ બધાય છે ત્યારે તેને પાકવા માટે થોડો વખત જોઈએ, બાંધેલા કર્મ તે વખત ઉદયમાં આવવા લાગતા નથી તેનો હિસાબ તો ખેતરમાં પડેલા બી માફક છે. જે પ્રકારે ખેતરમાં વાવેલા બી થોડા વખત પછી પાકે છે તે પ્રકારે બાંધેલા કર્મને પાકવામાં પણ થોડો વખત લાગે છે. તે સમયનું નામ અબાધાકાલ છે આ અબાધાકાલનો એ હિસાબ છે કે એક કોડાકોડી સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મમાં તેની અબાધા ૧૦૦ વર્ષની પડે છે ૭૦ કોડાકોડી સાગરની સ્થિતિવાળા મોહકર્મમાં ૭૦૦૦ વર્ષનો અબાધાકાલ

અવાધાકાલ પડતા હૈ। ઇસ હિસાબસે કરોડ સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મકા અવાધાકાલ અન્તર્મુહર્ત માત્ર હી પડેગા, ઇસસે યહ વાત જાની જાતી હૈ કિ—જિતને કર્મ સ્થિતિ કે કર્મ વંધેગે, વે જલ્દી ફલ દેને કો તૈયાર હો જાવેગે, ઓર યહી વજહ હૈ કિ ઇસી ભવમેં વાંધે હુઅ કર્મ જીવ કો ઇસી ભવમેં ઉદય આ જાતે હૈ।

પ્રશ્ન—વાંધે હુઅ કર્મકા વૈસા હી ફલ મિલતા હૈ? યા ઉસ મેં કુછ પરિવર્તન ભી હો સકતા હૈ?।

ઉત્તર—જીવોં કે પરિણામોં કે નિમિત્ત સે ફલોપભોગ મેં પરિવર્તન ભી હો જાતા હૈ। ઉસ પરિવર્તન કો—ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, ઓર ઉદીરણા કહતે હૈં। વાંધે હુઅ કર્મોં કી સ્થિતિ યા ઉનકે અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો વૃદ્ધિ હો જાતી હૈ ઉસે ઉત્કર્ષણ કહતે હૈં। પહિલે વાંધે હુઅ કર્મોં કી સ્થિતિ વ અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો ઘટતી હોતી હૈ ઉસે અપકર્ષણ કહતે હૈં। જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે પાપ કા પુણ્ય મેં યા પુણ્ય કા પાપ મેં જો પરિવર્તન—વદલના હોતા હૈ ઉસકા નામ સંક્રમણ હૈ। કિન્હીં કર્મોં કો કિસી નિમિત્ત કે વજા અપની ઠીક સ્થિતિ કે પહિલે ઉદય મેં લાકર સ્વપા દેનેકા નામ ઉદીરણા હૈ।

પડે છે આ હિસાબથી કરોડ સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મનો અવાધાકાળ અન્તર્મુહર્ત માત્ર જ પડે છે. આથી તે વાત જણાય છે કે જેટલો થોડો સ્થિતિનો કર્મ બંધાશે તેટલો જલ્દી જીવ દેવાને તૈયાર થઈ જશે, અને એજ કારણથી આ ભવમાં બાંધેલા કર્મ જીવને આ ભવમાં ઉદય આવે છે

પ્રશ્ન—બાંધેલા કર્મનું તેનું જ જીવ મળે છે અગર તેમાં કાંઈ પરિવર્તન પણ થાય છે?

ઉત્તર—જીવોના પરિણામોના નિમિત્તથી ફલોપભોગમાં પરિવર્તન પણ થઈ જાય છે, આ પરિવર્તનને—ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, અને ઉદીરણા કહે છે. બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અગર તેના અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને ઉત્કર્ષણ કહે છે. પહેલાં બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે ઘટતી થાય તેને અપકર્ષણ કહે છે. જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી પાપનો પુણ્યમાં, અને પુણ્યનો પાપમાં જે પરિવર્તન થાય છે, તેનું નામ સંક્રમણ છે. કોઈ કર્મને કોઈ નિમિત્તના કારણથી પોતાની ઠીક સ્થિતિના પહેલાં ઉદયમાં લાવીને જે અપાવી નાંખે છે તેનું નામ ઉદીરણા છે.

इन कर्मों की उत्तर प्रकृतियां कितनी हैं ? और उनका क्या स्वरूप है ? तथा देशघाति और सर्वघाति, पुण्यरूप और पापरूप प्रकृतियां कितनी और कौन २ हैं ? तथा देशघाति प्रकृतियां में सर्वघाति स्पर्द्धक कितने हैं ? इत्यादि समस्त बातोंका विचार शास्त्रों में अच्छी तरह किया गया है । इस प्रकार कर्मों का संक्षेप में स्वरूप समझ कर यह प्रकट किया है कि इसी कर्म के निमित्त से आत्मा इस संसार में भटकता और अनेक दुःखों को सहन करता रहता है । कर्म आत्मा को संसार में भ्रमाता है । आत्मा भी स्वयं इनका निमित्त पाकर संसार में भ्रमता रहता है । कर्मों से दुःखी होनेवाले जीव ही संसारी हैं । वे सदा इस संसार में इसी की वजह से भ्रमण किया करते हैं । इस के इस परिभ्रमण को देख कर ज्ञानीजन इसे संबोधन करते हुए कहते हैं कि—

“ आघ्रातं मरणेन जन्म जरया विद्युच्चलं यौवनं,
सन्तोषो धनलिप्सया शमसुखं भोगाशया देहिनाम् ।
लोकैर्मत्सरिभिर्गुणा वनभुवो व्यालैर्नृपा दुर्जनै,—
रस्थैर्येण विभूतिरप्यपहृता ग्रस्तं न किं केन वा ?” ॥१॥

આ કર્મોની ઉત્તર પ્રકૃતિઓ કેટલી છે ? અને તેનું શું સ્વરૂપ છે ? તથા દેશ-
ધાતિ અને સર્વધાતિ પુણ્યરૂપ અને પાપરૂપ પ્રકૃતિઓ કેટલી અને કઈ કઈ છે ?
તથા દેશધાતિ પ્રકૃતિઓમાં સર્વધાતિસ્પર્દ્ધક કેટલાં છે. ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોનો
વિચાર શાસ્ત્રોમાં સારી રીતે કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર કર્મોના સંક્ષેપમાં
સ્વરૂપ સમજીને એવું પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મના નિમિત્તથી આત્મા આ
સંસારમાં ભટકતો અને અનેક દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. કર્મ આત્માને
સંસારમાં ભ્રમાવે છે. આત્મા પણ સ્વયં તેના નિમિત્ત બનીને સંસારમાં ભ્રમતો
રહે છે. કર્મોથી દુઃખી થવાવાળા જીવ સંસારી છે. તે સદા આ સંસારમાં એજ
કારણથી ભ્રમણ કર્યા કરે છે. તેના આ પરિભ્રમણને દેખીને જ્ઞાની જન તેને
સંબોધન કરીને કહે છે કે—

“ આઘ્રાતં મરણેન જન્મ જરયા વિદ્યુચ્ચલં યૌવન,
સન્તોષો ધનલિપ્સયા શમસુખં ભોગાશયા દેહિનામ્ ।
લોકૈર્મત્સરિભિર્ગુણા વનભુવો વ્યાલૈર્નૃપા દુર્જનૈ,—
રસ્થૈર્યેણ વિભૂતિરપ્યપહૃતા ગ્રસ્તં ન કિં કેન વા ?” ॥૧॥

હે સંસાર કે જીવો ! કહો દુનિયામેં ऐसी कौनसी वस्तु है जो निर्भय हो । देखो-मृत्यु ने जन्मको, बुढ़ापे ने विजली के समान चंचल युवावस्था को, धन की तृष्णा ने संनोष को, भोगों की आशा ने मानसिक शांति को, मत्सर-भाववाले दुर्जनो ने गुणों को, सर्प और हिंसकों ने जंगली जानवरों को, दुष्टों ने राजाओं को और अस्थिरता ने ऐश्वर्य को भयभीत कर रखा है । एक को एकका भय लगा हुआ है । एकसे एक ग्रसित है, फिर इसमें शांति की भावना रखना मानों कूप के किनारे पर बैठ कर निर्भयताके साथ ऊँघना जैसा है । इसी लिये तो जानी पद पद पर संबोधित कर कहते रहते हैं कि-अरे भय !

“ तत्त्वं चिन्तय सततं चित्ते, परिहर चिन्तां नश्वरचित्ते ”

સદા તું સારાસાર કા વિચાર કરતા રહ । ક્યોં નાશવાન ધનાદિક્ની કી ચિન્તા સે વ્યર્થ હી અપને કો વ્યાકુલ કિયા કરતા હૈ ?, ક્યા તુझे પતા નહીં કિ જિસ પ્રકાર માંસકે ઉપર ગીધ મંડરાયા-ધૂમા-કરતે હૈં उसी प्रकार तुझे खाने के लिये यह काल तेरे शिर पर मंडरा-धूम-रहा है । लोगों को तू सरते हुए नित्य देखता है, प्रत्येक दिवस वृद्धों को असह्य कष्ट की यातनाओं से पीडित निहारता है और संसार को भी

હે સંસારી છવો ! કહેા દુનીયામાં ऐवी कई वस्तु છે કે જે निर्भय છે. દેખો મૃત્યુને જન્મને, ઘડપણને વિજળી સમાન ચંચળ યુવાવસ્થાને, ધનની તૃષ્ણાને સંતોષને, ભોગની આશાને માનસિક શાંતિને, મત્સરભાવવાળા દુર્જનોને ગુણોને, સર્પો અને હિંસકોને જંગલી જનાવરોને, દુષ્ટોને રાજાઓને, અને અસ્થિરતાને ઐશ્વર્યને મહાભય છે. એકને એકનો ભય લાગેલો છે. એકથી એક ગ્રસિત છે, પણ તેમાં શાંતિની ભાવના ગંભીર કુવાના કિનારા ઉપર ખેતીને નિર્ભયતાની સાથે ઉંઘ લેવા ખરાબર છે, માટે તો જાની પદે પદે સંબોધિત કરી કરીને કહેતા રહે છે કે અરે ભય !

“ तत्त्वं चिन्तय सततं चित्ते, परिहर चिन्तां नश्वरचित्ते ”

સદા તું સારાસારને વિચાર કરતો રહે, કારણ કે નાશ થનારા ધનાદિક્ની ચિન્તાથી વ્યર્થ થતાની વતને વ્યાકુલ બનાવીશ નહિ. શુભને ખબર નથી કે જેવી રીતે માંસ ઉપર ગીધ અવારનવાર ધૂમ્કા કરે છે તે પ્રકારે તને ખાવા માટે કાલ તારા શિર ઉપર ધૂમી રહ્યા છે. લોકોને મરતા તું નિત્ય જુવે છે. પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોને અસહ્ય કષ્ટની યાતનાઓથી પીડિત લાગે છે, અને સંસારી છવોને પણ તરેહ તરેહના ભયોથી ઘેરાએલાં અને નાના પ્રકારના સંકટોને સહન કરતા

તરહ ૨ કે મર્યોં સે ઘિરા હુઆ એવં નાના પ્રકાર કે સંકટોં કો ફેલતા હુઆ તું સ્વયં અપની આંઘ્રોં સે દેખતા હૈ, ફિર મી તું વિષય રૂપ ચારે કે લોભ સે મમતા કે કાંટે મેં ફંસ કર અપના નાશ કર રહા હૈ। મછલી ઓર બન્દર કી તરહ બન્ધન મેં ફંસતા હુઆ મી વહાં સે નહીં નિકલના ચાહતા। ક્યા તુજે નહીં માલૂમ કિ તેરી મી એક દિન યહી દશા હોને-વાલી હૈ, અતઃ યહી અવસર કલ્યાણ કરને કા હૈ। કહા મી હૈ—

“ યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવન્ન દૂરે જરા,
યાવન્નેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુષઃ।
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,
પ્રોદીપ્તે ભવને તુ કૂપખનનં પ્રત્યુદયમઃ કીદશઃ ? ” ॥ ૧ ॥

હે મન્ય ! જબ તક તેરા યહ શરીર ઠીક હાલત મેં હૈ, હિસમેં કોઈ મી રોગ ને નિવાસ નહીં કિયા હૈ, જબ તક બુઢાપા દૂર હૈ, જબ તક હિન્દ્રિયોં કી શક્તિ બની હુઈ હૈ, જબ તક આયુ કે દિન વાંકી હૈ, તબ તક તું આત્મ-કલ્યાણ કરને કી ચેષ્ટા અછ્છી તરહ કરતા રહ। ઘર જલને પર કૂપ ખોદને સે ક્યા લાભ ? ॥૧॥

હિન પૂર્વોક્ત વાતોં કો ધ્યાનમેં રખતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ એવં જાણિત્તુ ’ ઇત્યાદિ। ‘ હે પણિત ! ’ હિસ શબ્દ કે અર્થ કા ટીકાકાર—

તું સ્વયં પોતાની આંખોથી દેખે છે, છતાં તું વિષયના લોભથી મમતાના કાંટામાં ફસી પોતાનો નાશ કરી રહ્યો છે. માછલી અને વાંદરાની માફક તું બંધનમાં ફસેલો પણ ત્યાંથી બહાર નીકળવા ચાહતો નથી. શુ તને ખબર નથી કે તારી પણ એક દિવસ આ દશા થવાની છે. મોટે એજ અવસર કલ્યાણ કરવાનો છે. કહ્યું પણ છે—

“ યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવન્ન દૂરે જરા,
યાવન્નેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુષઃ।
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,
પ્રોદીપ્તે ભવને ચ કૂપખનનં પ્રત્યુદયમઃ કીદશઃ ? ” ॥ ૧ ॥

હે ભન્ય ! ન્યાં સુધી આ તારું સરીર સારી હાલતમાં છે, તેમા કોઈ પણ રોગે નિવાસ નથી કર્યો, ન્યાં સુધી ઘડપણ દૂર છે, ન્યાં સુધી હિન્દ્રિયોની શક્તિ બની રહી છે, ન્યાં સુધી આયુના દિવસો બાકી છે, ત્યાં સુધી તું આત્મ-કલ્યાણ કરવાની ચેષ્ટા સારી રીતે કરતો રહે. ઘર બળવા લાગે ત્યારે કુવો ખોદવાનો શુ અર્થ ? ॥ ૧ ॥

આ પૂર્વોક્ત વાતોને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે—“ પવં જાણિત્તુ ” ઇત્યાદિ. ‘ હે પંડિત ! ’ આ શબ્દના અર્થનું ટીકાકાર—હે મેધાવી !, હે સર્વવિરતિસંપન્ન !,

હે મેધાવી ! હે સર્વવિરતિસંપન્ન ! હે પરમાર્થજ્ઞ ! इन तीन पदों से विवेचन करते हैं। सार और असारतत्त्व का विवेचन करनेवाली बुद्धि का नाम मेधा-प्रज्ञा है। इसके बलपर ही प्राणी 'उपादेय क्या वस्तु है ? हेय क्या है ?' इस बात का विचार कर सकता है। इस पवित्र विचारधारा से उसकी आत्मामें भेदविज्ञान जागृत होता है। इससे वह यह भली भांति जान लेता है कि "एगो हं नत्थि मे कोई" "मैं स्वतंत्र एक हूं, मेरा इस संसार में कोई नहीं है। इन पर-पदार्थों का केवल मेरे साथ संयोग संबंध है, तादात्म्य संबंधवाले ज्ञानादिगुण मेरी आत्मा के साथ सदा रहनेवाले हैं। इन संयोगी पदार्थों का नियम से वियोग होगा, जिनका तादात्म्य संबंध है वे तो इस आत्मा से त्रिकाल में भी दूर नहीं हो सकते। जो अपना निज गुण है वही हमें उपादेय है, बाकी हेय हैं" इस प्रकार की विशुद्ध भावना से उसकी आत्मा में उन पदार्थों से वैराग्यवृत्ति उत्पन्न होती है, इस वैराग्यवृत्ति से आत्मा में कोई अपूर्व वीर्योद्भास पैदा होता है, इसकी वजह से आत्मा से अनंतानुबंधी चोकड़ी का और दर्शनमोहनीय की प्रकृतियों का क्षय, क्षयोपशम या उपशम होता है। इसी परिस्थिति में इसे उपशम क्षयोपशम या क्षायिक समकित पैदा हो जाता है। अभी आत्मा में चारित्रमोहनीय कर्म की सत्ता मौजूद है,

હે પરમાર્થજ્ઞ !, આ ત્રણ પદોથી વિવેચન કરે છે—સાર અને અસાર તત્ત્વનું વિવેચન કરવાવાળી બુદ્ધિનું નામ મેધા-પ્રજ્ઞા છે. તેના બળ ઉપર હે પ્રાણી 'ઉપાદેય શું વસ્તુ છે. હેય શું છે' આ વાતનો વિચાર કરી શકે છે. આવી પવિત્ર વિચારધારાથી તેના આત્મામાં ભેદવિજ્ઞાન જાગૃત થાય છે, તેથી તે આ સારી રીતે જાણી લે છે કે—"એગો હ નત્થિ મે કોઈ" "હું એકલો છું. માફ આ સંસારમાં કોઈ નથી. આ પર પદાર્થોનો કેવલ મારા આત્માની સાથે સંયોગ સંબંધ છે. તાદાત્મ્ય સંબંધવાળા જ્ઞાનાદિગુણ મારી આત્માની સાથે સદા રહેવાવાળા છે. આ સંયોગી પદાર્થોનું નિયમથી વિયોગ થશે, જેનો તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તેઓ તો આ આત્માથી ત્રિકાળમાં પણ દૂર થઈ શકતા નથી. જે પોતાનો નિજગુણ છે તે અમને ઉપાદેય છે, બાકી હેય છે" આવા પ્રકારની વિશુદ્ધ ભાવનાથી તેના આત્મામાં તે પદાર્થોથી વૈરાગ્યવૃત્તિ ઉત્પન્ન થાય છે. તે વૈરાગ્ય વૃત્તિથી આત્મામાં કોઈ અપૂર્વ વીર્યોદ્ભાસ પેદા થાય છે. તેની મારફતે આત્માથી અનંતાનુબંધી ચોકડીનો અને દર્શનમોહનીયની પ્રકૃતિઓનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ, અગર ઉપશમ થાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને ઉપશમ, ક્ષયોપશમ, અને ક્ષાયિક સમકિત પેદા થાય છે. હવે આત્મામાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની સત્તા મોટું છે,

હસસે હસે દેશવિરતિ યા સર્વવિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હુઈ હૈ, પરન્તુ સમકિત કી પ્રાપ્તિ હોને કે બાદ જ્યોં હી યહ આગે બઢનેકા પ્રયાસ કરતા હૈ ત્યોં હી હસકો યા તો દેશવિરતિ હોતી હૈ યા સર્વવિરતિ । દેશવિરતિ સે મુક્તિ નહીં, અતઃ જબ યહ અપને પુરુષાર્થ કી દિશાકો આગે બઢાતા હૈ તબ સર્વવિરતિ કે લાભ સે યહ અપને કો પવિત્ર કરતા હૈ ઔર વાસ્તવિક તપ સંયમ કા આરાધક બન જાતા હૈ, અતઃપર પરમાર્થજ્ઞ-પરમ=ઉત્કૃષ્ટ જો અર્થ=આત્મા કા સ્વરૂપ, ડસકા જ્ઞ=જ્ઞાતા હો જાતા હૈ । દેશવિરતિ મેં આત્મા પ્રાણાતિપાતાદિક પાંચ આસ્ત્રવોંકા ઇક દેશસે ત્યાગી હોતા હૈ ઔર સર્વ વિરતિમેં ડનકા સર્વ પ્રકાર સે ત્યાગ હો જાતા હૈ । વહાં સમસ્ત જીવોં પર સમતાભાવ રહતા હૈ । આત્માકા નિજસ્વરૂપ જો જ્ઞાતા-દ્રષ્ટાપના હૈ વહ હસ તપસંયમકી અવસ્થા મેં પ્રકટ હો જાતા હૈ ।

સૂત્રમેં-“દુઃખં પત્તેયં સાયં” જો પદ હૈ વહ હસ વાતકી પુષ્ટિ કરતા હૈ-યહ દુઃખ ઔર સુખ, પાપ ઔર પુણ્ય સે હોતે હૈ, અતઃ “સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણિયોં કો રોગાદિક વેદના આદિ કે સમય અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મકા વિપાક અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ ” ઇસા સમજ્ઞકર હે ભવ્ય ! જબ તક અપને શરીરમેં રોગાદિકોં કા ઉદય નહીં હોતા, ઔર જબ તક સચેષ્ટતા બની હુઈ હૈ, તથા જબ તક સ્વજન સંબંધી અપને સે

તેનાથી તેને દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિ પણ પ્રાપ્ત થયેલ નથી પરંતુ સમકિતની પ્રાપ્તિ થયા બાદ જ્યારે તે આગળ વધવાનો પ્રયાસ કરે છે ત્યારે તેને દેશવિરતિ થાય છે, અથવા સર્વવિરતિ. દેશવિરતિથી મુક્તિ નહિ માટે જ્યારે એ પોતાના પુરુષાર્થની દિશાને આગળ વધારે છે, ત્યારે સર્વવિરતિના લાભથી તે પોતાને પવિત્ર કરે છે, અને વાસ્તવિક તપ સંયમનો આરાધક બની જાય છે, એટલે પરમાર્થજ્ઞ-પરમ=ઉત્કૃષ્ટ જે અર્થ=આત્માનું સ્વરૂપ તેનો જ્ઞ=જ્ઞાતા થાય છે. દેશવિરતિમાં આત્મા પ્રાણાતિ-પાતાદિક પાંચ આસ્ત્રવોનો એક દેશથી ત્યાગી થાય છે અને સર્વવિરતિમાં તેનો સર્વ પ્રકારથી ત્યાગ થઈ જાય છે. ત્યાં સમસ્ત જીવો ઉપર સમતાભાવ રહે છે. આત્માનું નિજ સ્વરૂપ જે જ્ઞાતા-દ્રષ્ટાપન છે તે આ તપ સંયમની અવસ્થામાં પ્રગટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “દુઃખં પત્તેયં સાયં” જે પદ છે તે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે-તે દુઃખ અને સુખ પાપ અને પુણ્યથી થાય છે, માટે “સંસારના સમસ્ત પ્રાણીઓને રોગાદિક વેદના આદિના સમયે પોતાનાથી કરેલા કર્મનો વિપાક અવશ્ય ભોગવવો પડે છે.” એવું સમજીને હે ભવ્ય ! જ્યાં સુધી પોતાના શરીરમાં રોગાદિકનો ઉદય નથી થતો, અને જ્યાં સુધી સચેષ્ટતા બનેલ છે, અને જ્યાં સુધી

વિરક્ત નહીં હોતે તવ તક આત્મકલ્યાણ કરને મેં અગ્રસર હો જા, ઔર
 ઇસ સંયમારાધનરૂપ પવિત્ર કાર્યકો ન છોડ । ક્યોં કિ-

“હાથ પાંચમેં જવ તક વલ હૈ, આંખોં મેં હૈ તેજ પ્રકાશ,
 શ્રવણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિક કા હુઆ ન વ્રાસ ।
 ધર્મ આચરણ કરલે પ્રાણી, ધરકર મન મેં ઉત્તમ સાજ,
 કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥ ”
 “અનભિક્રાન્તં ચ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય ”

સમય સમય આયુ ઘટતી હૈ, ક્ષણ ક્ષણ કાયાક્ષીણ હોતી હૈ । જિસ
 પ્રકાર મિટ્ટીકા ઢેલા મીજતે હી ગલ જાતા હૈ, ઉસી તરહ દેખતે ૨ યહ
 શરીર ગલ જાતા હૈ, ઇસલિયે તું અપને આત્મ-કલ્યાણ કી તરફ પ્રવૃત્તિ
 કર । ક્યોં કિ વય કે વ્યતીત હોને પર પરિવાદ, પોષણ ઔર પરિહાર
 આદિક દોષ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । ઇસ લિયે ઉસ હાલત મેં સંયમકા પાલન
 અશક્ય હોના હૈ । ઇસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-જવ તક સંયમ ધારણ
 કરને યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત નહીં હુઈ હૈ તવ તક ધર્માચરણ રૂપ અવસર
 કો હાથસે મત જાને દો, અર્થાત્ યહી અવસ્થા હૈ જિસમેં પ્રાણી ધર્માચરણ
 કર સકતા હૈ । સૂત્ર મેં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તર કા બોધક હૈ ઇસ સે યહ

સ્વજન સંબંધી પોતાનાથી વિરક્ત નથી થતાં ત્યાં સુધી આત્મકલ્યાણ કરવામાં
 અગ્રેસર બની બા, અને આ સંયમારાધન રૂપ પવિત્ર કાર્યને ન છોડ, કારણ કે-

“હાથ પાંચમેં જવ તક વલ હૈ, આંખોં મેં હૈ તેજ પ્રકાશ,
 શ્રવણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિકકા હુઆ ન વ્રાસ ।
 ધર્મ આચરણ કર લે પ્રાણી, ધરકર મનમેં ઉત્તમ સાજ ।
 કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥ ”

“અનભિક્રાન્તં ચ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય ”

સમય સમય આયુ ઘટે છે, ક્ષણે ક્ષણે કાયા ક્ષીણ થાય છે. જેમ માટીનું
 ઢેકું પાણી લાગતાં જ ગળી બાય છે તેમ દેખતાં દેખતાંમાં આ શરીર ગળી
 બાય છે, માટે તું પોતાના આત્મકલ્યાણ તરફ પ્રવૃત્તિ કર. કારણ કે વયના
 વ્યતીત થવાથી પરિવાદ, પોષણ અને પરિહાર આદિક દોષ ઉત્પન્ન થાય છે,
 તેથી તેવી હાલતમાં સંયમનું પાલન થવું અશક્ય છે, માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-
 ત્યાં સુધી સંયમ ધારણ કરવાની યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત થઈ નથી ત્યાં સુધી
 ધર્માચરણરૂપ અવસરને હાથથી જવા દો નહિ અર્થાત્ આજ અવસ્થા છે
 જેમાં ધર્માચરણ પ્રાણી કરી શકે છે. સૂત્રમાં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તરનો બોધક છે

યદ્વા-અવસીદતો વિનેયસ્યોત્સાહવર્ધનપરમિદં વાક્યમ્-હે પण्डित ! सम्प्रति स्वमनतिक्रान्तवया असि, अथ च परिवादादिदोषत्रयरहितोऽसि तावदेव संयमाय यतस्वेत्यर्थः, अत्रेदशक्षणाभिज्ञत्वेन पण्डित ! इति सम्बोधनं सङ्गच्छते ।

પ્રતીત હોતા હૈ કિ પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ૩ દોષોં મેં સે કિસી એક ખી દોષ સે જો અસ્પૃષ્ટ-રહિત હૈ ઓર અવસ્થા ખી ધર્માચરણ કરને કી જિસકી નિકલ ગઈ હૈ, પરંતુ યદિ વહ દૃઢસંહનન વાલા હૈ તો ખી પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષા કે યોગ્ય હૈ । જિસ પ્રકાર અગવાન્ કે માતા પિતાને-દેવા-નન્દા ઓર ઋષભદત્તને અપની વૃદ્ધાવસ્થામેં દીક્ષા ધારણ કી થી ।

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !”
 यह वाक्य संयम में सीदाते हुए शिष्यजनों में जो निरुत्साहित हो रहे हैं उनका उत्साह बढ़ाने के लिये कहा गया है । उनका उत्साह बढ़ाते हुए वे कह रहे हैं कि-हे पण्डित ! इस समय तुम प्रव्रज्या ग्रहण करने की अवस्था वाले हो, तथा परिवादादिक दोषत्रय रहित भी हो, सो तुम जब तक इस अवस्था में हो तब तक संयम ग्रहण के लिये प्रयत्नशील रहो । इसी अभिप्राय से सूत्रकार ने ‘पण्डित !’ इस संबोधन से उन्हें संबोधित किया है, कारण कि शिष्यजन स्वयं इस प्रकार की अपनी अवस्था को समझ रहे हैं, अतः यह संबोधन उनके लिये संगत बैठता है ।

તેથી એ પ્રતીત થાય છે કે-પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ત્રણ દોષોમાંથી કેઈ એક પણ દોષથી જે અસ્પૃષ્ટ-રહિત છે અને અવસ્થા પણ ધર્માચરણ કરવાની જેની વીતી ગઈ છે પરંતુ કદાચ તે દૃઢ સંહનનવાલા છે તો પણ પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષાને યોગ્ય છે. જેમ ભગવાનના માતાપિતાએ દેવાનંદા અને ઋષભદત્તે પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં દીક્ષા ધારણ કરી હતી

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !”
 આ વાક્ય, સંયમમાં કષ્ટ પામતા શિષ્યજનોમાં જે નિરુત્સાહિત બનેલ છે, તેનો ઉત્સાહ વધારવા માટે કહેવામાં આવેલ છે. તેનો ઉત્સાહ વધારીને તેઓ કહે છે કે-હે પંડિત ! આ વખત તમે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરવાની અવસ્થાવાળા છો, તથા પરિવાદાદિક દોષત્રય વગર પણ છો જેથી તમે જ્યાં સુધી આ અવસ્થામાં છો ત્યાં સુધી સંયમ ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્નશીલ રહો, આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકારે ‘પંડિત’ આ સંબોધનથી તેને સંબોધિત કરેલ છે, કારણ કે-શિષ્યજન સ્વયં આ પ્રકારની પોતાની અવસ્થાને સમજી શકે છે માટે આ સંબોધન તેને માટે સંગત-એસે છે.

અથવા—હે અનભિક્રાન્તયૌવન ! શિષ્ય ! ક્ષણં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવભેદેન ચતુર્વિધં જાનીહિ । તત્ર દ્રવ્યક્ષણથ સ્થાવરજઙ્ગમયોર્જઙ્ગમત્વં, તત્રાપિ દ્વીન્દ્રિયાદિપરિહારેણ પચ્ચેન્દ્રિયત્વં, તત્રાપિ સઙ્ગિજ્ઞત્વં, તત્રાપિ મનુષ્યત્વં, તેષ્વપિ વિશિષ્ટજાતિ-શોભનકુલોત્પત્તિદીર્ઘાયુદ્વનૈરુજ્યાદિકમુપલભ્ય ચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપોઽવસરો લબ્ધઃ । યતો દેવનારકમથે સમ્યક્ત્વં જ્ઞાનાવબોધરૂપશ્રુતસામાયિકોપલબ્ધિથ ભવતિ, તિર્યક્ષુ કસ્યચિદ્દેશવિરતિરુપજાયતે, સર્વવિરતિરૂપં ચારિત્રં મનુષ્યજન્મન્યેવ લભતે, સ એવ દ્રવ્યક્ષણઃ । સામાયિકથતુર્વિધઃ-સમ્યક્ત્વ-શ્રુત-દેશવિરતિ-સર્વવિરતિ-રૂપો વોધ્યઃ ।

અથવા—શિષ્ય કે લિયે સૂત્રકાર ફિર કહતે હૈં કિ-હે અનભિક્રાન્ત-યૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે ભેદસે ક્ષણ (અવસર) ચાર પ્રકાર કા હૈં ।

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવ કો જિસ ક્ષણ મેં પ્રાપ્ત હોતી હૈં ઉસકા નામ દ્રવ્યક્ષણ હૈં, ક્યોં કિ યહ જીવ અવ્યવહાર રાશિસે વ્યવહાર રાશિ મેં આતા હૈં વહાં પર પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ ગ્રહણ કરતા હૈં । ફિર વહ કર્મ સ્થિતિકો ભોગતા હુઆ ક્રમ સે દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર સ્થાવર ઓર ત્રસપર્યાય મેં । ત્રસપર્યાય કી પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ હૈં । ઇસમેં ભી દ્વીન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં કે સિવાય પંચેન્દ્રિયપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; ઇસમેં ભી સંજ્ઞિપન કી પ્રાપ્તિ; ઉસમેં ભી મનુષ્યપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; વહાં ભી વિશિષ્ટ જાતિ-ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ, દીર્ઘાયુ કા પાના, નિરોગ શરીર કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇસ મેં ભી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ

અથવા શિષ્ય માટે સૂત્રકાર ફરીવાર કહે છે કે-હે અનભિક્રાન્તયૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ ના ભેદથી ક્ષણ (અવસર) ચાર પ્રકાર છે.

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા હવને જે ક્ષણે પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ દ્રવ્ય ક્ષણ છે કારણ કે-આ હવ અવ્યવહાર રાશિથી વ્યવહાર રાશિમાં આવે છે ત્યાં પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય હવેમાં જન્મ ગ્રહણ કરે છે, પછી તે કર્મસ્થિતિને ભોગવતાં કર્મથી બેધન્દ્રિય હવેમાં ઉત્પન્ન થાય છે, આ પ્રકાર સ્થાવર અને ત્રસ પર્યાયની પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ છે. તેમાં પણ બેધન્દ્રિયાદિક પર્યાયો સિવાય પંચેન્દ્રિય પર્યાયની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ સંજ્ઞિપણની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયની પ્રાપ્તિ, ત્યાં પણ વિશિષ્ટ જાતિ-ઉચ્ચ કુળ-માં જન્મ, દીર્ઘાયુ ભોગવવું, નિરોગ શરીર પ્રાપ્ત થવું, તેમાં પણ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી, ઇત્યાદિ. એ બધું દ્રવ્ય

હોના; इत्यादि, ये सब द्रव्यक्षण हैं। ये सब बातें तुझे प्राप्त हुई हैं, क्यों कि—देवगति और नरकगति में तत्त्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्वसामायिक, और तत्त्वावबोधरूप श्रुतसामायिक की उपलब्धि जीवको प्राप्त होती है, तिर्यञ्चगति में किसी २ जीवको देशविरतिके लाभ होता है, सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति तो इस जीवको मनुष्यजन्म में ही होती है। इसी लिये यहां पर वही द्रव्यक्षण है। सामायिक ४ प्रकार का है—१ सम्यक्त्व,— २ श्रुत, ३ देशविरति और ४ सर्वविरति।

यहां पर द्रव्यक्षण का विचार किया है, सर्वविरतिरूप चारित्र की उत्पत्ति अथवा प्राप्ति की मुख्यता से मनुष्य पर्याय को ही प्रधानतया द्रव्यक्षण कहा है, क्यों कि सर्वविरतिरूप चारित्र के सिवाय आत्मा दूसरी किसी अवस्था से कर्मोंका क्षय कर मोक्ष प्राप्त नहीं करता। मोक्षप्राप्त करना यह इस की स्वाभाविक अवस्था है। जिस प्रकार तुंबड़ी के ऊपर मिट्टीका लेप लगाने से वह पानी के नीचे बैठ जाती है, ठीक उसी प्रकार यह जीव भी कर्ममल से लिप्त होने के कारण संसाररूप समुद्र के अन्दर बैठ जाता है। जैसे उस तुंबड़ीका लेप ज्यों २ पानी से गल कर हटता जाता है त्यों २ वह तुंबड़ी पानी के ऊपर आती जाती है, बिलकुल निर्लेप होने

ક્ષણ છે. આ બધી વાતો તને પ્રાપ્ત થયેલ છે, કારણ કે દેવગતિ અને નરકગતિમાં તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વસામાયિક અને તત્ત્વાવબોધરૂપ શ્રુતસામાયિકની ઉપલબ્ધિ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. તિર્યંચગતિમાં કોઈ કોઈ જીવને દેશવિરતિનો લાભ થાય છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ તો આ જીવને મનુષ્ય જન્મમાં જ થાય છે માટે આ ઠેકાણે તેજ દ્રવ્યક્ષણ છે. સામાયિક ચાર પ્રકારનું છે. ૧ સમ્યક્ત્વ, ૨ શ્રુત, ૩ દેશવિરતિ અને ૪ સર્વવિરતિ.

અહીં દ્રવ્યક્ષણનો વિચાર કર્યો છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉત્પત્તિ અથવા પ્રાપ્તિની મુખ્યતાથી મનુષ્યપર્યાયને જ પ્રધાનતયા દ્રવ્યક્ષણ કહ્યું છે, કારણ કે સર્વ વિરતિરૂપ ચારિત્ર સિવાય આત્મા બીજી કોઈ અવસ્થાથી કર્મોના ક્ષય કરી મોક્ષ પ્રાપ્ત કરતા નથી. મોક્ષપ્રાપ્ત કરવો તે તેની સ્વાભાવિક અવસ્થા છે. જેમ તુંબડી ઉપર માટીનો લેપ લગાડવાથી તે પાણીની નીચે ખેસી જાય છે, ઠીક તે પ્રકારે આ જીવ પણ કર્મમલથી લિપ્ત હોવાના કારણે સંસારરૂપ સમુદ્રની અંદર ખેસી જાય છે. જેમ જેમ જેવો તે તુંબડી ઉપરનો માટીનો લેપ પાણીથી ગળીને હટી જાય છે તેમ તેમ તે તુંબડી પાણી ઉપર આવે જાય છે. બિલકુલ નિર્લેપ થવાથી તે

પર વહ પાની કે ઝપર તૈરને લગતી હૈ, ટીક ઇસી પ્રકાર ડયોં ૨ કર્મમલકા લેપ ઇસ જીવાત્મા સે છૂટતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ યહ બી અપની શુદ્ધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતા જાતા હૈ, ઁક દિન યહ બી આતા હૈ જત્ર યહ કર્મમલ કે લેપ સે સર્વથા નિર્લેપ હો જાતા હૈ । સર્વથા નિર્લેપ હોના હી ઇસકી શુદ્ધ અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ હૈ । યહ કર્મોં કો નાશ કરને કી દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ઁકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં મેં ઇસકી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી, ક્યોં કિ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ વિના જ્ઞાન કે વિકાસ કે નહીં હો સકતી, જ્ઞાન કા વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય કે સિવાય અન્યત્ર નહીં હોતા । ઇસીલિયે પ્રધાનતયા ઇસીકો હી દ્રવ્યક્ષણ કહા હૈ । જ્ઞાનકે વિકાસ કા અભિપ્રાય પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ સે હૈ । જ્ઞાનસે પાંચ આસ્રવોં કી સર્વથા નિવૃત્તિ હો વહી જ્ઞાન કા વિકાસ હૈ । યત્પિ દેવપર્યાય મેં ભવપ્રત્યય અવધિ હોતા હૈ તથાપિ વહાં પર જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી યોગ્યતા નહીં હૈ ઁસકા ઁસાસ કારણ યહી હૈ । ઁસ જ્ઞાનસે વહાં પર પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી । ઇસી પ્રકાર નરક મેં બી પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ કે અભાવ સે દેશવિરતિ ઔર સર્વવિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી ।

પાણી ઊપર તરવા લાગે છે. તે પ્રકારે જેમ જેમ કર્મમલનો લેપ આ જીવાત્માથી છૂટી જાય છે તેમ તેમ તે પણ પોતાની શુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે. એક દિવસ એવો પણ આવે છે કે તે કર્મમલના લેપથી સર્વથા નિર્લેપ થઈ જાય છે. સર્વથા નિર્લેપ થવું તે તેની શુદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ છે. આ કર્મોનો નાશ કરવાની દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી જ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં તેની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી, કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ જ્ઞાનના વિકાસ સિવાય થતી નથી. જ્ઞાનનો વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય સિવાય અન્યત્ર નથી થતો, માટે પ્રધાનતયા તેને જ દ્રવ્યક્ષણ કહેલ છે. જ્ઞાનના વિકાસનો અભિપ્રાય પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિથી છે. જ્ઞાનથી પાંચ આસ્રવોની સર્વથા નિવૃત્તિ થાય તે જ્ઞાનનો વિકાસ છે. હવે દેવપર્યાયમાં ભવપ્રત્યય અવધિ હોય છે તથાપિ તે જગ્યાએ જે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની યોગ્યતા નથી તેનું પ્રાપ્ત કારણ એ છે કે તે જ્ઞાનથી ત્યાં પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિ થતી નથી. એ પ્રકારે નરકમાં પણ પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિના અભાવથી દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી.

ક્ષેત્રક્ષણસ્તુ યસ્મિન્ ક્ષેત્રે સર્વવિરતિસ્વરૂપચારિત્રોપલબ્ધિર્જાયતે, તથા હિ-
અધોલોકગ્રામસંવલિતતિર્યગ્લોક એવ, તત્રાપિ સમયક્ષેત્ર એવ, તત્રાપિ પશ્ચદશકર્મ-
ભૂમિષ્વેવ, તાસ્વપિ ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા સાર્દ્ધપશ્ચવિંશતિદેશેષ્વેવ ચારિત્રાવાપ્તિર્ભવતિ । સ
ચાયં ક્ષેત્રરૂપોઽવસરો દુર્લભઃ । યતોઽન્યક્ષેત્રેષુ સમ્યક્ત્વશ્રુતસામાયિકયોરેવોપલબ્ધિઃ,
કસ્યચિદ્દેશવિરતિસમ્ભવઃ, કિન્તુ ન સર્વવિરતિપ્રાપ્તિર્ભવતિ ।

ઇદમુક્તં ભવતિ-ક્ષેત્રમ્ ઝર્વાધસ્તિર્યગ્લોકરૂપમ્ । તત્રોર્ધ્વલોકે દેશવિરતિ-
સર્વવિરતિરૂપસામાયિકયોઃ ક્ષણો નાસ્તિ, અવશિષ્ટયોઃ ક્ષણોઽસ્તિ । અધોલોકે-

જિસ ક્ષેત્ર મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હિસ જીવ કો હોતી
હૈં ઉસકા નામ ક્ષેત્રક્ષણ હૈં । અધોલોક-ગ્રામ-સંવલિત અર્થાત્ સલિ-
લાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોક મેં હી, વહાં પર મી સમયક્ષેત્ર મેં હી, વહાં
મી પન્દર કર્મભૂમિયોં મેં હી, વહાં પર મી ભરતક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે ૨૫॥
દેશોં મેં હી હિસ જીવ કો ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં । યહ ક્ષેત્ર રૂપ અવસર
મી દુર્લભ હૈં, ક્યોં કિ અન્યક્ષેત્રોં મેં સમ્યક્ત્વસામાયિક ઓર શ્રુતસા-
માયિક, હિન દો કી ઉપલબ્ધિ, તથા કિન્હીં ૨ કો દેશવિરતિ રૂપ ચારિત્રકી
ઉપલબ્ધિ કી સંભાવના હૈં, પરન્તુ વહાં પર જીવોં કો સર્વવિરતિ કા લાભ
નહીં હોતા હૈં ।

ઝર્વલોક, અધોલોક, ઓર તિર્યગ્લોક, હિસ પ્રકાર ક્ષેત્ર ૩ પ્રકાર કા
હૈં । હિનમેં ઝર્વલોક મેં દેશવિરતિ ઓર સર્વવિરતિ રૂપ સામાયિક ધારણ
કરને કા અવસર હી નહીં હૈં । સમ્યક્ત્વસામાયિક ઓર શ્રુતસામાયિક
હિન દો કી જીવ કો વહાં પ્રાપ્તિ હો સકતી હૈં । અધોલોક મેં મી અધો-

ને ક્ષેત્રમા સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ હવને થાય છે તેનુ નામ
ક્ષેત્રક્ષણ છે. અધોલોકગ્રામસંવલિત અર્થાત્ સલિલાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોકમાં,
ત્યાં પણ સમયક્ષેત્રમાં ૧૮, ત્યાં પણ પંદર કર્મભૂમિઓમાં ૧૮, ત્યાં પણ ભરતક્ષેત્રની
અપેક્ષાથી સાઠપચીસ (૨૫૦) દેશોમાં આ હવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે.
તે ક્ષેત્રરૂપ અવસર પણ દુર્લભ છે. કારણ કે અન્ય ક્ષેત્રોમાં સમ્યક્ત્વસામાયિક
અને શ્રુતસામાયિક, આ બન્નેની ઉપલબ્ધિ, તથા કોઈ કોઈ ને દેશવિરતિરૂપ
ચારિત્રની ઉપલબ્ધિની સંભાવના છે, પરંતુ તે જગ્યાએ હવોને સર્વવિરતિનો
લાભ થતો નથી

ઊર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્લોક, આ પ્રકારે ક્ષેત્ર ત્રણ પ્રકારના છે. તેમાં
ઊર્ધ્વલોકમાં દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક ધારણ કરવાનો અવસર જ
નથી. સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બેની હવને ત્યાં પ્રાપ્તિ થઈ

ધ્વોલોકગ્રામં (સલિલાવતીવિજયં) વ્રજયિત્વોર્ધ્વલોકવદ્વિજ્ઞેયમ્, અધોલોક-ગ્રામેષુ ચ ચતુર્ણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ । તિર્યગ્લોકે મનુષ્યક્ષેત્રાદ્વહિઃ સર્વ-વિરતિં વિદ્યાય ત્રયાણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ, તેન મનુષ્યક્ષેત્ર એવ ચતુર્વિધ-સામાયિકપ્રાપ્તિરિતિ વોદ્યમ્ ।

કાલક્ષણઃ—કાલરૂપોઽવસરઃ, સ હિ અવસર્પિણ્યાં સુપમદુષ્પમા-દુષ્પમસુપમા-દુષ્પમા-રૂપેષુ તૃતીય-ચતુર્થ-પञ્ચમાત્મકેષુ ત્રિપ્વરકેષુ, ઉત્સર્પિણ્યાં દુષ્પમસુપમા-સુપમદુષ્પમારૂપયોસ્તૃતીય-ચતુર્થારકયોશ્ચ સર્વવિરતિરૂપસામાયિકોપલબ્ધિરૂપ-જાયતે । એતચ્ચ નૂતનધર્મપ્રાપ્તિમપેક્ષ્ય કથિતમ્ । પૂર્વપ્રતિપન્નાપેક્ષયા સંદરેણાવ-સ્થાયાં લોકત્રયે સર્વારકેષુ સર્વવિરતિસામાયિકોપલબ્ધિર્જાયતે ।

લોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) કો છોડકર ઝર્ધ્વલોક કી તરહ હી સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ અધોલોક મેં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતી વિજય મેં ચારોં હી સામાયિક કો પ્રાપ્ત કરને કા અવસર હૈ, પરન્તુ વાકી જગહ સમ્યક્ત્વ ઓર શ્રુત, ઇન દો સામાયિકોં કી પ્રાપ્તિ કા હી અવસર હૈ । તિર્યગ્લોક મેં મનુષ્યક્ષેત્ર સે બાહિર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક કે અતિ-રિક્ત વાકી ત્રીન સામાયિકોં કી ઉપલબ્ધિ કા અવસર જીવ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, પરન્તુ ચારોં પ્રકાર કે સામાયિક કી પ્રાપ્તિ તો જીવ કો મનુષ્ય-ક્ષેત્ર-ઢાઈઢીપ મેં હી હોતી હૈ ।

જિસકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ ઇસ જીવ કો હોતી હૈ ઉસકા નામ કાલક્ષણ હૈ । કાલ દો પ્રકારકા હૈ—ઉત્સર્પિણીકાલ ઓર અવસર્પિણીકાલ । ઇસમેં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકાર કા, ઓર અવસર્પિણી-કાલ મી ૬ પ્રકારકા હૈ । ઉત્સર્પિણી કે ૬ ભેદ—૧ દુષ્પમદુષ્પમા,

શકે છે. અધોલોકમાં પણ અધોલોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) ને છોડીને ઉર્ધ્વ-લોકની માફક જ સમજવું જોઈએ, અર્થાત્ અધોલોકમાં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતી વિજયમાં ચારે સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લેવાનો અવસર છે, પરંતુ બીજી જગ્યાએ સમ્યક્ત્વ અને શ્રુત એ બે સામાયિકોને પ્રાપ્ત કરવાનોજ અવસર છે, તિર્યગ્લોકમાં મનુષ્યક્ષેત્રથી બહાર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકના અતિરિક્ત બાકીના ત્રણ સામાયિકોની ઉપલબ્ધિનો અવસર જીવને પ્રાપ્ત થાય છે, પરંતુ ચારે પ્રકારની સામાયિકની પ્રાપ્તિ તો જીવને મનુષ્યક્ષેત્ર-ઘડીઢીપમાં જ થાય છે

બે કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ કાલક્ષણ છે. કાલ બે પ્રકારે છે—ઉત્સર્પિણીકાલ અને અવસર્પિણીકાલ, આમાં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકારે, અને અવસર્પિણીકાલ પણ ૬ પ્રકારે છે, ઉત્સર્પિણીના

ભાવક્ષણસ્તુ દ્વિવિધઃ—કર્મભાવક્ષણો, નોકર્મભાવક્ષણશ્ચ । કર્મભાવક્ષણશ્ચ કર્મ-
નામુપશમ-ક્ષયોપશમ-ક્ષયા-ન્યતમપ્રાપ્તિરૂપઃ । તત્રોપશમચારિત્રક્ષણ ઉપશમશ્રેણ્યાં

૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમ-સુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫ સુષમા, ૬ સુષમ-
સુષમા, યે હૈં । इसी प्रकार अवसर्पिणी के भी—(१) सुषमसुषमा, (२)
सुषमा, (३) सुषमदुष्षमा, (४) दुष्षमसुषमा, (५) दुष्षमा, (६) दुष्षम-
दुष्षमा, ये ६ भेद हैं । जिसकाल में जीवों के ज्ञानादि शुभभावों की
वृद्धि तथा आयुष्य अवगाहना आदि की और वर्ण गन्ध रस स्पर्श के
पर्यायों की वृद्धि होती है वह उत्सर्पिणी है, और जिस काल में जीवों के
ज्ञानादि शुभभावों का हास, तथा आयुष्य अवगाहना आदि का और
वर्ण गन्ध रस स्पर्श की पर्यायों का हास होता है वह अवसर्पिणी है । इनमें
अवसर्पिणी के सुषमदुष्षमा—तीसरे काल में, दुष्षमसुषमा—चतुर्थकाल
में और दुष्षमा—पंचमकाल में, तथा उत्सर्पिणी के दुष्षमसुषमा—तीसरे
काल में और सुषमदुष्षमानामक चतुर्थकाल में सर्वविरतिरूप सामा-
यिक की प्राप्ति जीव को होती है । यह कथन नवीन धर्मप्राप्ति की अपेक्षा
से कहा है । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षासे संहरणावस्था में लोकत्रय में सम-
स्तकालों में सर्वविरतिरूप सामायिक की उपलब्धि जीव को हो सकती है ।

ભાવક્ષણ દો પ્રકાર કા હૈ ૧ કર્મભાવક્ષણ ઓર ૨ નોકર્મભાવક્ષણ ।

૬ ભેદ—૧ દુષ્ણમદુષ્ણમા, ૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમસુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫
સુષમા, ૬ સુષમસુષમા, એ છે. આ પ્રકારે અવસર્પિણીના પણ (૧) સુષમસુષમા,
(૨) સુષમા (૩) સુષમદુષ્ણમા, (૪) દુષ્ણમસુષમા, ૫ દુષ્ણમા, ૬ દુષ્ણમદુષ્ણમા,
આ છ ભેદ છે. જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોની વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય
અવગાહના આદિની અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શના પર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે તે
ઉત્સર્પિણી છે, અને જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોનો હાસ તથા આયુષ્ય
અવગાહના આદિનો અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શની પર્યાયોનો હાસ થાય છે તે
અવસર્પિણી છે. તેમા અવસર્પિણીના સુષમદુષ્ણમા—ત્રીજા કાળમાં દુષ્ણમસુષમા—ચોથા
કાળમાં અને દુષ્ણમા—પંચમ કાળમાં, તથા ઉત્સર્પિણીના દુષ્ણમસુષમા—ત્રીજા કાળમાં
અને સુષમદુષ્ણમા નામક ચોથા કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ જીવને
થાય છે. આ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી કહ્યું છે. પૂર્વપ્રતિપન્નની
અપેક્ષાથી સંહરણાવસ્થામાં લોકત્રયમાં સમસ્ત કાળોમાં સર્વવિરતિરૂપસામાયિકની
ઉપલબ્ધિ જીવને થાય છે.

ભાવક્ષણ બે પ્રકારના છે ૧ કર્મભાવક્ષણ અને ૨ નોકર્મભાવક્ષણ, ચારિત્ર-

ચારિત્રમોહનીય કર્મકા-ક્ષય, ક્ષયોપશમ ઓર ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓ મેં સે કિસી મી અવસ્થારૂપ હોના-સો કર્મભાવક્ષણ હૈ। ઉસમેં ઉપશમ-શ્રેણી મેં ચારિત્રમોહનીય કર્મ કી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમ હોને પર અન્ત-મુહૂર્તપરિમિત જો ઉપશમચારિત્ર હોતા હૈ વહ ઉપશમચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય હોને પર અન્ત-મુહૂર્તપરિમિત જો હ્રદયસ્થ ઓર યથાખ્યાત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણ ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ। ઉસકા કાલ ઉત્કૃષ્ટ દેશ જન એક કરોડ પૂર્વકા હૈ।

કર્મભાવક્ષણ કા મતલબ હૈ-ચારિત્ર કે આવારક-(રોકનેવાલા) ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષય, ક્ષયોપશમ, ઓર ઉપશમ કી પ્રાપ્તિકા અવસર। ઉસમેં ચારિત્રમોહનીય કર્મ કી અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમસે જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ઉપશમ-ચારિત્ર હૈ। વહ ઉપશમશ્રેણિ મેં હોતા હૈ, ઇસકા કાલ અન્તમુહૂર્ત હૈ। અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જીવ કો જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ક્ષાયિકચારિત્ર હૈ। ઉપશમશ્રેણી મેં ઉપશમચારિત્ર ઓર ક્ષપકશ્રેણી મેં ક્ષાયિકચારિત્ર હોતા હૈ। ઉપશમ-

મોહનીય કર્મનો-ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓમાં કોઈ પણ અવસ્થારૂપ થવું, તે કર્મભાવક્ષણ છે, તેમાં ઉપશમશ્રેણીમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો ઉપશમ થવાથી અન્તમુહૂર્ત પરિમિત ને ઉપશમચારિત્ર થાય છે તે ઉપશમચારિત્રનો ક્ષણ છે. ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો સર્વથા ક્ષય થવાથી અન્તમુહૂર્તપરિમિત ને હ્રદયસ્થ અને યથાખ્યાત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્રનું ક્ષણ છે, ક્ષયોપશમચારિત્ર ક્ષણનું ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી થાય છે, તેનો કાળ ઉત્કૃષ્ટ દેશન એક કરોડ પૂર્વનો છે

કર્મભાવક્ષણનો મતલબ છે ચારિત્રનો આવારક (રોકવાવાળા) ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમની પ્રાપ્તિનો અવસર, તેમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓનું ઉપશમ ને ચારિત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ઉપશમચારિત્ર છે. આ ઉપશમશ્રેણીમાં થાય છે. તેનો કાળ અન્તમુહૂર્ત છે. અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓના સર્વથા ક્ષયથી જીવને ને ચારિત્ર પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ક્ષાયિકચારિત્ર છે. ઉપશમશ્રેણીમાં ઉપશમચારિત્ર અને ક્ષપકશ્રેણીમાં ક્ષાયિકચારિત્ર થાય છે. ઉપશમશ્રેણીના સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૧માં

ચારિત્રમોહનીયોપશમે સત્યન્તર્મુહૂર્તપરિમિતઃ, ચારિત્રમોહનીયક્ષયે ચાન્તર્મુહૂર્ત-
પરિમિતશ્ચદ્વસ્થયથાખ્યાતચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપઃ । ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણઃ કર્મણઃ ક્ષયો-
પશમેન ભવતિ, સ ચોત્કૃષ્ટતો દેશોનપૂર્વકોટિવર્ષપરિમિતો વિજ્ઞેયઃ ।

નોકર્મભાવક્ષણથ-આલસ્યમોહાવર્ણવાદસ્તમ્ભાદેરભાવે સતિ સમ્યક્ત્વાદિ-
સામાયિકોપલબ્ધિરૂપઃ । આલસ્યમોહાદ્યુપહતઃ સંસારોચ્છેદનસમર્થ મનુષ્યભવં
પ્રાપ્યાપિ ન બોધ્યાદિકં લભત इति तात्पर्यम् । કેવિત્તુ-નોકર્મભાવક્ષણં ‘રિક્તક્ષણ’
इत्यभिदधति ।

શ્રેણી કે સ્થાન ૮ વાં ૯ વાં ૧૦ વાં ઓર ૧૧ વાં ગુણસ્થાન હૈં । ૧૨ વૈં
ગુણસ્થાન તક જીવ કો છદ્ધસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧
વૈં ૧૨ વૈં ૧૩ વૈં ઓર ૧૪ વૈં ગુણસ્થાન મૈં હોતા હૈ । છદ્ધસ્થાવસ્થા કે ચારિત્ર
કો છદ્ધસ્થચારિત્ર ઓર સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મ કે ક્ષય અથવા ઉપશમ સે
આત્મા કે શુદ્ધ સ્વરૂપ મૈં સ્થિર હોને કો યથાખ્યાત ચારિત્ર કહતે હૈં । અનં-
તાનુબંધી આદિ ૧૨ કષાયોં કા ઉદયભાવી ક્ષય તથા ઉન્હીંકે નિષેકોં
કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ ઓર સંજ્વલન તથા નોકષાય કા યથાસંભવ
ઉદય હોને પર જો ચારિત્ર હોતા હૈં ઉસે ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર કહતે હૈં ।
હસકા દૂસરા નામ સરાગસંયમ મી હૈ ।

નોકર્મભાવક્ષણ-આલસ્ય, મોહ, અવર્ણવાદાદિક કે અભાવ હોને
પર જો સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિક કી પ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈં વહ નોકર્મ-
ભાવક્ષણ હૈ, ક્યોં કિ આલસ્ય ઓર મોહાદિક સે ઉપહત હુઆ પ્રાણી
સંસાર કા નિર્મૂલ ઉચ્છેદન કરને મૈં સમર્થ મનુષ્ય ભવકો પ્રાપ્ત કરકે

ગુણસ્થાન છે. ક્ષયકશ્રેણિનું સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૨મું ગુણસ્થાન છે. ૧૨
મા ગુણસ્થાન યુધી જીવને છદ્ધસ્થાવસ્થા રહે છે. યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧
-૧૨-૧૩ અને ૧૪ માં ગુણસ્થાનમાં થાય છે. છદ્ધસ્થાવસ્થાના ચારિત્રનું છદ્ધસ્થ
ચારિત્ર અને સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મના ક્ષય અથવા ઉપશમથી આત્માના શુદ્ધ
સ્વરૂપમાં સ્થિર હોવું તેને યથાખ્યાતચારિત્ર કહે છે. અનતાનુબંધી આદિ ૧૨
કષાયોના ઉદયભાવી ક્ષય તથા તેના નિષેકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ. અને સંજ્વલન
તથા નોકષાયનું યથાસંભવ ઉદય હોવા પર જે ચારિત્ર થાય છે તેને ક્ષાયોપ-
શમિકચારિત્ર કહે છે તેનું બીજું નામ સરાગસંયમ પણ છે

નોકર્મભાવક્ષણ-આળસ, મોહ, અવર્ણવાદાદિકનો અભાવ થવાપર
જે સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ થયા કરે છે તે નોકર્મભાવક્ષણ છે, કારણ
કે આળસ અને મોહાદિકથી ઉપહત થયેલ પ્રાણી સંસારનો નિર્મૂળ ઉચ્છેદન

અત્રાયં પ્રકરણાર્થઃ સંક્ષિપ્તઃ—દ્રવ્યક્ષણો જડમત્વાદિવિશિષ્ટમાનવભવસ્વરૂપઃ ।
ક્ષેત્રક્ષણ આર્યક્ષેત્રરૂપઃ । કાલક્ષણો ધર્માનુષ્ઠાનસમયઃ । ભાવક્ષણઃ ક્ષયોપશમાદિ-
રૂપો વિજેયઃ । અતો હે પण्डित ! एतादृशं चतुर्विधं धर्माचरणायातिदुर्लभं क्षणमव-
गम्य संयमानुपालनतत्परोऽवश्यं भवेति भावः ॥ सू० ८ ॥

इत्थमतिदुरापक्षणमवाप्य यावच्च श्रोत्रादीनां शक्तयो न परिहीनास्तावदात्मार्थं
प्रयासो विधेय इति दर्शयति—‘जावे—’त्यादि ।

मूलम्—जाव सोयपरिणणाणा अपरिहीणा, नेत्तपरिणणाणा
अपरिहीणा, फरिसपरिणणाणा अपरिहीणा, इच्चेएहिं विरूवरूवेहिं
पणणाणेहिं अपरिहीणेहिं आयट्ठं सम्मं समणुवासिज्जासि-त्ति
वेमि ॥ सू० ९ ॥

भी बोधि आदि को प्राप्त नहीं कर सकता है । नो कर्म भावक्षण को कोई
२ आचार्य रिक्तक्षण भी कहते हैं ।

इस प्रकरण को संक्षिप्त करते हुए टीकाकार कहते हैं—त्रसपर्याय-
विशिष्ट मानवभवस्वरूप (१) द्रव्यक्षण है, आर्यक्षेत्ररूप (२) क्षेत्रक्षण,
धर्मानुष्ठान का समय—(३) कालक्षण और क्षयोपशमादिरूप (४) भाव-
क्षण है, इसलिये हे परमार्थज्ञ ! मेधावी ! इस प्रकार के इस चतुर्विध क्षण
को धर्माचरण करने के लिये अत्यन्त दुर्लभ मान कर संयम के पालन करने
में अवश्य २ मन को लगाओ, नहीं तो समय के हाथसे निकल जाने
पर अन्त में पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ हाथ न आयेगा, इस लिये
प्राप्त हुए इस चतुर्विध क्षण को संयमाराधन से सफलित करो ॥ सू० ८ ॥

કરવામાં સમર્થ મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરીને પણ બોધિ આદિને પ્રાપ્ત કરી શકતા
નથી. નોકર્મભાવક્ષણને કોઈ કોઈ આચાર્ય રિક્તક્ષણ પણ કહે છે

આ પ્રકરણને સંક્ષિપ્ત કરતા ટીકાકાર કહે છે— ત્રસપર્યાયવિશિષ્ટ માનવ-
ભવસ્વરૂપ (૧) દ્રવ્યક્ષણ છે, આર્યક્ષેત્રરૂપ (૨) ક્ષેત્રક્ષણ, ધર્માનુષ્ઠાનનો સમય
(૩) કાલક્ષણ અને ક્ષયોપશમાદિરૂપ (૪) ભાવક્ષણ છે, માટે હે પરમાર્થજ્ઞ !
મેધાવી ! આ પ્રકારના ચતુર્વિધ ક્ષણને ધર્માચરણ કરવા માટે અત્યંત દુર્લભ
માનીને સંયમપાલન કરવામાં લગાવો નહિ તો સમય નીકળી જવા પછી અંતમા
પશ્ચાત્તાપ સિવાય કંઈ પણ હાથ આવશે નહિ, માટે આ પ્રાપ્ત થયેલ ચતુર્વિધ
ક્ષણને સંયમારાધનથી સફલિત કરો ॥ સૂ० ૮ ॥

छाया—यावच्छ्रोत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, नेत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, घ्राणपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, जिह्वापरिज्ञानानि अपरिहीनानि, स्पर्शपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, इत्येतैर्विरूपरूपैः प्रज्ञानैरपरिहीनैरात्मार्थं समनुवासयेत्, इति ब्रवीमि ॥ सू० ९ ॥

टीका—‘याव’—‘दित्यादि । यावज्जरया रोगेण च श्रोत्रस्य परिज्ञानानि अपरिहीनानि=न नश्यमानानि तावदात्मार्थं समनुवासयेदिति सम्बन्धः । एवं यावच्छब्दः सर्वत्र योज्यः । एवमन्येषामपि नेत्रादीनां परिज्ञानानि यावन्न क्षीयमाणानि सन्ति तावच्छ्रेयो विचिन्तनीयमिति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार अत्यंत कठिनता से प्राप्त करने योग्य इस क्षण को पाकर के जब तक श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रिय की अपने २ विषय को जानने की शक्ति कमजोर नहीं पड़ती है तब तक आत्मकल्याण के लिये प्रयास करते रहना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘जाव सोयपरिण्णाणा’ इत्यादि ।

जब तक वृद्धावस्था या किसी रोग से तेरा कर्ण—इन्द्रियजन्य ज्ञान अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से विकल नहीं हुआ है, नेत्र—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने विषय ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, घ्राण—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने ज्ञेय को जानने की शक्ति से क्षीण नहीं हुआ है, जिह्वा—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने पदार्थ को ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, स्पर्शन—इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक कर्कश—कठोरादि अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से हीन नहीं हुआ

आ प्रकार अत्यंत कठिनताથી प्राप्त करवायेज्य आ क्षणने भेणवीने न्यां सुधी श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रियनी पोतपोतानां विषयने लक्षणवानी शक्ति कमजोर थती नथी त्या सुधी आत्मकल्याण भाटे प्रयास करता रहेयो नेछये, ये वात सूत्रकार केहे छेः—

‘जाव सोयपरिण्णाणा’ इत्यादि. न्या सुधी वृद्धावस्था अगर केछ रोगथी ताई केहु—इन्द्रियजन्य ज्ञान पोताना विषयने अहणु करवानी शक्तिथी विकल नथी थयु, नेत्र—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यासुधी पोताना विषय अहणु करवानां सामर्थ्यथी रहित नथी थयु, घ्राण—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यासुधी पोताना ज्ञेयने लक्षणवानी शक्तिथी क्षीण नथी थयु, जिह्वा—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्या सुधी पोताना पदार्थने अहणु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयु, स्पर्शन—इन्द्रियजन्य ज्ञान न्या सुधी कर्कश कठोरादि पोताना विषयने अहणु करवानी शक्तिथी हीन

હૈ તવ તક અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં કે જ્ઞાન કી વિદ્યમાનતા મેં હી હૈ ભવ્ય પ્રાણી ! તૂ અપના કલ્યાણ-અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શનચારિત્ર-આરાધન રૂપ નિજ પ્રયોજન કો સિદ્ધ કરલે । યહ નિશ્ચિત હૈ-વૃદ્ધાવસ્થા આને પર, યા કિસી ભયંકર રોગ કે હોને પર-ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિયાં યા સ્વયં ઇન્દ્રિયાં હી ક્ષીણ હો જાતી હૈં । જિસ સમય ચેચક નિકલા કરતી હૈ કઈ વ્યક્તિયોં કી આંખેં ફૂટ જાતી હૈં, કાન બી વહિરે હો જાતે હૈં । લકવા કી વીમારી મેં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય હો જાતી હૈ, વચન વર્ગણા ટીક નહીં નિકલતી, ચલતે સમય પૈર કહીં રખતે હૈં પડતે હૈં કહીં । કહા બી હૈ—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ઞ્રષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,

દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ વાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂપતે,

હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“ દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છવિ, વંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂપ રહી પરની ઘરની, અતિરંક ભયો પરયંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર, મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે, તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥

નથી થયું ત્યાં સુધી અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોના જ્ઞાનની વિદ્યમાનતામાં જ હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું પોતાનું કલ્યાણ અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્ર આરાધનરૂપ નિજ પ્રયોજનને સિદ્ધ કરી લે. એ નિશ્ચિત છે વૃદ્ધાવસ્થા આવવાથી અગર કોઈ ભયંકર રોગ થવાથી ઇન્દ્રિયોની શક્તિઓ અગર સ્વયં ઇન્દ્રિયો જ ક્ષીણ થાય છે. જે વખતે શીતલા નીકળે છે તે વખતે કઈ વ્યક્તિઓની આંખો ફૂટી જાય છે, કાન પણ બહાર થઈ જાય છે, લકવાની બીમારીમાં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય બની જાય છે, વચન-વાણી પણ ઠીક નીકળતી નથી, ચાલતી વખતે પગ કયાંય રાખે છે અને પગ પડે છે કયાંય કહ્યું પણ છે—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ઞ્રષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,

દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ વાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂપતે,

હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“ દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છવિ વંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂપ રહી પરની ઘરની અતિ રંક ભયો પરયંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥

“વ્યાધીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।
આયુઃ પરિસ્ત્રવતિ મિત્રઘટાદિવામ્ભો,
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

યહ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે । હસ અવસ્થામેં બુદ્ધિ પ્રાયઃ નષ્ટ હો જાતી છે, કૂબડ નિકલ આતી છે, દાંત ગિર પડતે હૈં, બાલ સફેદ હો જાતે હૈં, બલ મી કમ હો જાતા હૈ, આંખોં સે કમ સૂઝને લગતા હૈ, કાનોં સે શબ્દ સુનાઈ નહીં પડતે, હાથ પૈર ઢીલે ઓર ચલતે ફિરને સે લાચાર હો જાતે હૈં, કફ ઓર શ્વાસકા જોર બઢતા હૈ, વૈરિયોં કી તરહ સમસ્ત રોગ હસ અવસ્થા મેં અપના બદલા લેનેકે લિયે હી માનોં હકદમ ટૂટ પડતે હૈં, તૃષ્ણા કી પ્રબલતા હસ અવસ્થા મેં હો જાતી હૈ, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરને કી શક્તિ સે શૂન્ય હો જાતી હૈ । જિસ તરહ કબૂતર પર બાજ છપડને કી તાકમેં રહતા હૈ, અથવા ચિલી ચૂહે પકડને કી તાક લગાઈ બેઠી રહતી હૈ, ઠીક હસી તરહ મૌત મી હસ અવસ્થા મેં પ્રાણ પહેરુ કો પકડને કે લિયે તૈયાર રહતી હૈ । હસી પ્રકાર હસ અવસ્થા મેં જવાની કા બલ છિપ જાયા કરતા હૈ । મયૂરોં કી ધ્વનિ સુનને સે જૈસે

“વ્યાધીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।
આયુઃ પરિસ્ત્રવતિ મિત્રઘટાદિવામ્ભો,
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

આ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે, આ અવસ્થામાં બુદ્ધિ નષ્ટપ્રાય થાય છે, બલ પણ ઓછું થાય છે, વાકાપણ આવે છે, દાંત પડી જાય છે, બાલ સફેદ થાય છે, આંખોથી ઓછું દેખાય છે, કાનોથી શબ્દ સંભળાતો નથી, હાથ પગ ઢીલા અને ચાલવા કરવાથી લાચાર બને છે, કફ અને શ્વાસનું જોર વધે છે, વૈરીઓની માફક સમસ્ત રોગ આ અવસ્થામાં બદલો લેવા માટે જાણે એકદમ તુટી પડે છે, તૃષ્ણાની પ્રબલતા આ અવસ્થામાં થાય છે, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય અહણ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય થાય છે. જેવી રીતે કબુતર પર બાજ ઝડપ મારવાની તક શોધે છે, અથવા ખિલાડી ઉદર પકડવાની તાક લગાવી બેસે છે, તેવી રીતે મોત પણ આ અવસ્થામાં પ્રાણપ્રેરણે પકડવા તૈયાર રહે છે. જે પ્રકારે વાદળોની અંદર સૂર્યનો પ્રકાશ ઢંકાઈ જાય છે તે પ્રકારે આ અવસ્થામાં જીવાનીનું બળ છુપાઈ જાય છે. મોરની ધ્વનિ સાંભળવાથી જેમ ચંદનવૃક્ષોમાં

इत्येतैः=पूर्वोक्तैर्विरूपरूपैः-इष्टानिष्टस्वभावतया नानाप्रकारैः प्रज्ञानैः=प्रकृष्ट-
ज्ञानैरपरिहीनैः=अपरिक्षीणैः सद्भिः आत्मार्थम्=आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञान-
दर्शन-चारित्र्यरूपस्तम् ।

यद्वा-आत्मनेऽर्थो हितं प्रयोजनमिति यावत्, तच्चारित्र्यानुष्ठानम्, तम्,
समनुवासयेत्=भावयेत्, रञ्जयेदिति वा, यथोक्तानुष्ठानेनात्मानं समनुपाल-
येदिति भावः ।

इति=पूर्वोक्तं ब्रवीमि=सुधર્મા स्वामी जम्बूस्वामिनमाह-यद्भगवतः सकाशात्
श्रुतं तदेवाहं सूत्रात्मना कथयामि॥ सू० ९ ॥ इति ॥

इति द्वितीयाध्ययनस्य प्रथमोद्देशः सव्याख्य समाप्तः ॥ ૧ ॥

ચન્દનવૃક્ષોં મેં લપટે હુણ મુજંગોં કે વન્ધન ઢીલે પડ જાતે હૈં વૈસે હી खांसी
કે खुल्ल, खुल्ल शब्द से इस अवस्था में अस्थियों की संधियां शिथिल हो
जाया करती हैं । यह जरा एक भयंकर व्याधी की तरह सामने आकर
निर्भय रूप से खड़ी हो जाती है, उस समय शत्रुओं की तरह रोग इस
पर प्रहार करने से नहीं चूकते, फूटे घड़े में से पानी की तरह आयु निक-
लनी चली जाती है तो भी आश्चर्य की बात है कि-प्राणी अपने आत्म
कल्याण की तरफ ध्यान नहीं देता ? ।

इसलिए जब तक वृद्धावस्था या किसी रोगसे तेरी शारीरिक शक्ति
क्षीण नहीं हुई है और प्रत्येक इन्द्रिया जब तक सक्रिय बनी हुई है तब
तक सूत्रकार कहते हैं कि-“आत्मार्थ समनुवासयेत्” आत्माके लिये
हितकारी सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र्य की प्राप्ति से अपने
आपको भावित करो ।

લટકેલા આપોના બંધન ઢીલા પડે છે તેમ ખાંસીના ખુલ્લ-ખુલ્લ શબ્દથી આ
અવસ્થામાં હાડકાઓની સંધિયો શિથિલ બની જાય છે

આ વૃદ્ધાવસ્થા એક ભયંકર વ્યાધિની માફક સામે આવીને નિર્ભય રૂપથી
ખડી થઈ જાય છે, તે વખતે શત્રુઓની માફક રોગ પણ પ્રહાર કરવામાં મુક્તતા
નથી, ફુટેલા ઘડામાંથી પાણીની માફક આયુ નિકળવા માંડે છે, તો પણ આશ્ચ-
ર્યની વાત છે કે પ્રાણી પોતાના આત્મકલ્યાણની નરહ ધ્યાન દેતા નથી. માટે
ત્યાં સુધી વૃદ્ધાવસ્થા અગર કોઈ રોગથી તારી શારીરિક શક્તિ ક્ષીણ નથી
થઈ, અને પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય ત્યાં સુધી સચકત બનેલી છે ત્યાં સુધી સૂત્રકાર
કહે છે કે-“આત્માર્થ સમનુવાસયેત્” આત્મા માટે હિતકારી સમ્યગ્દર્શન
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી પોતાને ભાવિત કરે

યહાં આત્મા કે લિયે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્ર કા પ્રધાનતયા ગ્રહણ હોતા હૈ । ક્યોં કિ યથાખ્યાતચારિત્રકે વિના કેવલજ્ઞાન તથા કેવલ-દર્શન નહીં હો સકતે । ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં યથાખ્યાત ચારિત્ર કી પૂર્ણતા હોતે હી યહ આત્મા “ અ હ ડ ક લૃ ” ઇન પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કાલ તક વહાં રહકર મુક્તિમેં જા વિરાજતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા સે ચારિત્ર કી યહાં પર પ્રધાનતા કહી હૈ । સમ્યગ્દર્શન કી પૂર્ણતા ચતુર્થ ગુણસ્થાનમેં, સમ્યગ્જ્ઞાનકી પૂર્ણતા તેરહવેં ગુણસ્થાન મેં ઓર સમ્યક્ ચારિત્ર કી પૂર્ણતા ચૌદ હવેં ગુણસ્થાન મેં શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હૈ ।

ઇસ પૂર્વોક્ત અર્થ કો સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-હે જમ્બૂ ! મૈને જૈસા ભગવાન સે સુના હૈ વૈસા હી તુજે કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

॥ યહ દ્વિતીય અધ્યયન કા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત હુઆ ॥ ૨-૧ ॥

અહીં આત્મા માટે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્રનું પ્રધાનતયા ગ્રહણ થાય છે, કારણ કે યથાખ્યાતચારિત્ર વિના કેવળજ્ઞાન તથા કેવળદર્શન નથી થતું. ચૌદમા ગુણસ્થાનમા યથાખ્યાતચારિત્રની પૂર્ણતા થતાં જ આ આત્મા “ અ હ ડ ક લૃ ” આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોનું ઉચ્ચારણ કાલ તક ત્યાં રહીને મુક્તિમાં બિરાજે છે. આ અપેક્ષાથી ચારિત્રની આ ઠેકાણે પ્રધાનતા કહી છે. સમ્યગ્દર્શનની પૂર્ણતા થાયા ગુણસ્થાનમાં, સમ્યગ્જ્ઞાનની પૂર્ણતા તેરમા ગુણસ્થાનમાં, અને ચારિત્રની પૂર્ણતા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે

આ પૂર્વોક્ત અર્થને સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે કે-હે જમ્બૂ ! મેં જેવી રીતે ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમને કહું છું. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

॥ બીજા અધ્યયનનો પહેલો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૧ ॥

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

ઉક્તઃ પ્રથમોદ્દેશઃ, સામ્પ્રતં દ્વિતીયો વ્યાખ્યાયતે, તત્રાયં સમ્બન્ધઃ-પ્રથમે વિષયકપાય માતા પિત્રાદિ લોકવિજયેન સંયમિનો મોક્ષકારણચારિત્રસ્ય પ્રાપ્તિઃ, કિંચ્ચ લોકવિજયેન યાવદ્રોગજરાદયો નાયાતાસ્તાવદાત્માર્થં સંયમો વિધેય इत्यपि प्रतिपादितम् ।

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

પ્રથમ ઉદ્દેશ કા વર્ણન હો ચુકા, અવ દ્વિતીય ઉદ્દેશ કા વર્ણન કરતે હૈં-ઇસ કે વર્ણન કરને કા અભિપ્રાય યહ હૈં કિ-પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં જો યહ વાત વતલાઈ ગઈ હૈં કિ-“વિષય કપાય ઔર માતા પિતા આદિ જો લોક હૈં ડન પર વિજય પ્રાપ્ત કરને સે, અર્થાત્ કપાયોં કો જીતને ઔર માતા પિતા આદિ કે સ્નેહ નિવારણ સે સંયમી કો મોક્ષ કે કારણભૂત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં । તથા લોક પર વિજય કરલેને સે જવ તક રોગાદિક અથવા જરાવસ્થા વગૈરહ જો સંયમ કો ધારણ કરને મેં પ્રતિબંધક હૈં, વે ઇસ શરીર કો આકર નહીં ઘેરતે હૈં ઇસકે પહિલે આત્મકલ્યાણ કે લિયે સંયમ કા આરાધન કરલેના ચાહિયે ” ॥

આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ

પહેલાં ઉદ્દેશનું વર્ણન સમાપ્ત થયું. હવે બીજા ઉદ્દેશનું વર્ણન કરે છે. તેનું વર્ણન કરવાનો અભિપ્રાય એ છે કે મહેલા ઉદ્દેશમાં જે વાત બતાવવામાં આવી છે કે “વિષયકપાય અને માતાપિતા આદિ જે લોક છે તે ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાથી અર્થાત્ કપાયેને છુતવાથી અને માતાપિતા આદિનો સ્નેહ નિવારણથી સંયમીને મોક્ષના કારણભૂત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. અને લોક ઉપર વિજય કરવાથી ત્યાં સુધી રોગાદિક અને જરાવસ્થા વિગેરે જે સંયમને ધારણ કરવામાં પ્રતિબંધક છે. તે આ શરીરને આવીને ઘેરતા નથી. તેનાં પહેલાં આત્મકલ્યાણ માટે સંયમનું આરાધન કરી લેવું જોઈએ.

અત્ર ચ સંયમિનઃ કદાચિન્મોહનીયોદયાદજ્ઞાનલોભાદિસમુદયાદાત્મદોષાદ્વા સંયમે ચારતિરાવિર્ભૂતા તસ્યા નિરસનં, તથા યેઽપિ વિષયિણોઽલ્પમધિકં વા કાલં સંયમમનુપાલ્યાપિ પૂર્વોક્તદોષેણ મોહોદયાત્સંયમે શૈથિલ્યં પ્રાપ્નુવન્તિ તેષાં સંયમે દૃઢતા, વિષયેષુ ચાદૃઢતા યથા ભવેત્તથાઽઽહ ‘અરહં’ ઇત્યાદિ।

સંયમી કો કદાચિત્ મોહ કે ઉદય સે યા અજ્ઞાન એવં લોભાદિ કિસી કષાય કે ઉદયસે અથવા અપને હી કિસી દોષ કે વશ સે સંયમ મેં જો અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઉસકો જૈસે મીં દૂર કિયા જા સકે; તથા જો શબ્દાદિ વિષયોં મેં લોલુપી બને હુએ હૈં ઓર સંયમ કા પાલન મીં કર રહે હૈં વે ઉસ સંયમ કો અલ્પકાલ તક યા અધિક સમય તક પાલન કરકે મીં પૂર્વોક્ત દોષ સે અથવા મોહકે ઉદય સે સંયમ મેં શિથિલ બન જાતે હૈં વે સંયમ મેં શિથિલ ન બનને પારેં અર્થાત્ સંયમ મેં ઉનકી દૃઢતા હી બની રહે તથા વિષયોં કી ઓર સે ઉનકી આસક્તિ ઘટે—ઈસી વાતકા વર્ણન ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ મેં સૂત્રકાર કરતે હૈં— ‘અરહં ઇત્યાદિ’ ।

અથવા—ચારિત્ર કો અંગીકાર કરને કે લિયે જિનકી ઇચ્છા જાગૃત તો હો ચુકી હૈં પરન્તુ મોહ કે ઉદય સે ઉનકે મન મેં અમીં તક અરતિ-ભાવ વિદ્યમાન હૈં, એવં જિન્હોંને ચારિત્ર કો ધારણ તો કર લિયા હૈં પરન્તુ ઉસકે ધારણકે વાદ લોભાદિ સે કિસી ૨ સમય ઉન્હેં ઉસસે અરતિભાવ મીં પૈદા હો જાતા હૈં, ઉસ સમય ઉન્હેં ક્યા કરના ચાહિયે? ઇસીકા નિરુ-

સંયમીને કદાચિત્ મોહના ઉદયથી અજ્ઞાન અને લોભાદિ કોઈ કષાયના ઉદયથી અથવા પોતાના કોઈ દોષના વશથી સંયમમાં જે અરતિભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જેમ તેમ પણ દૂર કરવામાં આવે, અને જે શબ્દાદિ વિષયોમાં લોલુપી બનેલાં છે અને સંયમનું પાલન કરે છે તેઓ સંયમનું અલ્પ કાળ સુધી અગર અધિક સમય સુધી પાલન કરીને પણ પૂર્વોક્ત દોષથી અથવા મોહના ઉદયથી સંયમમાં જેઓ શિથિલ બની જાય છે તેઓ સંયમમાં શિથિલ બની ન જાય અર્થાત્ સંયમમાં તેઓની દૃઢતા બની રહે અને વિષયોની તરફથી તેઓની આસક્તિ ઘટે આ વાતનું વર્ણન આ બીજા ઉદ્દેશમાં સૂત્રકાર કરે છે:—‘અરહં’ ઇત્યાદિ.

અને ચારિત્રને અંગીકાર કરવા માટે જેની ઇચ્છા જાગૃત બનેલી છે પરંતુ મોહના ઉદયથી તેના મનમાં હજી સુધી અરતિભાવ મોજીલ છે અને જેઓએ ચારિત્રને ધારણ કરી લીધું છે પરંતુ લીધા પછી લોભાદિથી કોઈ કોઈ સમય તેને તેમાં અરતિભાવ પેદા થાય છે. તે વખતે તેણે શું કરવું જોઈએ તેનું નિરૂપણ

યદ્વા સમુત્પદ્યમાનરુચેરપિ મોહોદયાદરતિર્જાયતે, કસ્યચિચ્ચ ચારિત્રગ્રહણાનન્તરં
લોભાદિના કદાચિદરતિર્ભવતિ તદા કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘અરહં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—અરહં આઉટ્ટે સે મેહાવી રવણંસિ મુક્કે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—અરતિમ્ આવર્તેત સ મેધાવી ક્ષણે મુક્તઃ ॥ મ્૦ ૧ ॥

ટીકા—‘અરતિ’—મિત્યાદિ, સઃ=કૃતચારિત્રગ્રહણો મેધાવી પરિજ્ઞાતનિઃસાર-
સંસારઃ સન્ ‘અરતિમ્’ રમણં=રતિઃ સંયમે ધૃતિસ્તસ્યાભાવોઽરતિસ્તાં પચ્ચાચાર-
પણ કરતે હૈ—‘અરહં’ इत्यादि ।

જિસને સંસાર કી અસારતા જાન લી હૈ ઓર ચારિત્ર કો ખી અંગી-
કાર કર લિયા હૈ વહ અરતિભાવ કો દૂર કરે તો ક્ષણ ખરમં મુક્ત હો
જાવે । ચારિત્ર કો જિસને અંગીકાર કર લિયા હૈ ઉસકા યહ ધર્મ હૈ કિ
વહ કિતને ખી પરીષદોં ઓર ઉપસર્ગોં કે ઉત્પન્ન હોને પર ખી અપને
ચારિત્ર ધર્મકા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરે । પરન્તુ જવ તક કષાયોં કા
પૂર્ણતયા વિનાશ નહીં હો જાતા, તવ તક જીવ સે ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ
નહીં હોતી હૈ । ક્યોં કિ જિસ ચારિત્રકા યહાં પર વર્ણન કિયા જા રહા
હૈ વહ ક્ષાયોપશમિક હૈ, ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર તખી હોતા હૈ જવ ચારિત્ર
મોહનીય કર્મ કે ૨૧ પ્રકૃતિયોં મં સે સર્વધાતિ પ્રકૃતિયોં કે કુછ સ્પર્દકોં
કા—અનન્તાનન્ત કર્મ વર્ગણાઓં કે સમુદાયકા એક સ્પર્દક હોતા હૈ ઉનકા—
ઉદયભાવી ક્ષય હો તથા કુછ સર્વધાતિસ્પર્દકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હો
એવં દેશધાતિપ્રકૃતિકા ઉદય હો । ઇસ અવસ્થા કા નામ ક્ષાયોપશમ હૈ ।

આ ખીલ ઉદેશમાં સૂત્રકાર કરે છે—“અરહં” इत्यादि.

જેણે સંસારની અસારતા જાણી છે, અને ચારિત્રને પણ અંગીકાર કરેલ
છે તે અરતિભાવને દૂર કરે તો ક્ષણ લક્ષમાં મુક્ત થઈ જાય ચારિત્રને જેણે
અંગીકાર કરેલ છે તેનો એ ધર્મ છે કે કેટલા પણ પરિપક્વ અને ઉપસર્ગોં
ઉત્પન્ન થાય તો પણ પોતાના ચારિત્રધર્મનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરે, પરંતુ
ન્યાં યુધી કષાયોનો પૂર્ણ વિનાશ નથી થતો ત્યાં યુધી જીવથી તેવા પ્રકારની
પ્રવૃત્તિ થતી નથી, કારણ કે જે ચારિત્રનું આ ઠેકાણું વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે તે
ક્ષાયોપશમિક છે. ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર ત્યારે જ થાય છે—ન્યારે ચારિત્ર મોહનીય
કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓથી સર્વધાતી પ્રકૃતિઓના ઘોરાં સ્પર્દકોના—અનન્તાનન્ત કર્મ
વર્ગણાઓના સમુદાયનો એક સ્પર્દક થાય છે. તેના ઉદયભાવી ક્ષય થાય તથા ઘોરા
સર્વધાતિ સ્પર્દકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ થાય અને દેશધાતિ પ્રકૃતિનો ઉદય
થાય. આ અવસ્થાનું નામ ક્ષાયોપશમ છે.

વિષયારુચિં કષાયસંસર્ગોત્પન્નાં માતા-પિતૃ-કલત્ર-મિત્રાદ્યુત્પાદિતામ્ આવર્તેત=નિવર્તયેત્, વિષયામિષ્વજ્ઞે રતિસત્ત્વે સંયમે ચારતિર્ભવતિ, તથા ચ કણ્ડરીકસદૃશસ્ય સંયમિનો નરકાદિગતિર્જાયતે, વિષયે રત્યભાવે સંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તથા ચ પુણ્ડરીક-સદૃશસ્ય સદ્ગતિર્ભવતિ । સંયમે રતિં વિદધાનસ્ય ન કિમપિ દુઃખં પરાભવતિ, ઉક્તञ્ચ—

હસ દશામેં દેશઘાતિ પ્રકૃતિકા તો ઉદય રહતા હૈ। યહ ચારિત્ર કા બિગાડ નહીં કરતી। કિન્તુ જિનકા ઉપશમ હુઆ હૈ—વે યદિ નિમિત્ત પાકર ઉદય મેં આજાતી હૈં તો વે અવશ્ય ૨ ચારિત્ર મેં જીવ કો અરતિ-ભાવ યા ઉસસે બ્રષ્ટ કર દેતી હૈં। હસી વાત કો લક્ષ્ય મેં રાખકર સૂત્રકાર સંયમી જન કો કહતે હૈં કિ—‘અરતિં આવર્તેત’ ઇતિ સંયમધારી મેધાવી સંયમ મેં અરતિ કો દૂર કરે। સંયમ મેં ધૃતિ ધારણ કરના—હસ કા નામ રતિ હૈ, રતિ કા અભાવ અરતિ હૈ, પાંચ આચારકા પાલન કરના સંયમ હૈ। હસ વિષય મેં સંયમી જનકો કષાયોં કો સંસર્ગ સે અથવા માતા-પિતા-મિત્ર-સ્ત્રી આદિ કો સંસર્ગ સે અરતિભાવ પૈદા હો સકતા હૈ। ટીકાકાર હસ પર અપના અભિપ્રાય પ્રકટ કરતે હુઅ કહતે હૈં કિ—વાત મી ટીક હૈ, ક્યોં કિ વિષયોં મેં અમિષ્વંગ (આસક્તિ) રૂપ રતિ કો સદ્ભાવ હોને પર સંયમમેં અરતિભાવ જીવોં કો ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, પરન્તુ મેધાવી મુનિ સંસાર કી અસારતા કો ભલી ભાંતિ જાનતા હૈ તો ઉસકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ અરતિભાવ કો દૂર કરે, નહીં તો કંડરીક કી તરહ ઉસે નરક ગામી હોના પડેગા, ઓર સંયમ મેં રતિ કરને સે પુણ્ડરીક કી તરહ ઉસે

આ દશામાં દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો તો ઉદય રહે છે, તે ચારિત્રનો બિગાડ કરતી નથી, પરંતુ જેનો ઉપશમ થયેલ છે તે કદાચ નિમિત્ત બનીને ઉદયમાં આવી બળ્ય છે તો તે અવશ્ય જ ચારિત્રમાં જીવને અરતિભાવ અગર તેનાથી બ્રષ્ટ કરે છે. આ વાતને લક્ષમાં રાખીને સૂત્રકાર સંયમી જનને કહે છે કે— ‘અરતિં આવર્તેત’ સંયમધારી મેધાવી સંયમમાં અરતિને દૂર કરે. સંયમમાં ધૃતિ ધારણ કરવી, તેનું નામ રતિ છે. રતિનો અભાવ અરતિ છે. પાંચ આચારનું પાલન કરવું સંયમ છે. આ વિષયમાં સંયમી જનને કષાયોના સંસર્ગથી અથવા માતા-પિતા-મિત્ર-સ્ત્રી આદિના સંસર્ગથી અરતિભાવ પૈદા થઈ બળ્ય છે ત્યારે ટીકાકાર આ વાત પર પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કરતાં કહે છે કે—વાત પણ ઠીક છે. કારણ કે વિષયોમાં આસક્તિરૂપ રતિનો સદ્ભાવ થવાથી સંયમમાં અરતિભાવ જીવોને ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ મેધાવી મુનિ સંસારની અસારતાને ભલીભાંતિ બાળે છે. તેથી તેનું કર્તવ્ય છે કે તે અરતિભાવને દૂર કરે, નહીં તો કંડરીકની માફક તેને નરકગામી થવું પડશે, અને સંયમમાં રતિ કરવાથી પુણ્ડરીકની માફક તેને

“ क्षितितलशयनं वा, प्रान्तभैक्षाशनं वा,
 सहजपरिभवो वा, दुष्टदुर्भाषितं वा ।
 महति फलविशेषे, नित्यमभ्युद्यतानां,
 न मनसि न शरीरे, दुःखमुत्पादयन्ति ” ॥ १ ॥

“ तणसंथारनिसण्णोऽवि मुणिवरो नट्टरागमयमोहो ॥
 जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ” ॥ १ ॥

छाया—तणसंस्तारनिसण्णोऽपि मुनिवरो नट्टरागमदमोहः ॥

यत्प्राप्नोति मुक्तिसुखं तत्कुतश्चक्रवर्त्यपि ॥ १ ॥ इति, किमधिकेन ।

सद्गतिका लाभ होगा । जीवों को अरति का कारण दुःख होता है । परन्तु संयम को निर्दोष रीति से पालन करनेवाले को कोई भी दुःख नहीं होता है । यदि किसी प्रकार के कर्मोदय से उसे दुःख भी आ पड़े तो वह दुःख उस जीव को संयम में अरतिभाव का कारण नहीं होता है । यही बात नीचे लिखे श्लोकसे प्रकट की है, जैसे—

क्षितितलशयनं वा प्रान्तभैक्षाशनं वा,
 सहजपरिभवो वा दुष्टदुर्भाषितं वा ।
 महति फलविशेषे नित्यमभ्युद्यतानां,
 न मनसि न शरीरे दुःखमुत्पादयन्ति ॥ १ ॥

फिर भी—“ तणसंथारनिसण्णो वि मुनिवरो नट्टरागमयमोहो ।
 जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ॥ १ ॥ ”

सद्गतितो लाभ थये. एवोने अरतिनां कारणे दुःख थाय छे, परंतु संयमने निर्दोष रीतिधी पालन करवाथी कोई पण दुःख थतुं नथी. कदाच कोई प्रकारना कर्मोदयथी तेने दुःख पण आवी पडे तो ते दुःख ते एवने संयमभां अरति भावतु कारण थतु नथी, ओ बात नीचे लजेला श्लोकोधी प्रकट करी छे—

“ क्षितितलशयनं वा, प्रान्तभैक्षाशनं वा,
 सहजपरिभवो वा, दुष्टदुर्भाषितं वा ।
 महति फलविशेषे, नित्यमभ्युद्यतानां,
 न मनसि न शरीरे, दुःखमुत्पादयन्ति ” ॥ १ ॥

फिरभी—“ तणसंथारनिसण्णो वि मुनिवरो नट्टरागमयमोहो ।
 जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ” ॥ १ ॥

મોહનીયક્ષયોપશમેનાધિગતચારિત્રસ્ય કદાચિત્પુનર્મોહનીયોદયાદરતિરુત્પન્ના,
તસ્યાઃ ક્ષયાર્થમુપદિશ્યત-ઇતિ તાત્પર્યમ્ ।

નન્વનેનારતિમતે મેધાવિન ઉપદેશો, યશ્ચ મેધાવી સ પરિજ્ઞાતભવસ્વરૂપ એવ
ભવતિ, તસ્મિંશ્ચારતિમત્ત્વસ્યાસમ્ભવાચ્છાયાતપયોરિવ સહાનવસ્થાનરૂપવિરોધ-
સત્વાન્મેધાવિત્ત્વારતિમત્ત્વયોઃ કથમેકત્ર સ્થિતિઃ ? । ઉક્તશ્ચ—

હસકા ભાવ યહી હૈ—કિ ભૂમિ પર સોના, અન્તપ્રાન્ત ભિક્ષા કા સેવન
કરના યાહે, કોઈ તિરસ્કાર કરે, યાહે દુષ્ટ યોટો ૨ વચન મી કહેં, તો મી
જિન સાધુ પુરુષોં કી પ્રવૃત્તિ ઉત્તમ ફલ કે લાભ કરને મેં સાવધાન હૈ અનેકે
લિયે ઇન વાતોં સે મન મેં ઓર શરીર મેં કોઈ મી કષ્ટ નહીં હોતા હૈ ।
“તળસંચારનિસણ્ણો” ઘાસકી શય્યા પર બેઠે હુએ રાગમદમોહ રહિત મુનિ
નિવૃત્તિભાવસે જિસ સુખકા અનુભવ કરતા હૈ ઉસ પ્રકાર કે સુખ કા
અનુભવ રત્નસિંહાસન પર બેઠા હુવા ચક્રવર્તી મી નહીં કર સકતા ॥૧॥

શંકા—ચારિત્ર મોહનીય કર્મકે ક્ષયોપશમ સે ચારિત્ર કી જિસે
પ્રાપ્તિ હો ચુકી હૈ ઓર ફિર બાદ મેં ચારિત્રમોહનીય કી કિસી એક
પ્રકૃતિ કે ઉદય સે ઉસમેં જિસે અરતિભાવ હો ગયા હૈ એસે અરતિભાવયુક્ત
મેધાવી કે લિયે આપકા યહ ઉપદેશ કિ—“ગૃહીત-ચારિત્ર મેં અરતિભાવ
કો દૂર કરે” લાગૂ હોતા હૈ । પરન્તુ જો મેધાવી હૈ વહ તો સંસાર કે સ્વરૂપ
કા જાનકાર હી હોતા હૈ, ઉસમેં અરતિપને કા સદ્ભાવ તો અસંભવ હી
હૈ । ક્યોં કિ જિસ પ્રકાર છાયા ઓર આતપ-ધૂપ કા એક જગહ એક સાથ

એનો લાવ એ છે કે—ભૂમિ ઉપર સુખ, અન્ત પ્રાન્ત-ભિક્ષા સેવન કરવી,
લહે કોઈ તિરસ્કાર કરે અને દુષ્ટ યોટા યોટા વચન પણ બોલે તો પણ જે
સાધુપુરુષ ઉત્તમ ફળનો લાભ કરવામાં સાવધાન છે તેને આવી વાતોથી મનમા
અને શરીરમાં કોઈ પણ કષ્ટ થતું નથી “તળસંચારનિસણ્ણો” ઘાસની શય્યા
પર બેઠેલા, રાગ મદ મોહ રહિત મુનિ નિવૃત્તિ લાવથી જે નિર્લોભતારૂપ સુખનો
અનુભવ કરે છે તે સુખનો અનુભવ રત્નસિંહાસન ઉપર બેઠેલા ચક્રવર્તી પણ
કરી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

શંકા-ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી ચારિત્રની જેને પ્રાપ્તિ થયેલી
છે, અને પછી ચારિત્ર મોહનીયની કોઈ એક પ્રકૃતિના ઉદયથી તેમાં જેને અરતિ
લાવ થયો છે એવા અરતિલાવયુક્ત મેધાવી માટે આપનો એ ઉપદેશ—“ગૃહીત-
ચારિત્રમાં અરતિલાવને દૂર કરે” લાગુ થાય છે પરંતુ જે મેધાવી છે તે તો
સંસારના સ્વરૂપનો બાણકાર હોય છે, તેમા અરતિપણુના સહલાવનો તો અસંભવ
જ છે, કારણ કે જે પ્રકારે છાયા અને તડકાનો એક જગ્યાએ એકી સાથ રહેવું

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

મોહગ્રહગ્રહિલોજ્ઞાની સંયમેઽરતિ, વિષયાભિષ્વદ્ને કામિન્યાદો રતિં ચ કરોતિ, મેધાવી તુ યથા હસ્તી લઘુવૃક્ષે ઘર્ષણં ન કરોતિ તથૈવ તુચ્છે કામિન્યાદો રતિં ન વિદધાતિ, કથં તર્હિ પ્રકૃતે મેધાવિનોઽરતિસમ્ભવો વિરોધસત્ત્વાદિતિ ચેન્ન ।

રહના વિરુદ્ધ હૈ, उसी प्रकार मेधावित्व का और अरतिमत्त्व का भी एक जगह एक साथ रहना विरुद्ध ही है । फिर इन दोनों का एक जगह युगपत् कहना कैसे संभव हो सकता है ? यही बात अन्यत्र भी कही है—

“ तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्तिः,—दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ॥ १ ॥” इति॥

વહ જ્ઞાન જ્ઞાન હી નહીં હૈ કિ જિસ કે ઉદિત હોને પર રાગાદિ ગણકા સદ્ભાવ રહે । કયા સૂર્ય કે ઉદય હોને પર ખી અંધકાર રહ સકતા હૈ ? કમી નહીં ॥ ૧ ॥ જો મોહ રૂપી ગ્રહસે ઉન્મત્ત હો રહે હૈ—એસે અજ્ઞાની જીવ હી સંયમ મેં અરતિ ઓર શબ્દાદિ વિષયોં મેં રતિ કિયા કરતે હૈ । પરન્તુ જો મેધાવી હોતે હૈ—વે જિસ પ્રકાર હાથી એક છોટે વૃક્ષ સે ઘર્ષણ નહીં કરતા उसी प्रकार संसार के तुच्छ पदार्थों में भी रति नहीं करते । किन्तु उनकी उनमें अरति और संयम में रति रहती है । फिर यहां पर मेधावी को अरति होने का संभव कैसे कहा ?

અશક્ય છે તે પ્રકારે મેધાવિત્ત્વને અરતિભાવને પણ એક જગ્યાએ સાથ ગેડવું વિરુદ્ધ જ છે, પછી એ બન્નેનું એક જગ્યાએ બેઠાણ કહેવું કેવી રીતે સંભવ થઈ શકે, આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ બતાવી છે કે—

“ तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्तिर्दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम्” ॥ ૧ ॥

તે જ્ઞાન જ્ઞાન જ નથી કે જેના ઉદય થવાથી રાગાદિગણનો સદ્ભાવ રહે, સૂર્યનો ઉદય થવાથી શું અંધકાર રહી શકે છે ? કદિ નહિ ॥ ૧ ॥

જે મોહરૂપી ગ્રહથી ઉન્મત્ત થઈ રહેલ છે એવા અજ્ઞાની જીવ જ સંયમમાં અરતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં રતિ કરે છે. પરંતુ જે મેધાવી હોય છે તે જેમ હાથી નાના વૃક્ષથી ઘર્ષણ કરતો નથી તે પ્રકારે સંસારના તુચ્છ પદાર્થોમાં રતિ નથી કરતાં પણ તેની તેમાં અરતિ અને સંયમમાં રતિ જ રહે છે. વળી આ ઠેકાણે મેધાવીને અરતિ હોવાનો સંભવ પણ કેમ હોય

અનેન ચ સમધિગતચારિત્રસ્યોપદેશં પ્રદાતુકામ સૂત્રકારઃ । ચારિત્રં પ્રતિ જ્ઞાનસ્ય હેતુતયા જ્ઞાનરૂપકારણાભાવાચ્ચારિત્રકાર્યાસત્ત્વં સર્વસમ્મતં, ન પુનરત્ર જ્ઞાનારત્યો-વિરોધઃ સમ્ભવતિ, કિન્તુ રત્યરત્યોવિરોધાચ્ચારિત્રમોહનીયોદયાત્સંયમે ભવત્યેવારતિ-જ્ઞાનાજ્ઞાનયોરેવ વિરોધાત્, ન સંયમારતિજ્ઞાનયોવિરોધ ઇતિ પ્રકૃતેઽપિ મેધાવિનોઽ-રતિસત્ત્વે વિરોધાભાવાત્ । સંયમારતિનિવૃત્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ ‘ક્ષણે’ ઇતિ, પરમ-સ્તોકઃ કાલઃ ક્ષણસ્તત્ર મુક્તો ભવતિ ।

ઉત્તર—ચારિત્ર કે પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોતા હૈ, જ્ઞાન રૂપ કારણ કે અભાવ મેં ચારિત્ર રૂપ કાર્યકા અભાવ રહતા હૈ, યહ સબ માનતે હૈં । યહાં પર જ્ઞાન મેં ઔર અરતિ મેં વિરોધ કા કથન નહીં કિયા હૈ કિન્તુ રતિ ઔર અરતિ કા વિરોધ હોને સે ચારિત્ર મોહનીય કે ઉદય સે સંયમ મેં અરતિ હોતી હૈ । જ્ઞાન ઔર અજ્ઞાન મેં હી વિરોધ હૈ સંયમ મેં અરતિ કા ઔર જ્ઞાન કા કોઈ વિરોધ નહીં હૈ । ઇસલિયે મેધાવી હોને પર ભી સંયમ મેં અરતિ કા સદ્ભાવ હોતા હૈ । ઇસ મેં કિસી પ્રકારકા વિરોધ નહીં હૈ ।

ટીકાકાર કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ જિસને ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર કર લિયા હૈ વહ યદિ જ્ઞાની હૈ તો ભી ઉસે ચારિત્ર મોહકે ઉદય સે ઉસમેં અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ । ક્યોંકિ ચારિત્ર કે પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ હૈ, જહાં કારણ કા અભાવ હૈ વ્હાં કાર્યકા ભી અભાવ હોતા હૈ જબ જ્ઞાન રૂપ કારણ કા સદ્ભાવ હી નહીં હૈ તબ ઉસકે કાર્ય રૂપ ચારિત્ર કા સદ્ભાવ કૈસે હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા । ઇસલિયે ઉસે જ્ઞાનસંપન્ન હોના હી ચાહિયે ।

ઉત્તર—ચારિત્રને પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોય છે. જ્ઞાનરૂપ કારણના અભાવમાં ચારિત્રરૂપ કાર્યનો અભાવ રહે છે, એ બધા માને છે. આ ઠેકાણે જ્ઞાનમાં અને અરતિમાં વિરોધનું કથન નથી કર્યું. પણ રતિ અરતિનો વિરોધ હોવાથી ચારિત્ર-મોહનીયના ઉદયથી સંયમમાં અરતિ થાય છે. જ્ઞાન અને અજ્ઞાનમાં જ વિરોધ છે. સંયમમાં અરતિનો અને જ્ઞાનનો કોઈ વિરોધ નથી માટે મેધાવી હોવા છતાં પણ સંયમમાં અરતિનો સદ્ભાવ થાય છે તેથી કોઈ પ્રકારનો આમાં વિરોધ નથી.

ટીકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે જેણે ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર કરેલ છે તે જ્ઞાની છે તો પણ તેને ચારિત્રમોહના ઉદયથી તેમાં અરતિભાવ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે. કેમકે ચારિત્રના પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ છે, જ્યાં કારણનો અભાવ છે ત્યાં કાર્યનો પણ અભાવ થાય છે. જ્યાં જ્ઞાનરૂપ કારણનો સદ્ભાવ જ નથી ત્યાં તેના કાર્યરૂપ ચારિત્રનો સદ્ભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે ? બલકે નથી થતો. માટે તેને જ્ઞાનસંપન્ન થવું જ જોઈએ. તેને અરતિભાવ ઉત્પન્ન

उसके अरति भाव उत्पन्न होने में कौन विरोध आता है? सहानवस्थालक्षण-साथमें नहीं रहने रूप विरोध वहीं पर होता है जो परस्पर में विरोधी होते हैं, जैसे शीत और उष्ण। ये परस्पर में विरोधी हैं इनका एक-साथ एक जगह रहना नहीं हो सकता। प्रकृत में ज्ञान और अज्ञान, रति और अरति ये परस्पर विरोधी दो धर्म हैं इनका भी एक जगह अवस्थान (रहना) नहीं हो सकता। गृहीत-चारित्र में रति ज्ञानपूर्वक होगी अतः वह ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के क्षयोपशम का कार्य है और अरति ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के उदय का कार्य है। उदय में और क्षयोपशम में बड़ा भारी अन्तर है, एक क्षयोपशम का कार्य है—एक उदय का कार्य है। अतः ये दोनों—रति और अरति—परस्पर विरोधी वांतं युगपत् एकत्र नहीं रह सकतीं।

शंका—रति और अरति ये चारित्र मोहनीय के भेद स्वरूप नोकपाय के कार्य हैं इन्हें क्षयोपशम और उदय जन्य कैसे कहते हैं?

उत्तर—शंका ठीक है। वहां पर रति और अरति जो नोकपाय के उदय से मानी गई हैं उनसे इनमें भेद है। यहां पर रति शब्द का वाच्यार्थ चारित्र को निर्दोष रूप से पालन करने की भावना और तद-

થવામાં ક્યો વિરોધ આવે છે? સહાનવસ્થાનરૂપ સાથે નહિ રહેવા રૂપ વિરોધ ત્યાં જ થાય છે જે પરસ્પરમાં વિરોધી હોય છે. જેમ ઠંડી અને ગરમી એ પરસ્પરમાં વિરોધી છે તેનું એકી સાથે એક જગ્યાએ રહેવું બની શકતું નથી. પ્રકૃતમાં જ્ઞાન અને અજ્ઞાન, રતિ અને અરતિ, એ પરસ્પર વિરોધી બે ધર્મ છે તેઓનું પણ એક જગ્યાએ અવસ્થાન (રહેવું) બની શકતું નથી, લીધેલાં ચારિત્રમાં રતિ જ્ઞાનપૂર્વક જ થશે. માટે તે જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે અને અરતિ જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયનું કાર્ય છે, ઉદયમાં અને ક્ષયોપશમમાં ઘણો જ અંતર છે, એક ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે. એક ઉદયનું કાર્ય છે માટે એ બન્ને—રતિ અને અરતિ પરસ્પર વિરોધી વાતો યુગપત્ એકત્ર રહી શકતી નથી.

શંકા—રતિ અને અરતિ એ ચારિત્રમોહનીયના ભેદસ્વરૂપ નોકપાયનું કાર્ય છે તેને ક્ષયોપશમ અને ઉદયજન્ય કેમ કહે છે?

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે. ત્યાં જે રતિ અને અરતિ જે નોકપાયના ઉદયથી માનેલ છે તેનાથી એમાં ભેદ છે. આ ઠેકાણે રતિ શબ્દનો વાચ્યાર્થ ચારિત્રના નિર્દોષ રૂપથી પાલન કરવાની ભાવના અને તદનુકૂલ પ્રવૃત્તિ છે, અને અરતિનો

યદ્વા-આર્ષત્વાતૃતીયાર્થે સપ્તમી, ક્ષણેન=સ્તોકકાલેન અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ-ઇત્યેવં-
રૂપપશ્ચદ્વસ્વાક્ષરોચારણસમકાલેનેતિ યાવત્ ; યથાશ્યાતચારિત્રે સમ્યગ્રતૌ મુક્તો
ભવતિ, સંયમસ્ય સમ્યક્પરિપાલનાત્સ્વલ્પકાલેનૈવ મોક્ષભાગી ભવતીતિ ભાવઃ ॥મુ. ૧॥

નુકૂલ પ્રવૃત્તિ હૈ, ઓર અરતિકા અર્થ યહ હૈ કિ-લિયે હુઅ સંયમ કે
પાલન કરને મેં પ્રમાદ કો નહીં હટાના-યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરના ।
નોકષાય કે ઉદય સે જો રતિ ઓર અરતિ હોતી હૈ વે રાગ ઓર દ્વેષ કે
વાચક હૈં । અતઃ પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ હૈ ।

જિસકો સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ ઉસકો ક્યા હોતા હૈ ? વહ કહતે
હૈ-‘ ક્ષણે ’ હતિ ।

જિસે સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ વહ ક્ષણ મેં મુક્ત હો જાતા હૈ । અત્યન્ત
સૂક્ષ્મકાલ કો ક્ષણ કહતે હૈં । ક્ષણ, કાલ કા સબસે છોટા હિસ્સા હૈ
હસસે સૂક્ષ્મ કાલ કા ઓર કોઈ અંશ નહીં હૈ । સંયમ મેં વહ શક્તિ હૈ
કિ જીવ કો એક ક્ષણ મેં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરા દેતા હૈ । ઈંધન કો જિસ પ્રકાર
અગ્નિ જલાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમ મી કર્મરૂપી ઈંધન કો ભસ્મ કર
હસ જીવ કો એક ક્ષણ મેં શુદ્ધ કર દેતા હૈ ।

અથવા—‘ ક્ષણે મુક્તઃ ’ યહાં પર આર્ષવાક્ય હોને સે તૃતીયા કે
અર્થ મેં સપ્તમી વિભક્તિ સમઘ્નની ચાહિયે । તથા ચ-‘ ક્ષણેન મુક્તઃ ’
હસ પ્રકાર પરિવર્તન હોને સે એક ક્ષણ કે દ્વારા મુક્ત હો જાતા હૈ, યહ

અર્થ એ છે કે-લીધેલા સંયમનુ પાલન કરવામાં પ્રમાદને નહિ છોડતા તે.
આહી અવળી પ્રવૃત્તિ કરવી. નોકષાયના ઉદયથી જે રતિ અને અરતિ થાય છે
તે રાગ અને દ્વેષનુ વાચક છે માટે પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ છે

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તેને શું થાય છે ? તે કહે છે—

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તે ક્ષણમા મુક્ત થાય છે. અત્યન્ત સૂક્ષ્મ
કાળને ક્ષણ કહે છે ક્ષણ કાળનો બધાથી નાનો હિસ્સો છે માટે સૂક્ષ્મ કાળનો
બીજો કોઈ અંશ નથી. સંયમમાં તે શક્તિ છે કે જીવને એક ક્ષણમાં મુક્તિ
પ્રાપ્ત કરાવી આપે છે. અગ્નિ લાકડાને જે પ્રકારે બાળે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ
કર્મરૂપી ઇંધનને ભસ્મ કરી આ જીવને એક ક્ષણમા શુદ્ધ કરી નાંખે છે

અથવા ‘ ક્ષણે મુક્ત આ ઠેકાણે આર્ષ વાક્ય હોવાથી ત્રીજી વિભક્તિના
અર્થમાં સાતમી વિભક્તિ સમજવી જોઈએ, અને ‘ ક્ષણેન મુક્તઃ ’ આ પ્રકારે
પરિવર્તન હોવાથી એક ક્ષણથી મુક્ત થઈ જાય છે. એ અર્થ થાય છે, તેનો

યે ચારિત્રવિપયારતિમન્તસ્તે ચતુર્ગતિકસંસારે દુઃખસાગરમયાથૈતસ્તતઃ પરિ-
ભ્રમન્તીતિ દર્શયતિ—‘અણાણા’—ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અણાણાણ પુઠાવિ ઇગે નિયટ્ઠંતિ, મંદા મોહેણ
પાઝહા, અપરિગ્ગહા ભવિસ્સામો સમુટ્ઠાયલહેકામે અભિગાહહ,
અણાણાણ મુણિણો પહિલેહંતિ, એત્થ મોહે પુણો પુણો સન્ના નો
હવ્વાણ નો પારાણ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—અનાજ્ઞયા સ્પૃષ્ટા અપ્યેકે નિવર્તન્તે, મન્દા મોહેન પ્રાવૃતાઃ, અપરિગ્રહા
ભવિષ્યામઃ, સમુત્થાય લબ્ધ્યાન્ કામાનભિગાહતે, અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે,
અત્ર મોહે પુનઃ પુનઃ સન્ના નો હવ્યાય નો પારાય ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘અનાજ્ઞયે’—ત્યાદિ, આજ્ઞા=જ્ઞાનાચારાદિપ્રવૃત્તિરૂપો જિનાદેશઃ, ત-
દ્વિપરીતા અનાજ્ઞા, તયા સ્પૃષ્ટાઃ=પરીપહોપસર્ગેશ્ચલિતચેતસઃ, એકે=કણ્ઠરીકપ્રભૃતયો

અર્થ હોતા હૈ । હસ કા ભાવ યહ હૈ કિ યથાશ્યાત ચારિત્ર મેં જવ હસ
જીવ કી રતિ-રમણ-હો જાતી હૈ તવ યહ ‘અ ઇ ડ ક્ર લ્હ’ હન પાંચ
હ્રસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય
માત્ર મેં સિદ્ધ ગતિ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ અર્થાત્-સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ
સે પાલને સે થોડે હી કાલ મેં યહ જીવ મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

જિનકી ચારિત્ર મેં રતિ નહીં હૈ વે હસ ચતુર્ગતિરૂપસંસાર સાગર
મેં દુઃખોં કી અનન્ત વોહો કો ફેલતે હુણે ઇતસ્તતઃ ભ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।
હસ વાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘અણાણા’ ઇત્યાદિ । જ્ઞાનાચારાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને રૂપ જો
જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કા આદેશ હૈ ઉસકા નામ આજ્ઞા હૈ હસસે વિપરીત

લાવ એ છે કે યથાશ્યાત ચારિત્રમાં ત્યારે આ જીવની રતિ-રમણ થાય છે,
ત્યારે તે ‘અ ઇ ડ ક્ર લ્હ’ આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં બેટલા
સમય લાગે છે તેટલા સમય માત્રમાં સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે અર્થાત્
સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાથી થોડાજ કાળમાં તે જીવ મુક્તિનો લાભ
કરી લે છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

જેની ચારિત્રમાં રતિ નથી તે આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારસાગરમાં દુઃખોના
અનંત ઓળને ઉઠાવતાં આંહીતહીં ભ્રમણ કરે છે, એ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

‘અણાણા’ ઇત્યાદિ. જ્ઞાનાચારાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ જે જિનેન્દ્ર
ભગવાનનો આદેશ છે તેનું નામ આજ્ઞા છે, તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા છે.

મન્દાઃ=જડા અનવગતકર્તવ્યવિવેકા इति यावत्, મોહેન=અજ્ઞાનેન મિથ્યાત્વ-મોહનીયેન વા, પ્રાપ્તતાઃ=સર્વતોડવગુણિતા મોહાશ્લિષ્ટાત્માન इति यावत्, 'અપિ'-શબ્દસ્ય નિવર્તન્તે इत्यनेन सम्बन्धः, સકલસાવધવિરતિ રૂપાત્સંયમાન્નિવર્તન્તે, અપિ-નિશ્ચયેન, પ્રાપ્તચારિત્રોઽપિ મોહનીયોદયેન પરીષહોપસર્ગાવિર્માવાત્પરિધૃતસાધુવેષો-ઽપિ ભ્રષ્ટચારિત્રો ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા હૈ । હસ અનાજ્ઞા સે જો સ્પૃષ્ટ હૈં અર્થાત્ જો પરીષહ ઔર ઉપસર્ગોં કે આને પર ચન્ચલચિત્ત હો જાતે હૈં-ગૃહીત ચારિત્ર મેં અરતિભાવ રાખનેવાલે બન જાતે હૈં વે કંડરીક આદિ કત્તવ્યાકર્તવ્ય-વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીય સે સર્વથા યુક્ત હોતે હુઅ ઉસ ચારિત્ર સે અવશ્ય ભ્રષ્ટ હો જાતે હૈં । સૂત્ર મેં 'અપિ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થ મેં પ્રયુક્ત હુઆ હૈ । હસકા સંબંધ 'નિવર્તન્તે' હસ ક્રિયા કે સાથ હોતા હૈ । જિસને સર્વસાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્રધર્મ કો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ-એસા વ્યક્તિ યદિ મોહ કે ઉદયસે પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર અપને ચારિત્ર સે વિચલિત હો જાતા હૈ તો ઉસે ચારિત્રભ્રષ્ટ હી સમજ્ઞના ચાહિયે અર્થાત્ વહ ભ્રષ્ટચારિત્રી હૈ । એસે વ્યક્તિ અપને કો સાધુ કે વેષ સે સુસજ્જિત કર લોગોં કી દૃષ્ટિ મેં સાધુપને કા ઢોંગ રચતે હૈં । યદ્યપિ હનકે અન્તરંગ મેં ઉસ વેષ સે જરા બી પ્રેમ નહીં હોતા હૈ તો બી બાહ્ય મેં વે અપની પ્રવૃત્તિ હસ પ્રકાર સે પ્રદર્શિત કરતે હૈં-કિ જૈસે યે સચ્ચે

આ અનાજ્ઞાથી જે સ્પૃષ્ટ છે અર્થાત્ જે પરિષદ અને ઉપસર્ગોના આવવા પર ચંચલ થઈ જાય છે. લીધેલા ચારિત્રમાં અરતિભાવ રાખવાવાળાં બની જાય છે તે કંડરીક આદિ કર્તવ્યા-કર્તવ્ય વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીયથી સર્વથા યુક્ત હોવાથી તે ચારિત્રથી અવશ્ય ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં 'અપિ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે તેનો સંબંધ 'નિવર્તન્તે' આ ક્રિયા સાથે થાય છે, જેણે સર્વસાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર ધર્મને પ્રાપ્ત કરી લીધો છે તેવો માણસ કદાચ મોહના ઉદયથી પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવાથી પોતાના ચારિત્રથી વિચલિત થાય છે તો તેને ચારિત્ર ભ્રષ્ટ સમજવો જોઈએ. અર્થાત્ તે ભ્રષ્ટચારિત્રી છે. એવી વ્યક્તિ પોતાને સાધુના વેષથી સુસજ્જિત કરી લોકોની દૃષ્ટિમાં સાધુપણનો ઢોંગ રચે છે, જે કે તેના અંતરંગમાં તે વેષથી જરા પણ પ્રેમ હોતો નથી તો પણ બાહ્યમાં તે પોતાની પ્રવૃત્તિ આ પ્રકારથી પ્રદર્શિત કરે છે કે-જાણે તે સાચો નિર્ઝન્ય છે આ વાતનો

અસાધવોડપિ સ્વાત્માનં સાધું મન્યમાનાઃ કિં કુર્વન્તીત્યાહ-‘અપરિગ્રહા’-ઇતિ અપરિગ્રહાઃ=પરિ-સર્વતો મૂર્છાભાવેન ગૃહ્યત ઇતિ પરિગ્રહઃ, અવિદ્યમાનઃ પરિગ્રહો ત્રેપામિત્યપરિગ્રહાઃ=નિર્ગ્રન્થા વયં ભવિષ્યમામ ઇતિ દણ્ડિશાક્યાદયોડવસન્નપાર્શ્વ-સ્થાદયો વા સમુત્થાય=સાધુવેપં ચારિત્રં ચ ગૃહીત્વા તત્તો લઙ્ઘ્યાન્=પ્રાપ્તાન્ કામાન્=શબ્દાદિવિપયાન્ અભિગાહન્તે=સંશ્રયન્તે । અત્ર મૂળે આર્પણાદેકવચનમ્ । અત્ર ‘અપરિગ્રહા’ ઇતિ પञ્ચમમહાવ્રતોપાદાનાદવશિષ્ટાનિ ચત્વારિ મહાવ્રતાન્યપિ વિગ્રે-યાનિ, અપરિગ્રહે સર્વેપામન્તર્ભાવાત્ ।

નિર્ગ્રન્થ હૈં । ઇસી વાત કા ચુલાશા ‘અપરિગ્રહાઃ’ ઇસ પદ સે સૂત્રકારને કિયા હૈં । જો મૂર્છાભાવ સે ગ્રહણ કિયા જાતા હૈં ઇસકા નામ પરિગ્રહ હૈં । યહ પરિગ્રહ જિનકે વિદ્યમાન નહીં હૈં-વે અપરિગ્રહ હૈં । દણ્ડી શાક્યાદિક અથવા અવસન્ન પાસત્યાદિક ‘હમ નિર્ગ્રન્થ હૈં અથવા આગે ચલકર નિર્ગ્રન્થ હો જાવૅંગે’ ઇસ અભિપ્રાયસે સાધુવેપ કો ઓર ચારિત્ર કો ગ્રહણ કર ઇસકી આડ સે અપની વૈપયિક વાસના કી તૃપ્તિ કરતે હૈં । ઇનકી ઇસ પ્રકાર કી વાહ્ય પ્રવૃત્તિ દેખકર લોગ ધાર્મિક ભાવના સે ઇનકી હર ઇક પ્રકાર સે સેવા કરતે હૈં, જિસ વસ્તુ કી ઇન્હેં આવશ્યકતા હોતી હૈં ઇસકી પૂર્તિ કરતે રહતે હૈં । ઇસ સાધુપને કે વહાને સે ઇન્હેં જો કુછ ભી મિલતા હૈં સિર્ફ વે ઇસસે અપની વૈપયિક વાસના કી હી પૂર્તિ કરતે રહતે હૈં વાસ્તાવિક સર્વસાવચ વિરતિ રૂપ ચારિત્ર કા આચરણ ઇનસે દૂર હી રહતા હૈં । ઇસી વાત કી પુષ્ટિ ‘સમુત્થાય લઙ્ઘ્યાન્ કામાન્ અભિગાહન્તે’ ઇસ પાંડિત્ત સે સૂત્રકાર ને કી હૈં । સર્વસાવચ-વિરતિરૂપ ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત

ખુલાસો ‘અપરિગ્રહા’ આ પદથી સૂત્રકારે કયો છે જે મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરે છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે આ પરિગ્રહ બેને વિદ્યમાન નથી તે અપરિગ્રહ છે. દંડી શાક્યાદિક અને અવસન્ન પાસત્યાદિક ‘અમે નિર્ગ્રન્થ છીએ’ ‘અથવા આગળ આવીને નિર્ગ્રન્થ થઈ જશું’ આ અભિપ્રાયથી સાધુવેપ અને ચારિત્રને ગ્રહણ કરી તેની આડથી પોતાની વૈપયિક વાસનાની તૃપ્તિ કરી લે છે તેની આ પ્રકારે બાહ્ય પ્રવૃત્તિ દેખીને લોક ધાર્મિક ભાવનાથી તેની દરેક પ્રકારથી સેવા કરે છે. જે વસ્તુની તેને આવશ્યકતા હોય તેની પૂર્તિ કરતા રહે છે, આ સાધુપણના બહાનાથી જે કંઈ પણ મળે છે દ્રવ્ય તેનાથી પોતાની વૈપયિક વાસનાની જ પૂર્તિ કરે છે. વાસ્તાવિક સર્વસાવચવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આચરણ તેનાથી દૂર જ રહે છે. આ વાતની પુષ્ટિ ‘સમુત્થાય લઙ્ઘ્યાન્ કામાન્ અભિગાહન્તે’ આ પંક્તિથી સૂત્રકારે કહ્યું છે સર્વસાવચવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરવાને માટે બાહ્ય અને

કરને કે લિયે બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કારણોં કી જરૂરત હોતી હૈ । બાહ્ય કારણ સે इतना काम नहीं बनता जितना अन्तरंग से । चारित्र को अंगी-
कार करने में यद्यपि उपादान कारण आत्मा है परन्तु इन दो बाह्य
आभ्यन्तर कारणों से उपादान में वह शक्ति आजाती है कि जिससे उसे
अपने लिये हुए संयम में रति एवं संसार-शरीर और भोगों में अरति
स्वतः आजाती है । प्रकृत में यहाँ चारित्रमोहनीय का उपशमादिक
अन्तरंग कारण है और पंचेन्द्रियों के विषयों से सर्वथा विरतिभाव की
जागृति बाह्य कारण है । जैसे अग्नि और धूम्र की (परस्पर अनियति)
विषम व्याप्ति है उस प्रकार सम्यक् चारित्र के साथ अन्तरंग कारण
चारित्र मोहनीय के उपशम की विषम व्याप्ति नहीं है—अर्थात् परस्पर
समनियत हैं, जहां पर चारित्रमोहनीय का उपशमादि है वहां पर नियम
से सम्यक् चारित्र है और जहां पर सम्यक् चारित्र है वहां पर नियम
से चारित्र मोहनीय का उपशमादि है । इस प्रकार सम्यक् चारित्र और
चारित्र मोहनीय के उपशमादिकों की समव्याप्ति (परस्पर नियति) है ।
परन्तु अन्तरंग में चारित्र मोहनीय के उपशमादिक के अभाव में जो
बाह्य में सर्व-सावद्यविरति रूप चारित्र की सत्ता मालूम पड़ती है—वह

આભ્યન્તર કારણોની જરૂરત હોય છે. બાહ્ય કારણોથી આટલું કામ નથી બનતું
જેટલું અન્તરંગથી. ચારિત્રના અંગીકાર કરવામાં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા
છે પરંતુ આ બે—બાહ્ય, આભ્યન્તર-કારણોથી ઉપાદાનમાં તે શક્તિ આવી જાય
છે કે જેનાથી તેને પોતાને માટે સંયમમાં રતિ અને સંસાર શરીર અને ભોગોમાં
અરતિ આપમેળે આવે છે. પ્રકૃતમાં અહીં આ ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિક
અન્તરંગ કારણ છે, અને પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી સર્વથા વિરતિભાવની જાગૃતિ
બાહ્ય કારણ છે, જેમ અગ્નિ અને ધૂમની (પરસ્પર અનિયતિ) વિષમ વ્યાપ્તિ
છે તે પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્રની સાથે અન્તરંગ કારણ ચારિત્રમોહનીયના ઉપશ-
મની વિષમ વ્યાપ્તિ નથી. અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત છે. જ્યાં ચારિત્રમોહનીયનો
ઉપશમાદિ છે ત્યાં નિયમથી સમ્યક્ચારિત્ર છે. અને જ્યાં સમ્યક્ચારિત્ર
છે ત્યાં નિયમથી ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્ર
અને ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાદિકોની સમ વ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ છે) પરંતુ
અન્તરંગમાં ચારિત્ર મોહનીયના ઉપશમાદિકના અભાવમાં જે બાહ્યમાં સર્વસાવધ
વિરતિરૂપ ચારિત્રની સત્તા માલુમ પડે છે તે કેવળ એક ઢાંગ છે. તે ઢાંગ ઉલ્ટો

કેવલ એક ઢોંગ હૈ । વહ ઢોંગ ઉલ્ટા જીવ કો કર્મબંધ કા કારણ હોતા હૈ । એસે વ્યક્તિ ચારિત્ર કા ઢોંગ રચકર ઉસકી આઢ મેં અપને વિષય-કષાયોં કી હી પુષ્ટિ કિયા કરતે હૈં । યદ્યપિ સૂત્રમેં ‘અપરિગ્રહ’ હસ શબ્દ સે કેવલ પાંચવેં મહાવ્રત કા હી ગ્રહણ વતલાયા હૈ પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોંકા ખી હસી એક પદ સે ગ્રહણ હો જાતા હૈ ।

હસી પ્રકાર જો વાસ્તવિક રૂપ સે અપરિગ્રહી નહીં હૈં કિન્તુ પરિગ્રહ-ત્યાગ કા ઢોંગ રચતે હૈં, ઉસીસે યહ ખી સમજ લેના ચાહિયે કિ જો વાસ્તવિક રૂપસે અહિંસાદિમહાવ્રતધારી નહીં હૈં, કિન્તુ અહિંસામહા-વ્રતી આદિ હોને કા ઢોંગ કરતે હૈં, વે કેવલ લોકોં કી પ્રતારણા કરને કે લિયે હી અપની એસી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । દ્રવ્યલિંગી સાધુઓં કી પ્રવૃત્તિ હસી ઢંગ કી હી હોતી હૈ । इनके आत्मा में उस समकितज्योति का बिलकुल ही प्रकाश नहीं होता है कि जिसके सद्भाव से महाव्रतों में सम्यक्पना आता है । इनके उपर के महाव्रत हॆं । जिस प्रकार नट अनेक वेषों को धारण करता हुआ भी अन्तरङ्ग में उन २ वेषोंके परिणामों से सर्वथा शून्य रहता है उसी प्रकार ये द्रव्यलिङ्गी भी बाह्य में महा-व्रती होनेका केवल एक ढोंग ही किया करते हैं उससे उनकी आत्मा

જીવને કર્મબંધનું કારણ થાય છે, એવી વ્યક્તિ ચારિત્રને ઢોંગ રચીને તેની આડમાં પોતાના વિષય કષાયોની જ પુષ્ટિ કરે છે, યદ્યપિ સૂત્રમાં ‘અપરિગ્રહ’ આ શબ્દથી કેવળ પાંચમા મહાવ્રતનું જ ગ્રહણ બતાવ્યું છે પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોનું પણ એમ એક પદથી ગ્રહણ થાય છે.

આ પ્રકારે જે વાસ્તવિક રૂપથી અપરિગ્રહી નથી પણ પરિગ્રહત્યાગને ઢોંગ રચે છે તેનાથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે જે વાસ્તવિક રૂપથી અહિંસાદિ મહાવ્રતધારી નથી પણ અહિંસા-મહાવ્રતી આદિ હોવાનો ઢોંગ કરે છે તેઓ કેવળ લોકોની પ્રતારણા કરવા માટે જ પોતાની એવી પ્રવૃત્તિ કરે છે. દ્રવ્યલિંગી સાધુઓની પ્રવૃત્તિ આ ઢંગની હોય છે તેના આત્મામાં અમદિત જ્યોતિને બિલકુલ જ પ્રકાશ નથી હોતો કે જેના સદ્ભાવથી મહાવ્રતોમાં સમ્યક્પણ આવે. તેના ઉપરના મહાવ્રતો છે. જે પ્રકારે નટ અનેક વેષોને ધારણ કરે છે પણ અંતરંગમાં તે તે વેષોના પરિણામોથી સર્વથા શૂન્ય રહે છે, તે પ્રકારે એ દ્રવ્યલિંગી પણ બાહ્યથી મહાવ્રતી હોવાનો કેવળ એક ઢોંગ જ કરે છે, જેનાથી તેનો આત્મા બિલકુલ રંજિત થતો નથી, ભલે તેની પ્રવૃત્તિથી બાહ્યજન રંજિત થાય, પરંતુ તેનો આત્મા સ્વતઃ તદનુકૂળ પ્રવૃત્તિથી શૂન્ય હોવાથી બિલકુલ

તદિત્થં દ્રવ્યલિङ્ગિનો નટા ઇવ તે હિંસામૃષાઽદત્તાદાનાદિના લોકાન્ વશ્ચયન્તિ ।
તે પુનસ્તલ્લાભાય પ્રવૃત્તા ભવન્તીત્યાહ-‘અનાજ્ઞયે’-તિ ।

અનાજ્ઞયા=ભગવદાજ્ઞાવહિર્ભૂતયા સ્વચ્છન્દમત્યા મુનયઃ=મુનિવેષધારિણઃ,
શબ્દાદિકામોપાયે પ્રત્યુપેક્ષન્તે=પ્રવર્તન્તે કામભોગવિનિવિષ્ટચિત્તા ભવન્તીત્યર્થઃ ।
અત્ર=અસ્મિન્ કામભોગસક્તિરૂપે મોહે, દ્રવ્યમોહે=મધ્યાદૌ, ભાવમોહે=સંસારેઽજ્ઞાને

બિલકુલ હી રંજિત નહીં होती है । भले ही-इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन
रंजित नहीं होती है, भले ही-इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन रंजित हो जावें,
परन्तु इनका आत्मा स्वतः तदनुकूल-प्रवृत्ति से शून्य होने से बिलकुल
भी रंजित नहीं हो पाता है; हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों में ही
इनका अन्तरङ्ग लालसायुक्त बना रहता है । इसीसे ये लोकों को
ठगते रहते हैं । ऐसी प्रवृत्ति इनकी क्यों होती है ? इस का कारण बताते
हुए सूत्रकार कहते हैं कि-‘अनाज्ञया मुनयः प्रत्युपेक्षन्ते’ महाव्रतों
को धारण करने का ढोंग ये लोग इसी लिये करते हैं कि ये भगवदाज्ञा
से बहिर्भूत हैं । भगवान की आज्ञा-ग्रहण किये हुए महाव्रतों को अन्त-
रङ्ग की सच्ची लगन के साथ पालने की है । पांच आस्रवों का नवकोटि
से त्याग किये विना उनका शुद्ध पालन नहीं हो सकता है । जो इस प्रकार
की आज्ञा से बहिर्भूत हैं और “जो हम कहते हैं वह सत्य एवं शुद्ध
है” इस प्रकार की स्वच्छन्द्र प्रवृत्तिशाली हैं वे मुनि वेषधारी साधु
शब्दादिक पांच इन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्त रहते हैं । “अत्र मोहे पुनः
पुनः संज्ञा नो हव्याय नो पाराय” मोह दो प्रकार का है-एक द्रव्यमोह

પણ રંજિત થતો નથી, હિંસા, જુઠું, ચોરી, આદિ આશ્રવોમાં જ તેની અંતરંગ
લાલસા બની રહે છે જેથી તે લોકોને ઠગતા રહે છે. એવી પ્રવૃત્તિ તેની કેમ
થાય છે તેનું કારણ બતાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—

‘અનાજ્ઞયા મુનય પ્રત્યુપેક્ષન્તે’ મહાવ્રતોને ધારણ કરવાનો ઢોંગ તે લોક
એ માટે કરે છે કે-તેઓ ભગવદ્વ્યાજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે. ભગવાનની આજ્ઞા
અહણ કરેલા મહાવ્રતોને અંતરંગની સાચી લાગણીથી પાળવાની છે. પાંચ આશ્ર-
વોના નવ કોટિથી ત્યાગ કર્યા વિના તેનું પાલન થતું નથી. જે આ પ્રકારની
આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે અને “જે અમે કહીએ છીએ તે સત્ય અને શુદ્ધ છે”
આ પ્રકારની સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિશાલી છે તે મુનિવેષધારી સાધુ શબ્દાદિક પાંચ
ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં પ્રવૃત્ત રહે છે. ‘અત્ર મોહે પુન પુન સજ્ઞા નો હવ્યાય નો પારાય’
મોહ બે પ્રકારનો છે-એક દ્રવ્યમોહ અને બીજો ભાવમોહ. મધ્યાદિક દ્રવ્યમોહ

च पुनः पुनः=अत्यन्तं मुहुर्वा सन्नाः=विषयाभिलाषिणो मूढा निमग्नाः सन्तो नो हव्याय, हव्यं=गार्हस्थ्यं प्रकामकामभोगित्वं तस्मै, पारः संयमस्तस्मै=तदर्थं न भवति, नैतल्लोकाय न परलोकाय च, न ते गृहस्था नापि मुनयो, यथा मध्येनदिनिमग्नास्ते न कथमपि पारं गन्तुं शक्नुवन्ति, अपि तु निमज्जन्त्येव, तथैव ते भवन्तोत्वर्थः, ये परिधृतसाधुवेवाः कामोपायेषु सज्जन्ते ते न गृहस्था नापि मुनयो वा भवितुमर्हन्तीति तात्पर्यम् । अदृढचित्तानां मुनिवेषधारिणां पूर्वं हिरण्य-सुवर्ण-धन-धान्य-गृह-गृहिणी-पुत्र-मित्रादेः परित्यक्ततया न गृहस्थत्वं, चारित्रस्य सम्यगपरिपालनेन वान्ताभिलाषितया नाप्यनगारत्वमुपपद्यत इति भावः ॥ सू० २ ॥

औર दूसरा भावमोह । मद्यादिक द्रव्यमोह है, संसार एवं अज्ञान भावमोह है । कामभोगों में आसक्तिका नाम मोह है । इन भोगों की आसक्तिमें जीव की प्रवृत्ति अज्ञान से होती है । कामभोगों की प्रवृत्ति को उत्तेजना मद्यादिक के सेवन से जीवों को मिलती है । इसलिये उन्हें द्रव्यमोह कहा है । विषयाभिलाषी मूढ जीव इस मोह में अत्यन्त अथवा बारंवार प्रवृत्ति करते हुए न तो यथेच्छ कामभोगादि भोग सकते हैं और न संयम ही पाल सकते हैं । जैसे नदी की मझधार में निमग्न हुआ प्राणी न इस पारका रहता है और न उस पार का रहता है, उसी प्रकार ऐसे प्राणी न इस लोक के रहते हैं और न उस लोक के ही रहते हैं—न वे सच्चे गृहस्थ ही बन पाते हैं और न सच्चे मुनि ही । नदी की मझधार में निमग्न प्राणी जिस प्रकार मझधार में ही डूब जाता है, उसी तरह से ये प्राणी भी साधुवेष छोड़कर विषयों में लवलीन बन चीच

છે, સંસાર અને અજ્ઞાન ભાવમોહ છે. કામભોગોમાં આસક્તિ તેનું નામ મોહ છે, તે ભોગોની આશક્તિમાં હવની પ્રવૃત્તિ અજ્ઞાનથી થાય છે. કામભોગોની પ્રવૃત્તિને ઉત્તેજના મદ્યાદિકના સેવનથી હવોને મળે છે, માટે તેને દ્રવ્યમોહ કહ્યો છે, વિષયાભિલાષી મૂઢ હવ આ મોહમાં અત્યંત અને વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરવા છતાં પણ નથી યથેચ્છ કામભોગાદિ ભોગવી શકતા, અને નથી સંયમનું પાલન કરી શકતા. જેમ નદીની મજધારમાં નિમગ્ન થયેલ પ્રાણી નથી આ પાર જઈ શકતું કે નથી તે પાર જઈ શકતું. એ પ્રકારે આવા પ્રાણી, નથી આ લોકના રહેતા અગર નથી પરલોકના રહેતા. નથી તેઓ માત્રા ગૃહસ્થી બની શકતા, અને નહિ માત્રા મુનિ. નદીની મજધારમાં નિમગ્ન પ્રાણી જેમ મજધારમાં જ ડુબી જાય છે તે પ્રકારે આ પ્રાણી પણ સાધુવેષ છોડીને વિષયોમાં લવલીન

ये संयमे रतिं, शब्दादिविषये चारतिं विदधानास्ते कीदृशा भवन्तीति दर्शयति-
' विमुक्ता ' इत्यादि ।

મૂલમ્—વિમુક્તા હુ તે જળા જે જળા પારગામિણો, લોભમ-
લોભેન દુગુંછમાળે લઢ્ઢે કામે નાભિગાહઈ, વિળાવિ લોભં નિષ્કલ્મ્મ
એસ અકલ્મ્મે જાળઈ પાસઈ, પડિલેહાએ નાવકંલ્લઈ, એસ અળ-
ગારિ-ત્તિ પવુચ્છઈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—વિમુક્તા હુ તે જના યે જના: પારગામિન:, લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનો
લબ્ધાન્ કામાન્નાભિગાહતે, વિનાપિ લોભં નિષ્કલ્મ્મ્ય એષ: અકર્મા જાનાતિ પશ્યતિ
પ્રત્યુપેક્ષ્ય નાવકાલ્ક્ષતિ એષ: અનગાર ઇતિ પ્રોચ્યતે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘વિમુક્તા’ ઇત્યાદિ, ‘પારગામિન:’ પારો મુક્તિસ્તદ્વેતુજ્ઞાનદર્શનવા-
રિત્રાણ્યપિ પાર: કાર્યકારણયોરભેદાત્, તેન પારં મોક્ષં તદ્વેતુશ્ચ જ્ઞાનાદિકં ગત્તું=પ્રાપ્તું

હી મેં લટકતે રહતે હૈં, ન વે સાધુ હી હૈં ઔર ન ગૃહસ્થ હી । સંયમ પાલન
કરને મેં જિનકે ચિત્ત મેં દૃઢતા તો હૈ નહીં, પરન્તુ મુનિ કા વેષ ધારણ
કર લિયા હૈ, હિરણ્ય-સુવર્ણ, ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિક કા
મુનિવ્રત ધારણ કરને કે પહિલે ત્યાગ ભી કર દિયા હૈ અતઃ ગાર્હસ્થિક
જીવન કે લિયે ઉપયોગી વસ્તુ કા ઉનકે પાસ સદ્ભાવ ન હોને સે ન ઉનમેં
ગૃહસ્થતા હૈ, ઔર ચારિત્ર કા સમ્યક્ રીતિ સે પાલન નહીં કરને કી વજહ
સે મુનિપના હી હૈ ॥ સૂ૦ ॥ ૨ ॥

જો સંયમ મેં રતિ એવં શબ્દાદિ વિષયોં મેં અરતિ કરતે હૈં, વે કૈસે
હોતે હૈં? ઇસ વાત કા યુલાસા કરતે હૈં—

‘વિમુક્તા હુ તે જળા’ ઇત્યાદિ । કાર્યકારણ મેં અભેદ-વિવક્ષા હોને સે

બની વચમાં જ લટકતા રહે છે. નથી તેઓ સાધુ છે અગર નથી તેઓ ગૃહસ્થી.
સંયમ પાળવામાં જેના ચિત્તમાં દ્રઢતા છે જ નહિ, પરંતુ મુનિનો વેષ ધારણ
કરી લીધો છે. હિરણ્ય-સુવર્ણ ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિકનો મુનિવ્રત
ધારણ કરવા પહેલાં જ ત્યાગ કરેલ છે માટે ગૃહસ્થી જીવન માટે ઉપયોગી
વસ્તુનો સદ્ભાવ ન હોવાથી નથી તેનામાં ગૃહસ્થીપણું અને આ ચારિત્રને સમ્યક્
રીતિથી પાલન નહિ કરવાથી મુનિપણું પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

જે સંયમમાં રતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં અરતિ કરે છે તે કેવા હોય
છે? તેનો ખુલાસો કરે છે.—

‘વિમુક્તા હુ તે જળા’ ઇત્યાદિ—કાર્યકારણમાં અભેદવિવક્ષા હોવાથી પાર

શીલં યેપાં તે પારગમિનો યે જના મુમુક્ષવસ્તે વિમુક્તા વિવિધભાવનયા દ્રવ્યતાં વિત્તપરિવારસંસર્ગેણ, ભાવતો વિષયકપાયાદિતઃ પ્રતિસમયં મુન્યમાના મોક્ષ્ય-માણા વા વિમુક્તાઃ હુ=નિશ્ચયેન ભવન્તીતિ સમ્વચ્ચઃ । વિમુક્તાઃ કુતસ્તે ભવન્તીત્યાહ-
'લોભ'—મિતિ 'લોભઃ' =લોભમોહનીયોદયેન પરવસ્તુગ્રહણેચ્છા, તમ્ અલોભેન=

પાર શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ તથા-મુક્તિ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્ય-ગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । ઇસ પાર કો પ્રાપ્ત કરને કા જિનકા સ્વભાવ હૈ વે પારગામી કહે જાતે હૈ । જો મુમુક્ષુ હૈ વે અનેક પ્રકાર કી સાંસારિક ભાવનાઓં સે રહિત હોતે હૈ । 'વિમુક્ત' ઇસ પદ મેં 'વિ' ઉપસર્ગ ઓર 'મુક્ત' એસે દો શબ્દ હૈ । 'વિ' કા અર્થ અનેક પ્રકાર કી ભાવના હૈ । 'મુક્ત' શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય ઓર ભાવ સે રહિત હોના હૈ 'હુ' શબ્દ કા અર્થ નિશ્ચય હૈ । અર્થાત્ જિનકો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છા હોતી હૈ એસે પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્ય સે-ધનાદિક એવં પરિવાર કે સંસર્ગ સે તથા ભાવસે-વિષયકપાયાદિકોં સે પ્રતિસમય રહિત હોતે હૈ ।

લોભમોહનીય કે ઉદય સે પરવસ્તુ કે ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા કા નામ લોભ હૈ । ઇસસે વિપરીત અલોભ હૈ । 'જુગુપ્સમાન' શબ્દ કા અર્થ જીતને વાલા, યા નિગ્રહ કરને વાલા હૈ । વિમુક્ત હોને મેં યહ હેતુ-ગર્ભિત વિશેષણ હૈ । ઇસસે યહ નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ વે વિમુક્ત ઇસલિયે હૈ કિ ઊંહોંને લોભ કો સંતોષ સે નિગૃહીત કર દિયા હૈ ।

શબ્દનો અર્થ મુક્તિ અને મુક્તિના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર છે આ પારને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પારગામી કહેવાય છે.

જે મુમુક્ષુ છે તે અનેક પ્રકારની સામારિક ભાવનાઓથી રહિત હોય છે. 'વિમુક્ત' આ પદમાં 'વિ'નો અર્થ અનેક પ્રકારની ભાવના છે. 'મુક્ત' શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય અને ભાવથી રહિત થવું 'હુ' શબ્દનો અર્થ નિશ્ચય છે. અર્થાત્ જેને મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છા થાય છે એવો પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્યથી-ધનાદિક અને પરિવારના સંસર્ગથી, તથા ભાવથી-વિષયકપાયાદિકોથી પ્રતિસમય રહિત થાય છે.

લોભમોહનીયના ઉદયથી પરવસ્તુને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા તેનું નામ લોભ છે. તેથી વિપરીત અલોભ છે. 'જુગુપ્સમાન' શબ્દનો અર્થ છુતવાવાલા અને નિગ્રહ કરવાવાળા છે. વિમુક્ત હોવામાં તે હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેથી એ નિષ્કર્ષ નીકળે છે કે તે વિમુક્ત એટલા માટે છે કે તેઓએ લોભને સંતોષથી નિગૃહીત કરેલ છે.

તદ્વિરુદ્ધેન સન્તોષેન જુગુપ્સમાનઃ=નિન્દન્, સૂત્રેઽસ્મિન્ પૂર્વં વહુવચનપ્રસન્નેઽજા-
ગ્રેઽપિ સર્વત્રૈકવચનં તુ જાત્યેકલવિવક્ષયા સમર્થનીયમ્ । લોભો હિ સંસારગર્ત-
પાતને પ્રથમો ગણ્યતે । લોભસ્તુ જીવસ્ય વિમોહનમાકુલીકરણમિતિ યાવત્, લુબ્ધો

સૂત્ર મેં પહિલે વહુવચન કા પ્રયોગ કિયા હૈ, બાદ મેં જો સર્વત્ર એક
વચન કા પ્રયોગ હુઆ હૈ વહ જાતિ કી અપેક્ષા સે સમજનાં ચાહિયે ।

પરવસ્તુ કો અપનાને કી ઇચ્છા લોભમોહનીય કે ઉદય સે જીવોં
કો હોતી હૈ । લોભ દો પ્રકાર કા હૈ—એક બાદરલોભ, દૂસરા સૂક્ષ્મલોભ ।
બાદરલોભ કા સદ્ભાવ આગમ મેં ૯વેં ગુણસ્થાન તક, તથા સૂક્ષ્મલોભ
કા સદ્ભાવ ૧૦વેં ગુણસ્થાન તક પ્રગટ કિયા હૈ । ઇસલિયે જબતક આગે ૨
કે ગુણસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ નહીં હુઈ હૈ તબ તક એસે જીવોં કો લોભ કા
ઉદય રહતા હી હૈ, અતઃ જબ લોભ કા ઉદય હૈ તો ઉસકા કાર્ય બી વહાં
હોના ચાહિયે ? ઇસ શંકા કા નિરાકરણ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ
કિ—‘લોભમ્ અલોભેન જુગુપ્સમાનઃ’ વે જીવ લોભકષાય કો સંતોષ સે
જીતતે હૈ । મુમુક્ષુ જીવ પરવસ્તુ કે લાભ સે આકૃષ્ટ એવં અલાભ સે
અસંતુષ્ટ નહીં હોતે ।

લોભ કા નિરાકરણ કરતે હુએ ટીકાકાર કહતે હૈ કિ—જીવોં કો
સંસારરૂપી ગડ્ડે મેં ગિરાને કા સર્વપ્રથમ કારણ લોભ માના ગયા હૈ જો
જીવોં કો આકુલિતપરિણામી બના દેતા હૈ । લુબ્ધક રાત-દિન વ્યાકુલ હી

સૂત્રમાં પહેલાં બહુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે બાદમાં જે સર્વત્ર એક વચ-
નનો પ્રયોગ થયેલ છે તે જાતિની અપેક્ષાથી સમજવું બેઠાયે.

પરવસ્તુને અપનાવવાની ઇચ્છા લોભમોહનીયના ઉદયથી થાય છે. લોભ
બે પ્રકારના છે. એક બાદરલોભ, બીજો સૂક્ષ્મલોભ.

બાદરલોભનો સદ્ભાવ આગમમાં ૯મા ગુણસ્થાન સુધી, તથા સૂક્ષ્મલોભનો
સદ્ભાવ ૧૦માં ગુણસ્થાન સુધી પ્રગટ કરેલ છે, માટે જ્યાંસુધી આગળ આગ-
ળના ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી એવા જીવોને લોભનો ઉદય રહે જ
છે, માટે જ્યારે લોભનો ઉદય છે તો તેનું કાર્ય પણ ત્યાં હોવું બેઠાયે ? આ
શંકાનું નિરાકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—‘લોભમ્ અલોભેન જુગુપ્સમાનઃ’
તે જીવ લોભકષાયને સંતોષથી જીતે છે મુમુક્ષુ જીવ પરવસ્તુના લાભથી આકૃષ્ટ
અને અલાભથી અસંતુષ્ટ થતાં નથી.

લોભનું નિરાકરણ કરતાંયકા ટીકાકાર કહે છે કે—જીવોને સંસારરૂપી ખાડામાં
પડવાનું સર્વ પ્રથમ કારણ લોભ જ છે. લોભ જીવોને આકુલિતપરિણામી બનાવી

હિ રાત્રિન્દિવં સમાકુલ એવાવતિષ્ઠતે, 'કદા કુતઃ કથં કુત્ર ધનાદિકં લપ્સ્યે' इत्याशा-
 ग्रस्तो दुर्लङ्घपर्वतमपि लिलङ्घयिषति, अपारपारावारमपि तितीर्षति, दुर्गमगिरिकुञ्जेषु
 वंभ्रमीति, निजवान्धवनिकरमपि मिमारयिषति, दुर्गममपि जिगमिषति, बहु भारं
 वावहीति, दुःसहं क्षुधमपि सोढुमिच्छति, पापं चिकीर्षति, कुलशीलजातिधैर्याणि
 च परिजिहासति, किमधिकेन ? अज्ञानान्धकारावृतायां लोभरात्रौ प्राणातिपातादि-
 दोषतस्करैરાत्मधनं लुण्ठयति, चित्तमद्वારण्यે મોહાન્ધકારે લોભપિશાચં નર્તયતિ ।
 લોભાકુલિતચેતા દિ જલે જીર્ણપત્રમિવ, વાયૌ લઘુતુળમિવ, ગગને શરન્મેઘ ઇવેતસ્તતઃ
 સંસારે પરિભ્રમતિ । લોભિનો જનસ્ય સકલોઽપિ ગુણો દોષાયતે । લુબ્ધો હિ
 સર્વાપદાસ્પદં ભવતિ, ઉક્તચ્ચ—

બના રહતા હૈ । વહ 'કિસ સમય કહાં સે કૈસે ધનાદિક કા અર્જન કરૂંગા' इस आशा से प्रेरित हो दुर्लङ्घ्य पर्वतादिकों को भी पार करने की इच्छा रखता है, अपार समुद्र को भी तैरने की भावना रखता है, दुर्गम-पहाड़ी झाड़ियों में भी भ्रमण करने की कामना करता है, अपने बांधवों को भी मारने का मनोरथ करता रहता है, जहां कोई नहीं जा सकता ऐसे भयंकर स्थान में भी जाने की चाहना करता है, बहुत भारी बोझ को भी ढोता है, दुःसह क्षुधा को भी सहन कर लेता है, पाप करने के लिये भी उतारु हो जाता है, अपने कुल, शील, जाति और धैर्य को मौका पड़ने पर छोड़ने के लिये कटिबद्ध हो जाता है । अधिक क्या कहा जाय ? अज्ञान रूपी अन्धकार से अच्छादित इस लोभरूपी महारात्रि में यह जीव आत्मधन को प्राणातिपातादिकपापरूपी चोरोں से सदा चुराता रहता है ।

દે છે. લુબ્ધક શત દિવસ વ્યાકુળ બની રહે છે, 'કયા વખતે કયારે કેવી રીતે ધનાદિકતું અર્જન કરું' આવી આશાથી પ્રેરિત થઈ ઓળંગી ન શકાય તેવા પર્વતોને પણ પાર કરવાની ઇચ્છા કરે છે, અપાર સમુદ્રને તરવાની પણ ભાવના રાખે છે, દુર્ગમ-પહાડી ઝાડીઓમાં પણ ભ્રમણ કરવાની ઇચ્છા રાખે છે, પોતાના ભાઈઓને પણ મારવાના મનોરથો સેવે છે, જ્યાં કોઈ નહીં શકતું નથી તેવા ભયંકર સ્થાનમાં જવાની પણ હિંમત કરે છે, ઘણા ભારે બોજ ન પણ ઉઠાવે છે, દુઃસહ ભૂખને પણ સહન કરી લે છે, પાપ કરવાને માટે પણ તૈયાર થઈ બેસે છે, પોતાનું કુળ, શીલ, જાતિ અને ધૈર્યને પણ વખત મળતાં છોડવાને તૈયાર થઈ બેસે છે અધિક કેટલું કહેવું - અજ્ઞાનરૂપી અંધકારથી આચ્છાદિત આ લોભરૂપી મહારાત્રિમાં આ છવ આત્મધનને પ્રાણાતિપાતાદિકપાપરૂપી ચોરોથી

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

અત્ર લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનઃ, ઇતિ કથનાત્ પ્રધાનાન્ત્યપરિત્યાગપ્રદર્શનેન ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશઃ’ ઇતિ નિયમાત્ ક્રોધાદીનામપિ હેયતા પ્રદર્શિતા । અન્યત્રાપિ પ્રોક્તમ્—

મોહરૂપી અંધકાર સે યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલ મેં લોભરૂપી પિશાચ કો સદા નચાતા રહતા હૈ । જિસ તરહ જલ મેં જીર્ણપત્ર હતસ્તતઃ ચક્કર કાટા કરતા હૈ, વાયુ કે છોકોં મેં લઘુતૃણ જિસ પ્રકાર ડહતા રહતા હૈ, આકાશ મેં શરત્કાલીન મેઘમાલા જૈસે યહાં સે વહાં. વહાં સે યહાં ધૂમા કરતી હૈ, ડસી પ્રકાર લોભાકુલિતચિત્તવાલા પ્રાણી ભી સંસાર મેં યહાં વહાં ભ્રમતા રહતા હૈ । લોભી જન કે સમસ્ત ગુણ દોષ રૂપ મેં હી પરિણત હો જાતે હૈ । જૈસે કહા હૈ—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥૧॥

લોભ સે બુદ્ધિ ચલિત હો જાતી હૈ, લોભ તૃષ્ણા કો પૈદા કરતા હૈ, તૃષ્ણા સે પીડિત પ્રાણી હસ લોક મેં ઓર પરલોક મેં દુઃખોં કો પાતા હૈ ॥૧॥ સૂત્ર મેં લોભકષાય કો સંતોષ સે નિગ્રહ કરને કા જો કથન કિયા ગયા હૈ વહ એક ઉપલક્ષણ હૈ, હસસે ક્રોધ, માન, માયા કા ભી

હમેશા લુટાવતો રહે છે. મોહરૂપી અંધકારથી યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલમા લોભરૂપી પિશાચને હમેશાં નચાવતો રહે છે. જેવી રીતે પાણીમાં જીર્ણપાનકા અહીંતહીં ચક્કર ફર્યા કરે છે, વાયુની લહરોમાં લઘુ તૃણ જેમ ડહતા રહે છે, આકાશમાં શરતકાલીન મેઘમાલા અહીંથી તહીં અને તહીંથી અહીં જેમ ધૂમ્યા કરે છે તે પ્રકારે લોભાકુલિત ચિત્તવાળા પ્રાણી પણ સંસારમા આહી તહીં ભ્રમ્યા કરે છે, લોભી જનના સમસ્ત ગુણો દોષરૂપમા જ પરિણત થાય છે. જેમ કહ્યું છે—

“ લોમેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥ ૧ ॥

લોભથી બુદ્ધિ ચલિત થાય છે. લોભ તૃષ્ણાને પેદા કરે છે. તૃષ્ણાથી પીડિત પ્રાણી આ લોકમાં અને પરલોકમાં દુઃખોને પામે છે ॥ ૧ ॥

સૂત્રમાં લોભકષાયને સંતોષથી નિગ્રહ કરવાનું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે તે એક ઉપલક્ષણ છે. તેથી ક્રોધ, માન, માયાનો પણ પોતપોતાના અતિપક્ષી

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

‘ લોભં સન્તોષેણ જયે ’—દિત્યાશયેન લોભમલોભેનેત્યુક્તમ્,
લોભાદીન્ કેન કેન જયેદિત્યાહ દશવૈકાલિકે—

“ ઉવસમેણ હ્ને કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમજ્જવભાવેણ, લોહં સંતોસઓ જિણે ” ॥ ગાથા ૩૮ ॥

અપને ૨ પ્રતિપક્ષી ભાવોં સે નિગ્રહ કરના સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । ક્યોંકિ લોભ કી તરહ મુમુક્ષુઓં કે લિયે વે ક્રોધ આદિ મી હેય હેં । ચાર કંપાયોં મેં અન્તિમ કષાય લોભ હૈ । ઉસકે ત્યાગ કે ઉપદેશ સે ક્રોધાદિ કા ત્યાગ કરના સ્વતઃ સિદ્ધ હો જાતા હૈ । કહા મી હૈ—

ત્રિવિધં નરકસ્યેદં દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ॥

હસ શ્લોક સે અન્યત્ર મી કામ, ક્રોધ એવં લોભ કો નરક કા દ્વાર એવં અપને નાશ કા કારણ બનલાયા હૈ ।

શંકા—લોભ કો જિસ તરહ સે સંતોષ સે જીતા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર ક્રોધાદિકષાયોં કો જીતને કે લિયે કિન ૨ ભાવોં કી જરૂરત હોતી હૈ ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્ર મેં હન કષાયોં કો જીતને કે લિયે હન ભાવોં કો પ્રકટ કિયા હૈ—

ભાવોથી નિગ્રહ કરવાનું સમજી લેવું જોઈએ. કારણ કે લોભની માફક મુમુક્ષુઓને માટે ક્રોધ માન આદિ પણ હોય છે. ચાર કષાયોમાં અંતિમ કષાય લોભ છે. તેના ત્યાગના ઉપદેશથી ક્રોધાદિકનો ત્યાગ કરવો સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જાય છે. કહું પણ છે—

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

આ શ્લોકથી અન્યત્ર પણ કામ ક્રોધ અને લોભને “નરક” દ્વાર અને પોતાના નાશનું કારણ બતાવ્યું છે

શંકા—લોભને જેમ સંતોષથી છતાય છે તેમ ક્રોધાદિ કષાયોને છૂટવા કયા કયા ભાવોની જરૂરત હોય છે ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્રમાં આ કષાયોને છૂટવા માટે એ ભાવોને પ્રગટ કર્યા છે—

હાયા-ઉપશમેન હન્યાત્ક્રોધં, માનં માર્દવેન જયેત્ ।

માયામાર્જવભાવેન, લોભં સન્તોષતો જયેત્ ॥

इति क्रोधादीनां चतुर्णां त्यागोपायः प्रदर्शितः, असन्तोषरोगस्य लोभपरित्याग एवौषधमिति, उक्तञ्च—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

“ ઉવસમેળ હળે કોહં, માણં મદ્વયા જિળે ।

માયમઝ્જવભાવેળ, લોભં સંતોસઓ જિળે ॥”

ઉપશમ સે ક્રોધ કો, માર્દવ-નમ્રભાવ સે માનકો, આર્જવ ભાવ સે માયા કો ઔર સંતોષ સે લોભ કો જીતના ચાહિયે । અસન્તોષરૂપી રોગ કા ઔષધ લોભપરિત્યાગ હૈ । કહા બી હૈ—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, -ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वસન્તોષસ્ય ભેષજમ્ ॥ ૧ ॥”

જૈસે રોગી કે જ્વર કો નષ્ટ કરને કે લિએ આહાર કા પરિત્યાગ દવા કા કામ કરતા હૈ ઁસી તરહ સે અસન્તોષ કો નષ્ટ કરને કે લિએ લોભ કા પરિહાર બી ઉત્તમ ઔષધિ કા કામ દેતા હૈ । ઁસ કથન સે યહ સિદ્ધાન્ત ભલીભાંતિ પુષ્ટ હો જાતા હૈ કિ જો લોભાદિકોં કો ઁનકે પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોં કે દ્વારા નષ્ટ કર દેતે હૈં વે હી વાસ્તવ મેં પારગામી હૈં । ઁસે વ્યક્તિ પ્રાપ્ત હુએ કામભોગોં મેં નહીં ફસતે । ઁસી વાત કી પુષ્ટિ “લઘ્વાન્ કામાન્

“ ઉવસમેળ હળે કોહં, માણં મદ્વયા જિળે ।

માયમઝ્જવભાવેળ, લોભં સંતોષઓ જિળે ” ॥

ઉપશમથી ક્રોધને, માર્દવ-નમ્ર ભાવથી માનને, આર્જવભાવથી માયાને અને સંતોષથી લોભને હતાય છે. અસંતોષરૂપી રોગનું ઔષધ લોભપરિત્યાગ છે. કહ્યું પણ છે—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, -ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वસन्तोषस्य ભેષજમ્ ” ॥ ૧ ॥

જેમ રોગીના જ્વરને નષ્ટ કરવા માટે આહારનો પરિત્યાગ દવાનું કામ કરે છે તે પ્રકારે અસંતોષને નષ્ટ કરવા માટે લોભનો પરિહાર પણ ઉત્તમ ઔષધીનું કામ આપે છે. આ કથનથી એ સિદ્ધાન્ત ભલીભાંતિ પુષ્ટ થાય છે કે—જે લોભાદિકોને તેના પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોના મારફત નષ્ટ કરે છે તે જ વાસ્તવમાં પારગામી છે. એવી વ્યક્તિ પ્રાપ્ત થયેલ કામભોગોમાં ફસતી નથી, એ વાતની પુષ્ટિ ‘લઘ્વાન્ કામાન્ નામિગાહતે’ એ ઉપદેશથી સૂત્રકારે

સર્વથા યે લોભાદીન સંતોષાદિના જયન્તિ ત એવ પારગમિનો ભવન્તીતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમિત્યાહ-લઙ્ઘ્યાન્=સમધિગતાન્, કામાન્=કામભોગાન્ નાભિ-ગાહતે=ન શ્રયતે, યો હિ પરિત્યક્તલોભાદિસ્તં કામાદયઃ કદાચિદપિ ન પરાજયન્ત ઇતિ ભાવઃ ।

કોડપિ કેનાપિ હેતુના પરિહીનલોભાદિઃ કૃતચારિત્રગ્રહણો ભવતિ, કદા-ચિત્પુનર્લોભોદયસ્તસ્ય ચેતસિ સ્યાત્તસ્ય હેયતાપ્રદર્શનાય, યશ્ચ સર્વદૈવ લોભાદિરહિતઃ સંયમં શૃણ્ણાતિ સ એવાનગાર ઇતિ પ્રતિપાદનાય ચાહ-‘વિનાપી’-ત્યાદિ, એપઃ=લોભ-મલોભેન નિન્દન્ લોભં=પૂર્વોક્તં વિનાડપિ=લોભરાહિત્યેનાડપિ નિષ્ક્રમ્ય=ચારિત્રં શૃદ્ધીત્વા અકર્મા=ઘાતિકર્મચતુષ્ટયાપનયનેન પ્રાપ્તકેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનો ભરતાદિકલ્પો ભૂત્વા જાનાતિ=વિશેષેણાનુભવતિ, પશ્યતિ=સર્વ વસ્તુજાતં યથાર્થરૂપેણાવલોકતે ।

નાભિગાહતે’ હસ ઉપદેશ સે સૂત્રકાર ને કી હૈ । ક્યોંકિ જિસને લોભા-દિક કા પરિહાર કર દિયા હૈ ઉસે કામભોગાદિક કમી મી પરાસ્ત નહીં કર સકતે ।

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિકપાયોં સે હીન હૈ, પરન્તુ કિસી વજહ સે યદિ ઉસને ચારિત્ર ગ્રહણ કર લિયા હૈ તો ઉક્ત વ્યક્તિ કે ચિત્ત મેં કદાચિત્ ફિર સે મીલોભ કા ઉદય હો જાતા હૈ, ઉસકી ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ છોડને યોગ્ય હૈ, યહ દિશ્વાને કે લિયે, તથા જો સર્વદા લોભરહિત હોકર સંયમ કો ધારણ કરતા હૈ વહી અનગાર-સાધુ હૈ, હસ વાત કા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે આગે સૂત્રાંશ કા અવતરણ કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-જો વ્યક્તિ હસ પૂર્વોક્ત લોભ કે વિના-અર્થાત્ લોભ સે રહિત હોકર ચરિત્ર કો ગ્રહણ કરતે હૈં વે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ભરતાદિ જૈસે હો-

કરી છે, કારણ કે જેણે લોભાદિકનો પરિહાર કરેલ છે તેને કામભોગાદિક કદી પણ પરાસ્ત કરી શકતા નથી.

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિક પાયોથી હીન છે, પરંતુ કોઈ કારણથી કદાચ તેણે ચારિત્ર ગ્રહણ કરેલ છે તો તે વ્યક્તિના ચિત્તમાં કદાચ ફરીથી પણ લોભનો ઉદય થાય છે તેની તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ છોડવાયોગ્ય છે. આ દેખાવા માટે, અને જે સર્વદા લોભરહિત થઈ સંયમને ધારણ કરે છે તે અણગાર-સાધુ છે, આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આગળના સૂત્રનું અવતરણ કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-જે વ્યક્તિ આ પૂર્વોક્ત લોભ વિના અર્થાત્ લોભથી રહિત થઈને ચારિત્રને ગ્રહણ કરે છે તે આઠ ઘાતિયા કર્મોને નષ્ટ કરી ભરતાદિ જેવા બીજાં ક્ષેત્રોમાં

નતુ લોભનાશે કુતઃ કર્માભાવો ભવિતુમર્હતીતિ चेन्न। लोभनाशान्मोहनीयनाशः, तस्मिंश्च घातिकर्मक्षयः, तस्मिंश्च केवलज्ञानाधिगमः, तेन च भवोपग्राहिकर्मक्षयः, इत्येवंरूपपरम्परया लोभापगमेन अकर्मैतिविशेषणसार्थक्यात् ।

કર કેવલ જ્ઞાન ઓર કેવલ દર્શન કો પાકર દુનિયાં કે ચર અચર સમસ્ત પદાર્થો કો સ્પષ્ટરૂપ સે સમસ્ત ગુણ ઓર સમસ્ત પર્યાયો સે યુક્ત જાનતે હૈં ઓર દેખતે હૈં ।

શંકા—લોભ કે નાશ સે કર્મોં કા અભાવ કેસે હો સકતા હૈં ?

ઉત્તર—એસા નહીં કહના ચાહિયે; ક્યોંકિ લોભ કે ક્ષય સે મોહનીય કા ક્ષય હોતા હૈં, ઉસકે ક્ષય હોને પર શેષ ઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈં, ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ હોતે હી કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈં; કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોને સે ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈં । હસ પ્રકાર પરમ્પરા કા સમ્બન્ધ કો લેકર લોભ કે વિનાશ સે આત્મા અકર્મા હો જાતા હૈં, હસ વિશેષણ કી સાર્થકતા સિદ્ધ હો જાતી હૈં । સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય હોતા હૈં । સમસ્ત કર્મોં મેં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ હૈં, જિસ પ્રકાર સેનાપતિ કે પરાસ્ત હોને પર સેના અશક્ત હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર મોહનીય કર્મ કે ક્ષય હોતે હી કર્મોં કી સેના ભી ક્ષીણ હો જાતી હૈં । મોહનીય કે ક્ષય સે જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય ઓર અન્તરાય કા ક્ષય હોતા હૈં, ઉસ સે કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં ।

અને કેવળદર્શન પામીને દુનિયાના ચર-અચર સમસ્ત પદાર્થોને સ્પષ્ટ રૂપથી સમસ્ત ગુણ અને સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત જાણે છે અને દેખે છે.

શંકા—લોભના નાશથી કર્મોનો અભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ?

ઉત્તર—એમ કહેવું ન જોઈએ, કારણ કે લોભના ક્ષયથી મોહનીયનો ક્ષય થાય છે. તેનો ક્ષય થવા પછી શેષ ઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે, ઘાતિયા કર્મોનો અભાવ થતાં જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે. આ પ્રકાર પરંપરા સંબંધને લઈને લોભના વિનાશથી આત્મા અકર્મા બને છે. આ વિશેષણની સાર્થકતા સિદ્ધ થઈ જાય છે સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મનો ક્ષય થાય છે, સમસ્ત કર્મોમાં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ છે. જેમ સેનાપતિ પરાસ્ત થવાથી સેના અશક્ત બને છે તે પ્રકારે મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતાં જ કર્મોની સેના પણ ક્ષીણ થઈ જાય છે. મોહનીયના ક્ષયથી જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય અને અંતરાયનો ક્ષય થાય છે, તેનાથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે.

કર્મનાગાનન્તરં કિં કુરુતે ? ઇતિ દર્શયતિ—‘પ્રત્યુપેક્ષ્યે’—તિ, પ્રત્યુપેક્ષ્ય લોભો નિર્ગિવિઘ્નનર્થકરો ભવતિ, ‘લોહો સન્વવિણામણો’ એવિવચનાત્, તં પર્યાલોચ્ય નાવકાઢ્ણતિ=કિમપિ નેચ્છતિ, યથૈવંભૂતઃ સ ણ્ણોડનગારઃ=યથાહ્યાતચારિત્રવાન મુનિઃ પ્રોચ્યતે તત્ત્વદર્શિમિરિતિ શેષઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યસ્તુ સત્ત્વોપગ્રાતિનીં ક્રિયાં વિદધાનઃ સકર્મા પાપમોક્ષકામનયાડ્ણસંસયા વા યદ્યત્કરોતિ તત્ત્વદર્શયતિ—‘અહો ય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અહો ય રાઓ પરિતપ્પમાણે કાલાકાલસમુદ્ઘાઈ સંજો-ગદ્દી અદ્દાલોભી આલુપે સહસકારે વિણિવિઘ્નચિત્તે ણ્ણથ સત્થે પુણો પુણો, સે આયવલે, સે નાદ્વલે, સે મિત્તવલે, સે પિચ્ચવલે, સે દેવવલે, સે રાયવલે, સે ચોરવલે, સે અતિહિવલે, સે કિવિણવલે, સે સમણવલે, ઇચ્છેણિં વિરૂવરૂવેહિં કજ્જેહિં દંડસમાયાણં સંપેહાણ મયા કજ્જઈ, પાવમુક્ખુત્તિ મન્નમાણે, અદુવા આસંસાણ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

હાયા—અહંચ રાત્રિચ્ચ પરિતપ્પમાણઃ કાલાકાલસમુદ્ઘાયા સંયોગાર્થી અર્થા-લોભી આલુપ્પઃ સહસકારઃ વિણિવિઘ્નચિત્તઃ, અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ, તદાત્મવલં, તજ્ઞાતિવલમ્, તન્મિત્રવલમ્, તત્પ્રેત્યવલમ્, તદેવવલમ્, તદ્રાજવલમ્, તચ્ચોરવલમ્, તદતિથિવલમ્, તત્કુપ્પણવલમ્ તત્ શ્રમણવલમ્, ઇત્યેતૈર્વિરૂપરૂપૈઃ કાયૈર્દણ્ડસમાદાનં સમ્પ્રેક્ષ્ય મયાત્ ક્રિયતે પાપમોહ ઇતિ મન્યમાણઃ અથવા આગંસાયૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

‘લોહો સન્વવિણામણો’ લોભ સમસ્ત અનર્થોં કી જડ હૈ, ઇસ પ્રકાર પર્યાલોચન કરકે વહ સંયમી કિસીં ખી સાંસારિક પદાર્થોં કી ઇચ્છા નહીં કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જિસકી પ્રવૃત્તિ હૈ વહી સચ્ચા અનગાર હૈ—અર્થાત્ વહી તત્ત્વદર્શિયોં દ્વારા યથાહ્યાન-ચારિત્ર-સમન્વિત મુનિ કહા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો પ્રાણિયોં કો કષ્ટ દેને વાલી યા ઉનકે પ્રાણોં કો નાશ કરને વાલી ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ વહ સકર્મા હૈ । વહ પાપોં કો દૂર કરને કી

‘લોહો સન્વવિણામણો’ લોભ સમસ્ત અનર્થોની બડ છે. એ પ્રકારે પર્યાયલોચન કરીને તે સંયમી કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થની ઇચ્છા કરતા નથી. એ પ્રકારે તેની પ્રવૃત્તિ છે તે બ આંચો અણગાર છે. અર્થાત્ તે બ તત્ત્વદર્શિયોદ્વારા યથાહ્યાતચારિત્રસમન્વિત મુનિ કહેવામાં આવે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

જો પ્રાણિઓને કષ્ટ દેવાવાળી અને તેના પ્રાણોનો નાશ કરવાવાળી ક્રિયાઓ કરે છે તે સકર્મા છે. તે પાપોને દૂર કરવાની બાબતમાં અને આશંકા-અલબ્ધ

મે, ઇત્યાશયા મેપાદિકં દિનસ્તિ । દેવવલં મે સ્યાદિત્યાશયા પચનપાચનાદી
 પ્રવર્તતે । રાજવલં સ્યાદિતીચ્છયા રાજસેવા ક્રિયતે । ચૌરવલં=ચૌરભાગો ભવિ-
 પ્યતીતિ ચૌરસમીપે તિષ્ઠતિ । અતિથિવલમ્, “અતિથિઃ” ન વિદ્યતે તિથિરાગ-
 મનસ્ય યસ્ય સોઽતિથિઃ, અતિથિસેવયા મે વલમિતિ સ્પૃહયા તં સેવતે, તદર્થે સત્ત્વો-
 પ્રદાન સે મુદ્ધે ઉનકા વલ પ્રાપ્ત હોગા, જિસસે કમી મેરે ઉપર યદિ કોઈ
 આપત્તિ આ જાયગી તો વે ઉસમેં મુદ્ધે મદદગાર બનૈંગે, ઉનકી પ્રાપ્ત
 સહાયતા સે અથવા સહાનુભૂતિ સે મેં ઉસ આપત્તિ સે વિના કિસી કષ્ટ કે
 સુરક્ષિત હો જાઝંગા । ‘દેવોં કા વલ મુદ્ધે પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ વિચાર સે વહ
 નૈવેદ્ય આદિ, કે લિયે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરતા હૈ । ‘રાજા કી
 કૃપા મુદ્ધ પર બની રહે’ ઇસ ભાવના સે વહ ઉનકી છૂટી ખુશામદ કરતા
 હૈ, સેવા કરતા હૈ, ઉસકી પ્રત્યેક ભલી ચુરી વાતોં મેં હાં મેં હાં મિલાતા હૈ,
 ‘ખુશામદ મેં હી આમદ હૈ’ ઇસ તુચ્છ કામના સે વહ હર ઇક પ્રકાર
 સે અપને કો કષ્ટ મેં ડાલકર મી ઉનકી પ્રત્યેક વાત કો શિર-માંથે-કા
 મુકુટ બનાને મેં મી સંકોચ નહીં કરતા । ‘મેં યદિ ચોરોં કી મદદ કરૂંગા,
 યા ઉન્હેં મદદ પહુંચાઝંગા યા ઉનકા મહવાસ કરૂંગા તો મુદ્ધે ઉનસે
 લૂટ કે દ્રવ્ય મેં સે હિસ્સા મી મિલતા રહેગા’ ઇસ ચાહના સે વહ ચોરોં
 કા મી વલ પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જિસકે આને કી કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નહીં
 હૈ ઉસકા નામ અતિથિ હૈ, એસે અતિથિયોં કી વહ સિર્ફ ‘ઇનકા આઝી-

પ્રદાનથી મને તેઓનું બળ પ્રાપ્ત થશે, કદાચ મારા ઉપર કોઈ આપત્તિ આવે
 તો તેઓ મને મદદગાર બનશે, તેમની સહાયતાથી અને સહાનુભૂતિથી હું
 આવેલી આપત્તિથી કોઈ પણ જાતના કષ્ટ વગર સુરક્ષિત થઈ જઈશ’ ‘દેવોનું
 બળ મને પ્રાપ્ત થશે’ તેથી તે નૈવેદ્ય આદિ માટે પચન-પાચનાદિકે આરંભ કરે
 છે. ‘રાજાની કૃપા મારા ઉપર બની રહે’ ને ભાવનાથી તે તેની જુદી ખુશામત
 કરે છે, સેવા કરે છે, તેની પ્રત્યેક મારી નક્કરી વાતોમા હા માં હા મિલાવે છે.
 ‘ખુશામતમાં જ આમદ છે’ આવી તુચ્છ કામનાથી તે દરેક પ્રકારથી પાનાને
 કષ્ટમા નાખીને પણ તેની પ્રત્યેક વાતને શિરના યુગટ બનાવવામાં અંકોચ કરતો
 નથી ‘હું જો ચોરાને મદદ કરીશ અને તેમને મદદ પહોંચાડીશ અગર તેમનો
 સહવાસ કરીશ તો મને તેમની હુંદના દ્રવ્યમાંથી હિસ્સો-(ભાગ) મળતો
 રહેશે’ આ ભાવનાથી તે ચોરાનું પણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે જેની આવવાની કોઈ
 નિશ્ચિત તિથિ નથી તેનું નામ અતિથિ છે. એવા અતિથિઓની તે કદાચ ‘તેમના

पमर्दनं करोति । कृपणबलं स्यादित्यभिलाषेण तं परिचरति । 'श्रमणबलं' श्रमणः शाक्यादिस्तस्य बलं स्यादिति वाञ्छया तदर्थं पचनादिसावधक्रियामाचरति । अत्रानेकेषां बलप्रदर्शनं यं यं चेतसि स्वाभिमतसाधकतया पश्यति तं तं सम्यगुप-
चरतीति द्योतनाय बोध्यम् । इत्येतैः=पूर्वोक्तैः, विरूपरूपैः=बहुविधैः कार्यैः दण्ड-
समादानं, दण्ड्यन्ते=हन्यन्ते सत्त्वानि येन स दण्डस्तस्य सर्वत आदानं ग्रहणं दण्ड-
समादानम् 'अहमिदं नाकरिष्यं तदात्मबलादिकं मे नाभविष्य'—दिति सम्प्रेक्ष्य=
पर्यालोच्य भयात्=आत्मबलाद्यलाभभयात् सत्त्वोपघातः क्रियते, अनेकानर्थकरं

बादरूप बल मुझे मिले' इस विचार से सेवा करता है, उनके निमित्त प्राणियों की हिंसा भी करता है । कृपण की सेवा भी उनके बल को प्राप्त करने की इच्छा से वह करता है । 'शाक्यादि श्रमणों का सहारा मुझे मिले' इस अभिप्राय से वह उनके लिये पचन-पाचनादि करता है । सूत्र में जो इस प्रकार से अनेकों के बल का कथन किया गया है उसका भाव यही है कि वह जिसे अपने इष्ट अर्थ का साधक समझता है उनका बल प्राप्त करने के लिये उनकी भले प्रकार परिचर्या करता है । जिससे प्राणी की हिंसा होती है उसका नाम दण्ड है, इसका वह अनेक प्रकार के कार्यों से सर्वतः आदान-ग्रहण करता है । व्यर्थ के पापारंभ कार्यों में प्रवृत्त हो-
कर वह प्राणियों के प्राणों का अपहरण कर पाप का भारी बोझ अपने माथे रखता है । 'यदि मैं इस काम को नहीं करूँगा तो मुझे पूर्वोक्त आत्मबलादिकों का लाभ नहीं होगा' इस बात का विचार कर उनके

आशिर्वादरूप भण भने भणे' એ વિચારથી સેવા કરે છે. તેમના નિમિત્તે પ્રાણિઓની હિંસા પણ કરે છે. કૃપણની સેવા પણ તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છાથી કરે છે. 'શાક્યાદિ શ્રમણોનો સાથ મને મળે' તે માટે તે તેમને માટે પચન-પાચનાદિ કરે છે સૂત્રમાં જે આ પ્રકારથી અनेક બળોનું કથન કરેલ છે તેનો ભાવ એ છે કે—તે જેને પોતાનાં ઇષ્ટ અર્થનો સાધક સમજે છે તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવા માટે તેની ભલી પ્રકાર પરિચર્યા કરે છે જેનાથી પ્રાણીની હિંસા થાય છે તેનું નામ દંડ છે તેનો તે અनेક પ્રકારના કાર્યોથી સર્વતઃ આદાન-ગ્રહણ કરે છે. વ્યર્થના પાપારભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થઈને તે પ્રાણીઓના પ્રાણોનું અપ-હરણ કરી પાપનો ભારી બોજ પોતાના માથે રાખે છે. 'કદાચ હું આ કામને નહિ કરું' તો મને પૂર્વોક્ત આત્મબલાદિનો લાભ થશે નહિ' આ વાતનો વિચાર કરી તેના અલાભના ભયથી પ્રાણિઓની હિંસાદિક ક્રિયાઓને—અनेક અનર્થકારી સાવધ વ્યાપારોને તે કરે છે. એ આત્મબલાદિક જે આ છવને આ લોકમાં દંડ

સાવચ્ચવ્યાપારં કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । एतान्यात्मबलादीनि चैहिकदण्डग्रहणकारणानि । न केवलं तदर्थमेवानर्थं करोति किन्तु पारलौकिकार्थमपि परमार्थानभिज्ञो दण्ड-ग्रहणं करोतीत्याह—‘ पापमोक्ष ’ इति, पापमोक्षः—पातयति नरकनिगोदादायिति पापं, तस्मान्मोक्षो मे भविष्यतीति मन्यमानः=चेतसि चिन्तयन्,

अत्र ‘इति’-शब्दो हेतौ, यस्मान्मे पापमोक्षो भवितेति मन्यमानः, इति सम्बन्धः । असौ नानाविधहवनीयद्रव्यैर्जुहोति । तथा पितृतर्पणार्थं दर्भ-तिल-जलादिना समारम्भं करोति च । एवंविधसावद्यव्यापारैर्नानाविधदुर्गतिदायकमनेकजन्मदुर्मौचमधिकमघमेवार्जयति ।

अलाभ के भय से प्राणियों की हिंसादिक क्रियाओं को-अनेक अनर्थ-कारी सावद्य व्यापारों को वह करता है । ये आत्मबलादिक जो इस जीव को इस लोक में दण्ड ग्रहण के कारण हैं, केवल उनके निमित्त ही अनर्थों को यह नहीं करता है, किन्तु पारलौकिक कार्यों के लिये भी पर-मार्थ से अनभिज्ञ बना हुआ यह दण्ड का पात्र बनता है । इसी अभि-प्राय को ‘ पापमोक्षः ’ इस पद से सूत्रकार प्रकट करते हैं-नरक नि-गोदादि गतियों को जीव जिसके द्वारा प्राप्त करते हैं उसका नाम पाप है । ‘ पाप से मेरी मुक्ति हो जायगी, अर्थात् मैं पापरहित हो जाऊँगा ’ इस धारणा से ओतप्रोत होकर वह नानाविध हवनीय द्रव्य से हवन करता है, अनेक अनर्थविधायक सावद्य कार्यों के करने से दण्ड-प्राणा-तिपातादि-का अधिकारी होता है, इन कार्यों से पापमुक्त न होकर उल्टे नरक निगोदादि गतियों में उस जीव का पतन होता है । सूत्र में ‘ इति ’ यह शब्द हेतु-अर्थ का बोधक है, जिसका भाव यह है-वह यह सम-

અહણુનું કારણ છે, કેવળ તેના નિમિત્ત જ અનર્થોને તે નથી કરતો પણ પાર લૌકિક કાર્યો માટે પણ પરમાર્થથી અનભિજ્ઞ બનીને આ દંડનું પાત્ર બને છે. આ અભિપ્રાયને ‘ પાપમોક્ષઃ ’ આ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે-નરક નિગોદાદિ ગતિઓને છુવ બેના દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ પાપ છે. ‘ પાપથી મારી મુક્તિ થઈ જશે, અર્થાત્ હું પાપરહિત થઈ જઈશ ’ એ ધારણાથી ઓતપ્રોત થઈને તે નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્યોથી હવન કરે છે. અનેક અનર્થવિધાયક સાવધ કાર્યોને કરવાથી દંડ-પ્રાણુતિપાતાદિ-નો અધિકારી થાય છે. આવા કાર્યોથી પાપમુક્ત બનનો નથી પણ નરક નિગોદાદિ ગતિઓમાં તે છુવનું પતન થાય છે સૂત્રમાં ‘ ઇતિ ’ એ શબ્દ હેતુ અર્થનો બોધક છે, જેનો ભાવ એ છે કે તે એમ સમજે છે કે

अथवा 'आशंसायै' आशंसा चालभ्यलाभस्पृहा तस्यैतदर्थं दण्डं समारभते ।
ममैतत् परत्परारि परलोके वा भविष्यतीत्याशया दण्डं समाददातीति तात्पर्यम् ॥ सू. ४ ॥
एवं कटुकविपाकं दण्डसमादानं सम्यगवबुध्य यत्कर्तव्यं तदाह—'तं परिणाय'
इत्यादि ।

मूलम्—तं परिणाय मेहावी नेव सयं एएहिं कज्जेहिं दंडं समा-
रंभिज्जा, नेव अन्नं एएहिं कज्जेहिं दंडं समारंभिज्जाविज्जा, एएहिं
कज्जेहिं दंडं समारंभंते वि अन्ने न समणुजाणिज्जा, एस मग्गे
आरिणहिं पवेइए, जहेत्थ कुसले नोवल्लिपिज्जासित्तिवोमि ॥ सू. ५ ॥

छाया—तत्परिज्ञाय मेहावी नेव स्वयमेतैः कार्यैर्दण्डं समारभेत, नैवान्यम् एतैः
कार्यैर्दण्डं समारम्भयेत्, एतैः कार्यैर्दण्डं समारभमाणानप्यन्यानन् समनुजानीयात्,
एष मार्ग आर्यैः प्रवेदितः, यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पेः, इति ब्रवीमि ॥ सू. ५ ॥

ज्ञाता है कि—'पापों से मेरी मुक्ति हो जायगी—मैं निष्कलंक बन स्वर्गादि
लाभ कर लूंगा'—ऐसा मानकर वह पारलौकिक कार्य करने के लिये भी
छहकाय का आरंभ करता है । इस प्रकार के सावद्य व्यापारों से नाना-
विध दुर्गतियों को देने वाले तथा अनेक जन्म जन्मान्तरों में भी जो न
नष्ट हो सके ऐसे पाप का ही वह अर्जन करता है । 'आशंसायै' इस
पद से यह बात सूत्रकार सूचित करते हैं कि—वह अलभ्यवस्तु को पाने
की इच्छा से भी दण्ड का समारंभ करता है "यह वस्तु मेरे पास नहीं
है, आत्मबलादि कार्यों के करने से वह मुझे आज नहीं तो कल, कल
नहीं तो परसों मिल जावेगी, यदि यहां न भी मिलेगी तो पारलोक में
मिल जालेगी" इस भाव से दण्ड का समादान (छहकाय का आरंभ)
करता है ॥ सू. ४ ॥

'पापेथी भारी मुक्ति थछ जशे, हुं निष्कलंक भनी स्वर्गादि लाभ करी लछश'
ऐवुं भानीने ते पारलौकिक कार्यो करवा भाटे छ कायनो आरंल करे छे. आ
प्रकारना सावद्य व्यापारेथी नानाविध दुर्गतियोने देवावाणा अने अनेक जन्म
जन्मान्तरेभां पछु जेनो नाश न थाय तेवो पापनो लार ज ते पडे छे
'आशंसायै' आ पदथी आ भात सूत्रकार सूचित करे छे छे—ते अलभ्य वस्तुने
पामवानी छिछाथी पछु दंडनो समारंल करे छे, 'आ वस्तु भारी पासे नथी
पछु आत्मबलादि कार्यो करवाथी ते भने आज नछि तो काल, काल नछि तो
परम दिवस भणी जशे, कदाय अछी नछि भजे तो परलोकभां भणशे' आ
भावथी दंडुं समादान (छ कायनो आरंल) करे छे. ॥ सू. ४ ॥

‘ત’—દિત્યાદિ, મેધાવી=સંયમરતિમાન્ વિદિતસંસારસ્વભાવઃ, તત્=પૂર્વોક્ત-સદ્ગ્રાહકં શસ્ત્રપરિજ્ઞાકથિતમ્ અપ્રશસ્તગુણમૂલસ્થાનં વિષયકપાયાદિકં ચાત્મવલા-દ્યથં દળ્ડસમાદાનાદિકં ચ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા મેધાવી સ્વયમ્=આત્મના એતૈઃ=આત્મવલાદાનાદિકૈઃ કાર્યૈઃ દળ્ડં=પ્રાણિર્હિંસાં નૈવ સમારભેત=દળ્ડગ્રહણારમ્ભં ન કુર્યાત્, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરેદિત્યર્થઃ, અન્યમપિ એતૈઃ કાર્યૈર્દળ્ડં ન સમાર-મ્ભયેદિત્યન્વયઃ, તથા સમારભમાણાનપ્યન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્, સુ-ધર્મા સ્વામી જન્મસ્વામિનં પ્રાહ—એપ માર્ગઃ મૃગ્યતેઽન્વિષ્યતે મોક્ષપદમનેનેતિ માર્ગઃ=રત્નત્રયસ્વરૂપઃ,

इस प्रकार कटुक विषाक वाले दण्ड के आदान को अच्छी तरह जानकर क्या करना चाहिये? सो कहते हैं—

‘તં પરિણાય’ इत्यादि । संयम में जिसे प्रेम है, संसार का स्वभाव भी जिम्मेने भली प्रकार जान लिया है ऐसा मेधावी मुनि शस्त्रपरिज्ञा में प्रतिपादित अप्रशस्त गुण एवं मूलस्थानस्वरूप विषयकपायादिकों को तथा आत्मबलदिलाभ के लिये दण्डसमादान (आरम्भ समारम्भ) को ज्ञपरिज्ञा से जानकर स्वयं आत्मबल को प्राप्त करने के खोटे अभि-प्राय से आचरित इन पूर्वोक्त कार्यों से प्राणातिपात आदि दण्ड का समारम्भ नहीं करे । क्योंकि इन कार्यों के करने वाले प्राणी को पापा-रंभ के सिवाय अन्य किसी भी प्रशस्त फल का लाभ नहीं होता है । इस बात को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से उनका त्याग कर देवे । इतना ही नहीं किन्तु दूसरे से भी इन पूर्वोक्त कार्यों से वह दण्ड का

આવા પ્રકાર કરવા વિષાકવાળા દંડના આદાનને સારી રીતે જાણીને શુ કરવું જોઈએ તે કહે છે—

‘તં પરિણાય’ इत्यादि अंथमभां जेने प्रेम छे, संसारनो स्वभाव जेहे लकी प्रकारे ज्ञाणी लीधो छे जेवा मेधावी मुनि शस्त्रपरिज्ञाभा प्रतिपादित अप्रशस्त गुण अने मूलस्थानस्वरूप विषयकपायादिकने तथा आत्मबलदिलाभ भाटे दंडसमादान (आरंभ-समारंभ) ने ज्ञपरिज्ञाधी ज्ञाणीने स्वयं आत्मबल प्राप्त करवाना जोटा अभिप्रायथी आचरित जे पूर्वोक्त कार्योधी प्राणातिपात आदि दंडनो समारंभ करवो नहि, कारण के आ कार्योना करनार प्राणीने पापारंभ सिवाय भीजे कोई प्रशस्त फलनो लाभ थतो नथी, जे बातने ज्ञाणीने प्रत्याख्यानपरिज्ञाधी तेनो त्याग करे, जेतहुं न नहि पण नीलतथी पण ते पूर्वोक्त कार्योधी ने दंडनो समारंभ न करवो, अने आप्रकारधी दंडनो समारंभ

“આર્યૈઃ” આરાદ્યર્હિતા હેયધર્મેભ્યો યે તે આર્યાઃ તીર્થઙ્કર-ગણધરાદયઃ, તૈઃ પ્રવેદિતઃ=દ્વાદશવિધપરિષદિ પ્રકર્ષેણોક્તઃ । તદ્ બુદ્ધા કિં કાર્યમિત્યાહ—

“યથાઞ્ચ કુશલો નોપલિમ્પે”-રિતિ, હે શિષ્ય! યથા=યેન પ્રકારેનાત્મા કર્મ-ળોપલિમ્પો ન ભવેત્તથા કુશલઃ=ચતુર આત્માર્થી ત્વમત્ર=દળ્ડસમારમ્ભે નોપલિમ્પેઃ= નં સંશ્લિષ્યેઃ, સર્વથા સર્વસમારમ્ભાદાત્માનં પરિરક્ષેદિત્યર્થઃ । કમલપત્રં યથા જલેન સ્પૃષ્ટં ન ભવતિ તથૈવ દળ્ડસમાદાનેનાત્મા યથા સ્પૃષ્ટો ન ભવેત્તથા કુરુણ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ ત્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂત્ત એવ ॥ સૂ ૫ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૨ ॥

સમારમ્ભ ન કરાવે, તથા હસ પ્રકાર સે દળ્ડ કા સમારંમ કરને વાલોં કી અનુમોદના ખી ન કરે, અર્થાત્ દળ્ડ સમારંમ કા સર્વથા ત્યાગ કરે ।

હસ પ્રકાર શ્રીસુધર્મા સ્વમી જમ્બૂ સ્વામી કો કહતે હૈં કિ-યહી રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ કા માર્ગ હૈં, મોક્ષ કા અન્વેષણ જિસસે કિયા જાના હૈં યહી માર્ગ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ હૈં । હસ માર્ગ કા નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર એવં ગણધરાદિકોં ને બારહ પ્રકાર કી પરિષદ મેં કિયા હૈં । વિષય-કષા-યાદિક જો આત્મા કા પતન કરને વાલે હૈં-અનસે જો શીઘ્રાતિશીઘ્ર વિરક્ત હોતે હૈં વે આર્ય હૈં, ઓર વે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ હૈં, ક્યોંકિ યે સ્વયં અનસે વિરક્ત હોકર દૂસરોં કો ખી અનસે વિરક્ત હોને કા ઉપ-દેશ દેતે હૈં । યે આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષ માર્ગ કે અનુપમ પથિક હોતે હૈં, ઓર દૂસરોં કો ખી હસ માર્ગ કે પથિક બનને કે લિયે ઉપાયોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં । હસ પંચસ કાલ મેં જો મોક્ષમાર્ગ કી પ્રરૂપણા મુનિ

કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે, અર્થાત્ કરવા, કરાવવા, અને અનુમોદવારૂપ, એ દંડસમારભનો સર્વથા ત્યાગ કરે.

આ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે-તે રત્નત્રયરૂપ મોક્ષનો માર્ગ છે, મોક્ષનું અન્વેષણ જેનાથી થાય છે તે માર્ગ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ છે. આ માર્ગનું નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર અને ગણધરાદિકોએ બાર પ્રકારની પરિષદમાં કર્યું છે. વિષયકષાયાદિક જે આત્માનું પતન કરવાવાળા છે તેનાથી જે જલદી વિરક્ત થાય છે તે આર્ય છે, અને તે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ છે. કારણ કે તેઓ સ્વયં તેનાથી વિરક્ત બની બીજાઓને તેનાથી વિરક્ત થવાનો ઉપદેશ આપે છે. તેઓ આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષમાર્ગના અનુપમ પથિક હોય છે, અને બીજાઓને પણ તે માર્ગના પથિક બનવા માટે ઉપાયોનું પ્રતિપાદન કરે છે. આ પાંચમા કાળમાં જે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા મુનિ અને આચાર્યોદ્વારા થાય છે તેનું

एवं आचार्यों द्वारा होती है उसका मूलस्रोत तीर्थकरादि ही है । ऐसा समझकर कुशल आत्मार्थी का कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मा को इस दण्डसमारंभ द्वारा आने वाले कर्मों से लिप्त न बनावे । ऐसा उपदेश करते हुए सूत्रकार कहते हैं—“यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पेः” हे भव्य जीव ! तूं पूर्वोक्त कथन से यह भली प्रकार जान चुका है कि इन आत्मबलादिक कार्यों से दण्डसमादान होता है, और इससे कर्मबन्ध के सिवाय आत्मा को कोई लाभ नहीं होता है, अतः तूं इस बात का विचार कर, आत्मार्थी बन, और जिस प्रकार से तेरी आत्मा कर्मों से लिप्त न बने इस तरह की प्रवृत्ति से इन समारंभों से सर्वथा अपनी रक्षा कर । जैसे जल में रहता हुआ कमल जल से लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार दण्डसमादान से आत्मा लिप्त न बने ऐसा कर । ‘इति ब्रवीमि’ इसका अर्थ पहिले किया जा चुका है ॥ सू० ५ ॥

॥ द्वितीय अध्ययन का द्वितीय उद्देश समाप्त ॥ २-२ ॥

મૂળસ્રોત તીર્થ કરાદિ જ છે. એવું સમજીને કુશળ આત્માર્થીતું કર્તવ્ય છે. કે-તે પોતાના આત્માને આ દંડસમારંભદ્વારા આવવાવાળા કર્મોથી લિપ્ત ન બનાવે, એવો ઉપદેશ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પે” હે ભવ્ય જીવ ! તું પૂર્વોક્ત કથનથી એ ભલી પ્રકારે જાણી ચુક્યો છે કે આ આત્મબલાદિક કાર્યોથી દંડસમાદાન થાય છે, અને તેનાથી કર્મબંધ સિવાય આત્માને કોઈ લાભ થતો નથી, માટે તું એ ખાતનો વિચાર કરી આત્માર્થી બન, અને જે પ્રકારથી તારો આત્મા કર્મોથી લિપ્ત ન બને એવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી તેવા સમારંભોથી સર્વથા પોતાની રક્ષા કર. જેમ પાણીમાં રહેલાં કમળ પાણીથી લિપ્ત નથી થતાં તે પ્રકારે દંડસમાદાનથી આત્મા લિપ્ત ન બને તેવું કર. ‘ઈતિ બ્રવીમિ’ આનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ० ૫ ॥

ખીજા અધ્યયનનો ખીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત. ૨-૨.



ટીકા—‘સ’ इत्यादि। सः=प्राणी, असकृत्=बहुवारम् उच्चैर्गोत्रे=लोकमान्य उग्रकुलादौ समुत्पन्न इति शेषः, तथा असकृत् नीचैर्गोत्रे काष्ठहारादिकुले चोत्पन्नः, अत्र गोत्रपदस्य कुलपरत्वं विज्ञेयम्। तयोरुभयगोत्रयोरनुभाववन्धाध्यवसाय-स्थानकण्डकानि समानान्येव सन्तीत्याह—‘न हीन’ इति, हीनो=न्यूनो न भवति, एवमतिरिक्तः=अधिकोऽपि न भवति। उच्चनीचगोत्रयोः समसंख्यकान्येवानु-वन्धाध्यवसायस्थानकण्डकानि वर्तन्त इत्याशयः।

જીવાત્મા કા જન્મ-મરણ જબ તક ઉસે મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હુઈ હૈ તબ તક હોતા રહતા હૈ । કમી યહ નીચ ગોત્ર કે ઉદય સે લોકનિર્દિત કુલ મેં જન્મ લેતા હૈ તો કમી ઉચ્ચ ગોત્ર કે ઉદય સે લોકપૂજિત કુલ મેં । યહ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર મેં જન્મ કી પ્રાપ્તિ હોના કર્મ કા કાર્ય હૈ । ઇસમેં કિસી કી ઇચ્છા કામ નહીં કરતી । અતઃ ઉચ્ચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે હર્ષિત હોના ઓર નીચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે દુઃખિત હોના આત્મા કે લિયે યોગ્ય નહીં । કારણ કિ પર્યાયોં મેં ઉલટ-ફેર હોતા હી રહતા હૈ; ક્યોંકિ સંસારી જીવ કર્મોં સે યુક્ત હૈં । અતઃ જો નીચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન હોને સે અપના અપમાન સમજતા હૈ ઉસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-વહ તૂં અનેક બાર લોકમાન્ય ઉગ્રકુલ ભોગકુલ આદિ મેં ઉત્પન્ન હો ચુકા હૈ । તથા જો ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ લેને સે અપના માન-બઢપ્પન સમજતા હૈ ઉસકે પ્રતિ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-ભાઈ તૂં ભી નીચકુલ જો કાષ્ઠહાર આદિ કા વંશ હૈ, ઉસમેં અનેક બાર જન્મ લે ચુકા હૈ । ગોત્ર

જીવાત્માના જન્મ મરણ બ્યાં સુધી તેને મુક્તિની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી થતાં રહે છે, કોઈ વખત તે નીચ ગોત્રના ઉદયથી લોકનિર્દિત કુળમાં જન્મ લે છે તો કોઈ વખત ઉચ્ચ ગોત્રના ઉદયથી લોકપૂજિત કુળમાં. આ ઉચ્ચ નીચ ગોત્રમાં જન્મની પ્રાપ્તિ થવી તે કર્મનું કાર્ય છે. તેમાં કોઈની ઇચ્છા કામ કરતી નથી. માટે ઉચ્ચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી હર્ષિત થવું, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી દુઃખી થવું આત્માને માટે તે યોગ્ય નથી, કારણ કે પર્યાયોમાં ઉલટ ફેર થયા જ કરે છે. સંસારી જીવ કર્મોથી યુક્ત છે, માટે જે નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન હોવાથી પોતાનું અપમાન સમજે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-તું અનેકવાર લોકમાન્ય ઉગ્રકુળ ભોગકુળ આદિમાં ઉત્પન્ન થઈ ચુકેલ છે, તથા જે ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ લેવાથી પોતાનું માન-મોટાપણ સમજે છે તેના પ્રત્યે સૂત્રકાર કહે છે કે-ભાઈ તું પણ નીચ કુળ જે કહીઆરા આદિનો વંશ છે તેમાં અનેકવાર જન્મ લઈ ચુકેલ છે. ગોત્ર શબ્દનો અર્થ કુળ છે. ઉચ્ચ ગોત્રમાં

પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધસ્તુ-‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિના, સ્વસમાનાર્થમાત્મવલાદિ-
દળ્ડસમારંભો ન ત્વયા કર્તવ્ય ઇતિ ।

ઉચ્ચગોત્રોત્પત્ત્યા માનં, નીચગોત્રોત્પત્ત્યા ચાપમાનં જ્ઞાત્વા હર્ષ-ક્રોધૌ ત્વયા ન
વિધેયૌ, યતસ્તૌ માનાપમાનો વહુષુ જન્મસુ પ્રાપ્તપૂર્વાવિતિ દર્શયતિ-“ સે અસહં ”
ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે અસહં ઉચ્ચાગોષ, અસહં નીઆગોષ, નો હીણે, નો
અહરિત્તે, નોડપીહણ, ઇયપરિસંખાય કો ગોયાવાઈ, કો માણાવાઈ,
કંસિ વા ઇગે ગિજ્ઞે, તમ્હા પંડિણ નો હરિસે નો કુજ્ઞે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા-સોડસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રિડસકૃત્ત્વીચૈર્ગોત્રિ ન હીનો નાતિરિક્તઃ, નો ઈહેતાપિ,
ઇતિ પરિસંખાય કો ગોત્રવાદી કો માનવાદી, કસ્મિન્ વૈકસ્મિન્ ગૃધ્યેત્, તસ્માત્પ-
ણ્ડિતો ન હૃણ્યેત્ ન ક્રુધ્યેત્ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

ઉત્પત્તિ કે અભિમાનાદિકોં મેં જિસ તરહ સે ન ફેસે હસ પ્રકાર સે
અપની પ્રવૃત્તિ કર ।

‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર કે સાથ મી સંબંધ હૈ, જિસસે
શિષ્ય કો સંબોધન કરતે હુણ આચાર્ય હસ વાત કા ઉપદેશ દેતે હૈં કિ
અપને માન કે લિયે આત્મવલ આદિ દ્વારા તુઝે દળ્ડસમારંભ નહીં
કરના ચાહિયે ।

નીચે કે સૂત્ર કા અવતરણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર શિષ્ય સે કહતે
હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉચ્ચગોત્ર મેં ઉત્પત્તિ સે માન ઓર નીચ ગોત્ર મેં જન્મ
લેને સે અપમાન કા ત્રિચાર કર હર્ષ ઓર ક્રોધ કરના તુઝે યોગ્ય નહીં
હૈ, ક્યોંકિ કર્મ કે પ્રભાવ સે તૂને પૂર્વ કે અનેક ભવોં મેં હન્હેં પ્રાપ્ત કિયા
હૈ । યહી વાત પ્રકટ કી જાતી હૈ-“ સે અસહં ” ઇત્યાદિ ।

અભિમાનાદિમા જેવી રીતે ન ક્ષે તેવી પ્રવૃત્તિ પોતાની કર

‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર સાથે પણ સંબંધ છે જેથી શિષ્યને
સંબોધન કરતાં આચાર્ય એ વાતનો ઉપદેશ આપે છે કે પોતાના માન માટે
આત્મબલ આદિ દ્વારા તારે દહમમારભ ન કરવો જોઈએ.

નીચેના સૂત્રનું અવતરણ કરવા માટે સૂત્રકાર શિષ્યને કહે છે કે-હે
શિષ્ય ! ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિથી માન, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી અપ-
માનનો વિચાર કરી હર્ષ અને ક્રોધ કરવો તને યોગ્ય નથી. કારણ કે કર્મના
પ્રભાવથી તેં પૂર્વના અનેક ભવોમાં તે પ્રાપ્ત કર્યા છે એ વાત પ્રગટ
કરવામાં આવે છે-‘ સે અસહં ’ ઇત્યાદિ

टीका—‘स’ इत्यादि। सः=प्राणी, असकृत्=बहुवारम् उच्चैर्गोत्रे=लोकमान्य उग्रकुलादौ समुत्पन्न इति शेषः, तथा असकृत् नीचैर्गोत्रे काष्ठहारादिकुले चोत्पन्नः, अत्र गोत्रपदस्य कुलपरत्वं विज्ञेयम्। तयोरुभयोर्योगोत्रयोरनुभावबन्धाध्यवसाय-स्थानकण्डकानि समानान्येव सन्तीत्याह—‘न हीन’ इति, हीनो=न्यूनो न भवति, एवमतिरिक्तः=अधिकोऽपि न भवति। उच्चनीचगोत्रयोः समसंख्यकान्येवानु-बन्धाध्यवसायस्थानकण्डकानि वर्तन्त इत्याशयः।

जीवात्मा का जन्म-मरण जब तक उसे मुक्ति की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक होता रहता है। कभी यह नीच गोत्र के उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म लेता है तो कभी उच्च गोत्र के उदय से लोकपूजित कुल में। यह उच्च-नीच गोत्र में जन्म की प्राप्ति होना कर्म का कार्य है। इसमें किसी की इच्छा काम नहीं करती। अतः उच्च गोत्र में जन्म लेने से हर्षित होना और नीच गोत्र में जन्म लेने से दुःखित होना आत्मा के लिये योग्य नहीं। कारण कि पर्यायों में उलट-फेर होता ही रहता है; क्योंकि संसारी जीव कर्मों से युक्त हैं। अतः जो नीच गोत्र में उत्पन्न होने से अपना अपमान समझता है उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि—वह तू अनेक बार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदि में उत्पन्न हो चुका है। तथा जो उच्चकुल में जन्म लेने से अपना मान-बड़प्पन समझता है उसके प्रति सूत्रकार कहते हैं कि—भाई तू भी नीचकुल जो काष्ठहार आदि का वंश है, उसमें अनेक बार जन्म ले चुका है। गोत्र

जीवात्माना जन्म मरण न्यां सुधी तेने मुक्तिनी प्राप्ति नथी थर्ष त्या सुधी यतां रडे छे, कोर्ष वणत ते नीच गोत्रना उदयथी लोकनिन्दित कुणमां जन्म ले छे तो कोर्ष वणत उच्च गोत्रना उदयथी लोकपूजित कुणमां। आ उच्च नीच गोत्रमां जन्मनी प्राप्ति थवी ते कर्मनु कार्य छे। तेमां कोर्षनी इच्छा काम करती नथी। माटे उच्च गोत्रमा जन्म लेवाथी हर्षित थवुं, अने नीच गोत्रमां जन्म लेवाथी दुःखी थवुं आत्माने माटे ते योग्य नथी, कारण के पर्यायिमां उलट फेर थया न करे छे। संसारी एव कर्मथी युक्त छे, माटे ने नीच गोत्रमां उत्पन्न होवाथी पोतानु अपमान समझे छे तेने माटे सूत्रकार कहे छे के—तू अनेकवार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदिमां उत्पन्न थर्ष युकेल छे, तथा ने उच्च कुणमां जन्म लेवाथी पोतानु मान-मोटापासुं समझे छे तेना प्रत्ये सूत्र-कार कहे छे के—भाई तू पण नीच कुण ने कहीआरा आदिने वंश छे तेमां अनेकवार जन्म लर्ष युकेल छे। गोत्र शब्दने अर्थ कुण छे। उच्च गोत्रमां

(કળ્ડકમિતિ કર્મીશ ઉચ્યતે) તસ્માત્ ન ઈહેતાપિ=જાતિ-કુલ-વલ-રૂપાદિમદ-સ્થાનેષ્વન્યતમં નો ઇચ્છેદપિ, મનસાઽપ્યુચ્ચકુલાદ્યભિમાનં ન ચેષ્ટેતેતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમાયાતમિત્યાહ-‘ ઇતી ’તિ, ઇતિ=પૂર્વોક્તપ્રકારમનન્તવારં પ્રાપ્તપૂર્વોચ્ચનીચ-કુલાદિકં સમાનકર્મીશત્વં ચ પરિસંખ્યાય=બુદ્ધવા, ‘ગોત્રવાદી’ ગોત્રં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ ગોત્રવાદી=ગોત્રાભિમાની ‘મમૈવૈતાદૃશં પરમસમ્માનનીયં સુન્દરં ગોત્રં, કસ્યાપ્યન્યસ્ય તાદૃશં નાસ્તિ ’ ઇતિ કો ભવેત્, કિંચ “માનવાદી ” માનં=સ્વગુણોત્ક્રીર્તનમભિમાનં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ માનવાદી=સ્વોત્કર્ષવાદી કો ભવેત્ ? ન કોઽપિ ભવેદિત્યર્થઃ । અપિ ચ-કસ્મિન્ વા એકસ્મિન્ પ્રકૃષ્ટગોત્રા-

શબ્દ કા અર્થ કુલ હૈ । ઉચ્ચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન હોને સે ન તો આત્મા અધિક વડા હો જાતા હૈ ઓર ન નીચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે હીન હી । ક્યોંકિ દોનોં ગોત્રોં કે બંધાધ્યવસાયસ્થાન કે કળ્ડક એક સરીખે હૈં । ડનકી સંખ્યા સમાન હૈ । (કર્મ કે અંશ કા નામ કળ્ડક હૈ) । ઇસલિયે “નો ઈહેત ” જીવ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જાતિમદ, કુલમદ, વલમદ ઓર રૂપ વગૈરહ કે મદ કરને કી કબી મનસે ખી ચેષ્ટા તક ન કરે । ઇસ પ્રકાર જવ યહ જીવ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર કો અનેક વાર પૂર્વ જન્મોં મેં પ્રાપ્ત કર ચુકા હૈ, ઓર ઇનકે બંધ કે ખી જવ સમાન કર્મ કે અંશ હૈં તો ઇસા કૌન પ્રાણી હોગા જો ઇસ પરિસ્થિતિ કો જાન બૂઝકર ખી ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની હોગા કિ-“મેરા હી ઇસા પરમમાનનીય સુન્દર ગોત્ર હૈ કિસી અન્ય કા ઇસા નહીં હૈ” ઇસ પ્રકાર કહને કા સ્વભાવવાલા-સાહસ કરને વાલા હોગા, તથા અપને ઉત્કર્ષ કો દૂસરોં કે પ્રતિ પ્રકટ કરને કી

ઉત્પન્ન હોવાથી નથી આત્મા અધિક મોટો થઈ જતો અને નથી નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થવાથી નીચો થઈ જતો. કારણ કે બંને ગોત્રોના બંધાધ્યવસાય સ્થાનના કંડકો એકસરખા છે. તેઓની સંખ્યા સમાન છે. (કર્મના અંશનું નામ કંડક છે.) માટે “નો ઈહેત ” જીવનું કર્તવ્ય છે કે-તે જાતિમદ, કુળમદ, ગુણમદ અને રૂપ વિગેરેનો મદ કરવાની કટિ પણ મનથી ચેષ્ટા પણ ન કરે આ પ્રકારે બન્યારે આ જીવ ઉચ્ચનીચ ગોત્રને અનેક વાર પૂર્વ જન્મોમાં પ્રાપ્ત કરી ચુકેલ છે, અને તેના બંધને પણ બન્યારે સમાન કર્મનો અંશ છે તો એવો કયો પ્રાણી હશે જે આ પરિસ્થિતિને જાણી જોઈને પણ ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની થશે કે-“મારું જ એવું પરમ માનનીય સુંદર ગોત્ર છે બીજા કોઈનું તેવું ગોત્ર નથી” આ પ્રકારે કહેવાના સ્વભાવ વાળા-સાહસ કરવાવાળા હશે, અને ઉત્કર્ષને બીજાઓના પ્રતિ પ્રગટ કરવાના ભાવનાવાળા હશે? માટે બન્યારે એ નિશ્ચિત છે

ભાવનાશાલી હોગા? । इसलिये जब यह निश्चित है कि उच्च गोत्र में अथवा नीच गोत्र में अनेक बार जन्म-मरण यह जीव कर चुका है तो फिर “मेरा जन्म उच्चकुल में हो” इस प्रकार वहां पर उत्पन्न होने के लिये अभिलाषी भी कौन होगा? । अतः जो हेयोपादेय के विवेक से युक्त हैं, ऐसे पण्डित-भव्यात्मा जीव उच्चकुल में उत्पन्न होने से न तो हर्ष करें और न नीचकुल में जन्म लेने से विषाद ही करें । इस बात का विद्वान् को कभी अहंकार नहीं करना चाहिये—कि मैं उच्चकुल का हूँ, तथा इसका कभी विषाद भी नहीं करना चाहिये कि मैं नीचकुल का हूँ । क्योंकि इस संसार का प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार से चल रहा है, आगे भी ऐसा ही चलता रहेगा कि—जो आज उच्चकुल का है कल वही नीचकुल का बन जाता है, तथा दूसरे स्वर्ग के देव जिनके उच्चगोत्र का उदय है वे च्यवकर एकेन्द्रिय पृथिवी पानी वनस्पति जीवों में जन्म लेकर नीच गोत्र के उदय वाले बन जाते हैं । तब उच्च गोत्र और नीच गोत्र ये सदा एक जीव में स्थिर रहने वाले धर्म तो हैं नहीं; फिर इस विषय में हर्ष विषाद करना निष्कारण है । जब अनेक जन्मों में इस जीव को प्रकृष्ट कुलों की एवं अपकृष्टकुलों की अनेक बार प्राप्ति हो चुकी है तब हर्ष और विषाद करने से आत्मा को कौन सा लाभ हो सकता है? । यदि ये

કે ઉચ્ચ ગોત્રમાં અને નીચ ગોત્રમાં અનેકવાર જન્મ મરણ આ જીવે કરેલ છે તો પછી “મારો જન્મ ઉચ્ચ કુળમાં જ હોય” આ પ્રકાર ત્યાં ઉત્પન્ન થવા માટે કોણ અભિલાષી હશે? માટે જે હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત છે એવો પંડિત—ભવ્યાત્મા જીવ ઉચ્ચ કુળમાં ઉત્પન્ન થવાથી ન તો હર્ષ કરે, અને નીચ કુળમાં જન્મ લેવાથી ન વિષાદ કરે. આ વાતનો વિદ્વાને કોઈ વખત અહંકાર કરવો ન જોઈએ કે—હું ઉચ્ચ કુળનો છું, અને તેનો પણ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ કે—હું નીચ કુળનો છું. કારણ કે આ સંસારનો આ પ્રવાહ અનાદિ કાળથી આ પ્રકારે ચાલી રહ્યો છે. આગળ પણ એવો જ ચાલશે. જે આજ ઉચ્ચ કુળના છે કાલ તેજ નીચ કુળના બની જાય છે. ધીજા સ્વર્ગના દેવ જેનો ઉચ્ચ ગોત્રનો ઉદય છે તે વ્યવીને એકેન્દ્રિય—પૃથિવી—પાણી—વનસ્પતિ જીવોમાં જન્મ લઈ નીચ ગોત્રના ઉદયવાળા બની જાય છે, તો પછી ઉચ્ચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર એ સદા એક જીવમાં સ્થિર રહેવાવાળો ધર્મ તો છે જ નહિ, પછી આ વિષયમાં હર્ષવિષાદ કરવો નિષ્કારણ છે. અનેક જન્મોમાં આ જીવને પ્રકૃષ્ટ કુલોની અને અપ્રકૃષ્ટ કુલોની અનેકવાર પ્રાપ્તિ થયેલી છે પછી હર્ષ અને શોક કરવાથી આત્માને કયો લાભ મળી શકે

દિકેડનેકથા પ્રાપ્તપૂર્વે ન ગૃધ્યેત્=નામિલખ્યેત્=ઉચ્ચકુલોત્પન્નોઽહમિત્યુત્કર્ષં નેચ્છે-
 દિત્યર્થઃ । તતઃ કિમિત્યાહ-‘તસ્મા’-દિતિ, યસ્માદનાદિભવે પરિભ્રમતા વહ્નિ
 પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનિ, તથાઽપકૃષ્ટાનિ ચ લઘ્વાનિ, તસ્માદ્દેતોઃ પण्डितः=
 પરમાર્થજ્ઞો જ્ઞાતહેયોપાદેયો ન હૃણ્યેત્, ‘મમૈવેદ્યં કુલ’-મિતિ ન મોદેત, ન કુધ્યેત્=
 ‘મમ કથમધ્મતરે કુલે જન્માભૂ’-દિતિ સ્વાત્મને ન કુપ્યેત્, ન વિપાદમપિ કુર્યાત્ ।
 અનેકજનિષુ પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનીતિ કથં હર્ષસમ્ભવઃ?, નીચકુલાનિ વહુશઃ સમ-
 ધિગતાનીતિ વૃથૈવ ક્રોધઃ । અભૂતપૂર્વયોઃ સુખદુઃખયોરેવ સતોર્હર્ષ-ક્રોધસમ્ભવાદિતિ
 તાત્પર્યમ્ ।

ઉક્તञ्च —

અભૂતપૂર્વ કુલ જીવોં કે પ્રાપ્ત હુણ હોતે તો ડનકી પ્રાપ્તિ મેં હર્ષ વિપાદ
 કરના ઉચિત માના જાતા, પરંતુ ંસા તો હૈ નહીં । અતઃ ંસા વિચાર
 કર જ્ઞાની કો ંસ વિષય મેં હર્ષ વિપાદ નહીં કરના ચાહિયે; કિન્તુ સદા
 ંસા ઁયાલ કરતે રહતા ચાહિયે કિ—

ંસ સંસાર મેં અનાદિકાલ સે નાના યોનિયોં મેં ભ્રમણ કરને વાલે
 ંસ આત્મા ને અનેક વાર સર્વ સુખ દુઃખ કે સ્થાનભૂત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોં
 કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ફિર ંનકી પ્રાપ્તિ મેં તુઁ આશ્ચર્ય હી કૌન સા હૈ ।
 અનન્ત જન્મજન્માન્તરોં મેં ંસ જીવને અનેક સુખોં કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ,
 તથા-અપમાન સે, સ્થાન આદિ કે ચ્યુત હોને સે વધવંધન ંવં ધન કે
 નાશ સે અનેક રોગોં કો તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃખોં કો ંસા હૈ ।

કહા સી હૈ—

ં. કદાચ તે અભૂતપૂર્વ કુળ છવને પ્રાપ્ત થયેલ હોય તો તેની પ્રાપ્તિમાં હર્ષ
 વિપાદ કરવો ઉચિત મનાત, પરંતુ તેણું તો ં નહિ, માટે ંવો વિચાર કરી
 જ્ઞાનીં આ વિષયમાં હર્ષ વિપાદ નહિ કરવો જોઈં. પણ સદા હમેશાં ંવો
 ખ્યાલ રાખવો જોઈં ં—

આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી અનેક ંનિયોમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ આત્માને
 અનેકવાર સર્વ સુખદુઃખના સ્થાનભૂત ઉંચ નીચ ગોત્રોને પ્રાપ્ત કરેલ ં. પછી
 તેની પ્રાપ્તિમાં તને આશ્ચર્ય શું ં. અનન્ત જન્મ જન્માન્તરોમાં આ છવે
 અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કર્યા ં. અને અપમાનથી, સ્થાન આદિના ચ્યુત
 હોવાથી, વધ બંધન અને ધનના નાશથી અનેક રોગોને તથા અનેક પ્રકારના
 દુઃખોને સહન કર્યા ં.

કહું પણ ં—

“સર્વસુખાન્યપિ વહુશઃ, પ્રાપ્તાન્યટતા મયાઽત્ર સંસારે ।
 ઉચ્ચૈઃસ્થાનાનિ તથા, તેન ન મે વિસ્મયસ્તેષુ ” ॥૧॥
 તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥૧॥ ઇતિ ।

કિમધિકેન વર્તમાનેઽપિ જન્મનિ નાનાવિધા અવસ્થા અનુભૂયન્તે, અત-
 આત્માર્થિભિર્હર્ષક્રોધૌ ન કાર્યાવિત્યાશયઃ । અત્ર ગોત્રપદમ્બુપલક્ષણં, તેન જાત્યા-
 દીનાં સર્વેષાં મદો ન વિધેય ઇતિ પ્રકરણાર્થઃ ।

“સર્વસુખાન્યપિ વહુશઃ, પ્રાપ્તાન્યટતા મયાઽત્ર સંસારે ।

ઉચ્ચૈઃસ્થાનાનિ તથા, તેન ન મે વિસ્મયસ્તેષુ ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અધિક ક્યા કહા જાય? જબ વર્તમાન પર્યાય મેં હી ઇસ જીવ કી
 અનેક અવસ્થાઈં હોતી દેખી જાતી હૈં તો જન્મ-જન્માન્તરોં મેં ઇસકી
 અનેક અવસ્થાઈં હુઈ હોં, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ કુલોં મેં જન્મ હુઆ હો
 તો ઇસમેં આશ્ચર્ય કી વાત હી કૌનસી હૈ । એસા દૃઢ વિશ્વાસ કર આ-
 ત્માર્થોં કે લિયે ઇન અવસ્થાઓં મેં કબી ભી હર્ષ ઔર વિષાદ કે લિયે
 સ્થાન નહીં હોના ચાહિયે ।

સૂત્ર મેં ગોત્ર પદ ઉપલક્ષણ હૈ ઇસસે આઠ મદોં કા—(૧) જાતિમદ
 (૨) કુલમદ, (૩) વલમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ,

“સર્વસુખાન્યપિ વહુશઃ, પ્રાપ્તાન્યટતા મયાઽત્ર સંસારે ।

ઉચ્ચૈઃસ્થાનાનિ તથા, તેન ન મે વિસ્મયસ્તેષુ ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ

અધિક શું કહેવામાં આવે જ્યારે વર્તમાન પર્યાયમાં જ આ જીવની અનેક
 અવસ્થાઓ થાય છે તે જારે દેખાય છે તો જન્મ જન્માન્તરોમાં તેની અનેક
 અવસ્થાઓ થાય, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ ગોત્રમાં જન્મો થાય છે એમાં
 આશ્ચર્યની વાત કંઈ છે. એવો દૃઢ વિશ્વાસ કરી આત્માર્થીને માટે આ અવસ્થા
 ઓમાં કોઈ વખત પણ હર્ષ અને શોકનું સ્થાન હોયું ન જોઈએ

સૂત્રમાં ગોત્રપદ ઉપલક્ષણ છે માટે આઠ મદોનું—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળ
 મદ, (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ, (૭) સૂત્રમદ,

માનાદિનિરસનેન કપાયવ્યુદાસસ્તેન ચ સંયમે દૃઢતા વિષયે ચાદૃઢતા, તયા ચ સમ્યગ્જ્ઞાનાદધિગમસ્તેન ચ મોક્ષ ઇતિ ક્રમેણ સર્વથા માનાપમાનાદૌ હર્ષક્રોધૌ ત્યાજ્યાવિતિ ભાવઃ ।

યથા દેશદેશાન્તરં ભ્રમન્ પથિકઃ કચિત્ સુખં કચિદ્ દુઃખં લભતે, કચિદ્ ગ્રામે કચિદરણ્યે વસતિ, કચિત્સમભૂમિષુ કચિચ્ચ વિપમભૂમિષુ શેતે, કચિત્સ્વચ્છજલં કચિદ્ દૂપિતજલં ચ પિવતિ, ન ચ સુખદુઃખે ગણયતિ લક્ષ્યગમ્યદેશપ્રાપ્તિકામઃ, તથૈવ પ્રકૃતેઽપિ ઉચ્ચગોત્રાદિપ્રાપ્તૌ ન હર્ષ-શોકૌ મુક્તિપ્રાપ્તુકામેન સંયમિના કાર્યાવિતિ વર્તુલકાર્યઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

(૭) સૂત્રમદ, (૮) ऐश्वर्यમદ का ग्रहण हो जाता है । मद् भी अहंकार ही है, अतः इनका परित्याग कर देना चाहिये; क्योंकि जाति वगैरह से हीन होने पर भी आत्मा काल लब्धि आदि के प्राप्त होने पर धर्म का अधिकारी बन जाता है । धर्मप्राप्ति में जाति वगैरह बाधक नहीं होते हैं ।

जिस प्रकार देश-देशान्तर में भ्रमण करने वाले प्राणी को कभी किसी स्थान पर सुख, कभी किसी जगह दुःख मिलता है । कभी वह ग्राम में वस जाता है कभी उसे वन में भी वसने का अवसर आता है, कभी प्रशस्त भूमि पर वह सो जाता है कभी कंटकाकीर्ण भूमि में ही पड़ रहता है, कभी मीठा स्वच्छ जल उसे पीने को मिलता है कभी खारा मलिन जल भी वह पी लेता है, तो भी इस विषय में वह सुख और दुःख नहीं मानता । उसे अपने लक्ष्य स्थान पर पहुंचने के लिये यह सब करना पड़ता है । उसी प्रकार प्रकृत में भी मुक्ति को चाहने वाले संयमी मुनि के

(૮) ऐશ્વર્યમદનું ગ્રહણ થાય છે. મદ પણ અહંકાર જ છે માટે તેનો પણ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ, કારણ કે ભતિ વિગેરેનું હીનપણું હોવા છતાં પણ આત્મા કાલ લબ્ધિ આદિના પ્રાપ્ત થવાથી ધર્મનો અધિકારી બની જાય છે, ધર્મપ્રાપ્તિમાં ભતિ વિગેરે બાધક થતા નથી.

જેવી રીતે દેશદેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાવાળા પ્રાણીને કોઈ વખત કોઈ સ્થાનપર સુખ, કોઈ વખત કોઈ જગ્યાએ દુઃખ મળે છે. કોઈ વખત ગામમાં વસે છે કોઈ વખત વગડામાં પણ રહેવાનો પ્રસંગ આવે છે કોઈ વખત પ્રશસ્ત ભૂમિ પર તે સુધ જાય છે કોઈ વખત કાંટાવાળી ભૂમિમાં પણ પડ્યું રહેવું પડે છે. કોઈ વખત મીઠું સ્વચ્છ પાણી પીવા મળે છે કોઈ વખત ખારું મલિન પાણી પણ પીવા મળે છે તો પણ આ બધા વિષયોમાં તે સુખ અગર દુઃખ માનતો નથી. તેને યોતાના લક્ષ્ય સ્થાને પહોંચવા માટે આ બધું કરવું પડે છે તે પ્રકારે પ્રકૃતમાં પણ મુક્તિને આહવાવાળા સંયમીમુનિ માટે ઉચ્ચ નીચ ગોત્રની

પ્રાણિનાં સાતં પ્રિયં ભવતીતિ વિચાર્ય્યં કેષાઞ્ચિદપિ પ્રાણિનામહિતં ન કર્ત્ત-
વ્યમ્ । તદહિતાચરણસ્ય ચત્ફલં ભવતિ તદર્શયતિ—‘ભૂર્હિ’ इत्यादि ।

મૂલ્મ—ભૂર્હિં જાણ પડિલેહ સાયં, સમિષ્ણ ણ્યાણુપસ્સી, તં
જહા—અંધત્તં બહિરત્તં મૂયત્તં કાણત્તં કુંટત્તં યુજ્જત્તં વડભત્તં
સામત્તં સબલત્તં, સહ પમાણં અણેગરૂવાઓ જોણીઓ સંધાયહ,
વિરૂવરૂવે ફાસે સંપરિવેયહ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ભૂતેષુ જાનીહિ સાતમ્ સમિત એતદનુદર્શી, તદ્વથા—અન્ધત્વં બહિરત્વં
મૂકત્વં કાણત્વં કુંજત્વં વડભત્વં શ્યામત્વં શ્વલત્વં સહ પ્રમાદેન અનેકરૂપા યોનીઃ
સન્દધાતિ વિરૂપરૂપાન્ સ્પર્શાન્ પરિસંવેદયતે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

લિયે ઉચ્ચ નીચ ગોત્ર કી પ્રાપ્તિ મેં મી હર્ષ વિષાદ કરના ઉચિત નહીં
હૈ । હસ પ્રકાર કે વિચાર સે માન આદિ કા જબ આત્મા સે અભાવ હો
જાતા હૈ તવ કષાય કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોને સે સંયમી કો સંયમ-
ભાવ મેં દૃઢતા, ઓર વિષયાદિકોં મેં અદૃઢતા આ જાતી હૈ, હસસે સમ્ય-
ગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોં કી પ્રાપ્તિ હોને સે સંયમી મુનિ કો મુક્તિ કા લાભ
કાલાન્તર મેં યા ઉસી ભવ મેં હોજાતા હૈ । હસ પૂર્વોક્ત કથન સે સંયમી
મુનિ કો હસ વાત કા મી સદા વિચાર કરતે રહના ચાહિયે કિ માન
ઓર અપમાન કે કારણ-કલાપોં કી ઉપસ્થિતિ હોને પર મુઝે હર્ષ ઓર
વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોં કો સાતાવેદનીય કે ઉદય સે સુખ એવં સુખ-
કારક સામગ્રી, તથા અસાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ એવં દુઃખકારક

પ્રાપ્તિમાં પણ હર્ષ શોક કરવો ઉચિત નથી. આ પ્રકારના વિચારથી માન આદિનો
જ્યારે આત્માથી અભાવ થઈ જાય છે ત્યારે કષાયનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોવાથી
સંયમીને સંયમ લાભમાં દૃઢતા અને વિષયાદિકોમાં અદૃઢતા આવી જાય છે. માટે
સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોની પ્રાપ્તિ હોવાથી સંયમી મુનિને મુક્તિનો લાભ કાલા-
ન્તરમાં અગર આ લવમાં થાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથનથી સંયમી મુનિએ આ વાતનો પણ સદા વિચાર રાખવો
જોઈએ કે—માન અને અપમાનના કારણકલાપોની ઉપસ્થિતિ હોવાથી હર્ષ
અને વિષાદ કરવું મારું કર્તવ્ય નથી. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોને સાતાવેદનીયના ઉદયથી સુખ અને સુખકારક સામગ્રી,
અને અસાતાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ અને દુઃખકારક સામગ્રી પ્રાપ્ત થાય છે,

માનાદિનિરસનેન કપાયવ્યુદાસસ્તેન ચ સંયમે દૃઢતા વિષયે ચાદૃઢતા, તયા ચ સમ્યગ્જ્ઞાનાદધિગમસ્તેન ચ મોક્ષ ઇતિ ક્રમેણ સર્વથા માનાપમાનાદૌ હર્ષક્રોધૌ ત્યાજ્યાવિતિ ભાવઃ ।

યથા દેશદેશાન્તરં ભ્રમન્ પથિકઃ કચિત્ સુખં કચિદ્ દુઃખં લભતે, કચિદ્ ગ્રામે કચિદરણ્યે વસતિ, કચિત્સમભૂમિષુ કચિચ્ચ વિષમભૂમિષુ ગેતે, કચિત્સ્વચ્છજલં કચિદ્ દૂપિતજલં ચ પિવતિ, ન ચ સુખદુઃખે ગણયતિ લક્ષ્યગમ્યદેશપ્રાપ્તિકામઃ, તથૈવ પ્રકૃતેઽપિ ઉચ્ચગોત્રાદિપ્રાપ્તૌ ન હર્ષ-શોકૌ મુક્તિપ્રાપ્તુકામેન સંયમિના કાર્યાવિતિ વર્તુલકાર્યઃ ॥ મૂ. ૧ ॥

(૭) સૂત્રમદ, (૮) ऐश्वर्यમદ का ग्रहण हो जाता है। मद भी अहंकार ही है, अतः इनका परित्याग कर देना चाहिये; क्योंकि जाति वगैरह से हीन होने पर भी आत्मा काल लब्धि आदि के प्राप्त होने पर धर्म का अधिकारी बन जाता है। धर्मप्राप्ति में जाति वगैरह बाधक नहीं होते हैं।

जिस प्रकार देश-देशान्तर में भ्रमण करने वाले प्राणी को कभी किसी स्थान पर सुख, कभी किसी जगह दुःख मिलता है। कभी वह ग्राम में वस जाता है कभी उसे वन में भी वसने का अवसर आता है, कभी प्रशस्त भूमि पर वह सो जाता है कभी कंटकाकीर्ण भूमि में ही पड़ रहता है, कभी मीठा खच्छ जल उसे पीने को मिलता है कभी खारा मलिन जल भी वह पी लेता है, तो भी इस विषय में वह सुख और दुःख नहीं मानता। उसे अपने लक्ष्य स्थान पर पहुंचने के लिये यह सब करना पड़ता है। उसी प्रकार प्रकृत में भी मुक्ति को चाहने वाले संयमी मुनि के

(૮) ऐશ્વર્યમદનું ગ્રહણ થાય છે મદ પણ અહંકાર જ છે માટે તેનો પણ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ, કારણ કે જાતિ વિગેરેનું હીનપણું હોવા છતાં પણ આત્મા કાલ લબ્ધિ આદિના પ્રાપ્ત થવાથી ધર્મનો અધિકારી બની જાય છે, ધર્મપ્રાપ્તિમાં જાતિ વિગેરે બાધક થતા નથી.

જેવી રીતે દેશદેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાવાળા પ્રાણીને કોઈ વખત કોઈ સ્થાનપર સુખ, કોઈ વખત કોઈ જગ્યાએ દુઃખ મળે છે. કોઈ વખત ગામમાં વસે છે કોઈ વખત વગડામાં પણ રહેવાનો પ્રસંગ આવે છે કોઈ વખત પ્રશસ્ત ભૂમિ પર તે સુધ જાય છે કોઈ વખત કાંટાવાળી ભૂમિમાં પણ પડ્યું રહેવું પડે છે. કોઈ વખત મીઠું સ્વચ્છ પાણી પીવા મળે છે કોઈ વખત ખારું મલિન પાણી પણ પીવા મળે છે તો પણ આ બધા વિષયોમાં તે સુખ અગર દુઃખ માનતો નથી. તેને પોતાના લક્ષ્ય સ્થાને પહોંચવા માટે આ બધું કરવું પડે છે તે પ્રકારે પ્રકૃતમાં પણ મુક્તિને આહવાવાળા સંયમીમુનિ માટે ઉચ્ચ નીચ ગોત્રની

પ્રાણિનાં સાતં પ્રિયં ભવતીતિ વિચાર્ય્ય કૈષાઞ્ચિદપિ પ્રાણિનામહિતં ન કર્ત-
વ્યમ્ । તદહિતાચરણસ્ય યત્ફલં ભવતિ તદ્દર્શયતિ—‘ભૂર્હિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ભૂર્હિ જાણ પડિલેહ સાયં, સમિષ્ણ ણ્યાણુપસ્સી, તં
જહા—અંધત્તં બહિરત્તં મૂયત્તં કાણત્તં કુંટત્તં સુજ્જત્તં વડભત્તં
સામત્તં સબલત્તં, સહ પમાણં અણેગરૂવાઓ જોણીઓ સંધાયઈ,
વિરૂવરૂવે ફાસે સંપરિવેયઈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ભૂતેષુ જાનીહિ સાતમ્ સમિત એતદનુદર્શી, તદ્વથા—અન્ધત્વં વધિરત્વં
મૂકત્વં કાણત્વં કુબ્જત્વં વડભત્વં શ્યામત્વં શ્વલત્વં સહ પ્રમાદેન અનેકરૂપા યોનીઃ
સન્દધાતિ વિરૂપરૂપાન્ સ્પર્શાન્ પરિસંવેદયતે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

લિયે ઉચ્ચ નીચ ગોત્ર કી પ્રાપ્તિ મેં ભી હર્ષ વિષાદ કરના ઉચિત નહીં
હૈ । ઇસ પ્રકાર કે વિચાર સે માન આદિ કા જબ આત્મા સે અભાવ હો
જાતા હૈ તવ કષાય કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોને સે સંયમી કો સંયમ-
ભાવ મેં દૃઢતા, ઔર વિષયાદિકોં મેં અદૃઢતા આ જાતી હૈ, ઇસસે સમ્ય-
ગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોં કી પ્રાપ્તિ હોને સે સંયમી મુનિ કો મુક્તિ કા લાભ
કાલાન્તર મેં યા ઉસી ભવ મેં હોજાતા હૈ । ઇસ પૂર્વોક્ત કથન સે સંયમી
મુનિ કો ઇસ વાત કા ભી સદા વિચાર કરતે રહના ચાહિયે કિ માન
ઔર અપમાન કે કારણ-કલાપોં કી ઉપસ્થિતિ હોને પર મુદ્દે હર્ષ ઔર
વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોં કો સાતાવેદનીય કે ઉદય સે સુખ એવં સુખ-
કારક સામગ્રી, તથા અસાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ એવં દુઃખકારક

પ્રાપ્તિમાં પણ હર્ષ શોક કરવો ઉચિત નથી. આ પ્રકારના વિચારથી માન આદિનો
ત્યારે આત્માથી અભાવ થઈ જાય છે ત્યારે કષાયનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોવાથી
સંયમીને સંયમ ભાવમાં દૃઢતા અને વિષયાદિકોમાં અદૃઢતા આવી જાય છે. માટે
સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોની પ્રાપ્તિ હોવાથી સંયમી મુનિને મુક્તિનો લાભ કાલા-
ન્તરમાં અગર આ ભવમાં થાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથનથી સંયમી મુનિએ આ વાતનો પણ સદા વિચાર રાખવો
જોઈએ કે—માન અને અપમાનના કારણકલાપોની ઉપસ્થિતિ હોવાથી હર્ષ
અને વિષાદ કરવું મારું કર્તવ્ય નથી. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોને સાતાવેદનીયના ઉદયથી સુખ અને સુખકારક સામગ્રી,
અને અસાતાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ અને દુઃખકારક સામગ્રી પ્રાપ્ત થાય છે,

ટીકા—‘ ભૂતેષુ ’ ઇતિ । અત્ર મૂલે ‘ ભૂઈહિં ’ ઇતિ તૃતીયાન્તપાઠઃ સમ્પ્રયર્થે, ભૂતેષુ=ભવન્તિ, ભવિષ્યન્તિ, અભૂવન્ ચ સત્તારૂપેણેતિ ભૂતાનિ=પ્રાણિનસ્તેષુ સાતં=સુખં તદ્વિરુદ્ધં ચાસાતં=દુઃખં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=પ્રક્ષમધિયા વિચાર્ય જાનીહિ=બુઘ્યસ્વ । ઉપયોગલક્ષણો જીવઃ કાલત્રયેઽપિ સત્તાં દધાતિ, અતઃ પ્રાણિનસ્ત્રૈકાલિકસત્તાપ્રતિપાદનાયાત્ર ભૂતશબ્દોપાદાનં કૃતમિતિ વોઘ્યમ્ ।

સામગ્રી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, એસા વિચાર કર કિસી ખી પ્રાણી કા જરા ખી અહિત નહીં કરના ચાહિયે । અહિત આચરણ કા જો ફલ હોતા હૈ સો કહતે હૈ—

‘ ભૂઈહિં જાણ ’ ઇત્યાદિ । પ્રત્યેક જીવાત્મા—ચાહે વહ દરિદ્રી હો; ચાહે ભિક્ષુક હો; ચાહે ધની હો; ચાહે ગુણી હો; કોઈ ખી ક્યોં ન હો; યહી ચાહતા હૈ કિ હમકો શાંતિલાભ હો, સુખ પ્રાપ્ત હો । ચાહે આસ્તિક હો યા નાસ્તિક; સવકા એક યહી લક્ષ્ય હૈ । હસસે પ્રતિકૂલ કોઈ ખી નહીં મિલેગા । એક ભિક્ષુક જો દર દર કા મિચારી બનકર અપને ઉદર કા નિર્વાહ કરતા હૈ હસસે ખી યદિ પ્રશ્ન કિયા જાય તો વહ ખી યહી કહેગા કિ, ક્યા કરૂં; સુઝે શાતા—સુખ નહીં હૈ । અતઃ હસ પ્રકાર કે હસકે કથન સે યહ વાત સત્ય સાગિત હોતી હૈ કિ વહ ખી શાતા—સુખ પાને કા અભિલાષી હૈ । કિઝી કો ખી કોઈ છૂતા હૈ તો વહ ભય કે મારે ભાગતી હૈ । વૃક્ષ કે નીચે કિસીને અગ્નિ જલાઈ હો તો, વહ હસકે આતાપ સે સુરક્ષા જાતા હૈ । લજવંતી એક જાન કી બનસ્પતિ હોતી હૈ જો છૂતે હી સંકુચિત

એવો વિચાર કરી કોઈ પણ પ્રણિતુ જરા પણ અહિત નહિ કરવુ નોઈએ. અહિત આચરણુને જે ક્ષણ હોય છે તે કહે છે—

‘ ભૂઈહિં જાણ ’ ઇત્યાદિ. પ્રત્યેક જીવાત્મા ભલે તે દરિદ્રી હોય અગર ભિક્ષુક હોય, ભલે ધની હોય આહે ગુણી હોય. ભલે કોઈ પણ પ્રકારના હોય પણ ‘અમોને શાંતિનો લાભ થાઓ, સુખ થાઓ’ ભલે નાસ્તિક હોય કે આસ્તિક પણ ‘મધાનુ’ આ એક જ લક્ષ્ય છે. એનાથી પ્રતિકૂળ કોઈ પણ કારણ મળશે નહિ. એક ભિક્ષુક જે ઘરઘરનો ભિખારી બનીને પોતાના પેટનો નિર્વાહ કરે છે તેનાથી પણ એ પ્રશ્ન કરવામાં આવે તો તે પણ એ જ કહેશે કે શુ કરું મને શાતા—સુખ નથી, મારે આ પ્રકારના તેના કથનથી એ વાત સત્ય સાગિત થાય છે કે તે પણ શાતા—સુખ મેળવવાનો અભિલાષી છે. કિઝીને પણ કોઈ અડે છે તો તે પણ ભયથી દૂર ભાગે છે. વૃક્ષની નીચે કોઈએ અગ્નિ સળગાવી હોય તો તે તેના આ તાપથી સુકાઈ જાય છે. લજવંતી એક બાતની બનસ્પતિ હોય છે જે અડકવાથી

हो जाती है। इन सबकी इन बाह्य चेष्टाओं से यही मालूम किया जा सकता है कि-इनके अन्दर रहने वाली आत्मा भी शांता अर्थात् सुख का अभिलाषी है। मतलब यही है कि-चाहे कोई भी जात का जीव क्यों न हो; सभी इस शांता-सुख के अभिलाषी हैं। यहां पर यह प्रश्न हो सकता है कि वह शांता-सुख कैसे और कहां प्राप्त हो सकता है?। भवामिनंदी जीव इस बात का सहसा उत्तर देंगे कि-वह शांता-सुख सांसारिक पदार्थों के सेवन से ही मिल सकता है। परन्तु यह धारणा उनकी गलत है। यदि ऐसा ही होता तो फिर चक्रवर्ती जैसे विशाल वैभव के भोक्ता इनका परित्याग क्यों करते?। कोई आर्थिक शास्त्रवेत्ता कहेगा कि-धन की प्राप्ति में ही शान्ति-सुख समाया हुआ है। परन्तु यह विचार भी ठीक नहीं। क्योंकि यदि यही सिद्धान्त स्वीकृत किया जाय, तो फिर आज जो भीख मांगकर अपना गुजारा करने वाले दरिद्री जीव हैं उनसे जाकर यदि यह कहा जावे कि हम तुम को दो लाख रुपया देते हैं, तुम अपने शरीर का पाव भर भी मांस निकालकर हमको दे दो, तो वह कभी भी आपकी मांग की पूर्ति नहीं करेगा। अतः अधिक क्या कहा जाय, यह बात निश्चित है कि-इन क्षणिक विनश्वर पदार्थों में सच्ची सुख-

अंकुचित થઈ જાય છે આ બધાની આ બાહ્ય ચેષ્ટાઓથી એ માલુમ થાય છે કે-
તેની અંદર રહેવાવાળો આત્મા પણ શાંતા અર્થાત્ સુખનો અભિલાષી છે. મતલબ
એ છે કે ભલે કોઈ પણ જાતનો જીવ હોય પણ તે શાંતા-સુખનો અભિલાષી
છે. આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન થાય છે કે તે શાંતા-સુખ કેવી રીતે અને કઈ જગ્યાએ
પ્રાપ્ત થઈ શકે? ભવમિનંદી જીવ આ વાતનો સહસા ઉત્તર આપશે કે-તે શાંતા-સુખ
સાંસારિક પદાર્થોના સેવનથી જ મળી શકે છે. પરંતુ એવું ધારવું તે ગલત છે.
જો એ જ પ્રમાણે હોય તો પછી ચક્રવર્તી જેવા વિશાળ વૈભવના ભોક્તા તેનો
પરિત્યાગ કેમ કરત? કોઈ આર્થિકશાસ્ત્રવેત્તા કહેશે કે ધનની પ્રાપ્તિમાં જ શાંતા-
સુખ સમાયા છે. પરંતુ તે વિચાર પણ ઠીક નથી, કારણ કે કદાચ તે સિદ્ધાંત
સ્વીકૃત કરવામાં આવે તો પછી આજ જે લીખ માંગી પોતાનો ગુજારો કરવા-
વાળા દરિદ્રી જીવ છે તેની પાસે જઈને તેને કહેવામાં આવે કે-‘અમે તને બે લાખ
રૂપિયા આપીશું તું પોતાના શરીરનું પાશર માંસ અમને કાપીને આપી દે’ તો
તે પણ તમારી આ માંગણી પૂરી કરશે નહિ માટે શું વધારે કહેવું? એ વાત
નિશ્ચિત છે કે આવા ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોમાં સાચી સુખશાંતિ પ્રદાન કરવાની

શાન્તિ પ્રદાન કરને કી યોગ્યતા નહીં હૈ । યહ તો હમારી કલ્પના હૈ, જો હમને ઇનમેં સુખશાન્તિ માન રહી હૈ । જિન જડ સ્થૂલ વસ્તુઓં મેં સુખ કી કલ્પના કરકે સાધારણ મનુષ્ય મી જી-તોડ પરિશ્રમ કર રહે હૈ, ડનકી પ્રાપ્તિ હોને પર મી ડન્હેં સુખ નહીં મિલતા, ક્યોંકિ ડનમેં સુખ પ્રદાન કરને કી શક્તિ હૈ નહીં । ઇસી સે આજ સારા સંસાર, ડાહે વૈભવસમ્પન્ન હો; ડાહે દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હો; દુઃખી હી હૈ । યહ દુઃખ તવતક નહીં મિટ સકતા જવ તક સુખ કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા પતા ન લગા લિયા જાયગા, અથવા ડસકે સ્થાન કા પૂર્ણ જ્ઞાન ન હો જાવેગા ।

વાસ્તવિક સુખ ક્યા હૈ ? ઇસકા ઇક માત્ર ડત્તર હૈ—નિરાકુલતા । ક્યોંકિ સંસાર મેં જવ કમી ઇચ્છાઓં કે શાંત હોને પર યત્-કિશ્ચિત્ સુખ કી અનુભૂતિ હોતી હૈ તવ ઇસસે ઇસ વાત કા અનુમાન મી લગાયા જા સકતા હૈ કિ કોઈ ઇસી મી અવસ્થા હૈ કિ જહાં પર ઇસકા પૂર્ણરૂપ સે વિકાશ હૈ । વહ નિરાકુલતા કે સિવાય ઓર કોઈ દૂસરી અવસ્થા નહીં હૈ । ઇસ નિરાકુલતા કા પૂર્ણભોક્તા પરમાત્મા હૈ । ઇસી કા અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ હૈ । ઇસી અભિપ્રાય કો હૃદય મેં રહકર સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ “ભૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્”—હે ભવ્ય ! પ્રત્યેક જીવોં મેં વ્યક્ત ઓર અવ્યક્તરૂપ સે શાતારૂપ જો સુખ હૈ ડસકી અભિલાષા

યોગ્યતા નથી, ઓ તો અમારી કલ્પના છે, જે અમે તેમા સુખ શાન્તિ માની શખેલ છે. જે જડ અને સ્થૂળ વસ્તુઓમાં સુખની કલ્પના કરીને સાધારણ મનુષ્ય પણ હવતોડ પરિશ્રમ કરે છે. તેના પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ તેને સુખ મળતું નથી. કારણ કે તેમાં સુખ પ્રદાન કરવાની શક્તિ છે જ નહિ. એટલા માટે આજ સારો સંસાર ભલે વૈભવસંપન્ન હોય અગર દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હોય, દુઃખી જ છે. એ દુઃખ ત્યાં સુધી મટી શકતું નથી ત્યાં સુધી સુખનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ હાથ ન લાગે, અગર તેના સ્થાનનું પૂર્ણ જ્ઞાન ન થાય.

વાસ્તવિક સુખ શું છે ? તેનો એક માત્ર ઉત્તર છે—નિરાકુળતા. કારણ કે સંસારમાં ન્યારે કોઈ વખત ઇચ્છાઓના શાંત થવાથી જરાક સુખની અનુભૂતિ થાય છે ત્યારે તેથી એ વાતનો અનુમાન કરવામાં આવે છે કે—કોઈ એવી પણ અવસ્થા છે કે જે કેકાણે તેનો પૂર્ણ રૂપથી વિકાશ છે, તે નિરાકુળતા સિવાય બીજી કોઈ અવસ્થા નથી. આ નિરાકુળતાનો પૂર્ણ ભોક્તા પરમાત્મા છે. તેનો અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી હવ છે આ અભિપ્રાયને હૃદયમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે કે—“ભૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્” હે ભવ્ય ! પ્રત્યેક હવમાં વ્યક્ત અને અવ્યક્ત રૂપથી શાતારૂપ જે સુખ છે, તેની અભિલાષા છુપાયેલી છે, તે

છુપી હુઈ હૈ, હસ વાત કા તૂં અપની સૂક્ષ્મ વુદ્ધિ સે વિચાર કર। હસ સૂત્ર
કે અવતરણ મેં જો સાતવેદનીયજન્ય સુખ કે અભિલાષી પ્રત્યેક જીવ
કો બતલાયા ગયા હૈ વહ હસી નિરાકુલતારૂપ સુખ કા પરમ્પરાકારણ
હોને સે હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। ક્યોંકિ યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ જો
સાતાવેદનીય કર્મ કે ઉદય સે સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત હોગા
વહ ક્ષણિક-વિનશ્વર હોગા, તથા ઉસકા ઉદય દુઃખોં સે અન્તરિમ-છુપા
હુવા હોગા। હસલિયે એસે સુખ સે આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિ-
ણતિ કા સદા ભોક્તા નહીં બન સકતા। હાં! સાંસારિક સુખ કી સામગ્રી
યદિ જીવોં કે પાસ હૈ, ઓર યદિ ઉનકે ચિત્ત મેં હેયોપાદેય કા વિવેક
જાગૃત હૈ તો વે ઉસકે દ્વારા કુછ અંશોં મેં સાંસારિક કાર્યોં સે નિરાકુલ
બનકર શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓં કા આરાધન ભલીભાંતિ કર સકતે હૈં।
હસ અવસ્થા મેં ઉનકે શુભભાવોં કી ક્રમશઃ જાગૃતિ હોતી હૈ, ઓર વહ
ઉન્હેં પરમ્પરારૂપ સે આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કા અધિકારી બના દેતી
હૈ। જો ભવાભિનંદી હૈ અથવા જિસ કિસી પ્રકાર સે અપના સ્વાર્થ સાધન
કરને મેં હી મસ્ત હૈ, ‘અપને સુખ મેં હી સવકા સુખ સમાયા હુઆ હૈ’-
જો હસ દુર્ભાવના કા વશવર્તી હૈ, “સાતવેદનીય કે ઉદય સે જિસ પ્રકાર

વાતનો તું તારી પોતાની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિથી વિચાર કર. આ સૂત્રના અવતરણમાં
જે સાતાવેદનીયજન્ય સુખના અભિલાષી પ્રત્યેક જીવને બતાવવામાં આવ્યા છે,
તે આ નિરાકુલતારૂપ સુખના પરંપરાકારણ હોવાથી પ્રકટ કર્યા છે, કારણ કે
એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે-જે સાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી સાંસારિક વૈભવજન્ય
સુખ પ્રાપ્ત થશે તે ક્ષણિક વિનશ્વર હશે, અને તેના ઉદય દુઃખોથી અન્તરિમ
-છુપાયેલો હશે માટે એવા સુખથી આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિનો
સદા ભોક્તા બની શકતો નથી. હાં, સાંસારિક સુખની સામગ્રી કદાચ
જીવોની પાસે છે, અને કદાચ તેના ચિત્તમાં હેયોપાદેયનો વિવેક
જાગૃત છે તો તે તેના દ્વારા થોડા અંશોમાં સાંસારિક કાર્યોથી નિરાકુળ
બનીને શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓનું આરાધન ભલીભાંતિ કરી શકે છે. આ અવસ્થામાં
તેના શુભ ભાવોની ક્રમશઃ જાગૃતિ થાય છે, અને તે તેને પરંપરાથી આત્મકલ્યાણ-
કારી માર્ગનો અધિકારી બનાવી દે છે. જે ભવાભિનંદી છે અથવા જેકોઈ પ્રકારથી
પોતાનો સ્વાર્થ સાધવામાં જ મસ્ત છે ‘પોતાના સુખમાં જ બધાના સુખ સમા-
યેલા છે’ જે આવી દુર્ભાવનાને વશવર્તી છે, “સાતાવેદનીયના ઉદયથી જેવા પ્રકારે

સમિતઃ=પઞ્ચસમિતિભિઃ સમિતઃ સન્ એતદનુદર્શી=એતત્સુખં દુઃખં વા વક્ત્ર્ય-
માણં વાઽન્યત્વાદિકં દ્રષ્ટું=વિલોકિતું શીલં યસ્ય સ એતદનુદર્શી=પ્રાણિશુભાશુભાવ-
લોકી ત્વં જાતિકુલાદિમદજનિતકટુકર્મવિપાકમન્થત્વાદિકં જ્ઞાત્વા ભૂતેષુ સાતં
જાનીદિ, ઇતિ સમ્બન્ધઃ । તદેવ દર્શયતિ—‘તદથે ’ત્યાદિના ।

હમ સાંસારિક વૈભવ કે ભોક્તા વને હૈં, વૈસે હી દીન દુઃખી જીવ અ-
સાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ દરિદ્રાવસ્થા કે ભોક્તા વને હૈં, ફિર હમેં
इनके दुःख को दूर करने की और इन्हें सुख पहुंचाने की क्या आवश्य-
कता है? क्योंकि हम किसी के कर्मोदय को तो भेद सकते नहीं हैं।” इत्यादि
दुर्भावनाओं से जिनका अन्तःकरण दूषित है—वे ‘प्रत्येक संसारी जीव
सुखामिलापी है’ इस बात को नहीं समझ सकते । इसे समझने के
लिये सूक्ष्म-सद्ज्ञानरूपी बुद्धि, एवं संयम जीवन की आवश्यकता है ।
इसीका खुलागा करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘समिष एयाणुपस्सी
समिતः एतदनुदर्शी’ । जो समितियों के पालन करने में सावधान है,
जिसकी चित्तवृत्ति जीवों को दुःखित देखकर द्रवित हो जाती है, जो
जीवों की रक्षा करने में सदा सावधान रहते हैं, जिनकी प्रत्येक क्रिया
यतनापूर्वक होती है, ऐसे समितिपालक संयमी मुनि ही ‘एतदनुदर्शी’
इस बात का अनुभव कर सकते हैं । पांच समितियों के आराधन करने
का उद्देश्य जीवों की एकमात्र रक्षा करना है, इसमें स्व और पर दोनों
की रक्षा आजाती है । ईर्यासमिति में लवलीन साधु—झूसराप्रमाण दृष्टि से

અમો સાંસારિક વૈભવનાં ભોક્તા બન્યા છીએ તેવી જ રીતે એ દીન દુઃખી જીવ અસા-
તાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ દરિદ્રાવસ્થાના ભોક્તા બન્યા છે. પછી અમને તેના દુઃખોને
દૂર કરવાની અને તેમને સુખ પહોંચાડવાની શું આવશ્યકતા છે? કારણ કે અમો
કેદર્શના કર્મોદયને મિટાવી શકતા નથી ” ઇત્યાદિ દુર્ભાવનાઓથી જેનું અંતઃકરણ
દૂષિત છે તે “ પ્રત્યેક સંસારી જીવ સુખામિલાપી છે ” એ વાતને સમજી શકતા
નથી. તેને સમજવાને માટે સૂક્ષ્મ સદ્જ્ઞાનરૂપી બુદ્ધિ અને સંયમ જીવનની આવ-
શ્યકતા છે, તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—‘ સમિષ પયાણુપસ્સી ’ સમિતઃ
એતદનુદર્શી, જે સમિતિઓના પાલન કરવામાં સાવધાન છે, જેની ચિત્તવૃત્તિ જીવોની
રક્ષા કરવામાં સદા સાવધાન રહે છે, જેની પ્રત્યેક ક્રિયા યતનાપૂર્વક થાય છે, એવા
સમિતિપાળક સંયમી મુનિ જ ‘એતદનુદર્શી’ એ વાતનો અનુભવ કરી શકે છે.
પાંચ સમિતિઓનું આરાધન કરવાનો ઉદ્દેશ્ય જીવોની એક માત્ર રક્ષા કરવાની છે.
તેમાં સ્વ અને પર બન્નેની રક્ષા આવી જાય છે ઇર્યાસમિતિમાં લવલીન સાધુ

માર્ગ કો દેખકર ચલતા હુવા મુનિ સદા હસ બાત કા પક્ષા ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહીં કોઈ છોટા મોટા જીવ મેરે પૈર કે નીચે આકર પ્રાણોં સે વ્યુક્ત ન હો જાય । હસમેં પર કે પ્રાણોં કા રક્ષણ કે સાથ ૨ અપને અહિંસારૂપ મહાવ્રત કા સંરક્ષણ અચ્છી તરહ સે હોતા રહતા હૈ । ૧ । ભાષાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત-વચન બોલેગા, દૂસરે જીવોં કો જિસ વચન સે કષ્ટ પૈદા હો, હસ પ્રકાર કે સાવધ વ કઠોર વચન નહીં બોલતા હૈ । હસ સમિતિ સે સત્ય મહાવ્રત કી રક્ષા હોતી હૈ । ૨ । ઇષણાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ સિર્ફ સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કે લિયે ભ્રમરભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ-નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરતા હૈ । ૩ । આદાનનિક્ષેપણ-સમિતિ મેં મુનિ અપને સંયમ કે ઉપકરણોં કી ઉભય-દોનોં કાલ પ્રતિલેખના કર ઉનકે લેને ઓર રખને મેં યતના કરતા હૈ । ૪ । પ્રતિષ્ઠાપના-સમિતિ મેં મુનિ જીવરહિત સ્થાન મેં મલ-મૂત્રાદિક પરિઠવતા હૈ । ૫ । હન સમિતિયોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી મુનિ ‘સવ હી જીવ સુખ ચાહતે હૈ’ એસા અનુભવ કરતે હૈ । જો વર્તમાન મેં સત્તારૂપ સે રહતે હૈ, ભવિષ્યત્ કાલ મેં બી જો સત્તારૂપ સે રહેંગે, એવં ભૂતકાલ મેં જો સત્તારૂપ સે રહે હૈ વે ભૂત હૈ । સૂત્રકાર ને જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કર ઉસકી ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે “ભૂત”

જુસરાપ્રમાણુ દૃષ્ટિથી માર્ગને દેખીને ચાલતાં સદા આ વાતનો ખ્યાલ રાખે છે કે-કોઈ નાના મોટા જીવ મારા પગ નીચે આવી પ્રાણોથી વિમુક્ત ન થઈ જાય. તેમાં ખીજના પ્રાણોના રક્ષણની સાથે સાથે પોતાના અહિંસાસ્પ મહાવ્રતનું સંરક્ષણ સારી રીતે થાય છે (૧). ભાષાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત વચન બોલશે, ખીજ જીવોને જે વચનથી કષ્ટ પેદા થાય તે પ્રકારના સાવધ કઠોર વચન બોલતા નથી, આ સમિતિથી સત્યમહાવ્રતની રક્ષા થાય છે (૨). ઐષણાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ ફક્ત સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે ભ્રમર-ભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરે છે (૩). આદાનનિક્ષેપણ સમિતિમાં મુનિ પોતાના સંયમના ઉપકરણોની ઉભય-બંને કાળ પ્રતિલેખના કરી તેના લેવામાં અને રાખવામાં યતના કરે (૪). પ્રતિષ્ઠાપનાસમિતિમાં મુનિ જીવરહિત સ્થાનમાં મળ મૂત્રાદિક પરિઠવે (૫). આ સમિતિઓમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા સંયમી મુનિ ‘બધા જીવો સુખ ચાહે છે’ એવો અનુભવ કરે છે. જે વર્તમાનમાં સત્તા સ્પર્થી રહે છે, ભવિષ્ય કાળમાં પણ જે સત્તાસ્પર્થી રહેશે અને ભૂતકાળમાં જે સત્તા સ્પર્થી રહેલા છે તે ભૂત છે. સૂત્રકારે જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોના પ્રયોગ ન કરી તેની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે “ભૂત” એ શબ્દનો સૂત્રમાં પ્રયોગ

અન્ધત્વ=ઉપદત્તનેત્રત્વં દ્રવ્યતો ભાવતોઽપિ ભવતિ, તથૈકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિયા દ્રવ્યભાવાન્યાઃ। ચતુરિન્દ્રિયો મિથ્યાદષ્ટિપન્ચેન્દ્રિયશ્ચૌભૌ ભાવાન્યૌ, દ્રવ્યભાવભેદ-ભિન્નમન્ધત્વં નિયમતો દુઃસ્વજનકં ભવતિ। एवं वधिरस्त्वं=कर्णापाटवं, દ્રવ્યતો વધિરઃ શ્રવણશક્તિરહિતઃ, ભાવવધિરો જિનવચનશ્રવણવિકલઃ। મૂકત્વં=વચનવિકલત્વં દ્રવ્યતઃ, ભાવતો મૂકો મિથ્યાત્વાદ્યભિનિવેશેન સ્વદોષાપહ્વાય જિનવચનાપ્રતિપાદકઃ।

इस शब्द का सूत्र में प्रयोग किया है। उपयोगलक्षणवाला जीव तीनों काल में भी सत्ता से रहित नहीं होता है, इसलिये प्राणी की त्रैकालिक सत्ता प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकारने इस सूत्र में “भूत” शब्द का प्रयोग किया है। अतः जब संसार का प्रत्येक प्राणी सुखाभिलाषी है, तब उसके साथ अत्याचार-अनर्थ कर उन्हें दुःखित करनेवाला प्राणी स्वयं अपने को दुःखित करने की चेष्टा करता है। जाति और कुलादिक के अभिमान से उन्मत्त बनकर जो दूसरों को हीन समझता है, तथा ‘तू अंधा है, तू बहिरा है, तू मृगा है’ इत्यादि प्रकार के कर्कश शब्दों द्वारा जो दूसरों का तिरस्कार करता है वह अपनी कपायपरिणति से आत्मा को मलिन करता हुआ तदुपार्जित कर्म के कटुक विपाक को अवश्य भोगता है। इसी बात का दिग्दर्शन कराते हुए सूत्रकार कहते हैं कि-“अन्धत्वं मूकत्वं” इत्यादि। देखने की शक्ति की अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम अन्धत्व है, यह अंधापना द्रव्य और भाव के भेद से २ प्रकारका है। एकेन्द्रिय, जीव दोइन्द्रिय जीव और तीनइन्द्रिय जीवों में दोनों प्रकार से अंधता है। पौद्गलिक द्रव्यइन्द्रियरूप चक्षु-इन्द्रिय की विकलता द्रव्य-अन्धता है,

કરેલ છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવ ત્રણે કાળમાં પણ સત્તાથી રહિત થતા નથી, માટે પ્રાણીની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ભૂત શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. માટે ન્યાયે સંસારના દરેક પ્રાણી મુખાભિલાષી છે ત્યારે તેની સાથે અત્યાચાર-અનર્થ કરી તેને દુઃખ દેવાવાળા પ્રાણી સ્વયં પોતાની જાતને જ દુઃખિત કરવાની ચેષ્ટા કરે છે. જાતિ અને કુળાદિકના અભિમાનથી ઉન્મત્ત બનીને જે બીજાને હીન સમજે છે, અને ‘તું આંધળો છે, તું બહેરો છે, તું મુગો છે’ ઇત્યાદિ પ્રકારનાં કર્કશ શબ્દો દ્વારા જે બીજાને તિરસ્કાર કરે છે તે પોતાની કપાય પરિણતિથી આત્માને મલિન કરે છે. તદુપાર્જિત કર્મના કટુક વિપાકને અવશ્ય ભોગવે છે. આ વાતનો દિગ્દર્શન કરાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે-“અન્ધત્વ મૂકત્વં” ઇત્યાદિ. દેખવાની શક્તિની અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ અંધત્વ છે. તે અંધાપણુ દ્રવ્ય અને ભાવના સેદ્ધી બે પ્રકાર છે. એકેન્દ્રિય જીવ, બેન્દ્રિય જીવ અને ત્રણે ઇન્દ્રિય જીવોમાં બે પ્રકારથી અંધતા છે. પોદ્ગલિક દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયરૂપ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિયની વિકલતા

किञ्च-काणत्वम्=एकाक्षत्वं द्रव्यतः, भावतः काणत्वं=निश्चयव्यवहारयोर्ज्ञान-
क्रिययोर्वैकपक्षग्राहित्वम् । कुण्डत्वं=कुटिलहस्तत्वादिकं द्रव्यतः, भावतः कुण्डत्वं
प्रतिलेखनादिक्रियाराधने वक्रत्वम् । कुब्जत्वं=वक्रशरीरत्वं द्रव्यतः, भावतः कुटिल-
क्रियत्वम् । वडभत्वं=वक्रपृष्ठत्वादिकं द्रव्यतः, भावतः परमर्मप्रकाशकत्वम् । श्याम-
त्वं=कालिमा द्रव्यतः, भावतो मलिनाचारत्वम्, शबलत्वम्=श्वेतकुण्ठत्वादिकं द्रव्यतः,
भावतः शबलदोषवत्त्वम् । अत्रान्धत्वादिकमुपलक्षणं पङ्क्तुत्वादेर्वोध्यम् ।

और भावइन्द्रिय की विकलता भाव-अन्धता है । चतुरिन्द्रिय और मिथ्या-
दृष्टि पंचेन्द्रिय जीव भावान्ध हैं, क्योंकि बाह्य में द्रव्येन्द्रियरूप चक्षुरिन्द्रिय
होने पर भी ये पदार्थ के यथार्थ स्वरूपावलोकन से रहित होते हैं । दोनों
प्रकार से अन्धता होनी, यह प्राणी के लिये नियम से दुःखोत्पादक होती
है । इसी प्रकार बधिरत्व, मूकत्व, काणत्व आदि भी द्रव्य और भाव के
भेद से दो दो प्रकार के होते हैं । उनमें अपने विषय को ग्रहण करने की
शक्ति से श्रवणेन्द्रिय की विकलता का नाम बधिरता है । सुनने की
शक्ति से रहित होना यह द्रव्य-बधिरता, और जिनेन्द्र वचनों को सुनने
में अप्रेम तथा अनादर भाव का होना, या उनके वचनों को श्रवण करने
की विकलता होनी यह भाव-बधिरता है । वचन बोलने की शक्ति की
अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम मूकत्व है । प्राकृत-संस्कृतादिरूप
अपनी २ मातृभाषा में बोलने की हीनता का नाम द्रव्य-मूकता, एवं
मिथ्यात्वादिक के अभिनिवेश के वश से अपने दोषों को छुपाने के लिये

द्रव्यअंधता छे. अने लाव-धन्द्रियनी विकलता लावअंधता छे. यार धद्रिय-
वाणा अने मिथ्यादृष्टि पंचेन्द्रिय लुव लावान्ध छे, कारणु के बाह्यमां द्रव्येन्द्रिय
रूप चक्षुरिन्द्रिय थवाधी पणु ते पदार्थनुं यथार्थ स्वरूपावलोकनथी रहित होय छे
अन्ने प्रकारथी अंधता थवी ते प्राणी भाटे नियमथी दुःखोत्पादक थाय छे. आ
प्रकार भडेरपणुं, मुंगपणुं, आंधलापणुं आदि पणु द्रव्य अने लावना लेहथी जे
प्रकारे होय छे. तेमां पोताना विषयने अडलु करवानी शक्तिथी श्रवणेन्द्रियनी
विकलतानुं नाम बधिरता छे. सांलणवानी शक्तिथी रहित थवुं ते द्रव्य-भडेर-
पणुं, अने लुने-द्रव्यनो सांलणवामां अप्रेम अने अनादर लाव होवो, अगर
तेमना वयनो सांलणवानी विकलता थवी ते लाव-अधिरता छे. वयन जोलवानी
शक्तिनी अलिब्यक्तिथी रहित थवुं तेनु नाम मूकत्व छे प्राकृतसंस्कृतादिरूप
पोतपोतानी मातृभाषामां जोलवानी हीनतानु नाम द्रव्यमूकता, अने मिथ्यात्वादिकना
अभिनिवेशनावशथी पोताना दोषोने छुपावा भाटे जिनवयनोनुं प्रतिपादन नहि

જિનવચનોં કા પ્રતિપાદન નહીં કરના હસકા નામ ભાવ-મૂકત્વ હૈ । એક આંખ કા હોના યહ દ્રવ્ય સે કાળત્વ હૈ, ઔર નિશ્ચય એવં વ્યવહાર નય મેં સે, અથવા જ્ઞાન ઔર ચારિત્ર મેં સે કિસી એક કા એકાન્તરૂપ સે પક્ષ ગ્રહણ કરના ભાવ સે કાળત્વ હૈ । હાથ પાંવ આદિ અંગ ઉપાંગોં કી વક્રતા દ્રવ્ય-કુંડત્વ, ઔર પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કે કરને મેં અનાદર યા છલ-કપટ કરના યહ ભાવ-કુંડત્વ હૈ । સામાન્યતયા શરીર કા દેહાપન અથવા શરીર મેં કૂવડ વગૈરહ કા નિકલના યહ દ્રવ્ય સે કુબ્જત્વ હૈ । કુટિલક્રિયાપને કા નામ ભાવ સે કુબ્જત્વ હૈ । પૃષ્ઠ ભાગ વગૈરહ કા વક્ર હોના યહ દ્રવ્ય સે વડભત્વ હૈ, દૂસરોં કે ગુપ્ત કાર્યોં એવં અનેક રહસ્યોં કા પ્રકાશન કરના યહ ભાવ સે વડભત્વ હૈ । શરીર મેં કૃષ્ણતા કા હોના યહ દ્રવ્ય સે શ્યામતા-મલિનતા, તથા હીન આચરણી હોના યહ ભાવ સે શ્યામતા હૈ । શરીર મેં સપેદ કુષ્ઠ વગૈરહ કા હોના દ્રવ્ય સે શબલતા, તથા દોષવિશિષ્ટતા ભાવ સે શબલત્વ હૈ । સૂત્ર મેં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણ રૂપ હૈ, હસસે પડ્ગુપને આદિ કા ભી ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે । હન સબ બાતોં કો દિશ્વાને કા અભિપ્રાય યહી હૈ કિ પ્રાણી કિસી ભી મદ કે આવેશ મેં આકર દૂસરોં કે પ્રતિ એસે કષાયવિશિષ્ટ બનકર અપશબ્દોં યા દૂસરોં કે મર્મસ્થલ કો ભેદને વાલે કઠોર શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કરે ।

કરવું તેનું નામ ભાવમૂલ્કત્વ છે. એક આખનું હોવું તે દ્રવ્યથી કાળત્વ છે, અને નિશ્ચય અને વ્યવહાર નયમાંથી અથવા જ્ઞાન અને ચારિત્રમાંથી કોઈ એકનું એકાન્તરૂપે પક્ષ ગ્રહણ કરવો તે ભાવથી કાળત્વ છે. હાથ-પગ આદિ અંગ ઉપાંગોની વક્રતા દ્રવ્યકુંડત્વ અને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં અનાદર અગર છલકપટ કરવું એ ભાવકુંડત્વ છે. સામાન્ય રીતે શરીરનું વાંકાપણું અને શરીરમાં કોઈ વિગેરેનું નિકળવું તે દ્રવ્યથી કુબ્જત્વ છે. કુટિલક્રિયાપણું નામ ભાવથી કુબ્જત્વ છે. પૃષ્ઠભાગ વિગેરેનું વક્ર થવું તે દ્રવ્યથી વડભત્વ છે. બીજાના ગુપ્ત કાર્યો અને અનેક રહસ્યોનું પ્રકાશન કરવું તે ભાવથી વડભત્વ છે. શરીરમાં કાળાશ થવી તે દ્રવ્યથી શ્યામતા-મલિનતા, અને હીન આચરણી થવું તે ભાવથી શ્યામતા છે. શરીરમાં સફેદ કોઈ નીકળવો તે દ્રવ્યથી શબલતા અને શબલ દોષવિશિષ્ટતા ભાવથી શબલતા છે. સૂત્રમાં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણરૂપ છે. તેથી લંગડાપણું આદિનું પણ ગ્રહણ કરી લેવું બોધ્યું છે. આ બધી વાતને દેખાડવાનો અભિપ્રાય એ છે કે-પ્રાણી કોઈ પણ મદના આવેશમાં આવીને બીજાઓના પ્રતિ એવા કષાયવિશિષ્ટ બની અપશબ્દોનો અગર બીજાના મર્મસ્થળને લેદવા-

દુઃખં ચ કોઽપિ નેચ્છતિ પરન્તુ કર્મવશાત્પ્રાયશઃ સર્વેઽપિ સાવધક્રિયાવન્તો નિતાન્તદુઃખિતા ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

અપિચ—‘સહે’તિ, પ્રમાદેન=અનવધાનેન સહ=સાર્દ સમિતિવિકલોઽનવધાનવાન અનેકરૂપાઃ=સંવૃત-વિવૃત-રૂપા યોનીઃ સન્દધાતિ=સન્ધત્તે, ચતુરશીતિલક્ષયોનિ-સમ્બન્ધાવિચ્છેદેનાત્મના સહ સંઘટ્ટનં કરોતિ । તાસુ ચ યોનિષુ વિરૂપરૂપાન્=બહુ-વિધાન્ સ્પર્શાન્=દુઃખાનિ પરિસંવેદયતે=જાનાતિ, નાનાવિધયોનિષ્ટત્પન્નો જીવો બહુવિધાં નરકનિગોદાદિયાતનાં સમનુભૂય નિતાન્તં સ્થિતો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ।

ક્યોં કિ હસ પ્રકાર કે વચનોં સે એક તો બોલનેવાલોં કે લિએ ભાવ-હિંસા કા દોષ લગતા હૈ ઓર દૂસરોં કે ચિત્ત મેં શોક આદિકા ઉત્પાદક હોને સે દ્રવ્યહિંસા કા ખી દોષ આતા હૈ । હસ હિંસા સે અનેક અશુભ કર્મોં કા બંધ હોતા હૈ । આત્મપ્રશંસા એવં પર કી નિંદા કરના, તથા અપને દુર્ગુણોં કો સદ્ગુણ કા રૂપ દેકર ગર્વોન્મત્ત બન ઉન્હેં પ્રકાશિત કરના, ઓર દૂસરોં કે સદ્ગુણોં મેં ખી દૂષણ લગાના યા ઉન્હેં દુર્ગુણરૂપ મેં પ્રકટ કરના હસસે નીચ ગોત્ર કા બન્ધ હોતા હૈ, હસસે જીવ અનેક કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કર હીનઆચરણી આદિ હોતા હૈ । કિસી ધર્માત્મા કે જ્ઞાન એવં દર્શન કે વિષય મેં પ્રશંસા કા નહીં સુહાના, કિસી કારણ સે અપને જ્ઞાન કા છુપાના, માત્સર્ય ભાવ કા રખના, કિસી કે જ્ઞાન અથવા દર્શન મેં વિઘ્ન કરના, હનસે જ્ઞાનાવરણ, તથા દર્શનાવરણ કર્મ કા જીવ બંધ કરતા હૈ । હસકા ફલ જીવોં કે જ્ઞાન એવં દર્શન ગુણોં કા ઘાત હોના હૈ ।

વાળા કઠોર શબ્દોનો પ્રયોગ ન કરે, કારણ કે આ પ્રકારે વચનોથી એક તો ખોલવાવાળાને ભાવહિંસાનો દોષ લાગે છે, અને ખીજના ચિત્તમા શોક આદિના ઉત્પાદક થવાથી દ્રવ્યહિંસાનો પણ દોષ લાગે છે. આ હિંસાથી અનેક અશુભ કર્મોનો બંધ થાય છે. આત્મપ્રશંસા અને પારકાની નિંદા કરવી અને પોતાના દુર્ગુણોને સદ્ગુણોત્તુ રૂપ આપીને ગર્વોન્મત્ત બની તેને પ્રકાશિત કરવું, અને ખીજના સદ્ગુણોમાં પણ દૂષણ લગાડવું અગર તેને દુર્ગુણ રૂપમાં પ્રગટ કરવું તેનાથી નીચ ગોત્રનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ અનેક કુયોનિઓમાં જન્મ ધારણ કરી હીનાચરણી આદિ થાય છે. કોઈ ધર્માત્માના જ્ઞાન અને દર્શન વિષયમા થતી પ્રશંસાને સહન નહિ કરવી, કોઈ કારણથી પોતાના જ્ઞાનને છુપાવવું, માત્સર્ય ભાવ રાખવો, કોઈના જ્ઞાન અને દર્શનમા વિઘ્ન કરવું, તેનાથી જીવ જ્ઞાનાવરણ, અને દર્શનાવરણ કર્મનો બંધ કરે છે. તેનું ફળ જીવોને જ્ઞાન અને દર્શન ગુણોનાં

નિજ ઔર પર કે વિષય મેં દુઃખ, શોક આદિ કરને કરાને સે અસાત-વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવકો કમી મી સાતા નહીં મિલના હૈ । સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ઔર વ્રતી-અણુવ્રતી યા મહા-વ્રતી જીવોં કી સેવા કરના, નિજ ઔર પર કે ઉપકાર કે લિયે યોગ્ય વસ્તુ કા દાન દેના, સરાગસંયમ કા પાલન કરના, ક્રોધાદિકષાયોં કી શાન્તિ હોની ઔર લોભ કા ત્યાગ કરના આદિ કાર્યોં સે જીવ કે સાત વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્કી વજહ સે જીવોં કો સદા સુખકારી વસ્તુઓં કા સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । કેવલી કા અવર્ણવાદ, શ્રુતકા અવર્ણવાદ, તથા સંઘ આદિ કા અવર્ણવાદ કરના, સ્કસે દર્શનમોહનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ સમકિત ગુણ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી । કષાય કે ઉદય સે પરિણામોં મેં તીવ્રતા રહના, સ્કસે ચારિત્ર મોહનીય કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કમી મી ચારિત્ર ધર્મ કો અંગીકાર નહીં કર સકતા । યોગોં કી કુટિલતા કા હોના તથા શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ સે અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરના, સ્કસે અશુભ નામ કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્કસે જીવ ઈન્દ્રિયાદિ અનેક કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કમી ચક્ષુવિકલ હોતા હૈ, કમી

આધારાક્ષ થાય છે. જીજ્ઞાના અને પોતાના વિષયમા દુઃખ શોકાદિ કરવા-કરાવવાથી અસાતવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી જીવને કોઈ વખત પણ સાતા મળતી નથી. સંસારના સમસ્ત પ્રાણી અને વ્રતી-અણુવ્રતી કે મહાવ્રતી જીવોની સેવા કરવી, પોતાના અને પારકાના ઉપકાર માટે યોગ્ય વસ્તુનું દાન દેવું, સરાગસંયમનું પાલન કરવું, ક્રોધાદિ કષાયોની શાન્તિ થવી, અને લોભનો ત્યાગ કરવો આદિ કાર્યોથી જીવને સાતાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવને સદા સુખકારી વસ્તુઓના સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોની પ્રાપ્તિ થાય છે. કેવળીનો અવર્ણવાદ, શ્રુતનો અવર્ણવાદ, અને સંઘ આદિનો અવર્ણવાદ કરવો, જેનાથી દર્શનમોહનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી સમકિત ગુણોની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી કષાયના ઉદયથી પરિણામોમાં તીવ્રતા રહેવી, તેનાથી ચારિત્ર-મોહનીયનો બંધ થાય છે જેનું ફળ જીવ કોઈ વખત પણ ચારિત્રધર્મને અંગીકાર કરી શકતો નથી.

યોગોમા કુટિલતા હોવી, અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગથી અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરવી તેનાથી અશુભ નામકર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ એક ઈન્દ્રિય આદિ અનેક કુયોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કોઈ વખત ચક્ષુવિકલ થાય છે,

મુંગા બનતા હૈ, કમી કુબ્જક ઓર કમી બહિરા હોતા હૈ । સૂત્ર મેં જો અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રકટ કિયે ગયે-હેં વે સબ હસી અશુભનામકર્મ કે ઉપાર્જન સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતે હેં । જિસ પ્રકાર ચિત્રકાર કિસી ચિત્ર કા કમી હાથ ટેકા બના દેતા હૈ, કમી ઇક આંખ બના દેતા હૈ, કમી ઉસે છોટા યા કમી બડા અપની ઇચ્છાનુસાર જિસે જૈસા બનાના યાહે બના દેતા હૈ, હસી પ્રકાર યહ નામકર્મ મી હસ જીવ કો કમી અન્ધા, કમી બહિરા આદિ બના દિયા કરતા હૈ । યોગોં કી વક્તતા નહીં હોની, ંવં વિસંવાદ-અન્યથા પ્રવૃત્તિકા અભાવ હોના, હસસે શુભનામકર્મ કા ઉપાર્જન હોતા હૈ, જિસ કા ફલ પ્રત્યેક અંગ કી પૂર્ણતા ંવં સૌષ્ઠવ-સુન્દરતા આદિ કી પ્રાપ્તિ હોના હૈ । ઉત્તમ યોનિયોં મેં જન્મ તથા મુક્તિપ્રાપ્તિ લાયક વજ્રકૃષ્ણ-નારાચ સંહનનાદિ શુભસંહનનોં કી ંવમ્ સમચતુરસાદિ શુભ સંસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હસી કે ઉદય સે હોતી હૈ । નીર્થકર જૈસી પ્રકૃતિ હસી શુભનામકર્મ કા ભેદ હૈ ।

યદ્યપિ પ્રતિ સમય આયુકર્મ કો છોડ શેષ સાત કર્મોં કા બન્ધ હુઆ કરતા હૈ તથાપિ પૂર્વોક્ત હન ભાવોં દ્વારા જો જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા બન્ધ હોના પ્રકટ કિયા હૈ સો સ્થિતિબન્ધ ંર અનુભાગ-

વખતે મુંગા થાય છે, વળી કુબ્જ અને બહેરા પણ થાય છે. સૂત્રમાં જે અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રગટ કરેલાં છે તે બધા આ અશુભનામકર્મના ઉપાર્જનથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ ચિત્રકાર કોઈ ચિત્રમાં હાથ આડો બતાવે છે, એક આંખ બતાવે છે, કોઈ છોટું કોઈ મોટું પોતાની ઇચ્છા-નુસાર જેને જેમ બનાવવા માગે તેમ બનાવે છે. તે પ્રકારે આ નામકર્મ પણ આ જીવને કોઈ વખત આંધળો, બહેરા આદિ બનાવે છે. યોગોની વક્તા ન થવી અને વિસંવાદ - અન્યથા પ્રવૃત્તિ-નો અભાવ થવો એથી શુભનામકર્મનું ઉપાર્જન થાય છે. જેનું કૃણ પ્રત્યેક અંગની પૂર્ણતા અને સૌષ્ઠવ - સુન્દરતા આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ઉત્તમ યોનિયોમાં જન્મ અને મુક્તિપ્રાપ્તિલાયક વજ્રકૃષ્ણનારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોની અને સમચતુરસાદિ શુભ સંસ્થાનોની પ્રાપ્તિ જીવને આના ઉદયથી થાય છે. તીર્થંકર જેવી પ્રકૃતિ તે શુભનામકર્મનો ભેદ છે.

હજી પ્રતિસમય આયુકર્મને છોડી સાત શેષ કર્મના બંધ થયા કરે છે, તથાપિ પૂર્વોક્ત આ ભાવોદ્વારા જે જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોના બંધ થવા પ્રકટ કરેલ છે તે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અપેક્ષા સમજવી જોઈએ.

બંધની અપેક્ષા સમજના યાગ્ય છે. અર્થાત્ તે સમય પ્રકૃતિ ઓર પ્રદેશબંધ તો સવ કર્મોં કા હુઆ કરતા હૈ, કિન્તુ સ્થિતિ ઓર અનુ-ભાગબંધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા અધિક હોગા । અન્ધા હોના, બહિરા હોના, કાળા ઇત્યાદિ હોના, તથા ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા હોના પર ભી શારીરિક શાંતિ કે લાભ સે વચ્ચિત રહના, દુઃખોત્પાદક સામગ્રી કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોં કો ઝેલના આદિ કષ્ટોં કો કોઈ ભી સાંસારિક પ્રાણી નહોં યાહતા હૈ, પરન્તુ કર્મોં કે દ્વારા પરતન્ત્ર હુએ પ્રત્યેક સાંસારિક જીવોં કો અપના ૨ યોગ એવમ્ કષાયોં દ્વારા ઉપાર્જિત કિયે કર્મોં કા ફલ અવશ્ય ૨ ભોગના પડતા હૈ, ઇસમેં જીવ કી ઇચ્છા કામ નહોં કરતી । કર્મોંધીન બન યહ પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ ક્રિયાઓં કે કરના મેં હી દત્તાવધાન રહા કરતા હૈ, જિસકે કારણ રાત દિન દુઃખી કા દુઃખી હી રહા કરતા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મોં કે ફલોં કો ભોગતે હુએ ભી આગે કે લિયે કર્મોં કા બંધ નહોં હો એસા ભી કોઈ ઉપાય હૈ ? ઉત્તર—હૈ ।

પ્રશ્ન—કયા હૈ ? ઉત્તર—સમતાભાવ । કર્મોં કે ફલોં કા અનુભવ ન કરના વાલા પ્રાણી યદિ ઁને ફલોં કો ભોગતે સમય હર્ષ વિષાદ એવમ્ આર્ત-

અર્થાત્ તે વખત પ્રકૃતિ ઁને પ્રદેશબંધ તો બંધા કર્મોંના તથા કરે છે પણ સ્થિતિ ઁને અનુભાગબંધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોંના અધિક થશે. અંધ થવું, બહેરા થવું, કાળા થવું ઇત્યાદિ. તથા ઇન્દ્રિયાદિકોંની પૂર્ણતા હોવાથી પણ શારીરિક શાંતિના લાભથી વંચિત રહેવું, દુઃખોત્પાદક સામગ્રીની પ્રાપ્તિ થવી, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોંને સહન કરવા કોઈ પણ સાંસારિક પ્રાણી યાહતો નથી, પરંતુ કર્મોંદ્વારા પરતન્ત્ર થયેલ દરેક સાંસારિક જીવને પોતપોતાના યોગ ઁને કષાયોંદ્વારા ઉપાર્જિત કરેલા કર્મોંના ઇળ અવશ્ય અવશ્ય ભોગવવા પડે છે, તેમાં જીવની ઇચ્છા કામ કરતી નથી. કર્મોંધીન બની તે પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ ક્રિયાઓં કરવામાં જ દત્તાવધાન રહ્યા કરે છે, જેના કારણે રાત દિન દુઃખીના દુઃખી જ રહ્યા કરે છે.

પ્રશ્ન—કર્મોંના ઇળને ભોગવતાં છતાં પણ આગળ માટે કર્મોંના બંધ ન થાય એવો કોઈ ઉપાય છે ? ઉત્તર—છે.

પ્રશ્ન—શું છે ? ઉત્તર—સમતાભાવ. કર્મોંના ઇળોંને અનુભવ ન કરવાવાળા પ્રાણી કદાચ તેના ઇળોંને ભોગવતી વખત હર્ષ વિષાદ આદિ ઁને આર્ત રોદ્રરૂપ પરિણામોંથી

રૌદ્રરૂપ પરિણમોં સે યુક્ત નહીં હોના હૈ, ઓર અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કા ફલ ભોગે વિના છુટકારા નહીં હૈ અતઃ ઇનકા ફલ અવશ્ય ભોગના હી પડેગા-ચાહે કિસી ભી પરિસ્થિતિ મેં જીવ ક્યોં ન હો । જિસ પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પુણ્ય કા ફલ ભોગતે હુએ વિષાદપરિણતિ આત્મા મેં નહીં હોતી ડસી પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પાપ કર્મ કે ફલ કો ભોગતે હુએ ભી સુઝે વિષાદપરિણતિ નહીં હોની ચાહિયે, ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાય સે પ્રેરિત હોકર સમતાભાવ સે શુભાશુભ કર્મોં કે ફલ કો જો પ્રાણી ભોગતા હૈ ડસકે લિયે નવીન કર્મોં કા બન્ધ નહીં હોતા । નવીન કર્મોં કા બન્ધ કરાને વાલી કષાયપરિણતિ હી હૈ । હર્ષ ઓર વિષાદ યે કષાયપરિણતિ-રૂપ હી હૈ । સમતાભાવ ઇસ કષાયપરિણતિ સે રહિત અવસ્થા હૈ ।

પ્રશ્ન—ઇસ સમતાભાવ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો કૈસે હોતી હૈ ?

ઉત્તર—સમકિત કી પ્રાપ્તિ સે ।

સમકિતશાલી જીવ ઘર મેં-સંસાર મેં રહતા હુઆ ભી અપની વૃત્તિ કમલપત્ર કે, અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપે હુએ લોહે પર પૈર રખને) કે સમાન રખતા હૈ ઇસસે વહ સમભાવી હોતા હૈ ।

યુક્ત બનતા નથી અને પોતાના ઉપાર્જિત કર્મોના ફળ ભોગવ્યા વિના છુટકો નથી માટે તેનું ફળ અવશ્ય ભોગવવું જ પડશે ભલે કોઈ પણ પરિસ્થિતિમાં જીવ કેમ ન હોય, જેવી રીતે પોતાના ઉપાર્જિત પુણ્યનું ફળ ભોગવતી વખતે વિષાદ પરિણતિ આત્મામાં થતી નથી તે પ્રકારે પોતાના ઉપાર્જિત પાપ કર્મના ફળને ભોગવતાં પણ મને વિષાદ પરિણતિ થવી ન જોઈએ. ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાયથી પ્રેરિત થઈ સમતાલાવથી શુભાશુભ કર્મના ફળને જે પ્રાણી ભોગવે છે તેને માટે નવીન કર્મોનો બંધ થતો નથી. નવીન કર્મોના બંધ કરાવવાવાળી કષાયપરિણતિ જ છે, હર્ષ અને વિષાદ એ કષાયપરિણતિરૂપ જ છે. સમતાલાવ આ કષાય-પરિણતિથી રહિત અવસ્થા છે.

પ્રશ્ન—આ સમતાલાવની પ્રાપ્તિ જીવને કેવી રીતે થાય છે ?

ઉત્તર—સમકિતની પ્રાપ્તિથી.

સમકિતશાળી જીવ ઘરમાં-સંસારમાં રહેવા છતાં પણ પોતાની વૃત્તિ કમલપત્ર અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા) સમાન રાખે છે માટે તે સમભાવી છે.

इदमत्र हृदयम्—यः स्वोत्कर्षं समासाद्य जात्यादिमदसम्पन्नोऽन्यं प्रति 'अन्ध-
स्त्व'—मित्यादिकं परुषं ब्रवीति, मनसा तस्याप्रियमाचरति च, सं जन्मान्तरे स्वय-
मेव नीचगोत्रत्वादिकमन्धत्वादिकं फलं लभत इति भयान्मनोवाकाययोगैः कस्या-
प्यप्रियमात्महितार्थी नाचरेदिति बौध्यम् ॥ सू० २ ॥

उत्कृष्टकुलोत्पत्तिर्गर्वोन्मत्तचित्तोऽधमकुलतया दीनोऽन्धत्वादिकमुपलभमानो वा
कर्तव्याकर्तव्यानभिज्ञः कर्मविपाकमविज्ञाय तत्रैवोच्चकुलादिके विपर्यासं गच्छतीति
दर्शयति—'से अबુज्झमाणे' इत्यादि ।

મૂલમ્—સે અબુજ્ઝમાણે હોવહણ જાઈમરણં અણુપરિયટ્ટમાણે,
જીવિયં પુઠો પિયં ઇહમેગેસિં માણવાણં ચિત્તવત્થુમમાયમાણાણં,
આરત્તં વિરત્તં મણિ કુંડલં સહ હિરણ્ણેણ ઇત્થિયાઓ પરિગિજ્ઞ
તત્થેવ રક્તા, નઈત્થ તવો વા દમો વા નિયમો વા દિસ્સઈ, સંપુણ્ણં
વાલે જીવિઉકામે લાલપ્પમાણે મૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥સૂ૦ ૩॥

છાર્યા—સઃ, અબુધ્યમાનો હતોપહતો જાતિમરણમનુપરિવર્તમાનઃ, જીવિતં
પૃથક્ પ્રિયમ્ ઇહૈકેપાં માનવાનાં ક્ષેત્રવાસ્તુમમાયમાનાનામ્, આરત્તં વિરત્તં મણિ
કુંડલં સહ હિરણ્યેન સ્ત્રીઃ પરિગૃહ્ય તત્રૈવ રક્તાઃ, નાત્ર તપો વા દમો વા નિયમો વા
દૃશ્યતે, સમ્પૂર્ણં વાલો જીવિતુકામો લાલપ્યમાનો મૂઢો વિપર્યાસમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

इस सूत्र का सारांश यही है कि “जो मनुष्य अपने उत्कर्ष को
प्राप्त कर जात्यादिमदवेष्ट में आकर दूसरों के प्रति “तूं अन्धा है” इत्यादि
कठोर भांवा का प्रयोग करता है, मनसे भी उसका अप्रिय करने का
विचार करता है वह दूसरे जन्म में स्वयं ही नीच गोत्रादिक अथवा
अन्धत्वादिक फल का भोक्ता बनता है, अतः ऐसा विचार कर आत्मारथी
जन कभी भी मन वचन और कायरूप योगों से किसी का भी अप्रिय-
—अनिष्ट न करे ॥ सू० २ ॥

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે ‘જે મનુષ્ય પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી
જાત્યાદિમદવેશમાં આવીને બીજા પ્રતિ “તું આંધળો છે” ઇત્યાદિ કઠોર ભાષાનો
પ્રયોગ કરે છે, મનથી પણ તેનું અપ્રિય કરવાનો વિચાર કરે છે તે બીજા જન્મમાં
સ્વયં જ નીચ ગોત્રાદિક અથવા અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બને છે, માટે એવો
વિચાર કરી આત્માર્થી જન કોઈ વખત પણ મન વચન અને કાયાથી કોઈનું
પણ અપ્રિય—અનિષ્ટ નહિ કરે. ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટોકા—‘સ’ ઇત્યાદિ । સઃ=ઉચ્ચકુલોત્પન્નઃ, અન્ધત્વાદિકમનુભવન, અબુ-
ધ્યમાનઃ=પૂર્વકૃતકર્મફલમજાનાનઃ, હતોપહતઃ=અન્ધત્વાદિનાનારોગ્યસ્તત્ત્વેન ક્ષત-
કાયત્વાદ્ હતઃ, સકલજનનિન્ધત્વેનોપહતઃ;

ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ લેને કે ગર્વ સે સંયમી મુનિ અધમકુલ મેં ઉત્પન્ન
હોકર દીન અથવા અન્ધત્વાદિક ફલ કા ભોક્તા બન કર્તવ્ય ઓર અ-
કર્તવ્ય સે વિકલ હોતા હુઆ કર્મ કે ફલ કો નહીં જાનકર ડસી ઉચ્ચ
ગોત્રાદિક મેં વિપર્યાસ-વિપરીત ભાવ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ઇસી કા વર્ણન
કરતે હૈ—“સે અબુજ્ઞમાણે” ઇત્યાદિ ।

સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર કે પહિલે યહ વાત અચ્છી તરહ સે સુલાક્ષા
કર પ્રકટ કર દી હૈ કિ—“જો સંયમી મુનિ ઉચ્ચગોત્ર મેં જન્મ લેને કે
અભિમાન સે ઉન્મત્ત બન દૂસરોં કા તિરસ્કાર કરતા હૈ, અથવા મન સે
ભી ઉનકા અહિત વિચારતા હૈ વહ ઇસ કર્મ કે કટુક ફલ કા જન્માન્તર
મેં યા ઇસી ભવ મેં ભોક્તા બનતા હૈ” ઇસી વાત કો ફિર સે દઢ કરને
કે અભિપ્રાય સે દોહરાતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ—વહ સંયમી મુનિ જો
ઉચ્ચકુલ મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ ઓર અપને અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક
ફલવિશેષ કા ભોક્તા બના હુઆ હૈ, તથા “જો અન્ધત્વાદિક ફલ મુઝે
મિલા હૈ વહ મેરે હી દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મ કા કટુક ફલ હૈ” ઇસ બોધ સે
જો અનભિજ્ઞ હૈ, તથા જો હતોપહત બના હુઆ હૈ—અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક

ઉંચ કુળમાં જન્મ લેવાના ગર્વથી સંયમી મુનિ અધમ કુળમાં ઉત્પન્ન
થઈને દીન અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બની કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યના ભાનથી
વિકલ થઈને તેમજ કર્મના ફળને નહિ બાણીને તે જ ઉંચ ગોત્રાદિકમાં વિપર્યાસ-
વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે. તેનું વર્ણન કરે છે—“સે અબુજ્ઞમાણે” ઇત્યાદિ

સૂત્રકારે આ સૂત્રના પહેલાં આ વાત સારી રીતે સુલાક્ષો કરીને પ્રગટ
કરી છે, કે “જે સંયમી મુનિ ઉંચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાના અભિમાનથી ઉન્મત્ત
બની બીજાઓને તિરસ્કાર કરે છે અથવા મનથી પણ તેનું અહિત કરવા વિચારે
છે તે આ કર્મના કટુક ફળનો જન્માન્તરમાં અગર આ ભવમાં ભોક્તા બને છે.
આ વાતને ફરીથી દઢ કરવાના અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર કહે છે કે—તે સંયમી મુનિ
જે ઉંચ કુળમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે, અને પોતાના અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક ફળ
વિશેષનો ભોક્તા થયેલ છે, તથા “જે અન્ધત્વાદિક ફળ મને મળ્યું છે તે મારા
જ દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મનું કટુક ફળ છે” એ બોધથી જે અનભિજ્ઞ છે, તથા જે
હતોપહત બનેલ છે, અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક અને નાના રોગોથી જેનું શરીર ક્ષત

યદ્વા-ઉચ્ચગોત્રાદિસમુદ્ભવગર્વાત્કર્તવ્યચ્યુતત્વેનાપવાદવાન્ જગજ્જનાનાદરવચ-
નદળ્લેન પટહ્ ઇવ હતઃ, શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મરહિતત્વેનોપહતઃ, એવં ‘જાતિમરણં’
જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણમ્ અનુપરિવર્તમાનઃ=પારાવારતરલતરતરજ્ઞવત્ પુન-
ર્જન્મ પુનર્મરણં ચેતિ સંસારસાગરે પરિભ્રમન્ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણમુપલભમાનોઽ-
નિત્યત્વેઽપિ નિત્યત્વમનુભવન્ વિપર્યાસમુપૈતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

એવમ્ નાના રોગોં સે જિસકા શરીર ક્ષત જીર્ણ શીર્ણ હો રહા હૈ, તથા
સકલજન જિસકી નિંદા કરતે હૈં, અથવા ઉચ્ચગોત્રાદિક મેં જન્મ પ્રાપ્ત
કરને કે ગર્વ સે જો કર્તવ્યચ્યુત હો રહા હૈ, “મેરા કયા કર્તવ્ય હૈ” હિસ
ચાત કો હી જો નહીં સમજ્ઞતા હૈ, યદ્વાતદ્વા પ્રવૃત્તિ કરને સે લોગોં કે
અનેક અપવાદોં કા જો પાત્ર બના હુઆ હૈ, તથા જિસ પ્રકાર દળ્લે સે
ઢોલ પીટા જાતા હૈ ઁસી પ્રકાર જગત કે જીવોં કે અનાદરકારી વચન-
રૂપી દળ્લેઓં કી ચોટ સે જો આહત-તાડિત હૈ, એવમ્ જો વાસ્તવિક અપને
શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કી આરાધના સે વંચિત હૈ, જિસ પ્રકાર સમુદ્ર કી
તરલ તરંગોં સમુદ્ર સે ઁઠતી હૈં ઁર સમુદ્ર મેં હી વિલીન હોતી રહતી
હૈં, ઁસી પ્રકાર જો હિસ સંસારરૂપી અથાહ સાગર મેં ચારંબાર જન્મ મરણ
કે ગોતે ખાતા રહતા હૈ, અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી એવમ્ અનિત્ય
પરપદાર્થોં કો નિત્ય માનકર જો ઁનકે હી અપનાને સેં લગા હુઆ હૈ,
એસા પ્રાણી વિપરીતકલ્પનાવાલા હી માના ગયા હૈ, ઁર વહ અપની હિસ
કલ્પના કી વજહ સે હી રાતદિન દુઃખી હોતા રહતા હૈ ।

છાણું શીણું થઈ રહું છે, તથા સકલજન જેની નિંદા કરે છે, અને ઉચ્ચ
ગોત્રાદિકમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરવાના ગર્વથી જે કર્તવ્યચ્યુત થઈ રહેલ છે, “મારું
શુ કર્તવ્ય છે” એ વાતને પણ પોતે સમજતો નથી, આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કર-
વાથી લોકોના અનેક અપવાદોનો જે પાત્ર બનેલ છે, તથા જે પ્રકાર દંડાથી ઢોલ
પીટવામાં આવે છે તે પ્રકાર જગતના છાણોના અનાદરકારી વચનરૂપી દંડોની
ચોટથી જે આહત-તાડિત છે, અને વાસ્તવિક પોતાના શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની
આરાધનાથી વંચિત છે. જે પ્રકારે સમુદ્રની તરલ તરંગો સમુદ્રથી ઉઠે છે અને
સમુદ્રમાં જ વિલીન થાય છે તે પ્રકાર જે આ સંસારરૂપી અથાગ સાગરમાં ચાર-
વાર જન્મ મરણના ગોથા ખાતા રહે છે. અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી અને
અને અનિત્ય પદાર્થોને નિત્ય માનીને જે તેને અપનાવવામાં લાગેલ છે. એવા
પ્રાણી વિપરીત કલ્પનાવાળા જ માનેલ છે, અને તે પોતાની આવી કલ્પનાના ભેરે
જ રાતદિવસ દુઃખી થાય છે

કિન્ચ-इह संसारे 'क्षेत्रवास्तु' क्षेत्रं=धान्याद्युत्पत्तिस्थलं, वास्तु=प्रासादादिकं सर्वं ममेत्येवमाचरन्तो ममायमानास्तेषां क्षेत्रवास्तुप्रभृतिषु ममत्वं कुर्वताम् एकेषाम्=केषाञ्चिद्विपर्यस्तमतीनां मानवानाम्, उपलक्षणात् प्राणिनां जीवितम्=असंयमजीवितम् पृथक्=विभिन्नरूपेण स्वस्वापेक्षया प्रियम्=इष्टम्, भवतीति शेषः ।

જો સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકા ઉત્પત્તિ સ્થાન; વાસ્તુ-મહલ મકાન આદિ વાહ્ય પદાર્થોં મેં મમત્વશાલી બને હુએ હૈં, વે વાસ્તવિક સંયમી નહીં હૈં, ક્યોંકિ જીવોં મેં વાહ્યપદાર્થોં સે મમત્વ હટે વિના સંયમભાવ હી નહીં ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ। જિસ પ્રકાર ઝૂંટ પર નોંદ લેને વાલે વ્યક્તિ કા પ્રાયઃ અધઃપતન હોતા હૈ ડસી પ્રકાર જો સંયમ કા ઢોંગ રચકર વાહ્યપદાર્થોં મેં હી સૂચ્છિત હો રહે હૈં ડનકા ખી અધઃપતન ડસસે અવશ્ય હોતા હૈ। સંયમ શબ્દ કા અર્થ તો યહી હૈ કિ-ઇન્દ્રિયોં એવમ્ ચિત્ત કી વૃત્તિ જો વાહ્યપદાર્થોં મેં આસક્ત બની હુઈ હૈ ડસકા નિરોધ હો જાના, પરન્તુ જિનકી મમતા વાહ્ય-પર-વસ્તુઓં મેં જાગૃત હૈ કૈસે માના જા સકતા હૈ કિ ડનકે સત્ય સંયમભાવ હૈ, અતઃ એસે પ્રાણી સંયમભાવ સે વહુત દૂર હી રહા કરતે હૈં, ડન્હેં અપના અસંયમ જીવન ચાહે યે જિસ કિસી ખી અવસ્થા મેં રહેં પ્રિય હોતા હૈ, ક્યોંકિ શુરુ સે ડનકા અભ્યાસ હી એસા પડા હુઆ હૈ, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરને લિયે ચિત્તવૃત્તિ એવમ્ ડન્દ્રિયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી વડી ખારી જરૂરત હોતી હૈ, ડસ પ્રકાર કા ડપદેશ ડન્હેં નહીં મિલા હૈ, ક્યોંકિ ડનકા જીવન તો વકરે

જે સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકુ ઉત્પત્તિ સ્થાન, વાસ્તુ-મહેલ, મકાન, આદિ વાહ્ય પદાર્થોંમાં મમત્વશાળી બનેલાં તેઓ વાસ્તવિક સંયમી નથી, કારણ કે જોવામાં આવે પદાર્થોંથી મમત્વ દૂર થયા વિના સંયમભાવ જ ઉત્પન્ન થતો નથી. જે પ્રકારે ડટ ડપર ડંધ લેવાવાળી વ્યક્તિનો પ્રાયઃ અધઃપતન થાય છે તે પ્રકારે જે સંયમનો ઢોંગ રચીને વાહ્ય પદાર્થોંમાં જ મૂચ્છિત થાય છે તેનું પણ અધઃપતન તેનાથી અવશ્ય થાય છે. સંયમ શબ્દનો અર્થ તો એ છે કે-ઇન્દ્રિયો અને ચિત્તની વૃત્તિ જે વાહ્ય પદાર્થોંમાં આસક્ત બની છે તેનો નિરોધ થઇ જવો. પરંતુ જેની મમતા વાહ્ય પરવસ્તુઓમાં જાગ્રત છે, કેવી રીતે માનવામાં આવે કે તેનો સત્ય સંયમભાવ છે, માટે એવો પ્રાણી સંયમભાવથી જીવન ગમે તે સ્થિતિમાં રહે તેને તે પ્રિય લાગે છે, કારણ કે શરૂઆતથી તેનો અભ્યાસ તેવો થયેલ છે, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરવા માટે ચિત્તવૃત્તિ અને ઇન્દ્રિયો ડપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની મોટી જરૂરત હોય છે, આ પ્રકારનો ડપદેશ તેને મળેલ નથી, કારણ કે તેનું જીવન તો બકરાની માફક “મૈ મૈ” કરતાં કરતાં

અન્યચ્ચ-આરક્તમ્=રુચિરાગરજિતમ્, વિરક્તમ્=વિવિધરાગરજિતં પટાદિકમ્
 ‘મણિમ્’ મણિઃ=પદ્મરાગાદિસ્તં, કુણ્ડલમ્=મસિદ્ધમ્, ઉપલક્ષણમેતત્કટકકેયૂરાદી-
 નામ્, હિરણ્યેન=સુવર્ણેન સહ સ્ત્રીઃ પરિગૃહ્ય=સ્વાયત્તીકૃત્ય તત્રૈવ ક્ષેત્રવાસ્તુવિવિધવસ્ત્ર-
 મણિકુણ્ડલકામિન્યાદૌ રક્તાઃ=ગૃધ્રનો મૂઢમતયો વિપર્યાસમુપયન્તિ, વદન્તિ ચ-
 અત્ર સંસારે તપો વા=અનશનાદિસ્વરૂપમ્, દમો વા=ઇન્દ્રિયનો ઇન્દ્રિયોપશમરૂપઃ,
 નિયમો વા=અહિંસાવ્રતં ન દૃશ્યતે=ન ફલવદનુભૂયતે, તપોદમનિયમવતાં જનાનાં
 કાયકલેશ એવાન્યન્ન કિમપિ ફલમ્, અપિ ચ દૃષ્ટસ્ય સુખાદેર્હાનિઃ, અદૃષ્ટસુખસ્ય
 કલ્પનં મહદનુચિતં, ભવાન્તરે ચૈતત્ફલં ભાવીતિ ગ્રહગ્રહિલસ્ય પ્રલાપ એવેતિ વદન્

કી તરહ “મૈં મૈં” કરતા હુઆ પરપદાર્થોં મૈં આસક્તિસંપન્ન હો રહા
 હૈ । અચિત્તપરિગ્રહરૂપ ખડકીલે રંગ વિરંગે કપડોં કે, પદ્મરાગાદિક
 મણિયોં કે, કટક કેયૂર કુણ્ડલ આદિ કે, સુવર્ણ આદિ ધાતુઓં કે, એવં
 સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ કે અપનાને, એવમ્ અનેકે રક્ષણાદિ કરને મૈં
 હી इनकी जीवनयात्रा समाप्त हो जाती है, અર્થાત્ સચિત્ત ઔર અચિત્ત
 પરિગ્રહ કે સંગ્રહ એવમ્ રક્ષણ કરને મૈં હી એસે જીવ ગૃહ્થ બને રહતે હૈં,
 ઔર સંયમજીવન કો દોષ દેતે હુએ કહતે હૈં કિ-“इस संसार में
 अनशनादिक तप, इन्द्रिय और मन को वश में करने रूप दम, अहिंसा-
 व्रतादिरूप नियम कुछ भी कार्यकारी नहीं है । क्योंकि इनका आचरण
 करने वाले व्यक्तियों को कायकलेश के सिवाय और किसी भी फल
 की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा भला संसार में कौन समझदार होगा जो
 प्रत्यक्ष अनुभूत सुखादिकों की कामना से प्रेरित होकर इनका परित्याग

પદાર્થોમાં આસક્તિસંપન્ન હોય છે. અચિત્ત પ્રચ્છિદ્ધરૂપ બતબતના રંગબેરંગી
 કપડાના, પદ્મરાગાદિક મણિઓના, કટક, કેયૂર, કુણ્ડલ આદિના, સુવર્ણ આદિ ધાતુ-
 ઓના, અને સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહના અપનાવવામાં અને તેના રક્ષણાદિ કરવામાં
 જ તેની જીવનયાત્રા સમાપ્ત થઈ બીજી છે, અર્થાત્ સચિત્ત અને અચિત્ત પરિ-
 ગ્રહનો સંગ્રહ અને રક્ષણ કરવામાં જ એવા ગૃહ્થ બની રહે છે, અને સંયમ જીવનને
 દોષ દેતા દેતા કહે છે કે “આ સંસારમાં અનશનાદિક તપ, ઇન્દ્રિય અને મનને
 વશ કરવારૂપ દમ, અહિંસાવ્રતાદિરૂપ નિયમ કોઈપણ કાર્યકારી નથી, કારણ કે તેનું
 આચરણ કરવાવાળા વ્યક્તિઓને કાયકલેશ સિવાય બીજા કોઈ પ્રકારનું ફળ મળતું
 નથી. એવો ભલો ! સંસારમાં કોણ સમજદાર હશે જે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત સુખા-
 દિકોને છોડીને અદૃષ્ટ સુખાદિકોની કામનાથી પ્રેરિત બનીને તેનો પરિત્યાગ કરશે ?

ચાલ:=પરિગ્રહકટુકફલાનભિજ્ઞઃ, સમ્પૂર્ણ યથાસમયપ્રાપ્તકામિન્યાદ્યાસક્તિપૂર્વકં
 યથા સ્યાત્તથા જીવિતુકામઃ અસંયમેન દીર્ઘકાલજીવનાર્થી લાલપ્યમાનઃ=કામ-
 ભોગતીવ્રામિલાષેણ વ્યર્થં પ્રલપન્ મૂઢઃ=વિવેકવિકલઃ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટઃ, વિપ-
 ર્યાસમ્=વૈપરીત્યમ્ મિથ્યાત્વમિત્યર્થસ્તદ્યથા-તત્ત્વેડતત્ત્વબુદ્ધિમ્, અતત્ત્વે તત્ત્વબુદ્ધિમ્,
 કુદેવ-કુગુરુ-કુધર્મેષુ સુદેવ-સુગુરુ-સુધર્મબુદ્ધિમ્, રૂપેષ્વનિષ્ઠબુદ્ધિમ્, અનિષ્ઠેષ્વ-
 નિષ્ઠબુદ્ધિમ્, ઇત્યમ્ વિપર્યયમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ । ઉક્તञ્ચ-

કરેગા?, યહ તો એક ઇસ પ્રકાર કી કલ્પના હૈ કિ-જિસ પ્રકાર કોઈ વ્યક્તિ
 અપને ઘર મેં ઝરતે હુએ અમૃત કો છોડકર કિસી કે બહકાવે મેં આકર
 “પર્વત મેં અમૃત ઝરતા હૈ” ઇસ ઊચાલ સે ડસકી યાહના મેં ડસે છોડ વહાં
 ડોડા જાતા હૈ । જો હમારી ઇન્દ્રિયોં કે ગોચર હૈ વહી વાસ્તવિક હૈ, ઇસકે પરે
 સ્વર્ગ નરકાદિ કુછ ભી નહીં હૈ, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિયોં કે સુખ સિવાય પરોક્ષ
 સ્વર્ગાદિક સુખ હૈ, યહ સિર્ફ એક શ્રદ્ધા કી હી વસ્તુ હૈ વાસ્તવિક કુછ નહીં
 હૈ । તથા “તપશ્ચર્યાં કા ફલ ઇસ ભવ મેં ન મિલે તો ન સહી પરમવ મેં તો
 મિલેગા હી” ઇસ પ્રકાર કી કલ્પના ભી ગ્રહગૃહીત પુરુષ કે પ્રલાપ જૈસી હી
 હૈ । જૈસે ભૂતાદિ કે આવેશ સે યુક્ત પ્રાણી કા પ્રલાપ નિરર્થક હોતા હૈ ડસી
 પ્રકાર “ઇસ ભવ મેં તપ સંયમરૂપ કષ્ટ કો ફેલકર પ્રાણી પરલોકસં-
 બંધી સુખ સમૃદ્ધિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ” યહ કહના ભી નિરર્થક હૈ । ઇસ
 પ્રકાર કી વિપરીત માન્યતા ડન અજ્ઞાની પુરુષોં કી હૈ જો પરિગ્રહ કે
 ફલ સે અનભિજ્ઞ હૈં । રાતદિન પરિગ્રહ કે વડોરને એવમ્ ડસકી વૃદ્ધિ
 કરને મેં દત્તાવધાન પ્રાણી કી દૃષ્ટિ મેં સંયમ જીવન જૈસે સુન્દર સિદ્ધાંત

એ તો એક આ પ્રકારની કલ્પના છે કે-જે પ્રકારે કોઈ વ્યક્તિ પોતાના ઘરમાં ઝરતાં
 અમૃતને છોડીને કોઈના ભરમાવવાથી “પર્વતમાં અમૃત ઝરે છે” તેવા ઊચાલથી
 તેની યાહનામાં તેને છોડીને ત્યાં ઢોડી બાય છે, જે અમારી ઇન્દ્રિયોને ગોચર
 છે તે વાસ્તવિક છે. તેના સિવાય સ્વર્ગ નરકાદિ કંઈ પણ નથી, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિ-
 યોના સુખ સિવાય પરોક્ષ સ્વર્ગાદિક સુખ છે તે ફક્ત એક શ્રદ્ધાની વસ્તુ છે-
 વાસ્તવિક કંઈ પણ નથી. અને “તપશ્ચર્યાનું” ફળ આ ભવમાં નહિ મળે તો
 નહિ પરભવમાં તો મળશે જ.” આવા પ્રકારની કલ્પના પણ ગ્રહગૃહીત પુરુષના
 પ્રલાપ જેવી જ છે. જેમ ભૂતાદિકના આવેશથી યુક્ત પ્રાણીનો પ્રલાપ નિરર્થક
 બને છે તે પ્રકારે “આ ભવમાં તપસંયમરૂપ કષ્ટને ભોગવી પ્રાણી પરલોક
 સંબંધી સુખ સમૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે” એમ કહેવું પણ નિરર્થક છે. આવી
 વિપરીત માન્યતા તેવા અજ્ઞાની પુરુષોની છે જે પરિગ્રહના કટુક ફળથી અન-
 ભિજ્ઞ છે, રાત દિન પરિગ્રહના વધારવામાં દત્તાવધાન પ્રાણીની દૃષ્ટિમાં સંયમ

કા કોઈ મહત્વ ન હો તો इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है, कारण कि कहावत है—जो नृत्य करने में सिद्धहस्त नहीं है, वह आंगन को टेढ़ा कहता है। परिग्रहादि के बोझ से प्राणी की तमाम शक्तियाँ इतस्ततः बिखर जाती हैं अतः वे बिखरी हुई शक्तियाँ “संयमित जीवन बिखरी हुई शक्तियाँ को केन्द्रित करने वाला है” इस प्रकार कैसे महत्त्व दे सकती हैं. परन्तु यह मानना अवश्य पड़ेगा कि—जिस प्रकार सूर्य की किरणें जब किसी विशेष काच में केन्द्रित करली जाती हैं तो उनसे सहसा अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार असंयम अवस्था में जो आत्मिक शक्तियाँ इधर उधर विषय कषायों में फैसकर अस्तव्यस्त हो रही थीं—जब वे संयमित जीवन से केन्द्रित करली जाती हैं तो इनसे भी एक ऐसा प्रवाह निकलता है जो प्राणी के जीवन में अपूर्व परिवर्तन कर देता है। लगाम जिस प्रकार स्वच्छंद घोड़े को, अंकुश मदनोन्मत्त गजराज को बश में कर देता है, उसी प्रकार संयम भी जीवन को योग्य मार्ग पर पहुंचा देता है। यही एक ऐसा मार्ग है जो असंयम जीवन से प्राणी की रक्षा करता है। अतः ऐसे सुन्दर और हितावह मार्ग का सच्चे भावों से जो आराधन नहीं करते हैं वे प्राणी कैसे इससे उत्पन्न होने वाले लाभ को पा सकते हैं?। माना जा सकता है कि—संयम जीवन को

જીવન જેવા સુદર સિદ્ધાંતનો કોઈ મહત્વ ન હોય તો તેમાં આશ્ચર્ય થાય તેવી કોઈ વાત નથી, કારણ કે કહેવત છે—જે નૃત્ય કરવામાં સિદ્ધહસ્ત નથી તે આંગણાને વાકું કહે છે. પરિગ્રહાદિના બોજથી પ્રાણીની તમામ શક્તિઓ આડી અવળી વિખરાઈ જાય છે માટે તે વિખરાયેલી શક્તિઓ “સંયમિત જીવન જે વિખરાઈ ગયેલી શક્તિઓને કેન્દ્રિત કરવાવાળું છે” આ પ્રકારે તે કેવી રીતે મહત્વ દઈ શકે. પરંતુ તે અવશ્ય માનવું પડશે કે જે પ્રકાર સૂર્યની કિરણો જ્યારે કોઈ વિશેષ કાચમાં કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી સહેજે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થાય છે, તેવા પ્રકારે અસંયમ અવસ્થામાં જે આત્મિક શક્તિઓ આડી અવળી વિષય કષાયોમાં ફસીને અસ્તવ્યસ્ત થઈ રહી હતી, જ્યારે તે સંયમિત જીવનથી કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી પણ એક એવા પ્રવાહ નીકળે છે જે પ્રાણીના જીવનમાં અપૂર્વ પરિવર્તન કરે છે. લગામ જેવી રીતે સ્વચ્છંદ ઘોડાને, અંકુશ મદોન્મત્ત ગજરાજને વશમાં કરે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ જીવનને યોગ્યમાર્ગ ઉપર પહોંચાડે છે. તે એક જ માર્ગ છે જે અસંયમ જીવનથી પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, માટે આવા સુદર અને હિતાવહ માર્ગને સાચા ભાવોથી જે આરાધન કરતા નથી તે પ્રાણી કેવી રીતે તેનાથી ઉત્પન્ન થતાં લાભને મેળવી શકે?

“દારાઃ પરિભવકારા, વન્ધુજનો વન્ધનં વિષં વિપયાઃ ।

કોડ્યં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પૂર્ણરૂપ સે વ્યતીત કરને કે લિયે, તથા ઉસકે રક્ષણ કે લિયે કષાયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી સર્વ પ્રથમ બડી ભારી જરૂરત હૈ । પરિગ્રહ કો અપનાના યહ લોભકષાય કે ઉદય મેં હી હોતા હૈ । અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થા મેં રહતે હુએ હી અપના જીવન વ્યતીત કરતે હૈ, તથા યહ યાહતે હૈ કિ “મેંને જો યહ પરિગ્રહાદિક સંગૃહીત કિયા હૈ ઉસકે ભોગને કે લિયે મેં અધિક સે અધિક જીઝં” । અસંયમી જીવ પરપદાર્થોં કે ઉપભોગ કરને મેં હી અધિક આસક્તિસંપન્ન હોતે હૈ—ઈન્હેં જિતની ઇન પરપદાર્થોં કો ભોગને કી તીવ્ર અભિલાષા રહતી હૈ ઉસસે શતાંશ ભી આત્મકલ્યાણમય સંયમિજીવન કી તર્ફ ઇનકી રુચિ નહીં હોતી । જન્માન્તર સે મિથ્યાત્વ કા સંસર્ગ ચલા આતા હૈ । જૈનકુલ મેં ઉત્પન્ન હોને પર ભી ઉનકે ઇસ મિથ્યાત્વ કા નાશ નહીં હોતા । એસે હી જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહલાતે હૈ । જો વર્તમાન ભવ મેં કુગુરુ કુદેવ ઓર કુધર્મ કી સંગતિ મેં પડકર અપને મેં અતત્ત્વરુચિ કો સ્થાન દેતે હૈ વે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ । યે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોં કો અનિષ્ટકારી, તથા અનિષ્ટ પદાર્થોં કો ઇષ્ટકારી માના કરતે હૈ । વે યહ નહીં વિચારતે હૈ કિ—

માનવામાં આવે છે કે—સંયમ જીવનને પૂર્ણ રૂપથી વ્યતીત કરવા માટે તથા તેના રક્ષણ માટે કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની સર્વ પ્રથમ જરૂરત છે. પરિગ્રહને અપનાવવો તે લાભકષાયના ઉદયમાં જ થાય છે. અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરે છે, તથા એ યાહે છે કે “ મેં જે આ પરિગ્રહાદિક સંગ્રહ કર્યો છે તેને ભોગવવાને માટે હું વધારેમાં વધારે જીવું ” અસંયમી જીવ પરપદાર્થોના ઉપયોગ કરવામાં જ અધિક આસક્તિસંપન્ન હોય છે તેને જેટલી પરપદાર્થો ભોગવવાની તીવ્ર અભિલાષા રહે છે તેનાથી સોમાં ભાગની આત્મકલ્યાણમય સંયમ જીવનની તરફ તેની રુચી થતી નથી. જન્માન્તરથી મિથ્યાત્વનો સંસર્ગ ચાલ્યો આવે છે. જૈન કુળમાં ઉત્પન્ન થવા છતાં પણ તેના આ મિથ્યાત્વનો નાશ થતો નથી એવા જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે. જે વર્તમાન ભવમાં કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મની સંગતિમાં પડીને પોતાનામાં અતત્ત્વરુચિને સ્થાન આપે છે તે મિથ્યાત્વદૃષ્ટિ જીવ છે. તે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોને અનિષ્ટકારી તથા અનિષ્ટ પદાર્થોને ઇષ્ટકારી માને છે. તે એવું વિચારતા નથી કે—

સર્વથા વિપર્યસ્તોઽનેકભવેષુ પરિભ્રમન્ ભ્રાન્તઃ સંયમાત્મઘાતમેવ કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । સૂત્રે ઉપૈતીત્યત્રૈકવચનમાર્પત્વાત્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યે પુનરવિપર્યસ્તાઃ સંયમિનસ્તેષાં કર્તવ્યમુપદિશતિ—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઈણમેવ નાવકંઘંતિ, જે જણા ધ્રુવચારિણો । જાઈમરણ પરિજ્ઞાય, ચરેઽસંકમણે દઢે ॥ નત્થિ કાલસ્સઽણાગમો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઈદમેવ નાવકાઙ્ક્ષન્તિ, યે જના ધ્રુવચારિણઃ । જાતિમરણ પરિજ્ઞાય, ચરેદશક્કમના દઢઃ ॥ નાસ્તિ કાલસ્યાઽનાગમઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

“દારાઃ પરિભવકારા, -બન્ધુજનો વન્ધનં વિષં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

યે જો સ્ત્રી આદિક પદાર્થ હૈં વે મેરા તિરસ્કાર કરને વાલે હૈં । બન્ધુ જન એક વન્ધન હૈં । વિષયાદિક વિષ હૈં । એસા કયા ઇસ પ્રાણી કા મોહ હૈં જો અપને શત્રુઓં કો ભી મિત્ર સમજ રહા હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ પ્રાણી વિપરીતબુદ્ધિવાલા બનકર અનેક ભવોં મેં પરિભ્રમણ કર હેયોપાદેય કે વિવેક સે રહિત હોકર સંયમરૂપ અપની આત્મા કા ઘાત કરતા રહતા હૈં । આત્મા કા સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ હૈં, ઇસકો પાલન નહીં કરના, અથવા આત્મા કો સંયમી નહીં બનાના આત્મા કી ઘાત કરના હૈં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો સત્ત્વે ચારિત્ર સે યુક્ત હૈં વે ઇસ અસંયમિજીવન કો પસન્દ નહીં કરતે હૈં, યહ વાત ઇસ સૂત્ર મેં પ્રદર્શિત કરતે હૈં—“ઈણમેવ નાવ-કંઘંતિ’ ઇત્યાદિ ।

“દારા પરિભવકારા, બન્ધુજનો વન્ધનં વિષં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

આ જે સ્ત્રી આદિક પદાર્થ છે તે મારો તિરસ્કાર કરવાવાળા છે બન્ધુજન એક વન્ધન છે. વિષયાદિક વિષ છે. એવો કયો આ પ્રાણીનો મોહ છે જે પોતાના શત્રુઓને પણ મિત્ર સમજે છે. આ પ્રકારે આ પ્રાણી વિપરીત બુદ્ધિવાલો બનીને અનેક ભવોમાં પરિભ્રમણ કરી હેયોપાદેયના વિવેકથી રહિત થઈને સંયમરૂપ પોતાના આત્માનો ઘાત કરતા રહે છે. આત્માનો સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ છે તેનું પાલન નહિ કરવું અથવા આત્માને સંયમી નહિ બનાવવો તે આત્માની ઘાત કરવા બરાબર છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે સાચા ચારિત્રથી યુક્ત છે તે આવા અસંયમિજીવનને પસંદ કરતા નથી. આ વાત આ સૂત્રમાં પ્રદર્શિત કરે છે—“ઈણમેવ નાવકંઘંતિ’ ઇત્યાદિ.

‘ઇદ’-મિત્યાદિ । “ ધ્રુવચારિણઃ ” ધ્રુવતિ=વ્રજતિ આત્મતઃ પૃથગ્ભવતિ કર્મ-
ચયો યેન તદ્ ધ્રુવં=ચારિત્રં, તત્ત્વચારિત્રં શીલં યેષાં તે ધ્રુવચારિણઃ ।

યદ્વા-ધ્રુવો મોક્ષસ્તદ્દેતુત્વાત્તપોજ્ઞાનક્રિયાદિકં કાર્યકારણયોરભેદાત્, તત્ત્વચરણ-
શીલા ધ્રુવચારિણઃ । યે જના ધ્રુવચારિણઃ, તે ઇદમેવ અસંયમજીવિતં પૂર્વશુક્તભોગાદિકં
વા નાવકાઢ્ક્ષન્તિ=નેચ્છન્તિ । ‘ જાતિમરણ ’ જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણં, જાતિ-
મરણં યત્ર સં જાતિમરણઃ=સંસારસ્તે વા જ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા ‘ અશક્લિતમનાઃ ’ અશક્લિ-
તં મનો યસ્ય સોઽશક્લિતમનાઃ=તપોદમનિયમવૈફલ્યાશક્કાશૂન્યો જિનવચનશ્રદ્ધાવાન્,
અત એવ દૃઢઃ=વિશ્રોતસિકારહિતઃ, પરીપહોપસર્ગૈર્નિષ્પકમ્પો વા ચરેત્=વિહરેત્ ।

ધ્રુવ શબ્દ કા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોંકિ-“ ધ્રુવતિ-વ્રજતિ આત્મનઃ
પૃથગ્ભવતિ કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્ ” કર્મસમૂહ જિસકે દ્વારા આત્મા સે
પૃથક્ હોતા હૈ વહ ધ્રુવ હૈ, વહ ચારિત્રસ્વરૂપ આત્મા કા નિજધર્મ હૈ ।

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધન કે દ્વારા આત્મા ડ્યોં ડ્યોં અવિરતિ,
પ્રમાદ, કષાય ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ, ત્યોં ત્યોં હિસ
આત્મા મેં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । હિસ ઉજ્જ્વ-
લતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા સમસ્ત કર્મોં કા
નાશ કર દેતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત કર્મ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈ । તપ
શ્રુત ઓર વ્રતોં કા પાલન કરને વાલા આત્મા હી ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ
હોકર સંવર ઓર નિર્જરા કે સુન્દર મેદાન મેં આકર અપને અન્તિમ મોક્ષ
પુરુષાર્થ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । સુવર્ણ જૈસે જૈસે અગ્નિ મેં તપાયા જાતા હૈ
વૈસે વૈસે વહ બિલકુલ નિર્મલ હોતા જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર કર્મોં કે અનાદિ
સંબંધ સે આવૃત યહ આત્મા હી મલિનદશાસંપન્ન હૈ, ડસકી હિસ

ધ્રુવ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે, કારણ કે “ ધ્રુવતિ વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્ભવતિ
કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્ ” કર્મસમૂહ જે દ્વારા આત્માથી પૃથક્ થાય છે તે
ધ્રુવ છે, તે ચારિત્રસ્વરૂપ આત્માનો નિર્ધર્મ છે.

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય
અને અશુભ યોગોના નિગ્રહ કરતા રહે છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ અપૂર્વ
ઉજ્જ્વલતાની નીચતિ થાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની નીચતિમાં આત્મા સંવર અને
નિર્જરાદ્વારા સમસ્ત કર્મોનો નાશ કરે છે, અને સમસ્ત કર્મ આત્માથી પૃથક્ થઈ
નથી છે. તપ શ્રુત અને વ્રતોના પાલન કરવાવાળા આત્મા જે ધ્યાનરૂપ રથ પર
આરૂઢ થઈ સંવર અને નિર્જરાના સુન્દર મેદાનમાં આવીને પોતાના અંતિમ મોક્ષ
પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કરી લે છે સુવર્ણને અગ્નિમાં જેમ જેમ વધારે તપાવવામાં
આવે તેમ તેમ તે વધારે નિર્મળ બને છે. તે પ્રકારે કર્મોના અનાદિ સંબંધથી

મલિનતા કો દૂર કરને મેં ચારિત્ર કી અરાધના અગ્નિ કા કામ દેતી હૈ । કર્મો કા સંબંધ આત્મા કે સાથ આજ કા નહીં હૈ કિન્તુ યહ તો અનાદિકાલ કા હૈ, યહ વાત કઈ વાર લિખી જા ચુકી હૈ । યે કર્મપુદ્ગલ અચેતન હોને સે સ્વયં આત્મા કે પાસ નહીં જાતે કિન્તુ અનાદિકાલ સે વદ્ધરૂપ હસ આત્મા કે યોગરૂપ પરિણામ મેં એસી આકર્ષક શક્તિ હૈ કિ જિસકે દ્વારા વે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ઝીંચે જાતે હૈ—અર્થાત્ આત્મા જવ કષાયોં કે દ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ યોગ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોં કો—તપા હુઆ લોહા જિસ તરહ પાની કો ચારોં ઓર સે ઝીંચતા હૈ ઠીક ઉસી તરહ ઝીંચતા હૈ, ઓર વે સ્વાયે હુણ મોજન કે હસ સુધિરાદિરૂપ કી તરહ અપને હી આપ ભિન્ન-ભિન્ન રૂપ સે પરિણત હો જાતે હૈ । કર્મપુદ્ગલ નવીન-નવીન તયાર નહીં હોતે, કારણ કિ “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન ” સત્ કા વિનાશ ઓર અસત્ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી । આત્મા કષાયોં સે જવ સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ મન, વચન ઓર કાયરૂપ યોગોં કે દ્વારા જિન કાર્મણ વર્ગણાઓં કો ઝીંચતા હૈ ઉન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ ।

પ્રશ્ન—આપને અમી તો યહ કહા હૈ કિ—આત્મા કર્મોં કે સાથ અનાદિકાલ સે બંધ રહા હૈ, ઓર અવ આપ કહતે હૈ કિ—જિન કાર્મણ

આવૃત આ આત્મા પણ મલિનદશાસંપન્ન છે, તેની આ મલિનતાને દૂર કરવામાં ચારિત્રની આરાધના અગ્નિનું કામ આપે છે. કર્મોની સંબંધ આત્માની સાથે આજનો નથી પણ અનાદિ કાળનો છે, એ વાત ઘણી વખત લખાઈ ચુકી છે. આ કર્મ પુદ્ગલ અચેતન હોવાથી પોતે આત્માની પાસે નથી જતા પણ અનાદિ કાળથી બદ્ધરૂપ આ આત્માને યોગરૂપ પરિણામમાં એવી આકર્ષક શક્તિ છે કે જેના દ્વારા તે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ખેંચાઈ જાય છે. અર્થાત્ આત્મા જ્યારે કષાયોદ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત થાય છે ત્યારે યોગદ્વારા કર્મ પુદ્ગલોને—તપેલું લોહું જેવી રીતે પાણીને ચારે બાજુથી ખેંચે છે, ઠીક તે પ્રમાણે ખેંચે છે. અને તે ખવાયેલાં લોજનનું આ સુધિરાદિ રૂપની માફક પોતાની એળે જ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી પરિણત થાય છે. કર્મપુદ્ગલ નવીન નવીન તૈયાર થતાં નથી. કારણ કે “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન ” સત્નો વિનાશ અને અસત્ની ઉત્પત્તિ થતી નથી. આત્મા કષાયોથી જ્યારે સંતપ્ત થાય છે ત્યારે મન, વચન અને કાયા રૂપ યોગોદ્વારા જે કાર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે તેની કર્મસંજ્ઞા થઈ જાય છે.

પ્રશ્ન—આપે હમણા તો એ કહ્યું કે આત્મા કર્મોની સાથે અનાદિ કાળથી બંધી રહ્યો છે, અને હવે આપ કહો છો કે જે કાર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે

વર્ગનાઓં કો ચીંચતા હૈ ઉન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ । હસસે તો આત્મા ઓર કર્મ કા સંબંધ સાદિ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

ઉત્તર—અભિપ્રાય કો સમજે વિના હી યહ પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ—યહ જીવાત્મા અનાદિ સે હી કર્મબંધ સહિત હૈ । હસકે સાથ કોઈ નિયમિત સમય સે કર્મબંધ નહીં હુઆ । એસા નહીં થા કિ જીવ અલગ-ન્યારા થા ઓર કર્મ ન્યારે થે, પીછે સે इन दोनों का संयोग हुआ हो । किन्तु जिस प्रकार मेरुगिरि आदि अकृत्रिम स्कन्धों में अनंत पुद्गलपरमाणु अनादि से ही बन्धरूप हो रहे हैं, और उनमें पुराने पुद्गलपरमाणु भिन्न होते रहते हैं, और नवीन आकर मिलते हैं । इसी प्रकार इस संसार में एक जीवद्रव्य और अनन्त કર્મરૂપ પુદ્ગલ-પરમાણુઓં કા પરસ્પર મેં અનાદિકાલ સે સંબંધ હૈ । इनमें से कई કર્મ-પરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈ ઓર कई કર્મપરમાણુ મિલતે રહતે હૈ । इस प्रकार इन કર્मपरमाणुओं में परस्पर मिलना विछुड़ना होता रहता है ।

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિક કો નિમિત્ત કો પાકર કર્મરૂપ હુઆ કરતે હૈ, ફિર વે અનાદિ સે કર્મરૂપ અવસ્થા વાલે કૈસે માને જા સકતે, કારણ કિ કાર્મણ વર્ગના, જિસસે કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ સ્વયં પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ ? ।

તેની કર્મસંજ્ઞા થાય છે તેથી તો આત્મા અને કર્મનો સંબંધ સાદિ સિદ્ધ થાય છે.

ઉત્તર—અભિપ્રાયને સમજ્યા વિના જ પ્રશ્ન કર્યો છે. કહેવાનો તાત્પર્ય એ છે કે—આ જીવાત્મા અનાદિથી જ કર્મબંધસહિત છે. તેની સાથે કોઈ નિયમિત સમયથી કર્મબંધ થયેલ નથી. એવું ન હતું કે જીવ અલગ—જુદો હતો અને કર્મ પણ જુદા હતાં, પાછળથી એ બંનેનો સંયોગ થયો હોય, પણ જેવી રીતે મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિથી જ બંધરૂપ થઈ રહેલ છે, અને તેમાં પુરાણા પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન થતાં રહે છે અને નવા આવીને મળે છે. આ પ્રકાર આ સંસારમાં એક જીવદ્રવ્ય અને અનંત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓના પરસ્પરમાં અનાદિ કાળથી સંબંધ છે, તેમાંથી કોઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન થતાં રહે છે અને કોઈ પુદ્ગલપરમાણુ મળતાં રહે છે. આ પ્રકાર આ કર્મપરમાણુઓમાં પરસ્પર મળવું, છુટા થવું વિગેરે થતું જ રહે છે.

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિકના નિમિત્તને લઈને કર્મરૂપ થયા કરે છે, પછી તે અનાદિથી કર્મરૂપ અવસ્થાવાળા કેવી રીતે માનવામાં આવે કારણ કે કાર્મણવર્ગણા જેનાથી કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન થાય છે તે સ્વયં પુદ્ગલદ્રવ્ય છે?

ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માની જાય છે. અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવાની અનાદિતા પર બદલાવ લગાવવાનો છે. જ્યાં પર નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નથી, અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં પર નિમિત્ત નથી. નિમિત્તના સંબંધ સાદિતા સાથે થાય છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ બે ગુણો નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવાની કોઈ મહત્ત્વ નથી રાખતા. ઠીક ઠીક પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓના કર્મરૂપ હોવાને રાગાદિકનિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જ્યાં પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિકાલથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહી છે, ત્યાં નિમિત્તની કલ્પના કરવાની કોઈ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતા. શાસ્ત્રમાં આ વાતનો સમાધાન આપ્યો છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વેનોપાદાનાત્ ”
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરતા હોય છે કે જ્યાં રાગાદિક ભાવકર્મના કારણે દ્રવ્યકર્મ

ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માનવામાં આવે છે, અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અનાદિતા ઉપર બદલાવ લગાડવા બરાબર છે. જે કહેવાય નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નથી અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સંબંધ સાદિતા સાથે થાય છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ બે ગુણો નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્ત્વ રાખતું નથી ઠીક તે પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓના કર્મરૂપ હોવાને રાગાદિક નિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિ કાળથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈપણ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતી. શાસ્ત્રમાં આ વાતનો સમાધાન આપ્યો છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વે નોપાદાનાત્ ”
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરે છે કે—જ્યાં રાગાદિક ભાવકર્મનું કારણ દ્રવ્યકર્મ છે,

હૈ, ઔર દ્રવ્યકર્મ કા કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ હૈ તો ંસી પરિસ્થિતિ મેં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આકર ઉપસ્થિત હોતા હૈ । ઇસ દોષ મેં કિસીકી ભી સ્વતન્ત્ર સત્તા કી સિદ્ધિ નહીં હોતી હૈ । તવ આચાર્ય કહતે હૈ—એસા મત કહો, કારણ કિ અનાદિ સે હી દ્રવ્યકર્મ કા સમ્બન્ધ સ્વયં સિદ્ધ હૈ, ઔર ઇસી કી વજહ સે જીવ મેં રાગાદિક ભાવોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । અનુભવ સે ભી યહી બાત પ્રતીતકોટિ મેં આતી હૈ કિ—યદિ રાગાદિક ભાવ જીવ કે વિના કિસી નિમિત્ત કે સ્વીકાર કિયે જાવેં તો વે જીવ કે નિજસ્વભાવ હો જાને સે વિભાવ ભાવ કૈસે માને જા સકેંગે ? । ંસી પરિસ્થિતિ મેં જીવ કા નિજભાવ રાગાદિક ભી માનના હોગા । પરન્તુ ંસી માન્યતા શાસ્ત્ર સે વહિર્ભૂત હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ ઔર આત્મા કા આપ અનાદિ સમ્બન્ધ કહતે હૈ પરન્તુ યહ બાત ઠીક નહીં બૈઠતી, કારણ કિ ઇન દોનોં કા જો સમ્બન્ધ હૈ વહ સંયોગસમ્બન્ધ હી હૈ, તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ નહીં । પહિલે દૂધ ઔર પાની કી તરહ યે દોનોં સ્વતન્ત્ર હોં ઔર ફિર પરસ્પર મિલેં તવ ઇનકા સમ્બન્ધ માનના ઠીક હો સકતા હૈ ।

ઉત્તર—જૈસે જલ ઔર દૂધ કા સુવર્ણ ઔર કિટ્લિક કા તુષ ઔર કણ કા, તિલ ઔર તૈલ કા સમ્બન્ધ જનાદિ કા માના જાતા હૈ, ંસી

દ્રવ્યકર્મનું કારણ રાગાદિક લાવકર્મ છે તો આવી પરિસ્થિતિમાં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે. આ દોષમાં કોઈની પણ સ્વતંત્ર સત્તાની સિદ્ધિ થતી નથી. ત્યારે આચાર્ય કહે છે—એવું ન કહો, કારણ કે અનાદિથી દ્રવ્ય-કર્મનો સંબંધ સ્વયંસિદ્ધ છે. અને એજ કારણથી જીવમાં રાગાદિક લાવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. અનુભવથી પણ એ વાત પ્રતિતીકોટિમાં આવે છે, કે—કદાચ રાગાદિક લાવ જીવને વિના કોઈ નિમિત્તે સ્વીકાર કરવામાં આવે. તો તે જીવના નિજ લાવ થઈ જવાથી વિલાવ લાવ કેવી રીતે માની શકશે ? આવી પરિસ્થિતિમાં જીવનો નિજલાવ રાગાદિક પણ માનવો પડશે, પરંતુ એવી માન્યતા શાસ્ત્રથી બહિર્ભૂત છે.

પ્રશ્ન—કર્મ અને આત્માનો આપ અનાદિ સંબંધ કહો છે પરંતુ એ વાત ઠીક બેસતી નથી, કારણ કે બન્નેનો જે સંબંધ છે તે સંયોગસંબંધ જ છે. તાદાત્મ્યસંબંધ નહિ, પહેલાં દૂધ અને પાણીની માફક બન્ને સ્વતંત્ર હોય અને પછી પરસ્પર મળે ત્યારે સંબંધ માનવો તે ઠીક લાગે છે

ઉત્તર—જેવી રીતે પાણી અને દૂધ, સુવર્ણ અને કિટ્લિક, ચાખા અને ફેતરી, તલ અને તેલનો સંબંધ અનાદિનો માનવામાં આવે છે, તે પ્રકારે તેનો

પ્રકાર इनका भी सम्बन्ध अनादि का ही है । नवीन इनका सम्बन्ध नहीं हुआ है । इनका परस्पर में संयोगसम्बन्ध ही है, ऐसा जो कहा जाता है वह आगामी काल में इनकी भिन्नता को देखकर ही । अनादि से मिले हुए होने पर भी ये जुदे-जुदे हो जाते हैं, इससे अनुमान होता है कि ये पहिले से भी जुदे हैं । परस्पर संयोगसंबंधविशिष्ट होने पर भी ये दोनों पदार्थ स्वस्वरूपापेक्षया भिन्न भिन्न ही है । यदि भिन्न न हों तो फिर मुक्ति इन के पृथक् होने से जो जीवात्मा को प्राप्त होती है, वह कैसे हो सकेगी । अतः जीव और कर्म का संबंध अनादि का ही है सादि नहीं ।

प्रश्न—कर्म जब पुद्गलपिंडरूप हैं, तब वे घटपटादिक की तरह इन्द्रियगम्य क्यों नहीं होते ।

उत्तर—स्थूल-स्थूल १, स्थूल २, सूक्ष्म-सूक्ष्म ३, सूक्ष्म-स्थूल ४, सूक्ष्म ५, और सूक्ष्म-सूक्ष्म ६, इस प्रकार सिद्धान्तकारों ने पुद्गल को इन छह विभागों में विभक्त किया है । इनमें कागज, लकड़ी, कलम, दावात आदि स्थूल-स्थूल पुद्गल हैं, इनमें कठोर वस्तुओं का समावेश है । स्थूल-स्थूल वस्तुएँ आपस में छिन्न भिन्न होने पर अपने आप फिर मिल नहीं सकती ।

પણ સંબંધ અનાદિ કાળનો છે નવીન તેનો સંબંધ થયો નથી. તેનો પરસ્પરમાં સંયોગસંબંધ જ છે એવું બે કહેવામાં આવે છે તે આગામી કાળમાં તેની ભિન્નતાને દેખીને જ કહેવામાં આવે છે. અનાદિથી તેઓ મળેલ છે છતાં તે બુદ્ધા બુદ્ધ થઈ બન્ય છે, તેથી અનુમાન થાય છે કે પહેલાંથી જ બુદ્ધ છે. પરસ્પર સંયોગસંબંધવિશિષ્ટ હોવા છતાં પણ એ બંને પદાર્થો સ્વસ્વરૂપાપેક્ષયા ભિન્ન જ રહેલ છે. બે બુદ્ધ નહિ હોત તો પછી મુક્તિ તેના પૃથક્ થવાથી જે જીવાત્માને પ્રાપ્ત થાય છે તે કેવી રીતે થઈ શકે, માટે જીવ અને કર્મનો સંબંધ અનાદિ છે સાદિ નહિ

પ્રશ્ન—કર્મ જ્યારે પુદ્ગલપિંડરૂપ છે, ત્યારે તે ઘટપટાદિકની માફક ઇન્દ્રિયગમ્ય કેમ નથી થતાં.

ઉત્તર—સ્થૂલ-સ્થૂલ ૧, સ્થૂલ ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ ૪, સૂક્ષ્મ ૫, અને સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ ૬, આ પ્રકારે સિદ્ધાંતકારોએ પુદ્ગલોને છ વિભાગોમાં વિભક્ત કરેલ છે. તેમાં કાગળ, લાકડી, કલમ, ખડીઓ આદિ સ્થૂલ-સ્થૂલ પુદ્ગલ છે, તેમાં કઠોર વસ્તુઓનો સમાવેશ છે, સ્થૂલ-સ્થૂલ વસ્તુઓ અંદરોઅંદર છિન્નભિન્ન થવાથી પોતાની મેળે ફરી મળી શકતી નથી ૧, સ્થૂલ-વહેવાવાળી ચીજો, જેમ

સ્થૂલ-વહને વાલી चीजें, जैसे पानी दूध घृत वगैरह २। स्थूल-सूक्ष्म-जो देखने में मोटी हों, परन्तु हाथों से पकड़ी न जा सकें, जैसे प्रकाश धूप और छाया आदि ३। सूक्ष्म-स्थूल-जो देखने में न आवें ऐसी सूक्ष्म हों, परन्तु भारी कार्य कर सकें, जैसे हवा शब्द इत्यादि ४। सूक्ष्म-जो पुद्गल-पिंड इतने सूक्ष्म हैं कि वे किसी भी इन्द्रिय से ग्रहण न हो सकें, जैसे कर्मणवर्गणाएँ ५। सूक्ष्म-सूक्ष्म-दो परमाणुओं का स्कंध या एक परमाणु ६। इन छह भेदों में कर्मपुद्गलपिंड सूक्ष्म है, अतः वह इन्द्रिय-गम्य नहीं हो सकता।

प्रश्न—कर्म की सत्ता तब कैसे जानी जाती है ?

उत्तर—उसके कार्य से।

प्रश्न—इन कर्मों का कार्य क्या है ?

उत्तर—आत्मा के ज्ञानादિક गुणों का घात करना, केवलज्ञान की ज्ञानावरण, अनन्त दर्शन की दर्शनावरण, अव्याबाध की वेदनीय, क्षાયिक सम्यक्त्व की मोहनीय, अवगाहनत्व का आयु, सूक्ष्मत्व गुण का नाम, अगुरुलघु गुण का गोत्र और अनन्तवीर्य का अन्तराय घात करता है। तथा एक जीव सुखी है और एक जीव दुःखी है, एक विद्वान् है एक

પાણી, દૂધ, ઘી વિગેરે ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-જે દેખવામાં મોટી હોય છે પરંતુ હાથેથી પકડી શકાતી નથી, જેમ પ્રકાશ, ધૂપ, છાયા આદિ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ-જે દેખવામાં ન આવે એવી સૂક્ષ્મ હોય પણ ભારી કામ કરી શકે, જેમ હવા, શબ્દ ઇત્યાદિ ૪, સૂક્ષ્મ-જે પુદ્ગલપિંડ એટલા સૂક્ષ્મ છે કે તે કોઈપણ ઇન્દ્રિયથી મેહણ થઈ ન શકે, જેમ કાર્મણવર્ગણાઓ ૫, સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ-જે પરમાણુઓના સ્કંધ અને એક પરમાણુ ૬, આ છ ભેદોમાં કર્મપુદ્ગલપિંડ સૂક્ષ્મ છે, માટે તે ઇન્દ્રિયગમ્ય થઈ શકતા નથી.

પ્રશ્ન—કર્મની સત્તા ત્યારે કેવી રીતે જાણી શકાય ?

ઉત્તર—તેના કાર્યથી.

પ્રશ્ન—તે કર્મેનું કાર્ય શું છે ?

ઉત્તર—આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોનો ઘાત કરવો, કેવળજ્ઞાનનો જ્ઞાનાવરણ, અનન્તદર્શનનો દર્શનાવરણ, અવ્યાબાધનો વેદનીય, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો મોહનીય, અવગાહ તત્ત્વનો આયુ, સૂક્ષ્મત્વ ગુણનો નામ, અગુરુલઘુગુણનો ગોત્ર અને અનન્ત વીર્યનો અન્તરાય ઘાત કરે છે. તેથી એક જીવ સુખી છે અને એક જીવ દુઃખી છે, એક વિદ્વાન છે એક મૂર્ખ છે, એક સખલ છે એક કમજોર છે, એક રાત

મૂર્ખ હૈ, એક સબલ હૈ એક કમજોર હૈ, એક રાતદિન સુખ ચૈન મૈં મસ્ત બના રહતા હૈ એક દર દર કા ભિચારી બના હુઆ હૈ, યહ સબ કિસ કા કાર્ય હૈ ? કહના પડેગા કર્મ કા । યહ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણવર્ગણાઓં કી હુઈ હૈ । કાર્મણવર્ગણા પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ, જો જીવ કે રાગાદિક ભાવોં કે નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિ પર્યાયરૂપ પરિણત હો જાતા હૈ, જિસ પ્રકાર મૃતિકા મૈં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય હુઆ કરતી હૈ । ઇસ પ્રકાર કી પર્યાય ડન કાર્મણવર્ગણાઓં મૈં અનાદિકાલીન હૈ- નવીન નહીં હૈ, ઓર યહ જીવાત્મા મી ડન કર્મપર્યાયોં સે અનાદિકાલ સે હી પરતન્ત્ર હો રહા હૈ । ઇસકી ઇસ પરતન્ત્રતારૂપ બંધદશા કા કોઈ નિશ્ચિત સમય નહીં હૈ, અતઃ અનાદિકાલ સે યહ કર્મોં કે જાલ મૈં ફંસા હૈ, એસા કહા જાતા હૈ । અનાદિતા ઓર અનંતતા એવં સાદિતા કા સંબંધ હૈ સિર્ફ અનંતતા કા હી નહીં ।

ચારિત્રારાધન કરને સે આત્મા કે કર્મોં કા નાશ હોતા હૈ, ઇસકા અભિ- પ્રાય યહી હૈ કિ-આત્મા કે કર્મપર્યાયોં કા નાશ હો જાતા હૈ, ક્યોં કિ કર્મદ્રવ્ય કા કમી મી નાશ નહીં હોતા । કર્મપર્યાય કા હી નાશ હોતા હૈ । જિસ કાર્મણ દ્રવ્ય મૈં પહિલે કષાયાદિક કે નિમિત્ત સે કર્મરૂપ પર્યાયોં

દિવસ સુખચૈનમાં મસ્ત બન્યો રહે છે, એક ઘરઘરનો ભિખારી બનેલ છે. આ બધા કેના કાર્યો છે ? કહેવું પડશે કે કર્મના. આ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણ વર્ગણાઓની થયેલી છે. કાર્મણવર્ગણા તે પુદ્ગલદ્રવ્ય છે જે જીવના રાગાદિક ભાવોના નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિપર્યાયરૂપ પરિણત થાય છે જે પ્રકારે મૃત્તિમાં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય થાય છે તે પ્રકારની પર્યાય તે કાર્મણ વર્ગણાઓમાં અનાદિ કાલીન છે, નવીન છે નહિ. અને આ જીવાત્મા પણ તે કર્મપર્યાયથી અનાદિ કાળથી જ પરતંત્ર થઈ રહેલ છે. તેની આ પરતંત્રતારૂપ બંધદશાનો કોઈ નિશ્ચિત સમય નથી, માટે અનાદિ કાળથી આ કર્મોની બળમાં ફસેલ છે એવું કહેવામાં આવે છે. અનાદિતા અને અનંતતા એવં સાદિતાનો સંબંધ છે ફક્ત અનંતતાનો જ નહિ

ચારિત્રારાધન કરવાથી આત્માના કર્મોનો નાશ થાય છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે કે આત્માના કર્મપર્યાયોનો નાશ થાય છે, કારણ કે કર્મદ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ થતો નથી, કર્મપર્યાયોનો જ નાશ થાય છે. કાર્મણ દ્રવ્યમાં પહેલાં કષાયાદિકના નિમિત્તથી કર્મરૂપ પર્યાયો બની હતી, તે નિમિત્ત દૂર થવાથી તે દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાયથી સ્થિત થાય છે, કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય છે. તેમાં

હોતી થી, ઉસ નિમિત્તકે હટ જાને પર વહી દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાય સે સ્થિત હો જાતા હૈ । કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય હૈ, ઉસ મેં જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નહીં હૈ । જબ વહ કર્મરૂપ બનતા હૈ, તબ ઉસમેં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર હોતે હૈં । જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકાર કી સ્થિતિ જબ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અથવા તપ સંયમ કે દ્વારા જબ ઉસકા વિનાશ કિયા જાતા હૈ તબ વહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતા હૈ, ઇસ કા ભાવ યહી હૈ કિ વહ કાર્મણ દ્રવ્ય ઉનરે પર્યાયોં સે રહિત હોકર અપને મૂલ સ્વભાવ સે વહાં સ્થિત રહતા હૈ, દ્રવ્ય કા કમી ભી વિનાશ નહીં હોતા । સુવર્ણ અથવા મણિ સે જિસ પ્રકાર ઉનકે મલ કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર આત્મા સે ભી કર્મપર્યાય કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ । એસા હોને પર જીવ કી આત્યન્તિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । સકલકર્મપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૂલ દ્રવ્ય કા વિનાશ નહીં હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઘટપર્યાયકે વિનાશ હોને પર મૃત્તિકા અઘટ પર્યાય સે સ્થિત રહતી હૈ, ઇસી પ્રકાર સકલપર્યાય કે વિનાશ હોને પર ભી કર્મદ્રવ્ય અકર્મપર્યાય સે આક્રાન્ત હો જાતા હૈ, દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા હૈ । જિસ પ્રકાર કાર્મણ દ્રવ્ય કી પર્યાય કર્મ હૈ ઉસી પ્રકાર અકર્મ ભી ઉસકી એક પર્યાય હૈ । વિવક્ષિત જીવ કી અપેક્ષા સે હી ઉસમેં કર્મ ઔર અકર્મ પર્યાય રહતી હૈ । સંસારી

જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નથી. જ્યારે તે કર્મરૂપ બને છે ત્યારે તેમાં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર થાય છે જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકારની સ્થિતિ જ્યારે પૂર્ણ થાય છે, અથવા તપ સંયમ દ્વારા જ્યારે તેનો વિનાશ કરવામાં આવે છે ત્યારે તે આત્માથી પૃથક્ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે કે તે કાર્મણ દ્રવ્ય તે તે પર્યાયથી રહિત થઈને પોતાના મૂલ સ્વભાવમાં ત્યાં સ્થિત રહે છે. દ્રવ્યનો કોઈ વખત પણ વિનાશ થતો નથી. સુવર્ણ અથવા મણિથી જે પ્રકારે તેના મલની નિવૃત્તિ થાય છે તે પ્રકારે આત્માથી પણ કર્મપર્યાયની નિવૃત્તિ થાય છે. એવું બનવાથી જીવની આત્યન્તિક શુદ્ધિ થાય છે. સકલ કર્મપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૂલ દ્રવ્યનો વિનાશ થતો નથી. જે પ્રકારે ઘટપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૃતિકા અઘટપર્યાયથી સ્થિત રહે છે તે પ્રકારે સકલ પર્યાયનો વિનાશ થવાથી કર્મ દ્રવ્ય અકર્મપર્યાયથી આક્રાન્ત થાય છે. દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા છે.

જે પ્રકારે કાર્મણ દ્રવ્યની પર્યાય કર્મ છે તે પ્રકારે અકર્મપર્યાય પણ તેની એક પર્યાય છે. વિવક્ષિત જીવની અપેક્ષાથી જ તેમાં કર્મ અને અકર્મપર્યાય

જીવોં મેં હસ વર્ગણા કા કર્મરૂપ પર્યાય સે પરિણમન હૈ, ઓર શુદ્ધ આત્મદ્રવ્ય કી અપેક્ષા અકર્મપર્યાયરૂપસે ।

જિસ પ્રકાર સુવર્ણ સે ઉસકે કિટકાદિરૂપ મૈલ કા સંબંધ પુટપાકાદિ દ્વારા દૂર હોતા હુઆ દેખા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર આત્મા મેં અનાદિકાલ સે સંબંધિત ઇન કર્મોંકા વિયોગ ભી તપ સંયમ રૂપ સાધન દ્વારા દૂર હો જાતા હૈ । હસ મૈલ કે પૃથક્ હોને પર શુદ્ધ સુવર્ણ કી તરહ યહ આત્મા ભી શુદ્ધ હોકર અપની અસલી સ્વરૂપ કો પાતા હૈ ।

સંયમી મુનિ કે લિયે ઉપદેશ દેતે હૈ—‘ઇણમેવ’ ઇત્યાદિ । કર્મોં કો આત્મા સે પૃથક્ કરનેવાલે ચારિત્ર કી જો આરાધના કરતે હૈ વે ધ્રુવચારી કહલાતે હૈ । અથવા ધ્રુવ નામ મોક્ષ કા હૈ । કાર્ય ઓર કારણ મેં અભેદ સંબંધ હોને સે મોક્ષ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, તપ, જ્ઞાન ઓર ક્રિયા આદિ ભી ધ્રુવ હૈ । ઇનકો ભી પાલન કરને કે સ્વભાવવાલે ધ્રુવચારી હૈ । જો મુનિ ધ્રુવચારી હૈ વે અસંયમ જીવન કી, અથવા પૂર્વ મેં ભોગે હુએ વિષયાદિક ભોગોં કી કમી ભી ઇચ્છા નહીં કરતે હૈ । જ-પરિજ્ઞા સે સંસારકા સ્વરૂપ અથવા હસ વાત કો જાન કર કિ—‘અસંયમ જીવન વ્યતીત કરને સે જીવકો હસ સંસાર મેં વારંવાર જન્મ ઓર મરણ કે ચક્કર મેં

રહે છે. સંસારી જીવોમાં આ વર્ગણના કર્મરૂપ પર્યાયથી પરિણમન છે, અને શુદ્ધ આત્મદ્રવ્યની અપેક્ષા અકર્મપર્યાય રૂપથી.

જેવી રીતે સુવર્ણથી તેના કિટકાદિરૂપ મેલનો સંબંધ પુટપાકાદિદ્વારા દૂર થતો દેખવામાં આવે છે તેવી રીતે આત્મામાં અનાદિ કાળથી સંબંધિત આ કર્મોનો વિયોગ પણ તપસંયમરૂપ સાધનદ્વારા દૂર થાય છે. આ મેલના પૃથક્ થવાથી શુદ્ધ સુવર્ણની માફક આ આત્મા પણ શુદ્ધ બની પોતાના અસલ સ્વરૂપને મેળવે છે.

અંયમી મુનિ માટે ઉપદેશ આપે છે—‘ઇણમેવ’ ઇત્યાદિ. કર્મોને આત્માથી પૃથક્ભૂત કરવાવાળા ચારિત્રની જે આરાધના કરે છે તે ધ્રુવચારી કહેવાય છે. અને ધ્રુવ નામ મોક્ષનું છે. કાર્ય અને કારણમાં અભેદ સંબંધ હોવાથી મોક્ષના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન તપ જ્ઞાન અને ક્રિયા આદિ પણ ધ્રુવ છે. તેનું પણ પાલન કરવાવાળા સ્વભાવી ધ્રુવચારી છે જે મુનિ ધ્રુવચારી છે તે અસંયમ જીવનની અથવા પૂર્વમાં ભોગવેલા વિષયાદિક ભોગોની કદી પણ ઇચ્છા કરતા નથી. જ પરિજ્ઞાથી સંસારનું સ્વરૂપ અથવા તે વાતને જાણીને પણ અસંયમ જીવન વ્યતીત કરવાથી જીવને આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણના ચક્કરમાં પડવું પડે છે.

યદ્વા—‘સંક્રમણે’ ઇતિચ્છાયા, તત્ર સંક્રમ્યતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેનેતિ સંક્રમણં=જ્ઞાનાદિત્રિકં, તત્રૈવ ચરેત્=તત્પરો ભવેત્, આત્મહિતાર્થિભિઃ સંયમે દૃઢ-પઢના પઢતા હૈ, ઇસ લિયે તપ, સંયમ ઓર નિયમોં કા પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર હૈ, ઇનકા પાલન કમીં મી વિફલ નહીં હો સકતા’ ઇસ પ્રકાર જિસકા મન ઇનકે પાલન કરને મેં અડોલ ઓર અંકપ હૈ, મન કી લગન સે જો તપ સંયમ આદિ કે પાલન કરને મેં દત્તાવધાન હૈ, તથા જિસ કે હૃદયમેં જિનેન્દ્રવચનોં કે પ્રતિ દૃઢ આસ્થા હૈ, જો યે અચ્છી તરહ સે સમજતા હૈ કિ—‘મગવાન્ વીતરાગ પ્રભુ કા બનાયા હુઆ યહ માર્ગ હૈ કિસી છદ્મસ્થ કા નહીં, સંયમ કી આરાધના સે કર્મોં કી નિર્જરા હોતી હૈ, અનઃ મુક્તે ઇસકા પરિપાલન સમ્યક્ રીતિ સે હી કરના ચાહિયે અન્યથા અનન્ત સંસાર કા પથિક બનના પડેગા, યદિ મુક્તે અપને ગૃહીત માર્ગ સે ચ્યુત કરને કે લિયે પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ મી આડે આવેં તો મુક્તે ઇનકી મી કુછ પર્વાહ નહીં હૈ, મેં અંકપ બન ઇનકા મી સામના કરને કે લિયે તૈયાર હૂં’ ઇસ પ્રકાર અશંકિતમન ઓર દૃઢપ્રતિજ્ઞ હોકર અપને ગૃહીત માર્ગકો સંયમી આરાધના કરે ।

સૂત્ર મેં “સંક્રમણે” ઇસ શબ્દ કી છાયા ટીકાકાર ને ઇક તો “અશંકમનાઃ” યહ કી હૈ જિસકા અર્થ ‘નિઃશંકિતમન હો કર તપ સંયમ કા પાલન કરે’ યહ હોતા હૈ । ડૂસરી “સંક્રમણે” કી છાયા

માટે તપ-સંયમ અને નિયમેનુ પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર છે. તેનું પાલન કોઈ વખત પણ વિફળ થતું નથી. આ પ્રકારથી જેનું મન તેના પાળવામા મક્કમ અને અકંપ છે, મનની લગનથી જે તપ સંયમ આદિના પાલન કરવામા દત્તાવધાન છે, તથા જેના હૃદયમાં જિનેન્દ્રવચનો પ્રતિ દૃઢ આસ્થા છે, જે સારી રીતે જાણે છે કે ભગવાન વીતરાગ પ્રભુનો ખનાવેલો આ માર્ગ છે, કોઈ છદ્મસ્થનો નથી સંયમની આરાધનાથી કર્મોની નિર્જરા થાય છે, માટે મારે તેનું પરિપાલન સમ્યક્ રીતિથી જ કરવું જોઈએ, અન્યથા અનંત સંસારનો પથિક ખનવો પડશે, જે મારે પોતાના ગૃહીત માર્ગથી ચ્યુત કરવા માટે પરીષદ અને ઉપસર્ગ પણ આડા આવે તો મને તેની પણ કોઈ પરવાહ નથી હું અકંપ જની તેનો પણ સામનો કરવા તૈયાર છું, તેવા પ્રકારે અશંકિતમન અને દૃઢપ્રતિજ્ઞ જનીને પોતાના ગૃહીત માર્ગની સંયમી આરાધના કરે.

સૂત્રમા “સંક્રમણે” આ શબ્દની ટીકાકારે એક તો “અશંકમના” છાયા કરી છે જેનો અર્થ ‘નિઃશંકિતમન થઈ, તપ સંયમનુ પાલન કરે’ તેમ થાય છે.

ર્થાવ્યમ્ । વાર્ધક્યે પરત્પરારિ વા ધર્મ કરિષ્યામીતિ ચેતસિ ન ચિન્તયેદિત્યર્થઃ, યતઃ ‘કાલસ્ય’ કાલઃ=મૃત્યુસ્તસ્ય, અનાગમઃ=અપ્રાપ્તિર્નાસ્તિ=ન વર્તતે, યતઃ કોઽપિ ક્ષણો ન તાદૃગ્ યસ્મિન્મૃત્યોરાગમનસમ્ભવો નાસ્તિ, તસ્માદહિંસાદિષુ સાવધાનેન ક્ષણ-લવમુહૂર્તાદિસમયેષ્વપ્રતિવન્ધવિહારિણાઽઽત્મૌપમ્યેન ભવિતવ્યમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૪ ॥

“સંક્રમણે” એસી મી હતી છે । જિસકે દ્વારા મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હતી છે ઉસકા નામ સંક્રમણ છે । વહ સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે । ઇનકે દ્વારા હી જીવ મુક્તિ કા લાભ કરતા હૈ, અતઃ સાવધાન મન હો કાર ઇનકે પરિપાલન કરને મેં સંયમી મુનિ કો તત્પર રહના ચાહિયે, યહ સૂત્રકાર કા આદેશ વચન છે । ‘પર પરાં જવ સમય આવેગા તવ ધર્માચરણ કરુંગા, અમી સમય નહીં છે’ ઇસ પ્રકાર કા ધર્માચરણ કે લિયે વહાના નહીં કરના ચાહિયે । એસા વહાના આત્મહિતાર્થી કે લિયે ઉચિત નહીં છે । પહેલે કહા ગયા છે કિ-“નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમઃ” એસા કોઈ મી સમય નહીં છે કિ જિસમેં મૃત્યુકે આને કી સંભાવના ન હો, અતઃ યહ સમજ્ઞ કર કિ-“કાલ પીછે લગા હુવા છે, કવ યહાં સે જાના પડેગા” ધર્માચરણ કે લિયે પ્રમાદી ન બને । જો મી જિતના મી સમય મિલે-ધર્મ કી આરાધના કરતા રહે । સંયમી મુનિ અપને ગૃહીત અહિંસાદિવ્રતોં મેં સાવધાન હોકર એક ક્ષણ એક લવ એક મુહૂર્ત મી પ્રતિવન્ધવિહારી ન બને, અર્થાત્ અપ્રતિવન્ધવિહારી હોકર વિચરે ॥ સૂ. ૪ ॥

જેના દ્વારા જીવને મુક્તિની પ્રાપ્તિ થાય છે. તેનું નામ સંક્રમણ છે તે મન્ય-દર્શનાદિક રત્નત્રય છે તેના દ્વારા જ જીવ મુક્તિનો લાભ કરે છે માટે સાવધાન મન રાખીને તેનું પરિપાલન કરવામાં સંયમીમુનીએ તત્પર રહેવું જોઈએ, એ સૂત્રકારનું આદેશ વચન છે ‘આવતી કે તેની આગલની શાલ ન્યારે સમય આવશે ત્યારે ધર્મ કરીશ, હમણા સમય નથી’ આવા પ્રકારનું ધર્માચરણ માટે બહાનુ કરવું જોઈએ નહિ. એવું બહાનુ આત્મહિતાર્થી માટે ઉચિત નથી પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે કે-“નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમ” એવો કોઈ પણ સમય નથી જેમાં મૃત્યુને આવવાની સંભાવના ન હોય, માટે એવું સમજીને કે “કાળ પછવાડે જ લાગેલો છે, ક્યારે આડીંથી જીવુ પડશે” ધર્માચરણ માટે પ્રમાદી ન બને જેટલો પણ વખત મળે તેટલો વખત ધર્મની આરાધના કરતો જ રહે

સંયમી મુનિ પોતાના ગૃહીત અહિંસાદિ વ્રતોમાં સાવધાન બનીને એક ક્ષણ એક લવ એક મુહૂર્ત પણ પ્રતિવન્ધવિહારી ન બને, અર્થાત્ અપ્રતિવન્ધવિહારી બનીને વિચરે ॥ સૂ. ૪ ॥

ઉત્તં સંયમિજીવનસ્વરૂપમ્, અથાસંયમિજીવનસ્વરૂપમાહ—‘સઁવે પાણા’ ઇત્યાદિ ।
 મૂલમ્—સઁવે પાણા પિયાડયા સુહસાયા દુઃખપડિકૂલા અપ્પિ-
 યવહા પિયજીવણા જીવિતકામા સઁવેસિં જીવિયં પિયં, તં પરિ-
 ગિજ્ઞા દુપયં ચડપ્પયં અભિજુંજિયાણં સંસિંચિયાણં તિવિહેણ
 જાડવિ સે તત્થ મત્તા ભવઈ અપ્પા વા બહુયા વા સે તત્થ ગઢિઈ
 ચિટ્ઠઈ ભોયણાઈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુષઃ સુઃખાસ્વાદાઃ દુઃખપ્રતિકૂલા અપ્રિયવધાઃ
 પ્રિયજીવના જીવિતુકામાઃ સર્વેષાં જીવિતં પ્રિયમ્, તત્પરિગૃહ્ય દ્વિપદં ચતુષ્પદમભિ-
 યુજ્ય સ્વલુ સંસિચ્ય સ્વલુ ત્રિવિધેન યાડપિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવત્યલ્પા વા વહુકા
 વા સ તત્ર ગૃહ્યસ્તિષ્ઠતિ ભોજનાય ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—‘સર્વે’ ઇત્યાદિ, સર્વે=નિશ્ચિલાઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સંસારિણઃ, પ્રિયા-
 યુષઃ=પ્રિયજીવિતા ભવન્તિ, યો જીવો યત્રોચ્છનીચયોનો જન્મ ગૃહ્ણતિ તત્રૈવ રમતે
 જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિન્યાયેન; ઉક્તञ્ચ—

“ અમેજ્ઞમજ્ઞે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલણ ।

સમાણા જીવિયાકંઠા, તેસિં મચ્ચુભયં સમં ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—“ અમેધ્યમધ્યે કીડસ્ય, સુરેન્દ્રસ્ય સુરાલયે ।

સમાના જીવિતાકાંક્ષા, તયોર્મૃત્યુભયં સમમ્ ॥ ”

સંયમજીવન કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા, અવ અસંયમજીવન કા સ્વરૂપ
 પ્રકટ કરતે હૈં—‘સઁવે પાણા પિયાડયા’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત સંસારી જીવોં કો જીવન પ્રિય હૈ, કોઈ મી જીવ ંસા નહીં
 હૈ, જિસે અપને જીવન સે મમતા ન હો, વિષ્ટા કા કીડા મી અધિક સે
 અધિક જીને કી ઇચ્છા રઘતા હૈ । જો જીવ જિસ પર્યાય સે વર્તમાન હૈ
 ડસે વહી પર્યાય પ્રિય હૈ । વિષ્ટા કે કીડે કી મમતા કો દેલિયે—વહ
 યદિ ડસ સ્થાન સે અલગ કિયા જાતા હૈ તો વહ વહાં સે અલગ હોકર

સંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું, હવે અસંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે
 છે—‘સઁવે પાણા પિયાડયા’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત સંસારી જીવને જીવન પ્રિય છે, કોઈ પણ જીવ એવો નથી જેને
 પોતાના જીવનથી મમતા ન હોય વિષ્ટાનો કીડા પણ વધારેમાં વધારે જીવવાની
 ઇચ્છા રાખે છે. જે જીવ જે પર્યાયમાં વર્તમાન છે તેને તે જ પર્યાય પ્રિય છે.
 વિષ્ટાના કીડાની મમતાને જીવે—તે કદાચ તે સ્થાનથી અલગ કરવામાં આવે તો

भी वहीं पर फिर से प्रविष्ट हो जाता है । वह अपने स्थान को जरा भी नहीं छोड़ना चाहता । इसका कारण सिर्फ एक यही है कि-उसे उसी अवस्था में रह कर अपना जीवन व्यतीत करना इष्ट है । विशाल वैभव के भोक्ता को जिस प्रकार जीने की इच्छा रहा करती है, तथा जिस प्रकार उसे अपना जीवन सबसे अधिक प्रिय है उसी प्रकार समस्त संसारी जीवों की यही हालत है-चाहे वे संजी हों चाहे असंजी । कोई भी प्राणी ऐसा नहीं मिलेगा-जिसे अपने जीवन में अधिकसे अधिक ममता न हो । एक भिखारी को जितना अपने जीवन से मोह है उतना ही मोह चक्रवर्ती को भी अपने जीवन से है । कोई अपना अनिष्ट नहीं चाहता । इस बात की पुष्टि करते हुए टीकाकार कहते हैं-“यो जीवो यत्रोच्चनीचयोर्नौ जन्म गृह्णाति तत्रैव रमते-जीवितुमिच्छति च विष कृमिन्यायेन ” जो जीव जिस ऊँच नीच योनिमें जन्म धारण करता है उसे वही योनि प्रिय बन जाती है-वहीं पर वह आनंद मानता है । जैसे विषके कीड़े को विषमें ही मजा आता है बात भी सत्य है कहा भी है—

“ अमेज्झमज्झे कीडस्स, सुरिंदस्स सुरालए ।

समाणा जीवियाकंखा, तेसिं मच्चुभयं समं ” ॥ १ ॥

પણ તે ત્યાંથી અલગ થઈને પણ ત્યાં જ ફરીથી પ્રવિષ્ટ થાય છે, તે પોતાના સ્થાનને જરા પણ છોડવા ચાહતો નથી તેનું કારણ ફક્ત એક એ જ છે કે તેની તે અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરવું ઈષ્ટ છે વિશાળ વૈભવના ભોક્તાને જે પ્રકારે જીવવાની ઈચ્છા રહ્યા કરે છે તથા જે પ્રકારે તેને પોતાનું જીવન બધાથી અધિક પ્રિય છે, તે પ્રકારે સમસ્ત સંસારી જીવોની તે જ હાલત છે, ભલે તે સંજી હોય કે અસંજી. કોઈ પણ પ્રાણી એવો નહિ મળે જેને પોતાના જીવનમાં અધિકથી અધિક મમતા ન હોય. એક ભિખારીને જેટલો પોતાનો જીવ વહાલો છે તેટલો જીવનનો મોહ ચક્રવર્તીને પણ હોય છે કોઈ પોતાનું અનિષ્ટ ચાહતું નથી. આ વાતની પુષ્ટિ કરતાં ટીકાકાર કહે છે કે—

“યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોર્નો જન્મ ગૃહ્ણાતિ તત્રૈવ રમતે જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિ-ન્યાયેન ” જે જીવ જે ઉચ્ચ નીચ યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે છે તેની તે જ યોનિ પ્રિય બની જાય છે, ત્યાં જ તે આનંદ માને છે, જેમ વિષના કીડાને વિષમાં જ મજા આવે છે, વાત પણ સત્ય છે. કહ્યું પણ છે.

“ અમેજ્ઝમજ્ઝે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલપ ।

સમાણા જીવિયાકંખા, તેસિં મચ્છુભયં સમં ” ॥૧॥

ભુવનત્રયાધિપત્યપ્રાપ્ત્યપેક્ષયાપિ સ્વાયુષ્કસ્યેષ્ટતરત્વાત્, અપિ ચ સુખા-
સ્વાદાઃ=સુખામિલાષિણઃ, અમૃતપાનાદપિ સ્વસુખાનુભવસ્ય શ્રેષ્ઠત્વાત્, દુઃસ્વપ્રતિ-
કૂલાઃ=દુઃસ્વાનમિલાષુકાઃ, વિષભક્ષણાદપિ દુઃસ્વં પ્રત્યધિકદ્વેષવત્ત્વાત્, કિંચ્ચ-અપ્રિ-
યવધાઃ-અપ્રિયઃ=અનિષ્ટઃ-વધો=મરણં યેષાં તે તથા । પ્રિયજીવનાઃ=પ્રિયં જીવનં
યેષાં તે તથા, અનિશં તદર્થં પ્રવૃત્તત્વાત્, અત એવ જીવિતુકામાઃ જીવિતું કામઃ=
સ્પૃહા યેષાં તે જીવિતુકામાઃ, વર્ષશતાયુષ્કસ્યાન્તિમાવસ્થાયામપિ જીવિતેચ્છયા
નાનાવિધમણિમન્વયન્ત્રૌષધાદ્યર્થં પ્રવૃત્તિર્દર્શનાત્ ।

વિષ્ટા કે કીડેકી ઔર સ્વર્ગ કે અપાર વૈભવ કે ભોક્તા ઇન્દ્રકી ભી
જીને કી ઇચ્છા ઔર મરણકા ભય સમાન હૈ, કોઈ નહીં चाहता कि हमें
करालकाल के गालका कवल (ग्रास) बनना पड़े । क्यों कि तीन लोक
के अधिपति बनने की अपेक्षा अपना जीवन अधिक प्रिय है ।

લોક મેં અમૃત કા પાન કરના સબસે અધિક સુખકારી સમજા
જાતા હૈ, પરંતુ લોક ઇસસે ભી અધિક સુખ અપને સુખી હોને મેં માનતે
હૈં । અપને કો સુખી બનાને કે લિયે લોગ હર એક પ્રકાર કે સાધનોં કો
જુટાને મેં કસર નહીં કરતે । કિસી સે ભી યદિ યહ પ્રશ્ન કિયા જાય
કિ-તુમ અપને જીવન મેં ક્યા चाहते हो ? તો શીઘ્ર હી વહાં સે યહી ઉત્તર
મિલેગા કિ-હમ અપને જીવન મેં શાંતિ ઔર સુખ કો चाहते હૈં । “દુઃસ્વ-
પ્રતિકૂલાઃ” જગત મેં કોઈ ભી પ્રાણી દુઃસ્વકો નહીં चाहता है, प्रत्येक
प्राणी दुःस्वको प्रतिकूल मानता है, विष भक्षण कर लेगा किन्तु दुःस्व

વિષ્ટાના કીડાની અને સ્વર્ગના અપાર વૈભવના ભોક્તા ઇન્દ્રની બન્નેની જીવવાની
ઇચ્છા અને મરણનું ભય બન્ને સમાન છે, કોઈ ચાહતું નથી કે હું કરાલકાલના
ગાલનો ગ્રાસ બનું, કારણ કે ત્રણ લોકના અધિપતિ બનવાની અપેક્ષા પોતાનું
જીવન અધિક પ્રિય છે.

લોકમાં અમૃતનું પાન કરવું તેને બધાથી અધિક સુખકારી માનવામાં
આવે છે, પરંતુ લોક તેનાથી પણ અધિક સુખ પોતાને સુખી હોવામાં માને છે.
પોતાને સુખી બનાવવા માટે લોક દરેક પ્રકારનાં સાધનોને અજમાવવામાં કસર
કરતા નથી. કોઈથી એ પ્રશ્ન કરવામાં આવે કે-તમે તમારા જીવનમાં શું ચાહો
છો, તો ત્યાંથી તરત જ એવો ઉત્તર મળશે કે-અમે અમારા જીવનમાં શાંતિ
અને સુખને ચાહીએ છીએ. “દુસ્વપ્રતિકૂલા” પ્રત્યેક પ્રાણી હ.બને ચાહતું
નથી, પ્રત્યેક પ્રાણી હુ બને પ્રતિકૂળ માને છે, એરનું પાન કરી લેશે પણ હ.બ

ભોગના નહીં ચાહતા। “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવનાઃ” સંસાર મેં જીવોં કો મરણ અપ્રિય હોતા હૈં ઓર જીવન પ્રિય હોતા હૈં। જીવોં કો અપના જીવન સર્વ પ્રકાર સે પ્રિય હૈં। ચાહે જિસ કિસીં મીં ઉપાય સે યે અપને જીવનકે સંરક્ષણ કરનેમેં હીં ભાવનાશીલ રહતે હૈં। ઉસ સમય ન્યાય યા અન્યાય, ધર્મ યા અધર્મ આદિ કીં ઇન્હેં થોડીં સીં મીં ચિન્તા નહીં હોતીં। ઇસકાં મીં કારણ યહ હૈં કિં યે “જીવિતુકામાઃ” હૈં। શત વર્ષ કીં આયુવાલે કો મીં અન્તિમ ક્ષણતક જીવન કીં ઇચ્છા બનીં હીં રહતીં હૈં। ચાહે ધનીં હો યા નિર્ધન હો, રાજા હો યા રંક હો, વિદ્વાન હો યા સૂર્વ હો, દીર્ઘાયુષ્ક હો યા અલ્પાયુષ્ક હો કોઈં મીં ક્યોં ન હો કોઈં યહ નહીં ચાહતા કિં મેરીં મૃત્યુ હો જાય, અર્થાત્ મૈં મરજાઝૂં। સવ હીં અધિક સે અધિક જીને કે અભિલાષી રહા કરતે હૈં। થોડાં સા મીં શારીરિક કષ્ટ આને પર “કહીં મૈં મર ન જાઝૂં” ઇસ ક્યાલ સે અનેક પ્રકાર કે મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર ઓર ઔષધિ વગેરહ કે ઉપચાર મેં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરને મેં લગ જાતે હૈં।

યહ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમીં જીવોં કીં અપેક્ષા સે હીં કિયા ગયા સમજનાં ચાહિયે, ક્યોં કિં ઇન્હેં હીં અપને પ્રાણ વગેરહ પ્રિય હોતે હૈં। વેહીં અપનીં જીવનયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે યદા તદા પ્રવૃત્તિ કિયા

ભોગવલુ ચાહતા નથીં. “અપ્રિયવધા પ્રિયજીવનાઃ” સંસારમાંં હવેને મરણ અપ્રિય લાગે છે હવેને પોતાનું હવન બધા પ્રકારે પ્રિય છે, ભલે કોઈં પણ કોઈં ઉપાયથીં પોતાના હવનનું સંરક્ષણ કરવામાંં જ ભાવનાશીલ રહે છે. તે સમય ન્યાય અન્યાય ધર્મ અધર્મ આદિનીં તેને જરા પણ ચિંતા થતીં નથીં, તેનું પણ કારણ એ છે કે તે “જીવિતુકામા” છે, સો વર્ષનીં આયુષ્યવાળાને પણ અન્તિમ ક્ષણ સુધીં હવનનીં ઇચ્છા બનીં રહે છે, ભલે તવંગર હોય અગર નિર્ધન હોય, રાજા હોય કે રંક હોય, વિદ્વાન હોય, કે મૂર્ખ હોય, દીર્ઘાયુષ્ક હોય કે અલ્પાયુષ્ક હોય કોઈં પણ કેમ ન હોય પણ કોઈં એ નથીં ચાહતા કે માં મોત થાય, અર્થાત્ હું મરીં જાઉં, બધા જ અધિકથીં અધિક હવવાના અભિલાષી રહ્યા કરે છે. થોડુક શારીરિક કષ્ટ આવવાથીં “કદાચ હું મરીં ન જાઉં” એવાં ખ્યાલથીં અનેક પ્રકારના મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર અને ઔષધિ વિગેરેના ઉપચારમાંં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરવામાંં લાગીં જાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમીં હવેનીં અપેક્ષાથીં જ કરેલ સમજવાનું છે, કારણ કે તેને જ પોતાનો પ્રાણ વિગેરે પ્રિય હોય છે, તે જ પોતાના હવન-યાત્રાના નિર્વાહ માટે યદા તદા પ્રવૃત્તિ કરે છે, હુઃખોથીં ગભરાય છે, અને સદા

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં ગુરુકર્મણાં જીવિતમ્=અસંયમજીવિતં પ્રિયમ્=શુદ્ધં ભવતિ, ન તુ લઘુકર્મણામ્, તતઃ કિમિત્યાહ-‘ત’-દિત્યાદિ, તત્તસ્માત્કારણાદ્ દ્વિપદં=દાસી-દાસકર્મકરાદિ, ચતુષ્પદં=હસ્તિહયગોમહિષ્યાદિ પરિગૃહ્ય=સ્વાયત્તીકૃત્ય તતસ્તદેવ દ્વિપદં ચતુષ્પદમ્ ઉપલક્ષણાદન્યદપિ હિરણ્ય-સુવર્ણ-વન-ધાન્યાદિકં ત્રિવિધેન કરણભૂતેન યોગત્રિક-કરણત્રિકેન, અથવાડડત્મના પરેણોભયેન, ચેતનાચેતનમિ-શ્રરૂપેણ વા અભિયુજ્ય, અભિ=આમિમુખ્યેન યુત્તવા=વન્ધરોદ્યાદિના તત્તત્કલ્પિત-સંજ્ઞયા કશાદિપ્રહારેણ વાહયિત્વા=તેષુ તેષુ કર્મસુ નિયુજ્ય શિક્ષયિત્વેત્યર્થઃ । અપિ ચ-તદેવ સંસિચ્ય ક્રયવિક્રયાદિવ્યવહારેણાભિવદ્ધર્થ, અત્રાપિ ‘ત્રિવિધેને’-ત્યસ્ય

કરતે હૈં । દુઃસ્વોં સે વે ઘબડાતે હૈં । ઓર સદા સાંસારિક સુસ્વોંકે અભિ-લાષી રહતે હૈં । સંયમી જીવોં મેં યે સવ પ્રવૃત્તિયાં ઘટિત નહીં હોતીં । યદ્યપિ ઉન્હેં મી અપને પ્રાણ પ્રિય હોતે હૈં પરન્તુ જવ સંયમ મેં કોઈ ઘોર પરીષહ ઉપસર્ગ આકર ઉપસ્થિત હો જાતે હૈં તવ વે અપને સંયમ કી રક્ષા કે લિયે અપને પ્રાણોં કી મી પરવાહ નહીં કરતે હૈં । અસંયમી જીવોં કો હી અપના અસંયમ જીવન પ્રિય હોતા હૈ, કારણ કિ યે ગુરુકર્મીં હૈં । લઘુકર્મીં સંયમી જીવોં કો એસા જીવન પ્રિય નહીં હોતા । ઇનકી વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કી ઓર હી શુકતી રહતી હૈ । અસંયમજીવી રાત દિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નૌકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયમૈસ, હિરણ્યસુવર્ણ, આદિ કે વઢાને કી ઓર હી અધિકાધિક લાલાયિત હોતે રહતે હૈં । વે ચેતન અચેતન તથા મિશ્ર રૂપ પરિગ્રહ કી જિતની મી માત્રા પ્રાપ્ત કરતે હૈં-ચાહે વહ થોડી હો યા અધિક હો ડસી

સાંસારિક સુખના અભિલાષી રહે છે. સંયમી જીવોમાં આ બધી પ્રવૃત્તિઓ ઘટિત થતી નથી. જો કે તેને પણ પોતાનો પ્રાણ પ્રિય હોય છે પરંતુ બીજા સંયમમાં કેઈ ઘોર પરિષદ ઉપસર્ગ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે ત્યારે તે પોતાના સંયમની રક્ષા માટે પોતાના પ્રાણોની પણ પરવાહ કરતા નથી.

અસંયમી જીવોને પોતાનું અસંયમ જીવન પ્રિય હોય છે, કારણ કે તે શુદ્ધકર્મી છે. લઘુકર્મી સંયમી જીવોને એવું જીવન પ્રિય નથી હોતું, તેની વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગની તરફ જ લાગેલ રહે છે. અસંયમજીવી રાતદિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નૌકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયમૈસ, હિરણ્યસુવર્ણ આદિને વધારવામાં અધિકમાં અધિક મગ્ન રહે છે તે ચેતન, અચેતન તથા મિશ્રરૂપ પરિગ્રહની બેટલી પણ માત્રા પ્રાપ્ત કરે છે-આહે લલે થોડી હોય કે

સમ્બન્ધઃ, તસ્ય=અર્થારમ્ભિણઃ, તત્ર દાસીદાસહસ્તિહયાદિપરિગ્રહે, યા=યાવત્પરિ-
માણા માત્રા=પરિગ્રહાંશઃ, સા અલ્પા વા=સ્તોકા અચિરકાલભોગક્ષમા વા, વહુકાવા=
દીર્ઘકાલભોગક્ષમા વા, યદ્વા પ્રમાણતો મૂલ્યતો વાડલ્પા વહુકા, અલ્પત્વ-વહુત્વે
ચાપેક્ષિકે, અતઃ સર્વસ્યાડપ્યલ્પત્વ-વહુત્વયોઃ સમ્ભવાત્, અલ્પા વહુકા વાડર્થાદિમાત્રા
યસ્ય, તત્ર=અર્થાદો અસંયમજીવી ગૃહઃ=મૂર્ચ્છિતઃ, કૃતાકૃતલઘ્યાલઘ્યાદ્યાશાપાશૈ-
ર્ગ્રયિતઃ સન્ ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય તદ્દનં સ્વાયત્તીકૃત્ય તિષ્ઠતિ=તત્રૈવાસક્તો
ભવતિ, ન તતો મનસાડપ્યુપરમત इत्यर्थઃ, આરમ્ભપરિગ્રહાસક્તઃ કેવલિપ્શપ્તં
ધર્મં ન જ્ઞાણોતિ, ધર્મશ્રવણમન્તરેણ ન સમ્યગ્દર્શનમ્, તદભાવે સમ્યગ્જ્ઞાનાભાવઃ,
તદભાવે મિથ્યાત્વાભિવૃદ્ધિસ્તથા ચ સંસારપરિભ્રમણં પ્રાણિનાં ભવતીતિ પરિગ્રહ-
ગૃહો નાત્મહિતૈષી ભવતીતિ વર્તુલકાર્થઃ ॥ મુ. ૫ ॥

મેં અપની આવશ્યકતા કી પૂર્તિ ન સમજા કર ઉસકે વઢાને મેં હી મગન બને
રહતે હૈં । પરિગ્રહ મેં અલ્પતા ઓર વહુતા યહાં પર દો તરહ સે પ્રકટ કી
ગઈ હૈ-એક કાલ કી અપેક્ષાસે ઓર દૂસરી મૂલ્ય યા પ્રમાણ કી અપેક્ષા
સે । થોડેસમય તક, અથવા અધિક સમય તક પરિગ્રહ કા જીવોં કે ભોગ
ઓર ઉપભોગ કરને કે કામ મેં જો આના વહ કાલ કી અપેક્ષા સે પરિગ્રહ
મેં અલ્પતા યા વહુતા હૈ, યા જિનકા મૂલ્ય કમ ડ્યાદા હો અથવા પ્રમાણ
સે જિનમેં કમતી વઢતીપના હો યહ મૂલ્ય યા પ્રમાણ કી અપેક્ષા સે ઉન
મેં અલ્પતા તથા વહુતા હૈ, ક્યોં કિ અલ્પત્વ, વહુત્વ, એ દોનોં સાપેક્ષ હૈં ।

ચાર નૌકર ચાકરોં એવં ચાર ચતુષ્પદાદિ કોં કી અપેક્ષા દો નૌકર
ચાકરોં એવં દો ચતુષ્પદાદિકોં મેં પ્રમાણ કી અપેક્ષા સે, ઉનકે અધિક સમય
તક રહને કી અપેક્ષા સે થોડે સમય તક રહનેવાલોં મેં કાલ કી અપેક્ષા સે,

વધારે હોય તેમા તે પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ ન મમળને તેના વધારવામા જ
મગ્ન બની રહે છે. પરિગ્રહમા અલ્પતા અને બહુતા આ ઠેકાણે બે પ્રકારે પ્રગટ કરેલ
છે. એક કાળની અપેક્ષાથી અને બીજી મૂલ્ય અને પ્રમાણની અપેક્ષાથી. થોડા
સમય સુધી અથવા અધિક સમય સુધી પરિગ્રહતુ છુવોને ભોગ અને ઉપભોગ
કરવાના કામમા જે આવડુ તે કાળની અપેક્ષાથી પરિગ્રહમાં અલ્પતા અને
બહુતા છે, અને જેનું મૂલ્ય ઓછુ અધિક હોય, અથવા પ્રમાણથી જેમાં
વધારા પણ હોય એ મૂલ્ય અગર પ્રમાણની અપેક્ષાથી તેમા અલ્પતા અને બહુતા
છે, કારણ કે અલ્પત્વ, બહુત્વ, એ બેને સાપેક્ષ છે

ચાર નૌકર ચાકરોં અને ચાર ચતુષ્પદાદિકોંની અપેક્ષા બે નૌકર ચાકરોં અને
બે ચતુષ્પદાદિકોંમા પ્રમાણની અપેક્ષાથી, તેના અધિક સમય સુધી રહેવાની અપેક્ષાથી

તથા અનેક અધિક મૂલ્યની અપેક્ષા કરનાર મૂલ્યવાળાંમાં મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પતા છે. એનાથી વિપરીત બહુતા સમજાવેલું છે.

અસંયમી જીવ જોઈએ પરિગ્રહની માત્રા તેના પાસે અલ્પ હોય તો અધિક હોય તો તેને તેનાથી સંતોષ થવું નથી. તે પોતાના પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામાં જ રહે છે. ચતુષ્પદાદિ જે સમય ઠીક ૨ રાત્રી પર નથી ચલે તો કોઈના નુકસાન કરે છે, ત્યારે તેને મારવાનું જોઈએ, પીવાનું જોઈએ ૨ સમય પર નથી દેતા, અનેક પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરે છે, અને રસ્સી આદિથી બાંધીને તેને છોડી દેવા અથવા એક જગ્યા પર રાખે છે, અનેક ગર્મી શર્દીની બાધામાં જોઈએ, એટલું જોઈએ લેવાઈ શકે છે તો નથી? આથી જોઈએ તેને ચિંતા નથી હોતી. તે ભવિષ્યકાલમાં ઉપયોગ કરવાની જગ્યાથી દ્રવ્યની સદા રક્ષા કરે છે, અને તેમાં જોઈએ તેટલું આસક્તિશાળી બને છે કે તેને તેની જગ્યાથી જોઈએ છોડવાની જોઈએ. સત્ય વાત છે—જો આરંભ અને પરિગ્રહને પુષ્ટ કરવામાં જોઈએ આસક્તિશાળી બને તેને કેવલિપ્રણીત ધર્મથી સદા વિમુક્ત રહે છે. આરંભ અને પરિગ્રહને સદાવમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ સર્વથા સાવચં રહે છે.

જોઈએ સમયના રહેવાવાળામાં કાળની અપેક્ષાથી, તથા તેના અધિક મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પતા છે. એનાથી વિપરીત બહુતા સમજાવેલું છે.

અસંયમી જીવ જોઈએ પરિગ્રહની માત્રા તેની પાસે અલ્પ હોય તો અધિક હોય તો તેને તેનાથી સંતોષ થવું નથી. તે પોતાના પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામાં જ રહે છે. ચતુષ્પદાદિ જે સમય ઠીક ૨ રાત્રી પર નથી ચલે તો કોઈના નુકસાન કરે છે, ત્યારે તેને મારવાનું જોઈએ, પીવાનું જોઈએ ૨ સમય પર નથી દેતા, અનેક પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરે છે, અને રસ્સી આદિથી બાંધીને તેને છોડી દેવા અથવા એક જગ્યા પર રાખે છે, અનેક ગર્મી શર્દીની બાધામાં જોઈએ, એટલું જોઈએ લેવાઈ શકે છે તો નથી? આથી જોઈએ તેને ચિંતા થતી નથી. તે ભવિષ્યકાલમાં ઉપયોગ કરવાની જગ્યાથી દ્રવ્યની સદા રક્ષા કરે છે, અને તેમાં જોઈએ તેટલું આસક્તિશાળી બને છે કે તેને તેની જગ્યાથી જોઈએ છોડવાની જોઈએ. સત્ય વાત છે—જો આરંભ અને પરિગ્રહને પુષ્ટ કરવામાં જોઈએ આસક્તિશાળી બને તેને કેવલિપ્રણીત ધર્મથી સદા વિમુક્ત રહે છે. આરંભ અને પરિગ્રહના સદાવમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ સર્વથા સાવચં રહે છે.

યોઽસંયમજીવી ગૃહોઽનર્થકરમર્થમુપાર્જયન્નર્થપરિરક્ષણં કરોતિ કિન્તુ તસ્ય તદ્વનમનેકપ્રકારેણ નશ્યતીતિ દર્શયતિ—‘તથો સે’ इत्यादि ।

વીતરાગપ્રણીત ધર્મ મેં સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરને કા નિષેધ હૈ ।
 હસ વાત કો તવ હી સમજા જા સકતા હૈ કિ જવ વીતરાગપ્રણીત ધર્મ
 કો સુનને જાનને ઓર ઉસકે મનન કરને કા અવસર મિલે, પરન્તુ જબ
 વે સિદ્ધાન્ત કો સુનતે હી નહીં હૈ તવ હસ સિદ્ધાન્ત કો જાન મી કૈસે
 સકતે હૈં । અતઃ જહાં પર હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ ચાલૂ હૈ, જિન્હેં અપને
 કર્તવ્ય કા ભાન હી નહીં હૈ, ઓર જો જાન વૂઝ કર મી ચડ્ડે મેં પડ
 રહે હૈ, વે કેવલિપ્રણીત ધર્મ કે સિદ્ધાન્ત કો અમી તક સમજે હી નહીં
 હૈ । જિન સિદ્ધાન્ત કે સમજે વિના સમકિત જૈસી સુન્દર વસ્તુ કમી
 મી ઉનકે હાથમેં નહીં આસકતી । હસકે અભાવ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન કા
 અભાવ ઓર ઉસકે અભાવ સે મિથ્યાત્વ કી વૃદ્ધિ, ઉસકી વૃદ્ધિ સે સંસાર
 મેં પરિભ્રમણ એસે જીવોં કા અનિવાર્ય હૈ, અતઃ જો આત્મહિત કી કામના
 કરનેવાલે હૈં ઉનકા યહ ધર્મ હૈ કિ—વે પરિગ્રહ મેં ગૃહ ન વનેં । તમી
 સંસારસાગર સે ઉનકા આત્મોદ્ધાર હો સકતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

જો અસંયમજીવી હૈ ઓર પરિગ્રહ મેં હી આસક્તપરિણતિવાલા
 વના હુઆ હૈ વહ અનેક અનર્થોંકા ઉત્પાદક દ્રવ્ય કે સંગ્રહ કરને મેં હી
 લવલીન રહતા હૈ । વહ યદ્યપિ કમાયે હુએ અપને હસ દ્રવ્ય કી હર એક

વીતરાગપ્રણીત ધર્મમા સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિષેધ છે એ
 વાતને ત્યારે જ સમજી શકાય છે કે જ્યારે વીતરાગપ્રણીત ધર્મને સાંભળવા
 જાણવા અને તેનું મનન કરવામાં અવસર મળે, પરંતુ જ્યારે તે સિદ્ધાંતને
 સાંભળતો જ નથી ત્યારે તે સિદ્ધાંતને જાણી પણ કેવી રીતે શકે, માટે જે
 કેશણુ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, જેને પોતાના કર્તવ્યનું પણ ભાન નથી
 અને જે જાણી જોઈને પણ ખાડામાં પડે છે તે કેવલિપ્રણીત ધર્મના સિદ્ધાંતને
 હંજી સુધી સમજ્યા જ નથી. જે સિદ્ધાંતને સમજ્યા વિના સમકિત જેવી સુંદર
 વસ્તુ કોઈ વખત પણ તેના હાથમાં આવી શકતી નથી. તેના અભાવમાં
 સમ્યગ્જ્ઞાનનો અભાવ, અને તેના અભાવથી મિથ્યાત્વની વૃદ્ધિ, તેની વૃદ્ધિથી
 સંસારમાં પરિભ્રમણ એવા જીવોને અનિવાર્ય છે અતઃ જે આત્મહિતની
 પ્રાપ્તિ કરવાવાળા છે, તેનો એ ધર્મ છે કે તે પરિગ્રહમાં ગૃહ ન બને. ત્યારે જ
 સંસારસાગરથી તેનો આત્મોદ્ધાર થાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

જે અસંયમજીવી છે અને પરિગ્રહમાં જ આસક્તપરિણતિવાળા બનેલ છે તે
 અનેક અનર્થોના ઉત્પાદક દ્રવ્યનો સંગ્રહ કરવામાં જ તડલીન ગ્રહે છે. તે જો કે પોતાના

મૂલમ—તઓ સે ઇગયા વિવિહં પરિસિદ્ધં સંભૂયં મહોવગરણં
ભવઈ, તંપિ સે ઇગયા દાયાયા વા વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે
અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુંપંતિ, નસ્સઈ વાસે, વિનસ્સઈ વા
સે, અગારદાહેણ વા સે હજ્જઈ, ઇય સે પરસ્સઽટ્ટાણ કૂરાઈં કમ્માઈં
વાલે પકુવમાણે તેણ દુક્ખેણ સંમૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા વિવિધં પરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ, તદપિ
તસ્યૈકદા દાયાદા વા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્યાપહરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા તદહ્રતે, ઇતિ
સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન સમ્મૂઢો વિપર્યાસ-
મુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ, તતઃ સંગૃહીતધનાત્, સદ્ગ્રહકાલાદ્યા, ઇકદા =
ઇકસ્મિન્ કાલે ન સર્વદા કદાચિદિવા વા રાત્રી વા । યદ્વા લાભાન્તરાયકર્મક્ષયો-
પશમે ચેત્યર્થઃ, તસ્ય=અર્થસદ્ગ્રહશીલસ્ય વિવિધમ્=અનેકપ્રકારમ્ પરિશિષ્ટમ્ ઉપ-
ભોગોર્વરિતમ્ સમ્ભૂતં સમ્=સમ્યગ્રક્ષણાય ભૂતં સશ્ચિતં, સંવૃતં વા ભૂમ્યાદિનિશ્વા-
પ્રકાર સે રક્ષા કરતા હૈ તો ખી ડસકા વહ દ્રવ્ય અનેક પ્રકાર સે નષ્ટ
હો હી જાતા હૈ, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તઓ
સે ઇગયા ’ ઇત્યાદિ ।

લાભાન્તરાય કર્મ કૈ ક્ષયોપશમ સે હી જીવોં કો દ્રવ્યાદિકકા લાભ
હોતા હૈ, યહ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત હૈ । ઇસકે અભાવ મેં અનેક પ્રકાર કૈ
કિયે ગયે પ્રયત્ન ખી દ્રવ્યલાભ કારાને મેં કારણ નહીં હોતે હૈ । ઇસ
લાભાન્તરાય કર્મ કૈ ઉદય મેં સંગૃહીત દ્રવ્ય ખી નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ
કી સ્થિતિ રહના ખી ઇસી કર્મ કૈ ક્ષયોપશમાધીન હૈ । જવ ઇસકા ઉદય

કમાએલાં દ્રવ્યની ઢરેક પ્રકારે રક્ષા કરે છે, તો પણ તેનું દ્રવ્ય અનેક પ્રકારથી
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ વાતને પ્રગટ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘તઓ સે ’ ઇત્યાદિ.

લાભાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ જીવોને દ્રવ્યાદિક લાભ થાય છે, તે
શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત છે. તેના અભાવમાં અનેક પ્રકારના કરેલા પ્રયત્ન પણ દ્રવ્ય
લાભ કરાવવામાં કારણ નથી થતાં. આ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયમાં સંગૃહીત
દ્રવ્ય પણ નષ્ટ થાય છે, તેની સ્થિતિ રહેવી પણ તે કર્મને ક્ષયોપશમાધીન છે.

તમિત્યર્થઃ, મહોપકરણં=દ્વિપદચતુષ્પદાદિસમૂહો ભવતિ । તસ્ય સ ધનસમૂહોઽ-
પ્યુપભોગાય ન ભવતીત્યાહ-‘તદપી’-તિ, એકદા=દુર્ભાગ્યોદયે, યદ્વા કદાચિત્
‘દાયાદાઃ’ દાયં=વિભાજ્યદ્રવ્યમાદદતિ=ગૃહ્ણન્તીતિ દાયાદાઃ=સગોત્રાઃ, તસ્ય
ધનાર્જનકષ્ટમનુભવતો જનસ્ય તદપિ દ્વીપાન્તરગમન-દુરારોહપર્વતારોહણ-સ્વન્યા-
દિગ્વનન-રાજસેવા-કૃપિત્રાણિજ્યાદિરૂપસાવધવ્યાપારૈઃ સ્વપરસન્તાપકૈરુપભોગાય
સમુપાર્જિતસશ્વિતવિવર્દિતં ધનમ્ વિભજન્તે=સ્વસ્વભાગગ્રહણાય વિભાગં કુર્વન્તિ,
પૃથક્કુર્વન્તીત્યર્થઃ, અથવા અદત્તહારઃ, અદત્તમેવ હરતીત્યદત્તહારશ્ચૌરો વા તસ્ય
ધનમપહરતિ=ચોરયતિ ।

રહતા હૈ તવ અનેક પ્રકાર કે દ્રવ્યનાશ होने કે ઉપાય भी जीवों को
स्वयमेव प्राप्त होते रहते हैं । उस समय बुद्धि में भी कुछ ऐसी विपरी-
तता आजाती है जिससे द्रव्य के व्यय होने के उपाय भी अच्छे और
उपादेय प्रतीत होने लगते हैं । संसार में कौन यह चाहता है कि मेरा
यह द्रव्यादिक नष्ट विनष्ट हो जाय ? परन्तु सब कुछ विचारते हुए भी
या उसकी रक्षा के उपाय करते हुए भी जो जीव राजा से रंक हो जाते
हैं वे इसी बात के प्रबल प्रमाण हैं ।

इस कर्म के क्षयोपशम होने पर जिस प्रकार जीवोंको द्रव्य के
आने के अनेक उपाय एवं द्वार प्राप्त होते हैं उसी प्रकार इसके उदय में
उसके विनाश के अनेक द्वार भी उन्हें मिल जाते हैं, यही बात सूत्रकार
इस सूत्र में प्रकट कर रहे हैं—

उस अर्थसंग्रहशील व्यक्ति के पास लाभान्तराय कर्म के क्षयोपशम

ન્યારે તેનો ઉદય રહે છે ત્યારે અનેક પ્રકારના દ્રવ્યનાશ હોવાના ઉપાયો પણ
હોવાને સ્વયમેવ પ્રાપ્ત થાય છે. તે સમય બુદ્ધિમાં પણ કોઈ એવી વિપરીતતા
આવી જાય છે જેનાથી દ્રવ્યનો વ્યય હોવાના ઉપાયો પણ સારા અને ઉપાદેય
પ્રતીત થવા લાગે છે સંસારમાં કોણ એ ચાહે છે કે માઈ આ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ
વિનષ્ટ થાય, પરન્તુ ચારે બાજુથી વિચારતાં પણ તેની રક્ષાના ઉપાયો કંવા છતાં
પણ જે હવ રાજાથી રંક થાય છે તે આ વાતનું પ્રબલ પ્રમાણ છે.

આ કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી જે પ્રકારે હોવાને દ્રવ્ય આવવાના અનેક
ઉપાય અને દ્વાર પ્રાપ્ત થાય છે તે પ્રકારે તેના ઉદયમાં તેના વિનાશના અનેક
દ્વાર પણ તેને મળી રહે છે, એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરે છે—

તે અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિની પાસે લાભાન્તરાય કર્મનો ક્ષયોપશમ થવાથી

હોને પર અનેક પ્રકાર કા ભોગ ઉપભોગ સે વાકી વચા હોનેકે કારણ ધનાદિ કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ “ધનકો ધન કમાતા હૈ” હસ લોકોક્તિ કે અનુસાર ઉસકે સંગૃહીત દ્રવ્ય સે ફિર અનેક ઉપાયોં દ્વારા ઉસે દ્રવ્યાદિકી પ્રાપ્તિ હોને લગતી હૈ । ભોગ ઔર ઉપભોગ કી આવશ્યકતાઈં ભી જૈસા જૈસા લાભ હોતા હૈ વૈસે ર વધતી જાતી હૈ, ઔર ઉનકી પૂર્તિ કરનેમ્ં ભી દ્રવ્યાદિક કા વ્યય હોને લગતા હૈ । ભોગવિલાસ કી સામગ્રી જુટાને મ્ં તથા મૌજ મજા કરને મ્ં લાભાનુસાર દ્રવ્ય કા વ્યય હોતા હૈ । આવશ્યકતા કી પૂર્તિ સે અથવા લેન-દેન કે વ્યવહાર સે અવશિષ્ટ દ્રવ્ય કો લોગ, યા તો કિસી બેંક મ્ં જમા કરા દેતે હૈ, યા જમીન મ્ં ઉસે ગાઢ કર રખ દેતે હૈ । જમીન મ્ં ન ગાઢે તો ઉસે તિજોરિયોં મ્ં ભર કર ભી એક જગહ રખદેતે હૈ । ઉન્હેં એસે અપને સગોત્રિયોં કા સમાગમ મિલતા હૈ જો ઇન્હેં રાત દિન દુઃખી કિયા કરતે હૈ । અવિભક્ત કુટુંબ હોનેસે કિસી વાતકો લેકર પરસ્પર મ્ં જવ કુછ અનબનસી હો જાતી હૈ તવ આપસ મ્ં અલગ ર હોને કી પરિસ્થિતિ આતી હૈ । જવ વિભક્ત હોતે હૈ તવ વે સમસ્ત ધનકો વઢવા લેતે હૈ । સગોત્રિયોં કા સમાગમ ધની વ્યક્તિયોં કો કદાચિત્ અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા ભી મિલ જાવે ઔર વે ધન કો અર્જન કરને મ્ં કષ્ટ કા અનુભવ કરનેવાલે ઉસ વ્યક્તિ કે ઉસ દ્રવ્ય કો

અનેક પ્રકારના લોગ અને ઉપલોગથી ળાકી બચવાને કારણે ધનાદિનો સંગ્રહ થાય છે “ધનથી ધન પ્રાપ્ત થાય છે” આ લોકોક્તિને અનુસાર તેના સંગૃહીત દ્રવ્યથી પછી અનેક ઉપાયો દ્વારા તેને દ્રવ્યાદિકની પ્રાપ્તિ થવા લાગે છે. લોગ અને ઉપલોગની આવશ્યકતાઓ પણ જેમ જેમ લાલ થાય છે તેમ તેમ વધતી જાય છે. અને તેની પૂર્તિ કરવામાં પણ દ્રવ્યાદિકનો વ્યય થવા લાગે છે. લોગ-વિલાસની સામગ્રી મેળવવામાં તથા મોજમજા કરવામાં લાભાનુસાર દ્રવ્યનો વ્યય થાય છે. આવશ્યકતાની પૂર્તિથી અથવા લેણદેણના વ્યવહારથી અવશિષ્ટ દ્રવ્યને લોક અગર કોઈ બેંકમાં જમા કરાવે છે અગર જમીનમાં તેને દાટીને રાખે છે. જમીનમાં ન દાટે તો તેને તિજેરીઓમાં ભરીને પણ એક જગ્યાએ રાખે છે. તેને એવા પોતાના સગોત્રિયોનો સમાગમ મળે છે જે તેને રાતદિવસ દુઃખી કરે છે. અવિભક્ત કુટુંબ હોવાથી કોઈ વાતને લઈને પરસ્પરમાં ન્યારે કાંઈક અણુ-બનાવ થાય છે ત્યારે આપસ આપસમાં અલગ અલગ થવાની તૈયારી અને છે. ન્યારે વિભક્ત થાય છે ત્યારે તે સમસ્ત ધનને વહેંચી લે છે સગોત્રિયોનો સમાગમ ધની વ્યક્તિઓને કદાચિત્ અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પણ મળી આવે,

જો ઘડી કઠિનતા સે उसने छीपान्तरगमन से, दुरारोह पर्वतों के उत्स-
घनसे, खानि में पड़े हुए उसके ग्वोदने से, राजा की सेवासे, और
अपने एवं पर को सन्ताप करनेवाले कृषि-वाणिज्यादि रूप सावद्य
व्यापारों से पैदा किया है सञ्चित किया है और व्याज आदि द्वारा जिस
को वृद्धि की है भले ही विभाजित न करें; परन्तु चोरों से द्रव्य की
रक्षा करना एक मुश्किल कार्य है । धनी व्यक्तियों के अनेक मित्र और
शत्रु हो जाते हैं । जिनका उससे काम निकलता रहता है वे उसके
मित्र, और जिनका उससे काम नहीं निकलता वे उसके शत्रु हो जाते
हैं । जो मित्र होते हैं वे भी कालान्तरमें शत्रु, और जो शत्रु होते हैं वे
भी कालान्तरमें मित्र बनते हुए देखे जाते हैं । अतः जो पहिले मित्र
बन कर शत्रु बन जाते हैं वे सब इसका भेद भाव जान कर चोरों को गुप्त
रीति से सब प्रकार की इसकी प्रवृत्ति से परिचित करा देते हैं और अन्त
में इसे लुटवा देते हैं । क्षण भर में यह अमीर से गरीब बन जाता है ।
यदि पुण्योदय से चोरोंको भी इसके द्रव्यको चुराने का साहस न जाग्रत
हो और वे इसके ऊपर धाड़ न भी पाड़े तो भी अधर्मी राजा की
नजर से द्रव्यकी रक्षा करना मुश्किल ही है ।

અને તે ધનને ઉપાર્જન કરવામા કષ્ટનો અનુભવ કરવાવાળા તે વ્યક્તિએ તે
દ્રવ્યને જે ઘણી મુશ્કેલીથી દરિયાપારથી, મહાન પર્વતોના ઉત્સંઘનથી, ખાણમાં
પહેલાંને તેના ખોદવાથી, રાજાની સેવાથી અને પોતાને તેમજ ખીનને સંતાપ
કરવાવાળી ખેતી-વાણિજ્યાદિરૂપ સાવધ વ્યાપારથી પેદા કરેલ છે, સચિત
કરેલ છે, અને વ્યાજ આદિ દ્વારા જેની વૃદ્ધિ કરેલ છે, ભલે તે વિલાશીત ન
કરે, પરંતુ ચોરોથી દ્રવ્યની રક્ષા કરવી એક મુશ્કેલ કાર્ય છે. પૈસાદાર વ્યક્તિ-
ઓના અનેક મિત્રો અને શત્રુઓ થાય છે જેનાથી જેનું કામ થાય છે તે મિત્ર,
અને જેનાથી જે કામ બનતું નથી તે શત્રુ બની જાય છે જે મિત્ર હોય છે
તે પણ કાલાન્તરમા શત્રુ, અને જે શત્રુ હોય છે તે પણ કાલાન્તરમા મિત્ર બને
છે તેમ દેખવામાં આવે છે. માટે જે પહેલાં મિત્ર બનીને શત્રુ બને છે તે બધા
તેના ભેદભાવ જણીને ચોરોને ગુપ્ત રીતિથી સર્વ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી પરિ-
ચિત કરી આપે છે, અને અન્તમાં તેને હુંડાવે છે. ક્ષણભરમા તે અમીરથી ગરીબ
બની જાય છે. કદાચ પુણ્યોદયથી ચોરા તરફથી તેનું દ્રવ્ય ચોરાવાનું દ્વાજ્ય
સાહ્ય ન બને, અને તેઓ તેની તરફ ધાડ પણ ન પાડે તો પણ અધર્મી રાજાની
નજરથી દ્રવ્યની રક્ષા થવી મુશ્કેલ છે.

અથવા રાજાનઃ=વૃષાસ્તસ્ય ધનં વિલુપ્પન્તિ=વિલુપ્તન્તિ અભિયોગદ્વારેણ વલા-
લાત્તદ્ધનં ગૃહ્ણન્તીત્યર્થઃ । અથવા તસ્યાર્થગૃહ્ણસ્ય ધનં સ્વયમેવ નશ્યતિ, વાણિજ્યાદૌ
વહુમૂલ્યેન ક્રયણાદલ્પેન વિક્રયણાદિત્યર્થઃ । ‘વિનશ્યતિ’ રાજકોશે ‘વૈદ્ધ’
પદવાચ્યે સંસ્થાપિતં, ભૂમ્યાદૌ વા નિશ્ચાતં તસ્ય રાજઃ પરિવર્તનેનાપગતાત્, ભૂમૌ યત્ર
નિશ્ચાતં દીર્ઘકાલેન તતોડપગમાદ્વા વિનશ્યતિ=સ્વયમેવ નષ્ટં ભવતીત્યર્થઃ ।

રાજા કી જવ લોલુપ દૃષ્ટિ હસકે ધન પર પડતી હૈ તવ વહ જવર્દસ્તી
કોઈ એસા અભિયોગ લગા દેતા હૈ કિ જિસસે उस विचारे का वह धन
देखतेर लुटवा लिया जाता है ।

यदि धार्मिक राजाके राज्य में वसने का धनीको सौभाग्य मिलता
है और उसकी वजह से उसके धनकी हर एक प्रकार से रक्षा भी होती
रहती है तो भी अधिक संग्रह की लालसा से या उसकी वृद्धि की तीव्र
भावनासे जब धनी उसे किसी व्यापार में लगा देता है तो तेजी मंदी के
समय क्रय विक्रय करने से अचानक जब व्यापार में घाटा आ जाता है
तब वह कमाया हुआ द्रव्य सहसा हाथ से निकल जाना है, और वह
धनी व्यक्ति फिर हाथ मलते ही रह जाता है । व्यापार में यदि पुण्य
कर्म के उदय से अच्छा लाभ भी हो जाता है, तो लोग उसे बैंकों में
जमा कर देते हैं या उसे जमीन वगैरह में गाड़ देते हैं । वहां उसकी
सुरक्षा होती हो तो भी जब राज्य का परिवर्तन होता है तब बैंके भी
प्रायः लुट जाती हैं, अथवा जब वह उस भूमि से बहुत समय के बाद गाड़े

રાજાની ન્યારે લોલુપ દૃષ્ટિ તેના ધન ઉપર પડે છે ત્યારે તે જળરાધથી
કોઈ એવો અભિયોગ લગાવે છે કે જેનાથી તે ગિચારાનું તે ધન દેખતા
દેખતામાં લુંટાવી લઈ જાય છે.

કદાચ ધાર્મિક રાજાના રાજ્યમાં વસવાનો ધનીને સૌભાગ્ય મળે છે, અને
તેના તરફથી તેના ધનની દરેક પ્રકારે રક્ષા પણ થાય છે તો પણ અધિક સંગ્ર-
હની લાલસાથી અગર તેની વૃદ્ધિની તીવ્ર લાવનાથી ન્યારે પૈસાદાર તે ધનને
કોઈ વ્યાપારમાં લગાવી દે છે તો તેજી મંદીના સમયમાં કય વિક્રય કરવાથી
અચાનક ન્યારે વ્યાપારમાં નુકસાન આવે છે ત્યારે તે કમાએલું ધન સહસા હાથથી
ગુમાવી દે છે, અને પછી તે પૈસાદાર વ્યક્તિ હાથ ધસતો થઈ જાય છે, વ્યાપારમાં
કદાચ પુણ્ય કર્મના ઉદયથી સારો લાભ પણ મળે છે તો લોક તેને બેંકોમાં જમા
કરાવી દે છે, અગર તેને જમીન વિગેરેમાં નાટી દે છે તે જગોએ તેની સુરક્ષા
ળને તો પણ ન્યારે રાજ્યનું પરિવર્તન થાય છે ત્યારે બેંકોને પણ લુટવામાં
આવે છે, અથવા ન્યારે તે ભૂમિથી બહુ સમય બાદ દાટેલાં સ્થાનથી સ્થાનાન્તરિત

કથંચિત્સુરક્ષિતમપિ તદ્ધનં કાંસ્યદ્રવ્યસુવર્ણરજતાદિકમ્ અગારદાહેન=
ગેહદાહેન દહ્યતે, ઇત્યાદિકારણેરુપાર્જિતસ્યાપ્યર્થસ્ય વહુવિધો નાશો ભવતિ, અન્તરાય-
કર્મપ્રાવલ્યેનોપાર્જયિતુરુપભોગાય નૈવ ભવતીત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

“ ચત્વારો ધનદાયદા, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ॥

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

હુણ સ્થાન સે સ્થાનાન્તરિત હો જાતા હૈ તવ ઉસકા મિલના ખી મુશ્કિલ
હો જાતા હૈ । ઇસ તરહ સે ખી ઉસકા વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી ।

કથંચિત્ કાંસા; દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ વહ ધન ઘર મેં સુરક્ષિત
ખી રહે તો ખી અચાનક ઘરમેં આગ લગજાને સે ઉસકા ખી વિનાશ
હો જાતા હૈ । ઉસ સમય વહુમૂલ્ય વસ્તુએં ગ્વાકમેં મિલ જાતી હૈં ।
આગ કો વુઝાને કે લિયે આયે હુણ લોગોં કે હાથ ખી ઉસ સમય જો
ખી વસ્તુ લગતી હૈ વે ઉસે ઉઠાકર લે જાતે હૈં । ઇમ પ્રકાર ઇન પૂર્વોક્ત
કારણોં સે ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કા અન્તરાય કર્મ કે પ્રવલ ઉદયમેં અનેક રીતિ
સે વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી । નીતિકાર ખી યહી વાત કહતે હૈ—

“ ચત્વારો ધનદાયદા, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધન કે હિસ્સેદાર ચાર હૈં । ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા, ઓર ૪ ચોર ।
જિસ ધનકા સદુપયોગ ધર્મ મેં નહીં હોતા હૈ ઉસ ધનકા અગ્નિ, રાજા
ઓર ચોરોં કે દ્વારા વિનાશ ઓર અપહરણ હોતા હૈ ॥ ૧ ॥

થાય છે ત્યારે તેનું ‘મળવું’ પણ મુશ્કેલ બની જાય છે આવી રીતે પણ તેનો
વિનાશ હોવામા વાર લાગતી નથી

કોઈ પણ પ્રકારે કાંસા, દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ તે ધન ઘરમાં સુર-
ક્ષિત રહે તો પણ અચાનક ઘરમાં આગ લાગવાથી તેનો પણ વિનાશ થઈ જાય
છે. તેવા વળતે ગહુમૂલ્ય વસ્તુઓ ખાક થાય છે આગને ઓલવવા આવેલા
લોકોના હાથમાં પણ તે વળતે જે વસ્તુ પડે છે તે પણ ઉકાળી લઈ જાય છે. આ
પ્રકારે આ પૂર્વોક્ત કારણોથી ઉપાર્જિત દ્રવ્યનો અન્તરાય કર્મના પ્રબલ ઉદયમાં
અનેક રીતિથી વિનાશ થવામા વાર લાગતી નથી નીતિકાર પણ એ વાત કહે છે—

“ ચત્વારો ધનદાયદા, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરા ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધનના હિસ્સેદાર ચાર છે. ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા અને ૪ ચોર. જે
ધનનો સદુપયોગ ધર્મમાં નથી થતો તે ધનનો અગ્નિ, રાજા અને ચોરો દ્વારા
વિનાશ અને અપહરણ થાય છે. ॥ ૧ ॥

વહુપ્રકારૈઃ સ ધનસશ્ચયકારી પરસ્યાર્થાય=અન્યાર્થમ્, દાયાદાદ્યર્થમેવ, ક્રૂરાણિ=શિરશ્ચેદ-ગલકર્તનાદીનિ કર્માણિ=દુરાચરણાનિ વાલઃ=કર્તવ્યશૂન્યચેતાઃ પ્રકુર્વાણઃ=પ્રકર્ષેણ વિદધાનઃ સન્, તેન કટુકર્મવિપાકોદયેન દુઃખેન સંમૂઢઃ=પરિહતમતિઃ રાગદ્વેષાભિભૂતતયા કાર્યાકાર્યમજાનન્ વિપર્યાસમ્=વૈપરીત્યં મિથ્યાત્વમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ, અર્થાર્થમનર્થકારી ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

મૂઢાઃ સુખેપ્સવો દુઃખમવાપ્નુવન્તીતિ ન મયા સ્વબુદ્ધ્યોચ્યતે, इति सुधर्मा स्वामी कथयति-‘मुणिणा’ इत्यादि ।

મૂલમ્—મુણિણા હુ એયં પવેદ્યં, અણોહંતરા એ, નો ય ઓહં તરિત્તે, અતીરંગમા એ નો ય તીરં ગમિત્તે, અપારંગમા એ, નો ય પારં ગમિત્તે, આયાણિજ્જં ચ આયાય તંમિ ઠાણે ન ચિદ્દિ વિતહં પપ્પસ્સેયન્ને તંમિ ઠાણંમિ ચિદ્દિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—મુનિના હુ એતત્પવેદિતમ્, અનોઘન્તરા એતે ન ચૌઘં તર્તુમ્, અતીરંગમા એતે, ન ચ તીરં ગન્તુમ્, અપારંગમા એતે, ન ચ પારં ગન્તુમ્, આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ, વિતથં પ્રાપ્યાસ્થેદગ્ગસ્તસ્મિન્ સ્થાને તિષ્ઠતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

जिस धनका अन्तिम यह परिणाम होता है उस धनको संचित करनेवाले अज्ञान में पड़े हुए हैं “परस्यार्थाय” सिर्फ दायद वगैरह दूसरों के उपभोग के लिये ही उसके संग्रहार्थ भयंकर से भयंकर गल-कर्तन, शिरश्छेदन जैसे निंदित दुराचारों को करता हुआ तज्जन्य कटुक कर्मके विपाकजनित दुःख से संतप्तचित्त बन कर्तव्याकर्तव्य के विवेक से रहित होकर मिथ्यात्वभावरूप विपर्यासपनेको प्राप्त होता है अर्थात् वह धनके लिये अनेक अनर्थ करता है ॥ सू० ६ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુખની ચાહના કરતે હોય પરંતુ અહીં દુઃખની જ પ્રાપ્તિ થાય છે, આ વિષયમાં શ્રીસુધર્મા સ્વામી પોતાની નિજી કલ્પનાના નિષેધ

જે ધનનો અન્તિમ આ પરિણામ થાય છે તે ધનનો સંચિત કરવાવાળા અજ્ઞાનમાં પડેલા છે “પરસ્યાર્થાય” કહ્યા દાયાદ વિગેરે બીજાના ઉપભોગ માટે જ તેના સંગ્રહાર્થે લયકરથી લય કર ગલકર્તન, શિરશ્ચેદન જેવા નિંદિત દુરાચારોને કરીને તજ્જન્ય કટુક કર્મના વિપાકજનિત દુઃખથી અંતઃસચિત બની કર્તવ્યાકર્તવ્યના વિવેકથી રહિત બની મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપણાને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ તે ધન માટે અનેક અધર્મ કરે છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુખની ચાહના કરે છે પરંતુ તેને દુઃખની જ પ્રાપ્તિ થાય છે. આ વિષયમાં શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાની નિજી કલ્પનાનો નિષેધ કરીને કહે છે—

ટીકા—‘મુનિને’-ત્યાદિ । ‘મુનિના’ સંસારસ્ય ત્રિકાલાવસ્થાં મનુતે યઃ સ મુનિઃ=યાતિકર્મચતુષ્પ્રયક્ષયસમુદ્ભૂતાન્મસ્વરૂપસ્તીર્થકરગણધરાદિઃ, તેન, હુ=નિશ્ચ-યેન એતત્=પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા, તત્ર પૂર્વોક્તં પરિગ્રહામક્તિજનિતસંસારપરિભ્રમણ-સ્વરૂપમ્, અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રોત્પત્ત્યાદિકં ચ પ્ર=પ્રકર્ષેણ વેદિતં=દ્વાદશપર્પદિ પ્રરૂપિતમ્ મિત્રમિત્રસ્વરૂપેણ કથિતમિત્યર્થઃ । વક્ષ્યમાણં પ્રવેદિતમાહ—‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ, કરતે હુપ કહતે હૈ—‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ ।

“મુનિ” યહ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુ સે નિષ્પન્ન હુઆ હૈ । ‘મન્’ ધાતુ કા અર્થ જાનના હૈ । જો સંસારી કી ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણ-પર્યાયરૂપ અવસ્થાઓ કો જાનના હૈ ઉસકા નામ મુનિ હૈ, યાતિયા કર્મોં કૈ ક્ષય હોને સે જિન્હોં કો કેવલજ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કૈ નિજરૂપ કી પ્રાપ્તિ હો ચુકી હૈ એસે તીર્થકર, ગણધરાદિ દેવ યદ્યાં ‘મુનિ’ શબ્દ સે લિયે ગયે હૈ । અપની નિજી કલ્પના કા પરિહાર કરતે હુપ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમેં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતા હૈ, તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃન્નીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રોં (હસી ઉદ્દેશ કૈ પ્રથમાદિ સૂત્રોં) મેં જો કહા ગયા હૈ યહ સમસ્ત વિષય, અથવા જો ખી કુછ આગે કહા જાવેગા વહ સવ મૈને અપની નિજબુદ્ધિ સે કલ્પિત કર નહીં કહા હૈ, કિન્તુ તીર્થકરાદિક દેવોં ને અપની ૨ પરિષદ મેં પૃથક્ પૃથક્ રૂપ સે એસાહી કહા હૈ । ઉનકી પરંપરા સે જિસ પ્રકાર યહ વિષય ચલા ‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ.

“મુનિ” આ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુથી નિષ્પન્ન થયો છે. ‘મન્’ ધાતુનાં અર્થ બહુવુ થાય છે. જે સંસારીની ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણપર્યાયરૂપ અવસ્થાઓને બહુ છે તેનું નામ મુનિ છે. યાતિયા કર્મનો ક્ષય હોવાથી જેને કેવળ જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્માના નિજરૂપની પ્રાપ્તિ થયેલ છે એવા તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ આ ઠેકાણે મુનિ-શબ્દથી લેવામાં આવેલ છે પોતાની નિજ કલ્પનાનો પરિહાર કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમાં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃન્નીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રો (આ ઉદ્દેશના પ્રથમાદિ સૂત્રો)માં જે કહેવામાં આવેલ છે તે સમસ્ત વિષય, અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મેં પોતાની નિજ બુદ્ધિથી કલ્પના કરી કહેલ નથી. પણ તીર્થકરાદિ દેવોંએ પોતાપોતાની પરિષદમાં પૃથક્ પૃથક્ રૂપથી એમ જ કહેલ છે, તેની પરંપરાથી જે પ્રકારે આ વિષય આવ્યો

અનોઘન્તરાઃ=ઓઘો દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધઃ-દ્રવ્યૌઘો નદીપૂરાદિકઃ, ભાવૌઘોઽષ્ટવિધં કર્મ સંસારો વા યેન યત્ર દુઃખિતો ભવતિ પ્રાણી, તમોઘં તરન્તીત્યોઘન્તરાઃ, ન ઓઘન્તરા અનોઘન્તરાઃ=મિથ્યાદર્શિનઃ કુતીર્થિકાદયઃ પાર્શ્વસ્થાદયો વા, જ્ઞાનક્રિયાપ્રવહનવિકલાઃ, ઓઘતરણઞ્ચ પ્રમનસોઽપિ તરણોપાયવિવેકાભાવાન્ન તર્તુ પ્રભવન્તિ તદેવાહ-

આ રહ્યા છે તેની અનુસાર મૈને આ પ્રતિપાદિત કર્યું છે અતઃ મૂલ મેં આ સર્વજ્ઞોક્ત હોને સે અપ્રમાણભૂત નહીં માના જા સકતા ।

વક્ષ્યમાણ વિષય મેં સૂત્રકાર કહેતે હૈં-‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ, ‘અનોઘન્તર’ શબ્દકા અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈં । જો ઓઘન્તર નહીં હૈં, વે અનોઘન્તર હૈં । દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે ઓઘ દો પ્રકાર કા હૈં, નદી કા પૂર વગેરે દ્રવ્ય-ઓઘ હૈં, અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર, ભાવ-ઓઘ હૈં । જિસકે દ્વારા પ્રાણી જહાં પર દુઃખિત હોતા હૈં ઓઘ કા નામ ઓઘ હૈં, ઓઘ ઓઘ કો જો તર જાતે હૈં-પાર કર જાતે હૈં, વે ઓઘન્તર કહે જાતે હૈં । ઇન્સે જો વિપરીત હૈં, વે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિકા પાસ-ત્યાદિક જીવ હૈં, ક્યોં કિ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ-ઓઘ કો પાર નહીં કરતે હૈં । ભાવ-ઓઘ કો પાર કરને કે લિયે જ્ઞાન ઓર ક્રિયા રૂપી પ્રવહન (નૌકા) કી જરૂરત હોતી હૈં । જિસ પ્રકાર મનુષ્ય વિના નૌકા કે સમુદ્ર કે પાર નહીં જા સકતા ઓઘ પ્રકાર ઇસ સંસાર યા અષ્ટવિધ કર્મ રૂપી સમુદ્રકા પાર કરના આ વિના જ્ઞાન ઓર ક્રિયા કે સર્વથા અસંભવ

આવે છે તે અનુસાર મેં પણ આ પ્રતિપાદન કર્યું છે આ મૂળમાં આ સર્વ-જ્ઞોક્ત હોવાથી અપ્રમાણભૂત માની શકાતું નથી

વક્ષ્યમાણ વિષયમાં સૂત્રકાર કહે છે-‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ. અનોઘન્તર શબ્દનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે જે ઓઘન્તર નથી તે અનોઘન્તર છે. દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી ઓઘ બે પ્રકારે છે. નદીનું પૂર વગેરે દ્રવ્ય ઓઘ છે. અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર ભાવઓઘ છે જેના દ્વારા પ્રાણી જે જગ્યાએ ડુબી થાય છે તેનું નામ ઓઘ છે. તે ઓઘ બે તરીકે બને છે-પાર કરે છે તે ઓઘન્તર કહેવાય છે. તેનાથી જે વિપરીત છે તે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિકા અગર પાસત્યાદિક જીવ છે, કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ ઓઘને પાર કરતા નથી. ભાવ ઓઘને પાર કરવા માટે જ્ઞાન અને ક્રિયારૂપી પ્રવહન (નૌકા) ની જરૂરત પડે છે. જેવી રીતે મનુષ્ય જહાજ વિના સમુદ્ર પાર કરી શકતો નથી તે પ્રકારે આ સંસાર અને અષ્ટવિધ કર્મરૂપી સમુદ્રનો પાર કરવા તે જ્ઞાન અને ક્રિયા વગર સર્વથા અસંભવ છે. સમ્યક્જ્ઞાન અને

ન ચૌઘમિતિ, ઓઘં તર્તુ ન ચ સમર્થા ભવન્તીત્યર્થઃ સ્પષ્ટઃ । કિં ચ-એતે ‘અતીરંગમાઃ’ તીરં ન ગચ્છન્તીત્યતીરંગમાઃ, એતે ત્રીતરાગપ્રણીતરસ્ત્રયસમારપ્તનાભાવાત્ તીરં ગત્તું સમર્થા ન ભવન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ-‘અપારંગમાઃ’ પારસ્તટસ્તં ગચ્છન્તીતિ પારંગમાઃ, ન પારંગમા અપારંગમાઃ, સમ્યગુપદેશાભાવાત્પારગમનમનસોઽપિ ઉત્સવપ્રરૂપણાત્, હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવોં કો હી મિથ્યાદૃષ્ટિ કહા ગયા હૈ । સમ્યક્જ્ઞાન કે અભાવ સે સમ્યગ્દર્શન કા અભાવ ખી સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અતઃ ઉસે યહાં પ્રથક્ રૂપસે નહીં કહા ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘ કો પાર કરને કે લિયે લાલાયિતમન રહતે હૈં પરંતુ ઉનકે પાસ પાર કરનેકા ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકકા અભાવ હોને સે વે ઉસે પાર નહીં કર સકતે । યહી વાત “ન ચૌઘં તર્તુ” હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં । સંસારરૂપ સમુદ્ર સે પાર હોને કે લિયે સર્વ પ્રથમ સમક્તિ કી જરૂર ન પડતી હૈ । શાસ્ત્ર મેં સમક્તિ કો જેવટિયા કી ઉપમા દી ગઈ હૈ । જિસ પ્રકાર વિના જેવટિયા કે નૌકા જીવોં કો જલાશય સે પાર નહીં ઉતાર સકતી, ઉસી પ્રકાર હસ સંસારરૂપ સમુદ્ર સે જીવ વિના સમક્તિ કો પાયે કબી ખી પાર નહીં ઉતર સકતા । સમક્તિ કે વિષય મેં પીછે વિવેચન કિયા જા ચુકા હૈ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્ર કે તીર કો ઓર પાર કો પાનેકે લિયે અસમર્થ હસલિયે હૈં કિ-યે “અતીરંગમ” ઓર “અપારંગમ” હૈં ।

અમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવો ને મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કહેલ છે. અમ્યક્જ્ઞાનના અભાવથી અમ્યગ્દર્શનનો અભાવ પણ સ્વતઃ સિદ્ધ છે માટે તેને આ ઠેકાણે ‘પૃથક્ રૂપથી કહેલ નથી.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘનો પાર કરવા માટે લાલાયિત મન રાખે છે પરંતુ તેની પાસે પાગ કરવાના ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકનો અભાવ હોવાથી પાર કરી શકતા નથી તે વાત “ન ચૌઘં તર્તુ” એ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે સંસાર રૂપ સમુદ્રનો પાર કરવા માટે સર્વ પ્રથમ સમક્તિની જરૂર પડે છે. શાસ્ત્રમાં સમક્તિને જેવટિયાની ઉપમા આપેલ છે જે પ્રકારે જેવટિયા વગર નૌકા જીવોને જલાશયથી પાર નહિ ઉતારી શકે, તે પ્રકારે આ સંસારરૂપ સમુદ્રથી જીવ વિના સમક્તિ મેળવ્યે કોઈ વખત પાર ઉતરી શકના નથી. સમક્તિના વિષયમાં પાછળ વિવેચન કરવામાં આવેલ છે

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્રના તીરનો પાર કરવાને માટે અસમર્થ એ માટે છે કે તે “અતીરંગમ” અને “અપારંગમ” છે. ત્રીતરાગપ્રણીત રસ્ત-

તત્રૈવ પ્રવૃત્તત્વાત્, ઉન્માર્ગપ્રચારકત્વાચ્ચ પારં ગન્તું પ્રભવો ન ભવન્તીત્યર્થઃ । ‘અતીરંગમાઃ’ ‘અપારંગમાઃ’ ઇત્યુભયત્રાપિ નજો ‘ભવન્તી’—ત્યત્ર ભવનક્રિયાયામન્વયે આર્પત્વાદસમર્થસમાસો વોચ્યઃ । તે તીરં તિતીર્થવોડપિ પારં પિપારયિપવોડપિ સ્વાભિમત-શાસ્ત્રપ્રવૃત્તયો નૈવ તીરં ગચ્છન્તિ, નાપિ પારં પ્રાપ્નુવન્તિ । લોકે તીરપારયોરેકાર્થત્વેડ-પિ અત્ર તીરપદેન મોહનીયક્ષયઃ, પારપદેન ઘાતિકર્મક્ષયો ગૃહ્યત ઇતિ વિશેષાન્ન પૌન-સ્ત્યમ્ । ઓઘં તિતીર્થવોડપિ કુતો ન તીરપારગામિનો ભવન્તીત્યાહ—‘આદાનીય’—

વીતરાગપ્રણીત રત્નત્રય કી આરાધના કા હનમેં અભાવ હોને સે યે ‘અતીરંગમ’ ઓર સમ્યક્ ઉપદેશ કી પ્રાપ્તિ કા અભાવ હોને સે પાર પ્રાપ્ત કરને કે લિયે અભિલાષી હોતે હુણે મી યે ઉત્સૂત્ર કે પ્રરૂપક ઓર ઉન્માર્ગ કે પ્રચારક હોને કી વજહ સે ‘અપારંગમ’ હૈં । લોકમેં તીર ઓર પાર શબ્દ કા એક હી વાચ્યાર્થ હોતા હૈ ફિર મી સૂત્રમેં જો હન દો શબ્દોંકા પ્રયોગ કિયા હૈ, ઉસસે યહ બાત જ્ઞાત હોતી હૈ કિ—તીર શબ્દ સે ઘાતી કર્મોંકા ક્ષય ઓર પાર શબ્દ સે અઘાતિયા કર્મોંકા અભાવ અર્થ હોતા હૈ ।

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ” આદાનીય શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ જિસસે પ્રાપ્ત કી જાતી હૈ એસા ચારિત્ર હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં મૂર્ચ્છિત હોને સે અપની કલ્પનાનુસાર ચારિત્ર કા આરાધન કરતે હૈં । મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્ર કે આરાધન સે પ્રાપ્ત હોતી હૈ । જિસમેં સાવધ પ્રવૃત્તિકા લેશ નહીં હૈ ઉસકા નામ સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । જૈસેર જીવ ગુણસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ કરના જાતા હૈ વૈસેર ગૃહીતચારિત્રમેં ઉજ્જ્વલતા

ત્રયની આરાધનાનુ તેમ અભાવ હોવાથી તે ‘અતીરંગમ’ અને સમ્યક્ ઉપદેશની પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાથી પાર પ્રાપ્ત કરવા માટે અભિલાષી હોવા છતાં તે ઉત્સૂત્રના પ્રરૂપક અને ઉન્માર્ગના પ્રચારક હોવાથી ‘અપારંગમ’ છે । લોકમાં તીર અને પાર શબ્દનો એક જ વાચ્યાર્થ થાય છે તો પણ સૂત્રમાં જે બે શબ્દોનો પ્રયોગ કર્યો છે તેનાથી એ વાત જ્ઞાત થાય છે કે—તીર શબ્દથી ઘાતિયા કર્મોંનો ક્ષય અને પાર શબ્દથી અઘાતિયા કર્મોંનો અભાવ અર્થ થાય છે.

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ”

આદાનીય શબ્દનો અર્થ મુક્તિ જેનાથી પ્રાપ્ત થાય છે એવું ચારિત્ર છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં મૂર્ચ્છિત હોવાથી પોતાની કલ્પનાનુસાર ચારિત્રનું આરાધન કરે છે, મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્રના આરાધનથી પ્રાપ્ત થાય છે. જેમાં સાવધ પ્રવૃત્તિનો લેશ પણ નથી તેનું નામ સમ્યક્ચારિત્ર છે. જેમ જેમ જીવ ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ કરતો જાય છે તેમ તેમ ગૃહીત ચારિત્રમાં ઉજ્જ્વલતા આવતી જાય છે,

મિત્યાદિ, સ તીરપારજિગમિષુઃ આદાનીયમ્=આદીયતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેનેત્યા-
દાનીયં=ચારિત્રં, તદાદાય=સમારાધનજ્ઞાનવિપયીકૃત્ય તસ્મિન્=ચારિત્રસ્થાને ન
તિષ્ઠતિ પરિગ્રહમૃચ્છિતત્વાત્,

યદ્વા—આદાનીયં=દાસીદાસહસ્ત્યશ્વરથધનધાન્યસુવર્ણાદિકં, તદ્ આદાય=
ગૃહીત્વા તત્ર વિમુદ્ધ, અથવા મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકપાયયોગૈરાદાનીયં=કર્મ ગૃહી-
ત્વા રત્નત્રયાત્મકે મોક્ષમાર્ગે ન તિષ્ઠતિ=આત્માનં ન સ્થાપયતિ। નત કેવલં સર્વજ્ઞો-
પદેશસ્થાને તિષ્ઠતિ, પ્રત્યુત વિપરીતાચારમાચરતીત્યાહ—‘વિતથ’—મિતિ, અસ્થેદજ્ઞઃ
=પરપીડાનભિજ્ઞઃ, વિતથં=મિથ્યાત્વમોહનીયં પ્રાપ્ય=લબ્ધ્વા તત્રૈવ સ્થાને=પરિગ્રહા-
દિમૂર્ચ્છાયાં તિષ્ઠતિ, તત્રૈવ જીવનં યાપયતીત્યર્થઃ। શબ્દાદિકામગુણાસદ્ગસદ્ગી
પદ્મજીવનિકાયસમારમ્ભવાન્ પરિગ્રહમૃચ્છિતો જ્ઞાનાવગ્નીયાદિચિક્ષણકર્માણિ સ-
મુપાર્જયન્નજસ્યં નરકનિગોદાદિવ્યપદેશં લભત ઇત્યાશયઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

આત્ની જાતી છે। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમક્તિ કે અભાવ મેં પ્રથમ ગુણસ્થાન-
વર્તી હોતા છે અતઃ વહ સમક્તિસહિત ચારિત્ર કા આરાધન નહીં કર
સકતા, હમલિયે તીર ઓર પારકે લાભ સે સદા વંચિત રહા કરતા છે।

અથવા—આદાનીય શબ્દ કા અર્થ—દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,
ધાન્ય ઓર સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ મી છે। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હસી પરિગ્રહ
મેં અત્યન્ત આસક્ત રહતા છે હસ લિયે વહ રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગ મેં
કમી મી સ્થિતિ કા લાભ નહીં કર સકતા। આદાનીય શબ્દ કા અર્થ કર્મ
મી છે, હસ કર્મ કો વહ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કપાય, પ્રમાદ ઓર યોગો
ઢારા ગ્રહણ કરતા છે। કર્મકે સદ્ભાવ મેં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિ
કી પ્રાપ્તિ સે દૂર હી રહતા છે। હસ વિષય મેં પહિલે લિખા જા ચુકા છે। જય

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમક્તિના અભાવમાં પ્રથમગુણસ્થાનવર્તી થાય છે, માટે તે
સમક્તિસહિત ચારિત્રનુ આરાધન કરી શકતા નથી, માટે તીર અને પારના
લાભથી વંચિત રહે છે

અથવા—આદાનીય શબ્દનો અર્થ — દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,
ધાન્ય અને સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ પણ છે, મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ આ પરિગ્રહમાં
અત્યન્ત આસક્ત રહે છે, લેથી તે રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગમાં કોઈ વખત
પણ સ્થિતિનો લાભ કરી શકતો નથી. આદાનીય શબ્દનો અર્થ કર્મ પણ
છે, આ કર્મને તે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કપાય, પ્રમાદ અને યોગોદારા મહણ
કરે છે, કર્મના સદ્ભાવમાં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિની પ્રાપ્તિથી
દૂર જ રહે છે. આ વિષયમાં પહેલા લખવામાં આવેલું છે. આ મુધી મુક્તિના

યો નરકાદિવ્યપદેશભાગૂ ન ભવતિ, યથ્ ભવતિ તં દર્શયતિ—‘ ઉદ્દેસો ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—ઉદ્દેસો પાસગસ્સ નત્થિ, બાલે પુણ નિહે કામસમ-
ણુન્ને અસમિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવહં અણુપરિચટ્ટઈત્તિ
વેમિ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, બાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમનુજ્ઞોઽશમિત-
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાઽઽવર્તમનુપરિવર્તતે । ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—‘ ઉદ્દેશ ’ ઇત્યાદિ, પશ્યતીતિ પશ્યઃ, પશ્ય એવ પશ્યકઃ=પરિજ્ઞાત-
સકલહેયોપાદેયસ્તીર્થઙ્કરગણધરાદિસ્તસ્ય વિદિતવેદિતવ્યસ્ય, ઉદ્દિશ્યતે ઇત્યુ-
દ્દેશઃ=નરકાદિવ્યપદેશો નારકાદિપર્યાયવ્યવહાર ઇતિ યાવન્, અત્ર વ્યપદેશાર્થકો-
દ્દેશશબ્દકથનેન નામકર્મણઃ સકલાપ્યુત્તરપ્રકૃતિર્ગ્રાહ્યા । નાસ્તિ=નૈવ વર્તતે તસ્ય
સર્વજ્ઞત્વાત્, ન તસ્ય વ્યપદેશાપેક્ષા, તસ્મિન્નેવ ભવે તસ્ય મોક્ષપ્રાપ્તેઃ ।

તક મુક્તિકે કારણોં કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી તવ તક મુક્તિ નહીં મિલ
સકતી હૈ । મુક્તિકા કારણ રત્નત્રય હૈ । જબ તક જીવ કો ઇન તીનોં કી
પૂર્ણતા પ્રાપ્ત નહીં હોતી તવ તક મુક્તિ કા માર્ગ ઉસકે હાથમેં નહીં આતા ।
મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જબ ઇસ માર્ગ કી પ્રાપ્તિ સે હી રહિત હૈ તવ વહ મુક્તિ
કા લાભ ભી કૈસે કર સકના હૈ ? યહી સર્વજ્ઞ કા ઉપદેશ હૈ । ઇસ સર્વજ્ઞ
કે ઉપદેશ કી ઓર ઉસ કી જરા ભી રુચિ જાગ્રત નહીં હોતી હૈ, યહી
મિથ્યાત્વ કા જોર હૈ । ઇસ જોર સે વહ અપની મનમાની પ્રવૃત્તિ કરને મેં
લગા રહતા હૈ, ઓર ઇસી કી વજહ સે વહ પરિગ્રહ મેં મૂર્છિત હોતા
રહતા હૈ । પરિગ્રહ કે સંગ્રહ કરને મેં ‘ જીવોં કા વિઘાત મેરે દ્વારા હોતા હૈ ’
ઇસકી ઓર ઉસકા લક્ષ્ય હી નહીં જાતા, ઓર અપના સમસ્ત જીવન
અવિરત અવસ્થા મેં હી વ્યતીત કર દેતા હૈ ।

કારણોની પ્રાપ્તિ થતી નવી ત્યાં સુધી મુક્તિ મળી શકતી નથી. મુક્તિનું કારણ
રત્નત્રય છે બ્યાં સુધી જીવને આ ત્રણેની પૂર્ણતા પ્રાપ્ત થતી નથી ત્યાં સુધી
મુક્તિનો માર્ગ તેના હાથમાં આવતો નથી. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ બ્યારે આ માર્ગની
પ્રવૃત્તિથી જ રહિત છે તો પછી તે મુક્તિનો લાભ પણ કેવી રીતે મેળવી શકે
એ જ સર્વજ્ઞનો ઉપદેશ છે. આ સર્વજ્ઞના ઉપદેશ તરફ તેની જરા પણ રૂચિ
નહત નથી થતી તે જ મિથ્યાત્વનું જોર છે. તે જોરથી તે પોતાની મનમાની
પ્રવૃત્તિ કરવામાં લાગ્યો રહે છે, અને તેના પ્રભાવે તે પરિગ્રહમાં પણ મૂર્છિત
થતો રહે છે. પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરવામાં ‘ જીવોનો વિઘાત મારા દ્વારા થાય છે ’
તે તરફ તેનું લક્ષ્ય પણ જતું નથી, અને પોતાનું સમસ્ત જીવન અવિરત અવ-
સ્થામાં જ વ્યતીત કરે છે.

इस सूत्र का सारांश यही है कि मिथ्यादृष्टि जीव सांसारिक विषय भोगों में आसक्त बन कर परिग्रह का संग्रह करता रहता है। इस प्रवृत्ति में उसके द्वारा पट्काय के जीवों का विघात भी होता है परन्तु उसकी वह प्रवृत्ति संयमयुक्त न होनेसे ज्ञानावरण आदि चिक्कण कर्मों के तीव्र अनुभागबंध में और तीव्र स्थितिवंध में प्रधान कारण बनती है, अतः वह मुक्तिसुख के लाभ से वंचित रहता है, इतना ही नहीं प्रत्युत चतुर्गति रूप संसार में नरकनिगोदादि के कष्टों का ही भोक्ता बनता है ॥ सू०७ ॥

नरकनिगोदादि कष्टोंका भोक्ता कौन होता है और कौन नहीं होता है? इसी विषय को फिर से इस सूत्र में अन्वयव्यतिरेकमुग्व से प्रतिपादन करते हैं—“उद्देशो पासगस्स नत्थि” इत्यादि।

देखनेवाले का नाम पश्य है, स्वार्थ में ‘क’ प्रत्यय होने से पश्यक शब्द बन जाता है। पश्य शब्द का जो अर्थ है वही पश्यक का है।

प्रश्न—संसार के संज्ञी और असंज्ञी चतुरिन्द्रियादि जितने भी जीव हैं वे सब देखनेवाले हैं अतः ये भी पश्यक हो जायेगे, परन्तु इस सूत्र में इन पश्यकों का तो ग्रहण किया ही नहीं गया है, क्यों कि “उद्देशः पश्यकस्य नास्ति” इस कथन से उनमें उद्देश का अभाव नहीं है, वहां पर तो यह मनुष्यजातीय है, यह चतुरिन्द्रिय जातीय है, इत्यादि व्यवहार

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે—મિથ્યાદૃષ્ટિ છવ સાસારિક વિષયભોગોમાં આસક્ત બની પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરતો રહે છે આ પ્રવૃત્તિમાં તે ઠાસ પટ્કાય છવોનો ઘાત પણ થાય છે, પરંતુ તેની તે પ્રવૃત્તિ સંયમયુક્ત ન હોવાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ ચિક્કણા કર્મોના તીવ્ર અનુભાગબંધમાં પ્રધાન કારણ બને છે, માટે તે મુક્તિમુખના લાભથી વંચિત રહે છે, આટલું જ નહિ પ્રત્યુત ચતુર્ગતિરૂપ મંસારમાં નરકનિગોદાદિના કષ્ટોનો પણ ભોક્તા બને છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

નરકનિગોદાદિ કષ્ટોનો ભોક્તા કોણ બને છે? અને કોણ બનતા નથી? તે વિષયને ફરીથી આ સૂત્રમાં અન્વયવ્યતિરેકમુખથી પ્રતિપાદન કરે છે—“ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ

દેખવાવાળાનું નામ પશ્ય છે સ્વાર્થમાં ‘ક’ પ્રત્યય હોવાથી પશ્યક શબ્દ બને છે, પશ્ય શબ્દનો જે અર્થ છે તેજ પશ્યકનો છે.

પ્રશ્ન—સંસારના સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞી ચતુરિન્દ્રિયાદિ જેટલા પણ છવ છે તે બધા દેખવાવાળા છે માટે તે પણ પશ્યક થઈ જશે પરંતુ આ સૂત્રમાં આ પશ્યકોનો તો ગ્રહણ કરવામાં આવેલ નથી, કારણ કે “ઉદ્દેશ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” આ કથનથી તેમાં ઉદ્દેશનો અભાવ નથી, તે જગ્યોએ તો એ મનુષ્યજાતીય છે,

હોતા હી હૈ । ઉદ્દેશ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ—“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ, નર-કાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” યહ નારકી હૈ, અર્થાત્ યહ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ હૈ, ઇત્યાદિ વ્યવહાર કો હી ઉદ્દેશ કહા હૈ । ઇસ ઉદ્દેશ કા અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોં મેં નહીં આતા હૈ, અતઃ “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહાં પર પહિલે યહ જો કહા ગયા હૈ કિ—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં આસક્ત બન કર ષટ્કાય કે જીવોં કે ઉપમર્દન કરનેવાલા હોને સે જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંકા બંધ કર નરકનિગોદાદિ ગતિયોં કે અનન્ત દુઃખોં કા ભોક્તા બનતા હૈ, પરન્તુ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત નહીં હૈં વે ષટ્કાય કે જીવોં કે રક્ષક હોને સે કર્મોં કે બંધ કરનેવાલે નહીં હોતે, ઓર ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાન કો પાકર મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં, એસે જીવ હી યહાં પશ્યક શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે હૈં । વે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ હૈં । જવ તક વે મુક્તિ નહીં પ્રાપ્ત કર લેતે તવ તક નામ કર્મ કી કુછ પ્રકૃતિયોં કા સદ્ભાવ હોને સે અનમેં ભી મનુષ્યપર્યાય વિશિષ્ટ આદિ કા વ્યવહાર હોતા હી હૈ, પરન્તુ ભવિષ્ય મેં અસ પ્રકાર કા વ્યવહાર અનમેં સર્વથા નહીં હોનેવાલા હૈ, ઇસ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનય કી

એ ચતુરિન્દ્રિયજ્ઞાતીય છે, ઇત્યાદિ વ્યવહાર થાય જ છે ઉદ્દેશશબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ “ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશ-નરકાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” આ નારકી છે અર્થાત્ એ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ છે, ઇત્યાદિ વ્યવહારને જ ઉદ્દેશ કહ્યો છે આ ઉદ્દેશનો અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોમાં આવતો નથી, માટે “ઉદ્દેશ-પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—આ જગ્યાએ પહેલાં એ કહેવામાં આવેલ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં આસક્ત બની ષટ્કાય જીવોના ઉપમર્દન કરવાવાળા હોવાથી જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોના બંધ કરી નરકનિગોદાદિ ગતિયોના અનંત દુઃખોના ભોક્તા બને છે, પરંતુ જે પરિગ્રહમાં આસક્ત નથી તે ષટ્કાય જીવોના રક્ષક હોવાથી કર્મોના બંધ કરવાવાળા નથી બનતા, અને ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાનને મેળવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. એવા જીવ જ અહીં પશ્યક શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. તે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ છે જ્યાં સુધી તે મુક્તિ પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી નામકર્મની થોડી પ્રકૃતિયોનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયવિશિષ્ટ આદિનો વ્યવહાર થાય છે, પરંતુ ભવિષ્યમાં તે પ્રકારનો વ્યવહાર તેમાં સર્વથા નહિ બનવાવાળો છે. આ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાથી

અપેક્ષા સે યહાં પર ખી “પશ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પશ્યક કો ઉદ્દેશ નહીં હૈ, યહ કથન સુસંગત સમજના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—કૈસે જાના જાતા હૈ કિ—અનમ્ આગે ચલકર સમસ્ત અવ-
શિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયાં સર્વથા ક્ષય હો જાનેવાલી હૈ? પ્રત્યક્ષ સે તો
યહ વાત જ્ઞાત હો નહીં સકતી, કયોં કિ પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થ
કો હી ગ્રહણ કરતા હૈ । અસ પ્રકાર કી પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો હૈ
નહીં । અનુમાન ખી ઇસ વિષય કો નહીં જાન સકતા, કયોં કિ તદવિના-
ભાવી કોઈ ખી એસા હેતુ નહીં હૈ જો ઇસ વાત કા અનુમાપક હો, જિસકે
વિના જો ન હો અસકો અવિનાભાવી કહતે હૈ ।

અત્તર—યહ તો હમ ખી માનતે હૈ કિ—ચક્ષુરાદિદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાન
રૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) ઇસ પ્રકાર કી અવસ્થાકો નહીં જાન
સકતા, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણ સે ઇસ વાત કી સિદ્ધિ હોતી હૈ કિ—અવ-
શિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા વહાં પર સર્વથા ક્ષય હોગા । યહ કૈસે
કહા કિ તદવિનાભાવી હેતુ વહાં પર નહીં હૈ । “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્”
અર્થાત્ “વે સર્વજ્ઞ હૈ” યહી તદવિનાભાવી હેતુ હૈ । જિસ પ્રકાર ધૂમ
વહ્નિ કા અવિનાભાવી હેતુ હૈ અસી પ્રકાર ઘાનિયા કર્મોં કે અભાવ સે ઉત્પન્ન

તે જ્યોએ પણ “પશ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પશ્યકને ઉદ્દેશ નથી, એ કથન
સુસંગત સમજવું જોઈએ

પ્રશ્ન—કેવી રીતે જાણવામા આવે કે તેમા આગળ સમસ્ત અવશિષ્ટ
નામકર્મની પ્રકૃતિયો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાવાળી છે? પ્રત્યક્ષથી તો એ વાત જાત
થઈ શકતી નથી, કારણ કે પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થને જ ગ્રહણ કરે
છે. તેવા પ્રકારની પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો છે નહિ. અનુમાનથી પણ આ
વિષયને જાણી શકાતો નથી, કારણ કે તદવિનાભાવી કોઈ પણ એવો હેતુ
નથી જે આ વાતનો અનુમાપક હોય. જેના વિના જે ન હોય તેને અવિના-
ભાવી કહે છે.

અત્તર—એ તો અમે પણ માનીએ છીએ કે—ચક્ષુરાદિદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનરૂપ
પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) આ પ્રકારની અવસ્થાને જાણી શકતા નથી, પરંતુ
અનુમાનપ્રમાણથી આ વાતની સિદ્ધિ થાય છે કે—અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃ-
તિઓનો ત્યાં સર્વથા ક્ષય થશે. એમ કેમ કહેવાય કે તદવિનાભાવી હેતુ ત્યાં
નથી. “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “તે સર્વજ્ઞ છે” એજ તદવિનાભાવી
હેતુ છે, જેવી રીતે ધુમાડો આગનો અવિનાભાવી હેતુ છે, તેવી રીતે

સર્વજ્ઞ અવસ્થા મી શેષ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ભવિષ્ય મેં વહાં વિલય-
હોનેરૂપ સાધ્ય કી સિદ્ધિ કરાને મેં અવિનાભાવી હેતુ હૈ અતઃ ઇસ અવિના-
ભાવી હેતુ સે વહાં પર સાધ્યકી સિદ્ધિ હોને મેં કોઈ મી વાધા નહીં આતી ।

પ્રશ્ન—અપને સાધ્ય કો સિદ્ધ કરને મેં હેતુ કી સિદ્ધિ પ્રધાન માની
જાતી હૈ । જિસ સાધ્ય કા હેતુ સિદ્ધ નહીં હોતા વહ અપને સાધ્યકી સિદ્ધિ
નહીં કર સકતા । સાધ્ય અસિદ્ધ હોતા હૈ, હેતુ તો સિદ્ધ હોના ચાહિયે ।

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ હી હૈ—અસિદ્ધ નહીં, ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય ઓર ઉનકી અનન્તાનન્તપર્યાયોં કો હસ્તામલકવત્
એકકાલાવચ્છેદેન (એક કાલમેં) જાનનેવાલા હોને સે તીર્થકરાદિ પ્રભુ
સર્વજ્ઞ હૈં । જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મોં કે સર્વથા વિનષ્ટ હોને સે
ઉન્હોંને અપની જીવન્મુક્ત અવસ્થા મેં કેવલજ્ઞાનરૂપી સૂર્ય કો પ્રાપ્ત કરલિયા
હૈ । ઇસ પ્રશસ્તતમ ઓર અસાધારણ જ્ઞાન કે દ્વારા હી યે વિશ્વ કે સમસ્ત
પદાર્થસાર્થકો જાનતે રહતે હૈં । ઇનકા જ્ઞાન સમસ્ત પદાર્થોં કા જ્ઞાતા હૈ, યહ
વાત અનુમાન પ્રમાણ સે સિદ્ધ હોતી હૈ, ક્યોં કિ જવ છદ્મસ્થ જીવોં
કે જ્ઞાનગુણ મેં જાનને કી હીનાધિકતા પાઈ જાતી હૈ તો ઉસસે યહ વાત

ઘાતિયા કર્મોના અભાવથી ઉત્પન્ન સર્વજ્ઞ અવસ્થા પણ શેષ નામકર્મની પ્રકૃતિ-
યોના ભવિષ્યમા ત્યાં વિલયહોવારૂપ સાધ્યની સિદ્ધિ કરાવવામાં અવિનાભાવી
હેતુ છે માટે આ અવિનાભાવી હેતુથી ત્યાં સાધ્યની સિદ્ધિ થવામાં કોઈ અડ-
ચણ આવતી નથી

પ્રશ્ન—પોતાના સાધ્યને સિદ્ધ કરવામાં હેતુની સિદ્ધિ પ્રધાન માનવામાં
આવે છે જે સાધ્યનો હેતુ સિદ્ધ થતો નથી ને પોતાના સાધ્યની સિદ્ધિ કરી
શકતો નથી સાધ્ય અસિદ્ધ થાય છે, હેતુ તો સિદ્ધ થવો જોઈએ

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ જ છે અસિદ્ધ નહિ ભૂત ભવિષ્યત્ અને વર્તમાન
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેની અનન્તાનન્ત પર્યાયોને હસ્તામલકવત્
એકકાલાવચ્છેદેન (એક કાળમા) જાણવાવાળા હોવાથી તીર્થકરાદિ પ્રભુ સર્વજ્ઞ
છે. જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો સર્વથા વિનષ્ટ થવાથી તેને પોતાની
જીવનમુક્ત અવસ્થામાં કેવળજ્ઞાનરૂપી સૂર્યને પ્રાપ્ત કરેલ છે આ પ્રશસ્તતમ અને
અસાધારણ જ્ઞાનદ્વારા વિશ્વના સમસ્ત પદાર્થોને જાણતા રહે છે. તેનું જ્ઞાન સમસ્ત
પદાર્થોનું જ્ઞાતા છે. એ વાત અનુમાન પ્રમાણથી સિદ્ધ થાય છે કારણ કેન્યાયે
છદ્મસ્થ જીવોને જ્ઞાનગુણમાં જાણવાની હીનાધિકતા મેળવી શકાય છે તો તેનાથી

યદ્વા—પઘ્યકસ્ય=સર્વજ્ઞસ્ય ઉદ્દેશઃ=ઉપદેશઃ ‘સુયં મે આઉસં તેજ’—મિત્યાદિઃ ‘તંમિ ઠાણંમિ ચિદ્દુઃ’ इत्यन्तः पूर्वोक्तस्वरूपः, ‘વાલે પુણ નિઠે’ इत्यारभ्य ‘आणाए आराहिया वि भवइ’ इतिपर्यन्तवक्ष्यमाणस्वरूपो वा नास्ति=न तस्य प्रयोजन वर्तत इत्यर्थः, सकललोकालोकपदार्थसार्थस्य हस्तामलकवत्केवलालोकविषयीभूतत्वात्। कं प्रत्युपदेशः? इत्याह—‘वालः’ इत्यादि। यः पुनः वालः=परिग्रह-गृहो ज्ञानक्रियाविकलः, स्निह्यते इति स्निहः=विषयानुरागी, कामसमनुज्ञः—कामान भी सिद्ध होती है कि एक ज्ञान ऐसा भी है कि जहां पर त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थों का अवलोकन-ज्ञान युगपत् होता है। जिस प्रकार परिमाण की तरलमत्ता आकाश में अनन्त हो कर ठहर जाती है इसी प्रकार ज्ञान की अनन्तता भी इनमें स्थित होकर अपना स्थान प्राप्त करती है। संसार में अनन्त पदार्थ हैं, उनमें कई सूक्ष्म हैं, कई बाहर हैं, कई अन्तरित हैं, कई अनन्तरित हैं, कई निकट हैं, कई दूर हैं। इन सब का यथार्थ रूप से प्रतिपादन करना बिना सर्वज्ञता के नहीं हो सकता, और इन अनन्त पदार्थों को जाननेवाला ज्ञान भी अनन्त ही होता है। जैनशास्त्र में ऐसे ज्ञान को ही केवलज्ञान कहा है, और इस ज्ञानसंपन्न आत्मा को सर्वज्ञ कहा है।

यह व्याख्या “नरक निगोदादि पर्यायों के दुःख सर्वज्ञ नहीं प्राप्त करते? तथा वे इस प्रकार के व्यपदेश से रहित होते हैं?” इस प्रकार के व्यतिरेकमुग्वसे की गई है। अब उद्देश की समाप्ति करते हुए सूत्रकार अन्वयमुग्व से व्याख्या करते हैं—

તે તાત ચિદ્ધ થાય છે કે એક જ્ઞાન એવું પણ છે કે જ્યાં ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોનું અવલોકન-જ્ઞાન યુગપત્ થાય છે. જે પ્રકારે પરિણામની તરતમતા આકાશમાં અનન્ત બનીને અટકી જાય છે તે પ્રકારે જ્ઞાનની અનન્તતા પણ તેમાં સ્થિત બનીને પોતાનું સ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે. સમારમાં અનંત પદાર્થ છે, તેમાં કેટલું સૂક્ષ્મ છે, કેટલું બાહર છે, કેટલું અન્તરિત છે, કેટલું અનન્તરિત છે, કેટલું નિકટ છે, કેટલું દૂર છે. આ બધાનું યથાર્થરૂપથી પ્રતિપાદન કરવું સર્વજ્ઞતા વિના બની શકતું નથી, અને આ અનન્ત પદાર્થોને બાણવાણી જ્ઞાન પણ અનન્ત જ થાય છે. જૈનશાસ્ત્રમાં તેવા જ્ઞાનને જ કેવળજ્ઞાન કહે છે, અને આ જ્ઞાનસંપન્ન આત્માને સર્વજ્ઞ કહે છે.

આ વ્યાખ્યા “નરકનિગોદાદિ પર્યાયોના હુગ્મ સર્વજ્ઞ નથી પ્રાપ્ત કરતાં? તથા તે આ પ્રકારના વ્યપદેશથી રહિત હોય છે?” આ પ્રકારે વ્યતિરેકમુખથી કહેવામાં આવેલ છે. હવે ઉદ્દેશની સમાપ્તિ કરતાં સૂત્રકાર અન્વયમુખથી વ્યાખ્યા કરે છે—

=સ્પૃહા-મદનરૂપાન્ સમ્=સમ્યક્, અનુ=અનુકૂલં જાનાતીતિ કામસમનુજઃ=કામ-
ગુણાનુમોદકઃ, અત એવ અશમિતદુઃખઃ-અશમિતમ્=અક્ષીણં દુઃખમ્=અલબ્ધલાભાય
લબ્ધપરિરક્ષણાય ચ વ્યગ્રતયા નિરન્તરચિન્તનરૂપં યસ્ય સોઽશમિતદુઃખઃ=વિષય-
કપાયાસક્તત્વેન નિતાન્તઃક્રાન્તસ્વાન્તઃ, અત એવ દુઃખી=શારીરિક-માનસિક-પીડા-
પીડિતઃ, દુઃખાનામ્=પૈહિક-પારત્રિક-નાનાવિધાનામેવ, આવર્ત=સંસારચક્રમ્-

“બાલે પુણ ણિહે” ઇત્યાદિ। “સુયં મે આઝસં તેણં” યહાં સે લેકર
“તંમિ ઠાણંમિ ચિટ્ટહ” યહાં તક કા પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાલા ઉપદેશ તથા
“બાલે પુણ ણિહે” યહાં સે લેકર “આણાણ આરાહિયા વિ ભવહ” યહાં
તક વક્ષ્યમાણ-આગે કહા જાનેવાલા-ઉપદેશ સર્વજ્ઞની અપેક્ષા સે
નહીં કહા ગયા હૈ। ક્યોં કિ વે કૃતકૃત્ય હૈ, ઉન્હેં કિસીં મી વસ્તુસે
પ્રયોજન નહીં રહા હૈ, કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોનેસે વે સમસ્ત પદાર્થોં કો
હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાનતે હૈ, અતઃ યહ ઉપદેશ બાલજીવોંની
અપેક્ષા સે હૈ। બાલ જીવ વે હૈં જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત હૈ, જ્ઞાનક્રિયા સે
વિકલ હૈ, વિષયાનુરાગી હૈ, કામગુણોંકે અનુમોદક હૈ, અલબ્ધ કો પ્રાપ્ત
કરને કે લિયે તથા લબ્ધની રક્ષા કરને કે લિયે જો વ્યગ્રચિત્ત હોને સે સદા
ચિંતાશીલ બને રહતે હૈ, વિષયકષાયોં મેં આસક્ત હોનેની વજહ સે
જિનકા અન્તઃકરણ અત્યન્ત દુઃખિત હોના રહતા હૈ। હસ લિયે જો રાત-
દિન શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોંકા અનુભવ કિયા કરતે હૈ તથા

‘બાલે પુણ ણિહે’ ઇત્યાદિ. ‘સુયં મે આઝસં તેણં’ અહીંથી લઈ ‘તંમિઠાણં-
મિચિટ્ટહ’ સુધીનો પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાળો ઉપદેશ, તથા “બાલે પુણ ણિહે” અહીંથી
લઈને “આણાણ આરાહિયા વિ ભવહ” અહીં સુધી વક્ષ્યમાણુ-આગળ કહેવામાં
આવનાર-ઉપદેશ આ સર્વજ્ઞની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ નથી, કારણ કે તે
કૃતકૃત્ય છે, તેને કોઈ પણ વસ્તુથી પ્રયોજન રહ્યું નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોવાથી
તે સમસ્ત પદાર્થોંને હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાણે છે માટે આ ઉપદેશ બાલ
જીવોંની અપેક્ષાથી છે. બાલ જીવ તે છે જે પરિગ્રહમાં આસક્ત છે, જ્ઞાનક્રિયાથી
વિકલ છે, વિષયાનુરાગી છે, કામગુણોંના અનુમોદક છે, અલબ્ધને પ્રાપ્ત કરવા,
લબ્ધની રક્ષા કરવા માટે જે વ્યગ્રચિત્ત હોવાથી સદા ચિંતાશીલ બની રહે છે,
વિષયકષાયોંમાં આસક્ત હોવાથી જેનું અતઃકરણ અત્યંત દુઃખિત થતું રહે છે
માટે જે રાત દિન શારીરિક અને માનસિક કષ્ટોંનો અનુભવ કર્યા કરે છે, તથા

અનુપરિવર્તતે=ઘટીયન્ત્રન્યાયેન મુહુર્મુહુઃ પર્યટતિ, યથા જલાવર્તે પતિતસ્તુનાદિસ્ત-
દાવર્તમેવાનુધાવતિ પરાધીનતયા નોન્મજ્જતિ ચ, તથૈવ વિષયૈકતાનચિત્તો વીતરાગો-
પદેશપરાઙ્મુખો ગુરુકર્મા જીવઃ સંસારસાગરસ્ય દુઃસ્વાવર્તનિમગ્નઃ સન્ ન કદાપ્યુ-
દ્ધતો ભવતીતિ ચાલસ્ય સંસારપરિભ્રમણં વિજ્ઞાય તત્કારણપરિગ્રહવિપયાદિષુ શુદ્ધો મા
ભૂદિતિ શિષ્યં પ્રત્યુપદેશતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ વ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુક્ત એવ ॥ મૃ ૮ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય તૃતીયોદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૩ ॥

જિસ પ્રકાર રહટ ધૂમના રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો નાના પ્રકાર કે એહ-
લૌકિક એવં પારલૌકિક દુઃસ્વોંકો ભોગતે હુણ્ ઇસ સંસારચક્રમેં પરિ-
ભ્રમણ કર રહે હૈં ।

એસે ચાલજીવ કિ જિનકા મન વિષયોં મેં લવલીન હો રહા હૈ, વીત-
રાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ સે જો સર્વથા પરાઙ્મુખ હો રહે હૈં, ગુરુકર્મી હૈં, પાની
કે આવર્ત મેં પડે હુણ્ તૃણકી તરહ્ ઇસ સંસારસાગર કે દુઃસ્વરૂપી
આવર્ત મેં નિમગ્ન બન કમીં મી વહાંસે છુટકારા નહીં પા સકતે હૈં । જિસ
તરહ્ પાની કે આવર્ત મેં પડે હુણ્ તૃણકી દશા હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર કી
ઇનકી મી દગા હોતી હૈ । જૈસે વહ તૃણ ઉસસે વાહર નહીં નિકલને પાતા
પ્રત્યુત ઉસમેં ઇધર-ઉધર ચક્કર કાટા કરતા હૈ-કમીં ઉસમેં ઢૂબતા હૈ
ઔર કમીં ઉસી મેં ઝપર તૈર આતા હૈ, ઠીક ઇસી પ્રકાર સે ઇન ચાલ-
જીવોંકા મી ઇસ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારચક્રમેં પરિભ્રમણ હોતા રહતા હૈ ।
એસા સમજ કર સંયમી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સંસારપરિભ્રમણ કા

ને પ્રકાર રેંટ ધુમતો રહે છે તે પ્રકારે ને નાનાપ્રકારના ઐહલૌકિક અને
પારલૌકિક હુ ખોને ભોગવતાં આ સંસારચક્રમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

આવા ખાલ જીવો કે જેના મન વિષયોમાં લવલીન રહે છે, વીતરાગ પ્રભુના
ઉપદેશથી ને સર્વથા પરાઙ્મુખ રહે છે, ગુરુકર્મી છે પાણીમાં પડેલા તૃણ માફક
આ સંસારસાગરના દુઃખરૂપી આવર્તમાં નિમગ્ન બની કોઈ વખત પણ ત્યાંથી
છુટકારો મેળવી શકતા નથી જેવી રીતે પાણીના આવર્તમાં પડેલા તૃણની દશા
થાય છે તે પ્રકારે તેની પણ દશા થાય છે. જેવી રીતે તે તણખડુ તેનાથી બહાર
નીકળી શકતું નથી પણ તેમાં ચક્કર લગાવ્યા કરે છે-કોઈ વખત તેમાં ડુબે
છે તો કોઈ વખત ઉપર તરી આવે છે, ઠીક તે પ્રકારે આ ખાલ જીવોના પણ
ચાર ગતિરૂપ સંસાર ચક્રમાં પરિભ્રમણ થયા કરે છે. એવું સમજીને સંયમી
મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે સંસારપરિભ્રમણનું કારણ ને વિધય અને પરિગ્રહાદિક

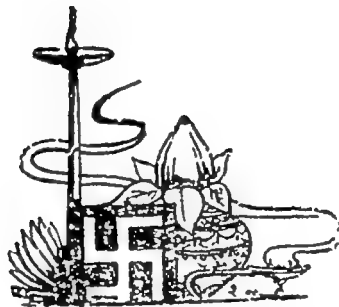
कारण जो विषय और परिग्रहादिक हैं उनमें गृह्य न बने। इस प्रकार से सूत्रकार का शिष्य के प्रति यह उपदेश है। 'ब्रवीमि' इस पद का पहिले के प्रकरणों में अर्थ कहा जा चुका है ॥ सू० ८ ॥

॥ दूसरे अध्ययनका तृतीय उद्देश संपूर्ण ॥



छे तेभां गृह्य न बने, आ प्रकारे सूत्रकारनो शिष्य प्रति आ उपदेश छे, इति ब्रवीमि आ पदनो पडेला प्रकरणोभा अर्थ करवाभां आवेल छे.

॥ भील अध्ययननो त्रीनो उद्देश संपूर्ण २-३ ॥



॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः ॥

तत्र पूर्वस्मिन्नुद्देशे 'उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिर्न कार्यः' इति प्रतिपादितम्, अत्र च 'भोगेष्वभिष्वङ्गो न कार्यः, तत्र रोगस्यावश्यं सद्भावा'—इति दर्शयिष्यते।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—'दुःखी दुःखाणामेव आवष्टं अणुपरिवष्ट' इति, तानि च दुःखानि रोगकारणानि भवन्त्यतो रोगानेव दर्शयति।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का चौथा उद्देश ॥

तृतीय उद्देश का कथन हो चुका; अब चतुर्थ उद्देश का कथन प्रारंभ होता है। तृतीय उद्देश में संयमी मुनि को अपने संयम की रक्षा के लिए उच्च गोत्रमें उत्पत्ति होने का अभिमान आदि नहीं करना चाहिये यह भली भाँति समझा दिया गया है। इस चतुर्थ उद्देश में यह समझाया जायगा कि भोगों में संयमी मुनि के लिये अपने संयम की रक्षा करने के लिये अभिष्वंग-रागपरिणति—नहीं करना चाहिये। क्योंकि "भोग बुरे भवरोग बढ़ावे बैरी हैं जग जी के" इस वाक्यके अनुसार एक तो वे भवरोग बढ़ाते हैं, दूसरे उनके सेवन से अनेक शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं।

इस प्रकरण का "दुःखी दुःखाणामेव आवष्टं अणुपरिवष्ट" इस तृतीय उद्देश के अन्तिम सूत्र से संबंध है, इसलिये सूत्रकार उन्हीं रोगों का यहां पर वर्णन करेंगे, क्योंकि दुःख रोग के कारण हुआ करते हैं।

आचारांगसूत्रना णीन अध्थयनने चोथो उद्देश.

त्रीन उद्देशनुं कथन समाप्त थयुं. डवे चोथा उद्देशने प्रारंभ थाय छे, त्रीन उद्देशमां संयमी मुनिअे पोताना संयमनी रक्षा भाटे उच्च गोत्रमां उत्पत्ति थवाने कारखे अभिमान आदि नहि करवुं लेछअे, अे सारी रीते समन्तवी देवामां आवेख छे आ चतुर्थ उद्देशमां अे समन्तववामां आवशे डे—लोगोमां संयमी मुनिअे पोताना संयमनी रक्षा भाटे अभिष्वंग-रागपरिणति नहि करवी लेछअे, कारखे डे "भोग बुरे भवरोग बढ़ावे बैरी हैं जगजी के" आ वाक्य अनुसार अेक तो ते लवरोग वढावे छे, णीनुं तेना सेवनथी अनेक शारीरिक रोग पखे उत्पन्न थाय छे

आ प्रकरणना "दुःखी दुःखाणामेव आवष्टं अणुपरिवष्ट" उद्देशना अन्तिम सूत्रथी संबंध छे भाटे करखे, कारखे डे रोगोना कारखधी दुःख

अणुपरिवष्ट
रोगोना

लीन
न

કામભોગસેવનાદાસક્તિઃ, તથા ચાર્તરૌદ્રધ્યાનં, તતશ્ચ કર્મરજઃસમુપાર્જનમ્, તેન ચાત્મમાલિન્યં ભવતિ, તતો જ્ઞાનાદિગુણપ્રણાશઃ, તેનોન્માર્ગપ્રવૃત્તિઃ, તથા ચૈહિક-પારત્રિકદુઃસ્વાનિ જાયન્તે, દુઃસ્વાનિ ચ રોગાદિના ભવન્તિ, તત્ર દુઃસ્વહેતૂન્ રોગાનુપદર્શયતિ—‘ તઓ સે ’ ઇત્યાદિ ।

કામભોગોં કે સેવન સે જીવકી ઉસમેં આસક્તિ વઢતી હૈ । આસક્તિ સે આર્ત્ત ઓર રૌદ્રધ્યાન ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈં । ઉન ધ્યાનોં સે જીવ અશુ-ભકર્મપરમાણુઓં કા વંધ કરતા હૈ । ઉસસે આત્મા મેં મલિનતા આતી હૈ । મલિનતા કે સંબંધ સે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા આવરણ હોને સે જીવોં કી ઉન્માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે જીવ ઇહલોક ઓર પરલોક-સંબંધી અનંત યાતનાઓં કો ભોગતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરંપરા-સંબંધ સે કામભોગસેવન તથા ઉસ વિષય કી આસક્તિ જીવકો અનેક અનન્ત કષ્ટોં કો દેનેવાલી હોતી હૈ । પરલોકસંબંધી દુઃસ્વ જીવોં કો અશુભ કર્મોદય સે પ્રાપ્ત હોતા હૈ । વહાં પર ભી અનેક પ્રકાર કે શારીરિક તથા માનસિક દુઃસ્વ ઇસ જીવ કો ફેલને પડતે હૈં ।

ઇસલોકસંબંધી દુઃસ્વોં કી ભી યહી પરિસ્થિતિ હૈ, ફિર ભી વ્યવહારી જીવોં કી દૃષ્ટિમેં દુઃસ્વાદિક રોગાધીન હોતે હૈં; ઇસ અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ઉન દુઃસ્વોં કે કારણભૂત રોગોં કા વર્ણન કરતે હુએ કહતે હૈં—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ ।

કામભોગોના સેવનથી જીવની તેમાં આસક્તિ વધે છે. આસક્તિથી આર્ત્ત અને રૌદ્ર ધ્યાન ઉત્પન્ન થાય છે. તે ધ્યાનોથી જીવ અશુભ કર્મ પરમાણુઓનો બંધ કરે છે, તેથી આત્મામાં મલિનતા આવે છે. મલિનતાના સંબંધથી જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ હોવાથી જીવોની ઉન્માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જીવ આલોક અને પરલોક સંબંધી યાતનાઓને ભોગવે છે. આ પ્રકાર પરંપરાસંબંધથી કામભોગસેવન, તથા તે વિષયની આસક્તિ જીવને અનેક અનંત કષ્ટોને દેવાવાળી હોય છે પરલોકસંબંધી દુઃખ જીવોને અશુભ કર્મોદયથી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાં પણ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક દુઃખ આ જીવને ભોગવવા પડે છે.

આલોકસંબંધી દુઃખોની પણ એ જ પરિસ્થિતિ છે તો પણ વ્યવહારી જીવોની દૃષ્ટિમાં હુ બાહ્યિક રોગાધીન થાય છે. આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ દુઃખોના કારણભૂત રોગોના વર્ણન કરતાં કહે છે—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ.

॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः ॥

तत्र पूर्वस्मिन्नुद्देशे 'उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिर्न कार्यः' इति प्रतिपादितम्, अत्र च 'भोगेष्वभिष्वङ्गो न कार्यः, तत्र रोगस्यावश्यं सद्भावा'—इति दर्शयिष्यते।

अत्रान्तरसूत्रसम्बन्धः—'दुःखी दुःखाणमेव आवष्टं अणुपरिवष्ट' इति, तानि च दुःखानि रोगकारणानि भवन्त्यतो रोगानेव दर्शयति।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का चौथा उद्देश ॥

तृतीय उद्देश का कथन हो चुका; अब चतुर्थ उद्देश का कथन प्रारंभ होता है। तृतीय उद्देश में संयमी मुनि को अपने संयम की रक्षा के लिए उच्च गोत्रमें उत्पत्ति होने का अभिमान आदि नहीं करना चाहिये यह भली भाँति समझा दिया गया है। इस चतुर्थ उद्देश में यह समझाया जायगा कि भोगों में संयमी मुनि के लिये अपने संयम की रक्षा करने के लिये अभिष्वंग-रागपरिणति—नहीं करना चाहिये। क्यों कि "भोग बुरे भवरोग बढ़ावें वैरी हैं जग जी के" इस वाक्यके अनुसार एक तो वे भवरोग बढ़ाते हैं, दूसरे उनके सेवन से अनेक शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं।

इस प्रकरण का "दुःखी दुःखाणमेव आवष्टं अणुपरिवष्ट" इस तृतीय उद्देश के अन्तिम सूत्र से संबंध है, इसलिये सूत्रकार उन्हीं रोगों का यहां पर वर्णन करेंगे, क्यों कि दुःख रोग के कारण हुआ करते हैं।

आचारांगसूत्रना पीन अध्द्यननो चोथो उद्देश.

त्रीन उद्देशनुं कथन समाप्त થયું. હવે ચોથા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે, ત્રીન ઉદ્દેશમાં સંયમી મુનિએ પોતાના સંયમની રક્ષા માટે ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિ થવાને કારણે અભિમાન આદિ નહિ કરવું ભેદીએ, એ સારી રીતે સમજાવી દેવામાં આવેલ છે. આ ચતુર્થ ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે—ભોગોમાં સંયમી મુનિએ પોતાના સંયમની રક્ષા માટે અભિષ્વંગ-રાગપરિણતિ નહિ કરવી ભેદીએ, કારણ કે "ભોગ બુરે ભવરોગ વઢાવે વૈરી હૈ જગજી કે" આ વાક્ય અનુસાર એક તો તે ભવરોગ વધારે છે, બીજું તેના સેવનથી અનેક શારીરિક રોગ પણ ઉત્પન્ન થાય છે.

આ પ્રકરણના "દુઃખી દુઃખાણમેવ આવઢં અણુપરિવઢ" આ ત્રીન ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રથી સંબંધ છે માટે સૂત્રકાર તે રોગોના આ ઠેકાણે વર્ણન કરશે, કારણ કે રોગોના કારણથી હું બ થયા કરે છે.

કામભોગસેવનાદાસક્તિઃ, તથા ચાર્તૃરૌદ્રધ્યાનં, તતથ્ચ કર્મરજઃસમુપાર્જનમ્, તેન ચાત્મમાલિન્યં ભવતિ, તતો જ્ઞાનાદિગુણપ્રણાશઃ, તેનોન્માર્ગપ્રવૃત્તિઃ, તથા ચૈદ્ધિક-પારત્રિકદુઃસ્વાનિ જાયન્તે, દુઃસ્વાનિ ચ રોગાદિના ભવન્તિ, તત્ર દુઃસ્વહેતૂન્ રોગાનુપદર્શયતિ—‘ તઓ સે ’ ઇત્યાદિ ।

કામભોગોં કે સેવન સે જીવ કી ઉસમેં આસક્તિ વઢતી હૈ । આસક્તિ સે આર્ત્ત ઔર રૌદ્રધ્યાન ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈં । ઉન ધ્યાનોં સે જીવ અશુ-ભકર્મપરમાણુઓં કા બંધ કરતા હૈ । ઉસસે આત્મા મેં મલિનતા આતી હૈ । મલિનતા કે સંબંધ સે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા આવરણ હોને સે જીવોં કી ઉન્માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે જીવ હહલોક ઔર પરલોક-સંબંધી અનંત યાતનાઓં કો ભોગતા હૈ । હસ પ્રકાર પરંપરા-સંબંધ સે કામભોગસેવન તથા ઉસ વિષય કી આસક્તિ જીવકો અનેક અનન્ત કષ્ટોં કો દેનેવાલી હોતી હૈ । પરલોકસંબંધી દુઃસ્વ જીવોં કો અશુભ કર્મોદય સે પ્રાપ્ત હોતા હૈ । વહાં પર મી અનેક પ્રકાર કે શારીરિક તથા માનસિક દુઃસ્વ હસ જીવ કો ફેલને પડતે હૈં ।

હસલોકસંબંધી દુઃસ્વોં કી મી યહી પરિસ્થિતિ હૈ, ફિર મી વ્યવહારી જીવોં કી દૃષ્ટિમેં દુઃસ્વાદિક રોગાધીન હોતે હૈં; હસ અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ઉન દુઃસ્વોં કે કારણભૂત રોગોં કા વર્ણન કરતે હુઅ કહતે હૈં—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ ।

કામભોગોના સેવનથી જીવની તેમાં આસક્તિ વધે છે. આસક્તિથી આર્ત્ત અને રૌદ્ર ધ્યાન ઉત્પન્ન થાય છે. તે ધ્યાનોથી જીવ અશુભ કર્મ પરમાણુઓનો બંધ કરે છે, તેથી આત્મામાં મલિનતા આવે છે. મલિનતાના સંબંધથી જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ હોવાથી જીવોની ઉન્માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જીવ આલોક અને પરલોક સંબંધી યાતનાઓને ભોગવે છે. આ પ્રકાર પરંપરાસંબંધથી કામભોગસેવન, તથા તે વિષયની આસક્તિ જીવને અનેક અનંત કષ્ટોને દેવાવાળી હોય છે. પરલોકસંબંધી દુઃખ જીવોને અશુભ કર્મોદયથી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાં પણ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક દુઃખ આ જીવને ભોગવવા પડે છે.

આલોકસંબંધી દુઃખોની પણ એ જ પરિસ્થિતિ છે તો પણ વ્યવહારી જીવોની દૃષ્ટિમાં દુઃખાદિક રોગાધીન થાય છે. આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ દુઃખોના કારણભૂત રોગોના વર્ણન કરતાં કહે છે—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ.

હૈ તવ યદ્ વિચારતા હૈ કિ-જવ મૈ નિરોગ હો જાઝંગા તય નિયમ સે નિરન્તર ઇન વિષયાદિકોં કા મનમાફિક સેવન કરુંગા। યદિ મુજે નીરોગતા પ્રાપ્ત કરને મૈં અપના સર્વસ્વ મી અર્પણ કર દેના પડે તો મી કોઈ ચિન્તા કી વાત નહીં। જીવન રહેગા તો ફિર ધન હો જાયગા। ધન હૈ મી કિસ લિયે? યદિ સાંસારિક મૌજ મજા ન દેલી તો ઇસ દ્રવ્ય કી પ્રાપ્તિ સે લાભ હી વ્યા હુઆ? ઇત્યાદિ અનેક પ્રકાર કે સંકલ્પ-વિકલ્પોં સે અશાન્ત-ચિત્ત વન નિરન્તર સંતપ્ત હોતા રહતા હૈ। ઇસ પ્રકાર કી સંતપ્તતા કા કારણ સિર્ફ ઇસ જીવ કી વિષયસંબંધી આસક્તિ હી હૈ। વે સંયમી મુનિ ધન્ય હૈં જો વિષયાદિક સેવન કે કટુકવિપાક કો જાનકર ઇસસે સર્વદા અપની રક્ષા કરતે રહતે હૈં। પરન્તુ જો ઇસકે કટુક વિપાક સે અનભિજ્ઞ બને હુણ હૈં એસે કિતનેક વ્રત્તદત્ત ચક્રવર્તીં જૈસે મનુષ્ય હી ઇસ વિષયજાલ મૈં ફંસ કર અપના ઇહલોક ઔર પરલોક દોનોં કા વિગાડ કર નાના પ્રકાર કે કષ્ટોં કા અનુભવ કરનેવાલે હોતે હૈં। ઇસ લિયે વિષયોં કો દોનોં ભવોં મૈં કષ્ટકારક જાન કર સંયમી મુનિ કો ભોગાસક્તિ સે સર્વદા અપની રક્ષા કરને મૈં સાવધાન રહના ચાહિયે। યહી ઇસ સૂત્ર કા આશય હૈ ॥ સૂ. ૧॥

બાઇશ ત્યારે નિયમથી નિરંતર આ વિષયાદિકોતુ મનમાફક સેવન કરીશ. કદાચ મને નિરોગતા પ્રાપ્ત કરવામાં પોતાનું સર્વસ્વ પણ અર્પણ કરી દેવું પડે તો કોઈ ચિન્તા નહિ, જીવન રહેશે તો પછી કરીથી ધન થાશે. ધન કેના માટે છે? જે સાંસારિક મોજમજા ન કરી તો આ દ્રવ્યની પ્રાપ્તિથી લાભ પણ શો?" ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારના સંકલ્પ વિકલ્પોથી અશાન્તચિત્ત જાની નિરંતર સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, આ પ્રકારની સંતપ્તતાનું કારણ કટુક આ જીવની વિષયસંબંધી આસક્તિ જ છે.

તે સંયમી મુનિ ધન્ય છે જે વિષયાદિકસેવનના કટુક વિપાકને જાણીને તેનાથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરે છે, પરંતુ જે તેના કટુક વિપાકથી અનભિજ્ઞ જાનેલા છે એવા કેટલાક વ્રત્તદત્ત ચક્રવર્તી જેવા મનુષ્ય જ આ વિષયજાળમાં ફસીને પોતાનો આલોક અને પરલોક જાનેને જાગાડીને નાના પ્રકારના કષ્ટોને અનુભવ કરવાવાળા થાય છે વિષયોને જાને લેવામાં કષ્ટકારક જાણીને સંયમી મુનિએ ભોગાન્નક્તિથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરવામાં સાવધાન રહેવું જોઈએ, એ જ આ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય વિનશનશીલતાં દર્શયતિ-‘તિવિહેણ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તિવિહેણ જાઽવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા
વહુયા વા, સે તત્થ ગઢિઢણ ચિઢ્ઢિ મોચણાણ, તઓ સે ઇગયા
વિપરિસિઢ્ઢં સંભૂયં મહોવગરણં ભવઙ્, તં પિ સે ઇગયા દાયાયા
વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે અવહરઙ્, રાયાણો વા સે વિલુંપંતિ,
ળસ્સઙ્ વા સે, વિળસ્સઙ્ વા સે અગારદાહેણ વા સે ડજ્ઙ્ઙઙ્,
ઙય સે પરસ્સ અઢ્ઢાણ કૂરાણિ કમ્માણિ વાલે પકુવ્વમાણે તેણ
દુક્ખેણ વિપ્પરિયાસમુવેઙ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ત્રિવિધેન યાઽપિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવતિ—અલ્પા વા વહુકા વા, સ
તત્ર ગૃહસ્થિષ્ઠતિ મોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા વિપરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ
તદપિ તસ્યૈકદા દાયાદા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્ય હરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા દહ્યતે તદ્,
ઇતિ સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યા-
સમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ત્રિવિધેને’—ત્યાદિ, એતસ્ય વ્યાખ્યા તુ તૃતીયોદ્દેશે પ્રોક્તા । પ્રાગ્
ધનસ્ય નિસ્સારતા પ્રદર્શિતા, અત્ર તુ ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય ક્ષીણમાણતયા તદ-
ભાવાદપિ ન ભોગો ભવિતુમર્હતીતિ દર્શિતમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ભોગ કે સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દિશ્વલાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે
હૈ—“તિવિહેણ જાવિ” ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્રની વ્યાખ્યા તૃતીય ઉદ્દેશ મેં અચ્છી તરહ સે કી જા ચુકી
હૈ । વહાં પર સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રકટ કી હૈ, યહાં પર ભોગ ઔર
ઉપભોગ મેં કામ આનેવાલે સાધનભૂત ધનની અસારતા વતલાઈ ગઈ હૈ;
કારણ કિ સાંસારિક ભોગ ઔર ઉપભોગ કા કારણ ધન હોતા હૈ । ઇસ્કે

ભોગોના સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દેખાડતાં સૂત્રકાર કહે છે—
“તિવિહેણ જાવિ” ઇત્યાદિ.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સારી રીતે આપવામાં આવેલ છે. તે
જગ્યાએ સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રગટ કરેલ છે. આ ઠેકાણે ભોગ અને
ઉપભોગમાં કામ આવવાવાળા સાધનભૂત ધનની અસારતા બતાવવામાં આવેલ છે,
કારણ કે સાંસારિક ભોગ અને ઉપભોગનું કારણ ધન જ છે તેના સદ્ભાવમાં

एवं 'भोगे रोगः' इति प्रोक्तम् । अथ च भोगसाधनं धनमपि नश्वरं ततः किं विधेयमिति दर्शयति—'आसं च' इत्यादि ।

સદાચ મેં જીવ સાંસારિક મૌજ-મજા ભોગને મેં અપની શક્તિ અનુસાર કસર નહીં રચતે; કિન્તુ ભોગ સદા દુઃખદાયી હોતે હૈં । કહા મી હૈ—

ભોગ બુરે ભવ રોગ વઢાવેં, વૈરી હૈં જગ જી કે ।
 વેરસ હોંય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગેં નીકે ॥
 વજ્ર અગનિ વિષ સે વિષધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।
 ધર્મરતન કે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથસહાઈ ॥
 મોહ-ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાનૈ ।
 જ્યોં કોઈ જન શાય ધતુરા, સો સવ કંચન માનૈ ॥
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ઢંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥

उन भोगों की आशा से बाल अज्ञानी जीव प्राणातिपातादिक अनेक प्रकार के क्रूर कर्मों को करता हुआ विपरीतपने को प्राप्त होता है, अर्थात् मोक्षमार्ग से विमुख हो जाता है ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार जब भोग में रोग है और भोग का साधनभूत धन विनश्वर है तब क्या करना चाहिये ? इसका प्रत्युत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—“आसं च” इत्यादि ।

હવે સાંસારિક ભોગ-મળ ભોગવવામાં પોતાની શક્તિ અનુસાર કસર રાખતા નથી પણ ભોગ સદા દુઃખદાયી થાય છે. કહું પણ છે—

“ભોગ બુરે ભવ રોગ વઢાવેં, વૈરી હૈ જગજીકે ।
 વેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગેં નીકે ॥
 વજ્ર અગનિ વિષસે વિષધર સે. યે અધિકે દુઃખદાઈ ।
 ધર્મરતનકે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથમહાઈ ॥
 મોહ ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાનૈ ।
 જ્યોં કોઈ જન શાય ધતુરા, સો સવ કંચન માનૈ ॥
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ઢંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥”

આવા ભોગોની આશાથી બાલ અજ્ઞાની હવે પ્રાણાતિપાતાદિક અનેક પ્રકારનાં ક્રૂર કર્મો કરીને વિપરીતપણાને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ મોક્ષમાર્ગથી વિમુખ થાય છે. ॥ સૂ० ૨ ॥

આ પ્રકારે ત્યારે ભોગમાં રોગ છે. અને ભોગના સાધનભૂત ધન વિનશ્વર છે. ત્યારે શું કરવું બેધર્મ ? તેનો પ્રત્યુત્તર આપતાં સૂત્રકાર કહે છે—“આસં ચ” ઇત્યાદિ.

મૂલમ—આસં ચ હંદં ચ વિગિંચ ધીરે, તુમં ચેવ તં સહ-
માહદુ, જેણ સિયાતેણ નો સિયા, ઇણમેવ નાવબુજ્ઞંતિ જે જણા
મોહપાડા, થીલોમપદ્ધિયે તે મો વયંતિ ઇયાઈં આયત-
ણાઈં, સો દુઃસ્વાય મોહાય મારાય નરગાય નરગતિરિક્ષાય
સયયં મૂઢે ધમ્મં નામિજાણઈં ઉદાહુ વીરે, અપ્પમાઓ મહામોહે,
અલં કુસલસ્સ પમાણં સંતિ સરણં સંપેહાય મિદુરધમ્મં
સંપેહાય નાલં પાસ અલં તે ઇણહિં ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—આણં ચ હન્દસ્થ વેવિક્ષ્વ ધીર ! ત્વમેવ તત્ શલ્યમાહત્ય યેન સ્યાત્
તેન નો સ્યાત્, ઇદમેવ નાવબુદ્ધ્યન્તે યે જના મોહપ્રાટ્ટતાઃ, સ્ત્રીલોરુપવ્યથિતઃ,
તે મો વદન્તિ, એતાન્યાયતનાનિ, તત્ (તેણં) દુઃસ્વાય મોહાય મારાય નરકાય
નરકાત્, તિરસ્થે, સતતં મૂઢો ધર્મં નામિજાનાતિ, ઉદાહ વીરઃ, અપ્રમાદો મહામોહે અલં
કુશલસ્ય પ્રમાદેન શાન્તિમરણં સંપ્રેક્ષ્ય મિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પઠ્યાલં તે એતૈઃ ॥મૂ. ૩॥

ટીકા—‘આણં ચે’ત્યાદિ । હે ધીર ! ધિયા=ચારિત્રારાધનરૂપયા મત્યા
રાજત ઇતિ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! =હે સંયમિન્ ! યદ્વા-ધિયં=બુદ્ધિમ્
ઈરયતિ=પ્રેરયતિ પરીપહોપસર્ગવિજયાર્થં યઃ સ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! હે
સંયમિન્ ! અથવા હે પરીપહોપસર્ગૈરક્ષોમ્ય ! આણં=શબ્દાદિવિષયસ્પૃહાં,
હન્દઃ=ભોગસ્યાભિપ્રાયં ચ વેવિક્ષ્વ=પૃથક્કુરુ-પરિત્યજેત્યર્થઃ । હે શિષ્ય ! ત્વમેવ

ચારિત્ર કો આરાધન કરનેવાળી બુદ્ધિ સે જો શોભિત હોતા હૈ
અથવા પરીપહુ ઔર ઉપસર્ગ કો જીતને કે લિયે જો બુદ્ધિ કો પ્રેરિત
કરતા હૈ યહાં ઉસકા નામ ધીર હૈ । સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈં કિ-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરીપહુ ઔર ઉપસર્ગ કો જીતને-
વાલે શિષ્ય ! તુમ શબ્દાદિ વિષય કી ઇચ્છા ઔર ભોગ કી ચાહના કો
અપને સે પૃથક્કુ કરો-છોડો; કારણ કિ વ્રતી કા લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”
શલ્યરહિત હોના વતલાયા હૈ । સંયમ કો લેકર ઓ જો શબ્દાદિવિષયો

આશિત્રતું આરાધન કરવાવાળી બુદ્ધિથી જે શોભિત થાય છે, અથવા પરિ-
પહ અને ઉપસર્ગને છૂતવા માટે જે બુદ્ધિને પ્રેરિત કરે છે, આ કેશણે તેનું નામ
ધીર છે સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરિપહ
અને ઉપસર્ગને છૂતવાવાળા શિષ્ય ! તમે શબ્દાદિ વિષયની ઇચ્છા અને ભોગની
ચાહનાઓને તમારાથી દૂર કરો-છોડો, કારણ કે-વ્રતીના લક્ષણ “નિશલ્યો વ્રતી”
શલ્યરહિત થવું જતાવેલ છે. સંયમને લઇને પણ જે શબ્દાદિ વિષયને ભોગ-

કે ભોગને કીં ચાહના કે વશવર્તી બના રહતા હૈં વહ દંભકા સેવન કરનેવાલા હૈં । વે શબ્દાદિવિષયોંકો ન બીં ભોગતે હોં તો બીં ઉનકી પરિણતિ તન્દુલમત્સ્ય કે સમ્માન ઉસ ઓર લાલસાવાલી હોને સે સંયમ કા નાશ કરનેવાલી માની ગઈ હૈં । સંયમ કો મૂલ સે નાશ કરનેવાલા શલ્ય હૈં । માયાશલ્ય કે સદ્ભાવ સે હીં અવ્રત બીં વ્રત જૈસે માલૂમ પડતે હૈં । અતઃ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! તૂં ઇસ શલ્ય કો દૂર કર, વ્યર્થ ક્યોં ઇસકે ફંદે મેં પડકર અપને કો દુઃખી બના રહા હૈં । દૂસરે ચાહેકુછ બીં કરતે હોં યહ તુઝે નહીં દેખના હૈં, તૂં અપની હીં ઓર દેખ “નું તામં રે સંભાલ તને વીજાની શી પડી” તૂં ક્યા કર રહા હૈં ? ઇસીં લિયે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” ઇસ પદ પર જોર દેકર શિષ્ય સે કહ રહે હૈં ।

અથવા-શલ્ય શબ્દકા અર્થ-અષ્ટવિધ કર્મ બીં હૈં, યહ પહિલે બત-લાયા જા ચુકા હૈં કિ-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરને સે સંવર તો હોતા હીં હૈં પરન્તુ સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા બીં હોતી હૈં । ચારિત્રારાધન કે દ્વારા આત્મા ડ્યોં ૨ અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય, ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈં ત્યોં ૨ ઇસ આત્મા મેં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈં । ઇસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા કર્મોંકા ક્રમશઃ નાશ કરતા હુઆ આગે ૨ કે ગુણ-

વવાની આડનાને વશવર્તી બની રહે છે, તે શબ્દાદિ વિષયોને ભલે નહિ ભોગવતા હોય તો પણ તેની પરિણતિ તંદુલમત્સ્યસમ્માન તે તરફ લાલસાવાળી હોવાથી સંયમનો નાશ કરવાવાળી માનવામાં આવે છે. સંયમને મૂળથી નાશ કરવાવાળા શલ્ય છે. માયાશલ્યના સદ્ભાવથી અવ્રત પણ વ્રત જેવા માલુમ પડે છે માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-હે શિષ્ય ! તું આ શલ્યને દૂર કર, વ્યર્થ શા માટે તેના ફંદામાં પડીને પોતાને દુઃખી બનાવે છે ? બીજા ભલે કોઈ પણ કાર્ય કરતા હોય એ તારે જેવાનું નથી, તું ફક્ત તારી જ તરફ દેખ, “તું તારૂં રે સંભાળ, તને બીજાની શી પડી ?” તુ શું કરી રહ્યો છે ? તે માટે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” આ પદ ઉપર જોર દઈને શિષ્યને કહે છે.

અથવા શલ્ય શબ્દનો અર્થ અષ્ટવિધ કર્મ પણ છે, એ પહેલાં બતાવવામાં આવેલ છે કે-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરવાથી સંવર તો થાય જ છે, પરન્તુ સંચિત કર્મોની નિર્જરા પણ થાય છે. ચારિત્રારાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય, અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતો જાય છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિ થતી જાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિમાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદ્વારા કર્મોનો ક્રમશઃ નાશ કરીને આગળ આગળના શુભસ્થાનોમાં ચઢતો જાય છે. એક સમય એવો

સ્થાનોં મેં ચઢતા ચલા જાતા હૈ । એક સમય એસા મી આતા હૈ કિ જિસમેં
હસ કી આત્યંતિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । હસ પ્રકાર કર્મોચ્છેદ મેં ચારિત્ર કો
સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! નિર્દોષ ચારિત્રારાધન
કર ઔર હન કર્મોં પર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર । વિષય
ભોગોં કી ચાહ સે એસે સુન્દરતમ ચારિત્ર કો વિગાડને કે લિયે ક્યોં
વ્યર્થ મેં ચેષ્ટા કરતા હૈ ? ક્યોં હસે નષ્ટ બ્રષ્ટ કરતા હૈ ? એસા કરને સે
ઉલ્ટે અનન્ત સંસાર વર્ધન કરનેવાલે હન કર્મોંકા બંધન દઢ હી હોગા,
જો તુજે ભવર મેં દુઃખદાતા હોગા । અપને કો દુઃખી કરને મેં તેરા હી
અપરાધ હૈ, હસમેં ઔર કોઈ નિમિત્ત નહીં । હસી વાત કી પુષ્ટિ “ અષ્ટ
વિધં કર્મ વા આહત્ય-પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખમુત્પાદયસિ ” ટીકાકારને
હસ પંક્તિસે કી હૈ । યહ દઢ વિશ્વાસ રખ-જિસ ભોગાદિક કી ચાહના
મેં પડકર તૂં સંયમ જૈસે અમૂલ્ય રત્ન કો કલંકિત કરને મેં સંકોચ નહીં
કરતા હૈ । ક્યા હન ભોગાદિકોં કો ભોગને કી તેરી યહ ભાવના સફલ
હો જાયગી ? । માન લિયા સંયમરત્ન કો વેંચ કર તૂંને ભોગાદિક વસ્તુઓંકો
ચરીદ મી લિયા, પરન્તુ યદિ તેરે પ્રબલ અન્તરાય-ભોગાન્તરાય કા ઉદય
હૈ તો પ્રાપ્ત હુણ હન ભોગાદિકોં કો તૂ નહીં ભોગ સકતા । અથવા સંયમ

પણ આવે છે કે જેમા તેની આત્યંતિક શુદ્ધિ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે કર્મો-
ચ્છેદમાં ચારિત્રને સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત થયેલ છે. માટે હે શિષ્ય ! નિર્દોષ
ચારિત્રારાધન કર, અને એ કર્મો ઉપર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર.
વિષય ભોગોની આહનાથી એવા સુંદરતમ ચારિત્રને બગાડવા શા માટે વ્યર્થ
ચેષ્ટા કરે છે ? શા માટે તેને નષ્ટ બ્રષ્ટ કરે છે ? આવું કરવાથી ઉલ્ટા અનંત
સંસારને વધારવાવાળા તે કર્મોના બંધન દઢ જ થશે, જે તેને ભવભવમાં દુઃખ
દાતા થશે, પોતાને દુઃખી કરવામાં તારોજ અપરાધ છે, તેમાં કોઈ બીજું નિમિત્ત
નથી. આ વાતની પુષ્ટિ “ અષ્ટવિધં કર્મ વા આહત્ય પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખ-
મુત્પાદયસિ ” ટીકાકારે આ પંક્તિથી કહ્યું છે. એ દઢ વિશ્વાસ રાખ, જે ભોગા-
દિકની આહનામા પડીને તું સંયમ જેવા અમૂલ્ય રત્નને કલંકિત કરવામાં સંકોચ
કરતો નથી. શું તે ભોગાદિકોને ભોગવવાની તારી એ ભાવના સફળ થશે ? માની
લ્યે કે-આ સંયમરત્નને વેચીને તે ભોગાદિક વસ્તુઓને ખરીદી લીધી, પરંતુ
કદાચ તારા પ્રબળ અતરાય-ભોગાન્તરાયનો ઉદય હોય તો પ્રાપ્ત થયેલ તે ભોગા-
દિકોને તું ભોગવી શકતો નથી, અથવા સંયમની ઓટમાં બેસીને ભોગાદિકની

નાન્યઃ, શલ્યં=માયાદિરુપમ્ અટ્ટવિધં કર્મ વા આહત્ય=પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃસ્વમુત્પાદયસિ । યતો યેનાર્થાદિના ભોગપ્રાપ્તિઃ સ્યાત્ તેનૈવ કઠાચિન્ત્રો સ્યાત્, અન્તરાય-કર્મપરિણામસ્યાઘટિતઘટનાઘટકત્વાત્ । અન્તરાયકર્મવૈચિત્ર્યમિદં મોહપ્રાટ્ટતા ન જાનન્તીત્યાહ-‘ઇદમેવે’-તિ, ‘મોહપ્રાટ્ટતાઃ’ મોહેન=અજ્ઞાનેન પ્રાટ્ટતાઃ=સમ્યગ્વ-ગુણિતાઃ, અજ્ઞાનતમસાઽઽચ્છાદિતા इत्यर्थः, ये जनाः तीर्थङ्करगणधराज्ञाविराधकाः इदमेव=ભોગસાધનમપ્યભોગસાધનં ભવતીતિ કારણવૈચિત્ર્યમેવ નાવબુધ્યન્તે=ન જાનન્તિ । ભોગાન્તરાયોદયાદજ્ઞાનાન્વા વિપરીતમતયો હેતુવૈચિત્ર્યં ન મન્યન્તે । દૃશ્યતે હિ લોકે ભોગાય સમવહિતોઽપિ કારણકલાપોઽન્તરાયોદયાદનર્થાય ભવતિ ।

કી ઓટ મેં બેઠ કર ભોગાદિક કી ચાહના સે તૂને અન્ય પ્રાણિયોં કો રિઝાકર કિસી દૂસરે વહાને સે ભોગાદિક સામગ્રી કો જુટાને મેં સાધન-ભૂત દ્રવ્યાદિક કા સંગ્રહ ભી કરલિયા તો તુझे यह कैसे विश्वास है कि इस द्रव्यादिक से मुझे उस मनोनुकूल सामग्री का लाभ अवश्य ही जायगा । વિપરીત ભી હો સકતા હૈ, કારણ કિ અઘટિત ઘટના કો ઘટાને મેં પદુ અન્તરાય કર્મ કા ઉદય અમી તેરે બના હુઆ હૈ, ઉસકા જય તક નાશ નહીં હોતા તવ તક ણાળી મનોઽનુકૂલ ભોગાદિકોં કો ભોગને સે સર્વથા અસમર્થ રહના હૈ, યહી વાત “જેણ સિયા તેણ ણો સિયા” ઇન પદોં સે વ્યક્ત કી હૈ । જિસ દ્રવ્યાદિક સાધનસે ભોગપ્રાપ્તિ હોતી હૈ અન્તરાયકે ઉદય હોને પર ઉસી સે ભી સંભવ હૈ કિ ન ભી હો । યહ સવ અન્તરાય કર્મ કી હી વિચિત્રતા હૈ, પરન્તુ જિનકી આત્મા મોહકે ઉદય સે આચ્છાદિત હો રહી હૈ, તથા તીર્થંકર એવં ગણધરાદિકોં કી આજ્ઞા કે વિરાધક હૈં વે અન્તરાયકી ઇસ વિચિત્રતા કો નહીં જાનતે ।

આહનાથી તું અન્ય પ્રાણીઓને રીઝાવી કોઈ બીજા બહાનાથી ભોગાદિક સામગ્રી ભોગવવામાં સાધનભૂત દ્રવ્યાદિકનો મંત્રક પણ કરી દે તો પણ તને એવો વિશ્વાસ કેમ છે કે-આ દ્રવ્યાદિકથી મને તે મનોનુકૂળ સામગ્રીનો લાભ અવશ્ય થઈ જ જશે? વિપરીત પણ બની શકે છે, કારણ કે અઘટિત ઘટનાને ઘટારૂપમાં પદુ અન્તરાય કર્મનો ઉદય હવતુ પણ તારે વિદ્યમાન છે. તેનો બ્યા સુધી નાશ થશે નહિ ત્યાં સુધી પ્રાણી મનોઽનુકૂળ ભોગાદિકોને ભોગવવામાં સર્વથા અસમર્થ રહે છે. આ વાત “જેણ સિયા તેણ ણો સિયા” આ પદોંથી વ્યક્ત કરી છે. જે દ્રવ્યાદિકસાધનથી ભોગપ્રાપ્તિ થાય છે, અંતરાયનો ઉદય થતાં તેનાથી પણ સંભવ છે કે કદાચ ન પણ બને, આ બધી અન્તરાય કર્મની જ વિચિત્રતા છે, પરંતુ જેની આત્મા મોહના ઉદયથી આચ્છાદિત થઈ રહી છે, તથા જે તીર્થંકર અને ગણધરાદિકોની આજ્ઞાના વિરાધક છે તે અન્તરાયની આ વિચિત્રતાને બાણતા નથી.

યથા સ્વભોગાર્થં વિપુલવિભવસમ્પાદિતં સકલજનાશ્ચર્યકારિકારુકલાકલાપનિર્મા-
યિતં સકલેન્દ્રિયસુખાવલમ્બિ-ગગનચુમ્બિ-પ્રાસાદમવલોકિતુમ્પરિતનભાગમુપગતો
ભવનશોભાવલોકનનિમગ્નો ભવનાધિપતિરારોહમાર્ગેણાવતરન્ કર્મવૈચિત્ર્યાત્પાદસ્વ-
લનેન તતો નિપત્ય મૃતિમવાપ । અહો ! પશ્યન્તુ મહામોહમહિમાનમ્ ।

સચ વાત હૈ ભોગાન્તરાય કે ઉદય સે જો અજ્ઞાન સે અન્ધ હો રહે હૈં, એવં
જિનકી મતિ વિપરીત બની હુઈ હૈ વે ઇસ અન્તરાય કી વિચિત્રતા કો
કિ-જો પદાર્થ ભોગસામગ્રી કા સાધન હૈ વહી કાલાન્તર મેં અન્તરાયાદિ
નિમિત્ત કો પાકર ઉસકા સાધન નહીં હોતા હૈ-નહીં માના કરતે હૈં, પરન્તુ
उनकी मान्यता या अमान्यता से कुछ भी नहीं हो सकता है । हम
व्यवहार में यह बात प्रत्यक्ष देखते हैं कि-भोग के लिये एकत्रित किये
गये कारणकलाप-साधन अन्तराय के उदय से अनर्थकारी हो जाते हैं ।

જૈસે કિસી ધનિક વ્યક્તિને અપને ઉપભોગ કરને કે લિયે પૂર્ણ ઉપભોગ
કી સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુન્દર ગગનતલચુમ્બી પ્રાસાદ વહુત
ચતુર કારીગરોં દ્વારા બનવાના પ્રારંભ કિયા । ધીરે ૨ વહ બનકર પૂર્ણ
તૈયાર હો ગયા । મકાનમાલિક ઉસકી શોભા કા નિરીક્ષણ કરને લિયે
વહાં ગયા । સવ સે ઝંચે સ્વળ્લ પર ચઢ કર ઉસને ઉસકી શોભા કા
સર્વાંગનિરીક્ષણ કિયા । પૂર્ણ શોભા સે યુક્ત ઉસે દેસકર વહ આનન્દ
મગ્ન બી હુઆ । કુછ દેર વાદ વહ વહાંસે વાપિસ લોટકર નીચે આને લગા,

સાચી વાત છે કે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી જે અજ્ઞાનથી અધ થઈ રહેલ છે, અને
જેની મતિ વિપરીત બનેલ છે તે આ અંતરાયની વિચિત્રતાને કે-જે પદાર્થ ભોગ
સામગ્રીનું સાધન છે તે કાલાન્તરમાં અંતરાયાદિક નિમિત્તને મેળવી તેનું સાધન
બનતું નથી-માન્યતા પણ નથી, પરંતુ તેની માન્યતા અગર અમાન્યતાથી
કાંઈ પણ બની શકતું નથી. અમે વ્યવહારમાં આ વાત પ્રત્યક્ષ દેખીએ છીએ
કે-ભોગ માટે એકત્રિત કરવામાં આવેલ કારણકલાપ-સાધન અંતરાયના ઉદયથી
અનર્થકારી બની બચે છે.

જેવી રીતે કોઈ ધનિક વ્યક્તિએ પોતાના ઉપભોગને માટે પૂર્ણ
ઉપભોગની સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુન્દર ગગનચુંબી મહેલ ઘણા ચતુર
કારીગરો દ્વારા બનાવવાનો પ્રારંભ કર્યો ધીરે ધીરે તે બનીને પૂર્ણ તૈયાર
બની ગયો મકાનમાલિક તેની શોભાનું નિરીક્ષણ કરવા ત્યાં ગયો. સૌથી
ઉંચા ખડ ઉપર ચડીને તેણે તેની શોભાનું સર્વાંગ નિરીક્ષણ કર્યું પૂર્ણ શોભાથી
યુક્ત તેને દેખીને તે આનંદમગ્ન પણ થયો, ઘોડા વગત પછી તે ત્યાંથી પાછો
ફરીને નીચે આવવા લાગ્યો. પરંતુ વચમાં જ અશુભ ઉદયથી કાંઈ એક સીડીના

મોહનોચે કામપ્રાધાન્યેન સ્ત્રિયાઃ પ્રાધાન્યમિતિ દર્શયતિ—‘સ્ત્રી’-તિ, સ્ત્રીલોકૈઃ= કામિનીજનૈઃ, પ્રવ્યથિતઃ=પ્રકર્ષેણ વ્યથિતઃ=અધીનીકૃતઃ મોગાશાપાગવદ્ઃ સાવ-
ધાનુષ્ટાયાં જનઃ । તે સન્યાનપિ મુદ્ધરુપદેશાદિના સસારાધોગર્તે પાતયન્તીત્યાહ
—‘તે મો’ ઇત્યાદિ । તે વનિતાવગવર્તિનો વદન્તિ=કથયન્તિ ‘મો’ ઇતિ સંવોધને
હે જનાઃ ! એતાનિ=કામિન્યાદીન્યેવ આયતનાનિ=મોગાધિષ્ઠાનાનિ સુખકારણાની-
ત્યર્થઃ । કામિન્યો દ્વિ કમનીયસુખકારણીભૂતાઃ સકલજગતો લગ્નમરૂપા નિશ્ચિલ-
લોકામન્દાનન્દસન્દોહદાયિન્યો ભવન્તિ, કિં મોગસ્તાભિર્વિના?, ઇત્યાદિ ઘુવન્તિ ।

પરન્તુ વીચ હી મેં અશુભોદય સે કિસી એક સીઢી પર સે ઉસકા પેર
ફિસલ ગયા ઓર વહ વહાં સે નીચે ગિર કર મર ગયા । ઇસ દૃષ્ટાન્ત સે
યહી ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ—જો સામગ્રી મોગ કે નિમિત્ત હોતી હૈ
વહી મોગાન્તરાય કે ઉદય સે કાલાન્તર મેં અનર્થ કે લિયે જીવોં કો હો
જાતી હૈ । પરન્તુ કર્મ કી ચલવત્તા હી કુછ એસી હૈ, જો ઇસ જીવ કો
વાહિરી વસ્તુઓં મેં ઉન્મત્ત બના રહી હૈ ।

इसी मोहनीय के उदयमें भोगों की आशारूपपाश से बंधे
हुए जीवों में काम की प्रधानता होने से वे स्त्रियों के द्वारा व्यथित
किये जाते हैं, अधीन किये जाते हैं । शास्त्रकार कहते हैं कि—ऐसे
जीव “ इतो भ्रष्टस्तनो भ्रष्टः ” हो तो कोई अचरज की बात नहीं
है, परन्तु ये स्वयं बिगड़कर दूसरों को भी बिगाड़ने की बातें करते
हैं, यही एक बड़ा आश्चर्य है । ये दूसरों से यही कहते हैं कि—“ अरे
भाई ! इन स्त्री आदि पदार्थों के सेवन करनेमें ही संसार का सर्व सुख

પગથીયા ઉપરથી તેનો પગ લપટી ગયો; અને તે ત્યાંથી નીચે પડીને મરી ગયો.
આ દાખલાથી એવું તાત્પર્ય નીકળે છે કે—જે સામગ્રી લોગને નિમિત્ત હોય છે
તે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી કાલાન્તરમાં જીવોને અનર્થરૂપ પણ બની બંધ છે.
પરંતુ કર્મની ચલવત્તા જ કોઈ એવી છે કે, જે આ જીવને બહારની વસ્તુઓમાં
ઉન્મત્ત બનાવે છે

આ મોહનીયના ઉદયમાં ભોગોની આશારૂપ પાશથી બંધાયેલા જીવોમાં
કામની પ્રધાનતા હોવાથી તે મિથોદાશ વ્યથિત થયે બંધ છે અધીન થયે બંધ
છે, શાસ્ત્રકાર કહે છે કે—એવો જીવ જો ભ્રષ્ટસ્તનો ભ્રષ્ટ થાય તો કોઈ ગય
સ્વની વાત નથી પરંતુ તે પોતે બગડીને બીજાને પણ બગાડવાની વાતો કરે
છે, એ પણ એક મોટું આશ્ચર્ય છે, તે બીજાઓને એમ કહે છે કે—“ અરે ભાઈ
આ સ્ત્રી આદિ પદાર્થોનું સેવન કરવામાં જ સંસારનું સર્વ સુખ સમાયેલું છે

કિન્તુ નૈવં, પ્રત્યુત દુઃસ્વાદ્યર્થમેવેત્યાહ—‘તદિ’—ત્યાદિ, તેષાં તત્=કામિની-વશવર્તનં તાસાં સુસ્વાયતનકથનં ચોભયમેવ દુઃસ્વાય=એહિકપારત્રિકાઽકલ્યાણાય ભવતિ । એવં સર્વત્ર ચતુર્થ્યન્તે યોજ્યમ્ । અપિ ચ મોહાય=અજ્ઞાનાય । કિં ચ—મારાય=મરણં મારસ્તસ્મૈ ચરમકામદશાર્થમ્, કામસ્ય દશવિધા અવસ્થાઃ સમુત્પદ્યન્તે, તાસુ દશમાવસ્થા મરણાલ્યા ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

સમાયા હૈ, યે હી સુખ કે કારણ હૈં ” । મોહાભિભૂત જીવોં કી દૃષ્ટિ મેં સ્ત્રી હી ઉત્તમ સે ઉત્તમ આનંદ પ્રદાન કરનેવાલી વસ્તુ પ્રતિભાસિત હોતી હૈ । જગત કે અનેક સુન્દર પદાર્થોં સે ભી વહ અધિક સુન્દર ઉન્હેં માલૂમ દેતી હૈ । હસકે વિના સંસાર કા મજા ભી ઉનકી દૃષ્ટિ મેં ફીકા રહતા હૈ, પરન્તુ હસ પ્રકાર કી ઉનકી માન્યતા કેવલ એક મોહ કા હી વિલાસ હૈ । જિસ પ્રકાર અશુચિ પદાર્થ કા સેવન કરનેવાલા વરાહ અપને કો સુખી માનતા હૈ ઉસી પ્રકાર “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમયચર્મણા” નારીકે જઘન કે છિદ્રસ્થ ચમડે કે સેવન સે અજ્ઞાની મનુષ્ય ભી અપને કો સુખી માનતા રહતા હૈ, પરન્તુ જ્ઞાનિયોં કી દૃષ્ટિ મેં હસ પ્રકાર કે જીવોં કા વ્યવહાર ગર્હિત એવં નિન્દિત હૈ । હસી વાત કો ખુલાશા કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—“તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય” ઇત્યાદિ । સ્ત્રિયોં કે અધીન રહના ઔર ઉન્હેં સુખ કા સ્થાન સમજના યે દોનોં વાતેં માનવ જગત કો હસ લોક ઔર પરલોક મેં અકલ્યાણપ્રદ હૈં, અજ્ઞાન કો દેનેવાલી હૈં ઔર કામ કી

તે જ સુખનું કારણ છે ” મોહવશ હોવાની દૃષ્ટિમાં સ્ત્રી જ ઉત્તમમાં ઉત્તમ આનંદ આપવાવાળી વસ્તુ પ્રતિભાસિત થાય છે. જગતના અનેક સુંદર પદાર્થોથી પણ તે અધિક સુંદર તેને માલૂમ પડે છે. તેના વિના સંસારની મજા પણ તેની દૃષ્ટિમાં ફીકી રહે છે, પરંતુ આ પ્રકારનો તેનો કેવળ એક મોહનો જ વિલાસ છે. જે પ્રકારે અશુચિ પદાર્થનું સેવન કરવાવાળા ભૂંડ પ્રાણી પોતાને સુખી માને છે તેજ પ્રકારે “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમય-ચર્મણા” નારીના જાંઘના છિદ્રસ્થ ચામડાનું સેવન કરવાથી અજ્ઞાની મનુષ્ય પણ પોતાને સુખી માનતો રહે છે, પરંતુ જ્ઞાનીયોની દૃષ્ટિમાં આ પ્રકારના હોવાનો વ્યવહાર ગર્હિત અને નિન્દિત છે. આ વાતનો ખુલાસો કરીને કહે છે કે— તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય ઇત્યાદિ. સ્ત્રિયોના આધીન રહેવું, અને તેને સુખનું સ્થાન સમજવું, એ બંને વાતો માનવજગતને આલોક અને પરલોકમાં અકલ્યાણપ્રદ છે. અજ્ઞાનને દેવાવાળી છે. અને કામની અન્તિમ દશાને પહોંચાડવાવાળી છે,

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા, દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, પષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

અતઃ એવોક્તં ‘મારાયે’-તિ । કિંચ-મૃત્વા નરકાય=દશવિધક્ષેત્રયાતનાસ્થાનાય,
તથા ચ-‘નરકતિરથે’ અત્ર ‘નરક’ ઇતિ લુપ્તપશ્ચમી, તેન નરકાન્નિર્ગત્ય ચદિ સ
જન્મ લભતે તર્હિ પ્રાયસ્તિર્યગ્યોનિષ્કેવેત્યર્થઃ ।

અન્તિમ દશા મેં પહુંચાનેવાલી હૈં । કામ કી દશ અવસ્થાઁ વતલાઈ હૈં,
અનમેં મરણ યે કામ કી અન્તિમ અવસ્થા હૈં । કહા મી હૈ—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, પષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પઃ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ હૈં । સ્ત્રિયોં કે સંગમ સે જીવ અનેક અસાધ્ય રોગોંકા ઘર
વન કર આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કી વજહ સે મર કર નરક મેં જા પડતા હૈં । વહાં
પર દશ પ્રકાર કી ક્ષેત્રીય યાતના કો ભોગના હૈં । નરક હન યાતનાઓં કે

કામની દશ અવસ્થાઓ યતાવેલ છે. તેમાં મરણ એ કામની અન્તિમ
અવસ્થા છે. કહ્યુ પણ છે—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, પષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે સ્ત્રિયોનાં સંગમ છવોને નરકનું દુઃખ આપે છે, અને અંતમાં
તેનાથી છવ અનેક અસાધ્ય રોગોનું ઘર થાનીને આર્તરૌદ્ર ધ્યાનથી મરીને નરકમાં
વત્ય છે. તે દેશણે દશ પ્રકારની ક્ષેત્રીય યાતનાઓ ભોગવે છે. નરક આ યાતનાઓના

एवम्भूतः स्वात्महितं न जानातीत्याह—‘सतत’—मित्यादि । सततं=नित्यं, मूढः=दर्शनमोहचारित्रमोहकर्मणा युक्तः धर्म=जिनोक्तं श्रुतचारित्रलक्षणं न जानाति । एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु—‘उदाहे’—ति, वीरः=परिज्ञातसकलहेयो पादेयस्तीर्थङ्करादिः, उत्=प्राबल्येन आह=कथितवान् । अवार्पत्वाद् भूते लट् । कि-मित्याह—‘अप्रमाद’ इति, महामोहे=स्त्रीपुंनपुंसकवेदरूपे अप्रमादः=प्रमाद आसक्तिः

પ્રધાન સ્થાન હૈં । વહાં સે નિકલકર જીવ પ્રાયઃ તિર્યચ યોનિ મેં હી જન્મ ધારણ કરતા હૈ । “નરક-તિરિક્ષ્વાણ” અર્થાત્ નરક સે નિકલકર જીવ જબ જન્મ ધારણ કરતા હૈ તો વહ પ્રાયઃ તિર્યચ યોનિ મેં હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, યહ અર્થે ઇસ પદ સે પ્રતીત હોતા હૈ ।

જિનકી આત્મા નિત્ય ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય સે મલિન બની હૈ વે જિનેન્દ્ર ભગવાન્ દ્વારા પ્રતિપાદિત ઇસ શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મ કો નહીં જાનતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કા કથન શ્રી અન્તિમ તીર્થંકર મહાવીર સ્વામીકા હૈ, જિન્હોને જગત કે સમસ્ત હેયોપાદેય તત્ત્વોં કો અચ્છી તરહ જાન લિયા હૈ । ઇસ કથન મેં સૂત્રકાર મહાવીર સ્વામી કી પ્રરૂપણા પ્રકટ કરને સે તથા અપની કલ્પના કા નિષેધ કરને સે ડસમેં પ્રમાણતા પ્રકટ કરતે હુણ કહતે હૈં—“एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाह वीरः” । યહ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન તથા જો કુછ આગે કહા જાતા હૈ વહ સબ મૈને નહીં કિયા હૈ, કિન્તુ વીર ભગવાન્ને કહા હૈ । ભગવાન્ કા ઉપદેશ હૈ કિ જીવોં કો “अप्यमाओ महामोहे” સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ ઓર નપુંસક વેદ

પ્રધાન સ્થાન છે. ત્યાંથી નીકળીને હવે પ્રાયઃ તિર્યચ યોનિમા જ જન્મ ધારણ કરે છે. “નરકતિરિક્ષ્વાણ” નરકમાંથી નીકળી હવે બ્યારે જન્મ ધારણ કરે છે ત્યારે તે તિર્યચ યોનિયોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. એ પૂર્વોક્ત અર્થ આ પદ્યથી પ્રતીત થાય છે.

જેનો આત્મા કાયમ ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી મલિન બનેલ છે તે જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત આ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને બાણતો નથી. આ પ્રકારનું કથન શ્રી અન્તિમ તીર્થંકર મહાવીર સ્વામીનું છે જેણે જગતના સમસ્ત હેયોપાદેય તત્ત્વોને સારી રીતે બાણી લીધા છે. આ કથનમાં સૂત્રકાર મહાવીર સ્વામીની રૂપણા પ્રગટ કરવાથી, તથા પોતાની કલ્પનાનો નિષેધ કરવાથી તેમાં પ્રમાણતા પ્રગટ કરતા કહે છે. “एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाहवीर.” આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા સે કરેલ નથી પણ વીર ભગવાને કરેલ છે. ભગવાનનો ઉપદેશ છે કે હવેને “अप्यमाओ महामोहे” સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ

ન પ્રમાદોઽપ્રમાદઃ, સ વિધેયઃ, ન તત્ર પ્રમાદપ્રમત્તેન ભાવ્યમ્ । અન્યદપ્યાહ-‘અલઃ-મિત્યાદિ, ‘કુશલસ્ય’ કુશાન્=ભાવકુશાન્ અષ્ટવિધકર્મોણિ લુનાતિ=છિન્નીતીતિ કુશલઃ=કર્મવિદારણપરસ્તસ્ય પ્રમાદેન=મઘ-વિષય-કપાય-નિદ્રા-વિકથારૂપેણ અલં=વ્યર્થે, તત્ર કુશલે પ્રમાદસ્યાસમ્ભવાત્ । કિં કૃત્વા પ્રમાદં ન કરોતીત્યાહ-‘શાન્તી’-ત્યાદિ, શાન્તિમરણં, શમનં શાન્તિઃ=સકલકર્મનાશઃ, અત એવ શાન્તિઃ=રૂપ મહામોહ મેં આસક્તિ નહીં કરની ચાહિયે । પ્રમાદ સે સંસાર ઔર અપ્રમાદ સે મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । સૂત્ર મેં શાન્તિ ઔર મરણ ઇન શબ્દોં કા વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ ઔર ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર હૈ, ક્યોં કિ “શમનં શાન્તિઃ” શમન કા નામ શાન્તિ હૈ, વહ સમસ્ત કર્મોં કા અભાવસ્વરૂપ અવસ્થા હૈ । ઇસ્કા દુસરા નામ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ ખી હૈ । વારંવાર ચતુર્ગતિયોં મેં પ્રાણી જહાં પર મરતે રહતે હૈં ઉસ કા નામ મરણ-સંસાર હૈ । ભાવકુશરૂપ અષ્ટવિધ કર્મોંકા જો છેદન કરતા હૈ વહ કુશલ હૈ, ક્યોં કિ-“કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલઃ” । અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કો વિદારણ કરનેવાલે કા નામ કુશલ હૈ । “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશલ કે લિયે પ્રમાદ હોતા હી નહીં હૈ । મઘ વિષય કપાય નિદ્રા ઔર વિકથા કે ભેદસે પ્રમાદ પાંચ પ્રકારકા હોતા હૈ । જો કર્મોં કો નાશ કરને મેં પ્રયત્નશાલી હો રહે હૈં, વે કખી પ્રમત્તદશાસંપન્ન નહીં હોતે હૈં । કારણ કિ વે જાનતે હૈં કિ-પ્રમાદ સે સંસાર મેં પરિભ્રમણ તથા અપ્રમાદ સે શાન્તિ-અવ્યાવાધસુખ-

અને નપુસકવેદ ૩૫ મહામોહમા આસક્તિ કરવી બેધગે નહિ પ્રમાદથી સંસાર અને અપ્રમાદથી મુક્તિનો લાભ થાય છે. સૂત્રમાં શાન્તિ અને મરણ આ શબ્દોનો વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ અને ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર છે કારણ કે “શમનં શાન્તિ” શમનનું નામ શાન્તિ છે તે સમસ્ત કર્મોની અભાવ સ્વરૂપ અવસ્થા છે. તેનું બીજું નામ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ પણ છે. વારંવાર ચતુર્ગતિમાં પ્રાણી બંધા મરતા રહે છે તેનું નામ મરણ-સંસાર છે. ભાવકુશ ૩૫ અષ્ટવિધ કર્મોનું જે છેદન કરે છે. તે કુશલ છે કારણ કે “કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલ” આઠ પ્રકારના કર્મોનું વિદારણ કરવાવાળાનું નામ કુશળ છે “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશળને માટે પ્રમાદ થતો જ નથી. મઘવિષય કપાય નિદ્રા અને વિકથાના ભેદથી પ્રમાદ પાંચ પ્રકારનો હોય છે, જે કર્મોનો નાશ કરવામાં પ્રયત્નશાળી હોય છે તે દોષ વળત પ્રમત્તદશાસંપન્ન બનતાં નથી. કારણ કે તેઓ બંધે છે કે-પ્રમાદથી સંસારમાં પરિભ્રમણ અને અપ્રમાદથી શાન્તિ

અવ્યાવાધસુખલક્ષણો મોક્ષઃ, ‘મરણં’ મ્રિયન્તે મુર્હુર્મુહુશ્ચતુર્ગતિષુ પ્રાણિનો યત્રેતિ તન્મરણં=સંસારઃ, શાન્તિશ્ચ મરણં ચ શાન્તિમરણં, તત્ સંપ્રેક્ષ્ય=‘અપ્રમાદેન સંસારો-પરમઃ, પ્રમાદેન સંસારપરિભ્રમણં ભવતીતિ સમ્યગાલોચ્ય । અપિ ચ-‘ભિદુરધર્મ’-મિતિ, પ્રમાદો વિપયાભિજ્વલ્લઃ, સ ચ શરીરે ભવતિ તતો ભિદુરો=મદ્ગશીલો ધર્મઃ=સ્વભાવો યસ્ય તદ્ ભિદુરધર્મ શરીરં, સ્વતઃ એવ વિનશનશીલત્વાત્, સમ્પ્રેક્ષ્ય=વિચાર્ય સ્વરૂપ મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । ઇસ લિયે ઇસ અવ્યાવાધ-સુખ-સ્વરૂપ શાંતિ કે લાભ સે જો વંચિત કરાનેવાલા હૈ ઉસ પ્રમાદ સે લાભ હી ક્યા હો સકતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમી કો પ્રમાદ કમી નહીં કરના ચાહિયે । “ ભિદુરધર્મે સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પદ્યાલં તે પતૈઃ ” મંગ હોના જિસકા સ્વભાવ હો ઉસકા નામ ભિદુરધર્મ હૈ, એસા યહ શરીર હૈ; ક્યોં કિ યહ સ્વતઃ હી વિનાશશીલ હૈ । સંયમી મુનિકો ઇસ વાત કા દૃઢ વિશ્વાસ કરના ચાહિયે કિ યહ મેરા શરીર અવશ્ય હી વિનશ્વર હૈ, ક્યોં કિ યહ પૌદ્ગલિક પર્યાય હૈ, જો પર્યાય હોતી હૈ વહ ઉત્પાદ-વ્યય-ધર્મ-વિશિષ્ટ હોતી હૈ । પુદ્ગલ કા સ્વભાવ હી પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ હૈ । અતઃ ઇસ વિનશ્વર વસ્તુ કે મોહ મેં ફંસ કર જો સંયમી અપને સંયમરૂપી ધન કો પ્રમાદ-રૂપી ચોરોં કે જરિયે લુટવા દેતે હૈં વે મહાપ્રમાદી હૈં । સંયમ કી આરાધના કરતે હુએ યદિ ઇસ શરીર કા પતન હોગા, તો ઉસ દશા મેં કમી ન કમી અવશ્ય અવ્યાવાધ-સુખ-રૂપ મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ હોગી; અન્યથા-ઇસ સંસાર

અવ્યાવાધસુખસ્વરૂપ મુક્તિનો લાભ થાય છે માટે આ અવ્યાવાધસુખસ્વરૂપ શાંતિના લાભથી જે દૂર રખાવે છે તે પ્રમાદથી લાભ પણ કંઈ થતો નથી. એવો વિચાર કરી સંયમીએ પ્રમાદ કદી પણ કરવો જોઈએ નહિ. “ ભિદુરધર્મે સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પદ્યાલં તે પતૈઃ ” ભગ થવું જેનો સ્વાભાવ છે તેનું નામ ભિદુરધર્મ છે, એવું આ શરીર છે, કારણ કે તે સ્વતઃ વિનાશશીલ છે. સંયમી મુનિએ આ વાતનો દૃઢ વિશ્વાસ કરવો જોઈએ કે આ માટે શરીર અવશ્ય જ વિનશ્વર છે. કારણ કે આ પૌદ્ગલિક પર્યાય છે, જે પર્યાય હોય છે તે ઉત્પાદ વ્યય ધર્મ વિશિષ્ટ હોય છે. પુદ્ગલનો સ્વભાવ જ પૂરન-ગલન સ્વરૂપ છે, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુના મોહમાં ફસાઈને જે સંયમી પોતાના સંયમરૂપી ધનને પ્રમાદરૂપી ચોરા મારફત લુંટાવી દે છે તે મહાપ્રમાદી છે. સંયમની આરાધના કરતાં કરતાં કદાચ આ શરીરનું પતન થશે તો તેવી દશામાં કોઈને કોઈ વખત અવશ્ય અવ્યાવાધ સુખરૂપ મોક્ષની પ્રાપ્તિ થશે. અન્યથા આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરતાં અનન્ત

પ્રમાદો ન વિધેય इति सम्बन्धः । भोगास्तु भुक्तपूर्वा अपि न वृत्तिजनकाः, इत्याह-
'नाल'-मिति भोगाः परिभुक्ता अपि स्पृहानिवृत्तये नालं=न समर्था भवन्ति । उक्तञ्च—

“ नग्गी तिप्पइ कट्ठेहिं, नावगाहिं महोदही ।

न जमो सव्वभूणहिं, इत्थीहिं पुरिसो तहा ” ॥ १ ॥

મેં પરિભ્રમણ કરતે હુણ અનન્ત કણ્ઠોં કો ભોગના પડેગા । શરીર કા નાશ અવશ્યંભાવી હૈ, તો મેં સંયમની વિરાધના કરકે હસે અવિનશ્વર અમર તો કર નહીં સકતા ! અતઃ હસ વિનશ્વર વસ્તુ સે જો મુદ્દે પરંપરા રૂપ સે અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ તો યહ સવ સે વડા ભારી લાભ મુદ્દે મિલતા હૈ; ફિર કયોં પ્રમાદી વન કર હસ શરીર કે મોહ મેં પડ અપને સંયમની વિરાધના કરું ? । દોનોં હાલત મેં શરીર કા નાશ સ્વયં સિદ્ધ હૈ; ફિર ભી ણક હાલત અનંત આનંદપ્રદ ઔર દૂસરી હાલત અનંત કષ્ટપ્રદ હૈ, જેસા વિચાર કર સંયમી કો કર્મો ભી પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે । હસીં લિયે સૂત્રકાર ને “ મિદુરઘર્મે સંપ્રેક્ષ્ય ” હસ વાક્ય કે દ્વારા સંયમી જનકો શિક્ષા દી હૈ । તથા આગે ભી શિક્ષા દેતે હુણ વે પ્રકટ કર રહે હૈં કિ જિન પંચેન્દ્રિયોં કે ભોગ તુમને પહિલે ભોગ લિયે હૈં વે ભી તુમ્હારી ઇચ્છાની શાંતિ કરને કે લિયે સમર્થશાલી નહીં હૈં, કહા ભી હૈ—

“ નગ્ગી તિપ્પઈ કટ્ઠેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણહિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥

કુદ્ધેને ભોગવવા પડશે, શરીરનો નાશ અવશ્યંભાવી છે, તો હું સંયમની વિરાધના કરીને તેને અવિનશ્વર અમર તો કરી શકતો નથી, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુથી જે મને પરંપરારૂપથી અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે તો આખધારી મોટો લાભ મને મળે છે તો યહી જા માટે પ્રમાદી જાનીને આ શરીરના મોહમાં પડી પોતાના સંયમની વિરાધના કરું, જાને હાલતમાં શરીરનો નાશ સ્વયં સિદ્ધ છે તો પણ એક હાલત અનંત આનંદપ્રદ અને બીજી હાલત અનંત કષ્ટપ્રદ છે. એવો વિચાર કરી સંયમીએ ડોહ વળત પણ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ, માટે સૂત્રકારે “ મિદુરઘર્મે સંપ્રેક્ષ્ય ” આ વાક્યદ્વારા સંયમી જનને શિક્ષા આપી છે. તથા આગળ પણ શિક્ષા આપતાં તે પ્રગટ કરે છે કે—જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના ભોગ તમે પહેલા ભોગવી લીધા છે તે પણ તમારી ઇચ્છાની શાંતિ કરવા માટે સમર્થશાળી નથી, કહ્યું પણ છે—

‘ નગ્ગી તિપ્પઈ કટ્ઠેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણહિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥

છાયા—નાગ્નિસ્તૃપ્યતિ કાળૈ = નાપગાભિર્મહોદધિઃ ।

ન યમઃ સર્વભૂતૈશ્ચ, સ્ત્રીભિઃ પુરુષસ્તથા ॥ ૧ ॥ ઇતિ

તત્સર્વં પદ્ય=બુદ્ધ્યસ્વ, દશેર્જ્ઞાનસામાન્યાર્થકત્વાત્, અતો હે મેધાવિન્ ! તે= તવ સદુપદેશજિષ્ટ્કોઃ એભિઃ=પ્રમાદમયૈર્દુઃસ્વજનકૈર્વિપયોપભોગૈઃ અલ્પ=વ્યર્થમ્, એભિરાત્મકલ્યાણં સાધ્યં નાસ્તીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-એતૈર્વિપયોપભોગૈરવ્યાવાધમુખમ્, અલ્પમ્=પર્યાપ્તં વિશિષ્ટતરમિત્યર્થઃ, અતર્કિતોપનતમરણે સંસારે મુખલવસ્યાઽસમ્ભવાદવ્યાવાધમુખમેવ મુખમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જિમ પ્રકાર અગ્નિ કાળોં સે, સમુદ્ર નદિયોં સે, કાલ પ્રાણિયોં કી મૃત્યુ સે તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર મનુષ્ય ભી સ્ત્રીસંભોગ સે કમી ભી તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ ॥ ઇસલિયે હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ ભી યહ અપને મન મેં દૃઢ ધારણા કર લો કિ પ્રમાદ-ભય-દુઃસ્વજનક ઇન વિપયભોગોં સે કમી ભી આત્મકલ્યાણ સાધ્ય નહીં હો સકતા, અતઃ ઇનકી ચાહ કી દાહ મેં ક્યોં અપને સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મ કી આહુતિ કરને કે લિયે સંકલ્પ વિકલ્પ કરતે હો । યહ તુમસે ઇસલિયે કહા જાતા હૈ કિ તુમ સદુપદેશ કો ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા રખતે હો ।

અથવા—યહ સમજો કિ ઇસ વૈષયિક સુખ કી અપેક્ષા અવ્યાવાધ-સુખ વિશિષ્ટતર હૈ । કારણ કિ સંસારદશા ભયવાલી હૈ, ઇસમેં નિર્ભય અવસ્થા તો હો હી નહીં સકતી । યદિ થોડી દેર કે લિયે યહ અસંભવ ભી સંભવિત કલ્પિત કર લિયા જાય કિ—“યહાં પ્રાણી મયરહિત હૈ” તો ભી

જે પ્રકારે અગ્નિ કાળોથી, સમુદ્ર નદિઓથી, કાળ પ્રાણિઓની મૃત્યુથી તૃપ્ત થતો નથી, તે પ્રકારે મનુષ્ય પણ સ્ત્રી સંભોગથી કોઈ વખત પણ તૃપ્ત થતો નથી. માટે હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ એ, પોતાના મનમાં દ્રઢ કરી લ્યો કે પ્રમાદ-ભય-દુઃખજનક આ વિષયભોગોથી કોઈ વખત પણ આત્મ-કલ્યાણ સાધ્ય થઈ શકતું નથી, માટે તેની આહુતિ દાહમાં આ માટે પોતાના સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મની આહુતિ કરવા સંકલ્પ વિકલ્પ કરો છો. આ તમને એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે તમે સદુપદેશને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા રાખનાર છો.

અથવા એ સમજો કે આ વૈષયિક સુખની અપેક્ષા અવ્યાવાધ સુખ વિશિષ્ટતર છે, કારણ કે સંસારદશા ભયવાળી છે. તેમાં નિર્ભય અવસ્થા તો થઈ જ શકતી નથી. કદાચ થોડા વખત માટે આ અસંભવ પણ સંભવિત માની લઈએ કે “આંહી પ્રાણી ભયરહિત છે” તો પણ ઠીક નહિ, કારણ કે—એ

પ્રમાદો ન વિવેચ્ય ઇતિ સમ્બન્ધઃ । મોગાસ્તુ શુક્તપૂર્વો અપિ ન વૃત્તિજનકાઃ, ઇત્યાહ-
‘નાલ’-મિતિ મોગાઃ પરિશુક્તા અપિ સ્પૃહાનિવૃત્તયે નાલ્=ન સમર્થા ભવન્તિ । ઉક્તञ्च—

“ નગ્ની તિપ્પદ્ કદ્દેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તદા ” ॥ ૧ ॥

મેં પરિશ્રમણ કરતે હુણ અનન્ત કષ્ટોં કો મોગના પડેગા । શરીર કા નાશ અવશ્યભાવી હૈ, તો મેં સંયમ કી વિરાધના કરકે ડસે અવિનશ્વર અમર તો કર નહીં સકતા ! અતઃ ઇસ વિનશ્વર વસ્તુ સે જો મુક્કે પરંપરા રૂપ સે અવિનશ્વર વસ્તુકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ તો યહ સવ સે વડા ભારી લાભ મુક્કે મિલતા હૈ; ફિર જ્યોં પ્રમાદી વન કર ઇસ શરીર કે મોહ મેં પડ અપને સંયમ કી વિરાધના કરૂં ? । દોનોં હાલત મેં શરીર કા નાશ સ્વયં સિદ્ધ હૈ; ફિર ભી ઇક હાલત અનંત આનંદપ્રદ ઓર દૂસરી હાલત અનંત કષ્ટપ્રદ હૈ, જેસા વિચાર કર સંયમી કો કમી ભી પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે । ઇસી લિયે સૂત્રકાર ને “ મિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” ઇસ વાક્ય કે દ્વારા સંયમી જનકો શિક્ષા દી હૈ । તથા આગે બી શિક્ષા દેતે હુણ વે પ્રકટ કર રહે હૈં કિ જિન પંચેન્દ્રિયોં કે મોગ તુમને પહિલે મોગ લિયે હૈં વે ભી તુમ્હારી ઇચ્છા કી શાંતિ કરને કે લિયે સમર્થશાલી નહીં હૈં, કહા ભી હૈ—

“ નગ્ની તિપ્પદ્ કદ્દેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તદા ” ॥ ૧ ॥

કપ્પેને ભોગવવા પડશે, શરીરનો નાશ અવશ્યભાવી છે, તો હું સંયમની વિરાધના કરીને તેને અવિનશ્વર અમર તો કરી શકતો નથી, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુથી જે મને પરંપરારૂપથી અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે તો આ બધાથી મોટો લાભ મને મળે છે તો પછી શા માટે પ્રમાદી બનીને આ શરીરના મોહમાં પડી પોતાના સંયમની વિરાધના કરૂં, બને હાલતમાં શરીરનો નાશ સ્વયં સિદ્ધ છે તો પણ એક હાલત અનંત આનંદપ્રદ અને બીજી હાલત અનંત કષ્ટપદ છે. એવો વિચાર કરી સંયમીએ કેઇ વળત પણ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ, માટે સૂત્રકારે “ મિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” આ વાક્યદ્વારા સંયમી જનને શિક્ષા આપી છે. તથા આગળ પણ શિક્ષા આપતાં તે પ્રકટ કરે છે કે—જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના મોગ તમે પહેલા ભોગથી લીધા છે તે પણ તમારી ઇચ્છાની શાંતિ કરવા માટે અસર્થશાળી નથી. કહું પણ છે—

‘ નગ્ની તિપ્પદ્ કદ્દેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તદા ” ॥ ૧ ॥

છાયા—નાગ્નિસ્તૃપ્યતિ કાષ્ઠૈ = નાપગાભિર્મહોદધિઃ ।

ન યમઃ સર્વભૂતૈશ્ચ, સ્ત્રીભિઃ પુરુષસ્તથા ॥ ૧ ॥ ઇતિ

તત્સર્વં પદ્ય=વુધ્યસ્વ, દૃશેર્જ્ઞાનસામાન્યાર્થકત્વાત્, અતો હે મેધાવિન્ ! તે= તવ સદુપદેશજિષ્ટુક્તોઃ એભિઃ=પ્રમાદમયૈર્દુઃસ્વજનકૈર્વિષયોપભોગૈઃ અલં=વ્યર્થમ્, એમિરાત્મકલ્યાણં સાધ્યં નાસ્તીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-એતૈર્વિષયોપભોગૈરવ્યાવાધમુખમ્, અલમ્=પર્યાપ્તં વિશિષ્ટતરમિત્યર્થઃ, અતર્કિતોપનતમરણે સંસારે સુખલવસ્યાઽસમ્ભવાદવ્યાવાધમુખમેવ સુખમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જિસ પ્રકાર અગ્નિ કાષ્ઠોં સે, સમુદ્ર નદિયોં સે, કાલ પ્રાણિયોંની મૃત્યુ સે તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર મનુષ્ય ભી સ્ત્રીસંભોગ સે કમી ભી તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ ॥ ઇસલિયે હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ ભી યહ અપને મન મેં દૃઢ ધારણા કર લો કિ પ્રમાદ-ભય-દુઃસ્વજનક ઇન વિષયભોગોં સે કમી ભી આત્મકલ્યાણ સાધ્ય નહીં હો સકતા, અતઃ ઇનકી ચાહકી દાહ મેં ક્યોં અપને સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મકી આહુતિ કરને કે લિયે સંકલ્પ વિકલ્પ કરતે હો । યહ તુમસે ઇસલિયે કહા જાતા હૈ કિ તુમ સદુપદેશ કો ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા રખતે હો ।

અથવા—યહ સમજો કિ ઇસ વૈષયિક સુખ કી અપેક્ષા અવ્યાવાધ-સુખ વિશિષ્ટતર હૈ । કારણ કિ સંસારદશા ભયવાલી હૈ, ઇસમેં નિર્ભય અવસ્થા તો હો હી નહીં સકતી । યદિ થોડી દેર કે લિયે યહ અસંભવ ભી સંભવિત કલ્પિત કર લિયા જાય કિ—“યહાં પ્રાણી ભયરહિત હૈ” તો ભી

જે પ્રકારે અગ્નિ કાષ્ઠોથી, સમુદ્ર નદિઓથી, કાળ પ્રાણિઓની મૃત્યુથી તૃપ્ત થતો નથી, તે પ્રકારે મનુષ્ય પણ સ્ત્રી સંભોગથી કોઈ વખત પણ તૃપ્ત થતો નથી. માટે હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ એ, પોતાના મનમાં દૃઢ કરી લ્યો કે પ્રમાદ-ભય-દુઃખજનક આ વિષયભોગોથી કોઈ વખત પણ આત્મ-કલ્યાણ સાધ્ય થઈ શકતું નથી, માટે તેની આહુતીના દાહમાં આ માટે પોતાના સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મની આહુતિ કરવા સંકલ્પ વિકલ્પ કરો છો આ તમને એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે તમે સદુપદેશને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા રાખનાર છો.

અથવા એ સમજો કે આ વૈષયિક સુખની અપેક્ષા અવ્યાવાધ સુખ વિશિષ્ટતર છે. કારણ કે સંસારદશા ભયવાળી છે તેમાં નિર્ભય અવસ્થા તો થઈ જ શકતી નથી. કદાચ થોડા વખત માટે આ અસંભવ પણ સંભવિત માની લઈએ કે “આંહી પ્રાણી ભયરહિત છે” તો પણ કીક નહિ, કારણ કે—એ

ભોગામિષદ્વાનાં ભોગસ્યાધિગમેઽનધિગમેઽપિ મહાદુઃખમેવેત્યુપદિશતિ-
'એયં પસ્સ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—એયં પસ્સ મુણી, મહઘ્ભયં નાદ્વાદ્જ્ઞ કંચણં, એસ
વીરે પસંસિએ, જે ન નિવિજ્ઞદ્ આયાણાએ ન મે દેદ્ ન કુપ્પિજ્ઞા,
થોવં લહ્હું ન ચિંસએ, પહિસેહિઓ પરિણમિજ્ઞા, એયં મોણં
સમણુવાસિજ્ઞાસિ-ત્તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—એતત્પચ્ચ મુને ! મહદ્ભયં નાતિપાતયેત્ કચ્ચન એપ વીરઃ પ્રશંસિતઃ
યો ન નિવિજ્ઞેત આદાનાય ન મે દદાતિ ન કુપ્પેત્, સ્તોકં લઘ્થ્વા ન નિન્દેત્,
પ્રતિપિદ્ધઃ પરિણમેત્, એતન્મોનં સમનુવાસયેઃ, ॥ ઇતિ વ્રવીતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—'એત'—ઈત્યાદિ । હે મુને ! =હે અનગાર ! એતત્=કામભોગાસેવનં,
મહદ્ભયં=ભયજનકતયા મહાદુઃખરૂપમ્, મરણકારણત્વેન દુઃખે મહત્ત્વમ્, પચ્ચ=
સર્વથા દુઃખજનક જાનીહિ । ઉક્તચ્ચ—

ટીક નહીં; કારણ કિ—ન માલૂમ કાલકા ગ્રાસ હો કચ જાના પડે ।
મૃત્યુ કા જર્વદસ્ત ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણી કો લગા હી રહતા હૈ ।
કાલ ગાજે ઘજાતા તો આતા નહીં હૈ કિ જિસસે ડસસે સચેત હો
જાય । યહ તો વિના વિચાર કરનેવાલે પ્રત્યેક જીવાત્મા કો અપને પંજે મેં
ફંસા લેના હૈ । અતઃ સંસારદશા ભયવાલી હૈ ઓર યહાં પર નિર્ભયદશા
રૂપ સુખ કા અંગ માત્ર મી પ્રાપ્ત હોના સર્વથા અસંભવ હૈ; અતઃ અઘ્યા-
યાધ સુખ હી વાસ્તવિક સુખ હૈ । ઇસકી પ્રાપ્તિ સંયમારાધન સે હી જીવોં
કો હોતી હૈ । એસા વિચાર કર સંયમી મુનિ કો સંયમભાવ મેં કમી
મી પ્રમત્તદશાયુક્ત નહીં હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ખખર નથી કે કાળનો આચળની કચારે લહું પડે. આ પ્રકારે મૃત્યુનો
ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણીને લાગેલો જ રહે છે કાળ વાલુ વગાડતો તો આવતો
જ નથી કે જેનાથી પ્રાણી ચેતી લય, એ તો વિચાર નહિ કરવાવાળા પ્રત્યેક
જીવાત્માને પોતાના ચત્તમા ક્રમાયે છે. માટે સંસારદશા ભયવાળી છે, અને આ
દેશાએ નિર્ભયદશારૂપ મુળનો અંશમાત્ર પણ પ્રાપ્ત થવો સર્વથા અસંભવ છે
માટે અઘ્યાયાધમુખ જ વાસ્તવિક સુખ છે. તેની પ્રાપ્તિ સંયમારાધનથીજ
હોવોને ધાય છે એવો વિચાર કરી સંયમી મુનીએ સંયમભાવમાં કોઈ વખત
પણ પ્રમત્તદશાયુક્ત થવું નેહ્યો નહિ. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” ॥ १ ॥ इति ।

છાયા—एतस्मादुष्णतरा अन्याः का वेदना गण्यन्ते ।

यत्कामव्याधिगृहीतो, दह्यते किल चन्द्रकिरणैः ॥ १ ॥

भोग રૂપી માંસ મેં ગૃહ વને પ્રાણિયોં કો ભોગોં કી પ્રાપ્તિ હોને પર અથવા નહીં હોને પર બड़ा भारी दुःख ही होता है । इस बात का सूत्रकार उपदेश देते हुए कहते हैं—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि ।

हे मुને ! કામભોગ-વિષયસેવન કો તુમ વહુત भारी भय-स्वरूप-अर्थात् मरणरूप भय का कारण होने से महादुःखरूप ही मानो । भावार्थ—કામભોગ કા સેવન સદા ભય એવં દુઃખદાયી માના ગયા હૈ । વિષયસેવન સે જીવોં કો અનેક દુઃખ હોને કા સદા ભય વના રહતા હૈ । તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃખ ઉન્હેં ભોગને મી પડતે હૈ । મહાકષ્ટોં કો ભોગતેર જીવ જવ અત્યન્ત દુઃખી હો જાતે હૈ, તવ વે આત્મઘાત તક કર લિયા કરતે હૈ । इसलिये विषयसेवन सदा महादुःखदायी ही है, ऐसा समझ कर कभी भी अनगार को उस तरफ लालसापरिणति नहीं करनी चाहिये । कहा भी है—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ ” इति ॥

ભોગરૂપી માંસમાં ગૃહ વનેલ પ્રાણિઓને ભોગોની પ્રાપ્તિ થવાથી અથવા નહિ મળવાથી ઘણું ભારી દુઃખ જ થાય છે આ વાતનો સૂત્રકાર ઉપદેશ આપી કહે છે—“ एयं पस्स मुणी ” ઇત્યાદિ.

હે મુનિ ! કામભોગ-વિષયસેવનને તમે ઘણો ભયસ્વરૂપ અર્થાત્ મરણરૂપ ભયનું કારણ હોવાથી મહાદુઃખરૂપ જ માનો

ભાવાર્થ—કામભોગનું સેવન સદા ભય અને દુઃખદાયી જ માનવામાં આવે છે. વિષયસેવનથી જીવોને અનેક દુઃખ થવાનો સદા ભય રહ્યા કરે છે, તથા અનેક પ્રકારના દુઃખ તેને ભોગવવા પણ પડે છે, મહાકષ્ટો ભોગવી ભોગવી જીવ જ્યારે અત્યંત દુઃખી થાય છે ત્યારે તે આત્મઘાત પણ કરે છે માટે વિષયસેવન સદા મહાદુઃખદાયી જ છે. એવું સમજીને કોઈ વખત પણ આજીવારે તે તરફ લાલસાપરિણતિ નહિ રાખવી જોઈએ કહ્યું છે—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ इति ॥

યદ્વા યત્કામભોગાસક્ત આસ્રવદ્વારૈર્હિંસાદિષુ પ્રવર્તતે તસ્યેહ પરત્ર ચ મહદ્ગ્રયં ભવતીતિ પશ્ય । ઇહ લોકે પુરુષવધકાઽલીકવાદિચોરપારદારિકાણાં મારદણ્ડન-જિહ્વાછેદનવન્ધ્યાતાદિકં ચ પશ્ય, પરલોકે નરકાદિપ્રપાતં પશ્યેતિ તાત્પર્યમ્ । एवं तर्हि किं विधेयम् ? इत्याह—‘नातिपातये’—दित्यादि । मुनिः कञ्चन=कमपि प्राणिनं नातिपातयेत्=न प्राणैर्व्यपरोपयेत्; उपलक्षणं मृपावादाद्यास्रवाणामेतत् ।

કામભોગ સે અધિક સંસાર મેં ઓર કોઈ વેદના ઉગ્ગતર નહીં હૈ, ક્યોં કિ હમ વ્યાધિ કા રોગી શીનલચંદ્રકિરણોં સે भी અત્યંત સંતપ્ત હો જાતા હૈ ।

અથવા—કામભોગસેવન હસ જીવ કો હસ લોક મેં ઓર પરલોક મેં મહાભયકારી હોતા હૈ । ક્યોં કિ કામભોગ મેં આસક્ત પ્રાણી હિંસા-દિક પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ । હિંસાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે જીવ અશુભ કર્મોં કો વાંધતા હૈ, ઓર હમકે ફલ કો વહ નરકાદિ યોનિયોં મેં ભોગતા હૈ । જો પ્રાણી હિંસક, ઝૂઠા, ચોર ઓર પરદારલંપટ હોતે હૈં ઉન્હેં હસી લોક મેં ફાંસી, રાજદણ્ડ, જિહ્વાછેદન, વંધ ઓર ઘાતાદિક અનેક કષ્ટ ઓગને પડતે હૈં, તથા પરલોક મેં નરકાદિ ગતિયોં મેં ઉનકો જન્મ ધારણ કરના પડતા હૈ । ऐसा समझ कर हे मुने! तुम इस ओर अपनी मानसिक परिणति को लालसावाली मन करो, किन्तु सदा इस प्रकार की प्रवृत्ति करो कि जिससे किसी भी जीव की विराधना न हो । सूत्र में “नातिपातयेत्” यह पद झूठ, चोरी आदि आस्रवों का उपलक्षक है,

કામભોગથી અધિક આ સંસારમાં બીજી કોઈ વેદના ઉગ્ગતર નથી, કારણકે, આ વ્યાધિના રોગી શીનલ ચંદ્રકિરણોથી પણ અત્યંત સંતપ્ત થાય છે.

અથવા કામભોગસેવન આ જીવને આલોકમાં અને પરલોકમાં મહા ભય કારી થાય છે. કારણ કે કામભોગમાં આસક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરતા રહે છે હિંસાદિકોમાં પ્રવૃત્તિ હોવાથી જીવ અશુભ કર્મોં વાંધે છે, અને તેના કષ્ટને તે નરકાદિ યોનિઓમાં ભોગવે છે જે પ્રાણી, હિંસક, જુઠો, ચોર અને પરસ્ત્રીલંપટ હોય છે તેને આ લોકમાં ફાંસી, ગજદંડ, જીહ્વાછેદન, વંધ અને ઘાતાદિક અનેક કષ્ટોં ભોગવવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકાદિ ગતિઓમાં તેને જન્મ ધારણ કરવો પડે છે. એવું સમજીને હે મુનિ ! તમે આ તરફ પોતાની માનસિક પરિણતિને લાલસાવાળી બનાવો નહિ, પણ મદા જોવી પ્રવૃત્તિ કરો કે જેનાથી કોઈ પણ જીવની વિરાધના ન થાય. સૂત્રમાં “નાતિપાતયેત્” આપદ જુઠ, ચોરી આદિ આસ્રવોનું ઉપલક્ષક છે, અર્થાત્ મંથમી જીવોને પોતાની પ્રવૃત્તિ

પરિત્યક્તભોગાભિલાપસ્ય પટ્ટકાયપરિપાલકસ્ય ગુણાધિગમો ભવતીત્યાહ-‘एप’
 इत्यादि । एपः=कामभोगस्पृहाभिप्रायविवेचनचतुर एक एव प्रमादपञ्चकरहितः,
 वीरः=कर्मरिपोर्नाशनाद्वीर इव वीरः, प्रशंसितः=तीर्थङ्करगणधरादिभिरभिनन्दितः ।
 वीरस्वभावमाह-‘यो ने ’-त्यादि । यो वीरः, ‘आदानाय’ आदीयते=अधिगम्यते
 निखिलकर्मक्षयसञ्जातसर्वविषयज्ञानं येन तदादानं=चारित्रानुष्ठानं, तस्मै न
 निर्विद्येत=न खिद्येत-‘अन्ये लभन्तेऽशनवसनादिकं वराकोऽहं न लभे किमेतया
 अर्थात्-संयमी जीवों को अपनी प्रवृत्ति इस प्रकार की करनी चाहिये कि
 जिससे उन्हें हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों का बंध नहीं हो । जो
 संयमी मुनि इस प्रकार की शुभप्रवृत्तिवाला तथा कामभोग की इच्छा से
 रहित होता है, तथा पांच प्रमाद के बशवर्ती नहीं होता है वह वीर है
 और प्रशंसा का पात्र है । ऐसे मुनि की प्रशंसा तीर्थंकर गणधरादि देव
 भी किया करते हैं । प्रशंसा पाने का कारण यह है कि वह सदा अपनी
 इस प्रकार की प्रवृत्ति से क्रमशः भविष्य में कर्मशत्रुओं पर विजय प्राप्त
 करनेवाला हो जावेगा । धन्य हैं वे जो चारित्र अंगीकार करके किसी भी
 निमित्त के उपस्थित होने पर उस चारित्र से विरक्तिभाव पैदा नहीं
 करते । यहां “आदान” शब्द का अर्थ चारित्र का अनुष्ठान है, क्योंकि
 इस से ही सकल कर्मों के क्षय से उद्भूत सर्वपदार्थविषयक बोध-केवल-
 ज्ञान जीवों को प्राप्त होता है । “अशनवसनादिक दूसरों को तो प्राप्त हो
 रहे हैं मैं ऐसा अभाग्य हूं जो मुझे कोई पूछता भी नहीं है, इस चारित्र

એવા પ્રકારની કરવી જોઈએ કે જેનાથી તેને હિંસા જુઠું ચોરી આદિ આશ્રવોના
 બંધ ન થાય

જે સંયમી મુનિ આ પ્રકારની શુભ પ્રવૃત્તિવાળા તથા કામભોગની ઇચ્છાથી
 રહિત હોય છે. તથા પાંચ પ્રમાદને તાબે થતા નથી તે વીર છે અને પ્રશંસા-
 પાત્ર છે. એવા મુનિની પ્રશંસા તીર્થંકરગણધરાદિ દેવ પણ કરે છે. પ્રશંસા
 મળવાનું કારણ એ છે કે-તે સદા પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ક્રમશઃ ભવિ-
 શ્યમાં કર્મશત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા થઈ જશે. ધન્ય છે તેઓને જે
 ચારિત્ર અંગીકાર કરીને પછી કોઈ પણ કારણ ઉપસ્થિત થવા છતાં પણ તે ચારિ-
 ત્રથી વિરક્તિભાવ પેદા કરતા નથી. આહીં “આદાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્રનું
 અનુષ્ઠાન છે, કારણ કે તેનાથી જ સકલ કર્મોના ક્ષયથી ઉદ્ભૂત સર્વપદાર્થ-
 વિષયક બોધ-કેવળજ્ઞાન હોવાને પ્રાપ્ત થાય છે. “અશનવસનાદિક બીજાને તો
 પ્રાપ્ત થતાં જ રહે છે અભાગી હું છું જે મને કોઈ પૂછતું પણ નથી. આ ચારિત્રને

પરિગૃહીતયા દુર્લભલાભયા પ્રવ્રજ્યયા' इत्येवं 'दंडणाऽनगारवन्न स्वयमवमन्येते-
ति तात्पर्यम् । “ वहुं परधरे अत्थि, विविहं खाइमसाइमं, ण तत्थ पंडिओ कुप्पे,
उच्छा दिज्ज परो ण वा ” ॥ इत्यादि भगवद्वचनात् ।

अपि च-लाभालाभसमभावः सन् स्तोकम्=अल्पं भैक्षं लब्ध्वा=प्राप्य दातारम्
अन्नादिकञ्च न निन्देत्=न जुगुप्सेत्, किन्तु वै चिन्तयेत्, समैवान्तरायोदयप्राव-
ल्यमेतत् । किञ्च-प्रतिषिद्धः=निषिद्धः सन् परिणमेत्=निवर्तेत किञ्चिदपि दोर्मनस्य
न कुर्यात्, तं गृहस्थं परुषवाग्भिर्न तिरस्कुर्यात्, तंतनाटादिशब्दं न कुर्यादित्यर्थः ।

કે કિ જિસમેં લાભ દુર્લભ હૈ અંગીકાર કરને સે મુઝે લાભ હી ક્યા હુઆ ”
इस प्रकार दंडण अनगार की तरह स्वयं अपने ग्रहण किये हुए चारित्र की
उपेक्षा न करे । यह भी स्वप्न में विचार न करे कि-“ देखो तो सही, इन
गृहस्थों के यहां अशन पान खाद्य स्वाद्य आदि विविध वस्तुएं मौजूद हैं
परन्तु ये कितने अविनयी, अश्रद्धालु एवं लोभी हैं जो इनमेंसे मुझे कुछ
भी नहीं देते हैं ” । चाहे कुछ मिले या न मिले, अथवा थोड़ा मिले, साधु
का यही परम कर्तव्य है कि वह इन अवस्थाओं में समभावशाली
रहे । दाता की अथवा उसके दिये हुए अन्नादि की कभी भी निंदा न करे ।
अल्पलाभ होने पर यही एक मात्र विचार करे कि मेरा ही यह अन्तराय
का प्रबल उदय है, जो यथेच्छ लाभ नहीं हो रहा है, अथवा नहीं हुआ है ।
आहारादिक के निमित्त परधरप्रवेश करते समय यदि वहां पर आहा-
रादिक की याचना करने पर उस के लिये कोई निषेध भी करे तो उस
समय मन में कोई जान का दुर्भाव न आने देवे, और न उस गृहस्थ का
“ तूं अधर्मात्मा है ” इत्यादि कठोर शब्दों से तिरस्कार ही करे ।

જેમાં લાભ દુર્લભ છે, અંગીકાર કરવાથી મને લાભ શું થયો.” આ પ્રકારે દંડણ
અણગાર માફક સ્વય પોતાના થઇણ કરેલાં ચારિત્રની ઉપેક્ષા કરે નહિ. એવું
પણ સ્વપ્નથી વિચાર ન કરે કે-“ભુગ્યાં ! તે ગૃહસ્થોને ત્યાં અશન પાન ખાદ્ય
સ્વાદ્ય આદિ વિવિધ વસ્તુઓ મૌજુદ છે. પરંતુ એ બધા દેટલા અવિનયી અશ્ર-
દ્ધાણુ અને લોભી છે જે તેમાંથી મને કંઈ પણ દેતા નથી ” ભલે મળે, ભલે ન
મળે, ભલે જરાક મળે, સાધુનું એ પરમ કર્તવ્ય છે કે તે બંને અવસ્થામાં સમભાવી
રહે. દાતાની અથવા તેનાથી અપાયેલા અન્નાદિની કોઈ વખત પણ નિંદા ન કરે.
અલ્પલાભ થવાથી એ એક જ માત્ર વિચાર કરે કે-મારો આ અંતરાયનો પ્રબલ ઉદય
છે કે જેથી મને યથેચ્છ લાભ થતો નથી, અથવા થયો નથી. આહારાદિક નિમિત્તે
પરધર પ્રવેશ કરતી વખતે કદાચ આહારાદિકની યાચના કરવાથી કંઈ તેને માટે નિષેધ

ઉપસંહરન્નાહ—‘એત’-દિત્યાદિ । એતત્=પ્રવ્રજ્યાનિર્વેદરૂપમ્—આદાનાકોપનમ્, અલ્પા-નિન્દનમ્, પ્રતિપિદ્ધનિવર્તનં મૌનં—મુનેરિદં મૌનમ્—અનગારાચરણં જ્ઞાનાચારાદિક-મિત્યર્થઃ, હે શિષ્ય ! ‘સમનુવાસયેઃ’ સમ્—સમ્યક્પ્રકારેણ પૂજા—સત્કાર—ગૌરવ-નિદાનરાહિત્યેન અનુવાસયેઃ—અનુપાલયેરિત્યર્થઃ, ગણધરાદિસેવિતં નિરતિચારં ચારિત્રં પરિપાલયેરિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૪ ॥

અન્ત મેં ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહને હૈં—યે જો પૂર્વોક્ત સાધુ કા આચાર પ્રકટ ક્રિયા હૈ કિ—વહ અપને ગ્રહણ ક્રિયે હુણ ચારિત્ર કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ન રચે, અલ્પલાભ મેં ભી સંતુષ્ટ રહે, નિષેધ કરને પર પરઘર સે શાંતિપૂર્વક વાપિસ હો જાવે । અતઃ હે શિષ્ય ! તુમ અચ્છી તરહ સે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ ઔર નિદાન કી ભાવના સે રહિત હોકર ગણધરાદિ-સેવિત ઇસ નિરતિચાર ચારિત્ર કા પાલન કરો । “ઇતિ બ્રવીમિ” ઇન પદોં કા અર્થ પહિલે સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીય અધ્યયન કા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

પણુ કહે તો તે વખતે મનમાં કોઈ પણ જાતનો હુલાવ લાવે નહિ, તેમજ તે ગૃહસ્થનો “તું અધર્માત્મા છે” ઇત્યાદિ ખરાબ શબ્દોથી તિરસ્કાર પણ ન કરે.

અંતમાં ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—આ જે પૂર્વોક્ત સાધુનો આચાર પ્રગટ કરેલ છે કે—તે પોતાનાં ગ્રહણ કરેલ ચારિત્ર પ્રતિ ઉપેક્ષાલાવ રાખે નહિ. અલ્પ લાભમાં પણ સંતુષ્ટ રહે. નિષેધ કરવાથી ઘરથી શાંતિપૂર્વક પાછા ફરી જાય. માટે હે શિષ્ય ! તમે સારી રીતે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ અને નિદાનની ભાવનાથી રહિત થઈને તીર્થંકર ગણધરાદિકથી સેવિત નિરતિચાર ચારિત્રનું પાલન કરો. “ઇતિ બ્રવીમિ” આ પદોનો અર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ઇતિ બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

॥ આચારાઙ્ગસૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પञ्चમોદેશઃ ॥

અભિહિતશ્વતુર્થોદેશોડ્યુના પञ્ચમસ્ય વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ્યતે । પૂર્વે ભોગાભિજ્ઞં વિદ્યાય લોકનિશ્રયા શરીરરક્ષણાર્થં વિચરણીયમિત્યુક્તમ્ । અત્રાપિ તદેવ પ્રતિપાદયિષ્યતે । તથા ચ વિપયકપાયકરાલજ્વાલાજટિલસંસારદાવાનભ્રસ્તો વાલકુરદ્ગ્ધ્વ પન્થાયમાનો નિર્વાધશાન્તિપ્રાપ્તયે પરિહૃતભોગસ્પૃહો ગૃહીતપञ્ચમહાવ્રતો નિસ્વધાનુષ્ઠાનપરઃ કાયનિર્વહણાર્થં લોકનિશ્રયા વિહરતિ, આશ્રયરહિતસ્ય દેહસાધનાડસમ્ભવાત્, દેહસ્યાસદ્ભાવે ધર્મોડપિ ભવિતું નાર્હતિ । દેહસદ્ભાવશ્ચ નિશ્રયા ભવતિ । નિશ્રા દિ પञ્ચધા, ઉક્તञ્ચ—

॥ આચારાંગસૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા પાંચવાં ઉદેશ ॥

ચતુર્થ ઉદેશ કી વ્યાખ્યા સમાપ્ત હો ચુકી, અવ યહાં પંચમ ઉદેશ કી વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ હોની હૈ । પહિલે જો યહ કહા ગયા હૈ કિ—ભોગોં સે ચિત્તવૃત્તિ કો હટાકર શરીરરક્ષા કે લિયે સંયમી કો લોક કી નેસરાય સે વિચરના ચાહિયે; યહી વિષય યહાં પર સ્પષ્ટ કિયા જાયગા । મૃગ કે વચ્ચે કી તરહ જો સંયમીજન ઇસ સંસારરૂપી દાવાનલ સે—કિ જો વિષય—કપાયરૂપી ભયંકર જ્વાલા સે વ્યાપ્ત હૈ—ત્રસ્ત હોકર નિરાવાધ શાંતિ લાભ કે લિયે ઇતસ્તતઃ દૌડા ફિરતા હૈ, જિસને ભોગોં કી ઇચ્છા કા પરિત્યાગ કર દિયા હૈ, પञ્ચમહાવ્રતોં કા જો આરાધક હૈ, ઔર નિર્દોષ અનુષ્ઠાન કે આચરણ કરને મેં જો સર્વથા સાધના હૈ વહ અપને શરીરનિર્વાહ કે લિયે લોક-નિશ્રા (નેસરાય) સે વિચરતા હૈ; ક્યોંકિ વિના આશ્રય કે દેહ

આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદેશ.

ચોથા ઉદેશની વ્યાખ્યા સમાપ્ત થઈ હોયે પાંચમા ઉદેશની વ્યાખ્યા શરૂ થાય છે. પહેલા જે એમ કહેવામાં આવેલ છે કે—ભોગોથી ચિત્તવૃત્તિને હટાવી શરીરરક્ષા માટે સંયમીએ લોકની નેસરાયથી વિચરવું જોઈએ આ જ વિષય આ ઠેકાણે સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે.

મૃગના બચ્ચા માફક જે સંયમી જન આ સંસારરૂપી દાવાનલથી કે જે વિષયકપાયરૂપી ભયંકર જ્વાલાથી વ્યાપ્ત છે, ત્રાસીને નિરાવાધ શાંતિ લાભ માટે આવી તર્કી કર્યા કરે છે. જેણે ભોગોની ઇચ્છાનાં પરિત્યાગ કર્યો છે પંચમહાવ્રતોના જે આરાધક છે, અને નિર્દોષ અનુષ્ઠાનનું આચરણ કરવામાં જે સર્વથા સાધના છે તે પોતાના શરીરના નિર્વાહ માટે લોક-નિશ્રા (નેસરાય)થી વિચરે છે. કારણ કે આશ્રય વિના દેહની સાધના બની શકતી નથી. દેહની સાધના વિના ધર્મનું

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા; ”

તં જહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ॥

(સ્થાનાન્ન૦ સ્થાન ૫ । ઉ૦ ૩ ।)

છાયા—ધર્મ સ્વલુ ચરતઃ પશ્ચ નિશ્રાસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તદ્યથા-પટ્કાયાઃ, ગણો, રાજા, ગાથાપતિઃ, શરીરમ્, इति ।

યદ્યપિ દેહસ્ય સાધનાનિ-વસતિવસ્ત્રપાત્રાશનશયનાસનાદીનિ સન્તિ, તથાપિ તેષુ પ્રત્યહમાહારસ્યાઽઽવશ્યકતયા તસ્ય પ્રાધાન્યં, સ ચ ગૃહપતેઃ સકાશાદ્રવેપયિતવ્યો ભવતિ । સ હિ ગૃહસ્થો નિજપરિવારપોષણાર્થમન્નાદિકં સમુત્પાદયત્યેવ, તતઃ સંયમજીવનરક્ષણાય વૃત્તિરેષ્ટવ્યા ભવતીતિ ।

કી સાધના નહીં હો સકતી, દેહ કી સાધના કે વિના ધર્મ કા આરાધન નહીં હો સકતા; અતઃ ધર્મ કી આરાધના કરને કે લિયે દેહ કી સાધના, ઔર દેહ કી સાધના કે લિયે લોક કી નેસરાય સંયમી કો આવશ્યકીય હૈ । નેસરાય પાંચ પ્રકાર કી હૈ ? કહા ઓ હૈ—

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા; ”

નંજહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરનેવાલે સંયમીજન કે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન હૈ—પટ્કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ ઔર શરીર । યદ્યપિ દેહ કી સાધના કે સાધન-વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન ઔર આસનાદિક હૈ તો ઓ ઓન સવમેં આહાર કી હી મુખ્યતા હૈ । સંયમીજન ત્રીન કરણ ત્રીનયોગ પૂર્વક સાવચ વ્યાપાર સે રહિત હોતે હૈ, અતઃ ઉસ આહાર કી ગવેષણા ગૃહસ્થોં કે યહાં કરની યાહિયે, ક્યોંકિ વે ગૃહસ્થ અપને પરિવાર કે પોષણ કે લિયે

આરાધન બની શકતું નથી. અને ધર્મની આરાધના કરવા માટે દેહની સાધના, અને દેહની સાધના માટે લોકની નેસરાય સંયમીને આવશ્યક જ છે. નેસરાય પાંચ પ્રકારની છે. કહ્યું પણ છે—

“ ધમ્મં ણ ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા, તં જહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરવાવાળા સંયમી જનો માટે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન છે. પટ્કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર. કદાચ દેહની સાધનાના સાધન-વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન અને આસનાદિક છે તો પણ એ સઘળામાં આહારની મુખ્યતા છે. સંયમીજન સાવધ વ્યાપારથી ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી રહિત હોય છે. માટે તેવા આહારની ગવેષણા ગૃહસ્થોને ત્યાં કરવી જોઈએ, કારણ કે

અત્રાનન્તરમુત્રસમ્બન્ધો યથા-‘અયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ’ ઇતિ । તત્ર નિરતિચારચારિત્રપાલનં તુ લોકનિશ્રયા ભવતીતિ કથિતમ્, અત્રાપિ મુનિના સમ્યગાહારશુદ્ધિર્વિચિન્તનીયતિ દર્શયિષ્યતે ।

ગૃહપતયો ઠિ સ્વીયપુત્રદુહિત્રાદ્યર્થે શત્રુસમારમ્ભં કુર્વન્તીતિ દર્શયતિ-‘જમિણં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-‘જમિણં વિરૂવરૂવેહિં સત્થેહિં લોગસ્સ કમ્મસમા-
રમ્ભા કજ્જંતિ તં જહા-અપ્પણો સે પુત્તાણં ધૂયાણં સુપ્પહાણં નાઈણં
ધાઈણં રાઈણં દાસાણં દાસીણં કમ્મકરાણં કમ્મકરીણં આ-
સાણ પુઢોપહેણાણ સામાસાણ પાયરાસાણ સંનિહિસંનિચઓ
કજ્જઈ, ઇહમેગોસિં માણવાણં ભોયણાણ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરતે હૈં । સંયમી મુનિ સંયમજીવન કી રક્ષા કે લિયે અપની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થ કે યહાં સે આહાર આદિ લેકર સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરતે હૈં ।

યહાં પર “અયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” ઇસ અનન્તર સૂત્ર કે સાથ સંબંધ હૈ-વહાં ‘નિરચિતાર ચારિત્ર કા પાલન લોક-નિશ્રા સે હોતા હૈ’ યહ કહ્તા હૈ । ઇસમેં ખી ‘સંયમી મુનિ કો આહાર કી શુદ્ધિ કા અચ્છી તર સે ધ્યાન રચના ચાહિયે’ યહ વાત આગે ચલકર પ્રકટ કી જાયગી ।

ગૃહસ્થ અપને પુત્ર-પુત્રી આદિ કે નિમિત્ત શત્રુ-પટ્કાયસમારંભરૂપ માવઘ વ્યાપારોં ંવં ભોજનાદિ સાધનોં કે આરમ્ભોં કો કિયા કરતે હૈં, યહી વાત સૂત્રકાર કહતે હૈં-“જમિણં” ઇત્યાદિ ।

ગૃહસ્થ પોતાના પરિવારના પોપણુ માટે અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરે છે, અંયમી મુનિ અંયમજીવનની રક્ષા માટે પોતાની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થને ત્યાંથી આહાર આદિ લાવીને અંયમયાત્રાને નિવાહ કરે છે.

આ દેકાળે “અયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” એ અનન્તરસૂત્ર સાથે સંબંધ છે. ત્યાં ‘નિરતિચાર ચારિત્રનું પાલન લોકનિશ્રાથી થાય છે’ એમ કહેલ છે. તેમાં પણ અંયમી મુનિએ આહારની શુદ્ધિનો સારી રીતે ધ્યાન રાખવો જોઈએ એ વાત આગળ ઉપર પ્રગટ કરવામાં આવશે.

ગૃહસ્થ પોતાના પુત્ર પુત્રી આદિ નિમિત્તે શત્રુ-પટ્કાય સમારંભરૂપ માવઘ વ્યાપારોં અને ભોજનાદિ સાધનોનો આરંભ કર્યા કરે છે તેજ વાત સૂત્રકાર કહે છે:-“જમિણં” ઇત્યાદિ.

છાયા—યદિદં વિરૂપરૂપૈઃ શસ્ત્રૈર્લોકાય કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તે, તદ્વથા—આત્મને તસ્ય પુત્રેભ્યો દુહિતૃભ્યઃ સ્ત્રુપાભ્યો જ્ઞાતિભ્યો ધાત્રીભ્યો રાજભ્યો દાસેભ્યો દાસીભ્યઃ કર્મકરેભ્યઃ કર્મકરીભ્ય આદેશાય પૃથક્પ્રહેણકાય શ્યામાશાય પ્રાતરાશાય સન્નિધિસન્નિચયં ક્રિયતે, ઇહૈકેપાં માનવાનાં ભોજનાય ॥ મૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘યદિદ’—મિત્યાદિ । યદ્ ઇદમ્=સુખદુઃખપ્રાપ્તિપરિહારરૂપં પ્રયોજન-મુદ્દિશ્ય વિરૂપરૂપૈઃ=વહુપ્રકારૈઃ શસ્ત્રૈઃ=પટ્કાયસમારમ્ભરૂપૈઃ લોકાય=અસંયતલોકાય-સ્વશરીરપુત્રકલત્રાદિરૂપાય કર્મસમારમ્ભાઃ=પટ્કાયોપમર્દનરૂપાઃ પચનપાચનાદિસાવ-દ્યવ્યાપારાઃ ક્રિયન્તે, યદ્વા કર્મણોઽપ્રકારકસ્ય સમારમ્ભાઃ=ઉપાર્જનોપાયાઃ ક્રિયન્તે ।

સુખપ્રાપ્તિ ઓર દુઃખપરિહાર કે પ્રયોજન સે ગૃહસ્ત્રીજન જપને શરીર પુત્રકલત્રારૂપ લોક કે લિયે અનેક પ્રકાર કે પટ્કાયસમારમ્ભરૂપ પચન-પાચનાદિ સાવદ્ય વ્યાપાર કરતે હૈં, ડનકા દિગ્દર્શન કરાતે હુએ સૂત્ર-કાર કહતે હૈં—

ગૃહસ્થ જીવન ભોજન-કૃષિ-વાણિજ્ય આદિ સાવદ્ય વ્યાપાર કે વિના ચલતા નહીં હૈ । ઇસમેં ઇસ તરહ કે અનેક પ્રકાર કા આરમ્ભ જીવોં કો કરના હી પડતા હૈ । જહાં આરંભ-સમારંભ હૈ વહાં જીવોં કી હિંસા અવશ્યંભાવી હૈ । હિંસા સે આસ્રવ હોતા હૈ, ઓર ઇસસે જીવોં કા સંસાર વંધન સે છુટકારા હોના વડા કઠિન હોતા હૈ । ઇસીલિયે આત્મા કો સાવદ્યનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરને કી આવશ્યકતા હૈ ।

ગૃહસ્થ લોક અપને લિયે તથા પુત્રોં કે લિયે પુત્રિયોં કે લિયે પુત્ર-વધુઓં કે લિયે, જાતિભાઈયોં, સગે સંવંધિયોં ંવં કુટુંબિયોં કે લિયે,

સુખપ્રાપ્તિ અને દુઃખપરિહારના પ્રયોજનથી ગૃહસ્થી જન પોતાનું શરીર પુત્ર કલત્રાદિરૂપ લોક માટે અનેક પ્રકારના પટ્કાયસમારંભરૂપ પચનપાચનાદિ સાવદ્ય વ્યાપાર કરે છે તેનું દિગ્દર્શન કરાવીને સૂત્રકાર કહે છે—

ગૃહસ્થ જીવન ભોજન-કૃષિ-વાણિજ્ય આદિ સાવદ્ય વ્યાપાર વિના ચાલતું જ નથી. તેમાં આવા પ્રકારનાં અનેક પ્રકારે આરંભ જીવોને કરવાં જ પડે છે. ત્યાં આરંભ-સમારંભ છે ત્યાં જીવોની હિંસા અવશ્યંભાવી છે. હિંસાથી આશ્રવ થાય છે, અને તેનાથી જીવોનો સંસારબંધનથી છુટકારો થવો ઘણું કઠિન થઈ પડે છે, માટે આત્માને સાવદ્યનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની આવશ્યકતા છે

ગૃહસ્થલોક પોતાના માટે તથા પુત્રો માટે, પુત્રિયો માટે, પુત્રવધુ માટે, જાતિભાઈઓ, સગાં-સંબંધિઓ અને કુટુંબિયો માટે, માતા-પિતા, સાસુ-સસરા

અથવા 'લોગસે'—તિ તૃતીયાર્થે પઢી, લોકેન કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તિ ઇતિ ।

અત્રેદં તત્ત્વમ્, 'તં જહા' ઇતિ મૂળપાઠેન લોકાયેતિ ચતુર્થ્યેવ સાધીયસી-યદયં સમારમ્ભસ્તં પૂર્વં સામાન્યતો લોકપદેનોપદર્શ્ય વિશેષતો દર્શયિતું 'તં જહા' ઇત્યસ્ય પ્રતિપાદનમ્ ।

યદિ ચ તૃતીયાર્થેઽપિ પઢી, સાઽપિ સામાન્યતઃ સમારમ્ભા લોકેન ક્રિયન્તિ ઇત્યુપદર્શ્ય કિમર્થમિતિ જિજ્ઞાસાયાં 'તંજહા' ઇત્યપિ કથञ્ચિત્સમાધાનં ભવિતુર્મર્હતિ ।

યદયં પાકકૃપિવાણિજ્યાદિસાવધવ્યાપારમારમ્ભન્તે તાન્ દર્શયતિ—'તદ્યથેતિ' તસ્ય સમારમ્ભશીલસ્ય આત્મને=સ્વશરીરાર્થમ્, આત્મશબ્દોઽવ શરીરવાચકઃ, સ્વાયં સ્વયમેવ સમારમ્ભત ઇત્યર્થઃ ।

માતા-પિતા સાસુ-સસુર આદિ કે લિયે, સ્વજનોં કે લિયે, ધાયમાતા કે લિયે, રાજા કે લિયે દાસી દાસ નૌકર ચાકર ઔર પાહુનોં કે લિયે, પૃથક્-પ્રહેણક કે લિયે. અર્થાત્ કન્યાવિવાહ કે ઉત્સવ કા ભોજન, પ્રસ્થાન કે સમય રાસ્તે મેં સુચદ્-શામ રવાને કે લિયે સાથ મેં દિયે જાને વાલા ભોજન, તથા કાંસા પરોસા આદિ પૃથક્પ્રહેણક કહલાતા હૈ, ઉસકે લિયે પચન-પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરતે હૈં ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર યહાં પર યહ વાત સ્પષ્ટ કર રહે હૈં કિ—ગૃહસ્થ લોગ અપને તથા અપને સગે સંબંધિયોં પૂર્વં ચાલ-ચલોં વગેરહ કે લિયે ભોજન વગેરહ આરમ્ભોં કો નિતપ્રતિ કરતે રહતે હૈં । સર્વવિરતિ મુનિ કે શરીર કી યાત્રા કા નિર્વાહ ઉનકે યહાં સે માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજન સે અછ્છી તરહ હો સકતા હૈ, હસલિયે મુનિ કો સાવધ વ્યાપાર કરને કી આવશ્યક-

આદિ માટે, સ્વજનો માટે, ધાયમાતા માટે, રાજા માટે, દાસી-દાસ નૌકર-ચાકર માટે, મહેમાનો માટે, પૃથક્પ્રહેણકને માટે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહના ઉત્સવનું ભોજન, સુમાદરી સમય રસ્તામાં સવારચાંજ ખાવા માટે સાથે આપવામાં આવતું ભોજન, અને કાંસા પિરસણું આદિ પૃથક્પ્રહેણક કહેવાય છે, તેને માટે પચન-પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરે છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ ઠેકાણે એ વાત સ્પષ્ટ કરે છે કે—ગૃહસ્થ લોક પોતાના તથા પોતાના સગાસંબંધિયો અને છેકગં-છંયાં વિગેરે માટે ભોજન વિગેરે આરંભો કરકરમેશ કરનાં જ રહે છે. સર્વવિરતિ મુનિના શરીરની યાત્રાનો નિર્વાહ તેને ત્યાંથી માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજનથી મારી દીતે થઈ શકે છે, માટે મુનિને સાવધ વ્યાપાર કરવાની આવશ્યકતા જ નથી, આવધ વ્યાપારથી હિંસાંધવાના

કિન્ન-પુત્રેભ્યઃ, દુહિતૃભ્યઃ=પુત્રીભ્યઃ, સ્તુપામ્ભ્યઃ=પુત્રવધૂભ્યઃ, જ્ઞાતિભ્યઃ=પૂર્વપશ્ચાત્સમ્વન્ધિભ્યઃ, માતા-પિતૃ-શ્વશ્રૂ-શ્વશુરાદિભ્ય ઇત્યર્થઃ, સ્વજનેભ્યઃ, ધાત્રી-ભ્યઃ=ઉપમાતૃભ્યઃ, રાજભ્યઃ, દાસેભ્યઃ=મૃત્યેભ્યઃ, દાસીભ્યઃ, કર્મકરેભ્યઃ=પરિચારકેભ્યઃ, કર્મકરીભ્યઃ=પરિચારિકાભ્યઃ, આદિશ્યતે=આજ્ઞાપ્યતે પરિજનઃ સત્કારાર્થં યસ્મિન્નાગતે સ આદેશઃ=પ્રાવૂર્ણકાદિસ્તસ્મૈ, પૃથક્પ્રહેણકાય ' પૃથક્=વિભિન્નરૂપેણ પ્રહેણકઃ=ઋક્ષિંશ્ચિદુત્સવે ભોજનોપાયનં લોકેભ્યો દીયમાનં પૃથક્પ્રહેણક ઇત્યુચ્યતે ।

કતા હી નહીં હૈ । સાવચ વ્યાપારોં સે હિંસા હોને કે કારણ ઉસ અવસ્થા મેં સર્વવિરતિ સંયમ કી આરાધના હો હી નહીં સકતી, હસલિયે મુનિ કા સંયમ નિર્દોષ રીતિ સે પલ સકે હસ આશય સે યહ અવસ્થા પરમ્પરા સે કી ગઈ હૈ ।

મૂળ સૂત્ર મેં—“લોગસસ કમ્મસમારંભા કજ્જંતિ” યહ પાઠ હૈ, હસકી સંસ્કૃત છાયા—“લોકાય કર્મસમારંભાઃ ક્રિયન્તે” હોતી હૈ । જિસકા અર્થ લોકોં-અસંયતોં કે લિયે ષટ્કાય કે ઉપમર્દનરૂપ સાવચ વ્યાપારોં કા આરમ્ભ કિયા જાતા હૈ । અથવા લોક કે દ્વારા કર્મસમારમ્ભ કિયે જાતે હૈ, યહ અર્થ ભી હોતા હૈ । પહિલે સૂત્રકાર સાવચવ્યાપારરૂપ કર્મસમારમ્ભ કા નિમિત્ત કારણ સામાન્યતયા અસંયત લોકોં કો બતલાતે હુઅ હસી બાત કો વિશેષ રીતિ સે ખુલાશા કરને કે અભિપ્રાય સે “તં જહા” હસ પદ સે વ્યક્ત કરતે હૈ । તથા “લોકોં કે દ્વારા જો સાવચ-વ્યાપારરૂપ કર્મસમારમ્ભ કિયા જાતા હૈ વહ કિસ લિયે કિયા જાતા હૈ”

કારણે આ અવસ્થામાં સર્વવિરતિ સંયમની આરાધના બની જ શકતી નથી માટે મુનિ સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળી શકે એ આશયથી આ અવસ્થા પરંપરાથી કરવામાં આવેલ છે.

મૂળસૂત્રમાં—“લોગસસ કમ્મસમારંભા કજ્જંતિ” એ પાઠ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા—“લોકાય કર્મસમારંભાઃ ક્રિયન્તે” છે જેનો અર્થ લોકો-અસંયતોને માટે ષટ્કાયના ઉપમર્દનરૂપ સાવચ વ્યાપારોનો આરંભ કર્યો જાય છે, અથવા લોકોદ્વારા કર્મસમારંભ કરાય છે એ પણ અર્થ થાય છે પહેલાં સૂત્રકાર સાવચવ્યાપારરૂપ કર્મસમારંભના નિમિત્ત કારણ સામાન્યતયા અસંયત લોકોને બતાવીને તે વાતનો વિશેષ રીતિથી ખુલાસો કરવાના અભિપ્રાયથી “તંજહા” આ પદથી સ્પષ્ટ કરે છે. તથા “લોકો દ્વારા જે સાવચવ્યાપારરૂપ કર્મ સમારંભ

યદ્વા કન્યાપરિણયોત્સવે કન્યાપિતૃગૃહે વિભિન્નરૂપેણ યદ્ગોઞ્યં સ પૃથક્પ્રહેણકઃ ।
અથવા પ્રસ્થાનસમયે જામાતૃભ્યો વિભિન્નરૂપેણ દીયમાનં પ્રાથેયં પૃથક્પ્રહેણરૂપદેન
કલ્યતે, તસ્મૈ । ‘શ્યામાશાય’ શ્યામાયાં રાત્ર્યામ્, અશનમાશઃ=શ્યામાશસ્તસ્મૈ ।
‘પ્રાતરાશાય’ પ્રાતઃ=પ્રાતઃકાલે આશો=ભોજનં પ્રાતરાશસ્તસ્મૈ કર્મસમારમ્ભાઃ
ક્રિયન્તે । તમેવ વિશિનદ્વિ-‘સન્નિધિસન્નિચયમ્’ ઇત્યાદિ, સન્નિધાનં સન્નિધિઃ=અલ્પ-
કાલમ્ધાયિદ્રવ્યાણાં સંગ્રહકરણમ્, દધિ-ભક્ત-કૃગર-વ્યજ્ઞનાદીનાં સ્થાપનમ્ ।

અપિ ચ-‘સન્નિચયઃ’ સમ્યગ્ નિચયનં=સદ્ગ્રહણં સન્નિચયઃ=ચિરસ્થાયિનાં ઘૃત-
તૈલ-ગુડાદિદ્રવ્યાણાં સદ્ગ્રહઃ, સન્નિધિશ્ચ મંનિચયશ્ચ સન્નિધિ-સન્નિચયમ્, તત્
ક્રિયતે । મુત્રે પુંસ્ત્રમાર્પત્વાન્ । યદ્વા-સન્નિધેઃ=અશનવશનાદેઃ સન્નિચયઃ=સદ્ગ્રહઃ
ક્રિયતે । કિમર્થં સદ્ગ્રહઃ ક્રિયતે? ઇત્યાદ-‘ઙ્હે’-તિ । ઙ્હ=સંસારે એકેષાં
=રુતિપયાનાં માનવાનાં=સમ્બન્ધિજનાનાં ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય, વિરૂપરૂપૈઃ
શત્રૈઃ કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તે ઇતિ ।

લોકાઃ પુત્રાવર્થે કર્માણિ સમારમન્તે એવ, તેભ્યઃ સંયમયાત્રાં નિર્વોદું માત્ર-
યાઽન્નાદિકમાદાય મુનિના વર્તિતવ્યમિતિ મૂત્રતાત્પર્યમ્ ॥ મુ૦ ૧ ॥

इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर उसका समाधान सूत्रकार ने “तं जहा”
पद से किया है ।

“सन्निधिसंनिचय ” यहां दो पद हैं-१‘सन्निधि’ और दूसरा ‘२
संनिचय । दही, भात, कृगर-खीचड़ी, व्यञ्जन-शाक आदि ‘सन्निधि’
पदसे ग्रहण किये गये हैं । घृत, तैल, गुड आदि पदार्थ ‘संनिचय’
पद से गृहीत हुए हैं । अथवा सन्निधि-अशन वशन आदि का संनिचय-
संग्रह करना वह सन्निधिसंनिचय है । कितनेक गृहस्थ अपने व
संबन्धिजनों के निमित्त भविष्यत्काल में उपभोग के अभिप्राय से
धान्यादि अनेक पदार्थों का संग्रह कर लिया करते हैं । इस संग्रह में

ધાય છે” તે શા માટે કરવામાં આવે છે, આ પ્રશ્નની છજાસા ધવાથી તેનું
સમાધાન મૂત્રકારે “તંજહા” પદથી કર્યું છે.

“ સન્નિધિમંનિચય ” આંહી બે પદ છે. ૧ ‘સન્નિધિ’ અને બીજું
૨ ‘સંનિચય’ હહી. ભાત, ખીચડી, શાક આદિ ‘સન્નિધિ’ પદથી લેવામાં આવેલ
છે. ઘી, તેલ, ગોળ આદિ પદાર્થ ‘સંનિચય’ પદથી લેવામાં આવેલ છે. અથવા
‘સન્નિધિ’ અશન વનન આદિનો ‘સન્નિચય’ સંગ્રહ કરવો તે સન્નિધિસંનિચય
છે. કેટલાક ગૃહસ્થ પોતાને અને મળધીનનો નિમિત્ત ભવિષ્ય કાળમાં ઉપભો-
ગના અભિપ્રાયથી ધાન્યાદિ અનેક પદાર્થોનો સંગ્રહ કરે છે. આ સંગ્રહમાં

મવિવ્યદુપભોગાય સન્નિધિ-સન્નિચયપ્રવૃત્તે લોકે સંયમિના કિ વિધેયમિત્યાહ-
'સમુદ્વિષ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સમુદ્વિષ અણગારે આરિષ આરિયપન્ને આરિયદંસી
અયં સંધિ-ત્તિ અદક્ષૂ , સે નાઈષ નાઈયાવણ ન સમણુજાણણ
સઘ્વામગંધં પરિજ્ઞાય નિરામગંધો પરિવ્વણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સમુત્થિતોડનગાર આર્ય આર્યપન્ન આર્યદર્શી અયં સન્નિધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્,
સ નાદદીત નાદાપયેત્ ન સમનુજાનીયાત્, સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ
પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—'સમુત્થિત' ઇત્યાદિ । સમુત્થિતઃ=સમ્=સમીચીનં ચારિત્રાચરણે
ઉત્થિતઃ=સમુત્થિતઃ-સંયમારાધનસમુદયત્ ઇત્યર્થઃ, અનગારઃ=અવિદ્યમાનમગારં
ગૃહં यस્ય સોડનગારો દ્રવ્યભાવગૃહરહિતઃ, આર્યઃ=આરાદ્ દૂરં ગતો હેયધર્મેભ્યો યઃ
અનેક પ્રકાર સે સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ હોને કી વજહ સે ત્રસ ઇવં
સ્થાવર જીવોં કી હિંસા હોતી હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય કે લિયે અપને-અપને યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન-
સમૂહ કે સંગ્રહ કરને મેં તત્પર રહે હુણ જનસમુદાય કે વીચ મેં સંયમી
મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? ઇસકે પ્રત્યુત્તર મેં સૂત્રકાર કહતે હૈ—
'સમુદ્વિષ' ઇત્યાદિ ।

જો નિર્મલ ચારિત્ર કે આચરણ મેં ઉત્થિત હૈ, અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્ર
કે આરાધન કરને મેં જો અચ્છી તરહ સે પ્રયત્નશીલ હૈ ઉસકા નામ
સમુત્થિત હૈ । જિસકે ઘર નહીં હૈ ઉસકા નામ અનગાર હૈ । અગાર કે દો

અનેક પ્રકારથી સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે જેથી તેમાં ત્રસ અને સ્થાવર
જીવોની હિંસા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય માટે પોતપોતાના યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન સમૂહનો સંગ્રહ
કરવામાં તત્પર રહેલા જનસમુદાયની વચમાં સંયમી મુનિએ શું કરવું જોઈએ,
તેના પ્રત્યુત્તરમાં સૂત્રકાર કહે છે—'સમુદ્વિષ' ઇત્યાદિ.

જે નિર્મળ ચારિત્રના આચરણમાં ઉત્થિત છે અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્રના
આરાધન કરવામાં જે સારી રીતે પ્રયત્નશીલ છે તેનું નામ સમુત્થિત છે. જેને અગાર-
ધર નથી તેનું નામ અનગાર છે. અગારના બે પ્રકાર છે. એક દ્રવ્ય-અગાર અને બીજો

સ આર્યઃ=શ્રુતચારિત્રરૂપધર્મારાધનયોગ્યઃ । યદ્વા-વિષય-કપાય-કાષ્ઠચ્છેદ-
કત્વેનાઽઽરાસાદૃશ્યાદારા=રત્નત્રયં, તાં યાતિ=પ્રાપ્નોતિ યઃ સ આર્યઃ=સર્વથા સકલ-
કલ્મષપરાશિકલુપિતવૃત્તિરહિત ઇત્યર્થઃ । ‘આર્યપ્રજ્ઞઃ’ આર્યા=શ્રેષ્ઠા પ્રજ્ઞા=મતિ-
ર્યસ્ય સ આર્યપ્રજ્ઞઃ હૈયોપાદેયવિવેકવાન્ । એવમાર્યદર્શી=આર્ય-યુક્તિયુક્તં દ્રષ્ટું શીલં
યસ્યેત્યાર્યદર્શી=આરમ્ભજન્યકટુવિપાકદર્શી । ય એવમ્ભૂતઃ પુનઃ ‘અયં સન્ધિ’-રિતિ
અયં=પ્રત્યક્ષોપલભ્યમાનઃ સન્ધિઃ-પારગમનાધઃપતનયોર્મધ્યે સન્ધિરિવ સન્ધિઃ-
આર્યક્ષેત્ર-સુકુલોત્પત્તી-ન્દ્રિયનિર્વૃત્તિ-શ્રદ્ધા-સંવેગ-રત્નત્રયપ્રાપ્તિલક્ષણં સન્ધિસ્થાનમ્,
ઇતિ=ઇત્યેવમ્ અદ્રાક્ષીત્=અજ્ઞાસીત્ । યદ્વા-અયં પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટઃ સન્ધિઃ-પ્રતિલેખન-

પ્રકાર હૈં । એક દ્રવ્ય-અગાર ઓર દૂસરા ભાવ-અગાર । અનગાર ઇન દોનો
પ્રકાર કે અગારોં સે રહિત હોતા હૈં । જો હેય ધર્મોં સે સદા દૂર રહતા
હૈં ઉસકા નામ આર્ય હૈં । આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આરાધન કરને
યોગ્ય હોતા હૈં, અથવા વિષયકપાયરૂપ કાષ્ઠ કા છેદક હોને સે આરા-
કરોંત કે સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મ કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈં વહ આર્ય હૈં, અર્થાત્
જિસકી સકલ કલ્મષ-પાપરાશિ સે કલુપિત પરિણતિ નહીં હૈં ઉસકા
નામ આર્ય હૈં । ઉત્તમ જિસકી મતિ હૈં, હેય ઓર ઉપાદેય કે વિવેક સે
જિસકા અન્તઃકરણ યુક્ત હૈં ઉસકા નામ આર્યપ્રજ્ઞ હૈં । યુક્તિયુક્ત દેખને
કા જિસકા સ્વભાવ હૈં ‘આરમ્ભજન્ય પાપોં કા વિપાક ભયંકર કષ્ટપ્રદ
હોતા હૈં’ ઇસ વાત કો ‘ભલી-મોંતિ સે જાનતા સમજતા હૈં વહ આર્યદર્શી
હૈં । સંસાર સે પાર હોના એવં ઉસમેં અધઃપતન હોના, ઇન દોનોં કે બીચ
મેં સન્ધિ કે સમાન આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ, ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા
શ્રદ્ધા, સંવેગ ઓર રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન હૈં । જો પ્રત્યક્ષ

ભાવ-અગાર, અનગાર આ બન્ને પ્રકારના અગારોથી રહિત હોય છે. જે હેય
ધર્મોથી સદા દૂર રહે છે તેનું નામ આર્ય છે. આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું
આરાધન કરવા યોગ્ય હોય છે અથવા વિષયકપાયરૂપ કાષ્ઠના છેદક હોવાથી આરા-
કરવતના સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મને જે પ્રાપ્ત કરે છે તે આર્ય છે. અર્થાત્ જેની
સકલકલ્મષ-પાપરાશિ થી કલુપિત પરિણતિ નથી તેનું નામ આર્ય છે. ઉત્તમ
જેની મતિ છે. હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી જેનું અંતઃકરણ યુક્ત છે તેનું નામ
આર્યપ્રજ્ઞ છે યુક્તિયુક્ત દેખવું એવો જેનો સ્વભાવ છે ‘આરભજન્ય પાપોનો
વિપાક ભયંકર કષ્ટપદ થાય છે’ આ વાતને જે ભલીભાતિથી બાણે છે, તેમજ
સમજે છે તે આર્યદર્શી છે, સંસારથી પાર થવું અને તેમાં અધઃપતન થવું, એ
બન્નેની વચ્ચેના સન્ધિસમાન આર્યક્ષેત્ર, સારા કુળમાં જન્મ, ઇન્દ્રિયોની પૂર્ણતા,
શ્રદ્ધા, સંવેગ અને રત્નત્રયની પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન છે. જે આ પ્રત્યક્ષ

પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાયા યઃ સમુચિતઃ કાલ ઇતિ યોઽજ્ઞાસીદિત્યર્થઃ । એવંભૂતઃ સઃ
અનગારો નાદદીત=અકલ્પનીયમાહારાદિકં ન ગૃહ્ણીયાત્, શાસ્ત્રે તસ્ય પ્રતિષિદ્ધત્વાત્,
પટ્ટજીવનિકાયારમ્ભદોષસ્ય મુનિના પૂર્વ પરિત્યક્તત્વાચ્ચ, નાઽઽદાપયેત્=નાન્યં
ગ્રાહયેત્, ન સમનુજાનીયાત્=નાપીતરં સાધું ગૃહ્ણન્તમનુમોદયેત્ । યદ્વા-નાઽધ્યાત્માઽઽ-
દયેદિતિચ્છાયા, સ મુનિરિજ્જાલધૂમાદિપશ્ચન્નિધદોષદૂપિતમાહારં નાઘાત્=નાશ્ત્રી-
યાત્, નાદયેત્=નાન્યં ભોજયેત્ અદન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્ ।

અપિ ચ કિં કુર્યાદિત્યાહ-‘સર્વામગન્ધ’-મિત્યાદિ । સર્વામગન્ધમ્, આમં ચ
ગન્ધશ્ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વે આમગન્ધં, સર્વં ચ તદામગન્ધમિતિ સર્વામગન્ધમ્=અશુ-

પ્રતિભાસિત વાત કો અચ્છી તરહ સે જાનતા હૈ, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિ-
ક્રમણાદિ ક્રિયાઓં કે યુચિત અવસર કા જો જ્ઞાતા હૈ, યહ વાત “અયં
સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્” હસ પદ સે પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । હસ પ્રકાર કા
જો અનગાર હૈ વહ અકલ્પનીય આહારાદિક કો ન સ્વયં ગ્રહણ કરતા
હૈ, ક્યોંકિ સદોષ આહાર કા ગ્રહણ કરના અનગાર કે લિયે શાસ્ત્ર મેં
નિષિદ્ધ બતલાયા ગયા હૈ, હસકા કારણ-ષટ્કાય કે જીવોં કા આરમ્ભ
અનગાર ને પહિલે સે હી છોડ દિયા હૈ, વહ સદોષ આહાર સ્વયં ન
ગ્રહણ કરતા હૈ, ન દૂસરોં સે ગ્રહણ કરવાતા હૈ, ઓર ન હસ પ્રકાર કે
આહાર કો ગ્રહણ કરને વાલે અન્ય કિસી કી અનુમોદના ભી કરતા હૈ ।

અથવા “સે નાઈય નાઈયાવળ” હન પદોં કી સંસ્કૃત છાયા “સ ન
અઘાત્ ન આદયેત્” યહ ભી હૈ, હસકા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ-જ્જાલ ધૂમ
આદિ પાંચ પ્રકાર કે દોષોં સે દૂપિત આહાર કો ન સ્વયં કરે ઓર ન

પ્રતિભાસિત વાતને ધારી રીતે જાણે છે, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિક્રમણાદિ ક્રિયા-
ઓના ઉચિત અવસરનો જો જ્ઞાતા છે, એ વાત “અયસન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્”
આ પદથી પ્રદર્શિત કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારના જે આણુગાર છે તે અક-
લ્પનીય આહારાદિકને સ્વયં ગ્રહણ કરતા નથી, કારણ કે સદોષ આહારનું ગ્રહણ
કરવું આણુગાર માટે શાસ્ત્રમાં નિષિદ્ધ થતાવેલ છે તેનું કારણ ષટ્કાયના છવોનો
આરંભ આણુગારે પહેલાંથી જ છોડી આવેલ છે. તે સદોષ આહાર પોતે ગ્રહણ નથી
કરતા. બીજાથી ગ્રહણ નથી કરાવતા, અને આ પ્રકારના આહાર ગ્રહણ કરવાવાળા
અન્ય કોઈની અનુમોદના પણ નથી કરતા.

અથવા “સે નાઈય નાઈયાવળ” આ પદોની સંસ્કૃત છાયા “ન અઘાત્ ન
આદયેત્” એ પણ છે એનો અર્થ આ પ્રકારે છે જંગાલ, ધૂમ આદિ પાંચ
પ્રકારના દોષોથી દૂપિત આહારને ન સ્વયં કરે અને બીજાથી કરાવે નહિ, તથા

દ્વાહારં પરિજાય=જ-પરિજયા જ્ઞાત્વા નિરામગન્ધઃ, આમગન્ધાદશુદ્ધાહારાભિર્ગતો
 યઃ સ નિરામગન્ધઃ=ઉદ્ગમોત્પાદનૈષણાગતદ્વિચત્વારિંશદોપદૂષિતાહારાગ્રાહકઃ સન્
 ‘પરિવ્રજેત્’-પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્ રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ
 ભાવઃ । તીર્થકુકરનિર્દિષ્ટે સમુચિતાવસરે પ્રતિલેખન-પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાં કુર્વન્ન-
 નગાર આર્યદેશોત્તમકુલાદિકં મોક્ષકારણં પ્રાપ્ય સંસારપારાવારમુત્તીર્ય ચ સન્ધિ-
 સ્થાનીયે તત્તીરે વર્તમાનો નિર્ણલકર્મશ્ચયં કૃત્વા તતો નિષ્ક્રમિતુકામોઽસ્મીત્યેવં
 પરિજાવાન્ ‘અથઃકર્માદિદોષદૂષિતાહારો વિપ્રભક્ષણમિવાત્મગુણઘાતકઃ’ इति
 સમ્યગ્લોચ્ય તાદૃશમાહારં ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિત્યજ્ય પરિશુદ્ધમાહારાદિકં
 ભિક્ષમાણો વિહરેદિતિ સમુદિતાર્થઃ ॥ સ્૦ ૨ ॥

દૂસરોં કો કરાવે, તથા કરને વાલે કિસી અન્ય કી અનુમોદના મી ન
 કરે । “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” હસકા અર્થ હૈ
 અશુદ્ધઆહાર, અર્થાત્ જ-પરિજ્ઞાદ્વારા હસ પ્રકાર કે આહાર કો અશુદ્ધ
 જાનકર ‘નિરામગન્ધઃ’-અશુદ્ધ આહાર સે ભિન્ન શુદ્ધ આહાર કો કિ જો
 ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) ઇષણા (૧૦) સંવંધી વયાલીસ (૪૨) દોષોં
 સે રહિત હોતા હૈ ગ્રહણ કરે । યદિ હસ પ્રકાર કે આહાર કા લાભ સંયમી
 કો નહીં હોતા હૈ તો વહ હસ દૂષિત આહાર કો છોડકર અપને રત્નત્રય
 કી આરાધના મેં તત્પર રહે । તીર્થકર પ્રભુને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કા
 જો સમય નિશ્ચિત કર દિયા હૈ ઉસ સમય મેં ઉનર ક્રિયાઓં કો કરને
 વાલા, તથા આર્ય ક્ષેત્ર કા લાભ, ઉત્તમ કુલ મેં જન્મ, રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિ
 આદિ મોક્ષ કે કારણભૂત સંધિસ્થાનોં કો જિસને પાયા હૈ એસા અનગાર

કરવાવાળા બીજા કોઈની અનુમોદના પણ ન કરે “સર્વામગન્ધ પરિજ્ઞાય નિરા-
 મગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” આનો અર્થ છે અશુદ્ધ આહાર અર્થાત્ જ-પરિજ્ઞાદ્વારા
 આ પ્રકારના આહારને અશુદ્ધ જાણીને નિરામગન્ધ. અશુદ્ધ આહારથી ભિન્ન
 શુદ્ધ આહારને કે જે ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) ઇષણા (૧૦) સંવંધી ૪૨
 યેતાલીસ દોષોથી રહિત હોય છે તેને ગ્રહણ કરે છે. કદાચ આ પ્રકારના આહારનો
 લાભ સંયમીને ન થાય તો તે આવા દૂષિત આહારને છોડીને પોતાના
 રત્નત્રયની આરાધનામાં તત્પર રહે

તીર્થકર પ્રભુએ પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓનો જે સમય નિશ્ચિત કરી આપ્યો
 છે તે સમયમાં તે તે ક્રિયાઓને કરવાવાળા, તથા આર્યક્ષેત્રનો લાભ, ઉત્તમ
 કુળમાં જન્મ રત્નત્રયની પ્રાપ્તિ આદિ મોક્ષના કારણભૂત સંધિસ્થાનોને જેણે

निरामगन्ध इति निषेधे आमपदेन हननकोटित्रिकं, गन्धपदेन पचनकोटित्रिकं च प्रतिषिध्य क्रयणकोटित्रिकं निषेधयितुमुपदर्शयति—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

मूलम्—आदिस्समाणे कयविक्रयेसु से न किणे न किणावए
किणंतं न समणुजाणए ॥ सू० ३ ॥

छाया—आदिश्यमानः क्रयविक्रययोः स न क्रीणीयात्, न क्रापयेत्, क्रीणन्तं न समनुजानीयात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘आदिश्यमान’ इति। क्रयविक्रययोः, क्रयश्च विक्रयश्चानयोरितरेतर-योगद्वन्द्वे क्रयविक्रयौ, तयोः—आदिश्यमानः=व्यपदेशमलभमानः—‘अयं क्रयविक्रय-कर्ते’—ति व्यपदेशभागे न भवतीत्यर्थः ॥

‘सकल कर्म को नाश कर मैं इस संसारसमुद्र से पार होने की दृढ़ भावना वाला हूँ’ इस प्रकार के संसारसमुद्र के पार जाने के अभि-प्राय से जो समन्वित हो रहा है वह अनगार आधाकर्मादि दोष से दूषित आहार को विषमक्षण की तरह आत्मगुण का घातक जानकर तीन करण और तीन योग से उसका परित्याग ही कर देवे, और शुद्ध निर्दोष आहार की प्राप्ति से अपने शरीर की यात्रा का निर्वाह करता हुआ संयममार्ग में विचरे ॥ सू० २ ॥

‘निरामगन्ध’ इस निषेध में ‘आम’ पद से हननकोटित्रिक तथा ‘गन्ध’ पद से पचनकोटित्रिक का प्रतिषेध करके क्रयणकोटित्रिक का निषेध करने के लिये सूत्रकार कहते हैं—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

क्रय शब्द का अर्थ खरीदना और विक्रय शब्द का अर्थ बेचना

મેળવ્યા છે એવા અણુગાર “ સકલ કર્મનો નાશ કરી હું ” આ સંસારસમુદ્રથી પાર થવાની દૃઢ લાવનાવાળો છું ” આ પ્રકારે જે સંસાર સમુદ્રથી પાર જવાના અભિપ્રાયથી જે સમન્વિત થયેલ છે તે અણુગાર આધાકર્માદિ દોષથી દૂષિત આહારને વિષમક્ષણની માફક આત્મગુણના ઘાતક બનીને ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી તેનો પરિત્યાગ કરે, અને શુદ્ધ નિર્દોષ આહારની પ્રાપ્તિથી પોતાના શરીરની યાત્રાનો નિર્વાહ કરીને સંયમ માર્ગમાં વિચરે ॥ સૂ. ૨ ॥

નિરામગન્ધ આ નિષેધમાં આમ-પદથી હનનકોટિત્રિક તથા ગન્ધ-પદથી પચનકોટિ ત્રિકનો પ્રતિષેધ કરીને કયણકોટિત્રિકનો નિષેધ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘ અદિસ્સમાણે ’ ઇત્યાદિ

કય શબ્દનો અર્થ ખરીદવું, અને વિક્રય શબ્દનો અર્થ વેચવું, જે કય-

યદ્વા-‘અદૃશ્યમાનઃ’ ઇતિચ્છાયા, ક્રય-વિક્રયયોઃ અદૃશ્યમાનઃ=દ્રવ્યાદિભાવા-
ત્ક્રયવિક્રયવ્યવહારેઽદૃશ્યમાનોઽકિશ્ચનઃ સઃ=અનગારઃ આહારાદિકં ન ક્રીणीયાત્
નાન્યં ક્રાપયેત્, ક્રીણન્તમન્યં ન સમન્નુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્ । એતેન હનનાદિ-
નવકોટિપરિશુદ્ધમાહારાદિકં પરિગૃહ્યાક્ષારધૂમાદિદોષરહિતં મુનિર્મુક્તીતેતિ નિગૂઢાર્થઃ ।
અત્ર ક્રયપદેનોદ્ગમદોષાણાં ગ્રહણં, તેન ચોત્પાદનૈપણાદોષાઃ સંગૃહીતા ઇતિ સૂત્ર-
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

હૈ । જો ક્રય-વિક્રયરૂપ વ્યાપાર કો કરતા હૈ વહ વ્યવહાર મેં વેચને-
ખરીદને વાલા કહા જાતા હૈ । મુનિ, જો સર્વસાવધ ક્રિયાઓં કે ત્યાગી હો
ચુકે હૈં વે. ક્રય-વિક્રય રૂપ સાવધ વ્યાપાર કો નહીં કર સકતે હૈં । ઇસ
લિયે સૂત્રકાર યહાં ઇસ વાત કા પ્રદર્શન કરતે હુએ કહતે હૈં કિ-અનગાર
શુદ્ધ આહાર કે ન મિલને પર આહારાદિક અન્ય સે ન ખરીદે, ઓર મિલે
હુએ કો અન્ય કિસી કો ન વેચે । ક્યોંકિ ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કરને
સે ડસમેં ક્રય વિક્રય કા દોષ લાગૂ હોતા હૈ, જો સિદ્ધાન્તદૃષ્ટિ સે મુનિ
કે આચાર સે સર્વથા નિષિદ્ધ હૈ । અથવા “અદિસ્સમાણે” ઇસ પદ કી
સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાનઃ” યહ બી હોતી હૈ । ઇસકા ભાવ યહ હૈ
કિ-અનગાર અપને પાસ કિસી બી પ્રકાર કા દ્રવ્યાદિક તો રખતે હી
નહીં હૈં, ક્યોંકિ વે સકલ પરિગ્રહ કે ત્યાગી હોતે હૈં, સચિત્ત અચિત્ત
આદિ સમસ્ત પરિગ્રહ કે છોડને સે હી ડનમેં અપરિગ્રહતા આતી હૈ ।
ઇસીકો સૂત્રકાર યહાં પર પ્રકટ કરતે હુએ કહતે હૈં કિ-જબ મુનિકે પાસ

વિક્રય રૂપ વ્યાપાર કરે છે તે વ્યવહારમાં વેચવાખરીદવાવાળા કહેવાય છે. મુનિ
જે સર્વ સાવધ ક્રિયાઓના ત્યાગી બનેલ છે તે ક્રય-વિક્રયરૂપ સાવધ વ્યાપારને
કરી શકતા નથી, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનું પ્રદર્શન કરીને કહે છે કે-
અણુગાર શુદ્ધ આહાર ન મળવાને કારણે આહારાદિક બીજાથી ખરીદાવી શકે
નહિ, અને મળેલ હોય તે એનાથી બીજાને વેચી શકાય નહિ કારણ કે આ
પ્રકારનો વ્યવહાર કરવાથી તેમાં ક્રય-વિક્રયનો દોષ લાગુ પડે છે, જે સિદ્ધાન્ત-
દૃષ્ટિથી મુનિના આચારથી સર્વથા નિષિદ્ધ છે અથવા “અદિસ્સમાણે” આ
પદની સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાન.” એ પણ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે
કે-અણુગાર પોતાની પાસે કોઈપણ પ્રકારનું દ્રવ્યાદિક તો રાખતા જ નથી, કારણ
કે તે સકળ પરિગ્રહના ત્યાગી હોય છે. સચિત્ત અચિત્ત આદિ સમસ્ત પરિગ્રહના
છોડવાથી જ તેનામાં અપરિગ્રહતા આવે છે માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે પ્રગટ
કરતાં કહે છે કે-જ્યારે તની પાસે લેણદેણનો વ્યવહાર કરવામાં સહાયક બાહ્ય

લેન-દેન કે વ્યવહાર કરને મેં સહાયક વાહ્ય દ્રવ્યાદિક સામગ્રી નહીં હૈ તો વહ ઉસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કરને મેં સર્વથા અકિશ્ચિત્કર હૈ । તવ શુદ્ધ નિર્દોષ આહાર કે ન મિલને પર વહ ઉસ પ્રકાર કી આહારાદિક સામગ્રી કો ન તો સ્વયં खरीदता हूँ, और न दूसरों से खरीद करवाता हूँ, और खरीद करते हुए अन्य को न भला जानता हूँ, अतः नवकोटि-विशुद्ध आहार की ही उसे गवेषणा करनी चाहिये, और उसके प्राप्त होने पर मात्रानुसार उसे ग्रहण कर अपने संयम की रक्षा करने में ही सावधान रहना चाहिये । इसी को प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—

वह अनगार द्रव्यादिक के अभाव से क्रय विक्रय के व्यवहार में अकिञ्चन है, इसलिये आहारादिक को न स्वयं खरीदे और न दूसरों से उसे खरीदवावे, तथा इसे खरीदने वाले अन्य किसी की अनुमोदना भी न करे । इससे इस बात की पुष्टि की है कि—अनगार मन वचन काया से कृत, कारित एवं अनुमोदना द्वारा हननादि तीन, पचनादि तीन क्रयणादि तीन, एवं नवकोटि से विशुद्ध आहारादिक प्राप्त कर शरीर की पुष्टि के अभिप्राय से नहीं, किन्तु संयम की रक्षा के अभिप्राय से ही अंगारधूमादिदोषरहित हो उसका सेवन करे । सूत्र में कहे हुए क्रय विक्रय

द्रव्याદિક સામગ્રી નથી તો તે એ પ્રકારનો વ્યવહાર કરવામાં સર્વથા અકિશ્ચિત્કર છે, માટે શુદ્ધ નિર્દોષ આહારના ન મળવાથી તે એવા પ્રકારની આહારાદિક સામગ્રીને પોતે નથી ખરીદી શકતા, અને બીજાથી ખરીદાવી પણ શકતા નથી, અને ખરીદ કરવાવાળા બીજાને લલો પણ બાણતા નથી, માટે નવકોટિવિશુદ્ધ આહારની જ તેણે ગવેષણા કરવી જોઈએ, અને તેના પ્રાપ્ત થવાથી માત્રાનુસાર તેને ગ્રહણ કરીને પોતાની સંયમની રક્ષા કરવામાં જ સાવધાન રહેવું જોઈએ. તેને પ્રગટ કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે—

તે અણગાર દ્રવ્યાદિકના અભાવથી ક્રય-વિક્રયના વ્યવહારમાં અકિચ્ચન છે, માટે આહારાદિકને પોતે ન ખરીદે અને બીજાથી ખરીદાવે નહિ, તથા તે ખરીદવાવાળા બીજા કોઈની અનુમોદના પણ ન કરે. આથી આ વાતની પુષ્ટિ કરી છે કે—અણગાર મન, વચન કાયાથી કૃત કારિત અગર અનુમોદના દ્વારા હનનાદિ ત્રણ, પચનાદિ ત્રણ, ક્રયણાદિ ત્રણ, એમ નવ કોટિથી વિશુદ્ધ આહારાદિક પ્રાપ્ત કરી શરીરની પુષ્ટિના અભિપ્રાયથી નહિ પણ સંયમની રક્ષાના અભિપ્રાયથી અંગારધૂમાદિ-દોષરહિત થઈને તેનું સેવન કરે. સૂત્રમાં કહેલા ક્રય વિક્રય પદથી ઉદ્ભવ

પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટોડનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘સે ભિક્ષુ’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—સે ભિક્ષુ કાલઙ્ગે વલઙ્ગે માયઙ્ગે રેયઙ્ગે રવણયઙ્ગે વિણયઙ્ગે સસમયઙ્ગે પરસમયઙ્ગે ભાવઙ્ગે પરિગ્ગહં અમમાયમાણે કાલાણુટ્ટાર્ઠે અપહિણ્ણે દુહઓ છેત્તા નિયાઈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—સ ભિક્ષુઃ કાલઙ્ગો વલઙ્ગો માત્રાઙ્ગઃ રેદઙ્ગઃ ક્ષણકઙ્ગો વિનયઙ્ગઃ સ્વસમયઙ્ગઃ પરસમયઙ્ગો ભાવઙ્ગઃ પરિગ્રહમમાયમાનઃ કાલાણુષ્ઠાચી, અપતિઙ્ગઃ, દ્વિધાતશ્ચિન્વા નિયાતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘સ ભિક્ષુ’-રિત્યાદિ। સઃ—પૂર્વોક્તઃ સમુત્થિતેત્યાદિમુનિગુણગણયુક્તો ભિક્ષુઃ=ચારિત્રવાન્ કાલઙ્ગઃ—કાલં=પ્રતિલેખનાદિસમયં જાનાતીતિ કાલઙ્ગઃ।

અથવા કાલં=ભિક્ષાકાલં જાનાતીતિ કાલઙ્ગઃ, અકાલે ભૈક્ષાચરણેનાત્મનઃ ક્લેશાધિગમો ગ્રામનિન્દા ચ જાયતે, તતશ્ચ ભગવદાજ્ઞાવિરાધકત્વેન રેદપ્રકટનેન ચ ચારિત્રમાલિન્યં ભવત્યતોડનુચિતકાલે ભૈક્ષાદિકં નાચરણીયમિત્યાદ્યભિન્ન ઇત્યર્થઃ। યદ્વા કાલં=સુભિક્ષં દુર્ભિક્ષં દિનપ્રમાણં રાત્રિપ્રમાણં વા જાનાતીતિ કાલઙ્ગઃ।

પદ સે ઉદ્ગમ દોષોં કા ગ્રહણ હોતા હૈ, ઉસસે ઉત્પાદન ઔર ઇષ્ણા દોષોં કા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

इन पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त अनगार कैसा होता है? इसका खुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से भिक्षु’ इत्यादि।

वह चारित्रवान् अनगार कि जिसका वर्णन ‘समुट्ठिए’ इस द्वितीय सूत्र में किया जा चुका है वह; कालङ्ग-प्रतिलेखनादि क्रियाओं के अवसर का ज्ञाता होता है। अथवा ‘कालङ्ग’-शब्द का अर्थ-काल का जानने वाला-ऐसा है। इससे यह बात सूत्रकार प्रकट करते हैं कि-साधु को भिक्षाचरण के काल में ही भिक्षा के लिये गमन करना चाहिये; क्योंकि अकाल में उसके निमित्त

દોષોનું ગ્રહણ થાય છે તેનાથી ઉત્પાદન અને ઔષણાદિ દોષોનો પણ ગ્રહણ થઈ જાય છે. (સૂ ૩)

એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત આણુગાર કેવા હોય છે? તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘સે ભિક્ષુ’ ઇત્યાદિ.

તે ચારિત્રવાન આણુગાર કે જેનું વર્ણન ‘સમુટ્ઠિય’ આ બીજા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે તે ‘કાલઙ્ગ’—‘પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓના અવસરના જ્ઞાતા’ હોય છે, અથવા ‘કાલઙ્ગ’ શબ્દનો અર્થ ‘કાળના બાણુવાવાળા’ હોય છે. એથી આ વાત સૂત્રકાર અગટ કરે છે કે—સાધુઓ ભિક્ષાચરણના કાલમાં જ ભિક્ષા માટે જવું જોઈએ,

‘વલજ્ઞઃ’ વલં=સ્વશક્તિ પરશક્તિ વા યો જાનાતિ સ વલજ્ઞઃ=સ્વ-પરવલ્ગમિજ્ઞઃ,
‘માત્રાજ્ઞઃ’ માત્રાં જાનાતિ યઃ સ માત્રાજ્ઞઃ, યાવત્પ્રમાણાહારાદિગ્રહણેન ગૃહસ્થો ન
પુનરાસ્મભે પ્રવર્તતે । યદ્વા—સ્વસંયમયાત્રાનિર્વાહો યાવતાઽઽહારેણ ભવતિ, તાવન્મા-
ત્રાજ્ઞાનકુશલઇત્યર્થઃ । ‘ખેદજ્ઞઃ’ ખેદમ્=અભ્યાસં, સંસારપરિભ્રમણજન્યં શ્રમં વા

ક્રિયા ગયા ગમન એક તો અપને લિયે કલેશકારક હોતા હૈ, દૂસરે હસ
પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે ગામ મેં ઉસ સાધુ કી નિંદા બી હોતી હૈ । હસલિયે
આહાર લેને કે લિયે જો માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત હૈ ઉસસે વિપરીત
પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી-સાધુ કે ચારિત્ર મેં ભગવાન કી આજ્ઞા કા
વિરાધક હોને કી વજહ સે, ઓર અપને મેં ખેદ ઉત્પન્ન કરને કે નિમિત્ત
સે મલિનતા આતી હૈ, હસલિયે અકાલ મેં ભિક્ષાવૃત્તિ નહીં કરની ચાહિયે ।
‘કાલજ્ઞ’ શબ્દ કા અર્થ યહ બી હોતા હૈ—જો સુભિક્ષ-દુભિક્ષ, દિનપ્રમાણ
એવં રાત્રિ કે પ્રમાણ કો જાનતા હૈ ।

અપની શક્તિ એવં પરકી શક્તિ કો જો જાનતા હૈ વહ વલજ્ઞ હૈ ।
જિતને પ્રમાણ કા આહાર લેને સે ગૃહસ્થ ફિર દુવારા આરમ્ભ ન કરે,
અથવા જિતને આહાર કે ગ્રહણ સે અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ હો
સકતા હૈ, ઉતની હી માત્રા મેં આહાર લેના ચાહિયે । હસ પ્રકાર કી વિધિ
મેં જો કુશલ હોતા હૈ ઉસકા નામ માત્રાજ્ઞ હૈ ।

અભ્યાસ, અથવા સંસાર મેં પરિભ્રમણ સે ઉત્પન્ન હુણ કલેશ યા વદ્-

કારણ કે અકાળે તે નિમિત્તે થએલુ ગમન એક તો પોતાને માટે કલેશકારક થાય
છે, બીજું આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ગામમાં તે સાધુની નિંદા પણ થાય છે. માટે
આહાર લેવા માટે જે માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત છે તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ
કરવાવાળા સંયમી સાધુના ચારિત્રમાં ભગવાનની આજ્ઞાના વિરોધક હોવાના મતલબથી,
અને પોતાનામાં જેટલું ઉત્પન્ન કરવાના નિમિત્તથી મલિનતા આવે છે માટે અકા-
ળમાં ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહિ.

કાળજ્ઞ શબ્દનો અર્થ એ પણ થાય છે—જે સુભિક્ષ-દુભિક્ષ દિનપ્રમાણ
અને રાત્રિના પ્રમાણને જાણે છે.

પોતાની તેમજ બીજાની શક્તિને જે જાણે છે તે બલજ્ઞ છે, જેટલા પ્રમા-
ણમાં આહાર લેવાથી ગૃહસ્થ ફરીથી બીજી વાર આરંભ ન કરે, અથવા જેટલા
આહારના ગ્રહણથી પોતાની સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ થાય છે એટલી જ માત્રામાં
આહાર લેવો જોઈએ. આ પ્રકારની વિધિમાં જે કુશળ છે તેનું નામ માત્રાજ્ઞ છે.

અભ્યાસ અથવા સંસારમાં પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન થતાં કલેશ, અગર વદ્વાયિક

યો જાનાતિ સ રેદઙ્ગઃ, યદ્વા-રેદં=પદ્મજીવનિકાયદુઃખં જાનાતીતિ રેદઙ્ગઃ । યદ્વા-‘ ક્ષેત્રઙ્ગ ’ ઇતિ-ચ્છાયા, ક્ષેત્રમુત્તમકુલાદિરૂપં જાનાતિ યઃ સ ક્ષેત્રઙ્ગઃ । યદ્વા-ભૈક્ષાદિલાભક્ષેત્રપરિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । ‘ ક્ષણકઙ્ગઃ ’ ક્ષણ એવ ક્ષણકઃ પ્રતિલેખન-ભૈક્ષાદિકર્તવ્યકાલસ્તં જાનાતીતિ ક્ષણકઙ્ગઃ=નમસ્કારપૌરુષ્યાદિદશવિધપ્રત્યાખ્યાના-વસરઙ્ગઃ । ‘ વિનયઙ્ગઃ ’ વિનયં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવપેક્ષયા ગુરુસમીપે યથોક્તપ્રતિ-પત્તિલક્ષણં જાનાતિ યઃ સ વિનયઙ્ગઃ । યદ્વા-વિનયઙ્ગઃ=અભ્યુત્થાનાદ્યભિવન્દ-નાઙ્ગલિકરણાદિવિજ્ઞાતા । યદ્વા-ગુરુસમીપે ગર્વં ન કુર્યાન્ન દીનો ભવેત્, ન મિથો-કાયિક જીવોં કે દુઃખોં કા જો જ્ઞાતા હૈ ઉસકા નામ રેદઙ્ગ હૈ । અથવા-“ રેદ્યન્તે ” ઇસકી સંસ્કૃત છાયા “ ક્ષેત્રઙ્ગઃ ” યહ ભી હોતી હૈ, જો ઉત્તમ કુલાદિકરૂપ ક્ષેત્ર કા જ્ઞાતા, અથવા ભિક્ષાદિક લાભ કે ક્ષેત્ર કો જો જાનતા હૈ વહ ક્ષેત્રઙ્ગ હૈ ।

પ્રતિલેખન એવં ભિક્ષા કરને યોગ્ય કાલ કા નામ ક્ષણ હૈ, ઇસકો જો જાનને વાલા હૈ ઉસકા નામ ક્ષણઙ્ગ હૈ । નમસ્કાર, પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકાર કે પ્રત્યાખ્યાન કે અવસર કો જાનના યહ ઇસકા ફલિતાર્થ હૈ । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કી અપેક્ષા સે ગુરુ કા આદર સત્કાર કરના જો જાનતા હૈ ઉસકા નામ વિનયઙ્ગ હૈ । ગુરુ જિસ સમય અપની તરફ આવેં યા રૂઢે હોં ઉસ સમય રૂઢે હો જાના, નમસ્કાર કરના, હાથ જોડના આદિ ભી વિનય હૈ, ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કો જાનને વાલા ભી વિનયઙ્ગ કહલાતા હૈ । અથવા-ગુરુ મહારાજ કે સમીપ અહંકાર ન કરના, દીનતા જાહિર નહીં કરની, ન ઉનકી ગુસ્સા વાત કિસી કો કહની, ઇત્યાદિરૂપ ભી

છવેના દુઃખોનો જે જાતા છે તેનું નામ રેદઙ્ગ છે. અથવા “ રેદ્યન્તે ” તેની સંસ્કૃત છાયા ‘ ક્ષેત્રઙ્ગ ’ એ પણ થાય છે. જે ઉત્તમકુલાદિરૂપ ક્ષેત્રનો જ્ઞાતા, અથવા ભિક્ષાદિક લાભના ક્ષેત્રનો જે બાણકાર છે તે ક્ષેત્રઙ્ગ છે.

પ્રતિલેખન અને ભિક્ષા કરવાયોગ્ય કાલનું નામ ક્ષણ છે, તેના જે બાણકાર છે તેનું નામ ક્ષણઙ્ગ છે. નમસ્કાર પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકારના પ્રત્યાખ્યાનના અવસરને બાણવો તે તેનું ફલિતાર્થ છે. દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને લાવની અપેક્ષાથી ગુરુનો આદર સત્કાર કરવો જે બાણ છે તેનું નામ વિનયઙ્ગ છે, ગુરુ જે વખતે પોતાની તરફ આવે અગર ઉભા હોય તે વખતે ઉભા થવું, નમસ્કાર કરવો, હાથ જોડવા આદિ પણ વિનય છે. આ પ્રકારના વ્યવહારને બાણવાણા પણ વિનયઙ્ગ કહેવાય છે. અથવા ગુરુ મહારાજની સમીપ અહંકાર ન કરવો, દીનતા બહાર ન કરવી, તેની કોઈ ગુસ્સા વાત બીજાને ન કહેવી, ઇત્યાદિરૂપ પણ વિનય છે. જે આ પ્રકારના

રહસ્યાદિ બ્રુવીતેત્યાદિરૂપો વિનયસ્તદભિજ્ઞાનમિત્યર્થઃ । ‘સ્વસમયજ્ઞઃ’ સ્વં=નિજં સમયં=સિદ્ધાન્તં જાનાતિ યઃ સ સ્વસમયજ્ઞઃ, એવં પરસમયજ્ઞઃ-અન્યદીયસિદ્ધાન્તજ્ઞાનનિપુણઃ, ‘સ્વસિદ્ધાન્તે તત્પરતા પરસિદ્ધાન્તે ચોપેક્ષા કાર્યા’ઈત્યાદ્યભિજ્ઞઃ, યથા પરસમયે સ્નાનાદેરવશ્યકર્તવ્યત્વેન પ્રતિપાદિતેऽપિ સ્વસમયે તસ્ય મદર્પકરત્વેન મુનિના તત્પરિત્યાજ્યમેવેતિ યો વેત્તીત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

સ્નાનં મદર્પકરં, કામાર્જ્જ્ઞં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ । ૧ । ઇતિ

વિનય છે । જો હસ પ્રકાર કે વિનય કા જ્ઞાતા હોતા હૈં ઉસકા નામ મી વિનયજ્ઞ હૈં । અપને સિદ્ધાન્ત ઓર પર કે સિદ્ધાન્ત કે જ્ઞાતા કો સ્વસમયજ્ઞ એવં પરસમયજ્ઞ કહતે હૈં । જો સ્વસિદ્ધાન્ત કા જ્ઞાતા હોગા ઉસકે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્ત કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેગા-દ્વેષ ઉત્પન્ન નહીં હોગા । સ્વસિદ્ધાન્ત કે બોધ સે યુક્ત સાધુ કે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વોં કે પ્રતિ ન રાગ હોગા ઓર ન દ્વેષ હી-ઉનકે પ્રતિ ઉસકી સદા માધ્યસ્થ્ય ભાવના હી રહેગી । સમકિતી કે લિયે પરસિદ્ધાન્ત કે તત્ત્વોં કા બોધ હી અપને સિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપ્રાદિત તત્ત્વોં કે સ્વરૂપ કે પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધા કા કારણ બનતા હૈં । અન્ય સિદ્ધાન્તકારોં ને સાધુ અવસ્થા મેં મી સ્નાન વગેરહ કરના કર્તવ્ય બતલાયા હૈં, તબ જૈનસિદ્ધાન્ત મેં હસે ઉસ અવસ્થા મેં મદ ઓર દર્પકારી માના ગયા હૈં, હસલિયે હી સાધુ હસ પ્રવૃત્તિ સે સદા દૂર રહતે હૈં । કહા મી હૈં—

“સ્નાનં મદર્પકરં, કામાર્જ્જ્ઞં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ ॥ ૧ ॥”

વિનયના જ્ઞાતા હોય છે તેનું નામ પણ વિનયજ્ઞ છે. પોતાના સિદ્ધાંતનો અને બીજાના સિદ્ધાંતનો જે જ્ઞાતા છે તેને સ્વસમયજ્ઞ અને પરસમયજ્ઞ કહે છે. જે સ્વસિદ્ધાન્તના જ્ઞાતા હોયે તેના હૃદયમાં પરસિદ્ધાંત પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેશે-દ્વેષ ઉત્પન્ન થશે નહિ. સ્વસિદ્ધાન્તના બોધથી યુક્ત સાધુના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વો પ્રતિ રાગ અને દ્વેષ થતો નથી તેના પ્રતિ તેની સદા મધ્યસ્થ ભાવના જ રહેશે, સમકિતી માટે પરસિદ્ધાન્તના તત્ત્વોનો બોધ પોતાના સિદ્ધાંતમાં પ્રતિપ્રદિત તત્ત્વોના સ્વરૂપ પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધાનું કારણ બને છે. અન્ય સિદ્ધાન્તકારોએ સાધુ અવસ્થામાં પણ સ્નાન વિગેરે કરવું, કર્તવ્ય બતાવ્યું છે, ત્યારે જૈનસિદ્ધાન્તમાં તેને તે અવસ્થામાં મદ અને દર્પકારી માનેલ છે. માટે સાધુ આવી પ્રવૃત્તિથી સદા દૂર રહે છે. કહું પણ છે—

પરસમયનિરસનત્રીતરાગસમયસ્થાપનચતુર ઇતિ યાવત્ । ‘ભાવજ્ઞઃ’ ભાવમન્તઃ-
કરણાશયં સ્ત્રીયં પરકીયં વા યો જાનાતિ સ ભાવજ્ઞઃ=સ્વપરાશયવેત્તા, એવં ‘પરિગ્રહં’
પરિગૃહ્યતે યઃ સ પરિગ્રહઃ, યાવદાહારવસ્ત્રપાત્રાદિગ્રહણેન સંયમમાત્રા નિર્વહતિ,
તતોઽધિકસ્યૈપણીયસ્યાપિ મૂર્ચ્છાભાવેન ગ્રહણં પરિગ્રહસ્તમ્ અમમાયમાનઃ=અમમી-
કુર્વન્, તં મનસાઽપ્યનાદદાન ઇત્યર્થઃ ।

કિન્ચ-કાલાનુષ્ઠાયા=શાસ્ત્રવિહિતકાલે કર્તવ્યકરણશીલઃ । પૂર્વે ‘કાલજ્ઞઃ’ ઇતિ
કાલં જાનાતીતિ જ્ઞપરિજ્ઞયા પ્રોક્તમ્, અત્ર ચાવસરેઽનુષ્ઠાનવિધાયીતિ આસેવન

અર્થ સ્પષ્ટ છે । આ પ્રકાર કા સાધુ પરસિદ્ધાન્ત કા નિરસન ઔર
સ્વસિદ્ધાન્ત કા સંસ્થાપન કરને મેં બડા ચતુર રહતા છે । અપને ઔર પર
કે માનસિક અભિપ્રાય કે જ્ઞાતા કા નામ ભાવજ્ઞ છે । જિતને આહાર,
વસ્ત્ર, ઔર પાત્રાદિકોં સે સંયમયાત્રા નિભ સકતી છે ઉસસે અધિક કા
મૂર્ચ્છાભાવ સે ગ્રહણ કરના પરિગ્રહ છે । આ પરિગ્રહ કા જો સર્વથા
ત્યાગી હોતા છે-મન સે ઔર ઉસે ગ્રહણ કરને કી ચાહના નહીં કરતા છે
વહ પરિગ્રહ કી મમતા નહીં કરને વાલા કહલાતા છે । જિસ પ્રતિલેખનાદિ
ક્રિયા કે કરને કા જો સમય શાસ્ત્ર મેં નિયત ક્રિયા ગયા છે ઉસી કે
અનુસાર અપને આવશ્યક કાર્યોં કા કરને વાલા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયા કહલાતા
છે । કાલજ્ઞ મેં ઔર કાલાનુષ્ઠાયા મેં યહી ભેદ છે કિ-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ
આચરણ કે સમય કા જ્ઞાતા હોતા છે, ઔર કાલાનુષ્ઠાયા ઉસ ૨ કાલ મેં
અપને કર્તવ્ય કર્મોં કા કરને વાલા હોતા છે । જ્ઞ-પરિજ્ઞા કી અપેક્ષા કાલજ્ઞ

“સ્નાનં મદદર્પકરં, કામાદ્ધં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ” ॥ ૧ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે આ પ્રકારનો સાધુ પરસિદ્ધાન્તનું નિરસન અને સ્વસિદ્ધાન્તનું
સંસ્થાપન કરવામાં ઘણા ચતુર રહે છે પોતાના અને બીજાના માનસિક અભિ-
પ્રાયના જ્ઞાતાનું નામ ભાવજ્ઞ છે. જેટલો આહાર, વસ્ત્ર અને પાત્રાદિકોથી સંયમ-
યાત્રા નહીં શકે છે તેનાથી અધિક મૂર્ચ્છાભાવથી ગ્રહણ કરવું તે પરિગ્રહ છે.
આ પરિગ્રહના જે સર્વથા ત્યાગી હોય છે, મનથી પણ તે ગ્રહણ કરવાની યાહના
નથી કરતા તે પરિગ્રહની મમતા નહિ કરવાવાળા કહેવાય છે જે પ્રતિલેખનાદિ
ક્રિયા કરવાનો સમય શાસ્ત્રમાં નિયત કરેલ છે તે અનુસાર પોતાના આવશ્યક કાર્યોને
કરવાવાળા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયા કહેવાય છે. કાલજ્ઞમા અને કાલાનુષ્ઠાયામાં એ ભેદ
છે કે-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ આચરણના સમયના જ્ઞાતા હોય છે, અને કાલાનુષ્ઠાયા
તે તે કાલમાં પોતાના કર્તવ્ય કર્મોના કરવાવાળા હોય છે. જ્ઞ-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા

પરિજ્ઞા પ્રતિપાદિતમ્ । ‘ અપિ ચાપ્રતિજ્ઞઃ ’ અવિદ્યમાના પ્રતિજ્ઞા યસ્ય સોઽપ્રતિજ્ઞઃ પ્રતિજ્ઞા ચ કષાયપ્રાવલ્યેન ભવતિ । યથા ક્રોધાવિર્ભાવાન્નાસ્તિકમતાનુયાયિના પાલકબ્રાહ્મણેન સ્કન્દકાચાર્યસ્ય પશ્ચશતશિષ્યાન્ તૈલયન્ત્રે નિષ્પીઢ્યમાનાનવલોક્ય સ્કન્દકઋષિણ સકલરાજધાન્યા વિનાશપ્રતિજ્ઞા કૃતા । માનોદયાદ્વાહુવલિના ‘યજ્જ્યે-
ષ્ટોઽહં પૂર્વં પ્રવ્રજિતાનપ્તનવ્રતિસંખ્યકાન્ કનીયસઃ સ્વમ્નાતૃન્ ન વન્દે ’ ઇતિ પ્રતિજ્ઞા વ્યથાયિ । માયોદયાન્મહીસ્વામિજીવેન પૂર્વભવેઽન્યમુનીન્ પ્રતાર્ય પ્રત્યાખ્યાનપ્રતિ-
જ્ઞાઽકારિ । લોમોદયાત્સુભૂમચક્રવર્તિના સપ્તમખંડસાધનપ્રતિજ્ઞા વિહિતા । એવમાદિ-

और आसेवन-परिज्ञा की अपेक्षा कालानुष्ठायी समझना चाहिये । “अ-
प्रतिज्ञः” जिसके प्रतिज्ञा विद्यमान नहीं हैं उसका नाम अप्रतिज्ञ है ।
प्रतिज्ञा, कषाय की प्रचलता से होती है, जैसे क्रोध के आवेश से नास्ति-
कमतानुयायी पालक ब्राह्मण ने स्कन्दकाचार्य के पांच सौ शिष्यों को तैल
के यन्त्र में पेल दिया था । इस बात को देखकर स्कन्दकऋषि ने समस्त
राजधानी को नष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी । मानकषाय के उदय से
बाहुबली महाराज ने दीक्षित अपने से छोटे (९९) निन्यानवे भाइयों को
इस ख्याल से वन्दन नहीं किया था कि ‘ मैं इनसे बड़ा हूं-और ये मुझ
से छोटे हैं ’ । मायाकषाय के उदय से मल्ली स्वामी के जीवने पूर्वभव में
अन्य मुनियों के साथ साया करके प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा की थी । लोम-
कषाय के उदय से सुभूमचक्रवर्ती ने सप्तम खंड को साधने की प्रतिज्ञा
की, इत्यादि । इस प्रकार की कषायोदयजनित प्रतिज्ञा मुनियों को नहीं
करनी चाहिये, इसीलिये यहां ‘अप्रतिज्ञः’ यह विशेषण दिया है । अथवा

કાલજ અને આસેવન-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા કાલાનુષ્ઠાયી સમજવું જોઈએ.
“અપ્રતિજ્ઞ જેની પ્રતિજ્ઞા વિદ્યમાન નથી તેનું નામ અપ્રતિજ્ઞ છે. પ્રતિજ્ઞા,
કષાયની પ્રણવતાથી થાય છે. જેમ ક્રોધના આવેશથી નાસ્તિકમતાનુયાયી પાલક
બ્રાહ્મણ સ્કન્દકાચાર્યના પાંચસો શિષ્યોને તૈલના યંત્રમાં પિલ્યા હતા, તે વાતને
દેખીને સ્કન્દકઋષિએ સમસ્ત રાજધાનીને નષ્ટ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી હતી માન-
કષાયના ઉદયથી બાહુબલિ મહારાજે નીક્ષિત પોતાનાથી નાના (૯૯) નવાણું
ભાઈઓને તેવા ખ્યાલથી વંદન ન કર્યું કે “ હું તેમનાથી મોટો છું ” અને એ
મારાથી નાના છે.” માયાકષાયના ઉદયથી મલ્લી સ્વામીના જીવે પૂર્વ ભવમાં
અન્ય મુનિઓ સાથે સાયા કરીને પ્રત્યાખ્યાન પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. લોમકષાયના
ઉદયથી સુભૂમચક્રવર્તીએ માત્ર ખંડ સાધવાની પ્રતિજ્ઞા કરી, ઇત્યાદિ આવા
પ્રકારની કષાયોદયજનિત પ્રતિજ્ઞા મુનિઓએ કરવી જોઈએ નહિ, માટે અહીં આ

પ્રતિજ્ઞા મુનિના ન કાર્યેતિ તાત્પર્યમ્ । યદ્વા-મૈક્ષાચરણાદૌ ‘મૈવાહારાદિકં સ્યા’-
 દિત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન સાધીયસી । અથવા-યથા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તે ‘જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં
 મોક્ષઃ’ ઇત્યસ્તિ તત્ર એકતરેણૈવ તદધિગમ ઇત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન વિધેયેત્યર્થઃ, પञ्च-
 મહાવ્રતાતિરિક્તે કસ્મિંશ્ચિદપિ વિષયે પ્રતિજ્ઞા ન કર્તવ્યા મુનિના । યદિવા અપ્ર-
 તિજ્ઞઃ=અનિદાનઃ માયાશલ્યાદિરહિત ઇત્યર્થઃ । ईदृशोऽनगारः किं कृत्वा विहरती-
 त्याह—‘द्विधातः’ ઇત્યાદિ, દ્વિધાતઃ=ઉભૌ રાગદ્વૈપાવિત્યર્થઃ છિત્ત્વા=વ્યપનીય
 નિયાતિ=નિ=નિશ્ચયેન યાતિ=મોક્ષમાર્ગ પ્રાપ્નોતિ, પૂર્વગુણસમ્પન્નોઽપિ રાગવાન્
 દ્વેષવાંશ્ચ ન મોક્ષં લભત ઇતિ ભાવઃ ।

મિક્ષા કે સમય મેં ‘મુજે હી આહારાદિક મિલે’ એસી પ્રતિજ્ઞા નહીં
 કરની चाहिये, क्यों कि मुनि के लिये इस प्रकार की प्रतिज्ञा करना उचित
 नहीं है । ज्ञान और क्रिया इन दोनों से मुक्ति का लाभ स्याद्वादसिद्धान्त
 में प्रतिपादित किया गया है, परन्तु इस प्रकार की प्रतिज्ञा करना कि-
 ‘सिर्फ ज्ञानमात्र से या क्रियामात्र से ही मुक्ति होती है’ उचित नहीं है ।
 मुनियों को पंचमहाव्रतों के आराधन करने के सिवाय अन्य किसी भी
 विषय में प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिये ।

અથવા “અપ્રતિજ્ઞઃ” ઇસ શબ્દ કા અર્થ-‘માયાદિ ત્રીન શલ્યોં રહિત’
 હોતાં હૈ । અનગારોં કા સર્વ સંયમ શલ્યત્રય સે રહિત હોકર હી નિર્મલ હો
 સકતા હૈ । ઇન પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અનગાર હી રાગ ઓર દ્વેષોં કા
 ઉન્મૂલન કર “નિયાતિ” નિશ્ચય સે મોક્ષ કે માર્ગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।
 રાગદ્વેષ કે ઉન્મૂલન કે અભાવ મેં ઇન પૂર્વોક્તગુણસમ્પન્ન મી અનગાર

“અપ્રતિજ્ઞ” એ વિશેષણ આપેલ છે. અથવા—લિક્ષાસમયમાં ‘મને જ
 આહારાદિક મળે’ એવી પ્રતિજ્ઞા કરવી ભેદ એ નહિ, કારણ કે મુનિ માટે આવા
 પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવી ઉચિત નથી. જ્ઞાન અને ક્રિયા આ બંનેથી મુક્તિનો
 લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપાદિત કરેલ છે, પરંતુ એવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા
 કરવી કે ‘ફક્ત જ્ઞાનમાત્રથી અગર ક્રિયામાત્રથી જ મુક્તિ થાય છે’ તે ઉચિત
 નથી. મુનિએ એ પંચ મહાવ્રતાનું આરાધન કરવા સિવાય બીજા કોઈ પણ વિષયમાં
 પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી ભેદ એ

અથવા “અપ્રતિજ્ઞઃ” આ શબ્દનો અર્થ ‘માયાદિ ત્રણ શલ્યોથી રહિત’
 થાય છે. અણુગારોનો સર્વ સંયમ શલ્યત્રયથી રહિત બનીને જ નિર્મળ
 થઈ શકે છે. આ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અણુગાર જ રાગ અને દ્વેષનું ઉન્મૂલન કરી
 “નિયાતિ” નિશ્ચયથી મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરે છે રાગ દ્વેષના ઉન્મૂલનના

નનુ શાસ્ત્રે નાનાવિધાભિગ્રહરૂપા પ્રતિજ્ઞાઽભિહિતાઽત્ર તુ ‘મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવે’-
દિતિ કથિતં તત્કથમ્ ? इत्यत्राह—द्विधेति, अत्र पक्षे द्विधेतिच्छाया, द्विधा=
द्विप्रकारेण रागेण द्वेषेण च प्रतिज्ञां छित्त्वा=अकृत्वा नियाति=नियतं याति=संयमे
विहरति, रागद्वेषवशेन मुनिरनेषणीयमपि गृह्णाति भुङ्क्ते चेति रागद्वेषवती प्रतिज्ञा
मुनिना न विधेयेति भावः ॥ सू० ४ ॥

આચારવિશેષં પુનરપિ દર્શયતિ—‘વત્થં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વત્થં પડિગ્ગહં કંવલં પાયપુંછણં ઉગ્ગહં ચ કઢાસણં
एएसु चैव जाएज्जा ॥ सू० ५ ॥

છાયા—વત્થં પતદ્ગ્રહં કમ્વલં પાદપ્રોઞ્છનમવગ્ગહં ચ કઠાસનમેતેપુ ચૈવ
याचयेत् ॥ सू० ५ ॥

मुक्ति के लाभ से वंचित माना गया है ।

પ્રશ્ન—શાસ્ત્ર મેં અનેક પ્રકાર કી અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાઓં કા કથન
કિયા ગયા હૈ, ફિર યહાં પર “મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્” મુનિ કો પ્રતિજ્ઞા-
સંપન્ન નહીં હોના ચાહિયે, યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—રાગ ઔર દ્રેષ સે જો પ્રતિજ્ઞા કી જાની હૈ વહ સંયમી મુનિ
કે લિયે ઉચિત નહીં હૈ । તમી વહ અપને સંયમ માર્ગ મેં વિચર સક્તા
હૈ । રાગ ઔર દ્રેષ કે વશ હોકર કી ગર્હ પ્રતિજ્ઞા સે મુનિ અનેષણીય
મી આહારાદિક કો ગ્રહણ કર લેતા હૈ, હસલિયે રાગદ્રેષવાલી પ્રતિ-
જ્ઞાઓં કે કરને કા નિષેધ કિયા ગયા હૈ । યહ ભાવ “દુહઓ હેત્તા નિયાહ”
इन पदों से प्रकट होता है अतः इस प्रकार की प्रतिज्ञा मुनिजनों को
नहीं करनी चाहिये ॥ सू० ४ ॥

અભાવમાં આ પૂર્વોક્તગુણસંપન્ન પણ આણુગાર મુક્તિના લાભથી વંચિત માનેલ છે.

પ્રશ્ન—શાસ્ત્રમાં અનેક પ્રકારની અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાનું કથન કરેલ છે,
વળી આ ઠેકાણે “મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્” મુનિએ પ્રતિજ્ઞાસંપન્ન નહિ બનવું
જોઈએ, એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—રાગ અને દ્રેષથી જે પ્રતિજ્ઞા કરવામાં આવે છે, સંયમી મુનિએ
તેવી પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી જોઈએ. તે જ તે પોતાના સંયમ માર્ગમાં વિચરી શકે
છે. રાગ અને દ્રેષથી કરેલી પ્રતિજ્ઞાથી મુનિ અનેષણીય પણ આહારાદિક ગ્રહણ
કરી લે છે. માટે રાગ દ્રેષવાળી પ્રતિજ્ઞાઓ કરવાનો નિષેધ કરેલ છે. આ ભાવ
“દુહઓ હેત્તા નિયાહ” એ પદોથી પ્રગટ થાય છે. માટે આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા
મુનિજનોએ નહિ કરવી જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘વસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । મુનિર્યથાઽઽહારં યાચયેત્ ગૃહસ્થેભ્યસ્તથૈવ એતેષુ ચૈવ =ગૃહપતિષ્વેવ વસ્ત્રં=વસનં પતદ્ગ્રહં=પાત્રં વસ્ત્રગ્રહણેન વસ્ત્રૈષણા પતદ્ગ્રહગ્રહણેન ચ પાત્રૈષણા ચ સદ્ગૃહીતા, કમ્બલં=રહ્લકાદિકમ્, એતેનોર્ણાવસ્ત્રગ્રહણમ્, પાદપ્રોચ્છનં=રજોપહરણમ્, અવગ્રહમ્=અવગૃહ્યતે યઃ સોઽવગ્રહો વસતેરાજા, શક્રેન્દ્રરાજગૃહસ્થ-શય્યાતરસાધર્મિકભેદેનાવગ્રહઃ પશ્ચધા, એતેનાવગ્રહપ્રતિજ્ઞાઃ સર્વાઃ સદ્ગૃહીતાઃ, તપ-વગ્રહમ્, અપિ ચ કટાસનં કટશ્ચ=સંસ્તારશ્ચ આસનં ચ=પીઠફલકાદિકં ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વસ્તકટાસનમ્, આસ્યતેઽત્રેત્યાસનં શય્યા વા, સંસ્તારઃ સાર્દ્ધહસ્તદ્વય-પ્રમાણઃ, શય્યા ચ શરીરપ્રમાણા, એતત્સર્વં યાચયેત્=ગવેષયેત્, એપણીયં વસ્ત્રાદિકં યાચયેત્ નાનેપણીયમ્, ઇતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સંયમી મુનિ કે વિશેષ આચાર કો પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્ર-કાર કહતે હૈ—‘વત્થ’ ઇત્યાદિ ।

અનગાર જિસ પ્રકાર ગૃહસ્થોં સે આહાર કી યાચના કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઉનસે વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહને કે લિયે વસતિ-સ્થાન કી ઔર કટાસન કી ભી યાચના કરે । સૂત્ર મેં વસ્ત્ર કે ગ્રહણ સે વસ્ત્રૈષણા ઔર પાત્ર કે ગ્રહણ સે પાત્રૈષણા કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । કંબલ સે ઝની કંબલ જાનના ચાહિયે, રેશમી આદિ કમ્બલ નહીં । અવગ્રહ શબ્દ કા અર્થ-વસતિ-સ્થાન મેં ઠહરને કી આજ્ઞા । અવગ્રહ, શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, ઔર સાધર્મિક કે ભેદ સે ૫ પ્રકાર કા હૈ । અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દ સે અવગ્રહસમ્બન્ધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । કટ સે સંસ્તારક ઇવં આસન સે પીઠફલકાદિ જાનના ચાહિયે । આસન સે અપને શરીરપ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તાર સે (૨૥) ઢાઈ હાથકા

સંયમી મુનિના વિશેષ આચારને પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘વત્થ’ ઇત્યાદિ

અણુગાર જેવી રીતે ગૃહસ્થોથી આહારની યાચના કરે છે તે પ્રકારે તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહેવાને મકાનની અને કટાસનની પણ યાચના કરે. સૂત્રમાં વસ્ત્રના અહણથી વસ્ત્રૈષણા અને પાત્રના અહણથી પાત્રૈષણાનું અહણ કહેવાય છે. કંબલથી ઉનની કંબલ બહણવી બોધાયે, રેશમી આદિ કંબલ નહિ. અવગ્રહ શબ્દનો અર્થ—વસતિ-સ્થાનમાં રહેવાની આજ્ઞા અવગ્રહ-શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, અને સાધર્મિઓના લેદથી ૫ પ્રકારના છે. અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દથી અવગ્રહસંબંધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓનું અહણ છે. કટથી સંસ્તારક અને આસનથી પીઠ-ફલકાદિ બહણુ બોધાયે. આસનથી પોતાના શરીર પ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તારથી અઢી હાથનું બિછાનું—બિસ્તર સમજવો

મુનિર્માત્રયૈવાહારાદિકં ગૃહ્ણીયાત્, લાભાભાદૌ ચ મધ્યસ્થતામવલમ્બેતેતિ દર્શયતિ—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—લઘ્વે આહારે અળગારો માયં જાણિજ્ઞા સે જહેયં ભગવયા પવેડયં લાભુત્તિ ન મજ્જિજ્ઞા, અલાભુત્તિ ન સોડિજ્ઞા વહુંપિ લહું ન નિહે પરિગ્ગહાઓ અપ્પાણં અવસક્કિજ્ઞા અન્નહા ણ પાસણ પરિહરિજ્ઞા ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—લઘ્વે આહારેડનગારો માત્રાં જાનીયાત્, તદ્યથેદં ભગવતા પ્રવેદિતમ્, લાભ ઇતિ ન માત્રેત, અલાભ ઇતિ ન શોચેત્, વદ્ધપિ લઘ્વ્યા ન સ્તિહ્યાત્, પરિગ્રહા-
દાત્માનમવષ્ણકેત્, અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્ ॥ મુ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ । અનગારઃ=મુનિઃ, લઘ્વે=સમ્પ્રાપ્તે આહારે ઉપલક્ષ-
ણાદન્યસ્મિન્નપિ વસ્તુપાત્રશય્યાસંસ્તારકાદાવધિગતે સતિ ‘માત્રા’ યાવદ્ગ્રહણેન
વિછૌના-વિસ્તર સમદ્વંના ચાહિયે । અનગાર ઇન સમસ્ત એપણીય વસ્તુઓ
કી હી ગૃહસ્થોં સે યાચના કરે, અનેપણીયોં કી નહીં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અનગાર માત્રાપ્રમાણ હી આહારાદિકોં કો લેવે । અનેક લાભ ઔર
અલાભ મેં મધ્યસ્થ ભાવ રહે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર કહેતે હૈં—‘લઘ્વે
આહારે’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્ર મેં ‘આહાર’ ગ્રહ શબ્દ ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે વસ્ત્ર, પાત્ર,
શય્યા, સંસ્તારક આદિ કા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । આહાર એવં વસ્ત્રા-
દિક વસ્તુઓં કો ગૃહસ્થ કે પાસ ઉતની હી માત્રા મેં ઘોરના ચાહિયે કિ
જિસસે ઘોરના વાલે ગૃહસ્થ કો ઘુવારા આરંભ નહીં કરના પડે । તથા
ઇતની હી લેની ચાહિયે કિ જિનકે લેને સે અપની સંયમયાત્રા કા

લેઈ ઓ. અણુગાર આ સમસ્ત એપણીય વસ્તુઓની ગૃહસ્થોથી યાચના કરે,
અનેપણીયોની નહિ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અણુગાર માત્રાપ્રમાણથી આહારાદિ લે, તેના લાભ-અલાભમાં મધ્યસ્થ
ભાવ રાખે, આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—લઘ્વે આહારે ઇત્યાદિ.

આ સૂત્રમાં ‘આહાર’ આ શબ્દ ઉપલક્ષણ છે. તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, શય્યા,
સંસ્તારક આદિનું ગ્રહણ થાય છે. આહાર અને વસ્ત્રાદિક વસ્તુઓને ગૃહસ્થોને
પાસેથી એટલી માત્રામાં લેવી લેઈએ કે જેનાથી દેવાવાળા ગૃહસ્થને ફરીથી ખીજ
વાર આરંભ કરવો ન પડે, તથા એટલી જ માત્રા લેવી લેઈએ કે જે લેવાથી
પોતાની સંયમયાત્રાનું પાલન થઈ શકે, અર્થાત્ જે સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ

ગૃહપતિને પુનરાસ્મર્યે પ્રવર્તેત, યાવતા ચાત્મનઃ સંયમયાત્રાનિર્વાહો ભવતિ, યથા ચ પરિષ્ઠાપનીયં ન ભવેત્ તાવતી માત્રા, તાં જાનીયાત્=બુદ્ધ્યેત માત્રાતોઽધિકગ્રહણે સંયતમર્યાદાસ્વલનાત્ । એતંત્સર્વે ‘જમિણં વિરૂવરૂવેહિં’ ઇત્યુદ્દેશસ્યાદિમમૂત્રમારમ્બૈ-તાવત્પર્યન્તં ન મયા સ્વબુદ્ધ્યા પ્રોક્તમિતિ દર્શયતિ—‘તદ્યથેત્યાદિ । તદ્યથા—ઇદમ્-ઉદ્દેગારમ્ભતોઽવ્યવહિતમૂત્રપર્યન્તમભિવ્યાપ્ય યદભિહિંતં તત્સર્વે ભગવતા પ્રવેદિતમ્=ઉક્તમ્ । એતેન પૂર્વોક્તમૂત્રાદભિહિતાર્થેઽવશ્યકર્તવ્યતા પ્રદર્શિતા, અન્યથા ભગવદાજ્ઞા વિરાધકત્વમાપદ્યેતેતિ સંગ્રહિતમ્ । અપિ ચાનગારઃ કિં કુર્યાદિતિ દર્શયતિ—‘લાભ ઇતી’-તિ, લાભઃ=અશનવસનાદર્મમૈવાધિગમ ઇતિ ચેતસિ પરિચિન્ત્ય ન માદ્યેત=ન મોદેત નાભિમાનં કુર્યાદિત્યર્થઃ ।

નિર્વાહ હો સકે, અર્થાત્ જો સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કરને મેં કિસી તરહ સે વાધક ન બન સકે । લેતે સમય યહ ધ્યાન અવશ્ય રખના ચાહિયે, એસા ન હો કિ-અધિક લેને પર પરિષ્ઠાપન કરના પડે । ઇતના ધ્યાન રખના હી માત્રા હૈ । ઇસ માત્રા કી મર્યાદા કા ઉલ્લંઘન કરને સે યથાવત્સંયમ કા નિર્વાહ નહીં હો સકતા ।

શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-યહ સબ કુછ જો ઇસ ઉદ્દેશ કે પ્રથમ સૂત્ર સે લગા કર યહાં તક કહા ગયા હૈં વહ મૈને અપની નિજ કલ્પના સે નહીં કહા હૈં, કિન્તુ વીતરાગ પ્રભુ ને યહ સબ પ્રકટ કિયા હૈં । ઇસલિયે જો કુછ યહાં તક કહા ગયા હૈં સંયમી મુનિ કા કર્તવ્ય હૈં કિ ઉસ પર પૂર્ણ ધ્યાન રખે, ઓર ઉસકા અપને સંયમ કો નિર્મલ બનાવે કે લિયે અવશ્ય પાલન કરે, નહીં તો ભગવાન કી આજ્ઞા કા વિરાધક બનના પડેગા ।

કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારે બાધક ન બની શકે. લેતી વખત એ ધ્યાન અવશ્ય રાખવું બોધ્યે, એવું ન બને કે અધિક લેવાથી પરિષ્કાપન કરવું પડે આટલું ધ્યાન રાખવું તે માત્રા છે. આ માત્રાની મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવાથી બરોબર સંયમનો નિર્વાહ બની શકતો નથી.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે:—આ બધું જે એ ઉદ્દેશના પ્રથમ સૂત્રથી લઈને અહીંઆ સુધી કહ્યું છે તે મેં ભારી પોતાની કલ્પનાથી કહેલ નથી. પણ વીતરાગ પ્રભુએ જ આ બધું પ્રગટ કરેલ છે. માટે જે કંઈ અહીંઆ સુધી કહ્યું છે તે ઉપર સંયમી મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તેના ઉપર પુરેપુરું ધ્યાન આપે, અને તેનું પોતાના સંયમને નિર્માણ બનાવવા માટે અવશ્ય પાલન કરે. નહિ તો ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક બનવું પડશે.

અથવા ‘લાભે’ ઇતિ-ચ્છાયા, લાભે સતિ વસ્ત્રાહારાદેરધિગમે ચ ન માચેત । એવમલાભે વસ્ત્રપાત્રાદેરપ્રાપ્તૌ ‘ધિગ્ હતમાગ્યં માં યદન્યૈર્લભ્યતે અન્તરાયોદયાન્મયા ન લભ્યતે’ ઇતિ=એવં ન શોચેત્ શોકં ન વિદધ્યાત્, લાંભાલાભયોર્મધ્યસ્થભાવમવ-લમ્બેતેત્યર્થઃ । ઉક્તઞ્ચ —

“લામો વરમલામોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્દધાતિ માધ્યસ્થ્યમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિરથ ચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

ऐसा कभी भी भाव न रखे कि-अशनादि-आहारवस्त्रादिक का लाभ मुझे ही होता है अन्य को नहीं । क्योंकि इस प्रकार की भावना से आत्मा में एक प्रकार का अहंकार उत्पन्न होता है जो संयम जीवन में सफेद वस्त्र से धब्बे की तरह बाधक होता है, अतः इस प्रकार का अहंकार कभी नहीं करना चाहिये । अथवा “लाभ इति न माचेत” इसका अभिप्राय यह भी होता है कि आहार वस्त्रादिक का लाभ होने पर संयमी को हर्षित नहीं होना चाहिये, और अलाभ होने पर उसे “मुझ हतभागी-अभागे को धिक्कार है, दूसरों को तो सब कुछ मिलता है मुझे अन्तराय के उदय से कुछ भी नहीं मिलता” इस प्रकार का शोक भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि संयमजीवन की शोभा लाभ और अलाभ में मध्यस्थ भाव रखने से ही है । कहा भी है—

“લામો વરમલામોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્ દધાતિ માધ્યસ્થ્યમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિ-રથ ચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ॥

એવો લાભ કેઈ વખત ન રાખે કે-‘અશનાદિ-આહારવસ્ત્રાદિકનો લાભ મને જ થાય છે. બીજાને નહિ’ કારણ કે આ પ્રકારની લાવનાથી આત્મામાં એક પ્રકારનો અહંકાર ઉત્પન્ન થાય છે જે સંયમ જીવનમાં સફેદ વસ્ત્રમાં ગંધાની માફક બાધક થાય છે. માટે આ પ્રકારનો અહંકાર કેઈ વખત કરવો ન જોઈએ. અથવા “લાભ ઇતિ ન માચેત” એનો અભિપ્રાય એ પણ થાય છે કે-આહારનો લાભ થવાથી સંયમીએ હર્ષિત નહિ થવું જોઈએ, અને આલાભ થવાથી તેણે “હું હતભાગી-અભાગીને ધિક્કાર છે, બીજાઓને મધ્યગું મળે છે, મને અંતરાયના ઉદયથી કાંઈ પણ મળતું નથી.” આવા પ્રકારનો શોક પણ નહિ કરવો જોઈએ, કારણ કે સંયમજીવનની શોભા લાભ અને અલાભમાં મધ્યસ્થભાવ રાખવામાં જ છે. કહ્યું પણ છે—

“લામો વરમલામોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્ દધાતિ માધ્યસ્થ્યમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિ-રથ ચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

કિં ચ-વહ્નિપિ=કેનાપિ કારણેન પુષ્કલં લબ્ધ્વા=પ્રાપ્ય ન સ્નિહ્યાત્=અન્નાદૌ ગૃહપતૌ વા સ્નેહં ન કુર્યાત્, અપિ ચ પરિગ્રહાત્સંયમયાત્રાનિર્વાહમાત્રાતો મૂર્છાભાવે-
નૈષ્ણીયસ્યાપ્યધિકસ્યાનાદાનાત્ આત્માનમ્ અવજ્વળેત્=અપગમયેત્, તત આત્માનં નિવર્તયેદિત્યર્થઃ ।

નન્તુ સંયમયાત્રાનિર્વાહાર્થમાવશ્યકવસ્ત્રપાત્રાદીનામપિ ગ્રહણં પરિગ્રહપદેન વક્તુ-

આહારાદિક વસ્તુએં મિલે તો મી ઠીક, ન મિલે તો મી ઠીક, મુજે તો દોનોં અવસ્થાઓં મેં સમતા હૈ । લાભ મેં પ્રાણોં કા રક્ષણ ઔર અલાભ મેં તપ કી વૃદ્ધિ હોગી । એસા વિચાર કરના ચાહિયે ।

કિસી કારણવશ યદિ આહારાદિક સામગ્રી કિસી એક હી જગહ સે અધિક મિલ જાવે તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેને વાલે દાતા-ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થ ભાવ રક્ષે । ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ નહીં રાખને સે સંયમી મુનિ મેં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિ કે અભાવ હોને કા પ્રસંગ આજાતા હૈ । સંયમયાત્રા કા નિર્વાહમાત્રાવાલી આહારાદિક સામગ્રી કે અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રી સે અપને કો દૂર રાખે, કારણ કિ ણ્ણીય હોને પર મી મૂર્છાભાવ સે અધિક ગ્રહણ કરને સે ઇસ મેં પરિગ્રહ કા દોષ આતા હૈ, અતઃ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહ સે સદા અપની રક્ષા કરતા રહે ।

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે જો આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ કરના સંયમી મુનિ કે લિયે કહ રહે હો સો યહ

આહારાદિક વસ્તુઓ મળે તો પણ ઠીક છે, ન મળે તો પણ ઠીક છે, એમ મને તો ધનને અવસ્થાઓમાં સમતા છે લાભમાં પ્રાપ્તિ રક્ષણ અને અલાભમાં તપની વૃદ્ધિ થશે. એવો વિચાર કરવો જોઈએ

કોઈ કારણવશ કદાચ આહારાદિક સામગ્રી કોઈ એક જગ્યાથી અધિક મળી જાય તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેવાવાળા દાતા ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થભાવ રાખે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ નહિ રાખવાથી સંયમી મુનિમાં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ આવી જાય છે. સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માત્રાવાળી આહારાદિક સામગ્રીથી અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રીથી પોતાને દૂર રાખે, કારણ કે ણ્ણીય હોવા છતાં પણ મૂર્છાભાવથી અધિક ગ્રહણ કરવાથી તેમાં પરિગ્રહનો દોષ આવી જાય છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહથી સદા પોતાની રક્ષા કરતા રહે.

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે જે આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ કરવું સંયમી મુનિ માટે કહી રહ્યા છે તો તે કહેવું બ્યાજની નથી,

મુચિતમ્, યતશ્ચાનુકૂલે વસ્તુનિ રાગઃ પ્રતિકૂલે દ્વેષશ્ચ સઙ્ગાયતે, એવશ્ચ રાગદ્વેષ-યોરવશ્યંભાવાન્મૂર્છાં, સૈષા પરિગ્રહઃ ‘મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો’ ઇતિ વચનાત્, તત્સદ્ભાવે ચ કર્મવન્ધ ઇતિ કથં સંયમોપકરણસ્ય ન પરિગ્રહત્વમિતિ ચેદુચ્યતે—ધર્મોપકરણે મુનીનાં ‘મમેદ’—મિતિ ન મોહો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“અવિ અપ્પણોઽવિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાદ્યં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ યહ भी પરિગ્રહ ही है, और परिग्राह का त्याग किये बिना सर्वथा संयमाराधकता होती नहीं है । परिग्राहरूपता इनमें इसलिये है कि अनुकूल इनकी प्राप्ति में प्राप्तकर्ता को हर्ष, और प्रतिकूल प्राप्ति में पानेवाले को द्वेष होता है । जहां पर राग और द्वेष है वहां पर मूर्छा है, और मूर्छा का होना ही परिग्राह है । “मुच्छा परिग्राहो वुत्तो” मूर्छा ही परिग्राह है, ऐसा भगवान का कथन है, जहां इसका सद्भाव है वहां कर्मवन्ध अवश्य है, अतः वस्त्रपात्रादिक उपकरण को परिग्राह क्यों नहीं कहा गया है ? ।

उत्तर—सामान्यतया वस्त्रपात्रादिकों में परिग्राहता का हम निषेध नहीं करते हैं, किन्तु जो संयम के उपकारक हैं वे परिग्राहरूप नहीं हैं । यह एक विशेष विधि है, कारण कि मुनियों को उनमें “मम इदं” “यह मेरे हैं” इस प्रकार की ममत्वभावरूप मूर्छा नहीं होती है । कहा भी है—
“अवि अप्पणोवि देहंमि, नायरंति ममादयं” इति । (दश. अ. ६ गा. २२)

કારણ કે તે પણ પરિગ્રહ જ છે. અને પરિગ્રહનો ત્યાગ કર્યા બિના સર્વથા સંય-મારાધકતા થતી નથી પરિગ્રહરૂપતા તેમાં એ માટે છે કે અનુકૂળ તેની પ્રાપ્તિમાં પ્રાપ્તકર્તા ને હર્ષ અને પ્રતિકૂળ પ્રાપ્તિમાં લેનારને દ્વેષ થાય છે, જે જગ્યોએ રાગ અને દ્વેષ છે ત્યાં મૂર્છા છે, અને મૂર્છાનું હાવું તે પરિગ્રહ છે. “મુચ્છા પરિ-ગ્રહો વુત્તો” મૂર્છા એ જ પરિગ્રહ છે, એવું ભગવાનનું કથન છે, ત્યાં તેનો સદ્ભાવ છે ત્યાં કર્મબંધ અવશ્ય છે, માટે વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણને પરિગ્રહ કેમ માનેલ નથી ?

उत्तर—सामान्य रीते वस्त्रपात्रादिकोंमा परिग्राहताનો अमे निषेध કરતા નથી જે સંયમના ઉપકારક છે તે પરિગ્રહરૂપ નથી. એ એક વિશેષ વિધિ છે, કારણ કે મુનિયોને તેમા “મમ इदं” એ ભાસ છે, એ પ્રકારની મમત્વ ભાવરૂપ મૂર્છા થતી નથી. કહ્યું પણ છે—

“अवि अप्पणो वि देहंमि नायरंति ममादयं ” इति (दश. अ. ६ गा. २२)

છાયા—અપ્યાત્મનોડપિ દેહે નાચરન્તિ મમાયિતમ્ । ઇતિ । તેપાં કર્મનિ-
ર્જરણાર્થં સ્વીકારાત્, યથ્ મૂર્છ્યા પરિગ્રહાતે તસ્ય પરિગ્રહપદેનાભિધેયત્વાત્ ।
તત્પરિહારે ચ સંયમયાત્રાયા અપિ નિર્વોદમશક્યત્વાત્ ।

કિન્ન—અન્યથાનપડ્યકઃ—પડ્યતીતિ પડ્યઃ, સ એવ પડ્યકઃ, અન્યથા=અન્ય-
પ્રકારેણ ન પડ્યકઃ=અન્યથાનપડ્યકઃ=ધર્મોપકરણાપરિગ્રહદર્શી સન્ પરિગ્રહં પરિહ-
રેત્ । યથા ગૃહસ્થો વસ્ત્રાદિકં શરીરાદિસુખસાધનં મન્યતે ન તથા મુનિઃ । સ ચૈત-
દ્ધર્મોપકરણં મમ ધર્મસાધનમેવ, ન શરીરાદિસુખસાધનમિતિ મન્યમાનઃ પરિગ્રહં

સાધુઓં કો જવ અપને નિજ શરીર મેં હી મોહ મમત્વ નહીં હોતા
હૈ, તવ શરીર સે સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોં મેં મમત્વભાવ કૈસે હો
સકતા હૈ । મુનિ અવસ્થા મેં માત્રાનુસાર ગ્રહણ ક્રિયે હુએ વસ્ત્ર પાત્રાદિક
સંયમ કે ઉપકારક હોને સે કર્મોં કી નિર્જરા કે હી સાધક હોતે હૈં,
इसीलिये वे संयम अवस्था में स्वीकार किये जाते हैं । परिग्रह वहीं पर
है कि जहाँ पर मूर्छाभाव से अपनाना होता है । इन पात्रादिकों का
ग्रहण मूर्छाभाव से नहीं किया जाता है, अतः ये परिग्रहरूप नहीं हैं,
प्रत्युत इनके अभाव में संयमयात्रा का यथावत् निर्वाह नहीं हो
सकता, इसीलिये इनका ग्रहण करना आवश्यक बतलाया गया है । इसी
वात की पुष्टि सूत्रकारने “अन्यथानपड्यकः परिहरेत्” इस वाक्य
से की है । वस्त्र पात्रादिक धर्मोपकरण हैं, इनके बिना संयम का यथावत्
निर्वाह नहीं हो सकता, इसलिये इनका रखना आवश्यक है । इस प्रकार
उनको परिग्रहरूप नहीं देखता हुआ अनगार इनसे अतिरिक्त धन-

સાધુઓને બીજા રીતે પોતાના શરીર ઉપર જ મોહ અને મમત્વ નથી
થતો તે પછી શરીરથી સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોમાં મમત્વભાવ કેવી રીતે
હોઈ શકે. મુનિ અવસ્થામાં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કરેલા વસ્ત્રપાત્રાદિક સંયમના
ઉપકારક હોવાથી કર્મોની નિર્જરના જ સાધક બને છે, માટે તે સંયમ અવ-
સ્થામાં સ્વીકાર કરવામાં આવે છે. પરિગ્રહ તે બીજા ઉપર છે કે બીજા મૂર્છા
ભાવથી લેવામાં આવે છે આ પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ મૂર્છાભાવથી કરવામાં આવતું
નથી, માટે તે પરિગ્રહરૂપ નથી પ્રત્યુત તેના અભાવમાં સંયમયાત્રાનો યથા-
વત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું ગ્રહણ કરવું આવશ્યક બતાવ્યું છે.
આ વાતની પુષ્ટિ સૂત્રકારે “અન્યથાનપડ્યક પરિહરેત્” આ વાક્યથી કરેલ
છે. વસ્ત્રપાત્રાદિક ધર્મોપકરણ છે, તે વિના સંયમનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો
નથી, માટે તેનું રાખવું આવશ્યક છે એ પ્રકારે તેને પરિગ્રહરૂપ નહિ દેખતા

પરિત્યજેત્, ન તત્ર મમત્વં કુર્યાદિત્યર્થઃ । સમુચિતમાત્રયાઽઽહારાદિગ્રાહી મુનિર્લાભા-
લામહર્ષવિપાદવર્જિતઃ પરિગ્રહાગ્રહનિવૃત્તો રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન દર્શિતોઽયં માર્ગ ઇતિ દર્શયતિ—‘ એસ મગ્ગે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એસ મગ્ગે આરિયહિં પવેઙ્ગે જહેતથ કુશલો નોપલિં-
પેઙ્ગાસિન્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—એ માર્ગ આર્યેઃ પ્રવેદિતઃ યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પયેઃ । ઇતિ
વર્વામિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—‘ એ માર્ગ ’ ઇત્યાદિ । એપ્=પૂર્વોક્તરૂપઃ માર્ગઃ શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ
આર્યેઃ=તીર્થદ્વરગણધરાદિભિઃ પ્રવેદિતઃ—પ્ર=પ્રકરણેન=દ્વાદશપરિપદિ કથિતઃ ।

ધાન્યાદિ કો પરિગ્રહ સમગ્રકર છોડ દેતા હૈ । ગૃહસ્થ જિસ પ્રકાર વસ્ત્રા-
દિકોં કો શારીરિક સુખાદિ કા કારણ માનકર ઉન્હેં ગ્રહણ કરતા હૈ
ઉસ પ્રકાર કી ભાવના સે મુનિ નહીં । ધર્મોપકરણ સે ધર્મ કા હી સાધન
હોતા હૈ—અન્ય શરીરસુખાદિક કા નહીં । એસા માનકર હી મુનિ ગ્રહણ
કરતા હૈ, ઓર ઉનમેં મમત્વભાવ સે રહિત હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-
અનગાર કો સમુચિત માત્રામેં આહારાદિક ગ્રહણ કરને વાલા, લાભ ઓર
અલાભ મેં સમભાવી; પરિગ્રહ સે વિરત, ઓર રત્નત્રય કી આરાધના મેં
નિમગ્ન હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

‘ ઇસ માર્ગ કે પ્રદર્શક કોન હેં? ઇસ વાત કો દિગ્વલાતે હુએ સૂત્રકાર
કહેતે હેં—‘ એસ મગ્ગે ’ ઇત્યાદિ ।

યહ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોને

આણુગાર તેનાથી અતિરિક્ત ધનધાન્યાદિને પરિગ્રહ સમગ્રને છોડી દે છે. ગૃહસ્થ
જેવી રીતે વસ્ત્રાદિકોને શારીરિક સુખાદિકનું કારણ માનીને તેને ગ્રહણ કરે છે
તે પ્રકારની લાવનાથી મુનિ નહિ. ધર્મોપકરણથી ધર્મનું જ સાધન થાય છે—અન્ય
શરીરસુખાદિકનું નહિ. એવું માનીને જ મુનિ તેને ગ્રહણ કરે છે, અને તેમાં
મમત્વલાવથી રહિત થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે—આણુગારે સમુચિત માત્રામાં
આહારાદિક ગ્રહણ કરવાવાળા, લાભ અને અલાભમાં સમભાવી, પરિગ્રહથી વિરત,
અને રત્નત્રયની આરાધનામાં નિમગ્ન થવું જોઈ એ. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આ માર્ગનો પ્રદર્શક કોણ છે, આ વાતને બતાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—
‘ એસ મગ્ગે ’ ઇત્યાદિ.

આ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોએ બાર

हे शिष्य ! यथा=येन प्रकारेण त्वं कुशलः सन् आर्यक्षेत्रसुकुलजन्मादिकं, संसारार्णवतरिं बोधिं, सकलकर्मक्षपणसमर्थं चारित्रं च लब्ध्वा अत्र=इह तीर्थद्वरनिर्दिष्टमार्गेऽष्टविधकर्महेतुभूतेन पापकर्मणा नोपलिम्पयेः=नोपलिप्तो भवेत्तथा कुरुष्व, एतस्मिन्मार्गे स्थित एव मुनिः सम्यग्ज्ञानादिकं लभत इति भावः । इति-शब्दोऽधिकारसमाप्त्यर्थः, स चाहारादिगवेषणारूपः । यन्मया भगवत्समीपे श्रुतं तत्सर्वं त्वां ब्रवीमि=वच्मि । इति ॥सू० ७॥

परिग्रहादात्मनिवृत्तिश्च तत्कारणोन्मूलनं विना न सम्भवति, तत्कारणं च शब्दादयः पञ्च कामगुणाः, तेषामुन्मूलनं च दुष्करमिति दर्शयति—‘कामा’ इत्यादि ।

मूलम्—कामा दुरङ्क्कमा, जीवियં दुप्पडिबूहगं, कामकामी खलु अयं पुरિસે, સે સોયડ જૂરડ તિપ્પડ પિટ્ટડ પરિતપ્પડ । સૂ० ૮ ।

વારહ પ્રકાર કી સંભા મેં પ્રકટ કિયા હૈ । ઉન્હોને કહા હૈ કિ—જો મનુષ્ય આર્ય ક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ; સંસારરૂપી સમુદ્ર કે પાર પહુંચને કે લિયે નૌકા સ્વરૂપ બોધિ, એવં સકલ કર્મોં કે વિનાશક ચારિત્ર કો પ્રાપ્તકર તીર્થકરાદિ પ્રદર્શિત હસ માર્ગ કા અવલંબન કરતા હૈ—હસમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ પાપકર્મ સે—જો અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કે આસ્રવ કા હેતુ હૈ—કમ્બી મ્બી ઉપલિપ્ત નહીં હોતા હૈ, હસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ મ્બી અપની પ્રવૃત્તિ કો હસ પ્રકાર કી બનાઓ, તાકિ તુમ મ્બી હસ વિષય મેં કુશલ બન પાપકર્મ સે ઉપલિપ્ત ન હો સકો । સૂત્ર મેં ‘હિતિ’ શબ્દ હસ અધિકારકી સમાપ્તિ કા સૂચક હૈ, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિક કી ગવેષણારૂપ યહ અધિકાર જૈસે મૈને ભગવાન્ કે નિકટ સુના હૈ વૈસા હી યહાં તુમ સે પ્રકટ કિયા હૈ, મેરી નિજી કલ્પના હસ વિષય મેં કુછ મ્બી નહીં હૈ ॥સૂ. ૭॥

પ્રકારની સલામા પ્રગટ કરેલ છે. તેઓએ કહ્યું છે કે—જે મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુળમાં જન્મ. અવ્યાબાધ સુખરૂપી સમુદ્રના પાર સ્વરૂપ બોધિ અને સકલ કર્મોના વિનાશક ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી તીર્થકરાદિપ્રદર્શિત આ માર્ગનું અવલંબન કરે છે—આમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પાપકર્મથી જે આઠ પ્રકારના કર્મોના આસ્રવનો હેતુ છે—કોઈ વખત પણ ઉપલિપ્ત થતો નથી. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ તમારી પ્રવૃત્તિને એવા પ્રકારની બનાવો કે તમે પણ આ વિષયમાં કુશળ બની પાપ કર્મથી ઉપલિપ્ત ન થઈ શકો. સૂત્રમાં ‘હિતિ’ શબ્દ આ અધિકારની સમાપ્તિનો સૂચક છે, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિકની ગવેષણારૂપ આ અધિકાર જેવો મેં ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યો છે તેવો હું તને કહું છું, મારી પોતાની કલ્પના આ વિષયમાં કોઈ પણ નથી. ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—કામા દુરતિક્રમાઃ, જીવિતં દુષ્પતિવૃંહણીયં, કામકામી સ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ શોચતિ જૂર્યતે તેપતે પીડ્યતે પરિતપ્યતે ॥ મૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘કામા’ इत्यादि । कामाः—इच्छामदनभेदाद्विविधाः । तत्र-इच्छाकामाः-हिरण्यादिवाञ्छारूपाः, मदनकामाः=शब्दादिरूपाः, पूर्वस्य कारणं मोहनीयभेदौ हास्यरती, परस्य च कारणं मोहनीयभेदवेदोदयः । ततश्चोभयोरपि कामयोः प्रादुर्भावो मोहनीयादेव, एवञ्च कारणसत्त्वे कार्यभूतस्य कामस्योन्मूलनमशक्यम् ।

પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ, ઉસકે કારણોં કા નાશ કિયે વિના નહીં હો સકતી । ઉસકે કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ હૈ । ઉનકા ઉન્મૂલન કરના વડા કઠિન હૈ, ઇસી વાત કો પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—“કામા દુરદ્દકમા” इत्यादि ।

इच्छा और मदन के भेद से काम दो प्रकार का है । हिरण्यादिक की वाञ्छारूप इच्छाकाम है । इसका कारण मोहनीय कर्म का भेद हास्य और रति है । शब्दादिक पांच इन्द्रियों के विषय मदनकाम है । इनका भी कारण—मोहनीय कर्म का भेद—वेद—नोकपाय का उदय है । इस प्रकार इन दोनों कामों की उत्पत्ति मोहनीयकर्म के उदय से ही होती है । कारण के सद्भाव में कार्य का सद्भाव अवश्यभावी है, इसीलिये सूत्र में सूत्रकार ने “दुरतिक्रमाः” इस पद से इनका उन्मूलन दुष्कर बताया है । जवनक मोहनीयरूप कारण का उदय है तब तक इनका अभाव हो ही नहीं सकता, अतः इनका प्रतीकार करना दुःशक्य है । जीवन का भी प्रति-

પરિબ્રહ્મી નિવૃત્તિ તેના કારણુનો નાશ કર્યા વગર ણની શકતી નથી. તેનું કારણુ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણુ છે. તેનું ઉન્મૂલન કરવું ઘણું કઠિન છે આ વાતને પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘કામા દુરદ્દકમા’ इत्यादि.

ઇચ્છા અને મદનના ભેદથી કામ બે પ્રકારના છે. હિરણ્યાદિકની વાંચ્છાકામ ઇચ્છાકામ છે, તેનું કારણુ મોહનીય કર્મના ભેદ—હાસ્ય અને રતિ છે. શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય મદન કામ છે. તેનું પણ કારણુ—મોહનીય કર્મના ભેદ—વેદ—નોકપાયનો ઉદય છે. આ પ્રકારે ણને કામોની ઉત્પત્તિ મોહનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, કારણુ સદ્ભાવમાં કાર્યનો સદ્ભાવ અવશ્યભાવી છે, માટે સૂત્રમાં સૂત્રકારે “દુષ્કરં” આ પદથી તેનું ઉન્મૂલન દુષ્કર બતાવ્યું છે. ત્યાં સુધી મોહનીયરૂપ કારણુનો ઉદય છે ત્યાં સુધી તેનો અભાવ થઈ જ શકતો નથી, માટે તેનો પ્રતિકાર કરવો દુઃશક્ય છે. જવનનો પણ પ્રતિદિન

અતઃ એવ દ્વિવિધા અપિ કામા 'દુરતિક્રમાઃ' 'દુઃ=દુઃસ્થિતિક્રમઃ=અનુભવનં=વિનાશો
યેષાં તે દુરતિક્રમાઃ । અથવા-દુઃસ્થિતિક્રમ્યન્તે=અનુભવ્યન્તે યે તે દુરતિક્રમાઃ=
દુઃશક્યપ્રતીકારા દુષ્પરિહરા ઇતિ યાવત્ ।

કિં ચ-જીવિતં=ભવગ્રહાયુષ્કં પ્રતિદિનમપચીયમાનતયા દુષ્પરિવૃંહણીયં=વૃદ્ધિ-
યિતુમશક્યં પરિજીર્ણચ્છિન્નવસ્ત્રવત્સન્ધાતુમનર્હમિત્યર્થઃ ।

યદ્વા-જીવિતં-સંયમજીવિતં દુષ્પરિવૃંહણીયં, સંયમિનશ્ચારિત્રાન્તરાયોદયા-
ત્કામાભિપ્લવે સતિ સંયમજીવિતસ્ય પ્રત્યહં ક્ષીયમાણત્વાત્ ।

દિન હાસ હો રહા હૈ । આયુકર્મ કા શાસ્ત્રકારોં ને અપકર્ષણ તો વતલાયા
હૈ કિન્તુ ઉત્કર્ષણ નહીં, ઇસલિયે આયુઃકર્મ કા પ્રતિસમય અપચય હોને સે
જીવન ભી અપચય કી ઓર હી વઢ રહા હૈ । એસા કોઈ ભી કારણ નહીં હૈ
જો જીવન કો સ્થિર, અથવા ભુજ્યમાન આયુ મેં એક સમય ભી વૃદ્ધિ કર
સકે, ઇસલિયે જિણ પ્રકાર વિલકુલ જીર્ણ ફટે ટુક વસ્ત્ર કા સીના
અશક્ય હોતા હૈ ઊસી પ્રકાર આયુકર્મ કી વૃદ્ધિ હોની ભી અશક્ય
હૈ । એસા સમજકર આત્મહિતૈષી કે લિયે ઇન વિષયાદિકોં મેં વાંછા નહીં
કરની ચાહિયે । જીવન કા જિતના અંશ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે સુર-
ક્ષિત રહ સકે એસા હી પ્રયત્ન કરતે રહના ચાહિયે ।

અથવા-જીવન શબ્દ કા અર્થ સંયમજીવન હૈ । યહ દુષ્પરિવૃંહણીય
(વઢાના મુશ્કિલ) ઇસલિયે વતલાયા જા રહા હૈ કિ યદિ સંયમી કો
ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય સે કામગુણોં મેં વાંછા ઉત્પન્ન હો જાવે તો

હાસ થઈ રહ્યો છે, આયુકર્મનો શાસ્ત્રકારોએ અપકર્ષણ તો બતાવેલ છે, પણ
ઉત્કર્ષણ નહિ, માટે આયુકર્મ પ્રતિસમય અપચય હોવાથી જીવન પણ અપ-
ચય ની તરફ જ વધી રહ્યું છે એવું કોઈ પણ કારણ નથી જે જીવનને સ્થિર
અથવા ભુજ્યમાન આયુમાં એક સમય પણ વૃદ્ધિ કરી શકે, માટે જે પ્રકારે
ખિલકુલ કાંઈક વસ્તુ શીવણ અશક્ય થાય છે તે પ્રકારે આયુકર્મની વૃદ્ધિ થવી
પણ અશક્ય છે. એવું સમજીને આત્મહિતૈષી માટે આ વિષયાદિકોમાં વાંછના નહિ
કરવી જોઈએ જીવનને જેટલો પણ અશ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત રહી
શકે તેવો જ પ્રયત્ન કરતા રહેવો જોઈએ.

અથવા-જીવિત શબ્દનો અર્થ સંયમ જીવન છે. આ દુષ્પરિવૃંહણીય
(વધારણું મુશ્કેલ) છે. એટલા માટે બતાવવામાં આવેલ છે કે કદાચ સંયમીને ચારિત્ર
મોહનીયતા ઉદયથી કામગુણોમાં વાંછના ઉત્પન્ન થઈ જાય તો તેનું તે સંયમ-

યતઃ કામા દુરતિક્રમા અત એવ અયં પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન કામકામી-કામં દ્વિપ્રકારં કમિતું શીલં યસ્ય સ કામકામી=કામસ્પૃહાશીલો ભવતિ, ય ईदृશઃ સઃ= પૂર્વોક્તપ્રકારઃ અપહતમનઃસંકલ્પઃ સન્ કિં કરોતીત્યાહ-શોચતીતિ । શોચતિ= ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તૌ તન્નાશો વા શોકં કરોતિ । અપિ ચ-સ એવ જૂર્યતે=જૂરણાં કરોતિ— અન્તર્દુઃસ્વેન શરીરં શોષયતીત્યર્થઃ, દીનઃ સન્ બહુ વિલપતિ, તથાદિ—

ઉસકા વહ સંયમજીવન ચિલકુલ હી નષ્ટ હુઆ સમજના ચાહિયે । એસા તો હો નહીં સકતા કિ સંયમજીવન બના રહે ઓર કામગુણોં કી વાજ્ઞા ભી અગના કામ કરતી રહે । ઇસલિયે એસી પરિસ્થિતિ મેં સંયમ-જીવન કા પાલન અશક્ય હી હૈ ।

જય યે કામગુણ દુરતિક્રમ હૈં તય હી તો પ્રાણી ઇન્કે અધીન બન ઇન્કી ઓર સ્પૃહાશીલ હોકર આકૃષ્ટ હોતા હૈ । આકૃષ્ટ હોને પર ભી જય ઇસકા માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નહીં હોતા, અથવા ઇસકી મનચાહી વસ્તુ ઇસે નહીં મિલતી તય યહ પ્રાણી શોકાકુલ હોતા રહતા હૈ । યદિ ઇસે મનચાહી વસ્તુ મિલ ભી જાતી હૈ પરન્તુ જ્યોં હી ઇસકા વિયોગ હો જાતા હૈ તો ઇસકે હૃદય મેં અપાર શોક કા સમુદ્ર ઉમડને લગતા હૈ । અનર્ષીષ્ટ સંયોગ હોને પર ઉસે દૂર કરને કે લિયે ઇસકે ચિત્ત મેં અનેક પ્રકાર કે અશુભ સંકલ્પ ઉઠતે રહતે હૈં । અનિષ્ટ વસ્તુ કે સંયોગ મેં એસા હી હોતા હૈ । પ્રાણી ઉસ સમય અન્તર્દુઃસ્વે અપને તક કો ભી સુગ્ધા દેતા હૈ । કામી પુરુષ સ્વતઃ હી દીન બનકર પ્રલાપ કરને લગ જાતા હૈં ।

છવન ણિલકુલ જ નષ્ટ થયેલ સમજવું નેહએ. એવું તો બની જ શકતું નથી કે સંયમછવન બની રહે અને કામગુણોની વાછના પણ પોતાનું કામ કરતી રહે. માટે આવી પરિસ્થિતિમાં સંયમછવનનું પાલન અશક્ય જ છે.

ન્યારે એ કામગુણ દુરતિક્રમ છે ત્યારે જ તો પ્રાણી તેના આધીન બની તેની તરફ સ્પૃહાશીલ બનીને આકૃષ્ટ થાય છે. આકૃષ્ટ થવા છતાં પણ ન્યારે તેનો માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નથી થતો, અથવા તેની મનપસંદ વસ્તુ તેને નથી મળતી ત્યારે તે પ્રાણી શોકાકુલ થઈ રહે છે. કહાય તેને મનપસંદ વસ્તુ મળી પણ બીજી પરન્તુ ન્યાં તેનો વિયોગ થઈ બીજી છે તો તેના હૃદયમાં અપાર શોકનો સમુદ્ર ઉભરાવા લાગે છે. અનર્ષીષ્ટ સંયોગ બનવાથી તેને દૂર કરવા માટે તેના ચિત્તમાં અનેક પ્રકારના અશુભ સંકલ્પ વિકસિત થઈ રહે છે. અનિષ્ટ વસ્તુના સંયોગમાં એવું જ થાય છે પ્રાણી તે વખતે અંતરદુઃખથી પોતાની બાંને પણ સુકાવી નાંખે છે કામી પુરુષ સ્વતઃ દીન બની પ્રલાપ કરવા લાગી બીજી, આ બાન આ શ્લોકથી પ્રકટ કરવામાં આવે છે.

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,-

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ॥

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીવ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુવન્ધાઃ ક્રિયન્તે ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપિ ચ=તેપતે કુલાદિમર્યાદાતઃ સંચલતિ-નિર્મર્યાદો ભવતીત્યર્થઃ । તથા પીડ્યતે=શારીરમાનસદુઃખૈઃ ક્ષિયતે । કિં ચ-પરિતપ્યતે-પરિ=સર્વતો વાહ્યમન્ત્ર

યહ વાત હસ શ્લોક સે પ્રકટ કી જાતી હૈ—

“પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીવ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુવન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામિયોં કી દશા હી કુછ એસી વિલક્ષણ હોતી હૈ કિ જિસ કી વજહ સે વે અપની કુલ કી મર્યાદા તક કો ખી છોડ દેતે હૈ । શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં સે વે સદા સંતપ્ત રહા કરતે હૈ । રાતદિન પશ્ચાત્તાપ હી પશ્ચાત્તાપ કિયા કરતે હૈ કિ “યદિ એસા ઉપાય કરતે તો યહ વાત બન જાતી, એસા ઉપાય કરતે તો યહ કામના ફલીભૂત હો જાતી, અથ કયા કરેં ?, એસા નહીં હુઆ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપ સે બાહર ખીતર જલા કરતે હૈ । મન મેં પશ્ચાત્તાપ કરના ખીતરી પશ્ચાત્તાપ હૈ, ઓર ઉસે શબ્દ સે પ્રકટ કરના વાહ્ય પશ્ચાત્તાપ હૈ । મનોહ પદાર્થોં કી અપ્રાપ્તિ મેં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોં કે વિનાશ મેં દુઃખી હોના ખી પરિતાપ હૈ । યે જો

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,-

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીવ ! સંતપ્યસે કિં ,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુવન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥૧॥ ઇતિ ॥

કામીઓની દશા જ કઇ એવી વિલક્ષણ થાય છે કે જે તે પોતાના કુળની મર્યાદાને પણ છોડી દે છે, શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી તે સદા સંતપ્ત રહ્યા કરે છે રાતદિન પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે કે—“કદાચ એવો ઉપાય કરત તો એ વાત બની બત, આવો ઉપાય કરત તો તેમાં મારી કામના ફળીભૂત થાત, હવે શું કરું એવું બન્યું નહિ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપથી બહારથી તેમજ અંદરથી બળ્યા કરે છે, મનમાં પશ્ચાત્તાપ કરવો અંતરને પશ્ચાત્તાપ છે, અને તેને શબ્દથી પ્રગટ કરવો તે બાહ્ય પશ્ચાત્તાપ છે. મનોહ પદાર્થોની અપ્રાપ્તિમાં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોના વિનાશમાં હ.ખી થવું પણ પરિ-

તપ્યતે=પશ્ચાત્તાપસંતપ્તો ભવતિ । અથવા—હિતાપ્રાપ્તૌ પુત્રકલત્રાદિનાશે ચ પરિતપ્યતે । નિશ્ચિલમિદં હિ શોચનાદિકં વિષયાસક્તેન કલુષિતાન્તઃકરણસ્ય દુઃસ્વાવસ્થાદ્યોતકમ્ ।

યદિ વા યૌવનધનમદમોહાભિભૂતઃ કાશ્ચનકામિન્યાદીન્યુપભુજ્ય વૃદ્ધાવસ્થાયાં નિકટમરણકાલે શોચતિ—‘ ધિગ્ માં હતમાગ્યં, યદવસરે સકલસુખદો ધર્મો મયા શોચનાદિક અવસ્થાએં યહાં કામી પુરુષોં કી પ્રકટ કી ગર્હ હેં ; વે સમસ્ત હી વિષય કે સમ્બન્ધ સે કલુષિત—અન્તઃકરણવાલે વ્યક્તિયોં કી દુઃસ્વાવસ્થા કી દ્યોતક હેં ।

અથવા—‘ શોચતિ ’ આદિ પદોં કે અર્થ કા સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થા કે સાથ મીં હસ પ્રકાર સે હોતા હૈ—યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત તથા મોહ કે નશે સે અચેત વના હુઆ યહ પ્રાણી કંચન કામિની કા ઉપભોગ કરતે ૨ જવ વૃદ્ધાવસ્થા કા મેહમાન હોતા હૈ ઓર અપના મરણકાલ નિકટ દેખતા હૈ તવ વહ શોકાકુલ હો વિચારતા હૈ—મુહ્ અભાગે કો ધિક્કાર હૈ, કિ મૈને યોગ્ય અવસર કે પ્રાપ્ત હોને પર મીં સકલ સુખદાયી ધર્મ કા અરાધન નહીં કિયા, રાત દિન યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત હોકર અશુભ કા હી સંગ્રહ કિયા, હસકા ફલ ક્યા હોગા ? હસ વાત કા જરા મીં વિચાર નહીં કિયા; અવ વૃદ્ધાવસ્થા આત્મીકી હૈ, હસમેં જિન ૨ કષ્ટોં કા મૈં અનુભવ કર રહા હૂં ચે સવ પૂર્વ

તાપ છે. આ જે શોચનાદિક અવસ્થાઓ આ ઠેકાણે કામી પુરુષોની પ્રગટ કરેલ છે તે સમસ્ત વિષયના સંબંધથી કલુષિત અન્તઃકરણવાળી વ્યક્તિઓની દુઃસ્વાવસ્થાની દ્યોતક છે.

અથવા—‘ શોચતિ ’ આદિ પદોના અર્થનો સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ આ પ્રકારે થાય છે—યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત તથા મોહના નશાથી અચેત બનેલ તે પ્રાણી કંચન કામિનીનો ઉપભોગ કરતો કરતો બન્યારે વૃદ્ધાવસ્થાનો મહેમાન થાય છે અને પોતાનો મરણકાળ નિકટ આવેલો જાણીને શોકાતુર બની વિચારે છે કે ‘ મને અભાગીને ધિક્કાર છે કે મેં યોગ્ય અવસરની પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સુખદાયી ધર્મનું આરાધન ન કર્યું સત્તદિન યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત બની અશુભનો જ સંગ્રહ કર્યો, તેનું ફળ શું મળશે ? એ વાતનો જરા પણ વિચાર ન કર્યો. હવે વૃદ્ધાવસ્થા આવી તેમાં જે જે કષ્ટોનો હું અનુભવ કરી રહ્યો છું તે બધા પૂર્વમાં ઉપાર્જિત અશુભ પરિણતિનું જ

નાચરિતઃ ' ઇતિ શોકં કરોતિ । અશુભસ્ય પરિણતિમનવધાયૈવ તત્ર યા પ્રવૃત્તિર્વિદિતા સા વાર્દ્ધક્યે દુઃખદા ભવતિ । ઉક્તञ્ચ—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥

‘જૂયંતે’ ઇત્યાદેરર્થસ્તુ પૂર્વવત્ । અતો મેધાવિના પૂર્વં કાર્યં પરિણતિમાલોચ્યૈવ કરણીયં, યેન પશ્ચાત્ પશ્ચાત્તાપો ન ભવેત્ । ઉક્તञ્ચ—

મેં ઉપાર્જિત અશુભ-પરિણતિ કે હી ફલરૂપ હૈં । નીચે કે શ્લોક મેં યહી વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વૃદ્ધ અપને કો દુઃખી દેખકર ઝૂરતા હૈ, માનસિક એવં શારીરિક અનેક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ । દુઃખી હોને પર અપની કુલમર્યાદા કા ભી ધ્યાન નહીં રખતા । ઇસલિયે વુદ્ધિમાન્ પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ પ્રત્યેક કાર્ય કે પ્રારમ્ભ-કાલ મેં ઉસકે ફલાફલ કા વિચાર કર ઉસ કાર્ય કે કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરે । વિના વિચારે તથા ઉસકી સારતા એવં અસારતા કી પૂરી વિચારણા કિયે વિના કોઈં ભી કાર્ય નહીં કરના ચાહિયે, નહીં તો પશ્ચાત્તાપ કે સિવાય ઓર કોઈં ફલ હાથ નહીં લગતા

ક્રમૃપ છે નીચેના શ્લોકમાં એજ વાત પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. જેમ—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ.

વૃદ્ધ પોતાને દુઃખી દેખીને ઝુરે છે, માનસિક અને શારીરિક અનેક કષ્ટોનેા અનુભવ કરે છે. દુઃખી થવાથી પોતાની કુલમર્યાદાનો પણ ખ્યાલ રાખતો નથી. તેથી બુદ્ધિમાન્ પુરુષનું કર્તવ્ય છે કે પ્રત્યેક કાર્યના પ્રારંભકાળમાં તેના ફળાફળનો વિચાર કરી તે કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરે. વિચાર્યા વગર તથા તેની સારતા અને અસારતાની પૂરી તપાસ કર્યા વિના કોઈં પણ કાર્ય કરવું બેઠું એ નહિ. નહિ તો પશ્ચાત્તાપ સિવાય

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ
પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણ્ડિતેન ।
અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,-
ર્ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અતઃ પરિગ્રહકારણં શબ્દાદિકામગુણોઽવશ્યમુન્મૂલનીયો મુનિનેતિ
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૮ ॥

કઃ શોકાદિકં ન પ્રાપ્નોતીતિ દર્શયતિ-‘આયયચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-આયયચક્ષૂ લોગવિપસ્સી લોગસ્સ અહોભાગં જાણઇ,
ઉદ્ઘં ભાગં જાણઇ, તિરિયં ભાગં જાણઇ, ગડ્ઢિણ લોણ અણુ-
પરિયટ્ટમાણે સંધિં વિઙ્ગિતાં ઇહ મચ્છિણ્ણહિ, એસ વીરે પસંસિણ્ણ જે
વદ્ધે પઢિમોયણ, જહા અંતો તહા વાહિં, જહા વાહિં તહા અંતો,
અંતો અંતો પૂઙ્ગદેહંતરાણિ પાસઙ્ગ પુઢો વિ સવંતાં પંઢિણ
પઢિલેહણ ॥ સૂ. ૧ ॥

હૈ । નીચે કે પદ્ય મેં યહી વાત દિખલાઈ ગઈ હૈ, જૈસે—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,
પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણ્ડિતેન ।
અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,-
ર્ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥

ઇસલિયે મુનિજન કા કર્તવ્ય હૈ કિ વે જૈસે ભી હો સકે પરિગ્રહ
કે કારણભૂત ઇન પૂર્વોક્ત કામગુણોં કા ઉન્મૂલન કરે ॥ સૂ. ૮ ॥

ખીલું કાંઈ પણ ઇળ મળતું નથી. નીચેના પદ્યમાં આજ વાત બતાવવામાં આવી
છે, જેમ—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,
પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણ્ડિતેન ।
અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,-
ર્ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

માટે મુનિનું કર્તવ્ય છે કે ત્યાં સુધી બને ત્યાં સુધી પરિગ્રહના કારણભૂત
આ પૂર્વોક્ત કામગુણોનું ઉન્મૂલન કરે. ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—આયતચક્ષુર્લોકવિદર્શી લોકસ્યાધોભાગં જાનાતિ, ऊर्ध्व ભાગં જાનાતિ, તિર્યઞ્ચં ભાગં જાનાતિ, ગૃહ્ણો લોકોઽનુપરિવર્તમાનઃ સન્ધિં વિદિત્વા ઇહ મર્ત્યેષુ, એષ વીરઃ પ્રશંસિતો યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, યથાઽન્તસ્તથા વાઙ્, યથા વાઙ્ તથાઽન્તઃ, અન્તઃ અન્તઃ પૂતિદેહાન્તરાણિ પૃથગપિ સ્થવન્તિ પણિતઃ પ્રત્યુપેક્ષેત । ૧ ।

ટીકા—‘ આયતચક્ષુરિત્યાદિ । આયતચક્ષુઃ=આયતં=દીર્ઘ ચક્ષુઃ=જ્ઞાનચક્ષુર્યસ્ય સ આયતચક્ષુઃ=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વદર્શી—‘કામા નિયમતોઽનર્થવહુલાઃ’ इत्यवधार्य तान् विहायाऽऽत्मसुखानुभवीत्यर्थः । किंच लोकविदर्शी, लोकं विषयासङ्गेन क्लिश्यमानं जनं वि=विशेषेण=कामाभिष्वङ्गेन लोके दुःखाधिक्यं, तत्त्यागेन च प्रशमसुखं भवति ’ इत्येवंरूपेण द्रष्टुं शीलं यस्य स लोकविदर्शी—लोकदुःखाभिज्ञः,

શોકાદિકોં કો કૌન પ્રાપ્ત નહીં કરતા ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘આયયચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ ।

इहलोकसम्वन्धी और परलोकसम्वन्धी दुःखों का ज्ञान जिससे होता है ऐसे ज्ञानचक्षु का ही यहां पर चक्षु-शब्द से ग्रहण किया गया है । उभयलोकसम्वन्धी दुःखों के ज्ञान से ही उस चक्षु में आयतता प्रकट की गई है । इसी आभ्यन्तर चक्षु से यह जाना जाता है कि काम-गुण नियम से अनर्थकारी हैं । अतः इनका परित्याग कर आत्मसुख का अनुभवशाली होना चाहिये । इस प्रकार के पवित्र विचार से जो उस सुख का अनुभवी है, तथा जो लोकविदर्शी है—अर्थात् जो इस बात को जानता है कि यह लोक विषयों के सम्वन्ध से ही अधिक दुःखी हो रहा है, यदि प्रशम सुख यहां पर हो सकता है तो उनके सच्चे त्याग से ही हो सकता है । इस प्रकार से जिसके देखने का स्वभाव है उसका

શોકાદિકને કોણ પ્રાપ્ત નથી કરતા તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયય-ચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ.

આ લોકમંબંધી અને પરલોકસમ્બંધી દુઃખોનું જ્ઞાન જેને થાય છે એવા જ્ઞાનચક્ષુને આ ઠેકાણે ચક્ષુ-શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. બન્ને લોકસમ્બંધી દુઃખોના જ્ઞાનથી જ તે ચક્ષુમાં આયતતા પ્રગટ કરેલ છે. આ આભ્યન્તર ચક્ષુથી એમ જાણવામાં આવે છે કે કામગુણ નિયમથી અનર્થકારી છે, માટે તેના પરિત્યાગ કરી આત્મસુખના અનુભવશાળી બનવું જોઈએ. આવા પ્રકારના પવિત્ર વિચારથી જે તેવા સુખના અનુભવી છે, તથા જે લોકવિદર્શી છે અર્થાત્ જે આ વાતને જાણે છે કે આ લોક વિષયોના મંબંધથી જ અધિક દુઃખી બની રહેલ છે. કદાચ પ્રશમ સુખ અહીં બની શકતું હોય તો તેના સાચા ત્યાગથી જ બની શકે છે. આવા પ્રકારથી જેને દેખવાનો સ્વભાવ છે તેનું નામ લોક-

યદ્વા લોકસ્ય=પશ્ચાસ્તિકાયરૂપસ્ય વિ=વિશેષમ્ ઊર્ધ્વાધસ્તિર્યગ્ગતિસુખદુઃસ્વાયુઃ-
કારણકર્મરૂપં દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવાદ્-‘લોકસ્યે-’ ત્યાદિ । લોકસ્ય
અધોભાગં=નિમ્નભાગં ભવનપતિનારકાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ=જ્ઞાનવિષયી-
કરોતિ, એવમ્, ઊર્ધ્વ ભાગમ્=ઉપરિતનભાગં સૌધર્મકલ્પાદિરૂપં જાનાતિ, તથા
તિર્યશ્ચં ભાગં=મધ્યભાગં પશુપક્ષિ-મનુષ્યાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ, લોકવિ-
દર્શી યેન કર્મવિપાકેન યસ્મિંલોકે યસ્ય પ્રાણિનો જન્મ ભવતિ તત્સર્વં જાનાતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—‘લોકવિદર્શી’ લોકં=પરિગ્રહાદ્યર્જનતત્પરં ગૃહ્ણં વિશેષેણ દ્રષ્ટું શીલં
યસ્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવ દર્શયતિ ‘ગૃહ્ણઃ’ ઇત્યાદિ । ‘ગૃહ્ણઃ’=કામભોગમૂર્ચ્છિતો
લોકઃ=જનઃ અનુપરિવર્તમાનઃ=ચતુર્ગતિષુ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણે પ્રાપ્નુવન્ વર્તતે’

નામ લોકવિદર્શી હૈ । અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ ઇસ લોક કે ઊર્ધ્વલોક,
અધોલોક એવં તિર્યગ્લોક કે સુખ દુઃખ ઓર આયુબંધ કે કારણરૂપ કર્મ
કો જાનને કા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । લોકવિદર્શી
ભવનપતિ ઓર નારકી આદિ કે નિવાસસ્થાનભૂત અધોભાગ કો,
તથા સૌધર્મકલ્પાદિ રૂપ ઊર્ધ્વભાગ કો ઓર પશુ, પક્ષી, મનુષ્યાદિકા
નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્ય લોક કો જાનતા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
લોકવિદર્શી જિસ કર્મકે વિપાક સે જિસ લોક મેં જિસ જીવ કા જન્મ
હોતા હૈ ઇસ સબ વિષય કો ખલીખાંતિ જાનતા હૈ ।

અથવા પરિગ્રહાદિક કે ઉપાર્જન તથા સંગ્રહ કરને મેં તત્પર ઓર
કામભોગ મેં મૂર્ચ્છિત એસે ઇસ લોક કો વિશેષ રીતિ સે દેખને કા જિસ
કા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । વહ યહ વાત બી જાનતા હૈ કિ
જો પ્રાણી કામભોગોં મેં આસક્ત હૈં વે ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં વારં-

વિદર્શી છે, અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ આ લોકનો, ઊર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્-
લોકના સુખદુઃખ અને આયુબંધના કારણરૂપ કર્મને જાણવાનો જેનો સ્વભાવ
છે તે પણ લોકવિદર્શી છે. લોકવિદર્શી ભવનપતિ અને નારકી આદિના નિવા-
સસ્થાનભૂત અધોભાગને, તથા સૌધર્મકલ્પાદિરૂપ ઊર્ધ્વભાગને, અને પશુ, પક્ષિ,
મનુષ્યાદિના નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્યલોકને જાણે છે કહેવાતું તાત્પર્ય એ છે કે-
લોકવિદર્શી જે કર્મના વિપાકથી જે લોકમાં જે જીવનો જન્મ થાય છે તે બધા
વિષયને સારી રીતે જાણે છે.

અથવા પરિગ્રહાદિકતું ઉપાર્જન, તથા સંગ્રહ કરવામાં તત્પર અને કામ-
ભોગોમાં મૂર્ચ્છિત એવા આ લોકને વિશેષ-રીતિથી દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
પણ લોકવિદર્શી છે. તે એ વાત પણ જાણે છે કે-જે પ્રાણી કામભોગોમાં
આસક્ત છે તેનું ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણ થયા કરે છે.

યથા શલ્યહસ્તવૈદ્યોઽનાથમૃતકં તૃણૈર્વૈષ્ટયિત્વા સપ્તાહં યાવજ્જલે સંસ્થાપ્ય જ્ઞૈઃ
જ્ઞૈસ્તસ્ય કથિતમાંસમપાકૃત્ય દર્શયતિ—પશ્યન્તુ ભવન્તઃ, શરીરમિદં યથાઽન્તસ્તથા
બહિર્યથા વહિસ્તથાઽન્તઃ, સર્વં ચ શરીર ત્વદ્દમાંસશોણિતજાઠરાન્નમૂત્રપુરીષાદશુચિ-
પિષ્ઠરૂપમેવાતઃ શરીરે કઃ શુચિવાદઃ? । અશુચૌ ચ શરીરે મુધૈવ મોહોઽજ્ઞાનિનામ્ ।
યદ્વા—કુષ્ઠાદિના જાયમાનાં તસ્ય દુર્દશાં દર્શયતિ—‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ ।

ગલત્કુષ્ઠિનો યથા અન્તઃ=શરીરમધ્યે મૂત્રપુરીષખેલશિઘ્વાણપિત્તશોણિત-
સે ઉત્પન્ન હોને કી વજહ સે, તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીષ આદિ કો
વહાને ચાલા હોને સે ખીતર ઓર બાહર સદા અત્યન્ત અપવિત્ર હી હૈ ।

જૈસે કોઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતક કો તૃણો સે લપેટ કર સાત દિન
તક જલ મેં ઉસે રખ દેતા હૈ ઓર જબ ઉસકા ચમડા ધીરે ૨ સડ-ગલ
જાતા હૈ તવ ઉસ ચમડે કો વહ ઉસકે ઉપર સે નિકાલકર ઉસકે
અસ્થિપંજર કો દિશલાકર કહતા હૈ કિ—દેખિયે, યહ શરીર જિસ પ્રકાર
ખીતર હૈ ઉસી પ્રકાર બાહર હૈ । યહ સમસ્ત શરીર ચમડા, માંસ,
શોણિત, પેટ સંબંધી આતે, મૂત્ર ઓર પુરીષાદિ અશુચિ પદાર્થોં કા પિષ્ઠ-
રૂપ હી હૈ ; અતઃ ઇસ શરીર મેં શુચિતા કી માન્યતા કહાં તક શોભા-
સ્પદ માની જા સકતી હૈ ? અશુચિ શરીર મેં વ્યર્થ હી અજ્ઞાની જન મોહ
કરતે હૈ । તથા—કુષ્ઠાદિક સે જિસ સમય ઇસ શરીર કી દુર્દશા હોતી હૈ
ઉસ સમય કી પરિસ્થિતિ કા ધ્યાન દિલાતે હુએ ખી યહ કહા જાતા હૈ
કિ “યથાન્તસ્તથા વાહ્ય” —મિતિ ।

એક એસા ખી કોઢ હોતા હૈ કિ જિસસે શરીર કે પ્રત્યેક અંગ ઉપાંગ

શુક્ર અને લોહીના સંયોગથી ઉત્પન્ન થવાથી તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીષ
આદિને વહાવવાવાળા હોવાથી ભીતર અને બહાર સદા અત્યન્ત અપવિત્ર જ છે.

જેમ કેઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતકને ઘાસથી લપેટી સાત દિવસ સુધી જળમાં
તેને રાખે છે અને બ્યારે તેનું ચામડું ધીરે ધીરે સડી સડી ગળી બંધ છે
ત્યારે તે ચામડીને તેના ઉપરથી કાઢીને તેના અસ્થિપિંજરને દેખાડી કહે છે
કે—દેખો, આ શરીર જેવી રીતે ભીતર છે તેવી રીતે બહાર છે, જે પ્રકારે બહાર
છે તે પ્રકારે ભીતર છે. આ સમસ્ત શરીર—ચામડી, માંસ, શોણિત, પેટસંબંધી
આંતરડા, મૂત્ર અને પુરીષાદિ અશુચિ પદાર્થોના પિંડરૂપ માટે આ શરીરમાં
શુચિતાની માન્યતા કયાં સુધી લાસ્પદ માની જાય ? અશુચિ
શરીરમાં વ્યર્થ જ અજ્ઞાનીને લાગે છે.

તથા—કુષ્ઠાદિકથી ની
સ્થિતિનું ધ્યાન આપીને પણ

એ પણ કોઢ

શરીરની દુર્દશા
વે છે કે “

નાથી શ...

સમયની પરિ
વાહ્યતા

મં

कृम्यादीनि भवन्ति तथा वहिः=शरीरवहिर्भागेऽपि पूयपूतिशोणितकृम्यादीनि स्रवन्ति भवन्ति । तदुपरि 'भिनभिनेति' शब्दं कुर्वाणैर्मक्षिकासहस्रैराक्रान्तं स्वशरीरं विज्ञाय स्वयमपि स्वात्मानं जुगुप्सते उद्विजते च । यच्छरीरदौर्गन्ध्येन सङ्क्रामकरोगमिया च यत्पार्श्वं परिजनोऽपि नोपवेष्टुमुत्सहते ।

‘जहा अंतो तद्वा बाहिं’ इत्यादिना गूढतयोक्तमेवार्थं प्रकटीकुर्वन्नाह—‘अंतो अंतो’ इत्यादि । स आयतचक्षुर्लोकविदर्शी अन्तः अन्तः=शरीरस्य मध्ये मध्ये पूतिदेहान्तराणि-पूत्यन्तराणि=पूतिविशेषान्, तथा देहान्तराणि=देहावस्थाविशेषान् मांसरुधिरमेदोमज्जादिरूपाणि पूत्यन्तरदेहान्तराणीत्यर्थः, पश्यति=ज्ञानचक्षुषा त्रिलोकयति,

गलने लग जाते हैं, इस रोगी को गलत्कुष्टी कहते हैं । इसके शरीर के भीतर जैसे मूत्र, पुरीष, खेल-कान का मैल, शिङ्घाण-नाक का मैल, पित्त, शोणित और कृम्यादिक होते हैं वैसे ही शरीर के बाहिरी भागों में भी पीव, शोणित और कीड़े वगैरह निकलते रहते हैं, हजारों मक्खियां भी भिन्-भिन् शब्द करती हुई उसके ऊपर मंडराती रहती हैं । ऐसी अपनी दशा देखकर वह स्वयं भी अपने से घृणा करने लग जाता है, और दुःखी भी होता रहता है । उसी समय उसके पास उस रोग के लग जाने के भय से तथा उसकी दुर्गंध से उसके परिजन तक भी बैठने की इच्छा तक भी नहीं करते । अतः इस शरीर की जब यह हालत हो तो फिर उसमें मोह करना ही व्यर्थ है ।

ज्ञानी जन तो इस शरीर को सदा अपवित्र जानकर राग करने का स्थान ही नहीं मानते, उनकी दृष्टि में तो इस देह के समस्त भाग ही अति

गणवा लागे છે, આ રોગીને ગલત્કુષ્ઠી કહે છે તેના શરીરની બીતર બેમ મૂત્ર-પુરીષ, બળખાં, કાનનો મેલ, શિંઘાણુ-નાકનો મેલ, પિત્ત, શોણિત અને ચર-મીઆ આદિ થાય છે તેવી જ રીતે શરીરના બહારના ભાગમાં પણ પડ, શોણિત અને કીડા વિગેરે નીકળતા રહે છે. હબરો માખીઓ પણ બણુ-બણુ શબ્દો કરતી તેના ઉપર ફરતી રહે છે. એવી ચોતાની દશા દેખીને તે ચોતે ચોતાની બતની ઘૂણા કરવા લાગી બાય છે, અને દુખી પણ બને છે. તે વખતે તે રોગના લાગી જવાના લયથી તથા તેની દુર્ગંધથી તેના પરિજન પણ તેની પાસે બેસવાની ઈચ્છા કરતા નથી. માટે આ શરીરની તેવી સ્થિતિ બનતી હોય તો પછી તે શરીર ઉપર મોહ રાખવો વ્યર્થ છે.

જ્ઞાનીજન તો આ શરીરને સદા અપવિત્ર બાણીને રાગ કરવાનું સ્થાનજ માનતા નથી, તેની દૃષ્ટિમાં તો આ દેહના સમસ્ત ભાગ અતિ દુર્ગંધથી ઘૂણિતતર જ

તથા 'પુઠો વિ' પૃથગપિ=દેહાદ્ વહિરપિ 'સવંતાઈં' સવન્તિ=નિઃસરન્તિ=સ્યન્દ-
માનાનિ પૃત્તિદેહાન્તરાણિ-પૂત્યન્તરાણિ=વિકૃતદુર્ગન્ધરુધિરાણિ, દેહાન્તરાણિ=
શ્લેષ્માદીનિ, કુષ્ઠરોગિણાં માંસાદીનિ ચ પશ્યતિ । યદ્યેવં તતઃ કિં કુર્યાત્ ?
इत्याह—' पण्डितः ' इत्यादि । पण्डितः=परिज्ञातहेयोपादेयः, प्रत्युपेक्षेत=यथा-
वस्थितरूपेण जानीयात् । एतत्सर्वं विदित्वाऽत्यन्ताशुचौ यौवनरूपसम्पन्नेऽपि
शरीरे रागं न विदध्यादिति भावः । उक्तञ्च—

“ मंसद्विरुहिरण्हाखवणद्धकलमलयमेयमज्जाहिं ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંધે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति ॥

दुर्गंध से घृणिततर हैं । यदि उन भागों के दुर्गंध की याद की जावे तो
वमन तक भी हो जावे । तथा इस देह में अपने २ स्थान में रही हुई
जो जो मांस, रुधिर, मज्जा, शुक्र, वसा- (चरबी) तथा हड्डी वगैरह
धातुएँ उपधातुएँ हैं वे सब ही, तथा कुष्ठादि-अवस्था में समस्त ही
इन्द्रियां गल जाती हैं । अतः ज्ञानी जन इस क्षणविनश्वर एवं नित्य
अशुचि शरीर में ममताशाली नहीं होते हैं । कहा भी है—

“ मंसद्विरुहिरण्हाखवणद्धकलमलयमेयमज्जाहिं,

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંધે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ, ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति

भावार्थ इसका यही है कि यह देह मांसादिक पदार्थों से युक्त

છે કદાચ તે ભાગોની દુર્ગન્ધની યાદ કરવામાં આવે તો ઉલટી પણ થાય છે
તથા આ દેહમાં પોતપોતાના સ્થાનમાં રહેલા જે જે માંસ, રુધિર, મેદ, મજ્જા,
શુક્ર, ચરબી તથા હાડકા વિગેરે ધાતુઓ, ઉપધાતુઓ છે તે બધી, તથા
કુષ્ઠાદિ-અવસ્થામાં સમસ્ત ઇન્દ્રિઓ પણ ગળી જવા માંડે છે, તેથી જ્ઞાનીજન
આ ક્ષણવિનશ્વર અને નિત્ય અશુચિ શરીરમાં મમતાશાળી થતાં નથી. કહ્યું પણ છે—

“ मंसद्विरुहिरण्हाखवणद्धकलमलयमेयमज्जाहिं ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે. દુગ્ગંધે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति,

ભાવાર્થ એ છે કે આ દેહ માંસાદિક પદાર્થોથી યુક્ત હોવાથી અશુચિ

છાયા—માંસાસ્થિરુધિરસ્તાય્રવનદ્વકલમલકમેદોમજ્જાભિઃ ।

पूर्णे चर्मकोशे दुर्गन्धेऽशुचिवीमत्से ॥ १ ॥

સંચારિમયન્ત્રગલદ્વર્ચોમૂત્રાન્ત્રસ્વેદપૂર્ણે ॥

देहे भवेत्किं रागकारणम् अशुचिहेतौ ॥ २ ॥ इति ॥ सू० ९ ॥ सू०

ઉક્તસ્વરૂપં શરીરં નિર્વર્ણ્યં કિં કરોતીતિ દર્શયતિ—‘સે મઙ્ગમં’ ઇત્યાદિ ।

मूलम्—से मङ्गमं परिन्नाय मा य हु लालपच्चासी, मा तेसु
तिरिच्छमप्पाणमावायए कासंकसे खलु अयं पुरिसे, बहुमाई क-
डेण मूढे पुणो तं करेइ लोहं वेरं वड्ढेइ अप्पणो, जमिणं परिक-
हिज्जइ इमस्स चेव परिवूहणयाए, अमरायइ महासड्ढी अट्टमेयं
तु पेहाए अपरिण्णाए कंदइ ॥ सू० १० ॥

छाया—अथ मतिमन् ! परिज्ञाय मा च हु लालाप्रत्याशी, मा तेषु तिरश्चीन-
मात्मानमापादयेः, कासंकपः खलु अयं पुरुषः, बहुमायी कृतेन मूढः पुनस्तत्करोति
लोभं वैरं च वर्द्धयति आत्मनः, यदिदं परिकथ्यतेऽस्य चैव परिवृहणाय अमरायते
महाश्रद्धी आर्तमेतं तु प्रेक्ष्यापरिज्ञाय क्रन्दति ॥ सू० १० ॥

होने की वजह से अशुचि, दुर्गन्धयुक्त, वीमत्स है । इसमें कोई भी ऐसी
चीज नहीं है जो ज्ञानीजन के राग का कारण हो सके, अतः जो हेयो-
पादेय के ज्ञाता हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे इस शरीर को जैसा इसका
स्वभाव है उसी रूप से जानें । इस सबके कहने का तात्पर्य यही है
कि यौवन से मदमाते रूप से युक्त भी इस अत्यन्त अपवित्र देह में
पूर्वोक्त रीति से कथित इस शरीर का स्वरूप समझकर ज्ञानी-संयमी
मुनि को राग नहीं करना चाहिये ॥ सू० ॥ ९ ॥

દુર્ગન્ધયુક્ત ધીલત્સ છે તેમાં એવી કોઈ પણ ચીજ નથી કે જેને માટે જ્ઞાની-
જનો રાગનું કારણ માની શકે, માટે જે હેયોપાદેયના જ્ઞાતા છે તેનું કર્તવ્ય છે
કે આ શરીરને જેવો તેનો સ્વભાવ છે તેવા રૂપમાં જ માને. આ સઘળું
કહેવાનો મતલબ એ છે કે—યૌવનના મદમાતા રૂપથી યુક્ત પણ આ અત્યન્ત
અપવિત્ર દેહમાં પૂર્વોક્ત રીતિથી કથિત આ શરીરનું સ્વરૂપ સમજીને જ્ઞાની
સંયમી મુનિએ રાગ નહિ કરવો જોઈએ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ટીકા—‘અથ મતિમન્નિ’-ત્યાદિ । અથ કાયકામસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનન્તરં મતિ-મન્=હે મેધાવિન્ ! પરિજ્ઞાય=અશુચિ અશુચિસમ્ભવં ક્ષણભદ્ગુરં ચ શરીરં કટુવિપાકં શબ્દાદિવિષયસ્વરૂપં ચ જ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય ‘ચ’ સમુચ્ચયે ‘હુ’—વાક્યાલઙ્કારે ‘લાલાપ્રત્યાશી’ લાલા=પ્રક્ષરદત્તુદન્નમુલ્લિલં, તાં પ્રત્યશિતું=પુનરગિતું શીલં यस્ય સ લાલાપ્રત્યાશી=લાલામક્ષી મા ભવ । યથા વિવે-કકલાવિકલો વાલો મુલ્લિલસ્મૃતામધઃપતન્તીં લાલાં પુનઃ પુનરાસ્વાદયતિ તથૈવ ત્વમપિ પરિત્યક્તાનાં કામભોગાનાં પુનરભિલાપં મા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । અપિ ચ તેષુ મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિસંસારસ્રોતસુ આત્માનં તિરસ્ચીનં=પ્રતિકૂલગામિનં પતન-શીલં મા આપાદયેઃ=મા કુરુ, જન્મ-મરણપ્રવાહે સ્વાત્માનં મા પાતયેત્યર્થઃ, શ્રુત-ચારિત્રલક્ષણપરમાનન્દે સ્થાપયેતિ ભાવઃ ।

જ્ઞાનીજન દેહ કા ઉક્ત સ્વરૂપ જાનકર કયા કરતે હૈં ? સો કહતે હૈં—‘સે મહમં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય કા સંવોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ શરીર ઔર કામગુણ કે વર્ણિત સ્વરૂપ સે પરિચિત હો ચુકે હો, તથા યહ ભી જાન ચુકે હો કિ યહ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ-કારણોં સે પૈદા હુઆ હૈ; ઔર ક્ષણભગુરં હૈ, યે શબ્દાદિ વિષય ભી કટુકવિપાકવાલે હૈં, ઇસલિયે ઇન સબ વાતોં કો જપરિજ્ઞા સે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ઇનકા પરિત્યાગ કર અવ લાલાપ્રત્યાશી-લાર ચાટને વાલા મત વનો । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર વિવેકવિકલ વાલક મુલ્લિલ મુલ્લિલ નીચે ગિરતો હુઈ અપની લાર કો વારંવાર ચાટતા હૈં ઁસી તરહ તુમ ભી પરિત્યક્ત ઇન કામભોગોં કો ફિર સે ભોગને કી અભિલાષા મત કરો । તથા મિથ્યાત્વ, ઔર અવિરતિ આદિ

જ્ઞાનીજન દેહનું ઉક્તસ્વરૂપ જાણીને શું કરે છે, તે કહે છે ‘સે મહમં’ ઇત્યાદિ

શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે શરીર અને કામગુણના વર્ણિત સ્વરૂપથી પરિચિત બની ચૂકેલ છો, તથા એ પણ જાણી ચૂક્યા છો કે-આ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ કારણોથી પૈદા થયેલ છે, અને ક્ષણભંગુર છે. એ શબ્દાદિ વિષય પણ કટુકવિપાકવાલા છે, માટે આ સઘળી વાતોને જ-પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિ-ત્યાગ કરી હવે લાલાપ્રત્યાશી-લાળચાટનારા ન બનો. અર્થાત્ જેવી રીતે વિવેકવિકલ બાળક મુખથી નીચે ટપકતી પોતાની લાળને વારંવાર ચાટે છે તે માફક તમે પણ પરિત્યક્ત આ કામભોગોને ફરીથી ભોગવવાની અભિલાષા ન કરો. તથા મિથ્યાત્વ અને

ન પ્રમાદવતઃ શાન્તિરિતિ દર્શયતિ=‘કાસંકષઃ’ ઇત્યાદિ । અયં પ્રમાદી પુ
કાસંકષઃ—કસ્યતે=પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ શબ્દાદિવિષયાસ્તાન્ કષ
તદભિમુખં ગચ્છતીતિ ‘કાસંકષઃ’ શબ્દાદિવિષયલોલુપઃ । સ હિ સમુદીય
ભોગસ્પૃહોઽહર્નિશં ‘કૃતવાનમું કરિષ્યે ચેમમ્’ ઇત્યાદિનાનાવિધિસંકલ્પવિકલ્પવ
પદે પદે વિષીદન્ન કદાચિદપિ શાન્તિમુપલભમાન ઇત્યર્થઃ । કિં ચ बहुमायी=મ

જો સંસાર કે સ્રોત-કારણ હૈં, उनमें अपनी आत्मा को पतनशील
बनाओ ; कारण कि ऐसा करने से जन्म और मरण के प्रवाह का व
भी अंत नहीं आ सकेगा । अतः जो इस प्रवाह को रोकने की चा
हो तो मिथ्यात्व आदि सांसारिक कारणों में अपने को मत फँसा
श्रुतचारित्ररूप परम आनन्द में ही अपने को स्थित करो ।

પ્રમાદી આત્મા કો શાંતિ નહીં મિલતી હૈં યહ માની હુઈ વાત
ક્યોંકિ પ્રમાદી મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોં કી ઓર ઝુકતારહતા હૈં, उ
લોલુપી બના રહતા હૈં, इसके चित्त में भोगों की इच्छा निरन्तर
કરતી હૈં, “मैंने इसको किया, इसको अब करूँगा” ઇત્યાદિ અ
સંકલ્પ-વિકલ્પોં કે તાંતોં મેં ફસકર યહ કમી મી સચ્ચી શાંતિ
અનુભવ નહીં કર સકતા । क्षण-क्षण में विषादी बनता है, कारण
इसका एक संकल्प पूरा होता है और दूसरे को पूर्ण करने के लिये आव
व्याकुल हो उठता है । जो शब्दादि-विषयों में लोलुप है उसका न
काસંકષ હૈં । “कास्यते पीड्यते प्राणी यैस्ते कासास्तान् कषति=तदभि

अविरति आदि जे ससारना स्रोत-कारण छे तेमां पोताना आत्माने पतनशी
जनाये नहि. कारण के ओयुं करवाथी जन्म अने मरणना प्रवाहनेो डोई व
पणु अंत आवी शकसे नहि. भाटे जे आ प्रवाहने देखवानी आडना डोय
मिथ्यात्व आदि सांसारिक कारणेमां पोतानी जतने इसाये नहि. श्रुतआरि
इप परम आनंदमां ज पोताने स्थिर करे

પ્રમાદી આત્માને શાંતિ મળતી નથી, એ માનેલી વાત છે, कारण के प्रमा
मनुष्य शब्दादि विषयेनी तरङ्ग जुकता रहे छे, तेमां दोलुपी जनी रहे छे, ते
चित्तमां लोगोनी धृष्टा निरन्तर रह्या करे छे. “मैं आ बनाव्युं, आ वस्तु
डमणा करूं छुं अगर करीश” छत्यादि अनेक संकल्प विकल्पोना तांतामां इसी
ते साथी शांतिने अनुभव क्यारेय पणु करी शकतो नथी. क्षण्ण क्षण्ण विष
जनी रहे छे, कारण के तेनो एक संकल्प पुरे थाय छे त्यां जीजने पु
करवामां व्याकुल-व्याकुल थई जाय छे. जे शब्दादिक विषयेमां दोलुप छे ते
नाम कासंकष छे, “कास्यते पीड्यते प्राणी यैस्ते कासाः, तान् कषति=तदभिमु

વહુલઃ નાનાવિધોપાયૈઃ પરપ્રતારણચતુર इत्यर्थः । શબ્દાદિવિષયાસક્તસ્ય કપાયો-
દયોऽवश्यम्भावी ततो 'बहुमायी'—ત્યુપલક્ષણં ક્રોધાદીનાં ત્રયાણાં, તેન 'વહુક્રોધી'
इत्यादि भवति । અપિ ચ 'કૃતેન મૂઢઃ' કૃતેન=કર્તવ્યેન મૂઢઃ=વિકલઃ, કાર્ય-
व्याकुलचित्तत्वेन भोजनादिसमये भोक्तुमप्यशक्नुवन् स पुनस्तन्मायादिकं तथा
मुखं गच्छति-इति कासंकपः " અર્થાત્ જિનકે દ્વારા પ્રાણી દુઃસ્વિત્ હોતે
हैं उनका नाम कास है, और वे शब्दादि विषय हैं, इनकी ओर जो
प्रवृत्ति करता है उसका नाम कासंकप है ।

શબ્દાદિક-વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણી માયાવહુલ હોતે હેં । અનેક
प्रपंच रचकर दूसरों की प्रतारणा (ठगाई) करने का उनका ध्येय बना
रहता है । इस कार्य में ये इतने चतुर होते हैं कि-भोले-भाले प्राणी इन
की मायाचारी में बहुत जल्दी फँस जाते हैं । 'बहुमायी' पद अन्य क्रोध
मान लोभ का उपलक्षक है । इससे शब्दादि-विषयों में फँसे हुए प्राणी
बहुक्रोधी, बहुमानी, बहुलोभी होते हैं, ऐसा अर्थ भी इसी एक पद से
गृहीत हो जाता है, कारण कि शब्दादिक विषयों में आसक्त प्राणियों के
कषाय का उदय अवश्य होता है तथा ऐसे प्राणी कर्तव्य से भी विकल
होते हैं अर्थात्-समयानुसार जो कार्य उन्हें करना चाहिये उनको नहीं
करते । अन्य कार्यों में व्याकुलचित्त होने से, अधिक क्या कहा जाय ?;
उनको खाने तक की भी फुरसत नहीं मिलती । रातदिन उन्हीं मायादिक

गच्छति-इति कासंकपः " अर्थात् જે દ્વારા પ્રાણી દુઃસ્વિત થાય છે તેનું નામ કાસ
છે અને તે શબ્દાદિ વિષય છે, તેની તરફ જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું નામ કાસંકપ છે.

શબ્દાદિક વિષયોમા આસક્ત પ્રાણી માયાબહુલ હોય છે, અનેક પ્રપંચ
રચીને બીજાને ઠગાવના તેનો ધ્યેય બની રહે છે. તે કાર્યમાં તે એટલો
ચતુર હોય છે કે ભોળા પ્રાણી તેની માયાબળમાં બહુ જલ્દી ફસી જાય છે.
બહુમાયીપદ અન્ય ક્રોધ માન લોભનો પણ ઉપલક્ષક છે, તેથી શબ્દાદિ વિષ-
યોમા ફસેલાં પ્રાણી બહુક્રોધી, બહુમાની અને બહુલોભી હોય છે, એવો
અર્થ પણ તેના એક પદથી અહિં થઈ જાય છે, કારણ કે શબ્દાદિ વિષયોમાં
આસક્ત પ્રાણિયોને કષાયનો ઉદય અવશ્ય થાય છે, તથા એવો આત્મા કર્તવ્યથી
પણ વિકલ થાય છે, સમયાનુસાર જે કર્મ તેણે કરવું જોઈએ તેતો કરતો નથી,
અન્ય કાર્યોમાં વ્યાકુળચિત્ત હોવાથી તેને અધિક શું કહેવું ?; ખાવાપીવાની પણ
ફુરસદ મળતી નથી. રાતદિન તેમા માયાદિક કાર્યોમાં જ ફસી રહે છે, લોભ

કરોતિ યેન આત્મનો લોભં વૈરં ચ વર્દયતે । શબ્દાદિવિષયાઽપ્રાપ્તિદુઃખપીડિતો
હિ કદાચિચ્છબ્દાદિવિષયાન્ પ્રાપ્નોત્યપિ કિન્તુ પરિણતિવિરસત્વાત્સેવિતા અપિ તે
ચિરકાલદુઃખદા એવ ભવન્તિ । ઉક્તઞ્ચ—

“ સ્વળમિત્તસુખ્વા વહુકાલદુઃખા ” ઇતિ । યદર્થમાત્મનોઽનન્તસંસારજનકં
વૈરમુત્પાદયતિ । તદાહ—‘ યદિદ ’—મિત્યાદિ । યદ્ યસ્માત્ અસ્યૈવ ક્ષણમહ્નુરસ્ય
શરીરસ્ય પરિવુંહણાય=પરિવર્દનાય—પુષ્ટ્યર્થં હિંસાધનેકસાવધવ્યાપારાન્ કરોતિ,

કાર્યો કે કરને મેં હી ખેસે રહતે હૈં, લોભ ઓર વૈરભાવ કો વઢાતે રહતે
હૈં । લોભ સે હી માયાચાર કરને મેં જીવોં કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । માયા-
ચાર સે વૈરભાવ કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । થોડી દેર કે લિયે માન લિયા જાય
કિ શબ્દાદિવિષયોં કી અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોં સે પીડિત હુઆ પ્રાણી
કદાચિત્ત્ ઉન શબ્દાદિકવિષયોં કો પ્રાપ્ત કર ભી લે, તો ભી સેવન કિયે
ગયે વે શબ્દાદિવિષય પરિણામ મેં વિરસ હોને સે અવિષ્યકાલ મેં જીવોં
કો ચિરકાલ તક દુઃખદાયી હી હોતે હૈં । “ સ્વળમિત્તસુખ્વા વહુકાલ-
દુઃખા ”—યે વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ ભાસતે હુએ ભી અનન્ત દુઃખોં
કે દેનેવાલે હોતે હૈં । જિનકે લિયે જીવ અનન્ત સંસાર કે જનક વૈર
કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ । ડસી વાત કો સૂત્રકાર “ જમિણ ” ઇત્યાદિ સે સ્પષ્ટ
કરતે હુએ કહતે હૈં—સંસાર મેં જીવોં દ્વારા હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યા-
પારોં કે કરને મેં જો પ્રવૃત્તિ કી જાતી હૈ ડસકા પ્રધાન કારણ એક નિજ
શરીર કી પુષ્ટિ કરને કા મોહ હી હૈ । ડસ પ્રકાર કે મોહ કે આધીન
વના હુઆ જીવ સ્વયં અપને આપકો અનેક કષ્ટોં કો શેલતા હુઆ ભી

અને વેરભાવને વધારતા રહે છે લોભથી જ માયાચાર કરવામાં જીવોની પ્રવૃત્તિ
થાય છે, માયાચારથી વેરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે. થોડા વખતને માટે માની લ્યો
કે શબ્દાદિ—વિષયોની અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોથી પીડિત થયેલ પ્રાણી કદાચ તે
શબ્દાદિક—વિષયોને પ્રાપ્ત કરી લે તો પણ ભોગવવામાં આવેલા તે શબ્દાદિ વિષય
પરિણામમાં વિરસ થવાથી ભવિષ્યકાળમાં જીવોને ચિરકાલ સુધી દુઃખદાયી જ
થાય છે. કેમ કે—“ સ્વળમિત્તસુખ્વા વહુકાલદુઃખા ” આ વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ
લાગે છે પણ અનંત દુઃખોના દેવાવાળા હોય છે, જેના માટે જીવ અનંતસંસાર-
જનક વૈરને ઉત્પન્ન કરે છે, આ વાતને સૂત્રકાર “ જમિણ ” ઇત્યાદિ પદોથી
સ્પષ્ટ કરીને કહે છે—સંસારમાં જીવો હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યાપારો
કરવામાં જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું પ્રધાન કારણ એક પોતાના શરીરની
પુષ્ટિ કરવાનો મોહ જ છે. આવા પ્રકારના મોહને આધીન બનેલા જીવ પોતે
પોતાની બાંતને અનેક કષ્ટોથી દુઃખી બનાવતા છતાં પણ સુખી માને છે, અને

સ્વયં ક્ષિયતે ચ । इदमपरं कथ्यते—‘अमरायते’ इत्यादि, ‘महाश्रद्धी’ महती वासौ श्रद्धार्थकामविषया महाश्रद्धा, साऽस्ति यस्य स महाश्रद्धी—भोगेषु तत्साधनेषु चाति-श्रद्धावान् सन् अमरायते भोगवाञ्छयाऽर्थोपार्जनपर आत्मानममरमिव मन्यते । एतम्=अमरायमाणम् महाश्रद्धिनम् आर्तम्=शारीरमानसिकपीडापीडितं प्रेक्ष्य विवेकबुद्ध्या विचार्य, हे शिष्य ! शब्दादिविषये मनो न निधेयमिति भावः । यश्च भोगगृद्धः

सुखी मानता रहता है, और अर्थ, काम और विषयों एवं उनके साधनों के जुटाने में ही रात-दिन बह तल्लीन बना रहता है । उसके हृदय में सदा यही दृढ़ विश्वास काम करता रहता है कि—‘अर्थ कामादिक एवं उनके साधनों की प्राप्ति से ही जीवन सुखमय होता है, इनके बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं । शारीरिक साता ही जीवन की साता है, यह बिना भोगों के होती नहीं, भोगों का भोगना भी बिना अर्थोपार्जन किये बनता नहीं, अतः वे भोगों की वाञ्छा से प्रेरित होकर अर्थोपार्जन करने में तत्पर होते रहते हैं और सब कुछ साधनसंपन्न हो जाने पर अपने आपको अमर मानने लग जाते हैं । इस प्रकार भोग और उनके साधनों में श्रद्धासंपन्न तथा अपने आपको अमर मानने वाले प्राणियों को हे शिष्य ! तुम कभी भी सुखी न समझो । वे तो सदा शारीरिक एवं मानसिक पीडाओं से व्यथित ही रहते हैं । ऐसा जानकर तुम शब्दादि-विषयों में अपने मनको कभी भी आसक्तियुक्त न करो ।

અર્થ, કામ તથા વિષયો અને તેના સાધનોને મેળવવામાં જ રાત દિવસ તહીન બની રહે છે. તેના હૃદયમાં સદા એ જ વિશ્વાસ કામ કરતો રહે છે કે ‘અર્થ-કામાદિક અને તેના સાધનોની પ્રાપ્તિથી જ જીવન સુખમય થાય છે. તેના વિના જીવનનું કોઈ મૂલ્ય નથી શારીરિક સાતા જ જીવનની સાતા છે. એના વિના ભોગો થતા નથી. ભોગોનું ભોગવવું અર્થ ઉપાર્જન કર્યા વિના થતું નથી, તેથી તે ભોગોની વાંછનાથી પ્રેરિત થઈને અર્થ ઉપાર્જન કરવામાં તત્પર રહ્યા કરે છે. અને ળધાસાધનસંપન્ન બનવાથી પોતે પોતાની જાતને અમર માનવા લાગી જાય છે. આ પ્રકારે ભોગ અને તેના સાધનોમાં શ્રદ્ધાસંપન્ન તથા પોતે પોતાની જાતને અમર માનવાવાળા પ્રાણીને હે શિષ્ય ! તમે કોઈ વખત પણ સુખી ન માનો. એ તો સદા શારીરિક અને માનસિક પીડાઓથી વ્યથિત જ રહે છે. એવું સમજીને તમે શબ્દાદિ વિષયોથી પોતાના મનને કોઈ વખત પણ આસક્તિ-યુક્ત ન કરો.

સોઽપરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયાઽનર્થકામં તદ્વિપાકં ચાબુદ્ધ્વા, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ તમ-
પરિત્યજ્ય ચ ક્રન્દતિ=ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તૌ સ્પૃહાં, તન્નાશે શોકં ચાનુભૂયોચ્ચૈ રોદિતિ ।
કામભોગાસક્તશ્ચતુર્ગતિકસંસારે ભ્રામં ભ્રામં નરકનિગોદાદિષ્વનન્તયાતનાં પ્રાપ્નો-
તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામકટુવિપાકમુપદર્શ્ય સામ્પત્ત્યુપસંહરતિ-‘સે તં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે તં જાણહ જમહં બેમિ, તેઙ્છં પંડિણ પવયમાણે
સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા, અકઠં કરિસ્સા-
મિત્તિ મન્નમાણે, જસ્સ વિય ણં કરેઙ્, અલં બાલસ્સ સંગેણં, જે વા
સે કારઙ્ બાલે, ન ઇવં અણગારસ્સ જાયઙ્-ત્તિ બેમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—તત્ (તસ્માત્) તજ્જાનીત યદહં વ્રવીમિ, ચૈકિત્સ્યં પઞ્ડિતઃ પ્રવદન્
સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા અપદ્રાવયિતા, અકૃતં કરિષ્યામિ—ઇતિ
મન્યમાનઃ, યસ્મૈ અપિ ચ ચ્ચલુ કરોતિ, અલં બાલસ્ય સદ્ધેન, યો વા તત્કારયતિ
બાલઃ, ન ઇવમનગારસ્ય જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥ ઇતિ વ્રવીમિ ॥

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ”—જો વિષય-ભોગોં મેં ગૃહ્ વને હુણ હૈં વે હન
અર્થકામરૂપ ભોગોં કો ઔર હનકે વિપાક કો જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે નહીં જાન-
કર ઔર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે હનકા પરિત્યાગ નહીં કર, ઇષ્ટ વિષય
કો પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા સે ઔર હસકે વિયોગ મેં શોક સે સદા આકુલ-
વ્યાકુલ વને રહતે હૈં । કામભોગોં મેં આસક્ત વે પ્રાણી ચતુર્ગતિરૂપ હસ
સંસાર મેં વારંવાર ભ્રમણ કર નરક-નિગોદાદિ કી અનન્ત વેદનાઓં કો
પાતે રહતે હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામ કે કટુક વિપાક કો સ્પષ્ટકર અવ હસકા ઉપસંહાર કરતે
હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં-‘સે તં’ ઇત્યાદિ ।

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ” જે વિષય ભોગોમાં ગૃહ્ બનેલા છે, તેઓ આ
અર્થકામ-રૂપ ભોગોને અને તેના વિપાકને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી નહિ જાણીને અને
પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ નહિ કરીને ઇષ્ટ વિષયની પ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી
તેના વિયોગમાં શોકથી સદા આકુળ-વ્યાકુળ બની રહે છે. કામભોગોમાં આસક્ત
પ્રાણી ચતુર્ગતિ-રૂપ આ સંસારમાં વારંવાર ભ્રમણ કરી નરકનિગોદાદિની અનંત
વેદનાઓને ભોગવતા રહે છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામના કટુક વિપાકને સ્પષ્ટ કરીને હવે તેનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર
કહે છે-‘સે તં’ ઇત્યાદિ.

ટોકા—‘તદિત્યાદિ । યસ્માત્કામા દુઃખમૂલાઃ તત્તસ્માત્કારણાત્ યત્પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા અહં વ્રવીમિ તત્સર્વં યથાવસ્થિતં યુયં જાનીત-’ કામભોગા હેયાઃ ’ ઇતિ મદીયોપદેશમવગ્ચં શૃણુતેત્યર્થઃ ।

નનુ ભવદુપદેશે કિં વૈલક્ષણ્યં યદુપદેશં વયં શૃણુમઃ, અન્યોપદેશાદપિ કામ-નિવૃત્તિર્ભવિતુમર્હતીતિ चेदाह-‘चैकित्स्य’-मित्यादि, पण्डितः=पण्डितम्मन्यः केवलं शब्दज्ञानी चैकित्स्यं कामचिकित्सामुत्पन्नरोगचिकित्सामिव कामसेवनमेव

हे शिष्य ! काम सदा दुःखों के मूल-कारण हैं, इसलिये इस विषय में पहिले जो कुछ कहा गया है, अथवा आगे भी जो कुछ कहा जावेगा वह सब यथार्थ है; इसमें थोड़ा सा भी संदेह के लिये स्थान नहीं है, ऐसा तुम विश्वास रखो । ‘कामभोग सदा हेय हैं’ यही हमारा उपदेश है । इस उपदेश की पुष्टि इस प्रकार से कामभोगों में हेयता के प्रदर्शन से भलीभांति हो जाती है । अतः मोक्षाभिलाषीजन को इस उपदेश का श्रवण करना चाहिये । इस प्रकार से शिष्यों के प्रति सूत्रकार का आदेश है ।

प्रश्न—इस आपके उपदेश में ही ऐसी क्या विलक्षणता है जिसके लिये यह उपदेश अवश्य सुना जाय, अन्य के उपदेश से भी कामादिक की निवृत्ति हो सकती है ? ।

उत्तर—जो सिर्फ शब्दज्ञानी हैं, अपने आपको विद्वान् मानते हैं

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃખોનું મૂળ કારણ છે. માટે આ વિષયમાં પહેલાં જે કંઈ કહેવામાં આવેલ છે અથવા આગળ પણ કહેવામાં આવશે તે સઘળું યથાર્થ છે. તેમાં જરા પણ સંદેહનું સ્થાન નથી. એવો તમે વિશ્વાસ રાખો. કામભોગ સદા હેય-ત્યાગ્ય છે. એજ અમારો ઉપદેશ છે. આ ઉપદેશની પુષ્ટિ આ પ્રકારથી કામભોગોમાં હેયતાના પ્રદર્શનથી ભરી ભાંતિ થાય છે. માટે પ્રત્યેક મોક્ષાર્થીએ આ ઉપદેશનું શ્રવણ કરવું જોઈએ. આ પ્રકારથી શિષ્યો પ્રતિ સૂત્રકારનો આદેશ છે.

પ્રશ્ન—આ આપના ઉપદેશમાં એવી કંઈ વિલક્ષણતા છે જેના માટે આ ઉપદેશ અવશ્ય સાંભળવો પડે. બીજાના ઉપદેશથી પણ કામાદિકની નિવૃત્તિ થઈ શકે છે ?

ઉત્તર—જે ફક્ત શબ્દજ્ઞાની છે, પોતે પોતાને વિદ્વાન માને છે એવી વ્યક્તિ

तच्चिकित्सां प्रवदन् सः=मिथ्योपदेष्टा परतीर्थिको विविधसावद्यव्यापारप्रवृत्तो भवति । तदेवाह—‘हन्ते’त्यादि । हन्ता दण्डादिना, छेत्ता खड्गादिना, भेत्ता भल्लादिना, लुम्पयिता ग्रन्थिच्छेदादिना, विलुम्पयिता आक्रमणादिना, अपद्रावयिता प्राणातिपातादिना भवति । किं कृत्वैतादृक्सावद्यव्यापारकारी भवतीत्याह—‘अकृतं’ यदन्येन केनापि पूर्वं कामचिकित्सनं न कृतं तदहं करिष्ये, इति=इत्थं मन्यमानः सः, यस्मै चोपदिशति सः, तदुभयमपि न केवलमुपदेष्टैव हननच्छेदन-

ऐसे व्यक्ति ‘कामभोगादिकों की निवृत्ति उनके सेवन करने से ही होती है’ ऐसा मानते हैं और कहते भी हैं—जैसे उत्पन्न हुए रोग की चिकित्सा दवाई से होती है उसी प्रकार कामादिकों की चिकित्सा भी उनके सेवनरूप दवा से ही होती है । इस प्रकार की मान्यतावाले सच्चे उपदेशक न होकर उल्टे मिथ्या उपदेशक ही हैं । ये पत्थर की नाव के समान हैं । जिस प्रकार पत्थर की नौका स्वयं डूब जाती है और साथ में बैठे हुए मनुष्यों को भी डूबा देती है, ठीक इसी प्रकार ये स्वयं एक तो सावद्य व्यापार में प्रवृत्त बने रहते हैं और जो इनकी मान्यता के अनुयायी होते हैं वे भी इन्हीं की मान्यता के पथिक बन जाते हैं, अर्थात्—ये स्वयं डूबते हैं और अपने अनुयायियों को भी डूबाते हैं, अतः इनके उपदेश से कामादिक की निवृत्ति नहीं हो सकती, किन्तु वीतराग के उपदेश से ही होती है । इसलिये इस उपदेश के सुनने की जरूरत है । यह उपदेश भी साक्षात् वीतराग प्रभु के ही मुख से निकला हुआ है । हे जम्बू ! भगवान् से जैसा मैंने सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूँ । पर-

‘कामभोगादिकनी निवृत्ति, तेनुं सेवन करवाथीज् थाय छे’ जेवुं माने छे. अने डंडे पणु छे डे—‘जेवी रीते उत्पन्न थयेल रोगनी चिकित्सा दवाथीज् थाय छे ते प्रकारे कामादिकनी चिकित्सा पणु तेना सेवनइय दवाथीज् थाय छे. जेवी मान्यतावाणा साया उपदेशक न गनीने उट्टा मिथ्या उपदेशक ज् छे जेओ पत्थरनी नाव समान छे. जेवी रीते पत्थरनी नौका पोते डूणी जय छे अने तेमां जेठेला मनुष्योने पणु डूणावे छे, ते प्रकारे आपोते पणु जेकतो सावद्य व्यापारमां प्रवृत्त रहे छे अने जे जेनी मान्यताना अनुयायी होय छे ते पणु जेनी मान्यताना पथिक गनी जय छे. ते पोते डूजे छे अने पोताना अनुयायिओने पणु डूणावे छे. माटे तेना उपदेशथी कामादिकनी निवृत्ति थती नथी, वीतरागना उपदेशथी ज् थाय छे, जेथी ते उपदेशने सांलणवानी आवश्यकता छे. आ उपदेश पणु साक्षात् वीतराग प्रभुना मुणथी निकजेल छे. हे जम्बू ! भगवान् पासेथी जेवुं मे सांलज्युं छे तेवुं ज् डहुं छुं.

તીર્થિકોં કા ઉપદેશ મિથ્યા ઇસલિયે હૈ કિ ઉનકે ઉપદેશ સે જીવોં કી સાવધ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ હો જાની હૈ। ઇસકા કારણ મી યહી હૈ કિ વે સ્વયં ઉન સાવધ ક્રિયાઓં સે વિરક્ત નહીં હોતે હૈં, હનન-છેદન-ભેદન-લુમ્પન ઓર વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોં મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ વની રહતી હૈ। ઢણ્ડાદિક સે તાડન કરને કા નામ હનન હૈ, ઇસ ક્રિયા કે કર્તા હોને સે વે હન્તા કહે જાતે હૈં। સ્વઙ્ગાદિક સે વિદારણ કરને કા નામ છેદન હૈ, ભાલે વગૈરહ સે ભેદને કા નામ ભેદન, ગાંઠ વગૈરહ કે છેદનાદિક કરને કા નામ લુમ્પન ઓર આક્રમણાદિક કરને કા નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરને કા નામ અપદ્રાવણ હૈ। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કર્તા હોને સે વે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા ઓર અપદ્રાવયિતા કહે જાતે હૈં। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કરને મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ ઇસલિયે હોતી હૈ કિ-વે યહ વિચાર કરતે હૈં કિ કામ કી યહ ચિકિત્સા પૂર્વ મેં કિસી ને નહીં કી હૈ હમ ઇસે કરૈંગે। ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા સે પ્રેરિત હોકર વે જિનકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં વે ઓર સ્વયં ઉપદેષ્ટા, યે દોનોં પૂર્વોક્ત હનન ઓર છેદનાદિક વ્યાપારોં કો કરતે હૈં, ઇસલિયે કરને વાલે કરાને વાલે તથા ઉસકા અનુમોદન કરને વાલે મી અજ્ઞાની માને ગયે હૈં। અર્થાત્ એસે જીવોં કા જ્ઞાન સિર્ફ શાબ્દિક હી હૈ।

પરતીર્થિઓના ઉપદેશ મિથ્યા તેટલા માટે છે કે તેઓના ઉપદેશથી જીવોની સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે તેનું કારણ એ છે કે તેઓ પોતે તેવા સાવધ વ્યાપારોથી વિરક્ત બનેલ નથી. હણ્ણુ, છેદવું, ભેદવું, લુમ્પન, અને વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોમાં તેઓની પ્રવૃત્તિ બની રહે છે ઢંડાદિકથી તાડન કરવાનું નામ હણ્ણુ છે આ ક્રિયાનો કર્તા હોવાથી તે કર્તા હણ્ણુનાર કહેવાય છે. તલવાર આદિથી વિદારણ કરવાનું નામ છેદન છે, ભાલા વિગેરેથી ભેદવું તેનું નામ ભેદન, ગાંઠ વિગેરેનું છેદવું તેનું નામ લુમ્પન અને આક્રમણાદિક કરવાનું નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરવાનું નામ અપદ્રાવણ છે. આ બધી ક્રિયાઓના કર્તા બનવાથી તે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા અને અપદ્રાવયિતા કહેવામાં આવે છે આવી ક્રિયાઓના કરવામાં તેઓની પ્રવૃત્તિ તેટલા માટે થાય છે કે-તે એવો વિચાર કરે છે કે આ કામની ચિકિત્સા પૂર્વમાં કોઈએ કરેલ નથી, અમે તે કરીશું. આવા પ્રકારની માન્યતાથી પ્રેરિત થઈને તે જેના માટે ઉપદેશ કરે છે તે અને સ્વયં ઉપદેષ્ટા એ બંને પૂર્વોક્ત હનન અને છેદનાદિક વ્યાપારો કરે છે, માટે કરનાર, કરાવનાર તથા તેની અનુમોદના કરનાર પણ અજ્ઞાની માનવામાં આવે છે. અર્થાત્ એવા જીવોનું જ્ઞાન ફક્ત શાબ્દિક જ છે.

ભેદનાદિસાવધવ્યાપારાન્ કરોતિ । યો વા તત્ હનનાદિકં કારયતિ 'વા' શબ્દાત્તદ-
નુમોદકોઽપિ, વાલઃ=અજ્ઞાની શબ્દજ્ઞાનમાત્રાવલમ્બી ભવતિ, અતો વાલસ્ય=
એતાદૃશસ્ય કર્તુઃ કારયિતુરનુમોદયિતુરજ્ઞાનિનઃ સંગેન=સંસર્ગેણ, અલં=વ્યર્થમ્ ।
અજ્ઞાનિનઃ સંસર્ગોઽપિ સર્પસંસર્ગ ઇવ સર્વથા પરિવર્જનીય ઇતિ ભાવઃ । તસ્માત્પર-
તીર્થિકોપદેશઃ શબ્દાદિવિષયકપાયકલુપિતત્વેન હનનાદિસાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિ-
જનકતયા ચ હેય એવ, ન ચૈતાદૃશો મદીયોપદેશઃ વીતરાગભગવન્મુખાત્સાક્ષાચ્છુત-
સ્યૈવ પરિકથ્યમાનત્વાદિતિ તાત્પર્યમ્ । કસ્યૈવં ન ભવતીત્યાહ-'નૈવ'-મિત્યાદિ ।

इसलिये जिस प्रकार सर्प का संसर्ग सर्वथा त्याज्य होता है उसी प्रकार
ऐसे अज्ञानी जीवों का संसर्ग भी सदा छोड़ने योग्य शास्त्रकारों ने
बतलाया है, अतः इसे अवश्य ही छोड़ देना चाहिये । इससे यह भाव
निकलता है कि परतीर्थिकों का उपदेश शब्दादिक-विषय-कषायों से कलु-
षित होने की वजह से, तथा हननादिक सावधक्रियाओं में प्रवृत्ति का
जनक होने से सदा हेय-त्याज्य है । जिस प्रकार का इनका उपदेश होता
है ऐसा उपदेश मेरा नहीं है । क्योंकि यह जो उपदेश दिया गया है,
वह साक्षात् वीतराग प्रभु के मुख से ही सुना हुआ दिया गया है, मनः
कल्पित नहीं । जो द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार के अगार से रहित हैं,
तथा शब्दादिक विषयों के कटुक फल से परिचित हैं ऐसे संयमी मुनि
कभी भी इस प्रकार से काम की चिकित्सा का उपदेश नहीं देते हैं,

માટે જેવી રીતે સર્પનો સંસર્ગ સર્વથા ત્યાજ્ય હોય છે, તે પ્રકારે આવા અજ્ઞાની
જીવોનો સંસર્ગ પણ સદા છોડવા યોગ્ય શાસ્ત્રકારોએ બતલાવેલ છે, માટે તેને
અવશ્ય છોડી દેવો જોઈએ. આથી સાર એ નિકળે છે કે પરતીર્થિઓનો ઉપદેશ
શબ્દાદિક-વિષય-કષાયોથી કલુષિત હોવાથી, તથા હણવું આદિ સાવધ વ્યાપારની
પ્રવૃત્તિનો જનક હોવાથી સદા હેય-ત્યાજ્ય છે. જેવી રીતે તેઓનો ઉપદેશ
હોય છે, તે પ્રકારે મારો ઉપદેશ નથી કારણકે આ જે ઉપદેશ આપવામાં
આવેલ છે તે સાક્ષાત વીતરાગ પ્રભુના મુખથી સાંભળેલો જે છે તેજ આપવામાં
આવેલ છે. મનકલ્પિત નહિ. જે દ્રવ્ય અને ભાવ બન્ને પ્રકારના અગાર-ઘરથી
રહિત છે, તથા શબ્દાદિક વિષયોના કટુક ફળથી પરિચિત છે એવા સંયમી
મુનિ કોઈ વખત પણ આ પ્રકારથી કામની ચિકિત્સાનો ઉપદેશ દેતા નથી,

અનગારસ્ય=દ્રવ્યભાવાગારરહિતસ્ય પરિજ્ઞાતશબ્દાદિવિષયકટુવિષાકસ્ય સંયતસ્ય
 एवं कामचिकित्सोपदेशदानं तत्कारणं च न जायते=ન કલ્પતે ‘ઇતિ બ્રવીમિ’ ઇતિ
 पूर्ववद् व्याख्येयम् ॥ સૂ. ॥ મૂ. ૧૧ ॥

इत्याचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां द्वितीयाध्ययनस्य
 पञ्चमोद्देशः समाप्तः ॥ २-५ ॥

और न उसके कारण ही बनते हैं । “इति ब्रवीमि” इन पदों की
 व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ सू. ११ ॥

॥ आचारांगसूत्रके द्वितीय अध्ययन का
 पंचम उद्देश समाप्त ॥ २-५ ॥

તેમજ તેનું કારણ પણ બનતા નથી. “ઇતિ બ્રવીમિ” આ પદોની વ્યાખ્યા
 પહેલા આપવામાં આવેલ છે ॥ સૂ. ૧૧ ॥

આચારાંગસૂત્રના બીજા અધ્યયનનો
 પાંચમો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૨-૫.



॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठोद्देशः ॥

अभिहितः पञ्चमोद्देशः, साम्प्रतं षष्ठ आरम्भ्यते । इहानन्तरोद्देशके शरीरपरि-
रक्षणाय लोकनिश्रया विहरन्नासक्तिरहितोऽनगारो लोके ममत्वं न कुर्यादित्यर्थोऽ-
भिहितः, स एवात्र प्रतिपाद्यते—‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पूर्वोद्देशस्यान्तिमसूत्रे ‘ न ह्य एवं अणगारस्स जायइ ’ संयमिन एवं न कल्पते,
इति कथितम्, तस्यैव विशदीकरणायाह—‘ से तं ’ इत्यादि ।

मूलम्—से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाय तम्हा
पावकम्मं नेव कुज्जा न कारवेज्जा ॥ सू० १ ॥

छाया—स तत् सम्बुद्धयमान आदानीयं समुत्थाय तस्मात्पापकर्म नैव
कुर्यात् न कारयेत् ॥ सू० १ ॥

॥ आचाराङ्गसूत्रके दूसरे अध्ययनका छठा उद्देश ॥

द्वितीय अध्ययन का पंचम उद्देश संपूर्ण हुवा; अब यहां उसका
छठा उद्देश प्रारंभ किया जाता है। पंचम उद्देश में ‘ शरीर की रक्षा करने
के लिये आसक्तिरहित होकर लोक की निश्रा से संयममार्ग में विचरना
चाहिये, संयमी मुनि को लोक के साथ कभी भी ममत्व नहीं करना
चाहिये ’—यह बात कही गई है। इसी विषय की पुष्टि इस उद्देश में की
जायगी ‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पंचम उद्देश के “ न ह्य एवं अणगारस्स जायइ ” इस अन्तिम सूत्र
में “ संयमी को ऐसा नहीं कल्पता है ” जो यह कहा है उसी को विशद
करने के लिये कहते हैं—‘ से तं ’ इत्यादि ।

आचाराङ्गसूत्रના બીજા અધ્યયનનો છઠ્ઠો ઉદ્દેશ.

બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદ્દેશ સમાપ્ત થયો હવે છઠ્ઠા ઉદ્દેશનો આરંભ
થાય છે. પાંચમાં ઉદ્દેશમાં શરીરની રક્ષા કરવા માટે આસક્તિ રહિત બનીને
લોકની નિશ્રાથી સંયમીએ સંયમ માર્ગમાં વિચરવું જોઈએ. સંયમી મુનિએ
લોકોની સાથે કોઈ વખત પણ મમત્વ નહિ કરવું જોઈએ. આ વાત કહેવામાં
આવેલ છે. તે વિષયની પુષ્ટિ આ ઉદ્દેશમાં કરવામાં આવશે—‘ સેતં ’ ઇત્યાદિ.

પાંચમાં ઉદ્દેશમાં “ ન હ્ય એવં અણગારસ્સ જાયઈ ” આ અંતિમ સૂત્રમાં
“ સંયમીને એવું કલ્પતું નથી. એમ કહેલ છે તેનું વિશદ કરવાને માટે કહે
છે—‘ સેતં ’ ઇત્યાદિ

દ્યવ્યાપારાકરણપ્રતિજ્ઞાકારી તસ્માત્કારણાત્ પાપકર્મ=પાપજનકત્વાત્પાપરૂપમેવ કર્મ પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાષ્ટાદશપ્રકારકં નૈવ કુર્યાત્=ન કદાચિદપિ સમાચરેત્, ન કારયેત્ 'એવે-ત્યસ્ય નિશ્ચયાર્થકત્વાત્ કુર્વન્તં કારયન્તં વા નાનુમોદયેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રાણાતિપાતાદિષ્વેકં પાપકર્મ કુર્વન્નન્યસ્યાપિ કર્તા ભવતીતિ દર્શયતિ—'સિયા તત્થ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સિયા તત્થ એગયરં વિપ્પરામુસઙ્ગ છસુ અન્નયરંમિ કપ્પઙ્ગ, સુહટ્ઠી લાલપ્પમાણે સણ્ણ દુક્ખેણ મૂઢો વિપ્પરિયાસ-મુવેઙ્ગ, સણ્ણ વિપ્પમાણેણ પુઢો વયં પકુવ્વઙ્ગ, જંસિમે પાણા પવ્વહિયા, પઢિલેહાણ નો નિકરણાણ એસ પરિન્ના પવુચ્ચઙ્ગ, કમ્મોવસંતી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સ્યાત્તત્રૈકતરં વિપરામૃશતિ, ષટ્સ્વન્યતરસ્મિન્ કલ્પતે, સુખાર્થી લાલ-પ્યમાનઃ સ્વકેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યાસમુપૈતિ, સ્વકેન વિપ્રમાદેન પૃથગ્વ્રતં પ્રકુરુતે, યસ્મિન્નિમે પ્રાણાઃ પ્રવ્યથિતાઃ પ્રત્યુપેક્ષ્ય નો નિકરણાય, એષા પરિજ્ઞા પ્રોચ્યતે કર્મોપશાન્તિઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

કર ચુકા હૈ તવ વહ કૈસે પ્રાણાતિપાતાદિક અઠારહ પ્રકાર કે પાપ કર્મોં કો કર સકતા હૈ । જવ નહીં કર સકતા હૈ તવ વહ ઉન પાપકર્મોં કો કરને વાલોં કી તથા ઉન્હેં કરાને વાલોં કી અનુમોદના બી કૈસે કર સકતા હૈ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા । સૂત્ર મેં 'એવ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થ મેં પ્રયુક્ત હૈ, અતઃ યહ નિશ્ચિત્ત હૈ કિ અનગાર કમ્મી બી ન સ્વયં ૧૮ અઠારહ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં કો કરેગા, ન કરાવેગા ઓર ન ઉન કરને-કરાને વાલોં કી કમ્મી અનુમોદના હી કરેગા ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રતિજ્ઞા લીધેલ છે ત્યારે તે પછી પ્રાણાતિપાતાદિક અઠાર પ્રકારનાં પાપકર્મોં કેવી રીતે કરી શકે? જો નથી જ કરી શકે તો પછી તેવા પાપ કર્મોંના કરનારની તેને કરાવનારની અનુમોદના પણ કેવી રીતે કરી શકે? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. સૂત્રમાં એવ શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત છે, માટે જો નિશ્ચિત્ત છે કે અણુગાર કોઈ વખત પણ ૧૮ અઠાર પ્રકારના પાપસ્થાનોને કરે નહિ, કરાવે નહિ તેમજ તેઓની—કરનારાઓની અને, કરાવનારાઓની અનુમોદના પણ કરે નહિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—‘સ્યા—’ દિત્યાદિ । યઃ પુરુષઃ સ્યાત્=કદાચિત્ પ્રમાદવશેન તત્ર=પ્રાણાતિપાતાદિરૂપપાપકર્મસુ એકતરં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં વિપરામૃશતિ=સમારમ્ભતે, યથ્ પદ્મસુ મધ્યે અન્યતરસ્મિન્ પૃથિવીકાયાદિકે એકસ્મિન્નપિ સમારમ્ભતે સ પદ્મસુ જીવનિકાયેષુ કલ્પતે=સમારમ્ભતે, યથા કુલારાલાયા ઉદકેન પ્લાવને એકજીવનિકાયારમ્ભે પદ્મજીવનિકાયારમ્ભો ભવતિ તથૈવાત્રૈકજીવનિકાયવિરાધનાયાં પદ્મજીવનિકાયવિરાધનાજ્વશ્યમ્ભાત્રિની । ઉક્તચ્ચ—

“જત્ય જલં તત્ય વળં, જત્ય વળં તત્ય નિસ્સિઓ અગ્ની ।

અગ્ની વાસહગયા, તસા ય તન્નિસિયા ચેવ ” ॥૧॥

છાયા—યત્ર જલં તત્ર વળં યત્ર વળં તત્ર નિઃશ્રિતોઽગ્નિઃ ।

અગ્નિર્વાયુસહગતસ્ત્રસાશ્ચ તન્નિઃશ્રિતાશ્ચૈવ ॥ ઇતિ ।

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં મેં સે જો કિસી એક મી પાપસ્થાન કા કરનેવાલા હોતા હૈ વહ અન્ય પાપસ્થાનોં કા મી કરનેવાલા હૈ । ઇસી વિષય કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“સિયા તત્ય” ઇત્યાદિ ।

જો પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદ કે વશાવર્તી હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોં મેં સે કિસી એક પાપ કર્મ કો કરતા હૈ, છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના મેં સે કિસી એક કાયકે જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, વહ સમસ્ત પાપકર્મોં કા, એવં છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના કા કર્ત્તા માના જાતા હૈ । જૈસે કુંભકાર કી શાલા કો જલ સે સીંચને પર એક જીવનિકાય કે આરંભ હોને પર પદ્મજીવનિકાય કા આરંભ હોતા હૈ, ઊસી તરહ યહાં પર મી એક જીવનિકાય કી વિરાધના મેં પદ્મકાય કે જીવોં કી વિરાધના મી અવશ્ય હોતી હૈ । કહા મી હૈ—

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ અઢાર પ્રકારના પાપસ્થાનોમાંથી જે કોઈ એક પણ પાપસ્થાનના કરનાર હોય છે તે અન્ય પાપસ્થાનોના કરનાર હોય છે. આ વિષયને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—“સિયા તત્ય” ઇત્યાદિ.

જે પુરૂષ કદાચિત્ પ્રમાદને વશ બની પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોમાંથી કોઈ એક પાપકર્મને કરે છે. છકાય જીવોની વિરાધનામાંથી કોઈ એક કાયના જીવોની વિરાધના કરે છે, તેને સમસ્ત પાપકર્મોના અને છ કાય જીવોની વિરાધનાનો કર્તા માનવામાં આવે છે. જેવી રીતે કુંભારના ઘરને જલથી સીંચવાથી એક જીવ નિકાયનો આરંભ થવાથી પદ્મજીવનિકાયનો આરંભ થાય છે. તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ એક જીવ નિકાયની વિરાધનામાં પદ્મકાય જીવોની વિરાધના પણ અવશ્ય થાય છે. કહ્યું પણ છે—

एवं पद्मसु व्रतेष्वाद्यव्रतविराधनायां षण्णामपि व्रतानां विराधना भवति, तद्यथा—संयमी प्राणातिपाते प्रवृत्तिं कुर्वन् हिंसादिदोषं स्पृशति, तेन प्रतिज्ञाभङ्गजन्यो मृषावादः । उक्तञ्च—

“न करेमिति भणित्वा, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।
पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ।” इति ।

छाया—न करोमीति भणित्वा, तदेव निषेवते स तु ।

प्रत्यक्षમૃષાવાદી, માયાનિકૃતિપ્રસન્નશ્ચ ॥

कश्चिज्जीवं घ्नतो घातयतो वा स जीवो नैव स्वशरीरं तस्मै हननाय ना-
दात्, अतोऽदत्तादानमपि । सर्वं सावद्यं कर्मापरिग्राह्यं, तस्य ग्रहणात्परिग्रहोऽपि । यत्र

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ વણં તત્થ નિસ્સિઓ અગ્ગી ।

અગ્ગી વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસ્સિયા ચેવ ॥ ૧ ॥” इति ।

“जहां जल है वहां वनस्पति है, जहां वनस्पति है वहां उसके निश्चित
अग्नि होती है, जहाँ अग्नि होती है वहां वायुकाय है, जहां वायुकाय है
वहां त्रसकाय नियम से होते हैं ॥ १ ॥” इसी प्रकार छह ६ व्रतों में से
प्रथम व्रत की विराधना होने पर छही व्रतों की विराधना होती है । संयमी
जब प्राणातिपात में प्रवृत्ति करता है उस समय हिंसादिदोषजन्य पाप का
भागी होता हुआ प्रतिज्ञाभंगजन्य मृषावाद का भागी होता है । कहा भी है—

“न करेमिति भणित्वा, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

પચ્ચક્ખમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય ॥ ૧ ॥” इति ।

‘मैं हिंसादिक पापों को नहीं करूँगा’ इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने

“જત્થ જલં તત્થ વણં, જત્થ વણં તત્થ નિસ્સિઓ અગ્ગી ।

અગ્ગી વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસ્સિયા ચેવ ” ॥૧॥ इति ।

“જ્યાં જળ છે ત્યાં વનસ્પતિ છે. જ્યાં વનસ્પતિ છે ત્યાં તેને નિશ્ચિત
અગ્નિ હોય છે. જ્યાં અગ્નિ છે ત્યાં વાયુકાય છે, જ્યાં વાયુકાય છે ત્યાં ત્રસકાય
નિયમથી થાય છે ॥ ૧ ॥” આ પ્રકાર છ વ્રતોમાંથી પ્રથમ વ્રતની વિરાધના હોવાથી
છ વ્રતોની વિરાધના થાય છે. સંયમી જ્યારે પ્રાણાતિપાતમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે
વખતે હિંસાદિ દોષજન્ય પાપને ભાગી બનતો થકો પ્રતિજ્ઞાભંગજન્ય મૃષાવાદનો
ભાગી થાય છે કહ્યું પણ છે—

“ ન કરેમિત્તિ ભણિત્વા, તં ચેવ નિસેવણ પુણો સો ઉ ।

પચ્ચક્ખમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય ” ॥ ૧ ॥ इति ।

પરિગ્રહસ્ત્ર મૈથુનં રાત્રિભોજનં ચ જાયત એવ । તતથ પદ્મસ્વન્યતરસ્મિન્ પ્રવૃત્તો જનઃ સર્વેષ્વપિ પ્રવર્તત એવ । યદ્વા-એકતરમ્=એકમપિ પાપારમ્મં ય આચરતિ સ સર્વમપિ સમારમ્મં કરોત્યેવ, ઉન્માર્ગપ્રવૃત્તસ્ય તસ્યૈકકરણે સર્વત્ર પ્રવૃત્તિસદ્ભાવાત્ ।

વાલા સંયમી મુનિ યદિ ડસી પ્રત્યાખ્યાત વિપય મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તો હસ પ્રકાર કી ડસકી પ્રવૃત્તિ સે ઁક તો ડસકે ગ્રહીતવ્રત કા ભંગ હોતા હી હૈ, ઢસરા ડસકા મૃપાવાદ કા ઢોપ ભી લગતા હૈ; ક્યોંકિ ડસને અપની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરનેરૂપ મૃપાવાદ કા સેવન કિયા । જિસ જીવ કી હિંસા કરને મેં વહ પ્રવૃત્ત હો રહા હૈ ડસ જીવને ડસકે લિયે અપને ગરીર કો ઘાત કરને કે નિમિત્ત તો ઢિયા નહીં હૈ, અતઃ અદત્ત કા ગ્રહીતા હોને સે ડસકે લિયે અદત્તાદાન કા ઢોપ ભી લગતા હૈ । જિતને ભી સાવધકર્મ હૈં વે અપરિગ્રાહ્ય હૈં; ડન અપરિગ્રાહ્યોં કો ગ્રહણ કરનેવાલા હોને સે ડસે પરિગ્રહ કે ગ્રહણ કરને કા ઢોપ ભી લાગુ હોતા હૈ । જહાં પર પરિગ્રહ હૈ વહાં પર મૈથુન ઁવં રાત્રિભોજનજન્ય ઢોષ ભી લગતા હી હૈ । હસલિયે છહ ૬ વ્રતોં મેં સે અન્ય ઁક ભી વ્રત કી વિરાધના કરને વાલા મુનિ સમસ્ત વ્રતોં કી વિરાધના કરતા હૈ, યહ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ હો જાતી હૈ । હસી પ્રકાર છહ વ્રતોં મેં સે ઁક ભી વ્રત કા નિર્ઢોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા મુનિ અન્ય ઁર ભી વ્રતોં કા પાલક માના જાના હૈ ।

‘હુ હિસાદિક પાપોને કરીશ નહિ.’ આ પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવાવાળા સંયમી મુનિ કદાચ તે પ્રત્યાખ્યાત વિપયમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તો આ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી એક તો તેના લીધેલા વ્રતનો ભંગ થાય છે. ખીજું તેને મૃપાવાદનો ઢોપ પણ લાગે છે. કારણ કે તેણે પોતાની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરવારૂપ મૃપાવાદનું સેવન કર્યું. જે છવની હિંસા કરવામાં તે પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે, તે છવે તેના માટે પોતાનું શરીર ઘાત કરવાને નિમિત્તે તો આપેલ જ નથી માટે અદત્તનો પણ ગ્રહીતા હોવાથી તેને માટે અદત્તાદાનનો ઢોપ પણ લાગે છે. જેટલા પણ સાવધ કર્મ છે તે અપરિગ્રાહ્ય છે. તે અપરિગ્રાહ્યોના ગ્રહણ કરવાવાળા હોવાથી તેને પરિગ્રહને ગ્રહણ કરવાનો ઢોપ પણ લાગુ થાય છે. ત્યાં પરિગ્રહ છે ત્યાં મૈથુન અને રાત્રિ ભોજનજન્ય ઢોપ પણ લાગે જ છે માટે છ વ્રતોમાંથી અન્ય એક પણ વ્રતની વિરાધના કરવાવાળા મુનિ સમસ્ત વ્રતોની વિરાધના કરે છે. આ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ થઈ જાય છે. તે પ્રકારે છ વ્રતોમાંથી એક પણ વ્રતને નિર્ઢોષ રીતિથી પાલન કરવાવાળા મુનિ અન્ય ખીજા પણ વ્રતોના પાલક માનવામાં આવે છે

કિમર્થમયં પાપકર્મણિ પ્રવર્તતે ? इत्याह—‘सुखार्थी—’त्यादि । सुखार्थी=पौद्गलिक-सुखामिलाषी लालप्यमानः=अत्यर्थं मुहुर्मुहुर्वा लपतीति लालप्यमानः, सुखार्थमुन्मत्तवन्मोहवशेन यद्वा तद्वा मुहुर्मुहुर्वृण्वन्, नानाप्रकारान् धावनवल्गनादिकान् व्यापारान् विदधत्, सुखकारणानि च चेतसि चिन्तयन्, कृष्यादिव्यापारैः पृथिवी-कायमुपमर्दयन्, तत्सेचनाद्यर्थमप्कायं, पाकाद्यर्थं तैजसकायं, ग्रीष्मसन्तापोप-

અથવા-કિસી એક ભી પાપારમ્મ કા જો આચરણ કરતા હૈ વહ અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોં કા આચરણ કરનેવાલા હોતા હી હૈ; ક્યોંકિ જિસકી પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગ મેં ચાલૂ હૈ વહ યદિ એક ભી પાપારમ્મ કો કરતા હૈ તો ઉસ એક કે કરને મેં અન્ય સબ પાપારમ્મ કે કરને કા સદ્ભાવ આ હી જાતા હૈ ।

પાપકર્મ મેં પ્રવૃત્તિ હોને કા કારણ એક કેવલ ઉસકી પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરને કી અભિલાષા હી હૈ । અતઃ સુખાર્થી હોને કે કારણ સે હી ઇસકી પ્રવૃત્તિ પાપકાર્યોં મેં હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર ઉન્મત્ત પ્રાણી નશા કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા વારંવાર બોલતા હૈ ઔર વ્યર્થ મેં ઇધર-ઉધર દૌડતા ફિરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર યહ ભી મોહ કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા વારંવાર બોલતા હુઆ અનેક પ્રકાર કી યહાં સે વહાં દૌડ-ધૂપ કિયા કરતા હૈ, ‘મુझे इन कामों के करने से सुख प्राप्त होगा’ इस प्रकार की विचारधारा से प्रेरित होकर कृषि आदि અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોં કે ઉપમર્દન કરને વાલે વ્યાપારોં કો કરતા હૈ, ઉસકે સિંચન કે લિયે અપ્કાય જીવોં કી ચિરાધના કરતા હૈ, રસોઈ આદિ વનાને કે લિયે

અથવા—કોઈ એક પણ પાપારમ્મનો જે આચરણ કરે છે તે અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોનું આચરણ કરવાવાળા હોય જ છે. કારણ કે જેની પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગમાં લાગેલી છે તે કદાચ એક પણ પાપારમ્મ કરે તો તે એક કરવામાં અન્ય બધા પાપારમ્મ કરવાનો સદ્ભાવ આવી જ નાય છે.

પાપકર્મમાં પ્રવૃત્તિ હોવાનું કારણ એક કેવળ તેની પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા જ છે. અતઃ સુખાર્થી હોવાના કારણથી જ તેની પ્રવૃત્તિ પાપ કાર્યોમાં થાય છે જેવી રીતે ઉન્મત્ત પ્રાણી નશાના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલે છે અને વ્યર્થમાં અહીં તહીં દોડતા ફરે છે, તે પ્રકારે તે પણ મોહના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલતાં અનેક પ્રકારની ત્યાંથી અહીં અને અહીંથી ત્યાં દોડધામ કરતા રહે છે. ‘મને એ કામો કરવાથી સુખ પ્રાપ્ત થશે’ આવા પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરિત થઈને કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોનું ઉપમર્દન કરવાવાળા વ્યાપારોને કરે છે, તેના સિંચન માટે અપકાય

શાન્તયે વાયુકાયમ્, આહારાદ્યર્થે વનસ્પતિકાયં, કાષ્ઠાદિનિઃશ્રિતં ત્રસકાયં ચ વિરાધયન્ સ્વકેન સ્વકૃતકર્મજનિતેન પૂર્વભવે જ્ઞાનાવરણીયાદ્યઘ્નવિધકર્મરૂપં દુઃખ-
તલ્લીજં તથોક્તવાન્ યથાઽસ્મિન્ ભવે સ દુઃખતરુઃ પ્રરોહત્યેવ । તાદૃશેન દુઃખેન
શારીરિકમાનસિકેન મૂઢઃ=વ્યાકુલિતઃ પરમાર્થમજાનન્ હિતાહિતપ્રાપ્તિપરિહાર-
વિકલઃ વિપર્યાસમુપૈતિ પ્રાણિપીડનાદિકં સાવધવ્યાપારમાચરન્ મુક્તસ્ય વિપરીતં
દુઃખમેવ ફલં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-અલ્પમુખદં સાવધાનુષ્ઠાનમનુતિષ્ઠન્, મુક્તસ્થાનેઽનન્તકાલિકં શારીરિક-
માનસિકદુઃખમેવ પ્રાપ્નોતીતિ ભાવઃ । પુનરપ્યાઢ-‘સ્વકેને-’ત્યાદિ । સ્વકેન=
અથવા જેવી આદિની રક્ષા કરને કે લિયે અગ્નિ કા સહારા લેતા હૈ,
હસમેં અગ્નિકાગ્નિક એવં ઉસે પ્રજ્વલિત કરને કે લિયે વનસ્પતિકાય
તથા ઉસમેં રહે હુઃ ત્રસકાય જીવોં કી ખી વિરાધના કરતા હૈ, ગર્મીજન્ય
સંતાપ કે શમન કે લિયે વાયુકાય કે જીવોં કા ખી ઘાત કરતા હૈ । હસ
પ્રકાર યદ્ જીવ પટ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના કરતા હુઃ તજ્જન્ય પાપ-
કર્મોં કે ઉદય સે દુઃખિત વન હિતાહિત કે વિવેક સે વિકલ હોકર સદા
વિપર્યાસ-મિથ્યાત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જીવ પૂર્વભવ મેં જિસ પ્રકાર કે તીવ્ર,
મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોં સે જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કો
વાંધતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે ઉનકા ફલ ખી ઉસી ભવ મેં અથવા આગામી ભવ મેં
ભોગતા હૈ, યદ્ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ । દુઃખ ભોગના ખી ઇન્હીં કર્મોં કે ઉદયા-
ધીન હૈ । જિસ પ્રકાર વિના વીજ કે વૃક્ષ નહીં હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર વિના

હવોની વિરાધના કરે છે. રસોઢ આદિ ણનાવવા માટે અથવા ખેતી આદિની રક્ષા
કરવા માટે અગ્નિનો આશ્રય લે છે, તેમાં અગ્નિકાગ્નિક અને તેને પ્રજ્વલિત કરવા
માટે વનસ્પતિકાય તથા તેમાં રહેલા ત્રસકાય હવોની પણ વિરાધના કરે છે.
ગર્મીજન્ય સંતાપને શમાવવા માટે વાયુકાયના હવોનો પણ ઘાત કરે છે. આ
પ્રકાર આ હવ પટ્કાય હવોની વિરાધના કરતાં તજ્જન્ય પાપકર્મોના ઉદયથી
દુઃખિત બની હિતાહિતના વિવેકથી વિકલ બનીને તદા વિપર્યાસ-મિથ્યાત્વને પ્રાપ્ત
કરે છે. હવ પૂર્વભવમાં જેવા પ્રકારે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોથી જ્ઞાનાવર-
ણીયાદિ આઠ પ્રકારના કર્મોને બાંધે છે. તે પ્રકારે તેનું કૃણ પણ તે ભવમાં અથવા
આગામી ભવમાં ભોગવે છે. એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે. હુઃખ ભોગવવું પણ તેના કર્મોના
ઉદયાધીન છે. જે પ્રકારે બીજ વિના વૃક્ષ થતું નથી તે પ્રકારે અણુભ કર્મોદય વિના
દુઃખ પણ હવોને પ્રાપ્ત થતું નથી. પરભવના બાંધેલા કર્મ આગામી ભવમાં પણ

નિજાર્જિતેન વિપ્રમાદેન વિ=વિવિધેન પञ्चપ્રકારેણ પ્રમાદેન પૃથક્ જિનોક્તેષુ પદ્મસુ વ્રતેષુ છિન્નમિન્નરૂપેણ જિનશાસનોક્તવિપરીતં વા વ્રતં પ્રકુરુતે ।

इदमत्र तत्त्वम्-षट्सु व्रतेषु प्रथमस्याचरणे द्वितीयस्यानाचरणं, तृतीयस्य चाचरण-मित्येवं छिन्नमिन्नरूपेण व्रतकरणम् ।

અશુભ કર્મોદય કે દુઃખ મી જીવોં કો પ્રાપ્ત નહીં હોતા । પરભવ કે બાંધે હુણ કર્મ અગામી ભવ મેં મી ઉદય મેં આતે રહતે હૈં । હસીલિયે જીવ ઉન અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખોં સે હિતાહિત કે વિવેક સે રહિત હોકર વ્યથિત હોતા રહતા હૈ । કમી શારીરિક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ તો કમી માનસિક પીડા સે દુઃખી હોતા રહતા હૈ । વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ સે અજાન બનકર “સાવધ વ્યાપારોં કે આચરણ સે હી મૈં સુખી હોઁગા” હસ પ્રકાર કી અપની વિપરીત કલ્પના સે સુખ કે સ્થાન મેં દુઃખ કો હી પ્રાપ્ત કરતા રહતા હૈ । અથવા-સાવધ વ્યાપારોં કા કરના સદા સુખદાયી નહીં હોતા । અપની આવશ્યકતા કી પૂર્તિ હોને પર જીવોં કો ઉસકી પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પસુખ ભલે હી મિલ જાવે પરન્તુ વહ સદા સ્થાયી નહીં । જિસ સુખ કી આશા સે હન સાવધ વ્યાપારોં મેં જીવ પ્રવૃત્તિ કિયા કરતે હૈં ઉનસે તો ઉન્હેં ઉલ્ટે ઉસ સુખ કે સ્થાન મેં અનન્તકાલ તક ભોગને યોગ્ય શારીરિક ંવ માનસિક દુઃખ હી પ્રાપ્ત હોતે હૈં । ંસા સમજકર સંયમી કો કમી મી કિસી મી પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરના ંહિયે ।

ઉદયમાં આવે છે, માટે જીવ એ અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખથી હિતાહિતના વિવેકથી રહિત થઈને વ્યથિત થતા રહે છે. કોઈ વખત શારીરિક કષ્ટોનો અનુભવ કરે છે તો કોઈ વખત માનસિક પીડાથી દુઃખી થતા રહે છે. વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિથી અજાણ બનીને “સાવધ વ્યાપારોના આચરણથીજ હું સુખી થઈશ” એવા પ્રકારની પોતાની વિપરીત કલ્પનાથી સુખના સ્થાને દુઃખને જ પ્રાપ્ત કરે છે. અથવા—સાવધ વ્યાપારોનું કરવું સદા સુખદાયી થતું નથી. પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ થવાથી જીવોને તેની પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પ સુખ ભલે મળી જાય પરંતુ તે સદા સ્થાયી નહિ જે સુખની આશાથી આ સાવધ વ્યાપારોમાં જીવ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તેનાથી તો તેને ઉલ્ટા તે સુખના સ્થાનમાં અનન્ત કાળ સુધી ભોગવવા યોગ્ય શારીરિક અને માનસિક દુઃખ જ પ્રાપ્ત થાય છે. એવું સમજીને સંયમીએ કોઈ વખતે પણ કોઈ પણ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવી બેધએ નહિ.

इसी प्रकार जो अपने द्वारा उपार्जित मद्यादि पांच प्रकार के प्रमाद के वशवर्ती होकर जिनोक्त छह प्रकार के व्रतों का पालन छिन्न-भिन्नरूप से करते हैं, अथवा जिन भगवानने इन व्रतों के पालन करने की जो विधि बतलाई है उस विधि-विधान से विपरीत विधि-विधान को लेकर जो व्रतों का आराधन करते हैं, अथवा जिनशासनप्रतिपादित व्रतों से विपरीत व्रतों को जो पालते हैं, वे संसार में परिभ्रमण किया करते हैं। संयमी के लिये छह व्रतों का पालन आवश्यक बतलाया है, वह यदि पांच प्रकार के प्रमाद में पतित होकर अपनी इच्छानुसार प्रथम व्रत का आचरण करे और द्वितीय का आचरण न करे तथा तृतीय का आचरण करे अन्य का नहीं; तो इस प्रकार के व्रताराधन से उसके संसार के बंधन का अन्त नहीं आ सकता। अतः व्रतों के पालन करने की विधि जिस प्रकार शास्त्रों में वर्णित है उसी विधि से व्रतों की आराधना करनी चाहिये। जिन व्रतों का पालन संयमी के लिये बतलाया गया है उनके सिवाय यदि वह अन्य व्रतों की आराधना करता है तो इस प्रकार की उसकी स्वच्छंदवृत्ति उसके भव का अन्त करने वाली न होकर उल्टी उसके अनन्त संसार की बढ़ाने वाली ही होगी; क्यों कि इस प्रकार की निजमान्यता में वीतराग प्रभु की आज्ञा का भंग होता है। यह

આ પ્રકારે જે પોતાના દ્વારા ઉપાર્જિત મદ્યાદિ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદને વશ બનીને જીનોક્ત છ પ્રકારના વ્રતોના પાલનને છિન્નભિન્ન રૂપમાં કરી નાંખે છે. અથવા જિન ભગવાને આ વ્રતોના પાલન માટે જે વિધિ બતાવી છે તે વિધિ-વિધાનથી વિપરીત વિધિ-વિધાન લઈને જે વ્રતોનું આરાધન કરે છે, અથવા જિન-શાસન પ્રતિપાદિત વ્રતોથી વિપરીત વ્રતોને જે પાળે છે તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે સંયમી માટે છ વ્રતોનું પાલન આવશ્યક બતાવ્યું છે, તે કદાચ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદમાં પતિત થઈને પોતાની ઇચ્છાનુસાર પ્રથમ વ્રતનું આચરણ કરે અને બીજાનું આચરણ ન કરે, તથા ત્રીજાનું આચરણ કરે અન્યનું નહિ. તે આ પ્રકારના વ્રતારાધનથી તેના સંસારના બંધનનો અંત આવી શકતો નથી. માટે વ્રતોના પાલન કરવાની વિધિ જે પ્રકારે શાસ્ત્રોમાં વર્ણિત છે તેવી વિધિથી વ્રતોની આરાધના કરવી જોઈએ. જે વ્રતોનું પાલન સંયમી માટે બતાવ્યું છે તેના સિવાય કદાચ તે અન્ય વ્રતોની આરાધના કરે છે તો આવા પ્રકારની તેની સ્વચ્છંદવૃત્તિ તેના ભવનો અંત કરવાવાળી નથી બનતી. ઉલ્ટી તેને અનંત સંસાર વધારવા-વાળી થશે, કારણ કે આ પ્રકારની તેની માન્યતામાં વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાનો

યદ્વા-‘વયં’ ઇત્યસ્ય ‘વય-’ મિતિચ્છાયા, તત્ર વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ સંસારસ્તં પ્રકુરુતે-સંસારે પરિભ્રમતીત્યર્થઃ ।

અથવા ‘વયઃ’ ઇતિચ્છાયા, કારણસ્ય-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ કાર્યેણ-પ્રમાદેન સહાભેદાત્ સ્વકેન વિપ્રમાદેન=નિજાર્જિતેનાનેકવિધેન મઘાદિરૂપપ્રમાદજનકેન કર્મણા વયઃ=અવસ્થાવિશેષમેકેન્દ્રિયાદિકં, પચ્ચેન્દ્રિયેષુ કલલાર્બુદાદિરૂપં, દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદ્યાત્મકં ચ પ્રકુરુતે ।

ભંગ હી મહાન્ અનર્થ કા ઔર ભવ કી અનન્ત પરંપરા કા બઢાનેવાલા કારણ માના ગયા હૈ ।

અથવા-જો સંયમી પાંચ પ્રકાર કે પ્રમાદોં કા આસેવન કરતા હૈ વહ અપને સંસાર કો બઢાતા હૈ, યહ ભી “વયં પકુવ્વહ” હસ પદ સે પ્રકટ હોતા હૈ । “વયં” હસકી છાયા “વ્રતં” જબ હોતી હૈ તવ પૂર્વોક્ત-રૂપ સે ઉસકા અર્થ સંગત હોતા હૈ । પરન્તુ જબ “વયં” હસકા અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર કિયા જાવેગા તો ઉસકા અર્થ સંસાર હોગા; ક્યોંકિ પ્રાણી અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કે દ્વારા સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતે રહતે હૈં ।

અથવા-“વયં” કી છાયા “વયઃ” જબ હોગી તવ હસકા યહ ભી અર્થ હોગા કિ નિજાર્જિત મઘાદિકરૂપપ્રમાદજનક કર્મ સે એકેન્દ્રિયાદિકરૂપ અવસ્થાઈ, તથા પંચેન્દ્રિયોં મેં ગર્ભ કે અન્દર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા

ભંગ થાય છે તે ભંગ જ મહાન અનર્થનો, અને ભવની અનંત પરંપરાને વધારવાના કારણ રૂપ બને છે.

અથવા-જે સંયમી પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોનું આસેવન કરે છે તે પોતાના સંસારને વધારે છે તે પણ “વયં પકુવ્વહ” એ પદથી પ્રગટ થાય છે. “વયં” તેની છાયા “વ્રતં” જ્યારે હોય છે ત્યારે પૂર્વોક્ત રૂપથી તેનો અર્થ સંગત થાય છે. પરંતુ જ્યારે “વયં” તેનો અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ સંસાર થશે; કારણ કે પ્રાણી પોતાના ઉપાર્જિત કર્મો દ્વારા સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરતા રહે છે.

અથવા “વયં” ની છાયા “વયઃ” જ્યારે થશે ત્યારે તેનો એ પણ અર્થ થશે કે પોતાના ઉપાર્જિત મઘાદિકરૂપ પ્રમાદજનક કર્મથી જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક રૂપ અવસ્થાઓ, તથા પંચેન્દ્રિયોના ગર્ભની અંદર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા દારિ-

તત્ર જન્તવઃ ક્લિશ્યન્ત ઇત્યાહ-‘ યસ્મિ-’ ત્રિત્યાદિ । યસ્મિન્નિજાર્જિતપ્રમાદ-જન્યકટુકર્મકે, ભવોપગ્રાહિચતુર્ગતિકે સંસારેઽવસ્થાવિશેષે વા, ઇમે=પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટાઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પ્રવ્યથિતાઃ=વહુવિધવ્યસનસમ્પાતેન પીડિતા ભવન્તિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ-‘ પ્રત્યુપેક્ષ્યે ’-ત્યાદિ । તદેતત્સર્વં સ્વકૃતકર્મવિપાકેન વિવિધપ્રમાદેન વા પ્રાણિનાં પ્રવ્યથનં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=સમાલોચ્ય નિકરણાય-નિતરાં ક્રિયન્તે નાનાદુઃસ્વાવસ્થાવન્તો જન્તવો યેન તન્નિકરણં દુઃસ્વોત્પાદનં, યેન કર્મણા પ્રાણિનો દુઃસ્વનિવહ-મનુભવન્તિ તત્કર્મ નિકરણં, તસ્મૈ=તદર્થ-કર્મ ન કુર્યાત્, પ્રાણિપીડાજનકં કર્મ સર્વથા દારિદ્ર્ય ઓર દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં હોતી હૈં । પ્રમાદ કા કારણ કર્મ હૈં ઓર પ્રમાદ ઉસકા કાર્ય હૈં । ઇન દોનોં મેં અભેદ સંવંધ સે યહ અર્થ ઘટિત હો જાતા હૈં । અર્થાત્ જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ એવં દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં કર્મકૃત માની જાતી હૈં । પરન્તુ જો યહાં પર પ્રમાદકૃત ઉન્હેં ઘતલાયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ પ્રમાદ મેં ઉસકે કારણભૂત કર્મ કા અભેદ-સંવંધ માનકર હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈં । ઇસ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય ઇન અવસ્થાવિશેષોં મેં, અથવા ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં યે સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકાર કે કષ્ટોં કે પડેને સે રાતદિન પીડિત હોતે રહતે હૈં । ઇસલિયે જીવોં કી સ્વકૃત કર્મ કે વિપાક સે અથવા અનેક પ્રકાર કે પ્રમાદ સે દુઃખિત અવસ્થાઓં કા અચ્છી પ્રકાર વિચાર કર સંયમી મુનિ કો પ્રાણિપીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડ દેના ચાહિયે । અનેક પ્રકાર કી અવસ્થાઓં સે યુક્ત પ્રાણી જિસકે ઢારા કિયે જાતે હૈં, એસે દુઃસ્વોં કો ઉત્પાદન કરનેવાલે કાર્યોં સે જીવ સદા દુઃસ્વોં કી પરંપરા કા હી અનુભવ કરતે રહતે હૈં । એસે કાર્ય સંયમી મુનિ કો

દ્ર્ય અને દુર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઓ થાય છે પ્રમાદનું કારણ કર્મ છે અને પ્રમાદ તેનું કાર્ય છે આ બંનેમાં અલેદ સંબંધથી તેવો અર્થ ઘટિત થઈ જાય છે. અર્થાત્ જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ અવસ્થાઓ કર્મકૃત માનવામાં આવે છે, પરંતુ જે તેને આ જગ્યાએ પ્રમાદકૃત બતાવેલ છે તેનું કારણ પ્રમાદમાં તેના કારણભૂત કર્મનો અલેદ-સંબંધ માનીને જ પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય આ અવસ્થા-વિશેષોમાં અથવા ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં એ સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકારના કષ્ટો પડવાથી રાતદિન પીડિત થયા કરે છે. માટે જીવોના સ્વકૃત કર્મના વિપાકથી અથવા અનેક પ્રકારના પ્રમાદથી દુઃખિત અવસ્થાઓનો સારી રીતે વિચાર કરી સંયમી મુનિએ પ્રાણિ પીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડી દેવું જોઈએ. અનેક પ્રકારની દુઃખિત અવસ્થાઓથી

વર્જયેદિત્યર્થઃ । તતોઽપિ કિમિત્યાહ ‘એષે’-ત્યાદિ । એપા=પૂર્વોક્તા સર્વારંભ-
નિવૃત્તિરૂપા પરિજ્ઞા=તત્ત્વવિચારણા જ્ઞપ્રત્યાખ્યાનરૂપા પ્રોચ્યતે=પ્રકર્ષેણ ઉચ્યતે=
કથ્યતે મયા । સર્વારંભપરિત્યાગે કિમિત્યાહ-‘કર્મોપશાન્તિ-’રિતિ । કર્મોપશા-
ન્તિઃ=કર્મણામષ્ટવિધાનામુપશાન્તિઃ=ઉપશમઃ કર્મક્ષયો વા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સદા છોડ દેના चाहिये । इस प्रकार के कार्यों के परित्याग से आठ
कर्मों की उपशान्ति-उपशम अथवा उनका क्षय होता है । इस प्रकार
से यहां पर जो संयमी मुनि के लिये सर्वारंभनिवृत्तिरूप ज्ञपरिज्ञा और
प्रत्याख्यानपरिज्ञा कही गई है, उसका कारण यही है कि संयमी मुनि
अपनी प्रवृत्ति को प्रमाद से सदा सुरक्षित रखे । प्रमाद करने से नवीन
कर्मों का बन्ध और उससे फिर प्रमाद इस प्रकार की परस्पर में कार्य-
कारणभाव की परंपरा चलती है, जिससे संयमी अपने लक्ष्य की सिद्धि
से वंचित रहता है । अतः वह अपने लक्ष्य की सिद्धि करने के लिये
ग्रहण किये हुए संयममार्ग की ओर उत्तरोत्तर वृद्धि करता हुआ अग्र-
सर होता रहे । इसी विचारणा से सुधर्मास्वामी कहते हैं कि यह जो
सर्वारंभनिवृत्तिरूप परिज्ञा का कथन मैंने किया है उससे संयमी मुनि
अपने अष्टविध कर्मों का निराकरण कर अपने लक्ष्य की सिद्धि कर
लेता है ॥ सू० २ ॥

યુક્ત પ્રાણી જે દ્વારા કરવામાં આવે છે, એવા હુઃખોને ઉત્પન્ન કરનાર કાર્યોનું
નામ નિકરણુ છે. એવા કાર્યોથી જીવ સદા હુઃખોની પરંપરાનો જ અનુભવ કરે
છે. એવું કાર્ય સંયમી મુનિએ સદા છોડી દેવું જોઈએ. આવા પ્રકારના કાર્યના
પરિત્યાગથી આઠ કર્મોની ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા તેનો ક્ષય થાય છે. આ
પ્રકારે આ જગ્યાએ જે સંયમી મુનિ માટે સમારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞ-પરિજ્ઞા
અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા કહેલ છે તેનું કારણ એ છે કે સંયમી મુનિ પોતાની
પ્રવૃત્તિને પ્રમાદથી સદા સુરક્ષિત રાખે. પ્રમાદ કરવાથી નવીન કર્મોનો બંધ અને
તેનાથી પછી પ્રમાદ એ પ્રકારની પરસ્પરમાં કાર્યકારણ-ભાવની પરંપરા ચાલે છે.
જેનાથી સંયમી પોતાના લક્ષની સિદ્ધિથી વંચિત રહે છે. માટે તે પોતાના લક્ષની
સિદ્ધિ કરવા માટે ગ્રહણ કરેલા સંયમ-માર્ગની તરફ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરીને
અગ્રેસર થતા રહે, એવી વિચારણાથી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે આ જે સર્વારંભ-
નિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞાનું કથન મેં કર્યું છે તેનાથી સંયમી મુનિ પોતાના અષ્ટ-
વિધ કર્મોનું નિરાકરણ કરી પોતાના લક્ષની સિદ્ધિ કરી લે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

શારીરિક-માનસિક-દુઃખોત્પાદનકારણં મમત્વબુદ્ધિરેવ, તન્નિવૃત્ત્યા મુનિર્ભવ-
તીતિ દર્શયતિ-‘ જે મમાદ્યમદં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-જે મમાદ્યમદં જહાઈ, સે ચયઈ મમાદ્યં,

સે હુ દિદ્ધપહે મુળી, જસસ નત્થિ મમાદ્યં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા-યો મમાયિતમતિં જહાતિ સ ત્યજતિ મમાયિતમ્ । સ હુ દિદ્ધપથો મુનિ-
ર્યસ્ય નાસ્તિ મમાયિતમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા-‘ યો મમાયિતમતિ ’-મિત્યાદિ । યઃ પરિગ્રહજન્યકદુઃખિપાકજ્ઞો
‘ મમાયિતમતિં ’ મમેત્યેવંરૂપો મમાયિતઃ પરિગ્રહસ્તસ્ય મતિર્મમાયિતમતિસ્તાં મમા-
યિતમતિં જહાતિ=ત્યજતિ, સ એવ મમાયિતં દ્રવ્યતઃ પુત્રકલત્રહિરણ્યસુવર્ણૈશ્વર્યા-

શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં કી ઉત્પત્તિ કા કારણ એક મમત્વ-
બુદ્ધિ હી હૈ । ઉસકા જવતક પરિહાર નહીં ક્રિયા જાવેગા તવતક વાસ્ત-
વિક મુનિપના નહીં આસકતા હૈ । ઇસલિયે મુનિ હોને કે લિયે ઉસકી
નિવૃત્તિ હોના આવશ્યક હૈ । ઇસ વાત કો દિગ્વાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈ-‘ જે મમાદ્યમદં ’ ઇત્યાદિ ।

જો યહ સમજ્ઞતા હૈ કિ ‘ પરિગ્રહ કા સંગ્રહ મહાદુઃખદાયી હૈ, તથા
ઇસકા ફલ ભી કદુક હી હૈ ’ વહ કમી ભી પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન કરને મેં
નહીં ફસતા હૈ, તથા જો ઇસ વાત કો ભી ભલીભાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ
‘ પરિગ્રહ માત્ર હી દુઃખપ્રદ એવં પરિણામ મેં અનેક અનર્થોં કા મૂલ
હૈ ’ વહ તો ઉસ પરિગ્રહ કી અભિલાષા તક ભી નહીં કરતા હૈ,
ચાહે વહ દ્રવ્ય સે પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ઐશ્વર્યાદિરૂપ પરિગ્રહ હો,

શારીરિક અને માનસિક દુઃખોની ઉત્પત્તિનું કારણ એક મમત્વ-બુદ્ધિ જ
છે. તેનો ન્યાં સુધી પરિહાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાં સુધી વાસ્તવિક મુનિપણું
આવી શકતું નથી. માટે મુનિ હોવાથી તેની નિવૃત્તિ આવશ્યક છે. એ વાતને
દેખાડીને સૂત્રકાર કહે છે-‘ જે મમાદ્યમદં ઇત્યાદિ.

જે એમ સમજે છે કે ‘ પરિગ્રહનો સંગ્રહ મહા દુઃખદાયી છે, તથા તેનું
ફળ પણ કદુ જ છે ’ તે કોઈ વખત પણ પરિગ્રહનો ઉપાર્જન કરવામાં ફસતા
નથી, તથા જે આ વાતને ભલીભાંતિથી જાણે છે કે ‘ પરિગ્રહમાત્ર દુઃખપ્રદ અને
પરિણામમાં અનેક અનર્થોનું મૂળ છે ’. તે તો તે પરિગ્રહની અભિલાષા સુદ્ધાં
કરતા નથી, ભલે તે દ્રવ્યથી પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ઐશ્વર્યાદિરૂપ પરિગ્રહ

દિરૂપં ભાવતો મૂર્છારૂપમાત્મપરિણામં ત્યજતિ=પરિહરતિ-પરિગ્રહવુદ્ધિપરિત્યાગેન પરિગ્રહઃ સુત્યજો ભવતિ । યસ્ય=અનિર્દિષ્ટનામધેયસ્ય મમાયિતં નાસ્તિ સ હુ સ એવ 'દૃષ્ટપથઃ' દૃષ્ટો રત્નત્રયરૂપઃ પન્થાઃ=મોક્ષમાર્ગો યેન સ દૃષ્ટપથઃ પરિજ્ઞાતમોક્ષમાર્ગો મુનિઃ=અનગારો ભવતિ । મમાયિતમતિપરિત્યાગેનાવશ્યં મમાયિતઃ પરિત્યક્તો ભવતિ, તત્પરિત્યાગે ચ દ્રવ્યભાવરૂપો મમાયિતવ્યપદાર્થસાર્થો હિરણ્યાદિરૂપોઽપિ નિયતં પરિહતો ભવતિ । એવં પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યાં મૈથુનમતિપરિત્યાગેન મૈથુનં સુતરાં પરિત્યક્તં ભવતિ । इत्थं शेषत्रतेष्वपि योजनीयम् ।

ચાહે ભાવ સે મૂર્છારૂપ હો; इन दोनों प्रकार के परिग्रह का परित्याग करता है । जहां परिग्रहवुद्धि का परित्याग है वहां परिग्रह का परित्याग करना कोई कठिन कार्य नहीं है । यह तो अनायास ही हो जाता है । परिग्रह का अपनाना या बाह्यपदार्थों में परिग्रहरूपता लाना इच्छा के अधीन है । जब उस प्रकार की इच्छा ही नहीं है, तब बाह्यपदार्थों में परिग्रहता ही नहीं आसकती है । जिस व्यक्ति के पास इस प्रकार का परिग्रह नहीं है वही रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग का द्रष्टा मुनि कहा गया है ।

इसका सारांश यही है कि जिसने परिग्रह की बुद्धि का परित्याग कर दिया है उसके परिग्रह का त्याग अवश्य होता है । इसके परित्याग से द्रव्यभावरूप हिरण्यादि तथा मूर्च्छारूप परिग्रह नियम से दूर हो जाते हैं । यहां पर परिग्रहमति के त्याग से जो परिग्रह का त्याग करना बतलाया गया है वह पश्चानुपूर्वी को लेकर कहा गया है । इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि मैथुनमति के परित्याग से मैथुन का तथा चोरी

હોય, ભલે ભાવથી મૂર્છારૂપ હોય, આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરે છે. જ્યાં પરિગ્રહ-બુદ્ધિનો પરિત્યાગ છે, ત્યાં પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો કંઈ કઠિન કાર્ય નથી. એ તો અનાયાસ જળની શકે છે. પરિગ્રહને અપનાવવો અગર બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહરૂપતા લાવવી ઇચ્છાને આધીન છે. જ્યારે આવા પ્રકારની ઇચ્છા જ નથી ત્યારે બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહતા આવી શકતી નથી. જે વ્યક્તિની પાસે આવા પ્રકારનો પરિગ્રહ નથી તે જ રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગનો દ્રષ્ટા મુનિ કહેવાય છે.

તેનો સારાંશ એ છે કે જેણે પરિગ્રહની બુદ્ધિનો પરિત્યાગ કરેલ છે તેનાથી પરિગ્રહનો ત્યાગ અવશ્ય થાય છે. તેના પરિત્યાગથી દ્રવ્ય-ભાવરૂપ હિરણ્યાદિ તથા મૂર્છારૂપ પરિગ્રહ નિયમથી દૂર થઈ જાય છે આ કેટલાં પરિગ્રહમતિના ત્યાગથી જે પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો બતાવેલ છે તે પશ્ચાન્નુપૂર્વીને લઈને કહેલ છે. તેથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે મૈથુનમતિના પરિત્યાગથી મૈથુનનો, તથા ચોરી કરવાની

દણ્ડિશાક્યાદયઃ પરતૈર્થિકા યદ્યપિ કિંચિત્સચિત્તાદિપરિત્યાગિનોઽપિ સ્વ-
માનપૂજાદિમૂર્છાવત્ત્વાદયઃકર્મૌદેશિકાદિભોજિતાદ્રાગદ્વેપાનુગતત્વાચ્ચ સપરિગ્રહા
એવ દરીદ્રશ્યન્તે । સર્વથા પરિગ્રહપરિત્યાગી મુનિરેવ મોક્ષમાર્ગ સમારોહતિ નાન્ય
ઇતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પુનર્મુનિકર્તવ્યમાહ—‘ તં પરિન્નાય ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તં પરિન્નાય મેધાવી વિદિત્તા લોકં વંતા લોગસન્નં
સે મહિમં પરક્રમિજ્જા--તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—તં પરિજ્ઞાય મેધાવી વિદિત્વા લોકં વાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન
પરાક્રમેત । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટોકા—‘ ત ’—મિત્યાદિ । મેધાવી=વિદિતપરિગ્રહકટુવિપાકઃ તં મમાયિતં
પરિજ્ઞાય=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિહત્ય ચ લોકં ષડ્જીવનિ-
કરને કી મતિ કે ત્યાગ સે ચોરી કા તથા જૂઠ વોલને કી મતિ કા ત્યાગ
કરને સે જૂઠ આદિ કા ભી સહજ મેં ત્યાગ હો જાતા હૈ । હસ કથન સે
દણ્ડી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ યદ્યપિ કુછર સચિત્તાદિ પદાર્થો
કે પરિત્યાગી હોતે હૈ, પરન્તુ અપની માનપ્રતિષ્ઠા આદિ મેં મૂર્છા રખને
સે, આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહાર કે ભોગને સે ઔર રાગદ્વેષ-
સહિત હોને સે વે પરિગ્રહધારી હી હૈ । જો પરિગ્રહ કે સર્વથા પરિત્યાગી
હૈ વે હી મુનિ હૈ ઔર વે હી મોક્ષમાર્ગ પર ચલને વાલે હૈ, અન્ય નહીં;
એસા સમજના ચાહિયે । યહી હસ સૂત્ર કા ભાવાર્થ હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ફિર ભી મુનિ કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—‘ તં પરિન્નાય ’ ઇત્યાદિ ।

જિસને પરિગ્રહ કે કટુકવિપાક કો જાન લિયા હૈ એસા મેધાવી
મુનિ જ્ઞપરિજ્ઞા સે પરિગ્રહ કો જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ઉસકા

મતિના ત્યાગથી ચોરીનો તથા જુઠ બોલવાની મતિના ત્યાગથી જુઠ આદિનો
સહજમાં ત્યાગ થઈ શકે છે. આ કથનથી દંડી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ
બેકે કોઈ કોઈ સચિત્તાદિ પદાર્થોના પરિત્યાગી હોય છે પરંતુ પોતાની માન
પ્રતિષ્ઠા આદિમાં મૂર્છા રાખવાથી આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહારના ભોગવ-
વાથી અને રાગદ્વેષ-સહિત હોવાથી તે પરિગ્રહધારી જ છે, જે પરિગ્રહના સર્વથા
પરિત્યાગી છે તે જ મુનિ છે અને તે જ મોક્ષમાર્ગ પર ચાલવાવાળા છે, બીજા નહિ;
એવું સમજવું બેધ છે. એ જ આ સૂત્રનો ભાવાર્થ છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ફરી પણ મુનિનું કર્તવ્ય કહે છે—‘ તં પરિન્નાય ’ ઇત્યાદિ.

જેણે પરિગ્રહના કટુ વિપાકને બહુ લીધા છે એવા મેધાવી મુનિ જ્ઞપરિજ્ઞાથી
પરિગ્રહને બહુને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરી આપે છે. ‘ પરિ-

કાયરૂપં પરિગ્રહાગ્રહિણં=પરિગ્રહજનિતકટુવિપાકમનુભવન્તં, યદ્વા-લોકં કષાયલો-
કમધઃપતનશીલમ્ “અહો વયઙ્ કોહેણં, માણેણં અહમા ગઈં । માયા ગઈંપડિઘ્ઘાઓ,
લોહાઓ દુહ્ઘાઓ મયં ” ॥ (ઉત્તરા૦ અ૦ ૯ ગા. ૫૪) ઇતિવચનાત્ ।
અથવા-લોકમ્ આપાતસુખદં પરિણામકટુકં યથા—

“કિંપાકફલસમાના વિષયા હિ નિષેવ્યમાણરમણીયાઃ ।

પશ્ચાદ્ભવન્તિ કટુકાસ્ત્વપુષ્પિફલનિવન્ધનૈસ્તુલ્યાઃ ” ઇતિ ॥ ૧ ॥

સર્વથા પરિત્યાગ કર દેવે । ‘પરિગ્રહ મેં આસક્ત બના હુઆ યહ ષડ્જીવ-
નિકાયરૂપ લોક પરિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હુએ કટુક-વિપાક કા હી હમેશા
અનુભવ કરતા રહતા હૈ’ એસા સમઘ્ઘાકર લોકસંજ્ઞા-લોક કી આહારાદિક-
મૂર્છારૂપ સંજ્ઞા કા પરિત્યાગ કર હેયોપાદેયવિવેક સે યુક્ત અન્તઃ-
કરણ વાલા બન વહ મુનિ સંયમ કે અનુષ્ઠાન કરને મેં પુરુષાર્થ કરે ।

સૂત્ર મેં “લોગં” ઇસ પદ કા અર્થ એક તો ષડ્જીવનિકાયરૂપ
લોક હોતા હૈ, દૂસરા અર્થ-કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુન્દર-થોડે
સમય કે લિયે અચ્છા લગને વાલા પરન્તુ પરિણામ મેં દુઃસ્વપ્રદ વિષય-
ભોગાદિક મી હોતા હૈ । ક્રોધાદિકષાય જીવોં કો કમી મી કિસી મી
અવસ્થા મેં સુખદાયી નહીં હૈ । ઇન્કે સેવન સે જીવોં કા સદા અધઃપતન
હી હોતા હૈ । કહા મી હૈ—“અહો વયઙ્ કોહેણં, માણેણં અહમા ગઈં”
ઇત્યાદિ । અર્થાત્ ક્રોધ સે આત્મા કા અધઃપતન હોતા હૈ ઓર માન સે
અધમગતિ હોતી હૈ । માયા સે શુભગતિ કા પ્રતિઘાત હોતા હૈ ઓર લોભ

અહમાં આસક્ત બનીને તે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક પરિગ્રહથી ઉત્પન્ન થયેલ કટુક વિપા-
કનો જ હમેશાં અનુભવ કરતા રહે છે.’ એવું સમજીને લોકસંજ્ઞા-લોકની આહા-
રાદિક મૂર્છારૂપ સંજ્ઞાનો પરિત્યાગ કરીને હેયોપાદેયવિવેકથી યુક્ત અંતઃકરણવાળા
બની તે મુનિ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં પુરુષાર્થ કરે.

સૂત્રમાં “લોગં” આ પદનો અર્થ એક તો ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક
થાય છે, બીજો અર્થ કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુન્દર-થોડા વખત માટે સાઈ
લાગનાર પરંતુ પરિણામમાં દુઃખરૂપ વિષયભોગાદિક પણ થાય છે. ક્રોધાદિ કષાય
જીવોને કોઈ વખત પણ કોઈ પણ અવસ્થામાં સુખદાયી થતા નથી. તેના સેવનથી
જીવોનું સદા અધઃપતન જ થાય છે. કહ્યું છે “અહો વયઙ્ કોહેણં, માણેણં અહમા ગઈં”
ઇત્યાદિ. અર્થાત્ ક્રોધથી આત્માનું અધઃપતન થાય છે અને માનથી અધમગતિ
થાય છે. માયાથી શુભગતિનો પ્રતિઘાત થાય છે. અને લોભથી ધંહલોક અને

વિદિત્વા=જ્ઞાત્વા લોકસંજ્ઞાં લોકસ્ય=પ્રાણિગણસ્ય સંજ્ઞા=આહારાદિમૂર્છારૂપા,
તાં લોકસંજ્ઞાં વાન્ત્વા=ઉદ્દીર્ય પરિત્યજ્યેત્યર્થઃ, સ મતિમાન્ વિદિતહેયોપાદેયઃ
પરાક્રમેત=સંયમાનુષ્ઠાને પરાક્રમં કુર્યાત્ । ઇતિ-શબ્દોઽધિકારસમાપ્ત્યર્થકઃ । બ્રવી-
મીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમાચરણે પરાક્રમમાણઃ પરિહૃતમમાયિતોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—
' નારં સહૃ ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—નારં સહૃ વીરે, વીરે ન સહૃ રં ।

જમ્હા અવિમણે વીરે તમ્હા વીરે ન રજ્જઈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—નારતિં સહતે વીરો, વીરો ન સહતે રતિમ્ ।

યસ્માદવિમના વીરસ્તસ્માદ્વીરો ન રજ્યતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સે ઇહ લોક એવં પરલોક સમ્બન્ધી ભય રહતા હૈ । તથા વિષયભોગાદિક
भी किंपाकफल के समान ऊपर से ही मनोहर मालूम पड़ते हैं, परन्तु
परिणाम में जीवों के लिये नरक-निगोदादि गतियों के कारण बनते हैं ।
किंपाकफल का सेवन जिस प्रकार प्राणों का हरण करने वाला होता है
उसी प्रकार ये भी भवर में जीवों को अनन्त यातनाओं के देनेवाले होते
हैं । ऐसा समझकर उस कपायलोक का संयमी मुनि सदा त्याग कर देवे ।

यहां “इति” शब्द अधिकार की परिसमाप्ति का सूचक है
“ब्रवीमि” पद का अर्थ पहिले कहा जा चुका है । ॥ सू० ४ ॥

સંયમ કે પાલન કરને મેં પરાક્રમશાલી ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગી
અનગાર કેસા હોતા હૈ ? સો કહતે હૈ—‘ નારં સહૃ ’ ઇત્યાદિ ।

પરલોક સંબન્ધી ભય રહે છે તથા વિષય ભોગાદિક પણ કિંપાક ફળ સમાન
ઉપરથી જ મનોહર માલૂમ પડે છે પરંતુ પરિણામમાં જીવો માટે નરક નિગોદાદિ
ગતિઓનું કારણ બને છે. કિંપાક ફળનું સેવન જે પ્રકારે પ્રાણોનું હરણ કરે છે
તે પ્રકારે આ પણ ભવોભવમાં જીવોને અનંત યાતનાઓ દેનાર બને છે, એવું
સમજીને તે કપાયલોકનો તથા વિષયલોકનો સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કરે.

અહીં “ ઇતિ ” શબ્દ અધિકારની પરિસમાપ્તિનો સૂચક છે. “ બ્રવીમિ ”
પદનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમનું પાલન કરવામાં પરાક્રમશાલી અને પરિગ્રહના ત્યાગી અભુગાર
કેવા હોય છે તે કહે છે—“ નારં સહૃ ” ઇત્યાદિ.

ટીકા—‘નારતિ—’ મિત્યાદિ । વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ પરિહૃતપુત્રકલત્રાદિઃ સંયમી કદાચિન્મોહનીયોદયાત્સમુત્પન્નામ્, અરતિમ્=ચારિત્રવિપયામપ્રીતિં ન સહતે=ન ક્ષમતે, એવમેવ વીરઃ=પૂર્વોક્તઃ રતિં=વિપયાનુરાગં ચ ન સહતે=ન ક્ષમતે, ધર્મધ્યાનપરાયણો મુનિઃ સમુત્પન્નમાત્રામપિ રતિમરતિ ચ નિષ્કાસયતીત્યર્થઃ । વીરો=યસ્માત્કારણાત્ રત્યરતિપરિત્યાગાત્ અવિમનાઃ=તત્રાનાસક્તઃ, તસ્માત્ વીરઃ શબ્દાદિકામગુણેષુ ન રજ્યતિ=મૂર્છાં ન પ્રાપ્નોતિ । અત્ર વીર-શબ્દસ્ય પુનઃ પુનરુપાદાનં કર્મરિપુરવશ્યં વિજેતવ્યં ઇતિ ઘોતનાયેતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

“નારતિં સહતે વીરઃ” અર્થાત્ કર્મોં કે વિનાશ કરને મેં જો શક્તિસંપન્ન હૈ, એવં જિસને પુત્રકલત્રાદિ પરિગ્રહ કા સર્વથા પરિહાર કર દિયા હૈ એસા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ચારિત્ર મેં ઉત્પન્ન હુએ અરતિ-પરિણામ કો કમી ભી સહન નહીં કર સકતા હૈ, ઓર ન વિષયોં કી તરફ ઁચંને વાલી રતિ કો કમી હૃદય મેં સ્થાન દે સકતા હૈ; કારણ કિ યે દોનોં પ્રકાર કે પરિણામ સંયમ એવં ધર્મધ્યાન કે વિઘાતક હૈં । સંયમી કા અન્તઃકરણ સદા ધર્મધ્યાન મેં મગ્ન રહતા હૈ । કદાચિત્ કર્મ કી પ્રવલતા સે ઇસ તરહ કે પરિણામ ઉસકે ચિત્ત મેં આ ભી જાવેં તો વહ મુનિ એસે પરિણામોંકો અપને ધર્મધ્યાન કે પ્રભાવ સે શીઘ્રાતિશીઘ્ર દૂર કર દેતા હૈ । ઇન પરિણામોં કે પ્રતિ ઉસ સંયમી કી આસક્તિ નહીં હોતી । ઇસીલિયે ઇસ પ્રકાર કે રતિ-અરતિરૂપ પરિણામ, વિના કિસી રૂકાવટ કે ઉસકી આત્મા સે બહુત શીઘ્ર દૂર હો જાતે હૈં । જૈસે સૂચે ઘડે પર આઈ હુઈ વાલુ વિના કુછ કિયે ઉસ ઘડે

નારતિ સહતે વીર અર્થાત્ કર્મોના વિનાશ કરવામાં જે શક્તિસંપન્ન છે અને જેણે પુત્ર કલત્રાદિ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરેલ છે એવા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ચારિત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ અરતિ પરિણામને કોઈ વખત પણ સહન કરી શકતા નથી, અને વિષયોની તરફ જે ચવાવાળી રતિને પણ હૃદયમાં કોઈ વખત પણ સ્થાન ન આપે, એટલે આવી શકતા નથી. કારણ કે એ બન્ને પ્રકારના પરિણામ સંયમ અને ધર્મધ્યાનના વિઘાતક છે સંયમીનું અંતઃકરણ સદા ધર્મધ્યાનમાં જ મગ્ન રહે છે. કદાચ કર્મની પ્રવલતાથી આવા પ્રકારનું પરિણામ તેના હૃદયમાં આવી જાય તો તે મુનિ આવા પરિણામોને પોતાના ધર્મધ્યાનના પ્રભાવથી જલદી દૂર કરી નાંખે છે. આ પરિણામો તરફ તે સંયમીની આસક્તિ થતી નથી, માટે આ પ્રકારના રતિઅરતિરૂપ પરિણામ કોઈ જાતની રૂકાવટ વિના તેના આત્માથી જલદી દૂર થઈ જાય છે જેવી રીતે સુકા ઘડા ઉપર ઉડીને આવેલી ઘુડ કાંઈ પણ કર્યા વિના તે ઘડાથી દૂર થઈ જાય છે તે પ્રકારે

તતઃ કિમાયાતમિતિ દર્શયતિ-‘સદે’ ઇત્યાદિ,

મૂલમ્—સદે ય ફાસે અહિયાસમાણે, નિર્વિંદ નંદિંં ઇહ જીવિ-
યસ્સ । મુળી મોળં સમાયાય, ધુળે કમ્મસરીરંગં । પંતં લૂહં ચ
સેવંતિ, વીરા સંમત્તદંસિણો । एस ओहंतरे मुणी तिन्ने मुत्ते विरए
वियाहिए--त्तिबोमि ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—શબ્દાન્ ચ સ્પર્શાનધિસહમાનો, નિર્વિંદ નન્દિમિહ જીવિતસ્ય, મુનિમોંનં
સમાદાય ધુનીત કર્મશરીરકં, પ્રાન્તં રૂક્ષં ચ સેવન્તે વીરાઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ, एष
ओधन्तरो मुनिस्तीर्णो मुक्तो विरतो व्याख्यात इति ब्रवीति ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘શબ્દા’—નિત્યાદિ, શબ્દાન્ સ્પર્શશ્ચ—ઇષ્ટાનનિષ્ઠાંશ્ચ, આધન્તગ્રહણાદિ-
તરેપાં મધ્યવર્તિનાં રૂપાદીનામપિ ગ્રહણમ્ । અધિસહમાનઃ=સમ્યક્ સહમાનઃ રાગ-
સે દૂર હો જાતી હૈ, इसी प्रकार इन परिणामों की भी यही स्थिति होती
है । इसीलिये संयमी मुनि शब्दादिक कामगुणों में मूर्च्छाभाव को प्राप्त
नहीं होते हैं । सूत्र में सूत्रकार ने वार२ जो ‘वीर’ शब्द का प्रयोग किया
है, उससे यही ध्वनित होता है कि कर्मरूपी शत्रु ऐसे संयमीजनों के
द्वारा अवश्य जीतने के योग्य है ॥ सू० ५ ॥

इससे क्या सिद्ध होता है ?—इस बातको दिखलाते हैं—“सदे य
फासे” इत्यादि ।

સૂત્ર મેં અન્તકી કર્ણ-ઇન્દ્રિય કે વિષય શબ્દ કા ઓર આદિ કી
સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય કે વિષય સ્પર્શ કા નિર્દેશ કિયા હૈ । इससे मध्यवर्ती
इतर इन्द्रियों के विषय-रूपादिकों का भी ग्रहण हो जाता है । शिष्य को
संबोधन करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे मेधावी शिष्य ! इन्द्रियों
के इष्ट और अनिष्ट विषयों में तुम सर्वथा रागद्वेष मत करो । शास्त्र

આ પરિણામોની પણ તે સ્થિતિ છે. માટે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોમાં
મૂર્છાભાવને પ્રાપ્ત થતાં નથી. સૂત્રમાં સૂત્રકારે વારંવાર જે વીર શબ્દનો પ્રયોગ
કર્યો છે તેથી એ નક્કી થાય છે કે કર્મરૂપી શત્રુ એવા સંયમીજનોથી અવશ્ય
જીતવા યોગ્ય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

આથી શું સિદ્ધ થાય છે ? એ વાતને બતાવે છે—“સદે ય ફાસે” ઇત્યાદિ

સૂત્રમાં અન્તની કર્ણ ઇન્દ્રિયના વિષય-શબ્દનો અને આદિની સ્પર્શન
ઇન્દ્રિયના વિષય-સ્પર્શનો ગ્રહણ થયેલ છે, આથી મધ્યવર્તી બીજી ઇન્દ્રિયોનો
વિષય-રૂપાદિકોનો પણ ગ્રહણ થાય છે. શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે
છે કે હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોના ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ વિષયોમાં તમે સર્વથા રાગ

દ્વેષાવકુર્વાણઃ સન્, इह=તિર્યગ્લોકે જીવિતસ્ય=અસંયમજીવિતસ્ય નન્દિ=પ્રમોદં
'મમેદં ધનાદિ ભવતિ, ભવિષ્યતિ, અમૂચ્ચ' ઇત્યાદિવિકલ્પરૂપાં મનસ્તુષ્ઠિં નિર્વિન્દ=
અનાદ્રિયસ્વ=અપાકુર્વિત્યર્થઃ, ऐश्वर्यरूपवलादिषु सर्वत्र मनःसंकल्पविकल्पजालं मह-
दनर्थकरमिति तात्पर्यम् ।

કા યહ ઉપદેશ હૈ કિ “ સદેસુ ય મદ્યપાવણસુ સોયવિસયમુવગણસુ
તુટ્ટેણ વા રુટ્ટેણ વા સમણેણ સયા ન હોયન્વં ” શબ્દ કર્ણપ્રિય હોં યા કર્ણ-
કટુક હોં, इन्द्रियों के विषय चाहे मनोज्ञ हों, चाहे अमनोज्ञ हों,
સંયમી કો ડનમેં કમી મી ન તુટ્ટ હોના યાહિયે ઓર ન રુટ્ટ હી હોના
ચાહિયે । સંસાર મેં સમી પ્રકાર કી સામગ્રી હૈ । બુદ્ધિમાન્ સંયમી વહી હૈ
જો ઇનમેં સે કિસી મેં મી ન ફૈસે ઓર સવમેં સમતાભાવસંપન્ન વન
અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ મેં તત્પર રહે । અસંયમજીવન કી જો યહ
આત્મપરિણતિ હૈ કિ ‘ મેરે પાસ પહિલે ઇતના ધનાદિ થા, અવ ઇતના હૈ,
આગે ઓર હો જાવેગા, ’—ઇન સવ કા પરિત્યાગ કર દો । ઢાઈ દ્વીપ મેં
હી સંયમમાર્ગ કી આરાધના કરને કા સુવર્ણ અવસર હાથ આતા હૈ;
બાકી ઇસ તિર્યગ્લોક મેં ઇસ સંયમભાવ કી આરાધના હો હી નહીં સકતી ।
ઇસલિયે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક તુષ્ટિ કા પરિહાર કરો,
કારણ કિ ઇન ऐश्वर्य, रूप और बल आदि में किया गया मानसिक संकल्प-
विकल्प का जाल आत्मा के लिये महान् अनर्थकर होता है । ये पदार्थ हों

દ્વેષ ન કરે. शास्त्रनेो ये उपदेश छे के “ सदेसु य मद्यपावणसु सोयविसय-
मुवगणसु, तुट्टेण वा रुट्टेण व समणेण सया न होयन्वं ” इन्द्रियोने विषय लडे
મનોજ્ઞ હોય અગર અમનોજ્ઞ હોય, शब्द लडे कर्णुप्रिय हों, अगर कर्णुकटुक
હોય, संयमीये तेमां डेछ वणत पणु न आनंद मानवो लेछये डे न इष्ट
થવું લેછએ. संसारमां गंधी सामग्री छे बुद्धिमान् संयमी ते न छे ने आभांथी
કેછમાં પણુ ન ફૈસે અને બધામાં સમતાભાવસંપન્ન બની યોતાના લક્ષ્યની
સિદ્ધિમાં તત્પર રહે. असंयम ज्वननी ने आ आत्मपरिणति छे के ‘ भारी
પાસે પહેલાં આટલું ધન હતું, હવે આટલું છે, આગળ વળી વધારે થઈ જશે’
આ સધણાને પરિત્યાગ કરી આપો. अढीद्वीपमां न संयममार्गनी आराधना
કરવાને સુઅવસર હાથ આવે છે બાકી આ તિર્યગ્લોકમાં આ સંયમભાવની
આરાધના બની ન શકતી નથી, માટે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક
તુષ્ટિને પરિહાર કરો, कारण डे ये ऐश्वर्य, रूप અને બલ આદિમાં કરેલા માન-
સિક સંકલ્પ વિકલ્પની બલ આત્મા માટે મહાન અનર્થકારી છે. ये पदार्थों

તતઃ કિમાયાતમિતિ દર્શયતિ—‘સદે’ ઇત્યાદિ,

મૂલમ્—સદે ય ફાસે અહિયાસમાણે, નિર્વિંદ નંદિંં ઇહ જીવિ-
યસ્સ । મુળી મોળં સમાયાય, ધુળે કમ્મસરીરંગં । પંતં લૂહં ચ
સેવંતિ, વીરા સંમત્તદંસિણો । एस ओहंतरे मुणी तिन्ने मुत्ते विरए
वियाहिए--त्तिबोमि ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—શબ્દાન્ ચ સ્પર્શાનધિસહમાનો, નિર્વિંદ નન્દિમિહ જીવિતસ્ય, મુનિમૌનં
સમાદાય ધુનીત કર્મશરીરકં, પ્રાન્તં રૂક્ષં ચ સેવન્તે વીરાઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ, एष
ओघन्तरो मुनिस्तीर्णो मुक्तो विरतो व्याख्यात इति ब्रवीति ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘શબ્દા’—નિત્યાદિ, શબ્દાન્ સ્પર્શાંશ્ચ—ઇષ્ટાનનિષ્ઠાંશ્ચ, આઘન્તગ્રહણાદિ-
તરેપાં મધ્યવર્તિનાં રૂપાદીનામપિ ગ્રહણમ્ । અધિસહમાનઃ=સમ્યક્ સહમાનઃ રાગ-
સે દૂર હો જાતી હૈ, इसी प्रकार इन परिणामों की भी यही स्थिति होती
है । इसीलिये संयमी मुनि शब्दादिक कामगुणों में मूच्छाभाव को प्राप्त
नहीं होते हैं । सूत्र में सूत्रकार ने वारं वार जो ‘वीर’ शब्द का प्रयोग किया
है, उससे यही ध्वनित होता है कि कर्मरूपी शत्रु ऐसे संयमीजनों के
द्वारा अवश्य जीतने के योग्य है ॥ સૂ૦ ૬ ॥

इससे क्या सिद्ध होता है ?—इस बातको दिखलाते हैं—“सदे य
फासे” इत्यादि ।

સૂત્ર મેં અન્તકી કર્ણ-ઇન્દ્રિય કે વિષય શબ્દ કા ઔર આદિ કી
સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય કે વિષય સ્પર્શ કા નિર્દેશ કિયા હૈ । હસસે મધ્યવર્તી
ઇતર ઇન્દ્રિયોં કે વિષય-રૂપાદિકોં કા બી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । શિષ્ય કો
સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોં
કે ઇષ્ટ ઔર અનિષ્ટ વિષયોં મેં તુમ સર્વથા રાગદ્વેષ મત કરો । શાસ્ત્ર

આ પરિણામોની પણ તે સ્થિતિ છે. માટે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોમા
મૂર્છાભાવને પ્રાપ્ત થતાં નથી સૂત્રમાં સૂત્રકારે વારંવાર જે વીર શબ્દનો પ્રયોગ
કર્યો છે તેથી એ નક્કી થાય છે કે કર્મરૂપી શત્રુ એવા સંયમીજનોથી અવશ્ય
જીતવા યોગ્ય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

આથી શું સિદ્ધ થાય છે ? એ વાતને બતાવે છે —“સદેય ફાસે” ઇત્યાદિ

સૂત્રમાં અન્તની કર્ણ ઇન્દ્રિયના વિષય-શબ્દનો અને આદિની સ્પર્શન
ઇન્દ્રિયના વિષય-સ્પર્શનો ગ્રહણ થયેલ છે, આથી મધ્યવર્તી બીજી ઇન્દ્રિયોના
વિષય-રૂપાદિકોના પણ ગ્રહણ થાય છે. શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે
છે કે હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોના ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ વિષયોમાં તમે સર્વથા રાગ

દ્વેષાવકુર્વાણઃ સન્, इह=તિર્યગ્લોકે જીવિતસ્ય=અસંયમજીવિતસ્ય નન્દિ=પ્રમોદં
'મમેદં ધનાદિ ભવતિ, મવિષ્યતિ, અમૂચ્ચ' ઇત્યાદિવિકલ્પરૂપાં મનસ્તુષ્ઠિં નિર્વિન્દ=
અનાદ્રિયસ્વ=અપાકુર્વિત્યર્થઃ, ऐश्वर्यरूपवलादिषु सर्वत्र मनःसंकल्पविकल्पजालं मह-
दनर्थकरमिति तात्पर्यम् ।

કા યહ ઉપદેશ હૈ કિ “ સદેસુ ય મહ્યપાવણસુ સોયવિસયમુવગણસુ
તુદ્દેણ વા રુદ્દેણ વા સમણેણ સયા ન હોયન્વં ” શબ્દ કર્ણપ્રિય હોં યા કર્ણ-
કટુક હોં, ઇન્દ્રિયોં કે વિષય યાહે મનોજ્ઞ હોં, યાહે અમનોજ્ઞ હોં,
સંયમી કો ડનમેં કમીં મી ન તુષ્ટ હોના યાહિયે ઓર નરુષ્ટ હી હોના
યાહિયે । સંસાર મેં સમી પ્રકાર કી સામગ્રી હૈ । બુદ્ધિમાન્ સંયમી વહી હૈ
જો ઇનમેં સે કિસી મેં ખી ન ઈસે ઓર સવમેં સમતાભાવસંપન્ન બન
અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ મેં તત્પર રહે । અસંયમજીવન કી જો યહ
આત્મપરિણતિ હૈ કિ ‘મેરે પાસ પહિલે ઇતના ધનાદિ થા, અબ ઇતના હૈ,
આગે ઓર હો જાવેગા,’-ઇન સવ કા પરિત્યાગ કર દો । ઢાઈ દીપ મેં
હી સંયમમાર્ગ કી આરાધના કરને કા સુવર્ણ અવસર હાથ આતા હૈ;
બાકી ઇસ તિર્યગ્લોક મેં ઇસ સંયમભાવ કી આરાધના હો હી નહીં સકતી ।
ઇસલિયે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક તુષ્ટિ કા પરિહાર કરો,
કારણ કિ ઇન ऐश्वर्य, रूप और बल आदि में किया गया मानसिक संकल्प-
विकल्प का जाल आत्मा के लिये महान् अनर्थकर होता है । ये पदार्थ हों

દેષ ન કરો શાસ્ત્રનો એ ઉપદેશ છે કે “ સદેસુ ય મહ્યપાવણસુ સોયવિસય-
મુવગણસુ, તુદ્દેણ વા રુદ્દેણ વા સમણેણ સયા ન હોયન્વં ” ઇન્દ્રિયોનો વિષય ભલે
મનોજ્ઞ હોય અગર અમનોજ્ઞ હોય, શબ્દ ભલે કર્ણપ્રિય હોય, અગર કર્ણકટુક
હોય, સંયમીએ તેમાં કોઈ વખત પણ ન આનંદ માનવો જોઈએ કે ન રૂષ્ટ
થવું જોઈએ. સંસારમાં બધી સામગ્રી છે બુદ્ધિમાન્ સંયમી તે જ છે જે આમાંથી
કોઈમાં પણ ન ફેરે અને બધામાં સમતાભાવસંપન્ન બની પોતાના લક્ષ્યની
સિદ્ધિમાં તત્પર રહે. અસંયમ જીવનની જે આ આત્મપરિણતિ છે કે ‘મારી
પાસે પહેલાં આટલું ધન હતું, હવે આટલું છે, આગળ વળી વધારે થઈ જશે’
આ સંધાનાને પરિત્યાગ કરી આપો. અઢીદીપમાં જ સંયમમાર્ગની આરાધના
કરવાનો સુઅવસર હાથ આવે છે. બાકી આ તિર્યગ્લોકમાં આ સંયમભાવની
આરાધના બની જ શકતી નથી, માટે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક
તુષ્ટિનો પરિહાર કરો, કારણ કે એ ऐश्वर्य, रूप અને બલ આદિમાં કરેલા માન-
સિક સંકલ્પ વિકલ્પની બાલ આત્મા માટે મહાન અનર્થકારી છે. એ પદાર્થો

યદ્વા-ઇહ=મનુષ્યજીવિતે વા પશ્ચવિધવ્રતાતીચારાણાં મધ્યે વ્યતીતં નિન્દ, સંજાયમાન સંઘ્રણ, મવિષ્યન્તં ચાતીચારં પ્રત્યાખ્યાહીત્યાશયઃ । કિમાશ્રિત્ય નન્દિ નિર્વિન્દેદિત્યાહ-‘મુનિ-’રિત્યાદિ । મુનિઃ=કર્મવિપાકજ્ઞો યતિઃ, ‘મૌનં’ મુનેરયં મૌનઃ સંયમો વાક્સંયમો વા ઉપલક્ષણતયા કાય-મનસોરપિ સંયમસ્તં તો આત્મા કો ફનસે કોઈ લાભ નહીં, નહીં હોં તો ફનકે અભાવ મેં આત્મા કો કોઈ હાનિ નહીં । આત્મા કી જો નિજ ચીજ હૈ વહ ફનકે સંયોગ ઔર વિયોગ મેં ન અચ્છી હોતી હૈ ઔર ન વિગડતી હી હૈ । ઁસા ળ્યાલકર વાહ્ય વસ્તુ મેં સંયમી કો અપના અન્તઃકરણ આસક્તિયુક્ત નહીં કરના ચાહિયે ।

અથવા—શિષ્ય કો સમજાતે હુઁ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી ! અપને મનુષ્ય જીવન કો સફલિત કરને કે લિયે જો સંયમજીવન તુમને અંગીકાર કિયા હૈ, ઉસમેં જો યે પાંચ મહાવ્રતોં કી તુમ આરાધના કર રહે હો સો યહ સદા ધ્યાન રલ્લો કિ ફનમેં જો પહિલે અતીચાર લગ ચુકે હૈં ઉનકી નિંદા કરો, વર્તમાન મેં અતીચાર ન લગને પાવેં ફસકી સંભાલ રલ્લો, તથા આગામીકાલ મેં લગને વાલે અતીચારોં કા પ્રત્યાખ્યાન કરો । કર્મ કે વિપાક કા જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમ કો, ઉપલક્ષણ સે કાયિક ઔર માનસિક સંયમ કો મલીપ્રકાર ગ્રહણ કર કાર્મણ-શરીર સે અથવા કર્મજન્ય ફસ ઔદારિક શરીર સે રહિત હો જાતા હૈ અર્થાત્ મોક્ષ કા મોક્તા બન જાતા હૈ ।

હોય તો આત્માને એનાથી કોઈ લાભ નહિ. ન હોય તો તેના અભાવમાં આત્માને કોઈ હાનિ નહી. આત્માની જે નિજ ચીજ છે તે તેના સંયોગ અને વિયોગમાં નથી સારી બનતી અને બગડતી પણ નથી એવો ખ્યાલ કરી બાહ્ય વસ્તુમાં સંયમીએ પોતાનું અત કરણ આસક્તિયુક્ત નહિ કરવું બેધએ.

અથવા શિષ્યને સમજાવતા સૂત્રકાર કહે છે કે હે મેધાવી ! પોતાના મનુષ્ય જીવનને સફળ બનાવવા માટે જે સંયમ જીવન તમે અંગીકાર કર્યું છે, તેનાં જે આ પાંચ મહાવ્રતોની તમે આરાધના કરી રહ્યા છે તો એ સદા ધ્યાનમાં રાખો કે તેમાં જે પહેલા અતિચાર લાગી ચુકેલ છે તેની નિંદા કરો. વર્તમાનમાં અતિચાર ન લાગી બન્ય તેની સંભાળ રાખો અને આવતા કાળમાં લાગવાવાળા અતિચારોનું પ્રત્યાખ્યાન કરો. કર્મના વિપાકના જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમને ઉપલક્ષણથી કાયિક અને માનસિક સંયમને ભટ્ટી પ્રકારે ગ્રહણ કરી કાર્મણશરીરથી અથવા કર્મજન્ય આ ઔદારિક શરીરથી રહિત થઈ બન્ય છે, અર્થાત્ મોક્ષનો ભાગી બની બન્ય છે.

‘સમાદાય’ સમ્=સમ્યક્ આદાય=ગૃહીત્વા કર્મશરીરકં કર્મણશરીરમૌદારિકં વા ધુનીત=પરિશતયેદપનયેદિત્યર્થઃ, અથવા-‘મુણી’ इत्यस्य ‘हे मुने !’ इतिच्छाया, हे सम्यक्त्वदर्शिन ! मौनं=संयमं समादाय=सम्यग् गृहीत्वा કર્મશરીરકં ધુનીતિ પૃથક્કુરુ, તત્ર મમત્વં ન કુષ્વેત્યર્થઃ । યતઃ કર્મશરીરે મુનેર્મમત્વં ન ભવતિ તસ્માદેવાહ-‘પ્રાન્ત-’મિત્યાદિ । સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ=વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનકુશલાઃ, યદ્વા ‘સંમત્તદંસિણો’ इत्यस्य ‘समत्वदर्शिनः’ इतिच्छाया, समत्वदर्शिनः=रागद्वेषवर्जिताः,

અથવા—“મુણી” इस शब्द की छाया ‘मुने !’ यह भी होती है । जिसका भाव यह है कि हे सम्यक्त्वदर्शी ! तुम संयम को अच्छी तरह ग्रहण कर कर्मशरीर को अपने से पृथक् करो, अर्थात् यह समझो कि यह कर्मशरीर पुद्गल, जड़, मूर्तिक है और मैं ज्ञाता द्रष्टा शुद्ध ज्ञानादिमय हूं । इस शरीर के बिगड़ने में मेरा कुछ नहीं बिगड़ता है, मैं इससे भिन्न हूं । इसलिये इसमें समत्वबुद्धि करना ही व्यर्थ है । इसके पोषण के लिये जो वस्तुतत्त्वके परिज्ञान में कुशलमति हैं वे अन्त, प्रान्त, एवं ठंडा और रुक्ष आहार से इस कर्मशरीर की उचित संभाल करते हुए अपने संयमभाव की वृद्धि करने में सावधान रहते हैं, ऐसे मुनि ही वीर कहलाते हैं । परीषद् और उपसर्ग आने पर भी वे अपने पथ संयममार्ग में रंचमात्र भी विचलित नहीं होते हैं । जहां पर समताभाव का स्रोत बहता है वहां पर आत्मा अत्यन्त बलिष्ठ होती है । इसी बातका ख्यालकर टीकाकारने “सम्मत्तदंसिणो” की दूसरी छाया “समत्व-

અથવા “મુણી” આ શબ્દની છાયા “મુને” એ પણ થાય છે, જેનો ભાવ એ છે કે હે સમ્યક્ત્વદર્શિ ! તમે સંયમને સારી રીતે ગ્રહણ કરી કર્મ શરીરને પોતાથી પૃથક્ કરો, અર્થાત્ એમ સમજો કે આ કર્મશરીર પુદ્ગલ, જડ મુર્તિક છે, અને હું જ્ઞાતા, દ્રષ્ટા, શુદ્ધ જ્ઞાનાદિમય છું. આ શરીરના બગડવામાં માફકાંઈ પણ બગડતું નથી હું તેનાથી ભિન્ન છું તેથી તેમાં મમત્વબુદ્ધિ કરવી વ્યર્થ છે. તેના પોષણ માટે જે વસ્તુતત્ત્વના પરિજ્ઞાનમાં કુશળમતિ છે, તે અન્ત પ્રાન્ત, ઠંડા અને રૂક્ષ આહારથી આ કર્મશરીરની ઉચિત સંભાળ કરતાં કરતાં પોતાના સંયમભાવની વૃદ્ધિ કરવામાં સાવધાન રહે છે. એવા મુનિ જ વીર કહેવાય છે. પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ પોતા સંયમમાર્ગમાં રજમાત્ર પણ વિચલીત થતા નથી. જે ઠેકાણે સમતાભાવનો પ્રવાહ જ વહે છે ત્યાં આત્મા અત્યંત બલિષ્ઠ બને છે. આ વાતનો ખ્યાલ કરીને ટીકાકારે “સમત્તદંસિણો ની ખીલ છાયા “સમત્વદર્શિનઃ” લખી છે પ્રાંત અને રૂક્ષ, દ્રવ્ય તથા

વીરાઃ પરીપહોપસર્ગસહનસમર્થા મુનયઃ, પ્રાન્તં=દ્રવ્યતઃ સ્વાભાવિકરસરહિતં શીતલ-પુરાણકુલત્થાદિકં સ્તોકં વા, રુક્ષં=દ્રવ્યત આગન્તુકઘૃતાદિરસવર્જિતં, ભાવતઃ પ્રાન્તં દ્વેષવિકલં ધૂમદોષવર્જિતમ્, ભાવતો રુક્ષમ્=રાગરહિતમદ્વારદોષવર્જિતમાહારં ચ સેવન્તે=અન્નન્તિ । યથ પ્રાન્તરુક્ષભોજી સ કિમાપ્નોતીત્યાહ-‘ એપ ’ ઇતિ, એપઃ= પરિશુદ્ધપ્રાન્તરુક્ષાહારસેવનેન કર્મશરીરં ધુન્વાનો મુનિઃ=અનગારઃ, ‘ ઓઘન્તરઃ ’

દર્શિનઃ ” લિખી છે । પ્રાન્ત ઓર રુક્ષ, દ્રવ્ય તથા ભાવ કે ભેદ સે દો-દો પ્રકાર કે હૈં, ઉનમેં દ્રવ્યપ્રાન્ત સ્વાભાવિકરસવર્જિત ઠંઢા પુરાના કુલત્થ આદિ, તથા પ્રમાણ મેં થોડા । ભાવપ્રાન્ત દ્વેષરહિત ધૂમદોષવર્જિત । દ્રવ્ય-રુક્ષ-ઘૃત આદિ રસવર્જિત, ઓર ભાવરુક્ષ-રાગરહિત અદ્વારદોષવર્જિત આહાર । મુનિ ઇસ પ્રકાર કા આહાર કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અપને ઉપયોગ મેં લેનેવાલા અનગાર કર્મશરીર ક્ષીણ કરતા હુવા ‘ ઓઘન્તરઃ ’ સંસારરૂપી ભાવ ઓઘકો “ કહેમાણે કહે ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર પાર કરને વાલા હો જાતા હૈ । યદ્યપિ સંસારરૂપી સમુદ્ર કો અમી ઉસને પાર નહીં કિયા હૈ પરન્તુ પાર કરનેરૂપ ક્રિયા અમી ઉસકી ચાલૂ હૈ-પાર કરને કે સન્મુખ હો રહા હૈ, ભવિષ્ય મેં ઉસે પાર કરેગા ફિર મી સૂત્ર મેં “ તિળ્ણે-તીર્ણઃ ” જો ઇસ ભૂતકૃદન્ત કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ વહ “ ક્રિયમાણં કૃતં ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર કિયા હુઆ સમજના ચાહિયે । જૈસે કિસી કાર્ય કી સમાપ્તિ અમી હુઈ નહીં હૈ, સમાપ્તિ કી ઓર વહ અગ્રસર હો રહા હૈ ઓર ભવિષ્ય મેં પાર હોગા; પરન્તુ વ્યવહાર મેં

લાવ લેહથી જે પ્રકારે છે. તેમાં દ્રવ્યપ્રાન્ત-સ્વભાવિક રસવર્જિત ઠંઠા પુરાણ કુલત્થ આદિ, તથા પ્રમાણમાં થોડું. લાવપ્રાન્ત-દ્વેષરહિત-દોષરહિત, દ્રવ્યરુક્ષ-ધી આદિ રસ વર્જિત, અને લાવરુક્ષ-રાગરહિત અંગારદોષવર્જિત આહાર, મુની આવા પ્રકારનો આહાર કરે છે. આવા પ્રકારના આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લાવવાવાળા આણુગાર કર્મ-શરીરને ક્ષીણ કરીને “ ઓઘન્તર ” સંસારરૂપી લાવ ઓઘને “ કહેમાણે કહે ” આ વાક્ય અનુસાર પાર કરવાવાળા થઈ જાય છે, જે કે સંસારરૂપી સમુદ્રને હળુ તેમણે ઓળંગેલ નથી પરંતુ ઓળંગવારૂપ ક્રિયા હળુ તેમની ચાલુ છે. ઓળંગવા માટે સન્મુખ થતાં જાય છે. ભવિષ્યમાં તેનો પાર કરશે તો પણ સૂત્રમાં “ તિળ્ણે-તીર્ણ. ” જે આ ભૂત કૃદન્તનો ઉપયોગ કર્યો છે તે “ ક્રિયમાણં કૃતં ” આ વાક્ય અનુસાર કરેલું સમજવું જોઈએ જેમ કોઈ કાર્યની સમાપ્તિ હળુ થયેલ નથી પણ સમાપ્તિના માર્ગ ઉપર છે; અને ભવિષ્યમાં સમાપ્ત કરશે, પણ વ્યવહારમાં તે “ થઈ ગયેલ

ઓઘં=ભાવોઘં સંસારં તરતીત્યોઘન્તરઃ, ‘કઢેમાળે કઢે’ ઇતિ વચનાત્તીર્ણઃ, મુક્તઃ=વાહ્યાભ્યન્તરમમત્વરહિતો ભવતિ, કિશ્ચ-સ એવ વિરતઃ=વિષયકષાયસંઙ્ગવર્જિતઃ, વ્યાખ્યાતઃ=મુનિત્વેન પ્રસિદ્ધઃ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુત્ક એવ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

યશ્ચ પૂર્વોક્તવિપરીતવર્તી સ કીદશો ભવતીત્યાહ-‘દુઘ્વસુમુળી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-દુઘ્વસુમુળી અળાળાણ તુચ્છણ ગિલાઈ વત્તણ એસ વીરે પસંસિણ, અચ્છઈ લોગસંજોગં એસ નાણ પમુચ્ચઈ ॥સૂ૦ ૭॥

છાયા-દુર્વસુમુનિરનાજ્ઞયા તુચ્છો ગ્ભાયતિ વર્તયેત્ એવ વીરઃ પ્રસંસિતઃ અત્યેતિ લોકસંયોગમ્, એવ ન્યાયઃ પ્રોચ્યતે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા-‘દુર્વસુમુનિ’ રિત્યાદિ, દુર્વસુમુનિઃ, વસુ=દ્રવ્યં ભવ્યં કલ્યાણમિતિ યાવત્, તત્ત્વ દુર્=દુષ્ટં વિપરીતં દૂરે સ્થિતં વા યસ્ય દુર્વસુઃ, સ ચાસૌમુનિશ્ચ દુર્વસુ-વહ “હોચુકા” એસા કહા જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર યહાં પર મી યહી સમજ્જકર “તીર્ણઃ” ઇસ પદકા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ । જો ‘ઓઘન્તર’ હોતે હૈં વે વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરપદાર્થોં સે મમત્વરહિત હોતે હૈં ઓર વિષયકષાયોં કે સંગસે રહિત હોકર મુનિરૂપસે પ્રસિદ્ધ કોટિ મેં આતે હૈં । “ઈતિ બ્રવીમિ” ઇન પદોં કા ભાવાર્થ પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ સે વિપરીતવર્તી હૈ વહ કૈસા હોતા હૈ ? ઇસ વિષય કો સમજાતે હૈં-‘દુઘ્વસુમુળી’ ઇત્યાદિ ।

વહ દુર્વસુ મુનિ હૈ જો વીતરાગ પ્રમુ કી આજ્ઞા સે રહિત હોતા હુઆ સ્વચ્છન્દ આચારવિચારવાલા હોતા હૈ । વસુ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય હૈ, દ્રવ્ય સે મતલબ ધન સે નહીં કિન્તુ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ સે હૈ ।

છે” એમ કહેવામાં આવે છે, તે પ્રકારે આ ઠેકાણે પણ તેવું સમજીને “તીર્ણઃ” આ પદનો ઉપયોગ કરવામાં આવેલ છે. જે ઓઘન્તર અને છે તે બાહ્ય અને આભ્યંતરમાં પરપદાર્થોથી મમત્વરહિત અને છે, અને વિષય કષાયોના સંગથી રહિત બની મુનિરૂપથી પ્રસિદ્ધ કોટિમાં આવે છે. “ઈતિ બ્રવીમિ” આ પદોનો ભાવાર્થ પહેલાં લખાઈ ચૂકેલ છે. ॥સૂ૦ ૬ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપથી વિપરીતવર્તી છે, તે કેવા હોય છે ? આ વિષયને સમજાવતાં સૂત્રકાર કહે છે-‘દુઘ્વસુમુળિ’ ઇત્યાદિ

તે દુર્વસુ મુનિ છે કે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી રહિત થઈને સ્વચ્છન્દ આચાર વિચારવાળા અને છે. વસુ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય છે. દ્રવ્યનો તાત્પર્ય ધન નહિ પણ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ છે. આ ભવ્ય-કલ્યાણ જેનાથી દૂર છે અથવા

મુનિઃ=મોક્ષાનર્હો રત્નત્રયવિરાધક इत्यर्थः, કુત इत्यमित्याह—‘અનાજ્ઞયે’ત્યાદિ । અનાજ્ઞયા વર્તમાનઃ=વીતરાગોપદેશવિકલઃ સ્વચ્છન્દાચારી । નનુ વીતરાગોપદેશાનુસારેણ કુતો ન વર્તતે યેન સ્વૈરિત્વં સ્યાદિતિ चेन्न, લોકેऽમમીકારો, રત્યરત્યોર્વિરોધઃ, શબ્દાદિવિષયે તટસ્થતા ચ, इत्येवंरूपतीक्ष्णासिधाराकल्पसदुपदेशपरिसेवनस्याति-
 दुष्करत्वेन स्वच्छन्दचारित्रस्य सुलभत्वात् । यथैतादृशः स तुच्छः=ભાવતુચ્છો જ્ઞાના-
 દિકલાવિકલઃ સન્ ગ્લાયતિ=સંદેહવિષયં પૃષ્ઠવન્તં કંચિત્ સ વસ્તુતત્ત્વસ્યાપરિજ્ઞાનાત્-

यह भव्य-कल्याण जिससे दूर है, अथवा जो भव्यभाव से दुष्ट-विपरीत है, वह दुर्वसु है । मुक्ति प्राप्ति के अयोग्य ऐसा रत्नत्रयका विराधक मुनि ही यहां दुर्वसु शब्द का वाच्यार्थ है । वीतराग प्रभु के उपदेश का नाम आज्ञा है । इस आज्ञा से भिन्न अनाज्ञा है । दुर्वसु मुनि वीतराग प्रभु की आज्ञा से विकल होता है अर्थात् स्वेच्छाचारी होता है । स्वेच्छाचारिता इसमें इसलिये आती है कि यह जो प्रभुका उपदेश है कि—“ किसी भी पदार्थ में ममत्व नहीं रखना । रति अरति नहीं करना, तथा इन्द्रियों के शब्दादिविषयों में तटस्थ रहना ” इसे रुचिकर नहीं होता, कारण कि यह तीक्ष्ण असिधारासदृश उनके सदुपदेश के सेवन को अतिदुष्कर मानता है । इसीलिये वह तुच्छ-भावतुच्छ है, अर्थात्-ज्ञानादिक कलासे विकल है । यदि वह सम्यग् ज्ञानसंपन्न होता तो कभी भी वीतराग प्रभु के उपदेश से बाह्यमतिवाला न होता । ज्ञानकला से विकल होकर ही तो वह दुःखित होता है । जब कोई उसकी स्वच्छन्द

ને ભવ્ય ભાવથી દુષ્ટ-વિપરીત છે તે દુર્વસુ છે. મુક્તિપ્રાપ્તિના માટે અયોગ્ય એવા રત્નત્રયના વિરાધક મુનિ જ આહી દુર્વસુ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશનું નામ આજ્ઞા છે આ આજ્ઞાથી ભિન્ન અનાજ્ઞા છે. દુર્વસુ મુનિ વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી વિકળ બને છે અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી થાય છે. સ્વચ્છન્દપણું તેઓમાં આ માટે આવે છે કે એવો જે પ્રભુનો આદેશ છે કે “કેઈપણ પદાર્થમાં મમત્વ રાખવું નહિ, રતિ અરતિ કરવી નહિ, તથા ઈન્દ્રિયોના શબ્દાદિ વિષયોમાં તટસ્થ રહેવું.” આ તેઓને રૂચિકર થતું નથી. કારણ કે આ તીક્ષ્ણ તલવારની ધાર સમાન તેના સદુપદેશને માનવું ઘણું કઠીન સમજે છે, તેથી તે તુચ્છ-ભાવતુચ્છ છે, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિક કલાથી વિકળ છે. કદાચ તેઓ સમ્યક્જ્ઞાનસંપન્ન હોત તો કદિ પણ વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશથી વિમુખ ન થાત. જ્ઞાનકળાથી વિકળ બની તે દુઃખી થાય છે ન્યારે કેઈ પણ તેની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિ દેખી વાસ્તવિક મુનિના

દુત્તરં કર્તુમ્ અસમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । યદ્વા-જ્ઞાનવાનપિ ચારિત્રશૂન્યઃ પૂજાસત્કારમયાદ્ મોક્ષમાર્ગનિરૂપણાવસરે યથાવસ્થિતં વોદયિતું લજ્જત ઇવેત્યર્થઃ, યથ્ચ તીર્થદ્વારાજા-પ્રવૃત્તિ દેશ્વકર વાસ્તવિક મુનિકે આચારવિષયક પ્રશ્ન ઉસસે પૂછતા હૈ તો વહ વસ્તુતત્ત્વ કા વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોને સે ઉસકે પ્રશ્નકા યથાર્થ ઉત્તર નહીં દે સકતા હૈ, યા જો કુછ કહતા હૈ વહ સ્વકપોલકલ્પિત હી કહતા હૈ જિસે લોગ માનને કો તૈયાર નહીં હોતે । ઇસ પ્રકાર વહ અપની માન્યતા મેં વદા લગને કે અથવા પોલ ખુલને કે ડર સે સદા દુઃખી હી બના રહતા હૈ । અથવા-જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હો તો ભી યથાર્થ ચારિત્ર સે વહ શૂન્ય હૈ ઇસલિયે જિસ સમય વહ મોક્ષ માર્ગ કી પ્રરૂપણ કરતા હૈ ઉસ સમય વહ ઉસકી યથાર્થ પ્રરૂપણા કરને મેં લજ્જિત જૈસા હોતા હૈ, ક્યોંકિ વહ સમજતા હૈ કિ મેં સ્વયં યથાર્થ ચારિત્રશાલી નહીં હૂં, યદિ મેં વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પરિચય લોગોં કો કરા દૂંગા તો લોગોં કો દૃષ્ટિમેં મેરી માન્યતા ગિર જાવેગી, લોગ કહેંગે કિ-મહારાજ ! જૈસી આપ પ્રરૂપણા કરતે હૈં ઉસ પ્રકાર કી ક્રિયા આપ ક્યોં નહીં પાલતે ? । ઇસ પ્રકાર અપના માન-સમ્માન કે જાનેકે ભય સે વહ લોગોં કો અન્ધ-કાર મેં હી રખતા હૈ, પરન્તુ ઉસે યહ ભય સદા લગા રહતા હૈ કિ કહીં કોઈ યથાર્થ વક્તા આકર વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન ન કરદે ।

આચારવિષયનો પ્રશ્ન પૂછે છે તો તે વસ્તુતત્ત્વનો વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોવાથી તેના પ્રશ્નનો ઉત્તર યથાર્થરૂપે આપી શકતો નથી. અગર જે કંઈ પણ જવાબ આપે છે તો તે સ્વકપોલકલ્પિત જ આપે છે, જે માનવાને લોક તૈયાર થતા નથી. આવા પ્રકારથી તે પોતાની માન્યતામાં ડાઘ લાગવાના ભયથી અથવા પોલ ખુલ્લી થવાના ભયથી સદા દુઃખી બની રહે છે, અથવા જ્ઞાનકલાસંપન્ન હોય તો પણ યથાર્થ ચારિત્રથી તે શૂન્ય છે, તેથી જે વખતે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા કરે તે વખતે તે તેની યથાર્થ પ્રરૂપણા કરવામાં લજ્જિત બને છે, કારણ કે તે સમજે છે કે હું સ્વયં યથાર્થચારિત્રશાળી નથી, કદાચ હું વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનો પરિચય લોકોને કરાવી આપીશ તો લોકોની દૃષ્ટિમાં મારી માન્યતા નીચી પડશે, લોક બોલવા માંડશે કે-મહારાજ ! જેવી આપ પ્રરૂપણા કરો છો તેવા પ્રકારની ક્રિયા આપ કેમ પાળતા નથી ? આવા પ્રકારે પોતાનું માન સન્માન જવાના ભયથી તે લોકોને અંધારામાં જ રાખે છે, પરંતુ તેને સદા તે ભય લાગ્યો જ રહે છે કે કદાચ કોઈ યથાર્થવક્તા આવીને વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનું પ્રતિ-પાદન ન કરી નાંખે.

નુયાયી સ રત્નત્રયસમારાધકઃ સુવસુમ્નિર્વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનાન્ન કદાચિદપિ ગ્લાયતિ ।
 એપઃ=સુવસુમ્નિઃ વીરઃ=સંયમાનુષ્ઠાનકુશલઃ પ્રશંસિતઃ=ગણધરાદિભિરભિનન્દિતઃ,
 સ એવ ચ લોકસંયોગં-લોકેન=અસંયમિલોકેન સહ સંયોગઃ=સમ્બન્ધો મમીકાર इति
 યાવત્ લોકસંયોગસ્તં, યદ્વા-લોકસંયોગં-લોકૈર્વાહ્યભૂતૈર્હિરણ્યસુવર્ણધનધાન્યમાતા-
 પિતૃપુત્રકલત્રદુહિત્રાદિભિરામ્યન્તરૈ રાગદ્વેષાદિભી રાગદ્વેષજન્યૈરષ્ટવિધકર્મભિર્વા
 સહ સંયોગં=સમ્બન્ધમ્ અત્યેતિ=અતિક્રામ્યતિ સ મુનિર્મમત્ત્વાદિભિઃ પરિમુક્તો ભવતી-

ये लक्षण दुर्वसु मुनि के हैं, अव सुवसु मुनि के सम्बन्ध का वर्णन करते हैं—

वे सुवसु मुनि हैं जो वीतराग प्रभु की आज्ञा के आराधक हैं—रत्न-
 त्रयमार्ग के पालने में सावधान हैं। वे वस्तुतत्त्व के वास्तविक ज्ञाता
 होने से कभी भी अन्यथा प्ररूपणा नहीं करते। प्ररूपणा के अनु-
 सार ही अपनी प्रवृत्ति रखते हैं। जैसा कहते हैं वैसा स्वयं पालन करते
 हैं, इसलिये इनको किसी भी प्रकार का भय भी नहीं होता; ये वीर होते
 हैं। गणधरादिक देवोंने ऐसे ही सुवसु मुनियों की प्रशंसा की है। इन्हें
 वीर इसलिये कहा गया है कि—ये निर्दोष संयम के अनुष्ठान करने में
 कुशल होते हैं। असंयमी लोगों के साथ यदि कदाचित् इनका संयोग
 हो जाता है तो भी ये अपने मोक्षमार्ग से चलित नहीं होते हैं। अथवा
 बाह्यपरिग्रह—हिरण्य सुवर्ण धनधान्य माता-पिता पुत्र कलत्र आदि के
 साथ इनका सम्बन्ध हो जाता है तो ये उस सम्बन्धसे सदा बहिर्भूत

આ લક્ષણ દુર્વસુ મુનિના છે, હવે સુવસુ મુનિના સંબંધનું વર્ણન કરે છે —

તે સુવસુ મુનિ છે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાના આરાધક છે. રત્નત્રય
 માર્ગનું પાલન કરવામાં સાવધાન છે. તે વસ્તુતત્ત્વના વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોવાથી
 જે કોઈ વખત અન્યથા પ્રરૂપણા કરતા નથી. પ્રરૂપણા અનુસાર જ પોતાની
 પ્રવૃત્તિ રાખે છે. જેવું કહે છે તેવું સ્વયં પાલન કરે છે, તેથી તેને કોઈ પણ
 પ્રકારનો ભય રહેતો નથી. તે વીર બને છે. ગણધરાદિક દેવોએ એવા જ સુવસુ
 મુનિઓની પ્રશંસા કરી છે, તેમને વીર એટલા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે તે
 નિર્દોષ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં કુશળ હોય છે. અસંયમી લોકોનો સંગ
 કદાચ સંયોગથી બને તો પણ તે પોતાના મોક્ષમાર્ગથી ચલિત થતા નથી, અને
 બાહ્ય પરિગ્રહહિરણ્ય સુવર્ણ ધન ધાન્ય માતા પિતા પુત્ર કલત્ર આદિની સાથે
 તેનો સંબંધ થાય તો પણ તે તેવા સંબંધમાં સદા તે બહિર્ભૂત રહે છે. તેમાં
 તેની મમતા લાગતી નથી. આભ્યંતર પરિગ્રહ રાગ દ્વેષ આદિ, અથવા તેનાથી

ત્યર્થઃ, કિં તેનેત્યાહ—‘एष’ इत्यादि, एषः=लोकसंयोगातिक्रमो न्यायः=सन्मार्गः प्रोच्यते=कथ्यते, यद्वा—‘नायः’ इतिच्छाया, ‘नायः’ आत्मानं मोक्षं नयतीति नायः=सुमुक्षुरनगारः, आर्षत्वात्कर्तरि घञप्रत्ययः, भगवदाज्ञानुयायी सुवसुमुनिरेव मोक्षं लभत इति तात्पर्यम् ॥ सू० ७ ॥

સામ્પ્રતં ભગવદુપદેશમેવ દર્શયતિ—‘જં દુઃખં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જં દુઃખં પવેઇયં इह माणवाणं तस्स दुक्खस्स कुसला परिन्नमुदाहरन्ति, इय कम्मं परिन्नाय सव्वसो, जे अणन्नदंसी से अणन्नारामे, जे अणन्नारामे से अणन्नदंसी, जहा पुण्णस्स कत्थइ तहा तुच्छस्स कत्थइ, जहा तुच्छस्स कत्थइ तहा पुण्णस्स कत्थइ, अवि य हणे अणाइयमाणे ॥ सू० ८ ॥

રહતે હૈં, ઉનમેં ઇનકી મમતા નહીં હોતી હૈ । આશ્યન્તર પરિગ્રહ-રાગદ્વેષ આદિ યા ઇનસે ઉત્પન્ન આઠ કર્મોં કે સાથ કે સમ્બન્ધ કો સદા યે નાશ કરને મેં ઉચત રહતે હૈં । યે કોઈં મીં એસા કાર્ય યા પ્રયત્ન નહીં કરતે કિ જિસસે રાગદ્વેષાદિક યા ઉનકી પરમ્પરા વઢે યા ઇનસે ઉત્પન્ન કર્મોં કા બન્ધ દૃઢ હોતા રહે । સદા યે વૈસા હી પ્રયત્ન કરતે હૈં કિ જિસસે રાગ-દ્વેષાદિક કા સમ્બન્ધ છૂટે ઔર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા એવં આગામી કર્મોં કા સંવર અર્થાત્ બન્ધ કા અભાવ હોતા રહે । ઇસ પ્રકાર કા યહ ઇનકા લોકસંયોગ-માતાપિતાદિ કા સમ્બન્ધ-કા ત્યાગ હી સન્માર્ગ હૈ । અથવા “ નાએ ” કી છાયા “ નાય ” મીં હૈ । આત્મા કો જો મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાતા હૈ વહ નાય હૈ, અર્થાત્ ભગવાન કી આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરને વાલા, એસા સુવસુ મુનિ હી મોક્ષ કા પ્રાપક હોતા હૈ, અન્ય નહીં ॥સૂ૦ ૭॥

ઉત્પન્ન થતાં આઠ કર્મોના સંબંધનો નાશ કરવામાં સદા તે ઉદ્યમી રહે છે. તે કોઈ પણ એવું કાર્ય કે પ્રયત્ન નથી કરતા કે જેનાથી રાગ દ્વેષાદિક અગર તેની પરંપરા વધે, અગર તેનાથી ઉત્પન્ન કર્મોના બંધ દૃઢ થતાં રહે. સદા તે એવો જ પ્રયત્ન કરે છે કે જેનાથી રાગદ્વેષાદિકનો સંબંધ છુટે, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા અને આગામી કર્મોનો સંવર અર્થાત્ બંધનો અભાવ થતો રહે. આવા પ્રકારનો તેનો લોકસંયોગ-માતા પિતાદિકના સંબંધનો ત્યાગ જ સન્માર્ગ છે. અથવા “ નાએ ”ની છાયા “ નાયઃ ” પણ છે. આત્માને જેનાથી મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય તે નાય છે, અર્થાત્ ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા એવા સુવસુ મુનિ જ મોક્ષના પ્રાપક બને છે, અન્ય નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા-યદ્દુઃખં પ્રવેદિતમિહ માનવાનાં તસ્ય દુઃખસ્ય કુશલાઃ પરિજ્ઞામુદાહરન્તિ-
 इति कर्म परिज्ञाय सर्वशः, योऽनन्यदर्शी सोऽनन्यारामः, योऽनन्यारामः सोऽनन्यदर्शी,
 यथा पुण्याय कथ्यते तथा तुच्छाय कथ्यते, यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय
 कथ्यते, अपि च हन्यादनाद्रियमाणः ॥ सू० ८ ॥

टीકા-‘યદ્દુઃખ’ મિત્યાદિ, યત્=અનિર્દિષ્ટં દુઃખં=શારીરિકમાનસિકં, દુઃખ-
 जनकं कर्म वा यथा यत्र येन प्रकारेण कर्म वध्यते मुच्यते वा, यथा च विपाको भवति
 यथा च न भवति तत्सर्वं प्रवेदितं=तीर्थङ्करगणधरैः प्ररूपितम् । इह=अस्मिन् लोके
 कुशलाः=द्रव्यक्षेत्रકાલભાવપરિજ્ઞાનનિપુણાઃ સ્વસમયપરસમયજ્ઞાઃ પરીપહોપસર્ગ-
 सहनक्षमाः, कर्ममहासुभटघटाविघटनोपायघटकाः रागद्वेषमहोरगविषमविषमन-
 विषवैद्याः, कपायानलसन्तापप्रशमनप्रवीणाः, विकटभवाटवीपारगमननिष्णाताः
 भावकुशलाः, માનવાનાં તસ્ય દુઃખસ્ય પૂર્વોક્તસ્ય પ્રાણાતિપાતાદ્યપાર્જિતસ્ય કર્મણો
 વા પરિજ્ઞામ્=કર્મોપાર્જનતન્નિરોધકારણપરિજ્ઞાનમ્ ઉદાહરન્તિ=ઉપદિશન્તિ-વન્થો

અવ ફિર મી ભગવાન કે ઉપદેશ કો કહતે હૈં-‘જં દુઃખં’ ઇત્યાદિ ।
 इस चतुर्गतिक रूप संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो किसी
 ન કિસી તરહ સે દુઃખી ન હો । કોઈ શારીરિક તો કોઈ માનસિક
 દુઃખ સે હર સમય દુઃખી હી બને રહતે હૈં । इन दुःखों का प्रदाता जीवों
 કો અપને કિયે હુઅ કર્મ કે સિવાય ઓર કોઈ નહીં હૈ । यह बात हमें
 હમારે તીર્થઢ્ઠર ગણધરાદિ મહાપુરુષોં ને અઢ્ઠી તરહ સે શાસ્ત્રોં મેં બત-
 લાઈ હૈ । સાથ મેં યહ મી બતલાયા હૈ કિ જિન કર્મોં સે હમેં સુખદુઃખ
 પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઁન કર્મોં કો યહ જીવ કિસ પ્રકાર સે કૈસે બાંધતા હૈ ?,
 તથા ઁન કર્મોં કે ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કૈસે હોતે હૈં ? કૈસે નહીં
 હોતે હૈં ? । उन्हीं के सिद्धान्तानुसार आचार्य आदि महर्षिगण भी-

હવે ફરીથી પણ ભગવાનનો ઉપદેશ કહે છે-‘જં દુઃખં’ ઇત્યાદિ.

આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં એવું કોઈ પણ પ્રાણી નથી જે કોઈને
 કોઈ પ્રકારે દુઃખી ન હોય. કોઈ શરીરથી તો કોઈ મનથી દુઃખી તેવા પ્રકારે
 સદા દુઃખી બની રહે છે. આ દુઃખોનો પ્રદાતા જીવોને પોતાના કરેલા કર્મો સિવાય
 બીજું કોઈ પણ નથી. આ વાત અમને અમારા તીર્થંકરોએ તથા ગણધરાદિકે ઘણી
 સારી રીતે શાસ્ત્રોમાં બતાવી છે સાથે એ પણ બતાવેલ છે કે જે કર્મોથી અમોને
 સુખદુઃખ પ્રાપ્ત થાય છે તેવા કર્મોને આ જીવ કેવા પ્રકારે ઢેવી રીતે બાંધે
 છે ? તથા તેવા કર્મોના ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેમ થાય છે ? ઢેવી રીતે થતા
 નથી ? તેના સિદ્ધાન્તાનુસાર આચાર્ય આદિ મહર્ષિગણ પણ-જે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર,

વન્ધહેતુસ્તન્મોક્ષો મોક્ષહેતુશ્ચ ભવતીતિ સતતં કથયન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ ઇતિ=યત્પૂ-
ર્વોક્તં કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિકં તજ્જન્યં યદ્દુઃખં તદ્, યચ્ચ પ્રાણિદુઃખપરિજ્ઞાતારઃ
કુશલા ઉદાહરન્તિ તદપિ ચ સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યા-
ખ્યાનપરિજ્ઞયા યોગત્રિકકરણત્રિકૈઃ પરિહૃત્ય ચાસ્રવદ્વારેષુ ન વર્તેત, યદ્વા સર્વશઃ=
મેદપ્રમેદપૂર્વકં પરિજ્ઞાય કથયતિ, અથવા સર્વશઃ=સર્વસ્માત્ કેવલિનશ્ચતુર્દશપૂર્વવિદો
વા સકાશાત્ પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા, યદિવા સર્વશઃ=આક્ષેપણ્યાદિમિશ્ચતુર્વિધાભિઃ
કથામિઃ કથયતિ ।

જો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે પરિજ્ઞાન મેં નિપુણ હોતે હૈં, સ્વ-
સિદ્ધાન્ત ઓર પરસિદ્ધાન્ત કે જો વેત્તા હોતે હૈં, પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે
સહને મેં જો શક્તિશાલી હોતે હૈં, કર્મરૂપી મહાસુખદોં કી ઘટાકો હટાને
કે ઉપાયોં કે જુટાને મેં પ્રવીણ હોતે હૈં, રાગ ઓર દ્વેષરૂપી શ્વેત ઓર
કાલે નાગ કે ભયદ્ગ્ન વિષ કો શમન કરને મેં જો વિષવૈદ્ય કે સમાન હૈં,
કષાયરૂપી અગ્નિ કે જ્વાલાજન્ય સન્તાપ કો શાન્ત કરને મેં જો કુશલ
હૈં, ઓર જો ભયદ્ગ્ન ઇસ સંસારરૂપી અટવી સે પાર હોને મેં અદ્વિતીય
નિપુણ હોતે હૈં વે મનુષ્યોં કે ઇસ પૂર્વોક્ત દુઃખકી, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિ
સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કી પરિજ્ઞા કો નિરન્તર
પ્રકટ કરતે રહતે હૈં । વે અપને દિવ્ય ઉપદેશોં દ્વારા “કર્મ કિસ તરહ
બંધતે હૈં ?, બંધ કે કૌન-કૌન સે કારણ હૈં ?, બંધ કા અભાવ કેસે હોતા
હૈં ? ઓર મોક્ષકે કારણ ક્યા હૈં ?” ઇન સબ વાતોંકો સ્પષ્ટ કર સમ-
જાતે હૈં । ઇનકે દિવ્ય ઉપદેશરૂપ શાસ્ત્રકા ધર્મોપદેશકકે નિકટ શ્રવણ

કાળ અને ભાવના પરિજ્ઞાનમાં નિપુણ હોય છે, સ્વસિદ્ધાન્ત અને પરસિદ્ધાન્તના
જે બાણકાર છે પરિષદ્ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામાં જે શક્તિશાળી હોય છે,
કર્મરૂપી મહાસુખદોની ઘટાને હઠાવવામાં ઉપાયો યોજવામાં જે નિપુણ હોય
છે, રાગ અને દ્વેષરૂપી ધોળા અને કાળા નાગના ભયંકર વિષનું શમન કરવામાં
જે વિષવૈદ્યસમાન છે, કષાયરૂપી અગ્નિની જ્વાલાજન્ય સંતાપને શાંત કરવામાં
કુશળ છે અને જે ભયંકર આ સંસારરૂપી અટવીથી પાર થવામાં અદ્વિતીય
નિપુણ હોય છે.—મનુષ્યોના તે પૂર્વોક્ત દુઃખોની, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિથી
ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોની પરિજ્ઞાને નિરંતર પ્રકટ કરતા રહે છે
તે પોતાના દિવ્ય ઉપદેશોદ્વારા “કર્મ કેવી રીતે બંધાય છે ? બંધ શું છે ?
બંધના ક્યા ક્યા કારણો છે ? બંધ કેવી રીતે થાય ? અને મોક્ષનું કારણ
શું છે ?” આ બધી બાબતો સ્પષ્ટ રીતે સમજાવે છે. તેના દિવ્ય ઉપદેશરૂપ
શાસ્ત્રના ધર્મોપદેશક નિકટ શ્રવણ કરવાવાળા તથા તેના મતાનુસાર ચાલનાર

ધર્મોપદેશકઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘યોઽન્યે’—ત્યાદિ, યઃ કશ્ચિત્ અનન્યદર્શી-અન્યં દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સોઽન્યદર્શી, ન અન્યદર્શી=અનન્યદર્શી=અન્યદર્શનશ્રદ્ધાનરહિતઃ-ભગવદુપદિષ્ટવસ્તુતત્ત્વરુચિશીલો ભવતિ સ એવ અનન્યારામઃ=રત્નત્રયાતિરિક્ત-વસ્તુરમણવિરતો ભવતિ । મિથ્યાદૃષ્ટિશાસ્ત્રસ્યાનાત્મગીતત્વાત્તત્ર ન રમત ઇત્યાશયઃ ।

કરનેવાલે, તથા उनके मतानुसार चलनेवाले व्यक्तिका यह प्रधान कर्तव्य है कि वह उनके इस प्रकारके दिव्य उपदेशको—कि ज्ञानावरणीयादिक कर्मोंको यह जीव इस प्रकार बांधता है और तज्जन्य इन दुःखों को नितप्रति भोगता रहता है, इन सभी बातोंको—ज्ञ-परिज्ञासे जानकर और प्रत्याख्यान-परिज्ञासे तीन करण तीन योगोंद्वारा उन सबका त्याग करे, तथा ‘फिरसे नवीन कर्मोंका आस्रव न हो’ इस प्रकारसे अपनी प्रवृत्तिको संभालकर रखे ।

ધર્મોપદેશક કૈસા હોતા હૈ? હિસ બાતકા યુલાસા કરતે હુણ કહતે હૈ—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ, તીર્થઢ્ઢરાદિદ્ધારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્તકે સિવાય અન્ય સિદ્ધાન્તમૈં જિસકી ઉપાદેયરુપસે આસ્થા નહીં હોતી હૈ ઉસકા નામ અનન્યદર્શી હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકો ગ્રહણ કરનેકી જિસકી દૃષ્ટિ હોતી હૈ વહ અન્યદર્શી હૈ, હિસસે વિપરીત અનન્યદર્શી હૈ । જો અનન્યદર્શી હૈ વહી અનન્યારામ હૈ, અર્થાત્ જિસકી રુચિ વીતરાગ પ્રતિપાદિત તત્ત્વોમૈં હી ંકતાનરુપસે તહીંન હૈ । વહ ઉનસે અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિયોકે શાસ્ત્રોમૈં કઢી ઢી રતિશાલી નહીં હોતા હૈ પ્રત્યુત ઉનકે

વ્યક્તિનું એ પ્રધાન કર્તવ્ય છે કે તે તેના આવા પ્રકારના દિવ્ય ઉપદેશને કે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોને એ છુવ આ પ્રકારે બાંધે છે અને તત્તજ્જન્ય તેવા દુઃખોને નિત્ય ભોગવતા રહે છે. આ સઘળી વાતોને—જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી બાળીને, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી ત્રણ કરણ ત્રણ યોગદ્ધારા તે સઘળાનો ત્યાગ કરે, તથા ‘ફરીથી નવીન કર્મોના આશ્રવ ન બને’ તેવા પ્રકારથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સંભાળી રાખે.

ધર્મોપદેશક કેવા હોય છે? એ વાતનો ખુલાસો કરતાં કહે છે—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ.

તીર્થકશદિદ્ધારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્ત સિવાય અન્ય સિદ્ધાન્તમાં જેની ઉપાદેય રૂપથી આસ્થા થતી નથી તેનું નામ અનન્યદર્શી છે. બીજા સિદ્ધાન્તને ગ્રહણ કરવાની જેની દૃષ્ટિ થાય છે તે અન્યદર્શી છે, તેનાથી વિપરીત અનન્યદર્શી છે. જે અનન્યદર્શી છે તે અનન્યારામ છે. અર્થાત્ જેની રૂચી વીતરાગપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં જ એકતાન રૂપથી તલલીન છે, તે તેથી અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિઓના શાસ્ત્રોમાં કઢી પણ રતિશાળી થતા નથી, બદલે તેના સિદ્ધાન્તોની

સિદ્ધાન્તકા આલોડનકર જવ વહ ઉનકી માન્યતાઓંકો તર્કણાકી કસોટી પર કસતા હૈ ઓર જવ વે અપની યથાર્થતાસે શૂન્ય સાવિત હોતી હૈં તવ ઇસકી દૃષ્ટિમેં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોંકી ઓર હી સન્તોષ ઉત્પન્ન હોતા હૈં । વહ અપનેકો ધન્ય ઇસલિયે માનતા હૈં કિ મુઝે ત્રિલોકીનાથ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મકી શીતલ છત્રછાયા મિલી હૈં । સચ્ચે મણિકી કીમત કાચખણડકે દેખનેસે હી હોતી હૈં । ઉપદેશક જવ તક અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાલા નહીં હોગા તવ તક વહ દૂસરોંકે લિયે અપને સિદ્ધાન્તકા રહસ્ય હૃદયંગમ નહીં કરા સકતા । ઉપદેશક ગુરુકા કર્ત્તવ્ય હૈં કિ વહ પહિલે અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ રૂપસે જ્ઞાતા હો, શ્રોતાઓંકી ચિત્તવૃત્તિકો પરખનેવાલા હો, ઉનકી શંકાઓંકા યુક્તિ ઓર આગમકે અનુસાર સમાધાન કરનેવાલા હો, સદાચારી હો, અપને ઉપદેશમેં શંકા સમાધાનકે સાથ અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હો । ઇસ પ્રકારકે ઉપદેશકકા શ્રોતાઓંકે ડપર અસર જિતના પડતા હૈં ઉતના ઓર કિસીકા નહીં પડતા, ઇસલિયે સૂત્રકારને ડસકી પ્રશંસા-અનન્યારામ ઓર અનન્યદર્શી, ઇન પદોંસે કી હૈં । ઉપદેશક અપને વિષયકા પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિક્ષેપણી સંવેગિની ઓર નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારકી કથાઓંમેંસે જિસ કથાકી જહાં આવશ્યકતા હોતી હૈં ડસી કથાકા

આલોચના કરી જ્યારે તે તેમની માન્યતાઓને તર્કણાની કસોટી ઉપર કસે છે અને જ્યારે તે પોતાની યથાર્થતાથી શૂન્ય સાબિત થાય છે ત્યારે તેની દૃષ્ટિમાં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોની તરફ જ સંતોષ ઉત્પન્ન થાય છે, તે પોતાને ધન્ય તેટલા માટે માને છે કે મને ત્રિલોકીનાથદ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મની શીતળ છત્રછાયા મળી છે, સાચા મણિની કીમત કાચના ટુકડા દેખવાથી થાય છે. ઉપદેશક જ્યાં સુધી પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાળો નહિ અને ત્યાં સુધી તે બીજાઓને પોતાના સિદ્ધાંતનું રહસ્ય હૃદયંગમ કરાવી શકતો નથી. ઉપદેશક શરૂનું કર્તવ્ય છે કે તે પહેલાં પોતાના સિદ્ધાંતના પૂર્ણ જ્ઞાતા હોય, શ્રોતાઓની ચિત્તવૃત્તિને પારખનાર હોય, તેની શંકાઓનું યુક્તિ અને આગમ અનુસાર સમાધાન કરવાવાળા હોય, સદાચારી હોય, પોતાના ઉપદેશમાં શંકા સમાધાન સાથે પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હોય. આવા પ્રકારથી ઉપદેશકની શ્રોતાઓ ઉપર અસર નેટલી પડે છે તેટલી બીજી કશાથી થતી નથી. સૂત્રકારે તેવી પ્રશંસા ‘અનન્યારામ અને અનન્યદર્શી’ આપેલી કરેલ છે. ઉપદેશક પોતાના વિષયનું પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિક્ષેપણી સંવેગિની અને નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારની કથાઓમાંથી જે કથાની જ્યાં આવશ્યકતા હોય છે,

एवमुपदेशकस्वरूपमुपदर्श्य सर्वेभ्यः समान एव भगवदुपदेश इति दर्शयति-‘यथे’त्यादि।

यथा=येन प्रकारेण पुण्याय=पुण्यवते भव्यजीवाय सुरेश्वरचक्रवर्तिमाण्डलिकाय च कथ्यते=उपदिश्यते, तथा=एवमेव तुच्छाय=द्रमककाष्ठहारकाय कथ्यते,

अवलम्बन करके उपदेश देते हैं। इसी बातको प्रकट करनेके लिये “सच्चसो” पदका सूत्रकारने सूत्रमें ग्रहण किया है। जिस विषयमें उपदेशक अकुशल होता है, अथवा जहां पर उसे सन्देह होता है उस विषयको वह स्वयं केवली अथवा श्रुतज्ञानीके पाससे जानकर बादमें उसका प्रतिपादन करता है। जिस समय केवलियोंका यहां पर अस्तित्व था उस समय भी धर्मोपदेशक थे। धर्मोपदेशकोंको जिस विषयमें शंका होती थी वे अपनी शंकाओंका समाधान उनके निकट करते थे, और उस विषयमें पूर्ण निष्णात बनते थे। यद्यपि वर्त्तमानकालमें इस क्षेत्रमें साक्षात् केवली विद्यमान नहीं हैं फिर भी उनके स्थानापन्न उनका उपदेश शास्त्रोंमें अब भी विद्यमान है। उपदेशक गुरु उन्हीं उपदेशोंका अब भी अपनी प्रवृत्ति तदनुकूल बनाकर प्रचार करते रहते हैं।

वीतराग प्रभुद्वारा प्रतिपादित विषय—चाहे वह दरिद्री हो, धनी हो, इन्द्र हो, चक्रवर्त्ती हो, माण्डलिक राजा हो, कोई भी क्यों न हो—सबके लिये समानरूपसे है, इसमें किसीभी जातिविशेष या वर्ण-विशेषका भेद नहीं रक्खा गया है। भगवानका उपदेश पक्षपातसे

તેવી કૃતાનું અવલંબન કરીને ઉપદેશ આપે છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે “સચ્ચસો” પદનું સૂત્રકારે સૂત્રમાં ગ્રહણ કરેલ છે. જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશળ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે, તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી જાણી લે છે, બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. જે વખતે કેવળીઓનું અહીં અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા. ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શંકા થતી હતી તેઓ પોતાની શંકાઓનું સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા. જે કે વર્તમાનકાળમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિદ્યમાન નથી તો પણ તેના સ્થાનાપન્ન તેમનો ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હજી પણ વિદ્યમાન છે, ઉપદેશક ગુરુ તેઓના ઉપદેશોનો હજી પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે.

વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વિષય—ચાહે કેઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે ચક્રવર્તી હોય, માંડલિક રાજા હોય, બીજા કેઈ પણ હોય—બધાને માટે સમાનરૂપ જ છે. તેમાં કેઈ પણ જાતિવિશેષ અગર વર્ણ વિશેષનો ભેદ રાખવામાં આવેલ નથી. ભગવાનનો ઉપદેશ પક્ષપાતથી રહિત હોય

एवं यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय कथ्यते । मेघो यथा स्थले जले च सम-
भावेन वर्षति तथैवोपदेष्टाऽपि निरपेक्षमुच्चाववेभ्यः सर्वेभ्योऽनुग्रहबुद्ध्या समा-
नमेवोपदिशति । अत्रायं त्रिवेकः—उपदेशको हि द्रव्यक्षेत्रकालभावमनुसृत्य 'यथा-
ऽयं वृषादिरभिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनभिगृहीतमिथ्यादृष्टिर्वेत्यादि पूर्वमवधार्यैवोप-
विहीन होता है । जिस प्रकार मेघकी धारा जलमें और स्थलमें समान-
रूपसे बरसती है, उसे यह पक्षपात नहीं होता कि मुझे यहां बरसना
चाहिये अथवा यहां नहीं बरसना चाहिये, इस प्रकारकी निरपेक्ष वृत्तिसे
ही वह एकरूपसे मेघधारा बरसती है । इसी प्रकार भगवानके उपदेशमें
भी भेदभावकी वृत्ति नहीं होती कि 'यह पुण्यात्मा है अतः इसके लिये
मेरा यह उपदेश है, और यह पापी है इसके लिये मेरा यह उपदेश
नहीं है ' । पुण्यात्मासे लगाकर पापात्मा तक, और धनीसे लगा कर
काष्ठहार-लकड़हारे तक, तथा राजासे लगा कर रंक तक सबके लिये
प्रभुका उपदेश एक रससे सना हुआ होता है फिर भी उपदेशकका
कर्त्तव्य है कि वह उस उपदेशको द्रव्य क्षेत्र काल और भावके अनुसार
श्रोताओं तक पहुंचावे । यह उपदेशककी ही कुशलता है । अन्यथा वह
उस उपदेशसे अपने स्वयंकी हानि करनेवाला हो जाता है । जैसे राज-
सभामें बैठ कर धर्मोपदेश देनेवाला उपदेष्टा पहिले इस बातका अपने
मनमें निर्णय कर लेवे कि यह राजा अभिगृहीतमिथ्यादृष्टि है या अन-
भिगृहीत मिथ्यादृष्टि है ? फिर अपने उपदेशका प्रवाह चलावे । बिना

છે. જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમાં અને સ્થળમાં સમાન રૂપથી વરસે છે તેને
એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આંહી જ વરસવું અને ત્યાં વરસવું નહિ. એવા
પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે. તેવા પ્રકારે ભગવાનના
ઉપદેશમાં પણ ભેદભાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ' આ પુણ્યાત્મા છે માટે તેના માટે
મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે માટે તેના માટે મારો આ ઉપદેશ નથી.'
પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઠીયારા સુધી, રાજથી
રંક સુધી દરેકને માટે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી સરખો જ હોય છે, તો પણ
ઉપદેશકનું કર્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-
ઓને સંભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની
જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે. જેવી રીતે રાજસભામાં એસીને ધર્મોપદેશ
દેનાર ઉપદેશક પહેલાં એ વાતનો પોતાના મનમાં નિર્ણય કરી લે કે આ રાજ
અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અથવા અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના

एवमुपदेशकस्वरूपमुपदर्श्य सर्वेभ्यः समान एव भगवदुपदेश इति दर्शयति-‘यथे’त्यादि।

यथा=येन प्रकारेण पुण्याय=पुण्यवते भव्यजीवाय सुरेश्वरचक्रवर्तिमाण्डलिकाय च कथ्यते=उपदिश्यते, तथा=एवमेव तुच्छाय=द्रमककाष्ठहारकाय कथ्यते,

अवलम्बन करके उपदेश देते हैं। इसी बातको प्रकट करनेके लिये “सच्चसो” पदका सूत्रकारने सूत्रमें ग्रहण किया है। जिस विषयमें उपदेशक अकुशल होता है, अथवा जहां पर उसे सन्देह होता है उस विषयको वह स्वयं केवली अथवा श्रुतज्ञानीके पाससे जानकर वादमें उसका प्रतिपादन करता है। जिस समय केवलियोंका यहां पर अस्तित्व था उस समय भी धर्मोपदेशक थे। धर्मोपदेशकोंको जिस विषयमें शंका होती थी वे अपनी शंकाओंका समाधान उनके निकट करते थे, और उस विषयमें पूर्ण निष्णात बनते थे। यद्यपि वर्तमानकालमें इस क्षेत्रमें साक्षात् केवली विद्यमान नहीं हैं फिर भी उनके स्थानापन्न उनका उपदेश शास्त्रोंमें अब भी विद्यमान है। उपदेशक गुरु उन्हीं उपदेशोंका अब भी अपनी प्रवृत्ति तदनुकूल बनाकर प्रचार करते रहते हैं।

वीतराग प्रभुद्वारा प्रतिपादित विषय-चाहे वह दरिद्री हो, धनी हो, इन्द्र हो, चक्रवर्त्ती हो, माण्डलिक राजा हो, कोई भी क्यों न हो-सबके लिये समानरूपसे है, इसमें किसीभी जातिविशेष या वर्ण-विशेषका भेद नहीं रक्खा गया है। भगवानका उपदेश पक्षपातसे

તેવી કથાનુ અવલંબન કરીને ઉપદેશ આપે છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે “સચ્ચસો” પદનું સૂત્રકારે સૂત્રમાં ગ્રહણ કરેલ છે. જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશળ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે, તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી બાણી લે છે, બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. જે વખતે કેવળીઓનું અહીં અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા. ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શંકા થતી હતી તેઓ પોતાની શંકાઓનુ સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા. અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા. જે કે વર્તમાનકાળમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિદ્યમાન નથી તો પણ તેના સ્થાનાપન્ન તેમનો ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હજી પણ વિદ્યમાન છે, ઉપદેશક ગુરુ તેઓના ઉપદેશોનો હજી પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે

વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વિષય-ચાહે કોઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે ચક્રવર્તી હોય, માંડલિક રાજા હોય, બીજા કોઈ પણ હોય-બધાને માટે સમાનરૂપે જ છે. તેમાં કોઈ પણ જાતિવિશેષ અગર વર્ણ વિશેષનો ભેદ રાખવામાં આવેલ નથી. ભગવાનનો ઉપદેશ પક્ષપાતથી રહિત હોય

एवं यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय कथ्यते । मेघो यथा स्थले जले च सम-
भावेन वर्षति तथैवोपदेष्टाऽपि निरपेक्षमुच्चाववेभ्यः सर्वेभ्योऽनुग्रहबुद्ध्या समा-
नमेवोपदिशति । अत्रायं विवेकः—उपदेशको हि द्रव्यक्षेत्रकालभावमनुसृत्य 'यथा-
ऽयं नृपादिरभिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनभिगृहीतमिथ्यादृष्टिर्वेत्यादि पूर्वमवधार्यैवोप-
विहीन होता है । जिस प्रकार मेघकी धारा जलमें और स्थलमें समान-
रूपसे बरसती है, उसे यह पक्षपात नहीं होता कि मुझे यहां बरसना
चाहिये अथवा यहां नहीं बरसना चाहिये, इस प्रकारकी निरपेक्ष वृत्तिसे
ही वह एकरूपसे मेघधारा बरसती है । इसी प्रकार भगवानके उपदेशमें
भी भेदभावकी वृत्ति नहीं होती कि 'यह पुण्यात्मा है अतः इसके लिये
मेरा यह उपदेश है, और यह पापी है इसके लिये मेरा यह उपदेश
नहीं है ' । पुण्यात्मासे लगाकर पापात्मा तक, और धनीसे लगा कर
काष्ठहार—लकड़हारे तक, तथा राजासे लगा कर रंक तक सबके लिये
प्रभुका उपदेश एक रससे सना हुआ होता है फिर भी उपदेशकका
कर्त्तव्य है कि वह उस उपदेशको द्रव्य क्षेत्र काल और भावके अनुसार
श्रोताओं तक पहुंचावे । यह उपदेशककी ही कुशलता है । अन्यथा वह
उस उपदेशसे अपने स्वयंकी हानि करनेवाला हो जाता है । जैसे राज-
सभामें बैठ कर धर्मोपदेश देनेवाला उपदेष्टा पहिले इस बातका अपने
मनमें निर्णय कर लेवे कि यह राजा अभिगृहीतमिथ्यादृष्टि है या अन-
भिगृहीत मिथ्यादृष्टि है ? फिर अपने उपदेशका प्रवाह चलावे । बिना

છે. જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમાં અને સ્થળમાં સમાન રૂપથી વરસે છે તેને
એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આંહી જ વરસવું અને ત્યાં વરસવું નહિ. એવા
પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે. તેવા પ્રકારે ભગવાનના
ઉપદેશમાં પણ ભેદભાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ' આ પુણ્યાત્મા છે માટે તેના માટે
મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે માટે તેના માટે મારો આ ઉપદેશ નથી.'
પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઠીયારા સુધી, રાજથી
રંક સુધી દરેકને માટે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી સરખો જ હોય છે, તો પણ
ઉપદેશકનું કર્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-
ઓને સંભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે. અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની
જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે. જેવી રીતે રાજસભામાં બેઠીને ધર્મોપદેશ
દેનાર ઉપદેશક પહેલાં એ વાતનો પોતાના મનમાં નિર્ણય કરી લે કે આ રાજા
અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અગર અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના

દિશેત્, અન્યથોપદેશે વહ્વપાયસમ્ભવાત્, તદેવાહ—અપિ ચેત્યાદિ, અનાદ્રિયમાણઃ= અત્રમન્યમાનો ભૂપાદિઃ, ઉપદેશકત્રિહિતનિન્દઃ સન્ હન્યાદપિ=સદુપદેશકં નાશયેદપિ, ‘અપિ’ સમ્ભાવને, ‘ચ’-શબ્દાદન્યદપિ દ્વન્ડ-કશાતાડનાદિકમપિ કુર્યાત્,

“દશસૂનાસમશ્ચક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ॥

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥”

ઇત્યાદિનિન્દાસૂચિકામરુન્તુદાં વાચમભિદધતમુપદેષ્ટારં પ્રતિ રાજા—‘એપ મુનિઃ સર્વધર્મવાહ્યો રાજધર્માનભિજ્ઞો નીતિધર્મમપિ ન જાનાતિ, મોક્ષધર્મસ્તાવદ્દૂરાદ-પેતઃ’ इत्येवं ब्रुवन् क्रुध्यमानो यष्टिमुष्टिभिस्ताडयन् ततो निःसारयन् तत्र रुन्धन् वस्त्रादिकं लुण्ठयन् चर्मादिच्छेदं कारयन् प्राणानप्यपहरेदतस्तादृशं नोपदिशे-दित्याशयः ॥ सू० ८ ॥

વિચારે જો ઉપદેશ દિયા જાયગા ઉસમેં અનેક કષ્ટોંકા ઉસે સામના કરના પડેગા । ઉપદેશમેં યદિ કિસી ખી પ્રકારસે રાજાકી શાનકે વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ ઉસસે નિકલ જાતા હૈ, અથવા રાજધર્મકે પ્રતિપાદનમેં કોઈ એસી વાત આ જાતી હૈ જો ઉસકી પ્રતિષ્ઠાકે વિરુદ્ધ પડતી હો, તો ઇસસે રાજા અપના અપમાન સમજીકર ઉસ ઉપદેષ્ટાકા પ્રાણઘાત તક કર દેતા હૈ । યદિ એસા ન ખી કરે તો વહ ઉસે દ્વન્ડવિધાન કરતા હૈ, કોડોંસે ખી પિટવાતા હૈ । ઇસ શ્લોકમેં રાજવિરુદ્ધ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“દશસૂનાસમશ્ચક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ।

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥”

ઇસ પ્રકાર રાજનિન્દાસૂચક ઉપદેશ યદિ ઉપદેષ્ટા રાજસભામેં બેઠ કર કરે તો ઇસસે રાજાકે હૃદયમેં અપાર કષ્ટ હોગા । એસે ઉપદેશસે

ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે. વગર વિચારે જે ઉપદેશ આપવા માંડશે તો તેમાં તેને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડશે. ઉપદેશમાં કદાચ કોઈ પણ પ્રકારથી રાજાની શાનની વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ તેનાથી નિકળી જાય, અથવા રાજધર્મ પ્રતિ-પાદનમાં કોઈ એવી વાત આવી જાય જે તેની પ્રતિષ્ઠાની વિરુદ્ધ પડે છે તો તેનાથી રાજા પોતાનું અપમાન સમજી તેવા ઉપદેશકનો પ્રાણઘાત પણ કરી નાંખે છે. કદાચ એવું ન પણ કરે તો તેને ઢાંડ કરે છે, ડોરડાથી માર મારે છે. આ શ્લોકમાં રાજવિરુદ્ધ વાત પ્રગટ કરવામાં આવી છે. જેમ—

‘દશસૂનાસમશ્ચક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ।

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપ ॥ ૧ ॥”

આ પ્રકાર રાજનિન્દાસૂચક ઉપદેશ કદાચ ઉપદેશક રાજસભામાં બેસીને કરે તેથી રાજાના હૃદયમાં અપાર કષ્ટ થશે. તેવા ઉપદેશથી મુનિ રાજાના ક્રોધનો

શ્રોતારં પરીક્ષ્યોપદેષ્ટા હિંસાદિના નોપલિપ્તો ભવતીતિ દર્શયતિ—‘અથં’
 इत्यादि ।

મૂલમ—અથં પિ જાણ સેયંતિ નસ્થિ, કેયં પુરિસેકં ચ નણ,
 एस वीरे पसंसिए जे बद्धे परिमोयए, उड्डं अहं तिरियं दिसासु, से
 सबओ सबपरिन्नाचारी, न लिप्पइ छणपण वीरे, से मेहावी
 जे अणुग्घायणखेयन्ने, जे य बंधपमुक्खमन्नेसी कुसले पुण नो
 बद्धे नो मुक्के ॥ सू० ९ ॥

મુનિ રાજાકા કોપભાજન હો જાયગા । રાજા યહ સમઝ લેગા કિ યહ
 મુનિ સર્વધર્મસે વાહ્ય હૈ, રાજધર્મ કયા હૈ? હસે મી યહ નહીં
 જાનતા હૈ । અરે ! જબ યહ નીતિધર્મ તક નહીં જાનતા હૈ તો મોક્ષધર્મ
 કી વાત હી કયા કહની ? યહ બિલકુલ જડ-અબુધ હૈ । એસે વ્યક્તિયોં કે
 અસ્તિત્વકી કયા આવશ્યકતા હૈ? હસ પ્રકાર રાજા દ્વારા ઉપેક્ષિત બન યષ્ટિ-
 મુષ્ટિ આદિજન્ય અનેક કષ્ટોંકો ભોગતા હુઆ વહ મુનિ વહાંસે નિકાલ
 દિયા જાતા હૈ; અથવા કારાગારમં બંદ કર દિયા જાતા હૈ । ડસકે વસ્ત્રાદિક
 મી છીન લિયે જાતે હૈ । શરીરકા છેદન કર ડસકે પ્રાણ તક મી લે
 લિયે જાતે હૈ । હસલિયે ઉપદેષ્ટાકા યહ સર્વપ્રથમ કર્ત્તવ્ય હૈ કિ વહ
 દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકા અચ્છી તરહ વિચાર કર અપને ઉપદેશકા
 પ્રવાહ બહાવે । એસા ઉપદેશ ન કરે કિ જિસસે સ્વયંકો અનેક કષ્ટોંકા
 યા પ્રાણોંકે વિનાશકા સામના કરના પડે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

લોગ ધનશે. રાજા એવું સમજી લેશે કે આ મુનિ સર્વ ધર્મથી વાહ્ય છે,
 રાજધર્મ શું છે? તે પણ આ જાણતો નથી. અરે! જ્યારે આ નીતિધર્મ સુધી
 પણ જાણતો નથી તો મોક્ષધર્મની વાત જ શું કરવી? આ બિલકુલ જડ-
 અબુધ છે, આવી વ્યક્તિઓના અસ્તિત્વની શું આવશ્યકતા છે? આવા પ્રકારે
 રાજાદ્વારા ઉપેક્ષિત બની યષ્ટિ-મુષ્ટિ આદિ જન્ય અનેક કષ્ટોને લોગવતાં તે
 મુનિને ત્યાંથી હાંકી કાઢે છે, અગર કારાગારમાં મોકલી દેવામાં આવે છે. તેના
 વસ્ત્રો પણ આંચકી લેવામાં આવે છે. તેના શરીરનું છેદન કરી તેનો પ્રાણ પણ
 લઈ લેવામાં આવે છે. માટે જ ઉપદેષ્ટાનું એ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય છે કે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર
 કાળ અને લાવનો સારી રીતે વિચાર કરી પોતાના ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે.
 એવો ઉપદેશ ન આપે કે જેનાથી પોતાને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે
 અને પ્રાણ પણ ગુમાવે ॥ સૂ ૮ ॥

છાયા —અત્રાપિ જાનીદિ શ્રેય ઇતિ નાસ્તિ, કોડ્યં પુરુષઃ કંચ નતઃ, એપ વીરઃ પ્રશંસિતઃ, યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, ઊર્ધ્વમધસ્તિર્યક્ષુ દિશાસુ, સ સર્વતઃ સર્વપરિજ્ઞાચારી, ન લિપ્યતે ક્ષણપદેન વીરઃ, સ મેધાવી યઃ અણોદ્ઘાતનચેદજ્ઞઃ, યશ્ચ વન્ધ-પ્રમોક્ષાન્વેપી કુશલઃ પુનર્નો વદ્ધો નો મુક્તઃ ॥ મૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘અત્રાપી’—ત્યાદિ, અત્ર=ધર્મકથાયાં શ્રેયઃ=કલ્યાણમ્ ઇતિ અપિ=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન વિદ્યતે પ્રત્યુત કર્મવન્ધો ભવતીતિ જાનીદિ=વુદ્ધ્યસ્વ ત્વમિતિ શેષઃ, ઇહૈવ તાવન્નાનિષ્ઠમપિ ચ પરત્રાપિ તત્પ્રસજ્યેતેત્યર્થઃ ।

જો ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓનો સમજાવતો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકે અનુસાર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કિસીકે મી કોપકા અથવા દળડાદિકકા પાત્ર નહીં હોતા હૈ, યહ સમજાતે હૈ—“एतथंपि जाण ” ઇત્યાદિ ।

વક્તાકો યહ એકાન્તરૂપસે માનના ચાહિયે કિ ધર્મકથા કરનેમેં નિશ્ચયસે કલ્યાણ હી હોતા હૈ, પરન્તુ વિના દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવકા ધ્યાન રખે ધર્મકથા કરે તો વહ કર્મવન્ધકા કારણ મી હો જાતી હૈ । વીતરાગ-ભાવસે જહાં જય-પરાજય હોનેકા કુછ મી ચ્યાલ નહીં હૈ, સિર્ફ; યે પ્રાણી કૈસે સદ્ધર્મકા આશ્રય કરે ? હસી સદ્મિપ્રાયસે જો કથા કી જાતી હૈ, અથવા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ વહી ધર્મકથા હૈ । દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકકા વિચાર કિયે વિના હી જો ઉપદેશ કિયા જાયગા ડસસે સંભવતઃ ઉપદેષ્ટા કો અનેક અનર્થોકા સામના મી કરના પડેગા, ઇસલિયે ધર્મકથાકે કરનેમેં શ્રેયકા ધ્યાન રખના ચાહિયે, ક્યોં કિ અપની પ્રકૃતિકે અનુસાર જીવોં કો

જે ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને સમજાવે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ અનુસાર ઉપદેશ કરે છે તે કોઈના પણ કોઈના તેમજ દંડાદિકના પાત્ર થતા નથી તે સમજાવે છે—“एतथंपि जाण ” ઇત્યાદિ

વક્તાએ એકાંત રૂપથી માનવું જોઈએ કે ધર્મકથા કરવામાં નિશ્ચય કલ્યાણ જ થાય છે પરંતુ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવનો ખ્યાલ રાખ્યા વિના ધર્મકથા કરે તો કર્મબંધન કારણ પણ બની જાય છે

વીતરાગ ભાવથી જ્યાં જય પરાજય હોવાનો જરા પણ ખ્યાલ નથી, ફક્ત આ પ્રાણી કેવી રીતે સદ્ધર્મનો આશ્રય કરે ? એવા પ્રકારના સદ્ અભિપ્રાયથી જે કથા કરવામાં આવે છે, અથવા ઉપદેશ આપવામાં આવે છે તે જ ધર્મકથા છે. દ્રવ્યક્ષેત્રાદિકનો વિચાર કર્યા વિના જે ઉપદેશ આપવામાં આવે તો વિના સંદેહ ઉપદેષ્ટાને અનેક અનર્થોનો સામનો જ કરવો પડે, માટે ધર્મકથા કરવામાં શ્રેયનું ધ્યાન રાખવું જોઈએ. કારણ કે પોતાની પ્રકૃતિ અનુસાર પોતાને જે જે

યદ્વા—અત્રાપિ યદ્યદ્વિધિજલ્પનં હિંસકોડ્યં રાજેત્યાલોચ્ય પશુવધાદિરૂપ હિં-
સાધર્મમણ્ડનાત્મકં ચાર્વાકાદિમતસ્થાપનં ચ, તત્ર સર્વત્રાપિ શ્રેયો નાસ્તિ શાસ્ત્રપ્રતિ-
પિદ્ધત્વાત્ । તદ્દિ કથમુપદિશેદિત્યાહ—‘ કોડ્ય ’—મિત્યાદિ, શ્રોતારં સમીક્ષ્યોપ-
દેષ્ટા ચેતસિ ચિન્તયેત્, કોડ્યં પુરુષઃ કં ચાયં ધર્મં પરિપૃચ્છતિ, સોડ્યં કઃ કિ
પુણ્યવાન્ ઉત તુચ્છઃ ? । યદ્વા—અયં વક્રો વા જડો વા વક્રજડો વા પુરુષઃ, કં
ચ=દેવવિશેષં નતઃ=પ્રણતઃ કં દેવમુપાસ્તે વા ? ।

જો હિતાવહ—ઈષ્ટ હોતા હૈ વહ અન્ય જીવોંકે લિયે મી હિતાવહ હોગા,
યહ નહીં માના જા સકતા । સમ્યગ્દષ્ટિ અથવા મન્યપુરુષકે લિયે જિસ
ઉપદેશસે આત્મકલ્યાણ કરનેકી ઓર સતર્કતા જાગૃત હોતી હૈ ઉસી
ઉપદેશસે મિથ્યાદષ્ટિમેં સતર્કતા જાગૃત ન હોકર પ્રત્યુત કલુષતા જાગૃત
હો સકતી હૈ ।

અથવા—“ યહ રાજા હિંસક હૈ ” એસા વિચાર કર પશુવધાદિરૂપ
હિંસાધર્મકા મણ્ડન, તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિક મતકા સ્થાપનરૂપ કથન
કરના મી ઉપદેશકકે લિયે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । ઇસસે અનેક
અનર્થોંકી પરમ્પરા વઢતી હૈ । તથા ઇસ પ્રકારકી માન્યતા મી શાસ્ત્રપ્રતિ-
પિદ્ધ હૈ । અતઃ દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતાકો દવાકર ઉસકી
હાં મેં હાં મિલા કર જો ઉપદેશક ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કલ્યાણકારી
માર્ગ નહીં હૈ । ઇસ સમસ્ત કથનસે યે દો વાતેં ફલિતાર્થ હોતી હૈ—એક તો
અવસર દેખે વિના ધર્મકથા કરનેમેં એકાન્તરૂપસે કલ્યાણ નહીં હૈ તથા
દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતા બનાકર ઉપદેશ દેના, યહ મી

હિતાવહ—ઈષ્ટ થાય છે તે તે અન્ય જીવો માટે પણ હિતાવહ થશે તેમ માની શકાતું
નથી. સમ્યગ્દષ્ટિ અથવા ભવ્ય પુરુષો માટે જે ઉપદેશથી આત્મકલ્યાણ કરવાની
તરફ સતર્કતા જાગૃત થાય છે તે જ ઉપદેશથી મિથ્યાદષ્ટિમાં સતર્કતા જાગૃત
થતી નથી જલ્દે કલુષતા જાગૃત થાય છે, અથવા “ રાજા હિંસક છે ” એવો
વિચાર કરી પશુવધાદિરૂપ હિંસાધર્મનું મંડન તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિકમતનું
સ્થાપન રૂપ કથન કરવું તે પણ ઉપદેશક માટે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નથી. તેનાથી
અનેક અનર્થોની પરંપરા વધે છે. તથા આ પ્રકારની માન્યતા પણ શાસ્ત્રપ્રતિ-
પિદ્ધ છે, માટે બીજાઓની માન્યતાનુસાર પોતાની માન્યતાઓને ઢળાવીને તેની
હા માં હા મેળવી જે ઉપદેશક ઉપદેશ કરે છે તે કલ્યાણકારી માર્ગ નથી.
આ સમસ્ત કથનથી એ બે વાતો સિદ્ધ થાય છે કે—એક તો અવસર દેખ્યા
વિના ધર્મકથા કરવામાં એકાન્તરૂપથી કલ્યાણ નથી તથા, બીજાઓની માન્યતા-
નુસાર પોતાની માન્યતા બનાવીને ઉપદેશ આપવો એ પણ કલ્યાણકારી માર્ગ

યદ્વા-કં=કતરં ધર્મ=સાદ્ધ્યં વૌદ્ધમન્યં વા નતઃ=પ્રતિપન્નઃ, ઉપલક્ષણાત્, કિમયં મિથ્યાદૃષ્ટિરુત સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ કેન વાઽઽશયેનાહં પૃષ્ઠઃ?, ઇત્યાદિકમપિ સમાલોચ્ય ધર્મમુપદિશેદિત્યર્થઃ, ચશબ્દાદેગકાલાદીનાં સમાલોચના કર્તવ્યા । યથૈવં વિચાર્યોપદિશતિ, એષઃ=ઉપદેષ્ટા વાદિમાનમર્દનપૂર્વકપ્રવચનપરિમण्डन-સમર્થઃ, પ્રગંસિતઃ=ગણધરાદિભિઃ શ્લઘિતઃ, યો વદ્ધાન્=અષ્ટવિધપાશનિગઢિતાન્

કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । યદિ એસા હૈ તો ઉપદેશ કૈસા હોના ચાહિયે ? હસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ સર્વપ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓંકો ભલી પ્રકાર દેશ કર ચિત્તમેં યહ વિચાર કરે કિ જો યહ મુદ્ધસે ધર્મકો પૂછતા હૈ, વહ પુણ્યાત્મા હૈ યા તુચ્છાત્મા હૈ? અથવા વક્ર હૈ યા જડ હૈ? અથવા વક્ર-જડ દોનોં સ્વભાવવાલા હૈ? કિસ દેવકા ઉપાસક હૈ? કિસ મતકા અનુયાયી હૈ—સાંખ્યમતકા યા વૌદ્ધધર્મકા? । ઉપલક્ષણસે યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ અથવા સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ? યહ ભી જાન લેના ચાહિયે । યહ જો મુદ્ધસે ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછતા હૈ સો કિસ અભિપ્રાયસે પૂછતા હૈ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશકકો ધર્મકા ઉપદેશ દેના ચાહિયે । સાથમેં દેશકાલાદિકકા ભી વિચાર કરના આવશ્યક હૈ । જો ઉપદેશક હસ પ્રકારકી સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ વાદિયોંકે માનકા મર્દન કરતા હુઆ અપને સિદ્ધાન્તકી સ્થાપના કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । હસ પ્રકાર ગણધરાદિકોંસે પ્રગંસિત વહ ઉપદેશક આઠ પ્રકારકે કર્મરૂપી પાશસે જકડે હુએ પ્રાણિયોંકો અપને ધર્મોપદેશસે

નથી હવે આવું છે તો ઉપદેશ કેવો હોવો નેઈએ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—સર્વ પ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને ભલી પ્રકાર દેખીને ચિત્તમાં એ વિચાર કરે કે જે આ મને ધર્મ વિષે પૂછે છે તે પુણ્યાત્મા છે યા તુચ્છાત્મા છે? અથવા વક્ર છે યા જડ છે? અગર વક્ર અને જડ બન્ને સ્વભાવવાળા છે? કયા દેવના ઉપાસક છે? કયા મતના અનુયાયી છે—સાંખ્યમતના યા બૌદ્ધધર્મના? ઉપલક્ષણથી મિથ્યાદૃષ્ટિ છે યા સમ્યગ્દૃષ્ટિ? એ પણ બાણી લેવું નેઈએ આ જે મને ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછે છે તે કયા અભિપ્રાયથી પૂછે છે? ઇત્યાદિ સર્વ વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશકોએ ધર્મનો ઉપદેશ દેવો નેઈએ. સાથમાં દેશ-કાળાદિકનો પણ વિચાર કરવો આવશ્યક છે. જે ઉપદેશક આ પ્રકારની સમસ્ત વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશ આપે છે તે વાદિઓના માનનું મર્દન કરીને પોતાના સિદ્ધાંતની સ્થાપના કરવામાં સમર્થ થાય છે. આ પ્રકારે ગણધરાદિકોથી પ્રશસિત તે ઉપદેશક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપી પાશથી જકડાયેલાં પ્રાણીઓને પોતાના ધર્મ

પ્રાણિનો ધર્મોપદેશેન પરિમોચયતિ=સંસારકારાગારાન્નિકાશયતિ સ એવ ઊર્ધ્વમધ-
સ્તિર્યક્ષુ લોકેષુ સર્વતઃ=સર્વાસુ દિશાસુ દશસુ દિશ્વિત્યર્થઃ, સર્વપરિજ્ઞાચારી-સર્વા-
ચાસૌ પરિજ્ઞા સર્વપરિજ્ઞા તયા જ્ઞપ્ત્યાખ્યાનરૂપયા દ્વિવિધયાઽઽચરિતું શીલં યસ્ય
સ સર્વપરિજ્ઞાચારી-સમસ્તહેયોપાદેયકુશલઃ। અત્રાયં વિવેકઃ-જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વિવિધા-
છાદ્વસ્થિકી કૈવલિકી ચ, તત્ર છાદ્વસ્થિકી મતિશ્રુત્યવધિમનઃપર્યવભેદેન ચતુર્વિધા,
કૈવલિકી કેવલજ્ઞાનરૂપૈકૈવ, મૂલોત્તરગુણભેદેન પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાઽપિ દ્વિવિધા,
યદ્વા સર્વપરિજ્ઞાચારી યો વિધિકથનગુણાન્ જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વાઽવિધિકથનદોષાંશ્ચ
સંસારરૂપી કારાગારસે મુક્ત કર દેતા હૈ। એસા ઉપદેશક હી ઉર્ધ્વદિશા
અધોદિશા તથા ઇસ તિર્યગ્લોકમેં ઓર સમસ્ત દિશાઓમેં સર્વપરિજ્ઞા-
ચારી હોતા હૈ। સમસ્તપરિજ્ઞાકા નામ સર્વપરિજ્ઞા હૈ। સર્વપરિજ્ઞાસે જિસ
કા આચરણ કરનેકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી હૈ। પરિજ્ઞા
દો પ્રકારકી હૈ (૧) જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર (૨) પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા। ઇન દોનોં
પ્રકારકી પરિજ્ઞાસે વહ યુક્ત હોતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત હેય ઓર ઉપા-
દેયમેં વહ કુશલ હો જાતા હૈ। ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ-જ્ઞપરિજ્ઞા દો
પ્રકારકી હૈ-(૧) છદ્વસ્થ-સમ્બન્ધી ઓર (૨) કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી।
છદ્વસ્થ-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃ
પર્યવજ્ઞાનકે ભેદસે ચાર પ્રકારકી હૈ। કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા એક
કેવલજ્ઞાનરૂપ હી હૈ, ઉસકે ભેદ નહીં હૈ। પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા મી મૂલગુણ
ઓર ઉત્તરગુણકે ભેદસે દો પ્રકારકી હૈ। જો ઉપદેશક વિધિકે કથનકે
ગુણોં કો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાન કર અવિધિ કે કથનકે દોષોંકો પ્રત્યાખ્યાન-

ઉપદેશથી સંસારરૂપી કારાગારથી મુક્ત કરે છે. તેવા ઉપદેશક જ ઉર્ધ્વદિશા
અધોદિશા તથા આ તિર્યગ્લોકમાં અને સમસ્ત દિશાઓમાં સર્વ પરિજ્ઞાચારી
થાય છે સમસ્તપરિજ્ઞાનું નામ સર્વપરિજ્ઞા છે. સર્વપરિજ્ઞાથી જેનું આચરણ કરવાનો
સ્વભાવ છે તેનું નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી છે. પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) જ્ઞ-પરિજ્ઞા
અને (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, આ બંને પ્રકારની પરિજ્ઞાથી તે યુક્ત બને છે.
અર્થાત્ સમસ્ત હેય અને ઉપાદેયમાં તે કુશળ બની જાય છે. તેનો ભાવ એ છે
કે-જ્ઞપરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) છદ્વસ્થસંબંધી અને (૨) કેવળજ્ઞાની સંબંધી
છદ્વસ્થસંબંધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાનના
ભેદથી ચાર પ્રકારની છે. કેવળજ્ઞાનીસંબંધી પરિજ્ઞા એક કેવળજ્ઞાનરૂપ જ છે,
તેના ભેદ નથી. પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા પણ મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણના ભેદથી બે
પ્રકારની છે. જે ઉપદેશક વિધિના કથનના ગુણોને જ-પરિજ્ઞાથી જાણીને અને

પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતિ, અત એવ સર્વેતિ કથનં સંગતમ્ । એવંભૂતોઽસૌ
 કિમાસાદયતીત્યાહ-‘ ન લિપ્યત ’ ઇત્યાદિ, વીર:-પ્રત્યાત્મપ્રદેશધર્મપ્રભાવપ્રચાર-
 શક્તિસમ્પન્નઃ ક્ષણપદેન હિંસાસ્થાનેનાત્મસંયમવિરાધનારૂપેણ ન લિપ્યતે=નોપલિપ્તો
 ભવતિ આક્રોશનોદ્ધ્વંસનવધાદિનાઽઽત્મવિરાધકો જ્ઞાનાદિપશ્ચાચારાનાચરણેન
 પરિજ્ઞાસે છોડ દેતા હૈ વહ ઉપદેશક ભી સર્વપરિજ્ઞાચારી કહલાતા હૈ । હિસ
 અપેક્ષાસે પરિજ્ઞાકે સાથ ‘ સર્વ ’ યહ વિશેષણ સંગત વૈઠતા હૈ । હિસ
 પ્રકારકા ઉપદેશક કિ જો આત્માકે પ્રત્યેક પ્રદેશમેં ધર્મકા પ્રચાર કરને
 કી શક્તિસે સમ્પન્ન હૈ વહ હિંસાકે સ્થાનભૂત અપની આત્માકી વિરાધના
 સે તથા સંયમકી વિરાધનાસે કભી ભી ઉપલિપ્ત નહીં હોતા હૈ । તાત્પર્ય
 યહ કિ વહ ઉપદેશક-આક્રોશન, ઉદ્ધ્વંસન ઓર વધાદિકસે અપની
 આત્માકી વિરાધના કરનેવાલા નહીં હોતા હૈ, ઓર ન જ્ઞાનાચાર દર્શના-
 ચાર ઓર તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારકે આચારોંકે અનાચરણસે
 સંયમકા હી વિરાધક હોતા હૈ, ક્યોં કિ વહ હિન દોનોં પ્રકારકી વિરા-
 ધના કે કટુક ફલકો ખલી પ્રકાર જાનતા હૈ । હિસે યહ પૂર્ણ રૂપસે
 વિશ્વાસ હૈ કિ જો હિન દોનોં પ્રકારકી યા કિસી ભી એકપ્રકારકી વિરા-
 ધનાકા કરનેવાલા હોતા હૈ હિસે સંસારમેં હી ભ્રમણ કરના પડતા હૈ,
 કારણ કિ હિસ પ્રકારકી વિરાધનાસે જીવ અશુભ કર્મોંકા હી વંધ કરતા
 હૈ ઓર હિનકા ફલ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમેં ભ્રમણ કરના હૈ । હિસ સંસારકે

અવિધિના કથનના દોષોને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી છોડી આપે છે તે ઉપદેશક
 પણ સર્વપરિજ્ઞાચારી કહેવાય છે આ અપેક્ષાથી ‘ પરિજ્ઞા ’ ની સાથે ‘ સર્વ ’ આ
 વિશેષણ સંગત બેસે છે. આ પ્રકારના ઉપદેશક જે આત્માના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં
 ધર્મનો પ્રચાર કરવાની શક્તિથી સંપન્ન છે, તે હિંસાના સ્થાનભૂત પોતાના આત્માની
 વિરાધનાથી તથા સંયમની વિરાધનાથી કદિ પણ ઉપલિપ્ત થતા નથી. તાત્પર્ય
 એ છે કે તે ઉપદેશક-આક્રોશન ઉદ્ધ્વંસન અને વધાદિકથી પોતાના આત્માની
 વિરાધના કરવાવાળા થતા નથી, તેમજ જ્ઞાનાચાર, દર્શનાચાર અને તપઆચાર
 આદિ પાંચ પ્રકારના આચારોના અનાચરણથી સંયમના વિરાધક બનતા નથી,
 કારણ કે તે એ બંને પ્રકારની વિરાધનાના કટુ ફળને સારી રીતે જાણે છે તેને
 પૂર્ણ રીતે વિશ્વાસ છે કે જે આ બંને પ્રકારની અગર કોઈ પણ એક પ્રકારની
 વિરાધનાના કરવાવાળા હોય છે, તેને સંસારમાં જ ભ્રમણ કરવું પડે છે. કારણ
 કે આ પ્રકારની વિરાધનાથી છવ અશુભ કર્મોના જ બંધ કરે છે, અને તેનું ફળ
 ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ થાય છે, ‘ આ સંસારના કારણભૂત કર્મોના નાશ

સંયમવિરાધકો ન ભવતીત્યભિપ્રાયઃ । અન્યદપિ વીરકર્તવ્યમાહ—‘સ મેધાવી’-
ત્યાદિ, સઃ=મુનિઃ મેધાવી=વિદિતાત્મસંયમવિરાધનકટુકફલો યઃ અણોદ્ઘાતનચ્છેદજ્ઞઃ-
અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારં તદ્દર્શનં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન
ઘાતનમ્=અપનયનમ્ અણોદ્ઘાતનં, તસ્ય તત્ર વા ચ્છેદજ્ઞઃ=નિપુણઃ, યથ વન્ધપ્રમો-
ક્ષાન્વેષી-વન્ધસ્ય=પ્રકૃતિસ્થિત્યનુભાવપ્રદેશરૂપસ્ય પ્રમોક્ષઃ=પ્રકર્ષેણ મોક્ષસ્તદુપાયો
વા રત્નત્રયરૂપસ્તમન્વેષ્ટું=ગવેષયિતું શીલં યસ્ય સ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી, યોજ્ઞો-
દ્ઘાતનચ્છેદજ્ઞો યથ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી સ એવ મેધાવી ભવતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

કારણભૂત કર્મકો નાશ કરનેકે લિયે હી તો મૈને યહ મુનિવેષ ધારણ
કિયા હૈ । હસી અભિપ્રાયકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર—“અણુઘાયણચ્છેદ્યન્ને”
‘અણોદ્ઘાતનચ્છેદજ્ઞઃ’ હિસ પદસે કી હૈ—“અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિ-
ગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન ઘાતનમ્=
અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ચ્છેદજ્ઞઃ” હિતિ । અર્થાત્—જિસકે દ્વારા પ્રાણિ-
સમૂહ ચતુર્ગતિરૂપ હિસ સંસારમેં ભ્રમણ કરતા હૈ વહ અણ-કર્મ હૈ,
ઉસ કર્મકે વિનાશ કરનેમેં જો નિપુણ હૈ વહ અણોદ્ઘાતનચ્છેદજ્ઞ હૈ । જો
બંધકે નાશ કરનેકા અથવા ઉસકે નાશ કરનેકે ઉપાયોકે અન્વેષણ કરને
કા સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ સંસારકે કારણભૂત કર્મકે વિનાશ કરનેમેં
કુશલ હોતા હૈ ।

શાસ્ત્રમેં વન્ધકે ચાર ભેદ બતાલાયે ગયે હૈ—(૧) પ્રકૃતિવન્ધ, (૨)
સ્થિતિવન્ધ, (૩) અનુભાગવન્ધ, (૪) પ્રદેશવન્ધ । ઇનકા અત્યન્ત અભાવ
હોના વહ વન્ધપ્રમોક્ષ હૈ । અથવા ઇનકે અત્યન્ત અભાવ હોનેમેં કારણભૂત

કરવા માટે જ મેં મુનિપણાનો વેશ લીધો છે. આ અભિપ્રાયની પુષ્ટિ સૂત્રકાર
“અણુઘાયણચ્છેદ્યન્ને” અણોદ્ઘાતનચ્છેદજ્ઞઃ એ પદથી કરેલ છે. “અણતિ-
ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન
ઘાતનમ્=અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ચ્છેદજ્ઞઃ, હિતિ, અર્થાત્ જેના દ્વારા પ્રાણીસમૂહ
ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં ભ્રમણ કરે તે અણ=કર્મ છે. તે કર્મનો વિનાશ કરવામાં
જે નિપુણ છે તે અણોદ્ઘાતનચ્છેદજ્ઞ છે. જે બંધનો નાશ કરવાના, અથવા તેનો
નાશ કરવાના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે સંસારના
કારણભૂત કર્મનો વિનાશ કરવામાં કુશળ હોય છે.

શાસ્ત્રમાં બંધના ચાર ભેદ બતાવેલ છે. (૧) પ્રકૃતિબંધ (૨) સ્થિતિબંધ
(૩) અનુભાગબંધ, અને (૪) પ્રદેશબંધ તેનો અત્યંત અભાવ થયો તે બંધપ્રમોક્ષ
છે અથવા તેના અત્યંત અભાવ હોવાના કારણભૂત જે રત્નત્રયાદિક ઉપાય છે

નનુ ય એવ અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞઃ સ એવ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી ચેતિ પૌનરુક્ત્યં સ-
માપતિતમિતિ ચેન્ન—‘અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞઃ’ इत्यनेन मूलोत्तरप्रकृतिभेदविशिष्टस्य
योगनिमित्तेन प्राप्तस्य कषायस्थितिमतः कर्मणो बद्धस्पृष्टनिधत्तनिकाचितरूपवध्यमा-
मानावस्थायास्तद्दूरीकरणोपायस्य च सम्यग्ज्ञातेत्यस्यार्थस्याभिहितत्वाद् वन्धप्र-
मोक्षेत्यादिना च केवलं तद्दूरीकरणानुष्ठानस्याभिहितत्वात् ।

જો રત્નત્રયાદિક ઉપાય હૈં ઉન્હેં મી ‘વન્ધપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે ગ્રહણ કર લિયા
ગયા હૈં । વન્ધપ્રમોક્ષકા અથવા ઇનકે ઉપાયોંકા અન્વેષણ કરનેકા જિસકા
સ્વભાવ હૈં વહ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । જો અણોદ્ધાતનકુશલ ઔર વન્ધ-
પ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં વહી મેધાવી હોતા હૈં ।

શઙ્કા—જો અણોદ્ધાતનમેં કુશલ હૈં વહી તો વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં ।
ફિર ઇસ પ્રકારકે કથનસે તો દોનોં શબ્દોંકે અર્થોંમેં પરસ્પરમેં સમાનતા
આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા હૈં ।

ઉત્તર—યહ વાત નહીં હૈં—“અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞ” ઇસ શબ્દસે “મૂલ
ઔર ઉત્તરભેદ વિશિષ્ટ યોગકે નિમિત્તસે ગૃહીત ઔર કષાયસે સ્થિતિ-
યુક્ત, ંસે કર્મોંકી વદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત ઔર નિકાચિતરૂપ વધ્યમાન
અવસ્થાઓંકા ઔર કર્મોંકો દૂર કરનેવાલે ઉપાયોંકા વહ સમ્યગ્જ્ઞાતા
હૈં” યહ અર્થ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈં । ‘વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ ઇસ શબ્દ
સે સિર્ફ ઁનકો દૂર કરનેવાલે અનુષ્ઠાનકા પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈં ।

તેને પણ બંધપ્રમોક્ષ શબ્દથી શ્રુણુ કરવામાં આવેલ છે. બંધપ્રમોક્ષનું, અથવા
તેના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે.
જે અણોદ્ધાતનકુશળ અને બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે તે જ મેધાવી હોય છે.

શંકા—જે અણોદ્ધાતનમાં કુશળ છે તે જ બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે, એ
પ્રકારના કથનથી તો બન્ને શબ્દોના અર્થોમાં પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી
પુનરુક્તિ દોષનો પ્રસંગ આવે છે.

ઉત્તર—એ વાત નથી “અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞ” આ શબ્દથી “મૂલ અને
ઉત્તરભેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી ગૃહીત અને કષાયથી સ્થિતિયુક્ત એવા
કર્મોની બદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત અને નિકાચિતરૂપ વધ્યમાન અવસ્થાઓના, અને તેવા
કર્મોને દૂર કરવાવાળાં ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ
છે. તથા ‘વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ આ શબ્દથી દ્રક્ત તેને દૂર કરનાર અનુષ્ઠાનનું
પ્રતિપાદન કરેલ છે.

નનુ યથૈતાદૃશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે—કેવલિનોઽળોદ્ધાતેત્યાદિ-વિશેષણાસમ્ભવાચ્છદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિ કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ—‘કુશલ’ इत्यादि । कुशलः=केवली तीर्थङ्करः सामान्यकेवली वा पुनः न वद्धः घातिकर्मणो नाशात्, न मुक्तः=भवोपग्राहिकर्मसत्त्वात् । बाह्याभ्यन्तरसावधानुष्ठानैश्च मुक्तः, भवोपग्राहिकर्मणः सत्त्वेन वद्धोऽपि ।

यद्वा छद्मस्थ एव कुशलपदेनोच्यते, तेन कुशलः=प्राप्तरत्नत्रयः, न वद्धः=अनन्तानुबन्ध्यादिकपायानलोपशमादिसत्त्वात्, न मुक्तः=इदानीमपि तत्कर्मसत्त्वात्, अज्ञानाविरतिमिथ्यात्वैश्च मुक्तः, प्रशस्तैस्तु चारित्रितपोविनयादिभिर्वा न मुक्तः ॥सू० ९॥

શક્તા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “અળોદ્ધાતનચેદક્ષ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભવિત નહીં હોતે હૈં, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । હાં “કુશલ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે ચાહે સામાન્યકેવલી હોં ચાહે તીર્થઙ્કર હોં । વે ન તો વદ્ધ હૈં; ક્યોં કિ ઉનકે ઘાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવોપગ્રાહી કર્મોંકા ઉનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવધ કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો બી ભવોપગ્રાહી કર્મોંકી સત્તા હોનેસે વે વદ્ધ બી હૈં ।

અથવા—‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્ન-ત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ વદ્ધ નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઇસકે અનન્તાનુબન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શંકા—જે એવા છે તે કોણ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમા “અળોદ્ધાતનચેદક્ષઃ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સંભવિત થતા નથી. આ બંને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. હા “કુશલ” આ શબ્દથી કેવળીનું ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થઙ્કર હોય. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ઘાતી કર્મોનો અભાવ થયેલ છે, અને મુક્ત પણ નથી. કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોના તેને સદ્ભાવ છે. જે કે બાહ્ય અને આભ્યંતર સાવધ કર્મોથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી કર્મોની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે.

અથવા “કુશલ” આ પદથી છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત કરેલ છે તે કુશલ છે. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનન્તાનુબન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિનું ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે. મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ

યથૈતાદૃશઃ કેવલી છદ્મસ્થો વા સ યદનુષ્ઠિતવાન્ યચ્ચાનુતિષ્ઠતિ વા તદ-
ન્યેનાપિ સાધુનાઽનુષ્ઠેયમિતિ દર્શયતિ—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે જં ચ આરભે જં ચ નારભે , અણારઘ્નં ચ ન
આરભે છળં છળં પરિણાય લોકસન્નં ચ સઠ્વસો ॥ સૂ. ૧૦ ॥

છાયા—સ યચ્ચારભતે યચ્ચ નારભતે, અનારઘ્યં ચ નારભતે ક્ષણં ક્ષણં
પરિજ્ઞાય લોકસંજ્ઞાં ચ સઠ્વસઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—‘ સ ય ’-દિત્યાદિ, સઃ=તીર્થઢ્ઢરઃ સામાન્યકેવલી પ્રાપ્તરત્નત્રયો મુનિર્વા
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્માપનયનાય યત્કર્મ તપઃસંયમવિનયાદિકં ચ આરભતે=વિદધાતિ
ઘટતે=પરાક્રમતે, યતતે વા, યચ્ચ તદ્વિપરીતં સંસારહેતું મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિકં

મુક્ત ઇસલિયે નહીં હૈ કિ ઇસ સમય મી ઉસકે ઉસ ઉસ કર્મકા સઢ્ઢાવ
હૈ । અજ્ઞાન, અચિરતિ ઓર મિથ્યાત્વ, ઇનસે વહ મુક્ત-રહિત હૈ; પરન્તુ
પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ ઓર વિનયાદિસે મુક્ત-રહિત નહીં હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

ઇસ પ્રકારકે ચાહે કેવલી હોં યા છદ્મસ્થ, પરન્તુ ઉન્હોને જિસકા
આચરણ કિયા ઓર જો આચરણ કર રહે હૈં વહ અન્ય સાધુકો મી
કરના ચાહિયે, ઇસ વાતકો કહતે હૈં—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

તીર્થઢ્ઢર સામાન્યકેવલી અથવા રત્નત્રયકે ધારી મુનિ, યે “ સે ”
ઇસ શબ્દસે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । ઇન્હોને જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંકે
નાશ કરનેકે લિયે જિન તપ સંયમ ઓર વિનયાદિકોંકા અનુષ્ઠાન-
પાલન કિયા હૈ, ઇનકે પાલન કરનેમં જો પરાક્રમ દિઘલાયા હૈ, તથા
ઇનકી આરાધના કરનેમં જો પ્રયત્ન કિયે હૈં, ઓર ઇનસે વિપરીત સંસાર

સમયે પણ તેઓને તે તે કર્મનો સઢ્ઢાવ છે અજ્ઞાન, અવિરતિ અને મિથ્યાત્વ,
તેનાથી તે મુક્ત-રહિત છે પરંતુ પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ અને વિનયાદિથી મુક્ત-
રહિત નથી. ॥ સૂ. ૯ ॥

આવા પ્રકારના ભલે કેવળી હોય કે છદ્મસ્થ પરંતુ તેઓએ જેનું આચ-
રણ કર્યું અને જે આચરણ કરે છે તે બીજા સાધુઓએ પણ કરવું જોઈએ.
આ વાત કહે છે—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ

તીર્થઢ્ઢર, સામાન્યકેવળી અથવા રત્નત્રયધારી મુનિ, એ “ સે ” શબ્દથી
બ્રહ્મણ કરવામાં આવેલ છે. તેઓએ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોના નાશ કરવા
માટે જે તપ સંયમ અને વિનયાદિનું અનુષ્ઠાન-પાલન કરેલ છે, તેનું
પાલન કરવામાં જે પરાક્રમ બતાવેલ છે, તથા તેની આરાધના કરવામાં જે પ્રયત્ન
કરેલ છે, અને તેનાથી વિપરીત સંસારના કારણબુદ્ધ મિથ્યાત્વ તેમજ અવિરતિ

પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાષ્ટાદશપાપસ્થાનાનિ ચ નારમ્ભતે=ન કરોતિ ન ઘટતે ન યતતે ન પરાક્રમતે વા । તદ્વિપરીતમાચરતીત્યર્થોઽપિ । સંયતૈઃ પશ્ચમહાવ્રતપાલનં વિધેયં, સંસારકારણં મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિકં ચ નાસેવનીયમિત્યભિપ્રાયઃ । તદેવાહ—‘અનારબ્ધ’-મિત્યાદિ, અનારબ્ધં કેવલિભિઃ પ્રાપ્તરત્નત્રયૈશ્છદ્મસ્થૈર્વા અનારબ્ધમ્=અનાચીર્ણં ચ દ્વિપશ્ચાશત્પકારં નારમ્ભતે=ન સેવેત, ચ શબ્દાદ્યદારબ્ધં તત્કુર્યાદિત્યર્થોઽપિ । અનાચરણીયમેવાહ—‘ક્ષણ’-મિત્યાદિ, ક્ષણં ક્ષણં, ક્ષણનં ક્ષણઃ=હિંસનં, કાર્યકારણયોરભેદાદ્ યેન કર્મણા કારણભૂતેન હિંસા કાર્યરૂપા સમુત્પદ્યતે તત્કર્મ ક્ષણઃ, તમ્,

કે કારણભૂત મિથ્યાત્વ એવં અવિરતિ આદિ તથા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ અઠારહ (૧૮) પાપસ્થાનોં કા જિસ પ્રકારસે હન્હોને પરિત્યાગ કિયા હૈ, ઉનકે છોડનેમેં જો અપની શક્તિ પ્રકટ કી હૈ, ઓર જિસ પ્રકારકા પ્રયત્ન કિયા હૈ, તથા હન અવિરતિ આદિકોંસે વિપરીત અપની પ્રવૃત્તિ વનાઈ હૈ, સંયતોંકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે ભી પાંચ મહાવ્રતોંકા હસી લગનકે સાથ પાલન કરેં, ઓર સંસારકે કારણ-મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિ-કા પરિત્યાગ કરેં, સ્વપ્નમેં ભી હનકા સેવન ન કરેં । કેવલિયોંને અથવા રત્નત્રયકો પ્રાપ્ત હુએ છદ્મસ્થ મુનિયોંને જિનકા સેવન નહીં કિયા, અર્થાત્ (૫૨) પ્રકારકે જિન અનાચીર્ણોં-અનાચારોં-કા અનુષ્ઠાન નહીં કિયા ઉનકા સંયતિ કમી ભી સેવન ન કરે ।

સૂત્રમેં આયે હુએ “ ચ ” શબ્દસે હસ પ્રકાર અર્થ હોતા હૈ કિ જો ઉન્હોને પાલન કિયા હૈ વહી વહ પાલન કરે । ઉન્હોને ક્યા આચરણ નહીં કિયા ? હસકો પ્રકટ કરતે હેં—‘ ક્ષણં ક્ષણં ’ ઇત્યાદિ । ‘ક્ષણ’ શબ્દકા અર્થ હિંસા હૈ । કાર્ય ઓર કારણમેં અભેદ સમ્બન્ધકી વિવક્ષાસે કારણભૂત

આદિ તથા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ અઠાર (૧૮) પાપસ્થાનોના જે પ્રકારે તેણે પરિત્યાગ કરેલ છે, તે છોડવામાં જે પોતાની શક્તિ પ્રગટ કરેલ છે, અને જે પ્રકારનો પ્રયત્ન કરેલ છે, તથા આ અવિરતિ આદિથી વિપરીત પોતાની પ્રવૃત્તિ બનાવી છે. સંયતોનું કર્તવ્ય છે કે તે પણ પાંચ મહાવ્રતોનું તેવી ભાવનાથી પાલન કરે અને સંસારનાં કારણ મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિનો પરિત્યાગ કરે. સ્વપ્નમાં પણ તેનું સેવન ન કરે. કેવળીઓએ, અથવા રત્નત્રયપ્રાપ્ત છદ્મસ્થ મુનિઓએ જેનું સેવન નથી કર્યું અર્થાત્ બાવન પ્રકારના જે અનાચારોનું અનુષ્ઠાન નથી કર્યું તેનું કોઈ પણ સંયતી સેવન ન કરે.

સૂત્રમાં આવેલાં “ ચ ” શબ્દથી એ પ્રકારે અર્થ થાય છે કે જે તેઓએ પાલન કરેલ છે તે જ તે પાલન કરે. તેઓએ શું આચરણ નથી કર્યું ? તે પ્રગટ કરે છે—‘ ક્ષણં ક્ષણં ’ ઇત્યાદિ. ‘ક્ષણ’ શબ્દનો અર્થ હિંસા છે. કાર્ય અને કારણમાં અભેદસંબંધની વિવક્ષાથી કારણભૂત કર્મદ્વારા જે હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન થાય છે

તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણં- ક્ષણં, હિંસાજનકં સકલં કર્મેત્યર્થઃ, પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વાં પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહૃત્ય ચ । યદ્વા—ક્ષણઃ સંયમાચારાવસરઃ, તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણઃ ક્ષણસ્તં પરિજ્ઞાય જ્ઞપરિજ્ઞયા વિદિત્તા, આસેવનપરિજ્ઞયા ચાઽસેવ્ય વિચરેત્ । અપિ ચ લોકસંજ્ઞાં ચ લોકસ્ય=અસંયતલોકસ્ય સંજ્ઞા=સંજ્ઞાનં શબ્દાદિવિષયાસદ્ગજન્ય- સુખસ્પૃહા પરિગ્રહાદિસંજ્ઞા વા, તાં સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ યોગત્રિકકરણત્રિકેણ પરિજ્ઞાય પરિહૃત્ય, યદ્વા—ચશબ્દાદાત્મોપમ્યેન ક્ષણનં ન વિદુધ્યાત્ “ જહ મમ ણ પિયં દુઃખં જાણિય એવેવ સન્વજીવાણં ” ઇત્યાદિવચનાત્ । સવથા પ્રાણાતિપાતાદૌ ન પ્રવર્તેત

જિસ કર્મકે દ્વારા હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઉસ કર્મકા નામ ક્ષણ હૈં । યહાં પર વીપ્સા મેં ‘ ક્ષણં ક્ષણં ’ યહ દ્વિરુક્તિ હૈં । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈં કિં હિંસાત્મક સકલકર્મોં કો સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઇનકા પરિત્યાગ કર વિચરણ કરે ।

અથવા-સંયમકે આચરણ કરનેકે પ્રત્યેક અવસરકો ભી સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઓર આસેવનપરિજ્ઞાસે હસકા સેવન કરે ।

તથા લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે પરિત્યાગ કરે । અસંયત લોકોંકો શબ્દાદિક વિષયોંકે સમ્બન્ધસે ઉત્પન્ન સુખકી જો ચાહના હોતી હૈં ઉસકા નામ લોકસંજ્ઞા હૈં । અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાકા નામ ભી લોકસંજ્ઞા હૈં । સંયમી હસ લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે અર્થાત્ ત્રીન કરણ ત્રીન યોગસે ત્યાગ કરે ।

“ લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ ” યહાં પર જો “ ચ ” આયા હૈં ઉસસે યહ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈં કિં સંયમી સમસ્ત જીવોંકો અપને સમાન સમજ્ઞ કર કમી ભી હિંસાદિક કાર્યોંમેં પ્રવૃત્તિ ન કરે, ક્યોંકિ આગમકા

તે કર્મનુ' નામ ક્ષણ છે. આહીં વીપ્સાથી ' ક્ષણ ક્ષણ ' આ દ્વિરુક્તિ છે એટલે હિંસાજનક સકલ કર્મેને સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેને પરિત્યાગ કરી વિચરણ કરે.

અથવા સંયમનું આચરણ કરવાના પ્રત્યેક અવસરને પણ સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણી અને આસેવનપરિજ્ઞાથી તેનું સેવન કરે.

તથા લોકસંજ્ઞાને સર્વ પ્રકારથી પરિત્યાગ કરે, અસંયત લોકોને શબ્દાદિક વિષયોના સંબંધથી ઉત્પન્ન સુખની જે ચાહના થાય છે તેનું નામ લોકસંજ્ઞા છે. અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાનું નામ પણ લોકસંજ્ઞા છે, સંયમી આ લોકસંજ્ઞાને સર્વ પ્રકારથી અર્થાત્ ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી ત્યાગ કરે.

“ લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ ” આ ઠેકાણે જે ‘ ચ ’ શબ્દ આવેલ છે તેનાથી એ વાત પ્રગટ કરી આવેલ છે કે સંયમી સમસ્ત જીવોને પોતાના સમાન સમજ્ઞ કોઈ વખત પણ હિંસાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, કારણ કે આગમનું વાક્ય

સંયમાચરણાદૌ ચ પ્રવર્તેતેતિ સૂત્રાશયઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

યથા પૂર્વોક્તસકલગુણવિશિષ્ટસ્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ—‘ઉદેસો’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ઉદેશો પાસગસ્સ નત્થિ, વાલે પુન નિહે કામસમણુન્ને અસ-
મિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવટ્ટં અણુપરિયટ્ટહિત્તિવેમિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ इय वीयज्जयणस्स छट्ठो उद्देशो समत्तो ॥ २-६ ॥

છાયા—ઉદેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, વાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમણુજ્ઞોઽશમિત-
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાવર્તમણુવર્તતે, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ इति द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥ २-६ ॥

ટીકા—‘ઉદેશ’ इत्यादि । सूत्रमिदं तृतीयोद्देशे व्याख्यातमिति । इति ब्रवीमीत्यस्यार्थस्तु प्रथमाध्ययनोक्तदिशाऽवसेयः ॥ सू. ११ ॥

વાક્ય છે કિ—“ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં, જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં”
જિસ પ્રકાર દુઃખ હમેં અપ્રિય હૈં ઉસી પ્રકાર વહ સમસ્ત જીવોંકોં ભી
અપ્રિય હૈં । હિંસાદિક કાર્યોં મેં જીવોંકોં દુઃખ પહુંચતા હૈં, એસા સમજ
કર સંયમી જન કમીં ભી પ્રાણાતિપાતાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ ન કરે,
ઔર ન સંયમાચરણસે મુખ મોઢે, અર્થાત્ સંયમ મેં પ્રવૃત્તિશાલી બને, યહી
સૂત્રકા આશય હૈં ॥ સૂ. ૧૦ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંસે યુક્ત હોતા હૈં ઉસકે ક્યા હોતા
હૈં ? હસકા ખુલાસા કરતે હૈં—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ इत्यादि ।

હસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન હસી અધ્યયનકે તીસરે ઉદેશમેં લિખા જા
ચુકા હૈં । ‘इति ब्रवीमि’ હસકા અર્થ પ્રથમ ઉદેશકે અનુસાર જાન
લેનાં ચાહિયે ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ आचाराङ्ग सूत्रके लोकविजयनामक दूसरे अध्ययनके छठे उद्देशका
हिन्दी-भाषानुवाद समाप्त ॥ २-६ ॥

છે કે “ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં” જે પ્રકારે દુઃખ
અમને અપ્રિય છે તે પ્રકારે તે સમસ્ત જીવોને પણ અપ્રિય છે. હિંસાદિક
કાર્યોમાં જીવને દુઃખ પહોંચે છે. એવું સમજીને સંયમી જન કદિ પણ પ્રાણ-
તિપાતાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, અને સંયમાચરણથી દૂર રહે નહિ, અર્થાત્
સંયમમાં પ્રવૃત્તિશાળી બને, એ જ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોથી યુક્ત બને છે. તેને શું થાય છે ? તેનો
ખુલાસો કરે છે—‘उद्देशो पासगस्स नत्थि’ इत्यादि

આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદેશમાં લખાઈ ગયેલ છે.
‘इति ब्रवीमि’ તેનો અર્થ પ્રથમ ઉદેશ અનુસાર બાણી લેવો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

उपसंहारः—

अस्मिन्नध्ययने हि लोकविजये सद्गो न कार्यो बुधै-
 र्मात्रादौ च महाव्रतेऽप्यदृढता मानोऽपि हेयस्तथा ॥
 वैराग्यं विषये मुनेर्विहरणं लोकेऽपि निश्चाख्यया
 पुत्रादौ ममतां त्यजेन्निगदितं तूद्देशपट्कान्विते ॥ १ ॥
 इत्याचाराङ्गसूत्रस्य लोकाविजयाख्यद्वितीयाध्ययनस्य आचारचिन्तामणि-
 टीकायां पष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥ २-६ ॥
 इति श्री-विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलित-
 ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-वादिमानमर्दक-
 -श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त - 'जैनशास्त्राचार्य'-पद-
 भूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्म-
 दिवाकर-पूज्यश्री-वासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचा-
 राङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां लोकविजयाख्यं
 द्वितीयमध्ययनं सम्पूर्णम् ॥ २ ॥

उपसंहारः—

लोकविजय नामक इस प्रकरण, में ये छै उद्देश भरे,
 मातादिकमें संग अदृढता, महाव्रतोंमें बुध न करे ।
 मान तजन वैराग्य विषयमें, हो विहार जगनिश्चासे,
 पुत्रादिकसे ममता हरनी छ उद्देश इस निश्चासे ॥ १ ॥
 ॥ इति आचाराङ्गसूत्रके लोकविजय-नामक दूसरे अध्ययनकी
 आचारचिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद संपूर्ण ॥ २ ॥

—: उपसंहार :—

लोकविजय नामना गीज्ज अध्ययनमां आ छ उद्देशो गताव्या छे:-ज्ञानीओ
 माता वगेरेना संग त्यजवो महाव्रतोमां दृढता राखी. अलिमान त्यजवुं.
 विषयोथी विरक्त थवुं. ससारीकेने आश्रये विहरवुं. अर्थात् पयनपायनादिक
 सावध क्रियाओने टाणतो थके गृहस्थोओ पोताने माटे करेस निरवध आहार
 पाछीथी मंयभ-यात्राने निर्वाह करवो तथा पुत्र वगेरेनी ममता त्यजवी.
 ओ छ उद्देशो तेमां छे. ॥१॥

आचारसंग सूत्रना लोकविजय नामना गीज्ज अध्ययनना छठ्ठा उद्देशोना
 गुजराती अनुवाद समाप्त. २-६.

आ आचारसंगसूत्रना लोकविजय नामना गीज्ज अध्ययननी आचार-
 चिन्तामणि-टीकानो गुजराती अनुवाद संपूर्ण. ॥२॥

। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય શીતોષ્ણીયનામકં તૃતીયમધ્યયનમ્ ।

દ્વિતીયાધ્યયનકથનાનન્તરં શીતોષ્ણીયં નામ તૃતીયમધ્યયનમભિધીયતે ।
અસ્ય દ્વિતીયાધ્યયનેન સહાયમભિસમ્બન્ધઃ—શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામકાધ્યયનનિર્દિષ્ટવિશિ-
ષ્ટવ્રતભારધારિણો લોકવિજયાખ્યદ્વિતીયાધ્યયનોક્તસંયમમનુતિષ્ઠતોઽપાસ્તસમસ્ત-
કપાયાદિલોકસ્ય પરમપદમારુરુક્ષોરકસ્માત્ શીતોષ્ણાઃ=અનુકૂલપ્રતિકૂલાઃ પરી-
પહાઃ સમુત્પદ્યન્તે । તેષુ સ્ત્રીપરીપહસત્કારપરીપહાવેવાનુકૂલાવન્યે વિંશતિસંખ્યકાઃ
પરીપહાઃ પ્રતિકૂલાઃ । તેષાં હર્ષવિપાદપરિત્યાગપૂર્વકં પ્રસહનં કર્તવ્યમિતિ સમ્બન્ધા-
ભિધાયકમિદમધ્યયનમ્ । અત્ર ચત્વાર ઉદ્દેશાઃ સન્તિ । તત્ર—

આચારાઙ્ગસૂત્રકા શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયન

દ્વિતીય અધ્યયનકે વાદ અબ્ હસ શીતોષ્ણીય નામક તૃતીય અધ્ય-
યન પ્રારમ્ભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયનકે સાથે હસ અધ્યયનકા હસ
પ્રકારસે સમ્બન્ધ હૈ કિ શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક અધ્યયનમેં જિન વિશિષ્ટ
વ્રતોંકે ધારણ કરનેકા વિધાન કિયા ગયા હૈ ડન વ્રતોંકે પાલનેવાલે,
તથા લોકવિજય નામક દ્વિતીય અધ્યયનમેં પ્રતિપાદિત સંયમકે અનુષ્ઠાન
કરનેવાલે, સમસ્ત કપાયલોકકે નિરાકરણ કરનેવાલે ઓર પરમપદ જો
મોક્ષ ડસમેં પહુંચનેકી હ્ચ્છાવાલે ંસે સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન શીત-
ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પરીપહોંકો સહન કરતે હૈં । પરીપહ ૨૨
બાઈસ પ્રકારકે હૈં, ડનમેં સ્ત્રીપરીપહ ઓર સત્કારપરીપહ હી અનુકૂલ હૈં,
બાકીકે ૨૦ વીસ પરીપહ પ્રતિકૂલ હૈં । હન સવ પરીપહોંકો હર્ષ વિપાદ

આચારાંગ સૂત્રનું શીતોષ્ણીયનામનું ત્રીજું અધ્યયન.

બીજા અધ્યયન બાદ હવે શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે. બીજા અધ્યયનની સાથે આ અધ્યયનનો એ પ્રકારે સંબંધ છે કે શસ્ત્ર-
પરિજ્ઞા નામના અધ્યયનમાં જે વિશિષ્ટ વ્રતો ધારણ કરવાનું વિધાન કરેલ છે,
તે વ્રતોના પાળવાવાળાં, તથા લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં પ્રતિપાદિત
સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળાં, સમસ્ત કપાયલોકનું નિરાકરણ કરવાવાળાં અને
પરમપદ જે મોક્ષ તેમાં પહોંચવાની ઇચ્છાવાળાં એવાં સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન
શીત-ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂળ પ્રતિકૂલ પરિપહો સહન કરે છે. પરીપહ બાવીસ
પ્રકારના છે. તેમાં સ્ત્રીપરીપહ અને સત્કારપરીપહ, એ બે પરીપહ જ અનુકૂળ
છે. બાકીના ૨૦ બીસ પરીપહો પ્રતિકૂળ છે. આ સઘળાં પરીપહોને હર્ષ વિપાદ

પ્રથમોદ્દેશે ભાવસુખાનાં દોષા જાગ્રતાં ચ ગુણાઃ પ્રદર્શિતાઃ ॥ ૧ ॥

દ્વિતીયે ભાવનિદ્રાવતાં દુઃસ્વાનુભવઃ પ્રદર્શિતઃ ॥ ૨ ॥

તૃતીયે સંયમાચરણમન્તરેણ કેવલં દુઃસ્વસહનાદેવ શ્રમણો ન ભવતીતિ કથિતમ્ ॥ ૩ ॥

ચતુર્થે તુ વાન્તવત્ કપાયાસ્ત્યાજ્યાઃ, પાપકર્મણશ્ચ વિરતિઃ, તથા વિદિત-
વેદ્યસ્ય સંયમઃ પ્રતિવોધિતઃ, તથા ક્ષપકશ્રેણિપ્રવિષ્ટાનાં ચ સંયમિનાં મોક્ષો
ભવતીત્યાવેદિતમ્ ॥ ૪ ॥

છોડ કર સંયમીકો સહન કરના चाहिये। इस प्रकारके सम्बन्धका
प्रतिपादन करनेवाला यह अध्ययन है। इसमें ४ चार उद्देश हैं। उनमें-
प्रथम उद्देशमें भावसुख संयमियोंके दोष और जगते हुए संयमियोंके
गुण दिखलाये गये हैं १।

द्वितीय उद्देशमें-‘भावनिद्रावाले संयमियोंको दुःस्वोका अनुभव
करना पड़ता है’ यह बात दिखलाई गई है २।

तृतीयउद्देशमें-‘संयमाचरणके बिना केवल दुःस्वोके सहन करने
मात्रसे साधु नहीं होता है’ यह विषय प्रतिपादित किया गया है ३।

चतुर्थ उद्देशमें-‘वमन-छर्दित किये हुए अन्नके समान कषाय त्याग
करने योग्य हैं, पापकर्म परिहरणीय है, तथा पदार्थोंके स्वरूपको जानने-
वाले संयमी मुनिके लिये संयम आराधनीय है, एवं क्षपकश्रेणिमें प्राप्त
हुए साधुजनों को मुक्तिका लाभ अवश्यंभावी है’ आदि सब विषय
प्रकट किये गये हैं ४।

છોડીને સંયમીઓએ સહન કરવા જોઈએ. આ પ્રકારના સંયમ ધનુ’ પ્રતિપાદન
કરવાવાળું આ અધ્યયન છે. તેમાં ચાર ઉદ્દેશ છે. તેમાં—

પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુખ સંયમીઓના દોષ અને જગતા સંયમીઓના
ગુણ બતાવવામાં આવેલ છે. ૧.

બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમીઓને દુઃખોનો અનુભવ કરવો પડે
છે, એ વાત બતાવવામાં આવી છે. ૨.

ત્રીજા ઉદ્દેશમાં ‘સંયમાચરણ બિના કેવળ દુઃખો સહન કરવા માત્રથી
કોઈ સાધુ બની શકતો નથી’ એ વિષય પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. ૩.

ચોથા ઉદ્દેશમાં-‘વમન-છર્દિત કરેલા અન્ન સમાન કષાય ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે,
પાપકર્મ પરિહરણીય છે તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી મુનિ માટે
સંયમ આરાધનીય છે, તેમજ ક્ષપકશ્રેણિમાં પ્રાપ્ત થયેલાં સાધુજનોને મુક્તિનો
લાભ અવશ્યંભાવી છે’ આદિ સઘળા વિષય પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. ૪.

દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચરમમૂત્રેણાસ્યવમભિસમ્બન્ધઃ—તત્ર “ દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે ” इत्युक्तं, तदिहापि “ भावसुप्ता दुःस्विनो दुःस्वानामेवावर्तमनुवर्तन्ते ” इति प्रतिबोधयितुमाह—‘ सुप्ता अमुणी ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સુપ્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—સુપ્તા અમુનયઃ, સદા મુનયો જાગ્રતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—અમુનયઃ=ગૃહસ્થાઃ સુપ્તાઃ=ભાવતઃ સુપ્તાઃ મિથ્યાત્વાજ્ઞાનમયનિદ્રા-વ્યામોહિતાઃ હિંસાધાસવદ્વારેણ સતતં પ્રવૃત્તાઃ સન્તિ । સુપ્તા હિ દ્વિવિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર નિદ્રાપ્રમાદવન્તો દ્રવ્યસુપ્તાઃ, યદ્વા-શિથિલિતનયનપ્રચારા-ક્ષોપાક્ષાવિસ્પષ્ટચેતનાવસ્થાપન્નાઃ દ્રવ્યસુપ્તાઃ । ભાવસુપ્તાસ્ત્રિભિહિતા એવ ।

દ્વિતીય અધ્યયનકે અન્તિમ મૂત્રકે સાથે હસ અધ્યયનકા હસ પ્રકાર સમ્બન્ધ હૈ—ઉસ અધ્યયનકા અન્તિમ સૂત્ર “ દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ આવટં અણુપરિયટ્ટહ ” (દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) યહ હૈ, હસકા ભાવ યહ હૈ કિ-દુઃસ્વી દુઃસ્વોક્તી પરંપરાકા હી અનુવર્તન કરતે હૈ । જિસ પ્રકાર યહ વાત ઉસ અધ્યયનમેં કહી ગઈ હૈ ઉસી પ્રકાર યહાં પર મી-‘ જો ભાવસુપ્ત દુઃસ્વી હૈ વે દુઃસ્વોક્તી હી પરમ્પરાકા અનુભવ કરતે હૈ ’ હસ વિષયકો સમજાનેકે લિયે કહતે હૈ-‘ સુપ્તા અમુણી ’ હૈત્યાદિ ।

અમુનિ શબ્દકા અર્થ ગૃહસ્થ હૈ । યે ભાવસે સુપ્ત-સોયે હુએ હૈ । મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાસે વ્યામોહિત મતિવાલે હોતે હુએ યે પ્રાણા-તિપાતાદિક જો કર્મોંકે આનેકે દ્વાર હૈં ઉનમેં નિરન્તર પ્રવૃત્તિશાલી હૈં । સુપ્ત દો પ્રકારકે હોતે હૈં-(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । નિદ્રાપ્રમાદ-

બીજા અધ્યયનના અંતિમ સૂત્રની સાથે આ અધ્યયનનો આ પ્રકારે સંબંધ છે, તે અધ્યયનનું અંતિમ સૂત્ર “ ‘દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ આવટં અણુ-પરિયટ્ટહ’ ” (‘...દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે’) એ છે. તેનો ભાવ એ છે કે દુઃખી દુઃખોની પરંપરાનું જ અનુવર્તન કરે છે, જેવી રીતે આ વાત તે અધ્યયનમાં કહેવામાં આવેલ છે તેવી રીતે આ કહેણે પણ ‘ જે ભાવસુપ્ત દુઃખી છે તેઓ પણ દુઃખોની જ પરંપરાનો અનુભવ કરે છે. ’ આ વિષયને સમજાવવા માટે કહે છે—‘ સુપ્તા અમુણી ’ ઇત્યાદિ.

અમુનિ શબ્દનો અર્થ ગૃહસ્થ છે. એ ભાવથી સુપ્ત-સુતેલા છે. મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાથી વ્યામોહિત મતિવાળા હોવા છતાં પ્રાણાતિપાતાદિક જે કર્મોના આવવાના દ્વાર છે તેમાં નિરંતર પ્રવૃત્તિશાળી છે. સુપ્ત બે પ્રકારના હોય છે.—

દ્રવ્યસુષ્માસ્તસ્કરાદિના મણિમાણિક્યરત્નાદ્યપહારેણ યથાડન્તર્દાહદારિદ્ર્ય-
દૌર્ભાગ્યાદિલક્ષણપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ તથા ભાવસુષ્મા અપિ પ્રમાદાદિના સમ્ય-
ગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાદ્યાત્મકરત્નાપહારાદીર્ઘસંસારપરિભ્રમણેન જન્મજરામરણાદિલક્ષણ-
વિવિધપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ ।

મુનયઃ=મોક્ષમાર્ગાદિવિચલન્તો લઘ્વસમ્યગ્વોધાઃ અનગારાઃ, સદા=અનવરતં
જાગ્રતિ=મિથ્યાત્વાદિનિદ્રાપગમેન ઇષ્ટાનિષ્ટપ્રાપ્તિપરિહારાર્થં યતનયા ગમનાદિ
શાલી જો હ વે દ્રવ્યસે સુસ હૈં । અથવા જિસમેં નેત્રોંકા પ્રચાર શિથિલ
હો જાતા હૈ તથા અજ્ઞ-ઉપાજ્ઞોં કી ક્રિયા મી જહાં શિથિલ હો જાતી હૈ,
એસી અસ્પષ્ટ ચેતનાકી અવસ્થાસે જો યુક્ત હૈં વે મી દ્રવ્યસે સુસ હૈં,
અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાલે પ્રાણી દ્રવ્યસુસ હૈં । યે દ્રવ્યસુસ જીવ જિસ પ્રકાર
ચોરોં વગૈરહકે ઢારા મણિ માણિક્ય ઓર રત્નાદિક દ્રવ્યકે ચુરાયે જાને
સે અન્તર્દાહ એવં દારિદ્ર્ય દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અનેક સન્તાપોંકા અનુભવ
કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર ભાવસુસ પ્રાણી મી પ્રમાદ આદિકે ઢારા સમ્યગ્જ્ઞાન
સમ્યગ્દર્શન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ રત્નોંકે ચુરાયે જાનેસે દીર્ઘ સંસારમેં
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા ઓર મરણ આદિ રૂપ અનેક સન્તાપોંકો
ભોગતે રહતે હૈં ।

મુનિ સદા જગતે હૈં । મોક્ષમાર્ગસે જો વિચલિત નહીં હોતે હૈં ઉનકા
નામ મુનિ હૈ । યે નિરન્તર સચેત રહતે હૈં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાકે
વિનાશ હોનેસે ઇષ્ટકી પ્રાપ્તિ ઓર અનિષ્ટ કે પરિહારકે લિયે યતનાસે

(૧) દ્રવ્યથી અને (૨) લાવથી. નિદ્રાપ્રમાદશાળી જે છે તેઓ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે,
અથવા જેમાં આંખોનેા પ્રચાર શિથિલ થઇ જાય છે તથા અગ ઉપાંગોની ક્રિયા
પણ જ્યાં શિથિલ થઇ જાય છે, એવી અસ્પષ્ટ ચેતનાની અવસ્થાથી જે યુક્ત
છે તેઓ પણ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે. અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાળા પ્રાણી દ્રવ્યસુપ્ત છે.
એ દ્રવ્યસુપ્ત છવ જે પ્રકારે ચોરો વિગેરે દ્વારા મણિ-માણેક-રત્નાદિક દ્રવ્ય
આદિના ચોરાઈ જવાથી અન્તર્દાહ અને દારિદ્ર્ય દુર્ભાગ્યાદિ-રૂપ અનેક સંતા-
પોનેા અનુભવ કરે છે તે પ્રકારે લાવસુપ્ત પ્રાણી પણ પ્રમાદ આદિ દ્વારા સમ્ય-
ગ્જ્ઞાન સમ્યગ્દર્શન અને સમ્યક્ચારિત્રાદિરૂપ રત્નો ચોરાઈ જવાથી દીર્ઘ સંસારમાં
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા અને મરણ આદિરૂપ અનેક સંતાપોને ભોગવતાં રહે છે.

મુનિ સદા જાગતા રહે છે. મોક્ષમાર્ગથી જે વિચલિત થતા નથી, તેનું
નામ મુનિ છે. એઓ નિરન્તર સચેત રહે છે, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાના
વિનાશ થવાથી ઇષ્ટની પ્રાપ્તિ અને અનિષ્ટના પરિહાર માટે યતનાથી ગમનાદિક

કુર્વન્તઃ સમ્યગ્જ્ઞાનચારિત્રોપાર્જને પ્રવૃત્તાઃ સન્તીત્યર્થઃ । યદ્યપિ ક્વચિદાચાર્યાનુજ્ઞયા પ્રથમપૌરુષ્યામ્ ઉત્સર્ગતથ્વ દ્વિતીયતૃતીયપૌરુષ્યોર્દીર્ઘસંયમાધારભૂતસ્ય શરીરસ્ય સ્થિત્યર્થ નિદ્રાં ભજન્તિ તથાપિ મુનયઃ સદા ભાવતો જાગરુકા એવ । ધર્માપેક્ષયા સુપ્તજાગ્રદવસ્થે ઇહ પરિગૃહીતે ।

મુનયો દ્વિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતથ્વ । તત્ર દ્રવ્યમુનયસ્તાવત્-લિઙ્ગમાત્રધારિણઃ, અસંયમપરિણામપરિણતાઃ, અવસન્નપાશ્વસ્થાદિકાઃ । એપાં નાત્રાધિકારઃ, અમુનિકોટૌ તેપાં સમાવિષ્ટત્વાત્ । અધિકારશ્ચાત્ર ભાવમુનીનામ્ । તે ચ ભાવમુનયઃ ગમનાદિક ક્રિયાઈ કરતે હુઈ મી સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રકે ઉપાર્જન કરનેમ્ હી પ્રવૃત્તિશીલ રહા કરતે હ્ૈં । યદ્યપિ કમ્બી ૨ આચાર્ય મહારાજ કી આજ્ઞાસે ચે રાત્રિકી પ્રથમ પૌરુષી મ્ૈં, ઔર ઉત્સર્ગ સે દ્વિતીય તૃતીય પૌરુષી મ્ૈં દીર્ઘ સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હ્ૈં તો મી ચે સદા ભાવસે જાગરુક-જગતે હુઈ-હી રહતે હ્ૈં । સુપ્ત અવસ્થા ઔર જાગ્રત અવસ્થા કા સમ્બન્ધ યહાં ધર્મકી અપેક્ષાસે ગ્રહણ કિયા ગયા હ્ૈં ।

મુનિ દો પ્રકારકે હોતે હ્ૈં-(૧) દ્રવ્યસે ઔર (૨) ભાવસે । લિઙ્ગમાત્રકો ધારણ કરનેવાલે દ્રવ્યમુનિ હ્ૈં । ઇનકા પરિણામ અસંયમમ્ પરિણત રહા કરતા હ્ૈં । અવસન્ન પાસત્થાદિક ઇસી શ્રેણિકે હ્ૈં । ઇનકા યહાં પ્રકરણ નહીં હ્ૈં, ક્યૌં કિ ચે દ્રવ્યલિઙ્ગી અમુનિયૌંકી કોટિમ્ આતે હ્ૈં । યહાં પર ભાવમુનિયૌંકા પ્રકરણ ચલ રહા હ્ૈં અતઃ ંન્હીંકા યહાં પર વિચાર હોગા । વે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે તથા

ક્રિયાઓ કરતાં કરતાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું ઉપાર્જન કરવામાં જ પ્રવૃત્તિશીલ રહ્યા કરે છે. જોકે ક્યારેક આચાર્ય મહારાજની આજ્ઞાથી એ રાત્રિની પ્રથમ પોરસીમાં, અને ઉત્સર્ગથી દ્વિતીય તૃતીય પોરસીમાં દીર્ઘ સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે તો પણ મુનિ સદા ભાવથી જાગરુક-જગતાં જ રહે છે. સુપ્ત અવસ્થા અને જાગ્રત અવસ્થાનો સંબંધ આંહી ધર્મની અપેક્ષાથી થઈ પણ કરવામાં આવેલ છે.

મુનિ એ પ્રકારના હોય છે. (૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. લિંગ માત્રને ધારણ કરવાવાળા દ્રવ્યમુનિ છે. તેનું પરિણામ અસંયમમાં પરિણત રહ્યા કરે છે. અવસન્ન પાસત્થાદિક તેવી શ્રેણિના છે. તેનું આંહી પ્રકરણ નથી, કારણ કે એ દ્રવ્યલિંગી અમુનિઓની કોટિમાં આવે છે. આ ઠેકાણે ભાવમુનિઓનું પ્રકરણ ચાલી રહ્યું છે. માટે તેઓનો આ ઠેકાણે વિચાર થશે. તે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય

ચારિત્રમોહનીયલયોપશમલયસમુત્પન્નસ્વરૂપપરાયણાઃ, કપાયોદ્રેકરહિતાઃ, સમર-
સકન્દાયમાનાઃ, સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધકાઃ, પ્રશસ્તયોગસાધકાઃ, સમિતિ-
ગુપ્તિધારકાઃ, નિશ્ચયવ્યવહારપ્રચારકાઃ, આસ્રવવર્જિતાઃ સંવેગાદિલક્ષણયુક્તાઃ,
યથાર્થોપયોગેન દ્રવ્યાર્થિકપર્યાયાર્થિકનયેન સ્વરૂપવેદિનઃ, કર્મરજોદારકાઃ,
મુખોપરિ સદોરકમુખવલ્લિકાધારકાઃ, વિંશતિસ્થાનકસમારાધકાઃ, દેવાસુરનરજ-
નિતત્રિવિધોપસર્ગસહનશીલાઃ, શાસ્ત્રોક્તાચારવિચારપરિપાલકાઃ, જ્ઞાતપરમાર્થો
ભવન્તિ । ત એવ સદા=નિરન્તરં જાગ્રતિ=પ્રવુદ્ધ્યન્તે-હેયોપાદેયવિવેકપૂર્વકં સકલ-
પરિપદ્મસહનં પ્રકુર્વાણાઃ સંયમાનુષ્ઠાનં સમાચરન્તીત્યર્થઃ ।

ક્ષયસે સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમેં લવલીન રહતે હૈં । કપાયોંકે ઉદ્રેક
સે રહિત હોતે હૈં । સમતારૂપી રસકે કન્દ હોતે હૈં । પાંચ સમિતિ ઔર
ત્રીન ગુપ્તિકે ધારક હોતે હૈં । નિશ્ચય ઔર વ્યવહારકે પ્રચારક હોતે હૈં ।
આસ્રવદારોંસે રહિત તથા સંવેગાદિક-લક્ષણોંસે યુક્ત હોતે હૈં । જિસ
નયકા જહાં ઉપયોગ હોતા હૈ વહાં ઉસી નયકા ઉપયોગ કરનેવાલે હોતે
હૈં, અર્થાત્ જહાં દ્રવ્યાર્થિક નયકી પ્રધાનતાસે વસ્તુતત્ત્વકા નિર્ણય હોતા
હો વહાં પર્યાયાર્થિક નયકી ગૌણતા કર ઉસી નયસે ઉસકે સ્વરૂપકા
નિર્ણય કરતે હૈં, જહાં પર્યાયાર્થિક નયસે વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય હોતા હો
વહાં ઉસ નયસે ઇતર-દ્રવ્યાર્થિક નયકો ગૌણકર વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય
કરતે હૈ; કિન્તુ અપને આગ્રહસે કિસી ભી વસ્તુકા એકાન્તરૂપસે નિર્ણય
યા પ્રતિપાદન નહીં કરતે હૈં । આત્માકે ઉપર અનાદિ કાલસે ચઢી હુઈ
કર્મરૂપી ધૂલિકો નાશ કરનેવાલે હોતે હૈં । મુખપર દોરાસહિત મુખ-

કર્મના ક્ષયોપશમથી તથા ક્ષયથી સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમાં આનંદિત રહે
છે. કપાયોના ઉદ્રેકથી રહિત હોય છે. સમતારૂપી રસના કંદ હોય છે પાંચ
સમિતિ અને ત્રણ ગુપ્તિના ધારક હોય છે નિશ્ચય અને વ્યવહારના પ્રચારક હોય
છે. આસ્રવદારોથી રહિત અને સંવેગાદિક લક્ષણોથી સહિત હોય છે જે નયનો
ન્યાં ઉપયોગ થાય છે, ત્યાં તે નયનો ઉપયોગ કરવાવાળા હોય છે અર્થાત્ ન્યાં
દ્રવ્યાર્થિક નયની પ્રધાનતાથી વસ્તુતત્ત્વનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં પર્યાયાર્થિક
નયની ગૌણતા કરી તે નયથી તેના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે. ન્યા પર્યાયાર્થિક
નયથી વસ્તુ સ્વરૂપનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં તે નયથી બીજા-દ્રવ્યાર્થિક-નયને
ગૌણ કરી વસ્તુના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે, પણ પોતાના આગ્રહથી કોઈ પણ
વસ્તુનો એકાન્તરૂપથી નિર્ણય અગર પ્રતિપાદન કરતા નથી. આત્માની ઉપર
અનાદિ કાળથી ચઢેલી કર્મરૂપી ધૂળનો નાશ કરવાવાળા હોય છે. મુખ ઉપર

તે હિ દર્શનાવરણીયકર્મવિપાકોદયાત્ સંયમાધારશરીરસ્થિત્યર્થં નિદ્રોપગતા દ્રવ્યતઃ સુપ્તા અપિ દર્શનમોહનીયરૂપમહાનિદ્રાપગમાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રારાધકત્વેન સદા જાગરૂકા એવ । તત્ર જિનકલ્પિનો રાત્રૌ પ્રહરમેકં સ્થવિરકલ્પિનસ્તૂત્સર્ગતઃ પ્રહરદ્વયં સ્વપન્તિ ।

વસ્ત્રિકા-સુંહપત્તીકે ધારક હોતે હૈં । વીસ સ્થાનોંકી અચ્છી તરહ આરાધના કરનેવાલે હોતે હૈં । દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય, ઇન તીનોં દ્વારા કિયે ગયે તીન પ્રકારકે ઉપસર્ગોંકો સહનેકે સ્વભાવવાલે હોતે હૈં । શાસ્ત્રોંમેં જિન ૨ આચાર-વિચારોંકા પાલના વતલાયા હૈં ડન ૨ આચાર-વિચારોંકો પાલ-નેવાલે હોતે હૈં । પરમાર્થકે જ્ઞાતા હોતે હૈં । એસે યે ભાવમુનિ હી સદા જાગરૂક હોતે હૈં, અર્થાત્ હેય ઓર ઉપાદેયકે વિવેકપૂર્વક સકલ પરીપહોં કો જીતતે હુએ સંયમકે આરાધનમેં સદા દત્તાવધાન રહતે હૈં ।

યદ્યપિ યે દર્શનાવરણીય કર્મકે વિપાકોદયસે સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હૈં, ઇસ અપેક્ષાસે યે દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં, તો ભી દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાકે વિનાશસે ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકે આરાધક હોનેસે યે સદા જાગરૂક હી રહતે હૈં । જિનકલ્પી મુનિ રાત્રિમેં એક પ્રહર સોતે હૈં, કયોં કિ ઇનકા ઇસી પ્રકારકા કલ્પ હૈં । સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગસે દો પ્રહર સોતે હૈં ।

દોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા-સુંહપત્તીના ધારક હોય છે. વીસ સ્થાનોની સારી રીતે આરાધના કરનારા હોય છે. દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય એમ ત્રણે દ્વારા કરવામાં આવેલાં ત્રણ પ્રકારના ઉપસર્ગોને સહન કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે. શાસ્ત્રોમાં જે જે આચાર વિચારોનું પાલન કરવાનું ઘતાવેલ છે તે તે આચાર વિચારોના પાળવાવાળાં હોય છે. પરમાર્થના જ્ઞાતા હોય છે એવા એ ભાવમુનિ જ સદા જાગરૂક હોય છે, અર્થાત્ હેય અને ઉપાદેયના વિવેકપૂર્વક સકળ પરીપહોને છતતાં સંયમના આરાધનમાં સદા દત્તાવધાન રહે છે

જો કે તેઓ દર્શનાવરણીય કર્મના વિપાકના ઉદયથી સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે, આ અપેક્ષાથી એ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે તો પણ દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાના વિનાશથી ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રના આરાધક હોવાથી સદા જાગરૂક જ રહે છે. છતકલ્પી મુનિ રાત્રિમાં એક પ્રહર સુવે છે, કારણ કે તેનો આ પ્રકારનો કલ્પ છે. સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગથી બે પ્રહર સુવે છે.

જયનં જાગરણં ચાત્ર ધર્મારાધનમધિકૃત્યાભિધીયતે, અતો દ્રવ્યભાવભેદેન સુપ્તાનાં જાગ્રતાં ચ મધ્યે કસ્ય ધર્મારાધનં ભવતિ કસ્ય નેતિ મદ્ગચતુષ્ટયં પ્રદર્શ્યતે—

- (૧) દ્રવ્યતઃ સુપ્તઃ, ભાવતો જાગર્તિ ।
- (૨) ભાવતઃ સુપ્તઃ, દ્રવ્યતો જાગર્તિ ।
- (૩) દ્રવ્યતોઽપિ જાગર્તિ, ભાવતોઽપિ જાગર્તિ ।
- (૪) દ્રવ્યતોઽપિ સુપ્તઃ, ભાવતોઽપિ સુપ્તઃ ।

અત્ર પ્રથમમદ્ગચતો ધર્મારાધનં ભવતિ ૧ । દ્વિતીયસ્ય ન ભવતિ ૨ ।

સોના ઓર જાગના, યે દોનોં વાતેં ધર્મકે આરાધન કરનેકી અપેક્ષાસે યહાં કહી ગઈ હેં । ઇસલિયે દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે સોનેવાલોંકે તથા જાગનેવાલોંકે વીચમેં કૌન ધર્મકા આરાધક હોતા હૈ, કૌન નહીં હોતા હૈ ? ઇસ વાતકો ચાર ભંગોંસે દિશલાતે હેં—

- (૧) દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ ।
- (૨) ભાવસે સુપ્ત હૈ પર દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ।
- (૩) દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ઓર ભાવસે ભી જાગ્રત હૈ ।
- (૪) દ્રવ્યસે ભી સુપ્ત હૈ ઓર ભાવસે ભી સુપ્ત હૈ ।

ઇન ચાર ભંગોંકો લેકર જય વિચાર કિયા જાતા હૈ તો જો દ્રવ્યસે તો સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ, એસે પ્રથમ ભંગવાલેકો ધર્મકા આરાધન હોતા હૈ । દ્વિતીય ભંગવાલેકો નહીં હોતા હૈ, કારણ કિ યહ ભાવસે હી સુપ્ત હૈ, દ્રવ્યજાગરુકતા તો ધર્મારાધનમેં કાર્યકારી હી નહીં હૈ ।

સુબુ અને જાગવું એ બન્ને વાતો ધર્મનું આરાધન કરવાની અપેક્ષાથી અહીં કહેવામાં આવેલ છે, જેથી દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી સુવાવાણાની તથા જાગવાવાણાની વચમાં ધર્મનું આરાધન કેને થાય છે ? અને કેને થતું નથી ? આ વાતને ચાર ભંગોથી ભતાવે છે.

- (૧) જે દ્રવ્યથી સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે.
- (૨) જે ભાવથી સુપ્ત છે પણ દ્રવ્યથી જાગૃત છે.
- (૩) જે દ્રવ્યથી જાગૃત છે અને ભાવથી પણ જાગૃત છે.
- (૪) જે દ્રવ્યથી પણ સુપ્ત છે અને ભાવથી પણ સુપ્ત છે.

આ ચાર ભંગોને લઈને ત્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જે દ્રવ્યથી તો સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે, એવા પ્રથમ ભંગવાણાને ધર્મનું આરાધન થાય છે, બીજા ભંગવાણાને નહિ, કારણ કે તે ભાવથી જ સુપ્ત છે. દ્રવ્ય જાગૃકતા ધર્મારાધનમાં કાર્યકારી નથી.

તૃતીયભંગવતો દ્રવ્યતો ભાવતથ જાગ્રતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપો ધર્મઃ સુચારુરૂપેણ સમ્પદ્યતે । મુનિના સદા તૃતીયભંગવતૈવ માન્યમતો ભગવતા કથિતમ્—“ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ ”—સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ—ઈતિ । ચતુર્થભંગવતઃ સર્વથા ધર્મારાધનં ન ભવતિ, તસ્ય મિથ્યાત્વોદયપ્રાવલ્યાત્ ૪ ।

દ્રવ્યસુપ્તો હિ નિદ્રયા ભવતિ । સા ચ પञ્ચવિધા (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા (૪) પ્રચલાપ્રચલા (૫) સ્ત્યાનર્દિઃ ।

તાસુ નિદ્રાનિદ્રા-પ્રચલાપ્રચલા-સ્ત્યાનર્દિરૂપં નિદ્રાત્રિકં દુરન્તમ્ । એતત્રિકો-દયે ભવસિદ્ધિકોઽપિ સમ્યક્ત્વં ન લભતે । અસ્ય વન્ધો હિ મિથ્યાદૃષ્ટિગુણસ્થાને

તૃતીય ભંગવાલેકો સુચારુરૂપસે સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ-ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ; કારણ કિ યહ દ્રવ્યસે ઓર ભાવસે-દોનો પ્રકારસે સદા જાગરુક હૈ । મુનિકો સદા ઇસ તૃતીયભંગવાલા હી હોના ચાહિયે । ઇસીલિયે ભગવોનને કહા હૈ કિ—“ સુત્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) । ચતુર્થ ભંગવાલેકે ધર્મકા આરાધન સર્વથા હૈ હી નહીં; ક્યોં કિ યહ દ્રવ્ય ઓર ભાવ, ઇન દોનો પ્રકારસે સોયા હુઆ હૈ, અર્થાત્ ઇસમેં મિથ્યાત્વકે ઉદયકી પ્રવલતા હૈ ।

દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે સુસાવસ્થા નિદ્રાસે હોતી હૈ । વહ નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દિ ।

ઇનમેં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, ઓર સ્ત્યાનર્દિ, એ ત્રીન નિદ્રાઈ જીવોંકો બહુત દુઃખદાયી હૈ । ઇન ત્રીનોંકે ઉદયમેં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી)

ત્રીભ ભંગવાળાને સુચારુરૂપથી સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મની આરાધના થાય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યથી અને ભાવથી—બન્ને પ્રકારથી સદા જાગરુક છે. મુનિએ સદા આ ત્રીભ ભંગવાળા બનવું જોઈએ. માટે ભગવાને કહ્યું છે કે “ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તાઃ અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) એવા ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન સર્વથા છે જ નહિ, કારણ કે એ દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્ને પ્રકારથી પણ ચુતેલ છે, અર્થાત્ તેમાં મિથ્યાત્વના ઉદયની પ્રબળતા છે.

દ્રવ્યની અપેક્ષાથી સુસાવસ્થા નિદ્રાથી થાય છે તે નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે,—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દિ.

તેમાં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, અને સ્ત્યાનર્દિ, એ ત્રણ નિદ્રાઓ છુવોને ઘણી દુઃખદાયી છે, આ ત્રણના ઉદયમાં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી) છંપ પણ

સાસ્વાદનગુણસ્થાને ચાનન્તાનુવન્ધિકપાયવન્ધેન સહ ભવતિ, ક્ષયસ્તુ નવમાઽનિર્વૃત્તિ-
વાદરગુણસ્થાનસ્ય નવસુ ભાગેસુ મધ્યે પ્રથમભાગસ્થકાલસ્ય કિયત્સુ સંખ્યેયાંશેષુ
ગતેષુ સત્સુ જાયતે । નિદ્રાપ્રચલયોરુદયઃ સામાન્યદર્શનાવરણીયકર્મોદયાદ્ભવતિ ।
વન્ધોપરમોઽપૂર્વકરણનામકાષ્ટમગુણસ્થાનકાલસ્ય સંખ્યેયભાગાન્તે જાયતે, તત્પ-
શ્ચાન્નૂતનવન્ધાભાવાત્ । ક્ષયશ્ચ ક્ષીણમોહાખ્યદ્વાદશગુણસ્થાનસ્ય ચરમસમયદ્વયેઽવ-
શિષ્ટે સતિ ભવતિ । એતયોરુદયસ્તુ ઉપશાન્તક્રોધોપશાન્તમોહયોરપિ ભવતીતિ નિદ્રા-
પ્રમાદસ્ય દુરન્તત્વં વિજ્ઞેયમ્ ।

જીવ મ્હી સમ્યક્ત્વકો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । इनका वन्ध मिथ्यादृष्टि
नामक प्रथम गुणस्थानमें और सास्वादन नामक द्वितीय गुणस्थानमें
अनन्तानुवन्धी कपायके वन्धके साथ जीवोंको होता है, और क्षय नवमें
अनिवृत्तिवादर गुणस्थानके नौ ९ भागोंमेंसे प्रथम भागके कालके जब
किननेक संख्यात अंश व्यतीत हो जाते हैं तब होता है ।

નિદ્રા ઔર પ્રચલાકા ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મકે ઉદયસે
હોતા હૈ । इनके वन्धका अभाव अपूर्वकरण नामके आठवें गुणस्थानके
संख्यातवें भागके अन्तमें होता है । उसके बाद इनके नूतन वन्धका
अभाव हो जाता है । इनका क्षय भी क्षीणमोह नामके बारहवें गुणस्थानके
अन्तिम दो समयों के अवशिष्ट रहने पर होता है । इन दोनोंका उदय
दसवें और ग्यारहवें गुणस्थानक तकके जीवोंमें भी होता है । इसी लिये
निद्राप्रमादकी दुरन्तता है, अर्थात् इसका अन्त होना बड़ा कठिन है ।

સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેનો બંધ મિથ્યાદૃષ્ટિ નામના પ્રથમ ગુણ
સ્થાનમાં, અને સાસ્વાદન નામના બીજા ગુણસ્થાનમાં અનન્તાનુબંધી કપાયના
બંધની સાથે છવોને થાય છે, અને ક્ષય નવમાં અનિવૃત્તિનાદશગુણસ્થાનના નવ
ભાગોમાંથી પ્રથમ ભાગના કાળના બન્યારે કેટલાક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત થઈ
જાય છે ત્યારે થાય છે.

નિદ્રા અને પ્રચલાનો ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મના ઉદયથી થાય
છે. તેના બંધનો અભાવ અપૂર્વકરણ નામના આઠમા ગુણસ્થાનના સંખ્યાતમાં
ભાગના અંતમાં થાય છે. ત્યારબાદ તેને નૂતન બંધનો અભાવ થઈ જાય છે.
તેનો ક્ષય પણ ક્ષીણમોહ નામના બારમા ગુણસ્થાનના અંતિમ બે સમયોના અવ-
શિષ્ટ રહેવા પર થાય છે. એ બન્નેનો ઉદય દશમાં અને અગીયારમા ગુણસ્થાન
મુખીના છવોમાં પણ થાય છે, માટે નિદ્રાપ્રમાદની દુરન્તતા છે, અર્થાત્
તેનો અંત થવો ઘણું કઠિન છે.

દ્રવ્યભાવસુખવિષયે વિવેકદક્ષઃ સુખમનુભવતિ । યથા પથિ તસ્કરાદિભયે સમુપસ્થિતે વિવેકી સ્વાત્મનઃ સાપાયનિરપાયવિષયકં વિવેકમાલમ્બ્ય પલાયનાદિકાં ક્રિયાં કુર્વાણઃ સુખભાગ્ભવતિ । એવં મુનિરપિ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મકવિવેકવસ્ત્વેન સદા પ્રમાદાદિભયાદ્ જ્ઞાનાચારાદિસમારાધનાવધાનરૂપાં જાગ્રદવસ્થાં વિભ્રાણઃ શિવસુખભાગ્ભવતિ । ઉક્તञ्च—

દ્રવ્યસુખ ઓર ભાવસુખકે વિષયમેં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખકા અનુભવ કરતા હૈ, અર્થાત્ જો મુનિ ઇસ વાતકો સમજતા હૈ કિ દ્રવ્યસુખ અવસ્થા ઓર ભાવસુખ-અવસ્થા આત્માકે લિયે સદા દુઃખદાયી હૈં, ઇસલિયે ઇન અવસ્થાઓંકા સદા પરિહાર કરના ચાહિયે, ઇન અવસ્થાઓંમેં વર્તમાન પ્રાણીકા કમી મી કલ્યાણ નહીં હોતા હૈ । ઇસ તરહ કા વિવેક જિસ આત્મામેં ઇન દોનોં અવસ્થાઓંકે પ્રતિ જાગ્રત હો જાતા હૈ વહ ઇનસે સદા દૂર રહતા હૈ । જિસ પ્રકાર માર્ગ મેં ચૌરાદિકોંકા ભય ઉપસ્થિત હોનેપર વિવેકી વ્યક્તિ ઇસ વાતકા વિચાર કરતા હૈ કિ ઇસ ઓર ભય હૈ ઇસ ઓર ભય નહીં હૈ । એસા વિચાર કર નિર્ભય સ્થાનકી ઓર ભાગતા હૈ ઓર સુખકી સાંસ લેતા હૈ । ડસી પ્રકાર મુનિ મી સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાલી હોનેસે સદા પ્રમાદાદિકોંકે ભયસે જ્ઞાનાચારાદિકોંકી સમ્યક્ આરાધનામેં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાકો ધારણ કરતા હુઆ મોક્ષ સુખકા ભાગી હોતા હૈ । કહા મી હૈ—

દ્રવ્યસુખ અને ભાવસુખના વિષયમાં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખનો અનુભવ કરે છે, અર્થાત્ મુનિ આ વાતને સમજે છે કે ‘દ્રવ્યસુખ અવસ્થા અને ભાવસુખ અવસ્થા આત્મા માટે સદા દુઃખદાયી છે માટે તેવી અવસ્થાઓનો સદા પરિહાર કરવો જોઈએ, તેવી અવસ્થાઓમાં વર્તમાન પ્રાણીનું કદિ પણ કલ્યાણ થતું નથી’ એવા પ્રકારનો વિવેક જે આત્મામાં એ બન્ને અવસ્થાઓ પ્રતિ જાગૃત થઈ જાય છે તે તેનાથી સદા દૂર રહે છે. જે પ્રકારે માર્ગમાં ચોર આદિનો ભય ઉપસ્થિત હોવા છતાં વિવેકી વ્યક્તિ એ વાતનો વિચાર કરે છે કે, આ બાબુ ભય છે, આ બાબુ ભય નથી, પછી નિર્ભય સ્થાનની તરફ ભાગે છે અને સુખનો શ્વાસ લે છે. તે પ્રકારે મુનિ પણ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાળી હોવાથી સદા પ્રમાદાદિકોના ભયથી જ્ઞાનાચારાદિકોની સમ્યક્ આરાધનામાં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાને ધારણ કરીને મોક્ષ સુખના ભાગી થાય છે. કહ્યું છે.—

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં જાગરમાણસ્સ વહ્દહણ વુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગદ્ધ સો સયા ધન્નો ” । ઇતિ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદશ્ચાજ્ઞાનાદ્ભવતિ, તચ્ચ પ્રાણિનામહિતાયેતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂ-
સ્વામિનમાહ—‘લોયંસિ જાણ, ઇત્યાદિ ।

મૂલ૧—લોયંસિ જાણ અહિયાય દુઃખં, સમયં લોગસ્સ .
જાણિત્તા ઇત્થ સત્થોવરણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—લોકે જાનીહિ અહિતાય દુઃખં, સમયં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા અત્ર શક્તોપરતઃ ॥૨॥

ટીકા—હે જમ્બૂ ! લોકે=પૃથ્વીવનિકાયરૂપે જિનશાસને વા, દુઃખં=દુઃખ-

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વહ્દહણ વુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગદ્ધ સો સયા ધન્નો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

ગાથાકા અર્થ યહ હૈ કિ—‘હે ભયો ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યોં
કિ જાગનેવાલોંકી વુદ્ધિ વઢતી હૈ । જો સોતા હૈ વહ ધન્ય નહોં હૈ, જો
જાગતા હૈ વહ સદા ધન્ય હૈ ’ ॥૧॥

યહ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ કિ સુષ્ઠ ઓર જાગ્રત અવસ્થા ધર્મારા-
ધનકી અપેક્ષાસે હી સમઘ્નના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા હૈ, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા સદા અહિ-
તકારી હૈ, એસા વિચાર કર શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—
“ લોયંસિ જાણ ” ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! પૃથ્વીવનિકાયસ્વરૂપ હસ લોકમેં, અથવા જિનશાસનમેં,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વહ્દહણ વુદ્ધી ।

જો સુયદ્ધ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગદ્ધ સો સયા ધન્નો ” ॥૧॥ ઇતિ ।

ગાથાનો અર્થ આ છે કે—હે ભયો ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે
જાગવાવાળાની બુદ્ધિ વધે છે જે સુતેલા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે
જ સદા ધન્ય છે.

એ પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે કે સુષ્ઠ અને જાગૃત અવસ્થા ધર્મારાધનની
અપેક્ષાથી જ સમજવી જોઈએ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે, અને અજ્ઞાન પ્રાણિઓ માટે સદા અહિત-
કારી છે. એવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે—‘લોયંસિ
જાણ’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! પૃથ્વીવનિકાયસ્વરૂપ આ લોકમાં અથવા જિનશાસનમાં દુઃખ

તે=પીડયતીતિ દુઃખમ્, इह दुःखशब्देनाज्ञानं प्राणातिपातादिरूपं कर्म वा गृह्यते.
 સ્વજનકત્વાત્, તત્ અહિતાય=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વાય જાયતે । તત્રૈહિકં દુઃસ્વં
 પાતિપાતાદિસાવધાનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તાનાં ભાવસુપ્તાનાં ભૂપાદિકૃતં; વન્ધવથતાડનશૂ-
 રોપણાદિકમ્, પારત્રિકશ્ચ દુઃસ્વં નરકનિગોદાદિયાતનારૂપમિતિ એહિકપારત્રિક-
 :સ્વહેતુભૂતમજ્ઞાનં કર્મ વાસ્તીતિ ત્વં જાનીહિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા વુઘ્યસ્ય । એતસ્ય ફલશ્ચ

:સ્વ-અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ કાર્ય જીવોંકે લિયે હસ લોકમેં
 થા-પરલોકમેં અહિતકારી માને ગયે હૈં । યહાં ‘દુઃસ્વ’ શબ્દકા અર્થ-
 દુઃસ્વયતિ=પીડયતીતિ દુઃસ્વમ્” જો જીવોંકો પીડા પહુંચાવે એસા અજ્ઞાન,
 અથવા હિંસાદિક પાપકર્મ-હૈ । અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક, જીવોંકો સદા
 :સ્વદાયી હોતે હૈં, હસ અપેક્ષાસે અજ્ઞાનાદિક દુઃસ્વકે કારણ હૈં ।- ફિર
 યહાં પર ઇન્હેં જો દુઃસ્વરૂપ કહા ગયા હૈ વહ કારણમેં કાર્યકે ઉપ-
 નારસે કહા ગયા હૈ । ઇન પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમેં
 વૃત્તિ કરનેવાલે ભાવસુપ્ત જીવોંકો હસ લોકમેં રાજા આદિકે દ્વારા
 કયે ગયે વન્ધ, વધ, તાડન ઓર શૂલારોપણ આદિ અનેક કષ્ટ ભોગને
 ડેતે હૈં, તથા પરલોકમેં નરકનિગોદાદિકકી યાતનાઈ સહની પડતી હૈં ।
 સલિયે જમ્બૂસ્વામીકો ઉદ્દેશ કરકે સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—

હે જમ્બૂ ! હસ લોક ઓર પરલોકસમ્બન્ધી અનેક દુઃસ્વોંકે કારણ
 પ્રાણાતિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન હૈં, એસા તુમ જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનો ।-

=અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ કાર્ય આ લોકમાં તથા પરલોકમાં હવેા માટે
 અહિતકારી માનવામાં આવેલ છે. અહીં દુઃખ શબ્દનો અર્થ—“ દુઃસ્વયતિ પીડ-
 યતીતિ દુઃસ્વમ્ ” જે હવેાને પીડા આપે એવું અજ્ઞાન અને હિંસાદિક પાપકર્મ છે.
 અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક કર્મ હવેાને સદા દુઃખદાયી થાય છે. આ અપેક્ષાથી અજ્ઞા-
 નાદિક, દુઃખના કારણ છે તો પણ આ ઠેકાણે તેને જે દુઃખરૂપ કહેવામાં આવેલ
 છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ
 સાવધ અનુષ્ઠાનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા ભાવસુપ્ત હવેાને આ લોકમાં રાજા આદિ
 દ્વારા કરવામાં આવેલ બંધ વધ તાડન અને શુળી આદિ અનેક કષ્ટોને ભોગ-
 વવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઓ સહન કરવી પડે
 છે. એથી જમ્બૂસ્વામીને ઉદ્દેશ કરીને સુધર્માસ્વામી કહે છે.—

હે જમ્બૂ ! આ લોક અને પરલોક સંબંધી અનેક દુઃખોનું કારણ પ્રાણા-
 તિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન છે, એવું જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણો. એ જાણવારૂપ

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં જાગરમાણસ્સ વહ્દહણ વુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ” । ઇતિ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદજ્ઞાનાદ્ભવતિ, તત્ત્વ પ્રાણિનામહિતાયેતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂ-
સ્વામિનમાહ—‘લોયંસિ જાણ, ઇત્યાદિ ।

મૂલ૧—લોયંસિ જાણ અહિયાય દુઃખં, સમયં લોગસ્સ
જાણિત્તા ઇત્થ સત્થોત્તરણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—લોકે જાનીહિ અહિતાય દુઃખં, સમયં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા અત્ર શસ્ત્રોપરતઃ॥૨॥

ટીકા—હે જમ્બૂ : ! લોકે=પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપે જિનશાસને વા, દુઃખં=દુઃખ-

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વહ્દહણ વુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

ગાથાકા અર્થ યહ હૈ કિ—‘હે મન્યો ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યોં
કિ જાગનેવાલોંકી વુદ્ધિ વઢતી હૈ । જો સોતા હૈ વહ ધન્ય નહીં હૈ, જો
જાગતા હૈ વહ સદા ધન્ય હૈ ’ ॥૧॥

યહ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ કિ સુષ્ટ ઓર જાગ્રત અવસ્થા ધર્મારા-
ધનકી અપેક્ષાસે હી સમજના ચાહિયે ॥ સૂ૦-૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા હૈ, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા મદા અહિ-
તકારી હૈ, એસા વિચાર કર શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—
“ લોયંસિ જાણ ” ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! પૃથ્વીજીવનિકાયસ્વરૂપ હસ લોકમેં, અથવા જિનશાસનમેં,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વહ્દહણ વુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ” ॥૧॥ ઇતિ ।

ગાથાનો અર્થ આ છે કે—હે ભવ્યો ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે
જાગવાવાળાની બુદ્ધિ વધે છે. જે સુતેલા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે
જ સદા ધન્ય છે.

એ પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે કે સુષ્ટ અને જાગૃત અવસ્થા ધર્મારાધનની
અપેક્ષાથી જ મમજવી જોઈએ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે, અને અજ્ઞાન પ્રાણિઓ માટે સદા અહિત-
કારી છે. એવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે—‘લોયંસિ
જાણ’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! પૃથ્વીજીવનિકાયસ્વરૂપ આ લોકમાં અથવા જિનશાસનમાં દુઃખ

યતિ=પીડયતીતિ દુઃખમ્, ઇહ દુઃખશબ્દેનાજ્ઞાનં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં કર્મં વા ગૃહ્યતે દુઃખજનકત્યાત્, તત્ અહિતાય=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વાય જાયતે । તત્રૈદિકં, દુઃખં પ્રાણાતિપાતાદિસાવધાનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તાનાં ભાવસુપ્તાનાં, ભૂપાદિકૃતં, વન્ધવધતાડનશૂ-
લારોપણાદિકમ્, પારત્રિકશ્ચ દુઃખં નરકનિગોદાદિયાતનારૂપમિતિ એહિકપારત્રિક-
દુઃખદેતુભૂતમજ્ઞાનં કર્મં વાસ્તીતિ ત્વં જાનીહિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બુદ્ધ્યસ્વ । એતસ્ય ફલશ્ચ

દુઃસ્વ-અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ કાર્ય જીવોંકે લિયે ઇસ લોકમેં તથા પરલોકમેં અહિતકારી માને ગયે હૈં । યહાં 'દુઃસ્વ' શબ્દકા અર્થ-
“દુઃસ્વયતિ=પીડયતીતિ દુઃસ્વમ્” જો જીવોંકો પીડા પહુંચાવે એસા અજ્ઞાન, અથવા હિંસાદિક પાપકર્મ-હૈ । અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક, જીવોંકો સદા દુઃખદાયી હોતે હૈં, ઇસ અપેક્ષાસે અજ્ઞાનાદિક દુઃસ્વકે કારણ હૈં । ફિર
મી-યહાં પર ઇન્હેં જો દુઃસ્વરૂપ કહા ગયા હૈ વહ કારણમેં કાર્યકે ઉપ-
ચારસે કહા ગયા હૈ । ઇન પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ભાવસુપ્ત જીવોંકો ઇસ લોકમેં રાજા આદિકે દ્વારા કિયે ગયે વન્ધ, વધ, તાડન ઓર શૂલારોપણ આદિ અનેક કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં, તથા પરલોકમેં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઈ સહની પડતી હૈં ।
ઇસલિયે જમ્બૂસ્વામીકો ઉદ્દેશ કરકે સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—

હે જમ્બૂ ! ઇસ લોક ઓર પરલોકસમ્બન્ધી અનેક દુઃસ્વોંકે કારણ પ્રાણાતિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન હૈં, એસા તુમ જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનો ।

=અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ કાર્ય આ લોકમાં તથા પરલોકમાં હોયો માટે અહિતકારી માનવામાં આવેલ છે. અહીં દુઃખ શબ્દનો અર્થ—“ દુઃસ્વયતિ પીડ-
યતીતિ દુઃસ્વમ્ ” જે હોયોને પીડા આપે એવું અજ્ઞાન અને હિંસાદિક પાપકર્મ છે. અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક કર્મ હોયોને સદા દુઃખદાયી થાય છે. આ અપેક્ષાથી અજ્ઞા-
નાદિક, દુઃખના કારણ છે તે પણ આ ઠેકાણે તેને જે દુઃખરૂપ કહેવામાં આવેલ છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા ભાવસુપ્ત હોયોને આ લોકમાં રાજા આદિ દ્વારા કરવામાં આવેલ બંધ વધ તાડન અને શુળી આદિ અનેક કષ્ટોને ભોગ-
વવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઓ સહન કરવી પડે છે. એથી જમ્બૂસ્વામીને ઉદ્દેશ કરીને સુધર્માસ્વામી કહે છે.—

હે જમ્બૂ ! આ લોક અને પરલોક સંબંધી અનેક દુઃખોનું કારણ પ્રાણા-
તિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન છે, એવું જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાણો. એ બાણવારૂપ

દુઃસ્વહેતોરજ્ઞાનરૂપાદ્ દ્રવ્યભાવસ્વાપાન્નિર્વર્તનમિતિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ-લોક-
સ્યે-ત્યાદિ 'લોકસ્ય=પ્રાણિસહસ્ય સમયમ્=આચારં જ્ઞાત્વા=દુઃસ્વહેતું વિચાર્ય,
લોકો હિ ભોગેચ્છયા પ્રાણિપીડનાદિજનિતં કર્મ પરિગૃહ્ય નરકેપૃત્પદ્યતે, તતઃ કથં
ચિન્નિષ્ક્રાન્તો ધર્મોપાર્જનહેતુભૂતં મનુષ્યજન્માવાપ્ય પુનરપિ તત્તદેવ કર્મ કરોતિ યેન
યેન પુનરથોડ્યઃ સ્થાનં વ્રજતિ, ન કદાચિત્સંસારદાવાનલાદ્ વહિર્યાતીતિ લોકાચારઃ ।

इस जाननेरूप क्रियाका फल अज्ञानरूप द्रव्यनिद्रा और भावनिद्रा से
जीवका निवृत्त होना है । जीव जब इनसे निवृत्तिसंपन्न हो जाता है तब
वह यह समझने लगता है कि-यह लोक भोगोंकी इच्छासे प्राणिपीडन
आदि कृत्य करता है, और इस प्रकारके कृत्य करनेसे वह अशुभ क-
र्मोंका आस्रव कर बन्धक बनता है । उनके उदयमें इसको नरकादि अनेक
कुगतियोंमें जन्म मरण करना पड़ता है । वहाँसे निकलने पर यदि इसको
किसी शुभ कर्मके उदयसे मनुष्यभवकी-जिसमें कि इसको धर्मोपार्जन
करनेका अवसर मिलता है-प्राप्ति हो जाती है तो भी यह जीव बारंवार
उन्हीं कुकृत्योंको करता है, जिनकी वजहसे इसको पुनः नरकादि गतियों
में जाना पड़ता है । इस तरहसे इस जीवका कभी भी संसाररूपी दावा-
नलसे बाहर आना नहीं हो सकता है । यही इस लोकका आचार है । इस
आचारको-जिससे कि इसको अनेक अनेक संकटोंका सामना करना पड़ता
है-जान कर तुम इस द्रव्यरूप एवं भावरूप शस्त्रसे सदा निवृत्त होओ ।

કિયાનુ ક્ષણ હુ ખાનુ' કારણ જે અજ્ઞાનરૂપ દ્રવ્યનિદ્રા અને ભાવનિદ્રા છે તેનાથી
હવને નિવૃત્ત થવું છે હવ બ્યારે તેનાથી નિવૃત્તિસંપન્ન થઈ બાંધ છે ત્યારે તે
એવું સમજવા લાગે છે કે આ લોક, ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણિ-પીડન આદિ કૃત્ય
કરે છે અને આવા પ્રકારનું કૃત્ય કરવાથી તે અશુભ કર્મોનો આસ્રવ કરી બાંધક
બને છે તેના ઉદયમાં તેને નરકાદિ અનેક કુગતિઓમાં જન્મ મરણ કરવું પડે
છે, ત્યાંથી નિકળીને કદાચ કોઈ શુભ કર્મના ઉદયથી મનુષ્યભવની-કે જેમાં
તેને ધર્મોપાર્જન કરવાનો અવસર મળે છે-પ્રાપ્તિ થઈ બાંધ છે તો પણ તે હવ
વારંવાર તેજ કુકૃત્યો કરે છે કે જેનાથી તેને પુનઃ નરકાદિ ગતિઓમાં જવું
પડે છે. આવી રીતે આ હવને કદિ પણ સંસારરૂપી દાવાનળથી બહાર આવવાનું
બની શકતું નથી. એ જ આ લોકનો આચાર છે. આવા આચારને-કે જેનાથી
તેને અનેક સંકટોનો સામનો કરવો પડે છે-બાળીને તમે આ દ્રવ્યરૂપ તેમજ
ભાવરૂપ શસ્ત્રથી મદદ નિવૃત્ત થાઓ.

યદ્વા લોકસ્ય=જિનશાસનસ્ય સમયમ્=આચારં જ્ઞાનાચારાદિરૂપં પશ્ચવિધં જ્ઞાત્વા=મોક્ષસુખહેતુભૂતં સમ્યગવબુધ્ય, અત્ર=પડ્જીવનિકાયે શસ્ત્રોપરતઃ=શસ્ત્રાત્ દ્રવ્યભાવભેદમિત્તાત્ ઉપરતઃ=નિવૃત્તો ભવ । ધર્મજાગરણેન જાગૃહીત્યર્થઃ ।

સર્વોં હિ લોકઃ શબ્દાદિવિષયભોગેચ્છયા પ્રાણાતિપાતાદિકં નાનાવિધં કર્મ કરોતિ, તેન નરકાદિયાતનાસ્થાનેષુ ધોરતરં દુઃખમાપ્નોતિ, અતઃ પડ્જીવનિકાયે શસ્ત્રોપરતો ભવેતિ ભાવઃ ।

અથવા લોકસ્યેતિ પૃથ્વાઃ સપ્તમ્યર્થે વિધાનાત્ લોકે=પ્રાણિસદ્ધે ‘સમયં’ इत्यस्य समतामितिच्छाया तेन समतां स्वमीयदुःखादिना परदुःखादेस्तुल्यतां,

“સમયં લોગસ્સ જાણિત્તા इत्थं सत्योवरण” इसका यह भी अर्थ होता है कि-‘हे जम्बू ! तुम जिनशासनके ज्ञानाचार आदिरूप पांच प्रकारके आचारको मोक्षसुखका कारण अच्छी तरहसे जानकर पड्जीवनिकायके विषयमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे निवृत्त होओ, अर्थात्-सदा धर्मका आचरण करनेमें सतर्क रहो । भावनिद्रासे युक्त न बनो । सारांश इसका यही है कि-यह समस्त लोक शब्दादिक विषय भोगों की इच्छासे प्राणातिपातादिक अनेक प्रकारके दुष्कार्योंको करता है, उन से नरकादिक जो अनेक यातनाके स्थान हैं उनमें घोरतिघोर दुःखोंको भोगता है । इसलिये हे जम्बू ! पड्जीवनिकायके विषयमें शस्त्रसे सदा अलग रहो ।

અથવા “લોગસ્સ” इस षष्ठी विभक्तिके स्थानमें “लोके” इस सप्तमी विभक्तिका पाठ, तथा ‘समयं’की छाया “समतां” मान कर ऐसा अर्थ हो जाता है कि-हे जम्बू ! तुम सदा इस बातका भली प्रकार

“સમયં લોગસ્સ જાણિત્તા इत्थं सत्योवरण” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે-હે જમ્બૂ ! તમે જીનશાસનના જ્ઞાનાચાર આદિરૂપ પાંચ પ્રકારના આચારને મોક્ષ-સુખનું કારણ સારી રીતે બાણીને પડ્જીવનિકાયના વિષયમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી નિવૃત્ત થાઓ. અર્થાત્ સદા ધર્મનું આચરણ કરવામાં સતર્ક રહો. ભાવ નિદ્રાથી યુક્ત ન બનો. સારાંશ તેનો એ છે કે-આ સમસ્ત લોક, શબ્દાદિક વિષય-ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણાનિપાતાદિક અनेक પ્રકારના दुष्कार्यों કરે છે, તેનાથી નરકાદિક જે અનેક यातनाना स्थान છે તેમાં ધોરતિઘોર દુઃખો ભોગવે છે. તે માટે હે જમ્બૂ ! પડ્જીવનિકાયના વિષયમાં શસ્ત્રથી સદા અલગ રહો.

અથવા “લોગસ્સ” આ છઠ્ઠી વિભક્તિના સ્થાનમાં “લોકે” આ સપ્તમી વિભક્તિનો પાઠ તથા ‘સમયં’ની છાયા “સમતાં” માનીને એવો અર્થ થઈ જાય છે કે-હે જમ્બૂ ! તમે સદા આ વાતનો ભલી પ્રકારે વિચાર કરો કે જે પ્રકારે

‘યથા મમ દુઃસ્વાદિકં ભવતિ તથૈવાન્યેષામપ્યેકેન્દ્રિયાદીનાં મૃત્યુભીરૂપાં સુખેચ્છનાં તદ્વૃત્તપદ્ધતે’ इत्यनुभवसिद्धामात्मोपमां ज्ञात्वा अत्र=अस्मिन्-पद्मजीवनिकायरूपे लोके शस्त्रोपरतो भवेत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

પદ્મજીવનિકાયલોકે શસ્ત્રોપરતઃ સન્ યથા મુનિત્વં પ્રાપ્નોતિ તદાહ—
‘જસ્સિમે’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જસ્સિમે સદા ય રૂવા ય રસા ય ગંધા ય ફાસા ય અભિસમન્નાગયા ભવંતિ, સે આયવં નાણવં વયવં ધમ્મવં વંભવં પન્નાણેહિં પરિયાણઇ લોચં, મુળીતિ વુચ્ચે, ધમ્મવિઝ્ઞ ઉજ્જૂ, આવદ્દસોયસંગમભિજાણઇ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

વિચાર કરો કિ જિસ પ્રકાર હમેં હિંસાદિક કારણોંકે ઉપસ્થિત હોનેપર કષ્ટકા અનુભવ હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર દૂસરે એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોંકો —જો સદા મૃત્યુસે ડરતે હૈં ઔર સુખકે અભિલાપી હૈં—હિંસાદિક કારણોંકે ઉપસ્થિત હોનેપર દુઃખ હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર અનુભવસિદ્ધ —“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” ઇસ વાક્યકો અપને હૃદયપટલ પર ઉતાર કર કમી મી કિસી મી જીવકો કષ્ટ ન પહુંચે મેસી પ્રવૃત્તિ કરો । પરકે દુઃખોંકા અપને દુઃખોંકે સાથ મિલાન કર સદા જ્ઞાનીકો ઇસ વાતકા દૃઢ વિચાર કરના ચાહિયે કિ સંસારકે એકેન્દ્રિયસે લગા કર પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુસે ડરતે હૈં ઔર સુખકો ચાહતે હૈં, ઇસલિયે પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકમેં અપની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાલી બનાની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

અમને હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી કષ્ટનો અનુભવ થાય છે તે પ્રકારે જીન એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણીઓને—કે જે સદા મૃત્યુથી ડરે છે અને મુખના અભિલાપી છે—હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી દુઃખ થાય છે, આવા પ્રકારે અનુભવસિદ્ધ—“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” આ વાક્યને પોતાના હૃદયમાં ઉતારીને કોઈ વખત કોઈ પણ જીવને કષ્ટ ન પહોંચે તેવી પ્રવૃત્તિ કરે । પારકાના દુઃખોને પોતાના દુઃખોની સાથે મેળવી સદા જ્ઞાનીએ એ વાતનો દૃઢ નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે સંસારના એકેન્દ્રિયથી લઈ પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુથી ડરે છે અને મુખને ચાહે છે માટે પદ્મજીવનિકાય રૂપ લોકમાં પોતાની પ્રવૃત્તિ ત્રણ યતનાશાળી બનાવવા જોઈએ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—યસ્યેમે શબ્દાશ્ચ રૂપાણિ ચ રસાશ્ચ ગન્ધાશ્ચ સ્પર્શાશ્ચાભિસમન્વાગતા ભવન્તિ, સ આત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ વ્રહ્મવાન્ પ્રજ્ઞાનૈઃ પરિજાનાતિ લોકમ્, મુનિરિત્યુચ્યતે, ધર્મવિદ્ ઋજુઃ, આવર્તસ્રોતઃસદ્ગમભિજાનાતિ ॥ સૂં ૩ ॥

ટીકા—યસ્ય મુનેઃ, ઇમે=પ્રત્યક્ષમનુભૂયમાનાઃ, શબ્દાઃ રૂપાણિ રસા ગન્ધાઃ સ્પર્શાશ્ચ અનુકૂલપ્રતિકૂલરૂપાઃ, અભિસમન્વાગતાઃ—અભિ=આભિમુખ્યેન, સમ્યગ્= ઇષ્ટાનિષ્ટાવધારણેન, અનુ=શબ્દાદિસ્વરૂપાવગમાત્ પશ્ચાત્, આગતાઃ=વિજ્ઞાતાઃ, ભવન્તિ—શબ્દાદિવિષયાઃ પરમાર્થતઃ સંસારકારણતયાઽઽત્મકલ્યાણાય ન ભવન્તિ,

ષડ્જીવનિકાયરૂપ હસ લોકમેં દ્રવ્ય ઔર ભાવરૂપ શસ્ત્રસે ઉપરત હોતા હુઆ જીવ જિસ પ્રકારસે મુનિપનેકો પાતા હૈ ઉસીકા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—‘ જસ્સિમે ’ ઇત્યાદિ ।

જિસ મુનિકે લિયે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત શબ્દ; રૂપ, રસ, ગન્ધ ઔર સ્પર્શ, યે પૌદ્ગલિક ગુણ અનુકૂલ ઔર પ્રતિકૂલ હોતે હુએ ઇષ્ટ ઔર અનિષ્ટકી કલ્પનાકે કારણ નહીં બનતે હૈ, અર્થાત્ વે શબ્દાદિક વિષય પુદ્ગલકે ગુણ હૈ, ઇનસે મેરી આત્માકા કોઈ મી ઉપકાર યા અપકાર નહીં હો સકતા હૈ । ઇનમેં ઇષ્ટાનિષ્ટકી કલ્પના કરનેસે યે મેરે લિયે સંસારકા કારણ બનેંગે, ક્યોં કિ યે સ્વયં સંસારકે હી કારણ હૈ—મુક્તિકે નહીં । મુક્તિકે કારણ વે હી હોતે હૈ જિનસે હસ આત્માકા કલ્યાણ હોતા હૈ । ઇનસે તો મેરી આત્માકા કુછ મી કલ્યાણ નહીં હો સકતા હૈ, અતઃ ઇનમેં ઇષ્ટાનિષ્ટકી કલ્પના કર મૈં ક્યોં અપના વિગાડ કરૂં । ઇનકે સ્વરૂપકો જાનનેકે ઘાદ હસ પ્રકારકે દૃઢ અધ્યવસાયસે ઇન શબ્દાદિકોં

ષડ્જીવનિકાયરૂપ આ લોકમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી ઉપરત બનીને છવ જે પ્રકારે મુનિપણાને પ્રાપ્ત થાય છે તેનું પ્રતિપાદન કરે છે:—‘ જસ્સિમે ’ ઇત્યાદિ.

જે મુનિના માટે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત—શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ, એ પૌદ્ગલિક ગુણ અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ હોવા છતાં ઇષ્ટ અને અનિષ્ટની કલ્પનાના કારણ બનતા નથી. અર્થાત્ તે શબ્દાદિક વિષય પુદ્ગલનો ગુણ છે. તેનાથી મારા આત્માને કોઈ પણ ઉપકાર યા અપકાર બની શકતો નથી. તેમાં ઇષ્ટાનિષ્ટની કલ્પના કરવાથી એ મારા માટે સંસારનું કારણ બનશે. કારણ કે એ સ્વયં જ સંસારનું જ કારણ છે, મુક્તિનું નહિ મુક્તિનું કારણ તે બને છે જેનાથી આ આત્માનું કલ્યાણ થાય છે, આનાથી તો મારા આત્માનું કોઈ પણ કલ્યાણ બની શકતું નથી. માટે તેમાં ઇષ્ટાનિષ્ટની કલ્પના કરીને શા માટે યોતાનો બગાડ કરું. તેના સ્વરૂપને જાણ્યા બાદ આ પ્રકારના દૃઢ અધ્યવસાયથી તે શબ્દાદિકોમાં

અતસ્તત્ર મનોજ્ઞામનોજ્ઞવિષયેષુ યસ્ય રાગદ્વેષો નોત્પદ્યેતે इत्यर्थः, સ આત્મવાન્= જ્ઞાનાદિગુણસમ્પન્નઃ, યદ્વા-આત્મહિતાચરણપ્રવૃત્તિઃ, શબ્દાદિવિષયેષુ પ્રવર્તમાનમાત્માને તેભ્યઃ પૃથક્કૃત્ય તુપાદ્ધાન્યમિવ રક્ષિતેત્યર્થઃ । જ્ઞાનવાન્=હેયોપાદેયવિવેકવાન્, શબ્દાદિવિષયે રાગદ્વેષો કારણં, રાગદ્વેષતઃ કર્મબન્ધઃ, તસ્માત્ સંસારપરિભ્રમણં ભવતીત્યેવં વિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । તથા વેદવાન્ વેદ્યતે જ્ઞાયતે જીવાજીવાદિસ્વરૂપમનેનેતિ વેદઃ=આચારાદ્યાગમઃ, સોઽસ્યાસ્તીતિ વેદવાન્-આચારાદ્યાગમાધિગન્તેત્યર્થઃ, તથા-ધર્મવાન્-દુર્ગતો પ્રપતન્તં જીવં ધારયતિ રક્ષતીતિ ધર્મઃ-શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ

મેં-ચાહે યે અનુકૂલ હોં ચાહે પ્રતિકૂલ હોં-જિસ પ્રાણીકો રાગ ઔર દ્વેષ નહીં હોતે હેં વહી પ્રાણી આત્મવાન્ હૈ, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે સંપન્ન હૈ, અથવા આત્મહિતકારી આચરણમેં લવલીન હૈ । જિસ પ્રકાર તુપસે ધાન્ય અલગ કિયા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર શબ્દાદિ વિષયોંમેં પ્રવર્તમાન અપની આત્માકો ઉનસે અલગ કર વહ ઉસકી રક્ષા કરનેવાલા હૈ । જ્ઞાનવાન્ હૈ-હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકવાલા હૈ । ઇષ્ટ ઔર અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોંમેં પ્રવૃત્તિ ઔર નિવૃત્તિકે કારણ રાગ ઔર દ્વેષ હેં । રાગ ઔર દ્વેષસે નવીન કર્મોંકા બન્ધ, ઔર હસસે જીવોંકા સંસારમેં પરિભ્રમણ હોતા હૈ । વેદવાન્ હૈ-જીવાદિક પદાર્થોંકા સ્વરૂપ જિસસે જાના જાતા હૈ ઉસકા નામ વેદ હૈ, વે આચારાંગ આદિ આગમ હેં, હનકા જો જાન-નેવાલા હૈ ઉસકા નામ વેદવાન્ હૈ । ધર્મવાન્ હૈ-દુર્ગતિમેં પડતે હુए જીવોં કી રક્ષા કરતા હૈ ઉસકા નામ ધર્મ હૈ, વહ ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ હૈ, યહ

લલે તે અનુકૂળ હોય કે પ્રતિકૂળ હોય, જે પ્રાણીને રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તે પ્રાણી જ આત્મવાન છે. અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સંપન્ન છે, અથવા આત્મ-હિતકારી આચરણમાં લવલીન છે. જેવી રીતે તુપથી ધાન્ય અલગ કરવામાં આવે છે તેવી રીતે શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવર્તમાન પોતાના આત્માને તેનાથી અલગ કરી તે તેની રક્ષા કરવાવાળા છે, જ્ઞાનવાન્ છે-હેય અને ઉપાદેયના વિવેકવાળા છે-ઈષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિના કારણ રાગ અને દ્વેષ છે, રાગ અને દ્વેષથી નવીન કર્મોના બંધ અને તેનાથી જીવોનું સંસારમાં પરિભ્રમણ થાય છે. આવા પ્રકારના જ્ઞાનથી તે સંપન્ન છે. વેદ-વાન્ છે-જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપ જેનાથી બાણી શકે છે તેનું નામ વેદ છે. તે આચારાંગ આદિ આગમ છે. તેના જે બાણનાર છે તેનું નામ વેદવાન્ છે. ધર્મવાન્ છે-દુર્ગતિમાં પડતા જીવોની જે રક્ષા કરે છે તેનું નામ ધર્મ છે. તે ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ છે. તે જેની પાસે છે અર્થાત્ જે આ ધર્મનો પાલક છે, તેનું

સોઽસ્યાસ્તીતિ ધર્મવાન્ । તથા બ્રહ્મવાન્-બ્રહ્મ=મોક્ષસુખં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્-મોક્ષસુખાભિજ્ઞાનમિત્યર્થઃ, યદ્વા બ્રહ્મ=અષ્ટાદશવિધં બ્રહ્મચર્યં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, યદ્વા-બ્રહ્મ=કામસેવનપરિત્યાગઃ તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, इत्थंभूतः संयमी प्रज्ञानैः=પ્રકર્ષેણ જ્ઞાયતે જ્ઞેયં જીવાજીવાદિ યથાવસ્થિતસ્વરૂપં યૈસ્તાનિ પ્રજ્ઞાનાનિ-મત્યાદીનિ, તૈર્લોકં=પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપં પરિજાનાતિ । યદ્વા લોકં=શબ્દાદિવિષયલોકં પરિજાનાતિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા વન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતીત્યર્થઃ ।

યઃ સ્વત્વાત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ બ્રહ્મવાન્ સ એવ ચ મુનિરિત્યુચ્યતે ।
કિં ચ-ધર્મવિત્=જીવાજીવદ્રવ્યસ્વભાવાભિજ્ઞઃ, ઋજુઃ=ઋજુમાર્ગસ્ય સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાન-જિસકે પાસ હૈ, અર્થાત્ જો ઇસ ધર્મકા પાલક હૈ ઉસકા નામ ધર્મવાન્ હૈ । બ્રહ્મવાન્ હૈ-બ્રહ્મ શબ્દકા અર્થ મોક્ષસુખ હૈ, વહ જિસકો હૈ ઉસકા નામ બ્રહ્મવાન્ હૈ અર્થાત્ મોક્ષસુખકા જ્ઞાતા હૈ, અથવા ૧૮ અઠારહ પ્રકારકે બ્રહ્મચર્યકા જો પાલક હોતા હૈ વહ બી બ્રહ્મવાન્ હૈ, અથવા જો મૈથુનકા સર્વથા પરિત્યાગી હોતા હૈ વહ બી બ્રહ્મવાન્ હૈ । ઇસ પ્રકારકા સંયમી અઠ્ઠી તરહસે જીવાદિક પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો પ્રકાશિત કરનેવાલે પ્રજ્ઞાનોં-મત્યાદિક જ્ઞાનોં-કે દ્વારા લોક-પદ્મજીવનિકાય-કે સ્વરૂપકો જાનતા હૈ । અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે વન્ધકા કારણ જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા પરિહાર-ત્યાગ કર દેતા હૈ । જો આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ ઔર બ્રહ્મવાન્ હૈ વહી મુનિ કહા જાતા હૈ ।

કિંચ-જો ધર્મવિત્=જીવ-અજીવ દ્રવ્યકે સ્વરૂપકા જ્ઞાતા હૈ, તથા

નામ ધર્મવાન્ છે, બ્રહ્મવાન્ છે-બ્રહ્મ શબ્દનો અર્થ મોક્ષસુખ છે. જે તેને છે તેનું નામ બ્રહ્મવાન્ છે. અર્થાત્ મોક્ષસુખનો જ્ઞાતા છે, અથવા ૧૮ અઠાર પ્રકારના બ્રહ્મચર્યનો પાલક છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. અથવા જે મૈથુનનો સર્વથા પરિત્યાગી થાય છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. આવા પ્રકારનો સંયમી સારી રીતે શ્રવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાવાળાં પ્રજ્ઞાન-મત્યાદિક જ્ઞાનોદ્વારા લોક-પદ્મજીવનિકાય-ના સ્વરૂપને જાણે છે, અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બધનું કારણ જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિહાર-ત્યાગ કરે છે. જે આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ અને બ્રહ્મવાન્ છે તેને જ મુનિ કહેવામાં આવે છે.

વળી-જે ધર્મવિત્-શ્રવ અશ્રવ દ્રવ્યના સ્વરૂપનો જ્ઞાતા છે તથા ઋજુઃ

ચારિત્રલક્ષણસ્યાવલમ્બનાદકુટિલઃ, યદ્વા-સરલચિત્તઃ, આવર્તસ્રોતઃસદ્ગમ્=આવર્તો-
ભાવાવર્તો જન્મજરામરણાધિવ્યાધિવ્યસનોપનિષાતરૂપઃ સંસારઃ-ઉક્તञ्च—

“રાગદ્વેપવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે ભૃશમ્” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સ્રોતશ્ચાત્ર ભાવસ્રોતઃ-શબ્દાદિધિપયામિલાપઃ, આવર્તશ્ચ સ્રોતશ્ચાવર્તસ્રોત-
સી, તયોઃ સદ્ગમઃ=રાગદ્વેપકૃતઃ સમ્બન્ધઃ, તમ્ અભિજાનાતિ । સંસારસ્રોતઃસદ્ગમો
રાગદ્વેપકૃતો ભવતીતિ વિજ્ઞાય યસ્તં પરિહરતિ, સ એવાવર્તસ્રોતસોઃ સદ્ગમં વિજાના-
તીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

ઋજુઃ=સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષકે સરલ
માર્ગકે અવલમ્બનસે ઋજુપરિણામી-અકુટિલ, અથવા સરલચિત્ત હૈ
વહી હસ વાતકો જાન સકતા હૈ કિ-આવર્ત ઓર સ્રોતકા સમ્બન્ધ
રાગદ્વેપકૃત હૈ । આવર્ત્ત દો પ્રકારકા હૈ-એક દ્રવ્ય-આવર્ત્ત ઓર દૂસરા
ભાવ-આવર્ત્ત, જલપ્રવાહમેં ભંવર ઉટતા હૈ વહ દ્રવ્ય-આવર્ત્ત હૈ । જન્મ,
જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોંકા સ્થાનરૂપ સંસાર
ભાવ-આવર્ત્ત હૈ । કહા મી હૈ—

“રાગદ્વેપવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે ભૃશમ્” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્—યહ જગત્ રાગ ઓર દ્વેષસે વ્યાપ્ત હૈ, મિથ્યા દર્શનસે
યુક્ત હોનેકે કારણ યહ દુસ્તર હૈ, જન્મરૂપી આવર્ત્તમેં પડા હુઆ હૈ ઓર
પ્રમાદસે ઇતસ્તતઃ ચારોં ગતિઓમેં ચક્કર કાટતા ફિરતા હૈ ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષના સરલ માર્ગના અવલ-
મ્બનથી ઋજુપરિણામી-અકુટિલ અથવા સરલચિત્ત છે તે જ આ વાતને બાણી
શકે છે કે-આવર્ત્ત અને સ્રોતનો સંબંધ રાગદ્વેપકૃત છે. આવર્ત્ત બે પ્રકારના
છે. એક દ્રવ્ય-આવર્ત્ત અને બીજો ભાવ-આવર્ત્ત. જળ પ્રવાહમાં જે ભંવર પડે
છે તે દ્રવ્ય-આવર્ત્ત છે. જન્મ, જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોના
સ્થાનરૂપ સંસાર ભાવ-આવર્ત્ત છે. કહ્યું છે—

“રાગદ્વેપવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે ભૃશમ્” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ આ જગત રાગ અને દ્વેષથી વ્યાપ્ત છે. મિથ્યાદર્શનથી યુક્ત
હોવાને કારણે તે દુસ્તર છે. જન્મરૂપી આવર્ત્તમાં પડેલ છે અને પ્રમાદથી
આરે ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે ॥ ૧ ॥

આવર્તસ્રોતસોઃ સદ્ગમભિજાનન્ કં ગુણં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’
 ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સીઝસિણચ્ચાઈ સે નિગ્ગન્થે અરરરરરરરરરર ફરુસયં
 નો વેણ્ઙ, જાગર વેરોવરણ વીરે, એવં દુઃખા પમુક્ખસિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—શીતોષ્ણત્યાગી સ નિર્ગન્થઃ અરતિરતિસહઃ પરુપતાં નો વેત્તિ, જાગરો
 વૈરોપરતઃ, વીર એવં દુઃખાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ ૩ ॥

ટીકા—સ નિર્ગન્થઃ=વાહ્યાભ્યન્તરગ્રન્થરહિતો નિષ્પરિગ્રહ ઇતિ યાવત્, શીતો-
 ણ્ણત્યાગી=અનુકૂલપ્રતિકૂલપરિપઠં સહમાનઃ, અનુકૂલેઽનભિલાપી, પ્રતિકૂલે
 ચાનુદ્વેગીત્યર્થઃ । અરતિરતિસહઃ=અરતિં સંયમે, રતિમસંયમે સહમાનઃ—સંયમારાધને
 પરીપહોપસર્ગતઃ કદાચિદરતિરુત્પદ્યતે, કદાચિચ્ચાસંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તામરતિં રતિં

સ્રોત મી દ્રવ્ય ઓર ભાવકે મેદસે દો પ્રકારકા હૈ । નદી આદિકા
 પ્રવાહ દ્રવ્યસ્રોત હૈ । શબ્દાદિક વિષયોંકી અભિલાષા ભાવસ્રોત હૈ ।
 હન દોનોંકા સમ્બન્ધ રાગ એવં દ્વેષસે હુઆ હૈ, હસ યાતકો જાન કર
 જો ડનકે ડસ સમ્બન્ધકા પરિહાર—ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી આવર્ત ઓર
 સ્રોતકે સંગકા પરિજ્ઞાતા કહા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો મુનિ હસ આવર્ત ઓર સ્રોતકે સમ્બન્ધકો જાન લેતા હૈ વહ
 કિસ ગુણકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? સો કહતે હૈ—‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ ।

વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરિગ્રહસે રહિત—નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂલ
 ઓર પ્રતિકૂલ પરીષદોંકો સહન કરતા હુઆ અર્થાત્—અનુકૂલ પરીષદમ્હે
 અભિલાપી ઓર પ્રતિકૂલ પરીષદમ્હે ડહેગી ન વનતા હુઆ રતિ ઓર અરતિ

સ્રોત પણ દ્રવ્ય અને ભાવના લેદથી ઝે પ્રકારનું છે. નદી આદિનો પ્રવાહ
 દ્રવ્યસ્રોત છે. શબ્દાદિક વિષયોની અભિલાષા ભાવસ્રોત છે. એ બન્નેનો સંબંધ
 રાગ અને દ્વેષથી થયેલ છે. તે યાતને બાણી જે તેના તે સંબંધનો પરિહાર—
 ત્યાગ કરે છે તે આવર્ત અને સ્રોતના સંગનો પરિજ્ઞાતા કહેવાય છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે મુનિ આવર્ત અને સ્રોતના સંબંધને બાણી લે છે તે કેવા શુણ્ણને પ્રાપ્ત
 કરે છે ? તે કહે છે—‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ.

વાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત—નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂળ અને પ્રતિ-
 કૂળ પરીષદો સહન કરતાં થકાં અર્થાત્ અનુકૂળ પરીષદમાં અભિલાપી અને પ્રતિકૂળ
 પરીષદોમાં ડહેગી ન બનીને રતિ અને અરતિની ઉપેક્ષા કરી પરીષદોને કષ્ટબન્ધ

ચ કર્મવન્ધહેતુત્વાદુપેક્ષમાણ इत्यर्थः । परुषतां=परीषहाणां पारुष्यं कष्टजनकत्वरूपं नो वेत्ति—न तान् पीडाकारित्वेन गृह्णाति, अपि तु कर्मवन्धोच्छेदार्थमुद्यतः संसारादुद्दिग्ममनास्तान् साहाय्यकारित्वेनानुमन्यते इत्यर्थः ।

किंच—स जागरः=मिथ्यात्वाविरतिप्रमादनिद्रापगमाज्जागर्तीति जागरः—श्रुतचारित्र्यमाराधने सदा जागरूक इत्यर्थः । वैरोपरतः—वैरं परापकारचिन्तनं, तस्मादुपरतः, अत एव—वीरः=कर्मवैरिविदारणसमर्थो भवति । हे शिष्य ! एवम्=इत्थंभूतः श्रुतचारित्र्यमाराधने सदा जागरूकः परापकाराध्यवसायरहितः सन् दुःखात्=दुःस्वकारणात् कर्मणः प्रमोक्ष्यसे=मुक्तो भविष्यसि ॥ सू० ४ ॥

કી ઉપેક્ષા કર પરીષહોંકો કષ્ટજનક નહીં માનતા હૈ, કિન્તુ કર્મવન્ધ કે વિનાશ કરનેકી ઓર ઉચ્ચમી વહ અનગાર ડન પરીષહોંકો ડસ કર્મ વિનાશરૂપ કાર્ય મેં અપને સહાયક માનતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમેં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ હી અનુકૂલ પરીષહોંમેં અભિલાષી ઓર પ્રતિકૂલ પરીષહોંમેં ઉદ્દેગી બનતા હૈ । જિસકે પાસ પરિગ્રહ હી નહીં હૈ એસે સંયમી મુનિકે લિયે કયા પ્રતિકૂલ પરીષહ કયા અનુકૂલ પરીષહ સય એક સમાન હૈ । અનુકૂલમેં ઇસકી લાલસા નહીં ઓર પ્રતિકૂલમેં ઇસકો દ્વેષ નહીં, કારણ કિ ઇસ સિદ્ધાન્તકો ખલીઘાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ—સંસારકે મૂલ કારણ રાગ ઓર દ્વેષ હૈ । અનુકૂલમેં અભિલાષા હોની યહ રાગકી પર્યાય હૈ, ઓર પ્રતિકૂલમેં ઉદ્દેગ હોના દ્વેષ કી પર્યાય હૈ, અતઃ વહ દોનોં પ્રકારકે પરીષહોંકો સમભાવસે સહન કરતા હૈ । પરીષહો એવં ઉપસર્ગોસે કદાચિત્ ઇસકે ચિત્તમેં સંયમપરિ-

માનતા નથી, પણ કર્મબંધનો વિનાશ કરવાની તરફ ઉદ્યમી તે અણુગાર તેવા પરીષદોને તે કર્મવિનાશરૂપ કાર્યમાં પોતાના સહાયક માને છે.

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમાં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ જ અનુકૂળ પરીષદોમાં અભિલાષી અને પ્રતિકૂળ પરીષદોમાં ઉદ્દેગી બને છે. જેની પાસે પરિગ્રહ જ નથી એવા સંયમી મુનિ માટે શું પ્રતિકૂળ પરીષદ અને શું અનુકૂળ પરીષદ ? સઘળા એકસમાન છે. અનુકૂળમાં તેની લાલસા નહિ અને પ્રતિકૂળમાં તેને દ્વેષ નહિ, કારણ કે એ આ સિદ્ધાંતને સારી રીતે બાણી ચુકેલ છે કે સંસારનું મૂળ કારણ રાગ અને દ્વેષ છે. અનુકૂળમાં અભિલાષા થવી તે રાગની પર્યાય છે અને પ્રતિકૂળમાં ઉદ્દેગ થવો તે દ્વેષની પર્યાય છે, માટે સંયમી મુનિ તે બન્ને પ્રકારના પરીષદોને સમભાવથી સહન કરે છે. પરીષદો તેમજ ઉપસર્ગોથી દોષ વળત તેના ચિત્તમાં સંયમપરિણામ તરફ અવરતિ અને અસંયમપરિણામ તરફ રતિ થઈ

ળામકે પ્રતિ અરતિ ઔર અસંયમપરિણામકે પ્રતિ રતિ હો જાતી હો સો ભી વાત નહીં હૈ । ક્યોં કિ યહ ઇન દોનોં પ્રકારકી પરિણતિયોંકો ભી કર્મવન્ધકા કારણ જાન કર ઁનકી તર્ફસે ઉપેક્ષિત રહતા હૈ । પરીષહોં કો યહ અપને લિયે કષ્ટકારી નહીં માનતા હૈ પ્રત્યુત ઁન્હેં અપને લક્ષમેં અધિકરૂપ જુટાનેવાલે હોનેસે અપના સહાયક હી માનતા હૈ । સંસાર શરીર ઔર ભોગોંસે જો નિર્વિણ્ણ-ઉદાસ હોતા હૈ ઁસે પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ અપને લક્ષ્યસે નહીં ગિરા સકતે હૈં । ઁસે વ્યક્તિ વિઘ્નકારક કારણકલાપોંકો-પરીષહોંકો કર્મવન્ધકે ઉચ્છેદન કરનેમેં સુવર્ણમેં શુદ્ધિ લાનેકે લિયે અગ્નિરૂપ સહાયકકી તરહ અપના સહાયક માના કરતે હૈં ઔર ઁનકા સહર્ષ સ્વાગત કરતે હૈં ।

નિર્ગ્રન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ ઔર પ્રમાદરૂપ નિદ્રાકે અભાવસે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનમેં સદા જાગરૂક રહતા હૈ, ઁવં પરકે અપકાર કરનેકે વિચારરૂપ વૈરસે વિરક્ત હોતા હુઆ કર્મરૂપી વૈરીકો નિવારણ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ ભી શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમેં સદા જાગરૂક બન પરકે અપકાર કરનેકે અધ્યવસાયસે રહિત હોકર દુઃખ ઁવં દુઃખકે કારણ કર્મોંસે રહિત હો જાઓગે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જતી હોય તે પણ વાત નથી. કારણ કે તે આ બન્ને પ્રકારની પરિણતિઓને પણ કર્મબંધનું કારણ બાળીને તેની તરફથી ઉપેક્ષિત રહે છે. પરિષદોને તે પોતાને માટે કષ્ટકારી માનતો નથી પ્રત્યુત તેને પોતાના લક્ષમાં અધિકરૂપ બેડવાવાળા હોવાથી પોતાના સહાયક જ માને છે. સંસાર, શરીર અને ભોગોથી જે ઉદાસ થાય છે તેને પરીષદ અને ઉપસર્ગ પોતાના લક્ષથી દૂર કરી શકતા નથી. એવી વ્યક્તિ વિઘ્નકારક કારણકલાપોને-પરીષદોને કર્મબંધનું ઉચ્છેદન કરવામાં સુવર્ણમાં શુદ્ધિ લાવવા માટે અગ્નિરૂપ સહાયકની માફક પોતાના સહાયક માન્યા કરે છે, અને તેઓનું સહર્ષ સ્વાગત કરે છે.

નિર્ગ્રન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ અને પ્રમાદરૂપ નિદ્રાના અભાવથી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનમાં સદા જાગરૂક રહે છે અને પરના અપકાર કરવાના વિચારરૂપ વૈરથી વિરક્ત બનીને કર્મરૂપી વૈરીનું નિવારણ કરવામાં સમર્થ થાય છે. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં સદા જાગરૂક બની પરના અપકાર કરવાના અધ્યવસાયથી રહિત થઈ દુઃખ અને દુઃખના કારણ કર્મોથી રહિત બની જશો. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

यश्चावर्तस्रोतसोः सद्भादजागरः, स तु संसारदुःखान्न विमुच्यत इत्याशयेनाह—
'जरामच्चु०' इत्यादि ।

मूलम्—जरामच्चुवसोवणीए नरे सययं मूढो धम्मं नाभि-
जाणइ ॥ सू० ५ ॥

छाया—जरामृत्युवशोपनीतो नरः सततं मूढो धर्मं नाभिजानाति ॥ सू० ५ ॥

टीका—जरामृत्युवशोपनीतः=जरामरणपराधीनः, नरः=मनुष्यः, सततं=सर्वदा,
मूढः=मोहनीयोदयाद् विवेकरहितः धर्मः=श्रुतचारित्र्यलक्षणं नाभिजानाति । भाव-
सुप्तः संसारी मोक्षमार्गमप्राप्य पुनः पुनर्जरामृत्युवशंगतो दुःखान्तं नोपयातीति
भावः ॥ सू० ५ ॥

ननु जरामृत्युपारवश्यादेव दुःखान्तो न भवति चेत्तर्हि तत्पारवश्यवारणाय
मुमुक्षुणा किं कर्तव्यमिति जिज्ञासायामाह—'पासिय आउरपाणे' इत्यादि ।

मूलम्—पासिय आउरपाणे अप्पमत्तो परिव्वए । मंता एयं
मइमं पास ॥ सू० ६ ॥

छाया—दृष्ट्वा आतुरप्राणान् अप्रमत्तः परिव्रजेत् । मत्वा एतत् मतिमन्
पश्य ॥ सू० ६ ॥

जो आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धसे जागरूक नहीं है वह संसारके
दुःखोंसे छूट नहीं सकता । इस विषयमें कहते हैं—'जरामच्चु०' इ०।

जो आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धसे जागरूक नहीं हैं ऐसे मनुष्य
जरा और मरणके आधीन होकर निरन्तर मोहनीय कर्मके उदय
से विवेकरहित हो श्रुतचारित्र्यरूप धर्मको नहीं जानते हैं । इसका भाव
यही है कि भावसुप्त संसारी मोक्षमार्गको नहीं प्राप्त कर चारोंवार जरा
और मृत्युके आधीन होकर कभी भी दुःखोंसे छुटकारा नहीं पाते हैं । ५।

ले आवर्त्त अने स्रोतना संघंधधी जगइक नथी ते संसारना दुःखोधी
छुटी शकता नथी, ते विषयमां छुडे छे—'जरामच्चु०' इत्यादि.

ले आवर्त्त अने स्रोतना संघंधधी जगइक नथी तेवा मनुष्य जरा
अने मरणने आधीन जनी निरन्तर मोहनीय कर्मना उदयधी विवेकरहित धर्म
श्रुतचारित्र्यरूप धर्मने जगता नथी, आने लाव अे छे के लावसुप्त संसारी मोक्ष-
मार्गने प्राप्त कर्या बिना बारबार जरा अने मृत्युने आधीन जनी छदि पण दुःखोधी
छुटकारे भेजवता नथी, ॥ सू० ५ ॥

ટીકા—આત્મકલ્યાણાર્થી મનુષ્યઃ આતુરપ્રાણાન્=ભાવસ્વાપજનિતજરામરણ-પારવશ્યોપનીતદુઃસ્વસાગરાન્તઃપાતિપ્રાણિનઃ, દૃષ્ટા, અપ્રમત્તઃ=ભાવજાગરૂકઃ સન્ પરિવ્રજેત્=સંયમારાધનતત્પરો ભવેત્ । મતિમન્=હે મેધાવિન્ શિષ્ય ! ત્વમપિ ઇત્=સુપ્તદૂષણં જરામૃત્યુપારતન્ન્યમ્, મત્વા=જ્ઞાત્વા પશ્ય=ચક્ષુરુન્મીલય-સંયમ-ધર્મં જાગૃહીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

યદિ જરા ઔર મૃત્યુકી પરવશતાસે જીવોંકે દુઃસ્વોંકા અન્ત નહીં હોતા હૈ તો ફિર ઉનકી પરવશતાકો દૂર કરનેકે લિયે સુમુક્ષુ પ્રાણિયોંકો ક્યા ઉપાય કરના ચાહિયે ? હસ પ્રકારકી જિજ્ઞાસાકા સમાધાન કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ પાસિય આઝરપાણે ’ ઇત્યાદિ ।

“ આત્મકલ્યાણકા અભિલાષી મનુષ્ય ભાવનિદ્રાસે ઉત્પન્ન, જરા ઔર મરણકી પરવશતાસે પ્રાપ્ત દુઃસ્વરૂપી સાગરમેં પડે હુએ પ્રાણિયોંકો દેશ્વ કર ભાવનિદ્રાકા પરિત્યાગ કરકે સંયમકી આરાધના કરનેમેં સદા તત્પર રહે ” પ્રભુકે હસ સર્વોત્તમ ઉપદેશસે હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ ઢી ભાવનિદ્રાજન્ય જરા ઔર મરણકી પરવશતારૂપ દૂષણકો જાનકર સદા સંયમરૂપ ધર્મમેં જાગરૂક રહો ।

ભાવાર્થ—પ્રભુકા ઉપદેશ હૈ કિ—આત્મકલ્યાણકી કામના કરનેવાલા મનુષ્ય ભાવનિદ્રાકા પરિત્યાગ કરે, ક્યોંકિ નિદ્રાકે સદ્ભાવમેં જરા ઔર મરણજન્ય અનેક દુઃસ્વોંકા કમી ઢી અન્ત નહીં આ સકતા હૈ । હન દુઃસ્વોંસે છુટકારા કરનેવાલા યદિ કોઈ હૈ તો વહ ભાવનિદ્રાકા અભાવ

કદાચ જરા અને મૃત્યુની પરવશતાથી હૃદયના દુઃખનો અંત થતો નથી તો પછી તેની પરવશતાને દૂર કરવા માટે સુમુક્ષુ પ્રાણિઓએ શો ઉપાય કરવો જોઈએ ? આવા પ્રકારની હિજાસાતું સમાધાન કરવા માટે કહે છે—‘ પાસિય આઝરપાણે ’ ઇત્યાદિ.

“ આત્મકલ્યાણના અભિલાષી મુનિ ભાવનિદ્રાથી ઉત્પન્ન જરા અને મરણની પરવશતાથી પ્રાપ્ત દુઃખરૂપી સાગરમાં પડેલાં પ્રાણીઓને દેખીને ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરીને સંયમની આરાધના કરવામાં સદા તત્પર રહે ” પ્રભુના આ સર્વોત્તમ ઉપદેશથી હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ ભાવનિદ્રાજન્ય જરા અને મરણની પરવશતારૂપ દૂષણને જાણીને સદા સંયમરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક રહો.

ભાવાર્થ—પ્રભુનો ઉપદેશ છે કે—આત્મકલ્યાણની કામના કરવાવાળા મુનિ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે આ નિદ્રાના સદ્ભાવમાં જરા અને મરણ જન્ય અનેક દુઃખોનો કદિ પણ અંત આવી શકતો નથી. આ દુઃખોથી છુટકારો કરાવનાર જે કોઈ હોય તો તે ભાવનિદ્રાનો અભાવ છે. સંસારી પ્રાણી જે

કિञ્ચ—

મૂલમ્—આરંભજં દુઃસ્વમિનંતિ ણચ્ચા, માયી પમાઈ પુનરેઈ ગવ્ભં।

उवेहमाणो सद्वरूपेसु अंजू, माराभिसंकी मरणा पमुच्चइ॥सू० ७॥

छाया—आरम्भजं दुःस्वमिदमिति ज्ञात्वा, मायी प्रमादी पुनरेति गर्भम् । उपेक्षमाणः शब्दरूपेषु (यः) ऋजुः, माराभिगङ्गी (सः) मरणात् प्रमुच्यते ॥सू० ७॥

ટોકા—इदं=संसारपरिभ्रमणरूपं दुःस्वम्, आरम्भजम्=सावद्यक्रियानुष्ठान-फलभूतम्, इति ज्ञात्वा आत्मकल्याणाय जाग्रहि । भावसुप्तः किं प्राप्नोतीत्याह—‘मायी’ इत्यादि । मायी=क्रोधादिकपाययुक्तः, कपायमध्यवर्तिमायाग्रहणेन पूर्वापरकपायाणामपि ग्रहणम् । प्रमादी=मद्यादिसेवी पुनः=वारं वारं, गर्भमेति=नरकादियातनामनुभूय सकलदुःस्वहेतुभूतं गर्भं प्राप्नोति ।

है । संसारी प्राणी जो जन्म मरणके अनन्त कष्टोंको भोग रहे हैं उसका कारण भावनिद्राका सद्भाव ही है, ऐसा समझकर और प्रभुके उपदेश पर ध्यान देकर हे मतिमान् शिष्य ! तुम अनर्थात्पादक इस निद्राका परित्याग करो, अर्थात् संयमधर्ममें सदा जागरूक रहो, जिससे जरा-मरणजन्य कष्टोंसे तुम्हें छुटकारा मिले ॥ सू० ६ ॥

फिर भी कहते हैं—‘आरंभज’ इत्यादि ।

‘सावद्य क्रियाओंके अनुष्ठानका फल ही यह संसारका परिभ्रमणरूप दुःस्व है’ ऐसा जानकर हे शिष्य ! तुम आत्मकल्याणकी ओर अपनी प्रवृत्ति करो । यहां कपायोंके मध्यवर्त्ती मायाका ग्रहण करनेसे अन्य कपायोंका भी ग्रहण हो जाता है अतः भावसुप्त प्राणीके ये चिह्न हैं कि वह क्रोधादिक कपायोंसे युक्त होता है । प्रमादसेवी-मद्यादिकका सेवन

જન્મ મરણના અનંત કષ્ટોને ભોગવી રહ્યા છે તેનું કારણ ભાવનિદ્રાનો સદ્ભાવ જ છે. એવું સમજીને અને પ્રભુના ઉપદેશ ઉપર ધ્યાન આપીને હે મતિમાન શિષ્ય ! તમે અનર્થોત્પાદક આ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમાં સદા જાગરૂક રહો, જેથી તમને જન્મમરણજન્ય દુઃખોથી છુટકારો મળે ॥ સૂ. ૬ ॥

ફરી કહે છે—‘આરંભજ’ ઇત્યાદિ.

સાવધ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનનું ફળ જ આ સંસારના પરિભ્રમણરૂપ દુઃખ છે. એવું બાણીને હે શિષ્ય ! તમે આત્મકલ્યાણની તરફ ચોતાની પ્રવૃત્તિ કરો. અહીં કપાયોના મધ્યવર્તી માયાનું ગ્રહણ કરવાથી અન્ય કપાયોનું પણ ગ્રહણ થાય છે, માટે ભાવસુપ્ત પ્રાણીનું એ ચિન્હ છે કે તે ક્રોધાદિ કપાયોથી યુક્ત બને છે, પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકનું સેવન કરવાવાળા બને છે “પુનરપિ જનનં પુનરપિ

एवं भावसुप्तस्य दोषं पर्यालोच्य यः शब्दरूपेषु=इदमुपलक्षणं, तेन शब्दरूप-
रसगन्धस्पर्शेषु विषयेषु इत्यर्थः, उपेक्षमाणो=रागद्वेषरहितः ऋजुः=अवक्रहृदयो
मायाप्रमादपरिवर्जितः, माराभिशङ्की=पुनः पुनर्मरणदुःखाभ्यागमशङ्कया भीरुः,
तद्दुःखपरिहारार्थं श्रुतचारित्रधर्मे जागरूक इति यावत्, स मरणात् प्रमुच्यते ॥ सू० ७ ॥
किञ्च—

मूलम्—अप्पमत्तो कामेहि, उवरओ पावकम्मेहिं, वीरे आ-
यगुत्ते जे खेयत्ते ॥ सू० ૮ ॥

करनेवाला होता है “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे
शयनम्” बारंवार जन्म मरण और गर्भमें आगमन; इनसे उसका
छुटकारा नहीं होता है। सावध क्रियाओंमें तत्पर प्राणी नरकनिगोदा-
दिककी अनन्त यातनाओंको भोगता हुआ इनसे भी अधिक कष्टोंके
स्थानभूत गर्भमें जाकर बसेरा करता है।

इस प्रकार भावसुप्त प्राणीकी जब यह दशा होती है तब संयमी
मुनिका कर्तव्य है कि वह इस भावनिद्राका परिहार करे और पांच
इन्द्रियोंके विषयों—शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श—में रागद्वेषरहित
होकर मायाप्रमादसे अपनी प्रवृत्तिको सुरक्षित रखता हुआ बारंवार
जन्म मरणके दुःखोंको प्राप्त होनेकी आशङ्कासे भयभीत होकर सांसा-
रिक दुःखोंसे छुटकारा पानेके लिये श्रुतचारित्ररूप धर्ममें सदा जागरूक
रहे। इस प्रकारकी प्रवृत्तिसे ही प्राणी मरणसे छूट सकता है, अन्यथा
नहीं ॥ सू० ७ ॥

મરણં પુનરપિ જનનીજઠરે શયનમ્” વારંવાર જન્મ મરણ અને ગર્ભમાં આગ-
મન, તેનાથી તેના છુટકારો થતો નથી. સાવધ ક્રિયાઓમાં તત્પર પ્રાણી નરક-
નિગોદાદિકની અનન્ત યાતનાઓને ભોગવતાં તેનાથી પણ અધિક કષ્ટોના સ્થાનભૂત
ગર્ભમાં સ્થાન લે છે.

આવા પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણીની ત્યારે આવી દશા થાય છે ત્યારે સંયમી
મુનિનું એ કર્તવ્ય છે કે તે આ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે અને પાંચ ઈન્દ્રિ-
યોના વિષયો—શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શો—માં રાગદ્વેષ રહિત બનીને માયા
પ્રમાદથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સુરક્ષિત રાખીને વારંવાર જન્મ મરણના દુઃખોને
પ્રાપ્ત થવાની આશંકાથી લચલીત બની સાંસારિક દુઃખોથી છુટકારો મેળવવા
માટે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં સદા જાગરૂક રહે આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જ
પ્રાણી મરણથી છુટી શકે છે, અન્યથા નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—અપમત્તઃ કર્મૈઃ, ઉપરતઃ પાપકર્મભ્યઃ, વીરો ગુપ્તાત્મા યઃ खेदज्ञः॥૮॥

ટીકા—યઃ खेदज्ञः=સંસારિણાં દુઃસ્વામિજ્ઞઃ, સ કામૈરપમત્તઃ=કામભોગકૃત-પ્રમાદરહિતઃ, પાપકર્મભ્ય ઉપરતઃ=મનોવાકાચૈઃ સાવચવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્તઃ, અતएव वीरः=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ગુપ્તાત્મા=આત્મરક્ષણપરાયણઃ આત્મોદ્ધારકારીત્વર્થઃ ॥૮॥

खेदज्ञस्य गुणमाह—‘ जे पञ्जवज्जायसत्थस्स ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—जे पञ्जवज्जायसत्थस्स खेयण्णे, से असत्थस्स खेयन्ने, जे असत्थस्स खेयण्णे, से पञ्जवज्जायसत्थस्स खेयन्ने ॥ ९ ॥

છાયા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः, સઃ અશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः, યઃ અશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः ॥ સૂ. ૯ ॥

फिर भी कहते हैं—‘ अप्पमत्तो ’ इत्यादि ।

જો સંસારી જીવોંકે દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા હૈ વહ કામભોગજન્ય પ્રમાદસે રહિત હોકર મન વચન ઔર કાયસે હોનેવાલે સાવચ વ્યાપારોંસે દૂર રહતા હુઆ કર્મોંકે નાશ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ, યહી આત્મરક્ષા હૈ । હસ અપની રક્ષા કરને મેં વહ તત્પર રહતા હૈ, અર્થાત્ અપની આત્માકા ઉદ્ધાર કરનેવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ. ૮ ॥

જો હસ પ્રકારસે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ ઉસે કયા લાભ હોતા હૈ ? સો બતાવે હૈ—‘ જે પજ્જવજ્જાય ’ ઇત્યાદિ ।

‘ પર્યવ ’ શબ્દકા અર્થ—શબ્દાદિ વિષયોંકે ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવચકર્મ, ‘ खेदज्ञ ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિયોંકે સાવચક્રિયાજન્ય દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા, હોતા હૈ ।

ફરીથી કહે છે—‘ अप्पमत्तो ’ ઇત્યાદિ.

જે સંસારી છવોના દુઃખોનો જ્ઞાતા છે તે કામભોગજન્ય પ્રમાદથી રહિત બનીને મન વચન અને કાયાથી બનનારા સાવચ વ્યાપારોથી દૂર રહીને કર્મોના નાશ કરવામાં સમર્થ થાય છે. તે જ આત્મરક્ષા છે. આ પોતાની રક્ષા કરવામાં તત્પર રહે છે, અર્થાત્ પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર કરવાવાળો થાય છે. ॥ સૂ. ૮ ॥

જે આવા પ્રકારથી નિષ્ણાત બની જાય છે તેને શુ લાભ થાય છે ? તે બતાવે છે—‘ જે પજ્જવજ્જાય ’ ઇત્યાદિ

‘ પર્યવ ’ શબ્દનો અર્થ—શબ્દાદિક વિષયોના ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવચ કર્મ, ‘ खेदज्ञ ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિયોના સાવચ ક્રિયાજન્ય દુઃખોનો જ્ઞાતા, થાય છે.

ટીકા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય—પર્યવાઃ=શબ્દાદિવિષયપ્રકારાઃ તેષુ=તન્નિમિત્તં જાતં શસ્ત્રં=પર્યવજાતશસ્ત્રં=શબ્દાદિવિષયવિશેષોપભોગાર્થં યત્ પ્રાણિનાં પીડના-દિરૂપં સાવધકર્મ, તસ્ય ચેદજ્ઞઃ=સાવધક્રિયાસમુત્પાદિતપ્રાણિદુઃખાભિજ્ઞઃ, સઃ અશસ્ત્રસ્ય=નિરવધક્રિયારૂપસ્ય સંયમસ્ય ચેદજ્ઞઃ=અભ્યાસજ્ઞઃ, સંયમારાધને યાવદ-ધિકદુઃખસહનં તાવદધિકકર્મનિર્જરા ભવતીત્યભિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । યશ્ચાશસ્ત્રસ્ય=સંયમસ્ય ચેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ ચેદજ્ઞઃ ।

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષયોંકા ઉપ-ભોગ કરનેકી લાલસાકે અધીન બનકર હી અપની પ્રવૃત્તિકો અસંયમિત બનાતે હૈં । ઉનકી હસ અસંયમિત પ્રવૃત્તિસે ત્રસ-સ્થાવર પ્રાણિયોંકો અનેક પ્રકારકે કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં । અસંયમી જીવોંકી અનર્ગલ પ્રવૃત્તિ હી અન્ય જીવોંકે લિયે અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકો દેનેવાલી હોતી હૈ । સંયમી જીવ હસ વાતકા સદા વિશેષ ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહીં મેરી પ્રવૃત્તિસે પ્રાણિયોંકો દુઃખ ન પહુંચે । હસલિયે વહ અપની પ્રવૃત્તિકો ઇતની સંય-મિત રખતા હૈ કિ કોઈ ભી પ્રાણી ઉસસે દુઃખી નહીં હો પાતા । વહ અપની હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિકો ઉત્તરોત્તર વધાનેકા ઇતના અધિક સે અધિક અભ્યાસ કરતા હૈ કિ યહ કમી ન કમી વીતરાગ પદકા ધારક હો જાતા હૈ । વહ જાનતા હૈ કિ મૈં સંયમકે આરાધનમૈં જિતને અધિક દુઃખોંકો સહુંગા ઉતની હી અધિક મેરે કર્મોંકી નિર્જરા હોગી, યહી વીત-રાગપદ તક પહુંચનેકી ઉત્તમ સીદ્ધી હૈ । હસ પ્રકાર જો નિરવધ ક્રિયા

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોના ઉપભોગ કરવાની લાલસાને આધીન બનીને જ પોતાની પ્રવૃત્તિને અસંયમિત બનાવે છે. તેની આ અસંયમિત પ્રવૃત્તિથી ત્રસ સ્થાવર પ્રાણીઓને અનેક પ્રકારના કષ્ટ ભોગવવા પડે છે. અસંયમી જીવોની સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિ જ અન્ય જીવો માટે અનેક પ્રકારના કષ્ટોને દેવાવાળી બને છે. સંયમી જીવ આ બાબતનું સદા વિશેષ ધ્યાન રાખે છે કે કદાચ મારી પ્રવૃત્તિથી પ્રાણીઓને દુઃખ ન પહોંચે. તેટલા માટે તે પોતાની પ્રવૃત્તિને આટલી સંયમિત રાખે છે કે કોઈ પણ પ્રાણી તેનાથી દુઃખી થતો નથી. તે પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિને ઉત્તરોત્તર વધારવાનો એટલો અધિકથી અધિક અભ્યાસ કરે છે કે તે કોઈને કોઈ વખત વીતરાગપદનો ધારક બને છે, તે બાજુ છે કે હું જેટલું સંયમ આરાધનમાં દુઃખ સહન કરીશ તેટલી જ મારે કર્મોની નિર્જરા થશે, આજ વીતરાગપદ સુધી પહોંચવાની ઉત્તમ સીદ્ધી છે. આ પ્રકારે જે નિરવધક્રિયાએ સંયમનો અભ્યાસ કરવામાં કર્મદ-કુશળ છે તે

અર્થ ભાવ:—યોડ્નુકૂલપ્રતિકૂલશબ્દાદિવિષયપ્રાપ્તિપરિહારાર્થ સાવચકર્માનુષ્ઠાનં શસ્ત્રરૂપં વેત્તિ સ સંયમમપિ સર્વજીવોપકારકમશસ્ત્રરૂપ જાનાતિ । શસ્ત્રાશસ્ત્રરૂપતાં વિદંસ્તત્ર નિવર્તતે પ્રવર્તતે ચ । સકલસાવધવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્ત્યા સંયમારાધને પ્રવૃત્ત્યા ચ મૃને: કર્મક્ષયો ભવતીતિ ।

યદ્વા-ય: પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય=પર્યવજાતસ્ય=શબ્દાદિપર્યાયજનિતસ્યાષ્ટવિધકર્મણ: શસ્ત્રં=તપ: તદ્દહનજનકત્વાત્, તસ્ય ય: સ્વેદજઃ, સોડશસ્ત્રસ્ય સંયમસ્યાપિ સ્વેદજઃ ।

રૂપ સંયમકે અભ્યાસ કરનેમેં કર્મઠ-કુશલ-હૈ વહ જિન ૨ કાર્યોસે પ્રાણિયોંકે પ્રાણોંકો કષ્ટ પહુંચે એસી સાવચ ક્રિયાઓંસે સદા વિરક્ત હી રહતા હૈ ।

વિસ્તરાર્થ—જો અનુકૂલ ઓર પ્રતિકૂલ શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ એવં પરિહારકે લિયે સાવચ ક્રિયાકો શસ્ત્રરૂપ માનતા હૈ, વહ યહ બી-સમઘટતા હૈ કિ સંયમ સર્વ જીવોંકા ઉપકારક હોનેસે અશસ્ત્રરૂપ હૈ । ઇસ પ્રકાર વહ સાવચ ક્રિયામેં શસ્ત્રરૂપતા ઓર સંયમમેં અશસ્ત્રરૂપતા જાન કર અશસ્ત્રરૂપ સંયમમેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ઓર શસ્ત્રરૂપ સાવચ ક્રિયાઓંકે અનુષ્ઠાનસે વિરક્ત હોતા હૈ । યહ માની હુઈ વાત હૈ કિ-મુનિકે, કર્મોંકા નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોંકી નિવૃત્તિસે ઓર સંયમકી આરાધનામેં પ્રવૃત્તિ કરનેસે હી હોતા હૈ ।

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દકા અર્થ—‘શબ્દાદિ પર્યાય’ હૈ, ‘જાત’ શબ્દ કા અર્થ—‘ઉત્પન્ન’ હૈ, ‘શસ્ત્ર’ શબ્દકા અર્થ ‘તપ’ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ-શબ્દાદિ પર્યાયોંસે ઉત્પન્ન હોનેવાલે આઠ પ્રકારકે કર્મોંકા શસ્ત્ર તપ હૈ,

જે જે કાર્યોંથી પ્રાણીઓના પ્રાણોને કષ્ટ પહોંચે એવી સાવચ ક્રિયાઓંથી સદા વિરક્ત જ રહે છે.

વિસ્તરાર્થ—જે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ શબ્દાદિક વિષયોની પ્રાપ્તિ તેમજ પરિહાર માટે સાવચ ક્રિયાને શસ્ત્રરૂપ માને છે તે એ પણ સમજે છે કે સંયમ સર્વ જીવોનો ઉપકારક હોવાથી અશસ્ત્રરૂપ છે, આ પ્રકારે તે તેમાં શસ્ત્ર અને અશસ્ત્રરૂપતા બંનેને અશસ્ત્રરૂપ સંયમમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, અને શસ્ત્રરૂપ સાવચ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનથી વિરક્ત થાય છે. એ માનેલી વાત છે કે મુનિને કોનેના નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોની નિવૃત્તિથી અને સંયમની આરાધનામાં પ્રવૃત્તિ કરવાથી જ થાય છે.

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દનો અર્થ શબ્દાદિ પર્યાય છે; ‘જાત’ શબ્દનો અર્થ ‘ઉત્પન્ન’ છે. ‘શસ્ત્ર’ શબ્દનો અર્થ ‘તપ’ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે શબ્દાદિ પર્યાયોંથી ઉત્પન્ન હોવાવાળા આઠ પ્રકારના કર્મોંનું શસ્ત્ર તપ છે, કારણ

યોઽશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः, स पर्यवजातशस्त्रस्यापि खेदज्ञः । संयमतपःखेदज्ञस्यास्रवनिरो-
धादनादिभवोपार्जितकर्मणां क्षयो भवतीति भावः ॥ सू० ९ ॥

खेदज्ञस्य मुनेः कर्मक्षयात् किं फलं भवतीत्याह—‘अकम्मस्स’ इत्यादि ।

मूलम्—अकम्मस्स व्यवहारो न विज्झइ, कम्ममुणा उवाही
जायइ॥ सू० १० ॥

छाया—अकर्मणो व्यवहारो न विद्यते । कर्मणा उपाधिर्जायते ॥ सू० १० ॥

टीका—अकर्मणः=अप्रविधकर्मरहितस्य व्यवहारः=नारकतिर्यग्देवमनुष्यादि-
व्यपदेशो न भवति । यश्च कर्मबन्धयुक्तः स एव नारकादिव्यपदेशभाग् भवती-
क्यों कि तप कर्मोंको जला कर नाश कर देता है । इस शस्त्र-तप-का जो
खेदज्ञ-जानकार है वह मुनि अशस्त्र-संयम-का भी जानकार है । जो
अशस्त्र-संयमका जानकार है वह शब्दादिपर्यायजनित आठ प्रकारके
कर्मोंके विनाश करवाले शस्त्र-तप-का भी जानकार है । इन दोनोंको
जाननेवाले मुनि के आस्रवका निरोध होनेसे अनादि भवोंसे संचित
कर्मोंका क्षय होता है ॥ सू० ९ ॥

खेदज्ञ मुनिको कर्मोंका क्षय होनेसे क्या लाभ होता है ? इसका
खुलासा करते हैं—‘अकम्मस्स’ इत्यादि ।

‘अकर्मणः व्यवहारो न विद्यते’ जो आठ प्रकारके कर्मोंसे रहित
हो जाता है उसके चारों प्रकारकी गतियोंके सर्वथा अभाव हो जानेसे
उसके लिये नारक, तिर्यश्च, मनुष्य और देव, इत्यादि शब्दोंका व्यव-

હે તપ કર્મેની બાળીને નાશ કરી નાંખે છે. આ શસ્ત્ર-તપનો જે ખેદજ્ઞ બાણુકાર છે
તે મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમનો પણ બાણુકાર છે, જે અશસ્ત્ર-સંયમનો બાણુકાર છે તે
શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારના કર્મેની વિનાશ કરવાવાળા શસ્ત્ર-તપનો
પણ બાણુકાર છે. એ બંનેને બાણુવાળા મુનિના આસ્રવનો નિરોધ હોવાથી
અનાદિ ભવોથી સંચિત કર્મેની ક્ષય થાય છે ॥ સૂ. ૯ ॥

ખેદજ્ઞ મુનિને કર્મેની ક્ષય થવાથી શું લાભ થાય છે ? તેનો ખુલાસો કરે
છે—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ.

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જે આઠ પ્રકારના કર્મેથી રહિત થાય છે
તેને ચારે પ્રકારની ગતિઓનો સર્વથા અભાવ થઈ જવાથી નારક તિર્યચ મનુષ્ય
અને દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોનો વ્યવહાર થતો નથી આ પ્રકારના વ્યવહારનું કારણ

ત્યાદ્-‘કર્મણા’ इत्यादि । उपाधीयते व्यपदिश्यते येन स उपाधिः=विशेषणम्, यद्वा-उपाधिः=संसारपरिभ्रमणरूपः, कर्मणा=ज्ञानावरणीयादिना जायते । जीवस्य यावत् कर्मसंबन्धस्तावदुपाधिर्जायते-इत्यर्थः ।

उपाधिसिद्धि-आत्मशरीरकर्मभेदात् । तत्रात्मोपाधिः-आत्मनो दुष्प्रयुक्तत्वम्, ततः कर्मोपाधिर्जायते । स एव शरीरोपाधित्वेन व्यपदिश्यते । नारकादिशरीरो-
द्धार नहीं होना है । इस प्रकारके व्यवहारका कारण कर्मबन्ध था, वह उसका नष्ट हो चुका है । कर्मबन्धसहित जीवके लिये ही यह व्यवहार घटित होता है, उससे रहित जीवके लिये नहीं । ‘उपाधि’ शब्दका अर्थ विशेषण है, कर्मबन्धसहित जीवके ही नारकी, मनुष्य आदि विशेषण संगत बैठते हैं । क्यों कि मनुष्यगति-नामकर्मके उदयसे जीव मनुष्य-विशेषणवाला होता है, नरकगति-नामकर्मके उदयसे जीव ‘नारकी’ इस विशेषणवाला होता है, इत्यादि । तात्पर्य यह कि-कर्मबन्धसहित जीवके तत्तत्कर्मोदयमें तत्तद्व्यपदेशता घटित होती है । अथवा संसारपरिभ्रमणका नाम भी उपाधि है । यह संसारपरिभ्रमणरूप उपाधि ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके संबन्धसे ही जीवको प्राप्त होती है । जीवको जब तक कर्मका सम्बन्ध रहता है तब तक ही उपाधिका सद्भाव रहता है ।

आत्मा शरीर और कर्मके भेदसे उपाधि तीन प्रकारकी है । अशुभ वृत्ति-छोटा प्रणिधान आत्माकी उपाधि है । आत्मा जब अशुभ क्रियाओंमें प्रवृत्ति करता है या अशुभ प्रणिधानवाला

કર્મબંધ હતું તે તેને નાશ થઈ ચુકેલ છે. કર્મબંધસહિત જીવને જ આ વ્યવહાર ઘટિત થાય છે. તેનાથી રહિત જીવને નહિ.

‘उपाधि’ शब्दનો અર્થ વિશેષણ છે. કર્મબંધસહિત જીવને જ નારકી, મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત બેસે છે, કારણ કે મનુષ્યગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જીવ મનુષ્યવિશેષણવાળા થાય છે, નરકગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જીવ ‘નારકી’ એવા વિશેષણવાળા થાય છે, ઇત્યાદિ. તાત્પર્ય એ કે-કર્મબંધસહિત જીવને તત્તત્કર્મોદયમા તત્તદ્વ્યપદેશતા ઘટિત થાય છે. અથવા સંસારપરિભ્રમણનું નામ પણ ઉપાધિ છે. આ સંસારપરિભ્રમણરૂપ ઉપાધિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંબંધથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. જીવને જ્યાં સુધી કર્મનો સંબંધ રહે છે ત્યાં સુધી જ ઉપાધિનો સદ્ભાવ રહે છે.

આત્મા, શરીર અને કર્મના ભેદથી ઉપાધિ ત્રણ પ્રકારની છે. અશુભવૃત્તિ-જોડા પ્રણિધાન-વિચાર આત્માની ઉપાધિ છે. આત્મા જ્યારે અશુભ ક્રિયાઓમાં

પાધિના નારકાદિરિત્યુચ્યતે, યથા-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ સદ્ભાવાત્ સંસારિણ ક-
થિન્મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યયવાન, કથિન્મન્દમતિઃ, કથિચ્ચક્ષુર્દર્શની કથિદચક્ષુર્દર્શની,
કથિત્ સુખી કથિદ્દુઃખી, કથિન્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ કથિત્ સમ્યગ્દૃષ્ટિરિત્યાદિવ્યવહારો
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોતા હૈ તવ હસકે કર્મરૂપ ઉપાધિ હોતી હૈ । હસસે હી જીવ શરીર
ઉપાધિવાલા હોતા હૈ । કર્મ-ઉપાધિસે હી જીવોંકો શરીર-ઉપાધિ
પ્રાપ્ત હોતી હૈ । અશરીરીકે કોઈ ઉપાધિ નહીં હોતી । નારક આદિ શરી-
રકી ઉપાધિસે જીવ નારક આદિ નામોંસે વ્યવહૃત હોતા હૈ । ડસ-ડસ
શરીરકી ઉપાધિસે જીવ ડસ-ડસ નામવાલા, યા ડસ-ડસ પર્યાયવાલા
હોતા હૈ । જૈસે-જવ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકે સદ્ભાવસે સંસારી જીવોંમેં
કોઈ મતિશ્રુતજ્ઞાની, કોઈ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની, કોઈ મતિ, શ્રુત,
અવધિ, ઓર મનઃપર્યયજ્ઞાની હોતા હૈ, કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોતા હૈ; કોઈ
ચક્ષુર્દર્શનવાલા, કોઈ અચક્ષુર્દર્શનવાલા, કોઈ સુખી, કોઈ દુઃખી, કોઈ
મિથ્યાદૃષ્ટિ ઓર કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોતા હૈ તવ ડનમેં ‘યહ મતિશ્રુતજ્ઞાની
હૈ, યહ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની હૈ, યહ મતિ-શ્રુત-અવધિ-મનઃપર્યયજ્ઞાની
હૈ, યહ ચક્ષુર્દર્શની હૈ, યહ અચક્ષુર્દર્શની હૈ, યહ સુખી હૈ, યહ દુઃખી હૈ,
યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ઓર યહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ’ હત્યાદિ વ્યવહાર
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

પ્રવૃત્તિ કરે છે અગર અશુભ પ્રણિધાનવાળા થાય છે ત્યારે તેને કર્મરૂપ ઉપાધિ થાય
છે, તેનાથી જીવ શરીરઉપાધિવાળા થાય છે. કર્મઉપાધિથી જ જીવોને શરીર
ઉપાધિ પ્રાપ્ત થાય છે. અશરીરીને કોઈ ઉપાધિ હોતી નથી. નારક આદિ શરીરની
ઉપાધિથી જીવ નારક આદિ નામોથી વ્યવહૃત થાય છે તે તે શરીરની ઉપાધિથી
જીવ તે તે નામવાળા અગર તે તે પર્યાયવાળા બને છે. જેવી રીતે જ્ઞાનાવરણીયાદિ
કર્મના સદ્ભાવથી સંસારી જીવોમાં ન્યારે કોઈ મતિ શ્રુત અને મનઃપર્યયજ્ઞાની
થાય છે. કોઈ મંદબુદ્ધિ હોય છે. કોઈ ચક્ષુર્દર્શનવાળા કોઈ અચક્ષુર્દર્શનવાળા,
કોઈ સુખી કોઈ દુઃખી, કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ અને કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ થાય છે ત્યારે
તેમાં ‘આ મતિશ્રુતજ્ઞાની છે, આ મતિ-શ્રુત-અવધિજ્ઞાની છે, આ મનિશ્રુત-અવધિ-
મન પર્યાયજ્ઞાની છે, આ ચક્ષુર્દર્શની છે, આ અચક્ષુર્દર્શની છે, આ સુખી છે,
આ દુઃખી છે, આ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે, અને આ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર
થાય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યદ્યેવં ભવતિ, તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘કમ્મં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્=કમ્મં ચ પડિલેહાણ, કમ્મમૂલં ચ જં खणं ॥૧૧॥

છાયા—કર્મ ચ પ્રતિલેખ્ય, કર્મમૂલં ચ યત્ ક્ષણમ્ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ, યદ્વા-પ્રકૃતિસ્થિત્યાદિબન્ધ, પ્રતિલેખ્ય=સંસારસ્ય કારણમિતિ પર્યાલોચ્ય કર્મમૂલં=પ્રાણિણુ સાવચ્છવ્યાપારકરણં રાગદ્વેષમોહરૂપં વા કર્મણઃ કારણમિતિ ચ પર્યાલોચ્ય યત્ ક્ષણં=ક્ષણનં-હિંસનં-પ્રાણાતિપાતાદિ, તત્ પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

यदि ऐसा है तो मुनिको क्या करना चाहिये ? सो कहते हैं—
‘कम्मं च’ इत्यादि ।

જવ યદ્ નિશ્ચિત્ત હો ચુકા કિ કર્મરૂપ ઉપાધિસે હી જીવોમ્ નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ તો મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો, અથવા ઉનકે પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ આદિ બન્ધોંકો સંસારકા કારણ જાનકર કર્મોંકે મૂલ કારણ સાવચ્છ વ્યાપારકો, અથવા રાગ દ્વેષ મોહકો જાન કર પ્રાણાનિપાતાદિક જો કાર્ય હૈં ઉનકા સર્વથા પરિત્યાગ કરે ।

भावार्थ—जीवोंमें नारकादि व्यवहार कर्मकृत है, कर्म संसारका कारण है । कर्म जीवोंकी शुभाशुभरूप प्रवृत्तिसे उत्पन्न होते हैं । अशुभादि कर्मों से नारकादि व्यवहार होता है । अशुभादि कर्मोंका मूल कारण हिंसादि पाप या राग द्वेष और मोह हैं । इस लिए ज्ञानी मुनिका कर्तव्य है कि वह उनके मूल कारणोंका सर्वथा त्याग करे । कहा भी है—

ને આમ જ હોય તો મુનિએ શું કરવું જોઈએ ? તે કહે છે—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ.

જ્યાદે એ નિશ્ચય થયો કે કર્મરૂપ ઉપાધિથી જ છવોમાં નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંની અથવા તેના પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ આદિ બંધોંને સંસારનું કારણ જાણીને તે કર્મોંનું મૂલ કારણ સાવચ્છ વ્યાપારને, અને રાગદ્વેષ મોહને જાણીને પ્રાણાતિપાતાદિક જે કાર્ય છે તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે.

ભાવાર્થ—છવોમાં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૃત છે, કર્મ સંસારનું કારણ છે. કર્મ છવોની શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિથી ઉત્પન્ન થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંથી નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંનું મૂળ કારણ હિંસાદિ પાપ. અથવા રાગદ્વેષ અને મોહ છે માટે જ્ઞાની મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે તેના મૂળ કારણનો સદા ત્યાગ કરે. કહ્યું છે—

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરદુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ” ॥૧॥ ઇતિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

અપરં ચ મુનિકર્તવ્યમાહ—‘પઢિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પઢિલેહિય સર્વં સમાધાય દોહિં અંતેહિં અદિ-
સ્સમાણે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

છાયા—પ્રતિલેખ્ય સર્વં સમાધાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદૃશ્યમાનઃ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ટીકા—પ્રતિલેખ્ય=કર્મસ્વરૂપં પર્યાલોચ્ય સર્વમ્=સર્વજ્ઞપ્રણીતમુપદેશં સંયમં
વા સમાધાય=ગૃહીત્વા અન્તાભ્યામ્=અન્તકૃદ્ધ્યાં-કારણે કાર્યોપચારાત્, આત્મનો
જ્ઞાનાદિગુણવિઘાતકાભ્યાં દ્વાભ્યાં=રાગદ્વેષાભ્યામ્ અદૃશ્યમાનઃ=અનુપલક્ષ્યમાણો
વીતરાગ શબ્દવ્યપદેશ્યો ભવતિ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરં દુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

જીવોંકો કર્મસે હી કર્મકા વન્ધ હોતા હૈ । ઉસસે ભવ-સંસાર હોતા
હૈ । ભવસે શરીર, શરીરસે દુઃખ ઓર દુઃખોંસે ફિર અન્ય ભવ ઉન્હેં
મિલતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ફિર ભી મુનિકે કર્તવ્ય કો કહતે હૈ—‘પઢિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

કર્મ કે સ્વરૂપકી પર્યાલોચના કરકે સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશકો અર્થાત્
સંયમકો ગ્રહણ કર આત્માકે જ્ઞાનાદિગુણોંકે વિઘાતક રાગ ઓર દ્વેષ સે
રહિત હોતા હુઆ મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દકા વાચ્ય હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—મુનિકે અન્ય કર્તવ્ય કો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે
હૈ કિ-વહ કર્મકે સ્વરૂપકા વિચાર કરે । કર્મ કે સ્વરૂપકા વિચાર કરનેસે

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરં દુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

જીવોને કર્મથી જ કર્મનો બંધ થાય છે. તેથી ભવ-સંસાર થાય છે. ભવથી
શરીર, શરીરથી દુઃખ અને દુઃખથી વળી અન્યભવ તેને મળતો રહે છે ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વળી પણ મુનિના કર્તવ્ય બાબત કહે છે—‘પઢિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

કર્મના સ્વરૂપની પર્યાલોચના કરીને સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશને અર્થાત્ સંય-
મને ગ્રહણ કરી આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોના વિઘાતક રાગ અને દ્વેષથી રહિત
બનીને મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દનો વાચ્ય થઈ બાક છે.

ભાવાર્થ—મુનિના બીજા કર્તવ્યને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-
તે કર્મના સ્વરૂપનો વિચાર કરવાથી તેને તેવો દૃઢ વિશ્વાસ થઈ જશે કે આત્માના

મૂલમ્—તં પરિન્નાય મેહાવી વિદિતા લોગં વંતા લોગસન્નં સે મઙ્ગમં પરક્કમિજ્જાસિન્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—તત્ પરિજ્ઞાય મેધાવી વિદિતા લોકં વાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન્ પરાક્રમેત—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—તત્=કર્મણઃ કારણં રાગદ્વેપરૂપં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા કર્મવન્ધહેતું વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય લોકં વિષયકપાયવ્યામોહિતં સંસારિણં ઉસે યહ દૃઢ વિશ્વાસ હો જાવેગા કિ—આત્માકે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા ઘાતક યદિ કોઈ હૈં તો યે કર્મ હી હૈં, રાગદ્વેષકો જો જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા ઘાતક સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ વહ કારણમેં કાર્યકે ઉપચારસે કિયા હૈ । ક્યોંકિ રાગ-દ્વેષસે જીવોંકે નવીન કર્મોંકા વન્ધ હોતા હૈ, અતઃ રાગ દ્વેષ ઉનકે વન્ધમેં કારણ હૈં, ઔર કર્મોંકા વન્ધ કાર્ય હૈ । ઇન કર્મોંકા અભાવ જય તક સર્વજ્ઞ પ્રભુકે ઉપદેશાનુસાર જીવ અપની પ્રવૃત્તિ નહીં વનાયેગા તય તક નહીં કર સકતા, અર્થાત્ સંયમકી આરાધના વિના ઇનકા અભાવ નહીં હો સકતા । યદિ ઉસે વીતરાગ વનના હૈ તો ઉસકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ રાગ દ્વેષકા અન્ત કરનેકે લિયે ઉક્ત વિધિકા પાલન કરે ॥સૂ૦ ૧૨॥

इसी बातको सूत्रकार फिर पुष्ट करते हैं—‘तं परिन्नाय’ इत्यादि ।

સાધુ કર્મોંકે વન્ધમેં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષજો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાન કર ઔર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા ત્યાગ કરે । ‘સમસ્ત સંસારી જીવ વિષય-કપાયોસે વ્યામોહિત હો રહે હૈં ઇસ લિયે ઇન વિષયોંકી વાંછાકો

જાનાદિક ગુણોના ઘાતક જે કોઈ હોય તો તે કર્મ જ છે રાગ દ્વેષને જે જાનાદિક ગુણોના ઘાતક સૂત્રકારે પ્રગટ કર્યા છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કહેલ છે. કારણ કે રાગ-દ્વેષથી હોવાને નવીન કર્મોનો બંધ થાય છે, માટે રાગ-દ્વેષ તેના બંધમાં કારણ છે, અને કર્મોના બંધ કાર્ય છે. તે કર્મોનો અભાવ ત્યાં સુધી સર્વજ્ઞ પ્રભુના ઉપદેશાનુસાર હોવ પોતાની પ્રવૃત્તિ નહિ બનાવે ત્યાં સુધી કરી શકતો નથી. અર્થાત્ સંયમની આરાધના વિના તેનો અભાવ થઈ શકતો નથી, કદાચ તેને વીતરાગ બનવાનું છે તો તેનું કર્તવ્ય છે કે તે રાગ દ્વેષનો અંત કરવા માટે કહેલી વિધિનું પાલન કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

આ વાતને સૂત્રકાર ફરીથી પુષ્ટ કરે છે—‘તં પરિન્નાય’ ઇત્યાદિ.

સાધુ કર્મોના બંધમાં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષને જ-પરિજ્ઞાથી વાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે. ‘સમસ્ત સંસારી હોવ વિષય કપાયોથી વ્યામોહિત થઈ ગયેલ છે માટે તેવા વિષયોની વાંછાને સદા દૂર કરવી જોઈએ.’

विदित्वा, लोकसंज्ञां=विषयवाञ्छारूपां वान्त्वा=दूरीकृत्य स मतिमान्=साधु-
मर्यादारक्षणतत्परः सन् पराक्रमेत=संयमाराधने उद्युक्तो भवेत् । यद्वा-अष्ट-
विधं कर्म क्षपयितुमुत्सहेत् । संयमं गृहीत्वा न पश्चात्तापमवलम्बेत्, सिंहत्वेन निष्क्र-
म्य शृगालत्वेन न विहरेत् । अत्र चतुर्भङ्गी वाच्या । इति ब्रवीमि पूर्ववत् ॥ सू० १३ ॥

तृतीयाध्ययनस्य प्रथमोद्देशः समाप्तः ॥ ३-१ ॥

सदा दूर करना चाहिये' ऐसा विचार कर उसका सदा परिहार करे, और मुनिपनेकी मर्यादाकी रक्षा करनेमें तत्पर वह मतिमान् मुनि संयम की आराधना करनेमें दत्तावधान रहे; क्योंकि संयमकी आराधनाके बिना कर्मोंका नाश नहीं हो सकता, इस लिये आठ कमका नाश करनेके अभिप्राय से संयमकी आराधना करे । संयमको ग्रहण कर फिर पश्चात्ताप न करे, अर्थात्-सिंहवृत्तिसे संयमकी आराधना करे किन्तु इसकी आराधनामें शृगालवृत्तिको स्थान न दे । यहां इस विषयमें चतुर्भङ्गी समझनी चाहिये, वह इस प्रकार—

(१) सिंहवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले । (२) सिंहवृत्तिसे निकले शृगालवृत्तिसे पाले । (३) शृगालवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले । (४) शृगालवृत्तिसे निकले शृगालवृत्तिसे पाले ।

इनमें पहला और तीसरा भंग श्रेष्ठ है ॥ 'इति ब्रवीमि' इसका अर्थ पहले कहा जा चुका है ॥ सू० १३ ॥

॥ तृतीय अध्ययनका प्रथम उद्देश समाप्त ॥ ३-१ ॥

એવો વિચાર કરી તેનો સદા પરિહાર કરે અને મુનિપણની મર્યાદાની રક્ષા કરવામાં તત્પર તે મતિમાન મુનિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે; કારણ કે સંયમની આરાધના વિના કર્મોનો નાશ થઈ શકતો નથી, માટે આઠ કર્મોનો નાશ કરવાના અભિપ્રાયથી સંયમની આરાધના કરે, સંયમને ગ્રહણ કરી પછી પશ્ચાત્તાપ ન કરે, અર્થાત્ સિંહવૃત્તિથી સંયમની આરાધના કરે પણ તેની આરાધનામાં શિયાળવૃત્તિને સ્થાન ન આપે. આ ઠેકાણે આ વિષયમાં ચતુર્ભંગી સમજવી જોઈએ. તે આ પ્રકારે—

(૧) સિંહવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૨) સિંહવૃત્તિથી નિકળે શૃગાલવૃત્તિથી પાળે. (૩) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૪) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, શૃગાલવૃત્તિથી પાળે

તેમાં પહેલો અને ત્રીજો ભંગ ઉત્તમ છે. 'इति ब्रवीमि' એનો અર્થ પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે. ૧૩

ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૩-૧.

તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશકે ભાવસુષ્તાઃ પ્રતિવોધિતાઃ, અથ તેષાં સ્વાપસ્ય ફલં દુઃખં ભવતીત્યાવેદયિતું દ્વિતીયોદ્દેશકં પ્રસ્તુવન્નાહ—‘જાઈં ચ વુહ્દિં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જાઈં ચ વુહ્દિં ચ ઇહઽઽજ્જ પાસે, ભૂણ્હિં જાણે પહિ-
લેહ સાયં । તમ્હાઽતિવિજ્જો પરમંતિ ણચ્ચા, સમ્મત્તદંસી ન
કરેહ પાવં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—જાર્તિં ચ વૃદ્ધિં ચ ઇહ અથ પશ્ય, ભૂતૈર્જાનીહિ પ્રતિલેખ્ય સાતમ્ ।
તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, સમ્યક્ત્વદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઇહ=સંસારે અઘૈવ=અસ્મિન્નેવ દિવસે, અલં કાલક્ષણેનેતિ ભાવઃ;
જાતિમ્=ગર્ભોત્પત્તિં વૃદ્ધિં=વાલાદિવૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તં વર્ધનં પ્રાણિનાં, પશ્ય=ગર્ભોત્પત્તિ-

ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

તૃતીય અધ્યયનકે પ્રથમ ઉદ્દેશમેં ભાવસુષ્ત પ્રાણિયોંકા નિરૂપણ
અચ્છી તરહસે કિયા જા ચુકા હૈ । ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં યહ સમસ્યા
જાવેગા કિ ઉનકી ઇસ નિદ્રાકા ફલ ઉન્હેં દુઃખકે સિવાય કુછ નહીં
હોતા હૈ । ઇસી વિષયકો સ્પષ્ટ કરનેંકે લિયે સૂત્રકાર ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ
કા પ્રારંભ કરતે હુણ પ્રથમ સૂત્ર કહતે હૈ—‘જાઈં ચ વુહ્દિં ચ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્યકો સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે શિષ્ય ! આજ
હી તુમ ઇસ વાતકા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે વિચાર કરો, કલ પરસોંકી વાત જાને
દો, સમય વીતાનેસે ક્યા ફાયદા ? સંસારમેં પ્રાણિયોંકી ગર્ભોત્પત્તિસે

ત્રીજા અધ્યયનનો ખીજો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુષ્ત પ્રાણીઓ વિષે સારી રીતે
સમજાવેલ છે. આ ખીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે તેની આ નિદ્રાનું
ફળ તેને દુઃખ સિવાય ખીલું કંઈ થતું નથી. આ વિષયને સ્પષ્ટ કરવા માટે
સૂત્રકાર આ ખીજા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરીને પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘જાઈં ચ
વુહ્દિં ચ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે હું શિષ્ય ! આજ જ તમે
આ જાણતો જ્ઞાનદૃષ્ટિથી વિચાર કરો, કાલ પરમદિવસની વાત જવા દો. સમય
વીતાવવામાં શું ફાયદો ? સંસારમાં પ્રાણીઓની ગર્ભોત્પત્તિથી લગાવી ખાલાદિ-

વૃદ્ધિશ્ચ પ્રાણિનાં દુઃખસહભાવિન્યેવ ભવતીતિ જ્ઞાનદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ્ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હઈ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ અ વેઅણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ”

લગાકર ચાલાદિ-વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તકી સવ અવસ્થાએ દુઃખોંકે સાથ ૨ હી રહનેવાલી હૈં । સંસારી પ્રાણીકી એસી કોઈ મી અવસ્થા નહીં હૈ જિસમેં દુઃખોંકા સમ્બન્ધ ન હો । ગર્ભમેં આના ઓર વહાં રહના યહ એક મહા દુઃખમય હૈ । યહ પ્રાણી યેન કેન પ્રકારેણ વહાં સે સુરક્ષિત દશા મેં ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ ઓર ચાલ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા તક પહુંચ મી જાતા હૈ તો મી હન અવસ્થાઓમેં હસ જીવકો રંચમાત્ર મી સાતા નહીં મિલતી હૈ । દુઃખોંકે સિવાય યહાં સુખોંકા નામ મી નહીં હૈ । અતઃ ગર્ભોત્પત્તિ ઓર ચાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા તક કી સમસ્ત દશાએં દુઃખોંકે સાથ ૨ હી રહને વાલી હૈં । અન્યત્ર મી યહી વાત કહી હૈ—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ્ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણિમુહાઝ નિપ્પિહ્હઈ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ય, વેચણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તની સઘણી અવસ્થાઓ દુઃખોની સાથે ને સાથે રહેવાવાળી છે. સંસારી પ્રાણીની એક પણ અવસ્થા એવી નથી કે જેમાં દુઃખોનો સંબંધ ન હોય. ગર્ભમાં આવવું અને ત્યાં રહેવું એ એક મહાન દુઃખ છે. તે પ્રાણી કોઈ પકારે ત્યાંથી સુરક્ષિત દશામાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે અને બાળ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા સુધી પહોંચી પણ જાય છે તો પણ આ અવસ્થાઓમાં આ હવને રજ માત્ર પણ સાતા મળતી નથી. દુઃખો સિવાય આંહી સુખોનું નામ પણ નથી. માટે ગર્ભોત્પત્તિ અને બાળાદિ વૃદ્ધાવસ્થા સુધીની સમસ્ત દશાઓ દુઃખોની સાથે જ રહેવાવાળી છે. અન્યત્ર પણ આ વાત કહેલ છે.—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ્ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હઈ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ય, વેચણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ

તથા—“હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિવિત્તઓ ।

દુઃખલો દુઃખિતઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં” ॥૨॥ ઇત્યાદિ ।

છાયા—જાયમાનસ્ય યદ્દુઃખં ત્રિયમાણસ્ય જન્તોઃ ।

તેન દુઃખેન સંતપ્તો ન સ્મરતિ જાતિમાત્મનઃ ॥ ૧ ॥

વિરસરસિતં રસન્ તતઃ સ યોનિમુખાદ નિસ્સરતિ ।

માતુરાત્મનોઽપિ ચ વેદનામતુલાં જનયન્ ॥ ૨ ॥

દીનભિન્નસ્વરો દીનો વિવરીતો વિવિત્તકઃ ।

દુર્વલો દુઃખિતો વસતિ સંપ્રાપ્તઃ ચરમાં દશામ્ ॥ ૩ ॥

તથા—“હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિવિત્તઓ ।

દુઃખલો દુઃખિતઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં” ॥૧॥ ” ઇતિ

ઉત્પન્ન હોનેવાલે એવં મરનેવાલે પ્રાણીકો જો દુઃખ હોતા હૈં ઉસ દુઃખસે સંતપ્ત થના હુઆ પ્રાણી અપની ઉત્પત્તિકા સ્મરણ તક નહીં કરતા ॥ ૧ ॥ જિસ સમય યહ જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનસે નિકલતા હૈં ઉસ સમય યહુત વુરી તરહસે રોતા હૈં, ક્યોં કિ ઉસ સમય વહ અપની માતા કે ઔર અપને લિયે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાકા કારણ થનતા હૈં ॥૨॥

તથા-ફિર વહ જવ વૃદ્ધાવસ્થામેં પહુંચતા હૈં તય હીન થન જાતા હૈં । હસકા સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાલા હો જાતા હૈં, દશા હસકી દયનીય હો જાતી હૈં । તરુણાવસ્થામેં હસકી જો હાલત થી ઉસસે ભિન્ન હી હસકી હાલત હો જાતી હૈં । ચિત્ત ભી હસકા ઠિકાને નહીં રહતા । ઉસ સમય યહ દુર્બલ ઔર સદા દુઃખિત હી રહા કરતા હૈં ॥ ૩ ॥

તથા—“હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિવિત્તઓ ।

દુઃખલો દુઃખિતઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ।

ઉત્પન્ન થનાર અને મરનાર પ્રાણીને જે દુઃખ થાય છે તે દુઃખથી સંતપ્ત બનેલ પ્રાણી પોતાની ઉત્પત્તિનું સ્મરણ પણ કરતો નથી ॥૧॥ જે વખતે આ હવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનથી નીકળે છે તે સમય ઘણી જ ખુરી રીતે રહે છે, કારણ કે તે વખત તે પોતાને માટે તેમ જ પોતાની માતા માટે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાનું કારણ બને છે ॥ ૨ ॥

તથા વળી તે વ્યારે વૃદ્ધાવસ્થામાં પહોંચે છે ત્યારે હીન બની બાય છે. તેનો સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાળો બની બાય છે. તેની દશા દયાજનક થઈ પડે છે તરુણ-અવસ્થામાં જે તેની હાલત હતી તે હાલતથી ખીલકુલ ભિન્ન તેની હાલત થઈ બાય છે. ચિત્ત પણ તેનું ઠેકાઠું શહેતું નથી. આ વખતે તે દુર્બળ અને સદા દુઃખી જ રહ્યા કરે છે. ॥ ૩ ॥

કિંચ—ભૂતૈઃ=ઉચ્ચારાદિચતુર્દશસુ જીવોત્પત્તિસ્થાનેષુ જાતૈર્ભૂતગ્રામૈઃ સહ સ્વાત્મનઃ સાતં=સુખં પ્રતિલેખ્ય=પર્યાલોચ્ય જાનીહિ । યથા તવ સુખં પ્રિયમસ્તિ, તથાઽન્યેપામપીતિ, યથા ચ તવ દુઃખે દ્વેષઃ તથાઽન્યેપામપીતિ જ્ઞાત્વા કસ્યાપિ જીવસ્ય દુઃખં નોત્પાદનીયમ્, એવં કૃતે દુઃખં ન પ્રાપ્સ્યસીતિ ભાવઃ ।

તસ્માત્—પ્રાણિનાં સુખદુઃખપર્યાલોચનાત્, અતિવિદ્યઃ=અતીવ વિદ્યા યસ્ય સઃ અતિવિદ્યઃ=તત્ત્વપરિચ્છેદવિદ્યાવિભૂષિતઃ, પરમં=પરમશ્રેયસ્કરં નિર્વાણપદં તત્પ્રાપ્તકં સમ્યગ્દર્શનાદિકં વાઽસ્તિ, इति જ્ઞાત્વા સમ્યક્ત્વદર્શી=પરમાર્થદર્શી સન્ પાપં ન કરોતિ, સાવધક્રિયાં ન સમાચરતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

તથા હે શિષ્ય ! જીવોંકી ઉત્પત્તિકે જો ઉચ્ચાર (વિષ્ટા) પ્રસ્રવણ (મૂત્ર) આદિ ચૌદહ સ્થાન હૈં ડનમેં ઉત્પન્ન હુએ જીવોંકે સાથ અપને સુખ કી પર્યાલોચના કરો, અર્થાત્ ઇસ વાતકા સદા વિચાર કરો કિ જિસ પ્રકાર સુખ હમેં પ્રિય હૈં ડસી પ્રકાર અન્ય જીવોંકો ભી વહં પ્રિય હૈં, દુઃખ જિસ પ્રકાર હમેં અપ્રિય-અનિષ્ટ હૈં ડસી પ્રકાર વહ અન્ય જીવોંકો ભી અનિષ્ટ હૈં । એસા વિચાર કર યા જાનકર કિસીકો ભી દુઃખ નહીં દેના યાહિયે । ઇસ પ્રકારસે વિચાર કરને પર તુમ સ્વયં દુઃખ ન પાઓગે ।

ઇસ પ્રકાર પ્રાણિયોંકે સુખ ઔર દુઃખકી પર્યાલોચનાસે વાસ્તવિક તત્ત્વકા પ્રકાશક જ્ઞાન જીવકો પ્રાપ્ત હોતા હૈં । ડસ જ્ઞાનસે યુક્ત વહ મુક્તિપદકો અથવા ડસકો પ્રાપ્ત કરાનેવાલે સમ્યગ્દર્શનાદિકો પરમ-પરમકલ્યાણકારી જાનકર સમદર્શી હો જાતા હૈં ઔર સાવધ ક્રિયાઓં કો નહીં કરતા હૈં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

તથા હે શિષ્ય ! જીવોની ઉત્પત્તિના જે ઉચ્ચાર=વિષ્ટા પ્રસ્રવણ-મૂત્ર આદિ ચૌદ સ્થાન છે, તેમાં ઉત્પન્ન થયેલા જીવોની સાથે આપણા સુખની પર્યાલોચના કરો અર્થાત્ જે વાતનો સદા વિચાર કરો કે જે પ્રકારે સુખ અમોને પ્રિય છે તે પ્રકારે અન્ય જીવોને પણ પ્રિય છે. દુઃખ જે પ્રકારે અમોને અપ્રિય-અનિષ્ટ છે તે પ્રકારે તે અન્ય જીવોને પણ અનિષ્ટ છે. એવો વિચાર કરી અગર બાણીને કોઇને પણ દુઃખ ન આપવું બોધજો. આ પ્રકારનો વિચાર કરવાથી તમે સ્વયં દુઃખ પામશો નહિ.

આ પ્રકારે પ્રાણીઓના સુખ અને દુઃખોની પર્યાલોચનાથી વાસ્તવિક તત્ત્વનું પ્રકાશક જ્ઞાન જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તે જ્ઞાનથી યુક્ત તે મુક્તિપદને અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સમ્યગ્દર્શનાદિને પરમ-પરમકલ્યાણકારી બાણીને સમદર્શી થઇ બચ છે અને સાવધ ક્રિયાઓ કરતા નથી ॥ સૂ૦ ૧ ॥

મૂલન—ઉમ્મુંચ પાસં ઇહ મચ્ચિણ્હિં આરંભજીવી ઉમયાણુ-
પસી । કામેસુ ગિદ્ધા નિચયં કરેંતિ, સંસિચ્ચમાણા પુણેંતિ
ગઁભં ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—ઉન્મુચ્ચ પાશમ્ ઇહ મત્યૈઃ આરમ્ભજીવી ઉમયાનુદર્શી । કામેષુ શુદ્ધાઃ
નિચયં કુર્વન્તિ, સંસિચ્ચમાનાઃ પુનર્યન્તિ ગર્ભમ્ ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘ઉમ્મુંચ’ ઇત્યાદિ । ઇહ=મનુષ્યલોકે, મત્યૈઃ=મનુષ્યૈઃ સાકં, પાશં=
વન્ધનહેતુ કલત્રાદિસમ્બન્ધમ્, યદ્વા—પાશં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં, દ્રવ્યતો રજ્જ્વા-
દિકં, ભાવતો વિષયકપાયાદિરુપમ્, ઉન્મુચ્ચ=ઉત્-ઉત્કર્ષતઃ—અતિશયેન નિરાકુરુ ।
પાશયુક્તો હિ કામભોગેચ્છયા પ્રાણિર્હિસાદિકં કરોતીત્યાહ—‘આરમ્ભજીવી’ ઇત્યાદિ ।

‘ઉમ્મું ચ પાસં’ ઇત્યાદિ । ઇસ મનુષ્યલોકમેં મનુષ્યોંકે સાથ પાશ-
-વન્ધનકે હેતુ પુત્રકલત્રાદિ સમ્બન્ધ—કા હે શિષ્ય ! તુમ સર્વથા પરિહાર
કરો । અથવા દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે પાશ-વન્ધન દો પ્રકારકા હૈ । રસ્સી
આદિ પદાર્થ દ્રવ્યસે, વિષયકપાયાદિક ભાવસે વન્ધન હૈ, ઇન દોનોં પ્રકાર
કે વન્ધનોંકા સર્વથા ત્યાગ કરો ।

ભાવાર્થ—સંસારમેં જીવોંકે લિયે સવસે પ્રવલ વંધનકા કારણ પુત્ર-
કલત્રાદિકા સમ્બન્ધ હૈ । આત્માર્થી ઇસ વન્ધનકે હેતુકા જવતક ત્યાગ નહીં
કરતા તવ તક વહ આત્મકલ્યાણકે માર્ગપર આરુઢ નહીં હો સકતા, ઇસી-
લિયે ઉસકા સર્વથા ત્યાગ કરનેકા યહાં ઉપદેશ દિયા ગયા હૈ । ઇસ પાશસે
યુક્ત પ્રાણી કામભોગકી ઇચ્છાસે પ્રાણિર્હિસાદિરુપ આરંભોંકો કરતા હૈ ।

‘ઉમ્મુંચ પાસં’ ઇત્યાદિ, આ મનુષ્યલોકમાં મનુષ્યોની સાથે પાશ-બંધનના
હેતુ પુત્રકલત્રાદિક સંબંધ—નો હે શિષ્ય ! તમે સર્વથા પરિત્યાગ કરો. અથવા દ્રવ્ય
અને ભાવના ભેદથી પાશ-બંધન બે પ્રકારના છે. રસ્સી આદિ પદાર્થ દ્રવ્યથી, વિષય-
કપાયાદિક ભાવથી બંધન છે એ બંને પ્રકારના બંધનનો સર્વથા ત્યાગ કરો.

ભાવાર્થ—સંસારમાં હવે માટે બધાથી પ્રાણ બંધનનું કારણ પુત્રકલ-
ત્રાદિકનો સંબંધ છે. આત્માર્થી આ બંધનના હેતુનો ત્યાગ સુધી ત્યાગ નથી
કરતો ત્યાં સુધી તે આત્મ-કલ્યાણના માર્ગ ઉપર આગળ વધી શકતો નથી.
માટે તેનો સર્વથા ત્યાગ કરવાનો આ ઠેકાણે ઉપદેશ આપેલ છે. આ પાશથી
યુક્ત પ્રાણી કામભોગની ઇચ્છાથી પ્રાણિર્હિસાદિરુપ આરંભો કરે છે.

યસ્તુ-આરમ્ભજીવી=આરમ્ભેણ જીવિતું શીલમસ્યેતિ સઃ, આરમ્ભપ્રકલ્પિત-જીવિકઃ, સ ઉભયાનુદર્શી=એહિકપારત્રિકદુઃખભોગી ભવતીત્યર્થઃ ।

કામેષુ=વિષયોપભોગેષુ, ગૃદ્ધાઃ=લોલુપાઃ, નિચયમ્=અષ્ટવિધકર્મસંચયં કુર્વન્તિ । સંસિચ્યમાનાઃ=કામભોગાદિજન્યકર્મરજસા શ્લિષ્યમાણાઃ પુનઃ=વારં વારં ગર્ભ-યન્તિ=ઉપયાન્તિ, સંસારચક્રે ઘટીયન્ત્રવદ્ બ્રામ્પ્યન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

મૂલમ્-અવિ સે હાસમાસજ્જ, હંતા નંદીતિ મન્નઇ ।

અલં વાલસ્સ સંગેણ, વેરં વંડ્ઢઇ અપ્પણો ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા--અપિ સ હાસમાસાઘ, હત્વા નન્દીતિ મન્યતે ।

અલં વાલસ્ય સજ્ઞેન, વૈરં વર્ધયતિ આત્મનઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા--‘ અવિ સે ’ इत्यादि । सः=अज्ञः-विषयलोलुपो हासम्=मनोविनोदम् आसाध=स्वीकृत्य, हत्वाऽपि=प्राणिनो निहत्याऽपि नन्दी=‘ क्रीडा ’ इति मन्यते ।

આરંભસે જીનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ આરંભજીવી હૈ । મહાન્ આરંભો દ્વારા જો અપની આજીવિકા કરતે હૈં વે ઇસ લોક ઔર પરલોક-દોનો-કે દુઃખોંકો ભોગતે હૈં । કારણ કિ વિષયભોગોંમેં ગૃદ્ધ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધકર્મોંકા સંચય કરતે હૈં ઔર ઇન કામભોગોંસે ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂલિસે લિપ્ત હોકર વે વારંવાર અરહટકે ઘટમાલકી તરહ ઇસ સંસારરૂપી ચક્રમેં ઘૂમતે રહતે હૈં ॥ સૂ. ૨ ॥

‘ અવિ સે ’ इत्यादि ।

વહ વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદકો પાકર, અર્થાત્ મનોવિનોદ કરને કે અભિપ્રાયસે પ્રેરિત હોકર પ્રાણિયોંકી હિંસા કરકે મી આનન્દિત હોતા હૈ । ઉસ હિંસાકો યહ અપને મનોવિનોદકા સાધન માન ક્રીડા સમઘ્તા હૈ

આરંભથી છુવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે આરંભલુપી છે. મહાન આરંભોદ્વારા જે પોતાની આજીવિકા કરે છે તે આ લોક અને પરલોક બન્નેના દુઃખો ભોગવે છે, કારણ કે વિષયલોભી ગૃદ્ધ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધ કર્મેના સંચય કરે છે, અને આ કામભોગથી ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂળથી લિપ્ત બનીને તે વારંવાર રેંટના ઘટમાલની માફક આ સંસારરૂપી ચક્રમાં ઘૂમતો રહે છે ॥ સૂ. ૨ ॥ ‘ અવિ સે ’ इत्यादि.

તે વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદ માટે અર્થાત્ મનોવિનોદ કરવાના અભિપ્રાયથી પ્રેરિત બનીને પ્રાણીઓની હિંસા કરીને પણ આનન્દિત થાય છે. તેવી હિંસાને તે પોતાના મનોવિનોદનું સાધન માની ક્રીડા સમજે છે. ભુલું જોડે છે, ઠોડે છે

ત્રૂતે ચ મૃપાવાદં યથા-મૃગાદયથૈતે મૃગયાર્થં ધાત્રા સૃષ્ટાઃ, મૃગયા ચ ક્રીડાર્થં ભવતીતિ । યદિ મનોવિનોદાર્થમપિ પ્રાણિનો હત્વા મોદતે તર્હિ માંસાદિપ્રભોગાર્થં પ્રાણિનો નિહત્ય પ્રમુદિતો ભવતીત્યત્ર કિમાર્થર્થમ્ । એવમદત્તાદાનાદિદોષાનપિ સ ઉપાદત્તે । એવં ચેત્તર્હિ કિં કર્તવ્યં મુનિના ? इत्याह--‘अलम्’ इत्यादि । वालस्य=अज्ञस्य संगेन=हास्यादिसङ्गेन प्राणातिपातादिरूपेण वा अलं=व्यर्थम्, अज्ञस्य यः संगो हास्यादिरूपः प्राणातिपातादिरूपो वा स सर्वथा वर्जनीय इत्यर्थः । वालस्य सङ्गकरणे दोषं दर्शयति-‘वैरम्’ इत्यादि । वालस्य सङ्गः आत्मनो वैरं=द्वेषं वर्द्धयति, नूतनभवानुपद्भिर्वैरानुबन्धिकर्मणा बध्यते इत्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

और झूठ ही कहता है कि ये मृगादिक पशु शिकारके लिये ही विधाताने बनाये हैं । शिकार क्रीडा करनेके निमित्तसे ही की जाती है । शिकार करनेसे मनोविनोद होता है । यदि मनोविनोदके लिये भी प्राणियोंकी हिंसा कर जो आनन्द आनता है वह मांसादिक खानेके लिये यदि उनकी हिंसा कर हर्षित होता है तो इसमें कौनसी अचरजकी बात है ? । इसी प्रकार विषयोंमें लंपट बना हुआ प्राणी चोरी कुशील आदि पापोंको भी करता है । इसलिये मुनिजनका कर्तव्य है कि वह ऐसे बाल-अज्ञानी की संगतिसे, मनोविनोदके कारण हास्यादिकोंसे, अथवा हिंसादिक पापोंसे दूर रहे । बाल-अज्ञानियोंकी संगति, मनोविनोदके कारण हास्यादिक एवं प्राणातिपातादिकपाप, मुनिके लिये सर्वथा वर्जनीय इस लिये हैं कि इनका संग वैर-द्वेषका वर्धक होता है । उस वैरभावकी वृद्धिसे नूतनभवानुपद्भा और वैरानुबन्धी कर्मका बन्ध होता है ॥ सू० ३॥

કે-આ મૃગાદિક પશુ શિકાર માટે જ વિધાતાએ બનાવેલ છે શિકારક્રીડા કરવાના નિમિત્તથી જ કરવામા આવે છે શિકાર કરવાથી મનોવિનોદ થાય છે. કદાચ મનોવિનોદ માટે પ્રાણીઓની હિંસા કરી જે આનંદ માને છે તે માસાદિક ખાવા માટે પણ કદાચ હિંસા કરી હર્ષિત થાય તો તેમાં કંઈ અચરજ નથી આ પ્રકારે વિષયોમાં લપટ બનેલ પ્રાણી ચોરી કુશીલ આદિ પાપો પણ કરે છે. તેથી મુનિજનનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા બાલ-અજ્ઞાનીની સંગતિથી, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિકથી, અથવા હિંસાદિ પાપોથી દૂર રહે. બાલ-અજ્ઞાનીઓની સંગતિ, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિક અને પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ, મુનિ માટે સર્વથા વર્જનીય આ માટે છે કે તેનો સંગ વૈર-દ્વેષનો વર્ધક થાય છે. આ વૈરભાવની વૃદ્ધિથી નૂતનભવાનુપદ્ધા અને વૈરાનુબન્ધી કર્મનો બંધ થાય છે. ॥ સૂ० ૩ ॥

યથેવં તર્હિ મુનિના કિં કર્ત્તવ્યમિત્યાહ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તમ્હાઽતિવિજ્ઞો પરમંતિ ણચ્ચા, આયંકદંસી ન કરેહ્ પાવં । અગ્ગં ચ મૂલં ચ વિગિંચ ધીરે, પલિચ્છિદિયા ણં નિક્કમ્મદંસી ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, આતદ્દર્શી ન કરોતિ પાપમ્ । અગ્રં ચ મૂલં ચ વિવિચ્ય ધીરઃ, પરિચ્છિદ્ય સ્વલુ નિષ્કર્મદર્શી ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ । તસ્માદ્=વાલસંગેન વૈરવર્ધનાદ્, અતિવિદ્યઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્, પરમં=સર્વોત્કૃષ્ટં—સિદ્ધિગતિનામધેયં પદં, સર્વવિરતિલક્ષણં ચારિત્રં વા અસ્તીતિ જ્ઞાત્વા, આતદ્દર્શી=નરકનિગોદાદિનાનાદુઃખદર્શકઃ, પાપં=પાપાનુવન્ધિ કર્મ ન કરોતિ । અત્ર કરોતીત્યુપલક્ષણમ્, ન ચ પરેણ કારયતિ, નાપિ કુર્વન્તમન્યમનુમોદયતિ ।

યદિ એસા હૈ તો મુનિ કો ક્યા કરના ચાહિયે? સો કહતે હૈ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

વાલ-અજ્ઞાનીકે સંગસે વૈરભાવકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । હસલિયે જો અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હૈ વહ-‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા ઉસકો પ્રાપ્ત કરાનેવાલા સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર હૈ’ એસા જાનકર નરકનિગોદાદિકે અનેક દુઃખોંકા જ્ઞાતા, અર્થાત્ ‘નરક નિગોદાદિકોંકે દુઃખ જીવોંકો તથ તક ભોગને પડતે હૈં કિ જવ તક સિદ્ધિપદકી પ્રાપ્તિ ઉન્હેં નહીં હોતી’ હસ પ્રકારકા દૃઢશ્રદ્ધાવાલા હોતા હુઆ પાપાનુવન્ધી કર્મ નહીં કરતા હૈ । “કરોતિ” યહ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓંકી ઉપલક્ષક હૈ, હસસે યહ ઘટિત હોતા હૈ કિ વહ ન દૂસરોંસે પાપકર્મ કરાતા હૈ ઓર ન પાપકર્મ કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કરતા હૈ ।

બે આ પ્રમાણે છેતો મુનિએ શું કરવું બોધ્યે? તે કહે છે—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ.

બાલ-અજ્ઞાનીના સંગથી વૈરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે, માટે બે અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન છે તે ‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર છે’ એવું બાણીને નરકનિગોદાદિકના અનેક દુઃખોના જ્ઞાતા અર્થાત્ ‘નરકનિગોદાદિકોના દુઃખ છુલોને ત્યાં સુધી ભોગવવા પડે છે બ્યાં સુધી સિદ્ધિપદની પ્રાપ્તિ તેને થતી નથી’ આ પ્રકારના દૃઢ શ્રદ્ધાવાળા બનીને પાપાનુબન્ધી કર્મ કરતા નથી “કરોતિ” આ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓની ઉપલક્ષક છે, તેથી એ ઘટિત થાય છે કે તે બીજાઓથી પાપકર્મ કરાવતા નથી અને પાપકર્મ કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા નથી.

કિંચ-અગ્ર=ભવોપગ્રાદિકર્મચતુષ્ટયં કેવલિકર્મંત્યર્થઃ, મૂલં=ચતુર્વિધં ધાતિકર્મ, યદ્વા મૂલં=મોહનીયં કર્મ, અગ્રં=તદવશિષ્ટસપ્તકર્માણિ, મોહનીયક્ષયેણ વિનાઽન્યેષાં કર્મણાં ક્ષયો ન ભવતિ, તસ્માન્મોહનીયસ્ય મૂલત્વં સિદ્ધ્યતિ । ઉક્તञ્ચ-

“નાયગમ્મિ હપ્ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

एयं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए ” ॥ इति ।

छाया—नायके हते सति, यथा सेना विनश्यति ।

एवं कर्माणि नश्यन्ति, मोहनीये क्षयं गते ॥

પરીપદ્ધ એવં ઉપસર્ગોં સે અવિચલિત હોકર વહ પૃથક્ પૃથક્ ભેદ પ્રભેદોં સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે હસ વાતની પર્યાલોચના કરતા હૈ કિ અગ્ર ઓર મૂલ તપસંયમકે વિના આત્માસે પૃથક્-અલગ નહીં હો સકતે હૈં । ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મ કિ જો કેવલિકર્મ કહે જાતે હૈં, વે ચાર પ્રકારકે ઘાતિયા કર્મ મૂલ હૈં । અથવા મોહનીય કર્મકા નામ મૂલ હૈ । હસસે અવશિષ્ટ સાત કર્મોંકા નામ અગ્ર હૈ । મોહનીયકે ક્ષય હુપ વિના અન્ય કર્મોંકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ હસલિયે મોહનીયમેં મૂલતા સિદ્ધ હોતી હૈ । કહા મી હૈ—

“નાયગમ્મિ હપ્ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

एयं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए ” ॥ १ ॥

જેસે સેનાપતિકે મારે જાને પર સેના તિતર-વિતર હોકર ભાગ જાની હૈં ડસી પ્રકાર મોહનીયકે ક્ષય હોને પર અન્ય કર્મ મી નષ્ટ હો જાતે હૈં ॥ ૧ ॥

પરીપદ્ધ અને ઉપસર્ગોંથી અવિચલિત બનીને તે પૃથક્ પૃથક્ ભેદપ્રભેદોં સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે આ વાતની પર્યાલોચના કરે કે અગ્ર અને મૂલ તપ સંયમ વિના આત્માથી પૃથક્-અલગ થઈ શકતા નથી. ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મોં કે જે કેવલિકર્મ કહેવાય છે તે ચાર પ્રકારના ધાતિયા કર્મ મૂલ છે. અથવા મોહનીય કર્મનું નામ મૂલ છે. તેનાથી અવશિષ્ટ આત્મ કર્મોંનું નામ અગ્ર છે. મોહનીયનો ક્ષય થયા વિના અન્ય કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી. માટે મોહનીયમાં મૂલતા સિદ્ધ થાય છે. કહ્યું છે—

“નાયગમ્મિ હપ્ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

एयं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए ” ॥ १ ॥

જેવી રીતે સેનાપતિના મરવાથી સેના છિન્નલિન્ન થઈ ભાગી બાકી છે તે પ્રકારે મોહનીયનો ક્ષય થવાથી અન્ય કર્મ પણ નષ્ટ થઈ બાકી છે. ॥ ૧ ॥

‘યદ્વા-મૂલ’=મિથ્યાત્વમ્, અગ્રં તુ અટ્ટવિધકર્મપ્રકૃતિરૂપં તેષાં મિથ્યાત્વમૂલ-
ત્વાત્। ઉક્તઞ્ચ—“... મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અટ્ટ કમ્મપગડીઓ વંધઈ ” ઇતિ । ધીરઃ=પરીપદ્મોપસર્ગૈરક્ષોભ્યઃ સન્ ચિવિચ્ય-
પૃથક્ પૃથક્ ભેદોપભેદૈઃ સવિસ્તરં પર્યાલોચ્ય, પરિચ્છિદ્ય=કર્માણિ તત્કારણીભૂ-
મિથ્યાત્વાદીનિ તપઃ-સંયમાભ્યાં સર્વથા છિત્વા=સ્વાત્મનઃ પૃથક્કૃત્ય, પૌદ્ગલિક-
જ્ઞાનાવરણીયાદેઃ કર્મણશ્ચેદનં દ્વૈધીકરણરૂપં ન સંભવતિ, કિંત્વાત્મનઃ પૃથક્કર-
મેવેતિ ભાવઃ । નિષ્કર્મદર્શી=સ્વાત્માનં નિષ્કર્માણં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ તથાવિ-
ભવતીત્યર્થઃ । જ્ઞાનાવરણીયદર્શનાવરણીયકર્માપગમાત્ સર્વદર્શી ભવતીતિ ભાવઃ ॥૪

અથવા-‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વકા હૈ । ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકાર
કર્મોંકા હૈ, ક્યોંં કિ આઠોંં કર્મોંકા મૂલકારણ મિથ્યાત્વ હૈ । હસ-
લિએ મિથ્યાત્વકો મૂલ-શબ્દસે કહા હૈ । કહા મી હૈ—“... મિચ્છ-
ત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અટ્ટ કમ્મપગડીઓ વંધઈ । ” ઇતિ
‘મિથ્યાત્વકે ઉદયસે જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોંંકો વાંધતા હૈ ।

હસલિયે કર્મોંંકે કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિકો તપસંયમદ્વા-
સર્વથા અપની આત્માસે અલગ કર વહ નિષ્કર્મદર્શી હો જાતા હૈ ।

સૂત્રમેં “ પરિચ્છિદ્ય ” પદ આયા હૈ, જિસકા અર્થ—“ છેદન કરકે
‘એસા હોતા હૈ । પરન્તુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકા તો છેદન
નહીંં સકતા; અતઃ-‘ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો અપની આત્માસે “ પરિ-
ચ્છિદ્ય ”-અલગ કરકે’ એસા અર્થ કરના ચાહિયે, ક્યોંં કિ કર્મોંંક
આત્માસે પૃથક્ કરના હીંં ઉનકા છેદન હૈ । આત્માસે કર્મોંંકે અલગ હો

અથવા ‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વનું છે. ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારના કર્મોંનું છે,
કારણ કે આઠ કર્મોંનું મૂલ કારણ મિથ્યાત્વ છે. માટે મિથ્યાત્વને મૂલ શબ્દથી કહેલ
છે. કહ્યું છે “...મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં પવં સ્વલુ જીવે અટ્ટ કમ્મપગડીઓ વંધઈ । ”
ઇતિ । મિથ્યાત્વના ઉદયથી જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિઓ બાંધે છે. માટે કર્મોંના
કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિને તપસ્યમઠાસ સર્વથા પોતાના આત્માથી જુદા કરી
તે નિષ્કર્મદર્શી થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “ પરિચ્છિદ્ય ” પદ આવેલ છે. તેનો અર્થ “ છેદન કરીને ” એમ
થાય છે. પરંતુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંનું તો છેદન બની શકતું નથી
માટે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને પોતાના આત્માથી “ પરિચ્છિદ્ય ”-જુદા કરીને, એવો
અર્થ કરવો જોઈએ. કારણ કે કર્મોંને આત્માથી પૃથક્ કરવા તે જ તેનું છેદન

અન્યદપિ ફલં નિષ્કર્મદર્શિનો ભવતીત્યાહ—‘એસ મરણા પમુચ્ચહ’ ઇત્યાદિ.

મૂલ્ય—એસ મરણા પમુચ્ચહ, સે હુ દિઢમણ મુળી, લોગંસિ પરમદંસી વિવિત્તજીવી ઉવસંતે સમિણ સહિણ સયા જણ કાલ-કંઠી પરિવ્વણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—અપ મરણાત્ પ્રમુચ્યતે, સ એવ દૃષ્ટમયો મુનિઃ, લોકે પરમદર્શી વિવિત્ત-જીવી ઉપગાન્તઃ સમિત સહિતઃ સદા યતઃ કાલાકાઘ્ની પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—અપઃ=નિષ્કર્મદર્શી મરણાત્=આયુઃક્ષયાત્ પ્રમુચ્યતે, આયુષ્યકર્મવન્ધા-પગમાદિતિ ભાવઃ । યદ્વા-આવીચિમરણાત્ આવીચિ=અનુસમયં નિરન્તરં મરણં=મૃત્યુઃ સંસારો વા, તસ્માત્ પ્રમુચ્યતે । કેવલી ભૂત્વા અન્યાન્ વા મોચયતિ દેશનાદિના । સ પર જીવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત અપની આત્માકો દેખનેકે સ્વ-ભાવવાલા હો જાતા હૈ । હિસ પ્રકારકા સ્વભાવ જીવકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વિનાશસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । હિસી અવસ્થામેં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હોતા હૈ ॥ મૂ૦ ૪ ॥

જો નિષ્કર્મદર્શી હૈ હસે ઓર ખી દસરા લાભ હોતા હૈ, હિસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈ—‘એસ મરણા પમુચ્ચહ’ ઇત્યાદિ.

યદ્વા નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મકે વન્ધકે અભાવ હોનેપર મરણસે રહિત હો જાતા હૈ । અથવા વદ્ આવીચિમરણસે છૂટ જાતા હૈ । અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણકો આવીચિમરણ કહતે હૈ । અથવા મરણ નામ સંસારકા હૈ । કેવલી હો જાનેસે આત્મા સંસારવન્ધનસે રહિત હો જાતા હૈ । સિદ્ધસ્થાનમેં ચિરાજનેકે નિશ્ચયસે હસી ભવમેં અઘાનિયા કર્મોંકા

છે. આન્માથી કર્મોના અસંગ થવાથી હવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત પોતાના આન્માને લેવાના સ્વભાવવાળો થઈ જાય છે. આ પ્રકારનો સ્વભાવ હવને જ્ઞાનાવરણીય અને કર્મનાવરણીય કર્મના વિનાશથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ અવસ્થામાં હવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી થાય છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો નિષ્કર્મદર્શી છે તેને ખીજો પણ લાભ થાય છે. તે વાતને પ્રગટ કરે છે—‘એસ મરણા પમુચ્ચહ’ ઇત્યાદિ.

આ નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મના બંધનો અભાવ થવાથી મરણથી રહિત થાય છે અને તે આવીચિમરણથી છુટી જાય છે. અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણને આવીચિમરણ કહે છે. અથવા મરણ નામ સંસારનું છે, કેવળી થઈ જવાથી આત્મા સંસારબંધનથી રહિત થાય છે. સિદ્ધસ્થાનમાં વિરાજવાના નિશ્ચયથી તેજ ભવમાં

દૃષ્ટભય એવ, દૃષ્ટં ભયમ્ इहलोकादि सप्तविधं येन स एव मुनिर्भवति । किं च लोके=उच्चारादिचतुर्दशस्थानसमुत्पन्ने जीवसमूहात्मके परम=आत्मनः समुत्कर्षकारित्वात् संयमः, तं द्रष्टुं शीलमस्येति परमदर्शी, तथा-विविक्तं रागद्वेषरहितत्वादक्लिष्टं जीवितुं शीलमस्येति विविक्तजीवी, अत एव उपशान्तः=उपशमसमन्वितः, अत एव समितः मोक्षमार्गं सम्यग् इतः=प्राप्तः, तथा सहितः ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, अत एव सदा यतः=अनवरतं प्रमादरहितः । उक्तगुणधारणं कियत्कालपर्यन्तमावश्य-

અભાવ કર સિદ્ધપદકા અધિકારી હો જાતા હૈ । કેવલી દોકર યહ અન્ય જીવોંકો ભી સદેશના દ્વારા સંસારપરિભ્રમણ સે છુડા દેતા હૈ । इहलोक-भय आदि सात प्रकारका भय जिसने देख लिया है वह दृष्टभय है । दृष्टभय ही मुनि होता है । तथा उच्चारादि चौदह स्थानोंमें समुत्पन्न जीवसमूहरूप लोकमें आत्माका उत्कर्षकारी होनेसे परम जो संयम उसको देखनेका जिसका स्वभाव है वह परमदर्शी है । तथा रागद्वेष-रहित होनेसे अक्लिष्ट जीनेका जिसका स्वभाव है वह विविक्तजीवी है । यह निष्कर्मदर्शी विविक्तजीवी होता है । इसीलिये वह 'उवसंते' 'उपशान्तः'—उपशमसे युक्त होता है । कषायोंके उद्रेकका अभाव उपशम है । जब कषायोंमें विलकुल मन्दता आ जाती है तब वह 'समिष्ट' समितः—मोक्षके मार्गको प्राप्त हुआ कहलाता है । तथा 'सहिष्ट' सहितः ज्ञान और चारित्र्यसे युक्त होनेसे वह 'सयाजष्ट' सदायतः—निरन्तर यतनावान् अर्थात् प्रमादरहित होता है । इन पूर्वोक्त गुणोंके धारण करने

અધાતિયા કર્મેના અભાવ કરી સિદ્ધપદનો અધિકારી થાય છે. કેવળી જાની તે અન્ય જીવોને પણ સદેશનાદ્વારા સંસારપરિભ્રમણથી છોડાવે છે. ઇહલોક ભય આદિ સાત પ્રકારનો ભય જેણે જોઈ લીધેલ છે તે દૃષ્ટભય છે, દૃષ્ટભય જ મુનિ થાય છે. તથા ઉચ્ચારાદિ ચૌદ સ્થાનોમાં સમુત્પન્ન જીવસમૂહરૂપ લોકમાં આત્માના ઉત્કર્ષકારી થવાથી પરમ જે સંયમ તેને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પરમ-દર્શી છે. તથા રાગદ્વેષરહિત થવાથી અક્લિષ્ટ જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે વિવિક્તજીવી છે. તે નિષ્કર્મદર્શી વિવિક્તજીવી થાય છે. તેથી તે 'ઉવસંતે' ઉપશાન્તઃ—ઉપશમથી યુક્ત થાય છે. કષાયોના ઉદ્રેકનો અભાવ ઉપશમ છે, ત્યારે કષાયોમાં બિલકુલ મંદતા આવી જાય છે ત્યારે તે 'સમિષ્ટ' સમિતઃ—મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરેલો કહેવાય છે. તથા 'સહિષ્ટ' સહિતઃ—જ્ઞાન અને ચારિત્ર્યથી યુક્ત થવાથી તે 'સયાજષ્ટ' સદાયતઃ—નિરંતર યતનાવાન અર્થાત્ પ્રમાદરહિત થાય છે. આ પૂર્વોક્ત ગુણોને ત્યાં સુધી ધારણ કરવાની આવશ્યકતા છે

કમિત્યાહ—કાલાકાદ્ધીતિ । કાલં=મૃત્યુકાલમાકાક્ષિતું શીલમસ્યેતિ કાલાકાદ્ધી, તથાવિધઃ સન્ પરિવ્રજેત્=યાવત્ પર્યાયાગતં પણ્ડિતમરણં તાવદાકાદ્ધમાણો વિવિ-ક્તજીવિત્વાદિગુણસમન્વિતઃ સંયમારાધને સમુદ્યુક્તો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

મૂલમ—વહું ચ ચ્વલુ પાવકમ્મં પગડં । સચ્ચંમિ ધિં કુવ્વહા ।
પ્પથોવરણ મેહાવી સવ્વં પાપકમ્મં જ્ઞોસઇ ॥ સૂ. ૬ ॥

છાયા—વહુ ચ ચ્વલુ પાપકર્મ પ્રકૃતમ્ । સત્યે ધૃતિં કુરુણ્વ । અત્ર ઉપરતો મેધાવી સર્વં પાપકર્મ જ્ઞોપયતિ ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકા—‘વહું ચ’ इत्यादि । ચ્વલુ=નિશ્ચયેન પાપકર્મ વહુ=વન્ધસ્થાનાપે-ક્ષયા વહુવિધં પ્રકૃતમ્=પ્રકથિતં, પ્રતિવોધિતમિત્યર્થઃ । યથેવં તર્હિ તદ્વચપગમાર્થ ક્રિમાચરણીયમિત્યત આહ—‘સત્યે’ इत्यादि । हे शिष्य ! सत्ये-सद्गुणो भव्ये-

કી આવશ્યકતા તમી તક હૈ જય તક કિ ઉસે પણ્ડિતમરણ પ્રાપ્ત નહીં હોતા । યહી વાત સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—‘કાલકંઘી’ इति, काल शब्द का अर्थ मृत्युकाल है, इसकी आकाङ्क्षा रखनेवालेको कालाकाङ्क्षी कहते हैं । जब तक पर्यायागत पण्डितमरण प्राप्त नहीं होता तब तक उसकी चाहना करता हुआ इन पूर्वोक्त गुणोंसे युक्त होकर वह निष्कर्म-दर्शी संयमकी आराधनामें प्रयत्नशाली या लवलीन रहे ॥ सू. ५ ॥

‘વહું ચ’ इत्यादि ।

પાપકર્મ વન્ધસ્થાનની અપેક્ષાસે વહુત પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । વીત-રાગ પ્રભુને ચારહ પ્રકારકી પરિપદ્-સમામેં અપની દિવ્ય દેશનાસે વન્ધ-સ્થાનોંકી અપેક્ષાસે કર્મોંકે અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોંકો સમજાવે હૈ । સાથ મેં ચહ મી પ્રકટ કિયા હૈ કિ इन कर्मोंको आत्मासे दूर करनेका उपाय

હે ત્યાં મુધી તેને પંડિતમરણ પ્રાપ્ત નહિ થાય, આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—‘કાલકંઘી’ इति. કાલ શબ્દનો અર્થ મૃત્યુકાળ છે. તેની આકાંક્ષા રાખવા-વાળાને કાલાકાંક્ષી કહે છે. ત્યાં મુધી પર્યાયાગત પંડિતમરણ પ્રાપ્ત નથી થતું ત્યાં મુધી તેની ચાહના કરીને પૂર્વોક્ત ગુણોથી યુક્ત થઈને તે નિષ્કર્મદર્શી સંયમની આરાધનામાં પ્રયત્નશાળી અગર લવલીન રહે ॥ સૂ. ૫ ॥

“વહું ચ” इत्यादि.

પાપકર્મ વન્ધસ્થાનની અપેક્ષાથી ઘણા પ્રકારના કહેલ છે, વીતરાગ પ્રભુએ બાર પ્રકારની પરિપદ્-સમામાં પોતાની દિવ્યદેશનાથી વન્ધસ્થાનોની અપેક્ષાથી કર્મોના અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોને સમજાવેલ છે. સાથે એ પણ પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મોના આત્માથી દૂર કરવાનો ઉપાય છે—“સચ્ચંમિ ધિં કુવ્વહા” सत्ये

મ્યો હિતઃ સત્યઃ=સંયમસ્તસ્મિન્ ધૃતિં કુરુષ્વ । યદ્વા-સત્યઃ=વીતરાગપ્રણીતાગમઃ
યથાવસ્થિતતત્ત્વસ્વરૂપપ્રતિવોધનાત્ , તત્ર ભગવદ્વાજ્ઞારૂપે પ્રવચને ધૃતિં=ચિત્તસ્થૈર્યં
કૃતર્કપરિત્યાગેન કુરુષ્વ । કિંચ-અત્ર=અસ્મિન્ સંયમે ભગવત્પ્રવચને વા, ઉપરતઃ=
ઉપ=સામીપ્યેન રતઃ=વ્યવસ્થિતઃ-પરાયણઃ, મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ, સર્વ-
નિરવશેષં પાપકર્મ શ્લોપયતિ=શોપયતિ-ક્ષપયતીત્યર્થઃ ॥ મૃ૦ ૬ ॥

કપાયાદિપ્રમાદયુક્તઃ કિંઘુણો ભવતીત્યાહ-‘અણેગચિત્તે ’ इत्यादि ।

હૈ-“સચ્ચસ્મિ ધિદં કુવ્વહા” સત્યે ધૃતિં કુરુષ્વ, સત્ય-સંયમમેઝૈર્ય ધારણ
કરો, ઇસલિયે શિષ્યકો સમ્બોધિત કરતે હુએ કહતે હૈં કિ હે શિષ્ય !
તુમ યદિ ઇન કમોં પર વિજય કરના ઇાહતે હો તો-‘ સદ્મ્યો હિતઃ સત્યઃ-
-સંયમઃ ’ સત્પુરુષોંકે લિયે હિતકારી જો સંયમ હૈં ઉસમેં અટલ રહો ।
ઉપસર્ગ એવં પરીષદોંકે આને પર મીં ઇસ માર્ગસે કમીં મીં વિચલિતચિત્ત
ન વનો । અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમકા હૈં, ક્યોં કિ ઇસ
સે હી જીવાદિક તત્ત્વોંકે યથાર્થસ્વરૂપકી પ્રરૂપણા હોતી હૈં । ભગવાનકે
ઇસ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમેં કૃતકોંકા પરિહાર કર ચિત્તકો સ્થિર કરો ।
કારણ કિ-ઇસ સંયમમેં અથવા વીતરાગપ્રણીત આગમમેં અચ્છી તરહસે
લવલીન ચિત્તવાલા મનુષ્ય હેય ઓર ઉપાદેયકે વિવેકસે નિપુણમતિ વન
કર સમ્પૂર્ણ પાપકર્મોંકો નષ્ટ કર દેતા હૈં । મૃ૦ ૬ ॥

કપાયાદિક પ્રમાદસે યુક્ત પ્રાણી કિસ ૨ ગુણવાલે હોતે હૈં ? ઇસકે
લિયે કહતે હૈં-‘ અણેગચિત્તે ’ इत्यादि ।

ધૃતિ કુરુષ્વ, સત્ય-સંયમમાં ધૈર્ય ધારણ કરો એ માટે શિષ્યને સંબોધન કરીને
કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે ને આ કર્મો ઉપર વિજય કરવા માંગતા હો તો-
‘સદ્મ્યો હિતઃ સત્યઃ-સંયમઃ’ સત્પુરુષોને માટે હિતકારી જે સંયમ છે તેમાં
અટલ રહો, ઉપસર્ગ અને પરીષદો આવવા છતાં પણ આ માર્ગથી કોઈ વળત
પણ વિચલિત ન બનો અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમનું છે, કારણ
કે તેનાથી જ જીવાદિક તત્ત્વોના યથાર્થ સ્વરૂપની પ્રરૂપણા થાય છે, ભગવાનના
આ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમાં કૃતકનો પરિહાર કરી ચિત્તને સ્થિર કરો, કારણ કે
આ સંયમમાં અને વીતરાગપ્રણીત આગમમાં સારી રીતે લવલીન ચિત્તવાળા
મનુષ્ય હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી નિપુણમતિ બનીને સંપૂર્ણ પાપકર્મો નષ્ટ
કરી નાંખે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કપાયાદિ પ્રમાદથી યુક્ત પ્રાણી કયા કયા ગુણવાળા થાય છે ? તેને માટે
કહે છે-‘ અણેગચિત્તે ’ इत्यादि.

મૂલમ્—અળેગચિત્તે સ્વલ્લ અયં પુરિસે, સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ, સે અળ્લવહાણ અળ્લપરિયાવાણ અળ્લપરિગ્ગહાણ જળ-વચ્ચવહાણ જળવચ્ચપરિયાવાણ, જળવચ્ચપરિગ્ગહાણ ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—અનેકચિત્તઃ સ્વલ્લ અયં પુરુષઃ, સ કેતનમ્ અર્હતિ પૂરયિતુમ્ । સોઽન્ય-વધાય, અન્યપરિતાપાય, અન્યપરિગ્રહાય, જનપદવધાય, જનપદપરિતાપાય જન-પદપરિગ્રહાય ॥ મૂ. ૭ ॥

ટીકા—અયં પ્રત્યક્ષવિષયઃ સંસારી પુરુષઃ સ્વલ્લ=નિશ્ચયેન અનેકચિત્તઃ=કૃપિ-વાણિજ્યસેવાદ્યનેકદૃત્યાશ્રિતચિત્તો ભવતિ । સંસારસુખાભિલાષિણશ્ચિત્તમેકાગ્રં ન ભવતીતિ ભાવઃ । અનેકચિત્તઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ—‘સ કેતનમ્’ इत्यादि । सोऽनेकचिन्तः केतनं=भावकेतनम् इच्छां पूरयितुम् अर्हति ? काकुवचनमेतत् ; नार्हतीत्यर्थः । केतनं द्विविधं द्रव्यतो भावतश्च । तत्र द्रव्यकेतनं चालिनी, समुद्रो

यह संसारी पुरुष निश्चयसे कृषि वाणिज्य सेवा आदि अनेक कार्यों के करनेमें व्यग्रचित्तवाला बना रहता है । क्यों कि संसारी जीवोंकी अभिलाषा सांसारिक अनेक सुखोंको प्राप्त करनेकी ओर सदा लगी रहती है, इसीलिये वे कृषि वाणिज्य आदि अनेक प्रकारके आजीविकोपयोगी कार्योंके संपादनमें रातदिन जुटे रहते हैं, अतः सांसारिक सुखोंके अभिलाषी पुरुषोंका मन किसी एक विषयमें एकाग्र नहीं होता है । इस पर सूत्रकार कहते हैं कि—‘से केयणं अरिहण पूरित्तण’ स केतनमर्हः पूरयितुम्, अर्थात् उसकी इस प्रकारकी ये चेष्टाएँ क्या उस केतन-मान-सिक अभिलाषाकी पूर्ति कर सकती हैं ? कदापि नहीं । सूत्रकारने यहां काकुवचनका प्रयोग किया है । केतन दो प्रकारका है—(१) द्रव्य-केतन

આ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયથી કૃષિ, વાણિજ્ય, સેવા આદિ અનેક કાર્યો કરવામાં વ્યગ્રચિત્તવાળા બની રહે છે. કારણકે સંસારી જીવોની અભિલાષા સાંસારિક અનેક સુખો પ્રાપ્ત કરવાની તરફ સદા લાગી રહે છે તેથી તે બેતી, વાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારના આજીવિકાના ઉપયોગી કાર્યોના સંપાદનમાં રાત-દિવસ લાગ્યા રહે છે. માટે સાંસારિકસુખોના અભિલાષી પુરુષોનું મન કોઈ એક વિષયમાં એકાગ્ર બનતું નથી. આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે—‘સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ’—સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ તેની આ પ્રકારની આ ચેષ્ટાઓ શું તેના કેતન=માનસિક અભિલાષા—ની પૂર્તિ કરી શકે છે ? કદાપિ નહિ. સૂત્રકારે આ કહેણે કાકુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે. કેતન બે પ્રકારના છે.

વા । ભાવકેતનમ્ ઇચ્છા, લોભઃ । અત્ર ભાવકેતનાપેક્ષયા કેતનશબ્દઃ પ્રયુક્તઃ ।
ઉક્તં ચ ભગવતા—“જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ” ઇત્યાદિ ।

અપરં ચ—“ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્ઞાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ” ॥ ૧ ॥

(૨) ભાવ-કેતન । દ્રવ્ય-કેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર હૈ, ઔર ઇચ્છા, લોભ, યે ભાવ-કેતન હૈ । યહાં ભાવ-કેતનકી અપેક્ષાસે ‘કેતન’ શબ્દકા પ્રયોગ હુઆ હૈ । ભગવાને યહી યાત કહી હૈ—“જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ ।”

અર્થાત્-જેસે જેસે લાભ હોતા હૈ વૈસે વૈસે લોભ ભી વઢતા હૈ । લાભસે લોભકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । જો અનેક કાર્યોમૈં વ્યગ્રચિત્ત બના રહતા હૈ વહ કયા ભાવ-કેતનરૂપ અપની ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કર સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા ? કહા ભી હૈ—

“ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્ઞાનો જયેત્ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જિસ પ્રકાર સોનેસે નિદ્રા નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઔર खानેસે મૂંઝ નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઁસી પ્રકાર કામ-ઇચ્છાઓંમૈં ફંસા હુવા મનુષ્ય ઇચ્છાકે અનુસાર ઇષ્ટ વસ્તુઓંકા લાભ હોને પર ભી ઁનસે શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ફિર ભી કહા હૈ—

(૧) દ્રવ્યકેતન, (૨) ભાવકેતન. દ્રવ્યકેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર છે, અને ઇચ્છા અને લોભ, એ ભાવકેતન છે આ ઠેકાણે ભાવકેતનની અપેક્ષાથી ‘કેતન’ શબ્દનો પ્રયોગ થયેલ છે. ભગવાને એ જ વાત કહી છે—“જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ ।”

અર્થાત્ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ લોભ વધે છે. લાભથી લોભની વૃદ્ધિ થાય છે. જે અનેક કાર્યોમાં વ્યગ્રચિત્ત બની રહે છે. તે શું ભાવકેતનરૂપ પોતાની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરી શકે છે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. કહ્યું પણ છે—

“ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્ઞાનો જયેત્ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જેવી રીતે મુઠ રહેવાથી નિદ્રા છૂતી શકાતી નથી અને ખાવાથી ભૂખ છૂતી શકાતી નથી તે પ્રકારે કામ-ઇચ્છાઓમાં ફસેલો પ્રાણી-મનુષ્ય ઇચ્છાનુસાર ઇષ્ટવસ્તુઓનો લાભ થતાં છતાં પણ તેનાથી શાંતિલાભ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. વળી પણ કહ્યું છે—

किं च—“ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्त्मैव, भूय एवाभिवर्धते ” ॥ २ ॥ इति ।

इच्छાપૂરણાર્થે વ્યાકુલિતચિત્તઃ કિં કરોતીત્યાહ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ, યદ્વા—‘ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ’ ઇત્યમ્ય ‘ સ કથ્થ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ’ ઇતિચ્છાયા । સ એતાદૃશો જનઃ કો વર્તેતે યઃ તમ્=અનેકચિત્તં પુરુષં પૂરયિતુમ્ અર્હઃ સમર્થો ભવેત્, કસ્મદિચ્છાં પૂરયેન્, ન કોડ્ડપીતિ ભાવઃ, યતઃ સોડ્ડનેકચિત્તઃ પુરુષઃ અન્યવધાયર્થં પર્યુત્સુકો ભવતિ, તદેવાહ સૂત્રકારઃ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન જાતુ કામઃ કામાનામુપભોગેન શામ્યતિ ।

हविषा कृष्णवर्त्मैव, भूय एवाभिवर्धते ॥ १ ॥ ” इति ।

કામવિકાર વિષયભોગોંકે સેવન કરનેસે શાન્ત નહીં હોતા હૈ । પ્રત્યુત જૈસે ઘૂતકે ડાલને સે અગ્નિકી જ્વાલા વઢતી હૈ ઉસી પ્રકાર વિષયોંકે સેવનસે વિષયવાસનાકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિંકે લિયે જીવ ક્યા કરતા હૈ ? ઇસી વાતકો કહતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ” ઇસ વાક્યકી છાયા “ સ કથ્થ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એસી સી હોતી હૈ । જિસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હોતા હૈ—કૌન એસા વ્યક્તિ હો સકતા હૈ કિ જો અનેક ચિત્તવાલે મનુષ્યકી ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કરનેમેં સમર્થ હો સકે ? કારણ કિ વહ અનેક ચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—દસરેકો મારના આદિ અનેક સાવધ ક્રિયાઓંકે કરનેમેં ઉત્સુક બના રહતા હૈ । ઇસી વાતકો સૂત્રકાર સ્વયં દિશ્વલાતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

‘ ન જાતુ કામ કામાનામુપભોગેન શામ્યતિ ।

हविषा कृष्णवर्त्मैव, भूय एवाभिवर्धते ” । १ ॥ इति ॥

કામવિકાર વિષયભોગનુ સેવન કરવાથી શાંત થતો નથી, પણ ભેગ થી નાંખવાથી અગ્નિની ત્વાણા વધે છે તે પ્રકારે વિષયોના સેવનથી વિષયવાસનાની વૃદ્ધિ થાય છે. પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે હવ શું કરે છે ? આ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ.

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ” આ વાક્યની છાયા “ સ કથ્થ તમ્ અર્હ પૂરયિતુમ્ ” એમ પણ થાય છે તેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—દોણ એવો પ્રાણી થઈ શકે છે કે ને અનેક ચિત્તવાળા મનુષ્યની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવામાં સમર્થ હોય ? કારણ કે તે અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—ખીલતે મારયું—આદિ અનેક સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં ઉત્સુક બની રહે છે. આ વાતને બતાવે છે—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ.

સ ઇચ્છાપૂરણાર્થ પ્રવર્તમાનઃ અન્યવધાય=અન્યેપાં પ્રાણિનાં વધાય ભવતિ । યથા-
ચૌરઃ સાહસિકો વા ધનાપહરણાર્થ ધનિનં હન્તિ, ઇત્યાદિ । તથા-અન્યપરિતાપાય=
અન્યેપાં જીવાનાં પરિતાપાય=શારીરમાનસકલેશાય ભવતિ । તથા-અન્યપરિગ્રહાય
=અન્યેપાં=દાસદાસીનાં ગોમહિપ્યાદીનાં ચ પરિગ્રહાય=સ્વાયત્તીકરણાય ભવતિ ।
તથા-જનપદવધાય-મગધાદયો જનપદાસ્તેપાં વધાય । યથા-મ્લેચ્છા ભૂપતયો
મ્લેચ્છધર્મમસ્વીકુર્વન્તં જનપદં ઘ્નન્તીત્યાદિ । તથા-જનપદપરિતાપાય-જનપદાનાં

મનુષ્ય જવ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે પ્રવૃત્તિ કરના હૈ તવ ઉસ
કી ઉસ પ્રવૃત્તિસે અન્ય પ્રાણિયોંકી હિંસા હોતી હૈ, અતઃ વહ ઉસકી
પ્રવૃત્તિ અન્ય જીવોંકી હિંસાકા કારણ બનતી હૈ । જૈસે ચોર અથવા સાહ-
સિક-ઢાકૂ-મનુષ્ય ધનીકે ધનકો ચુરાનેકે લિયે ધનીકો માર ઢાલતા હૈ ।
ઉસકી પ્રવૃત્તિસે અન્ય જીવોંકો શારીરિક તથા માનસિક પરિતાપ-કલેશ
ભોગના પડતા હૈ । ફિર વહ અપની અમિલાપાઓંકી પૂર્ત્તિકે લિયે દાસી
દાસ આદિકો તથા ગાય ભૈંસ આદિકો કહીંસે ચુરા લાકર ઉનકા સંગ્રહ
કરનેમ્ વ્યસ્ત રહા કરતા હૈ । જનપદ-મગધાદિ દેશોંકો વહ અપની પ્ર-
વૃત્તિસે ત્રસ્ત-દુઃખિત કર દિયા કરતા હૈ । જૈસે મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છ
ધર્મકો અસ્વીકાર કરનેવાલી પ્રજાકો માર ઢાલતે હૈ । ઉસકી પ્રવૃત્તિ
લોકોંકે પરિતાપકે લિયે-પ્રાણિયોંકો માર્મિક કષ્ટ પહુંચાનેકે લિયે હોની
હૈ । અનુચિત કર-ટૈક્સકા લેના, અનુચિત દણ્ડ દેના, ઇત્યાદિકા નામ
ભી પરિતાપ હૈ । અધાર્મિક ભૂપતિ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે ધન-

મનુષ્ય જ્યારે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે તેની તે
પ્રવૃત્તિથી અન્ય પ્રાણીઓની હિંસા થાય છે, માટે તે તેની પ્રવૃત્તિ બીજા હવેની
હિંસાનું કારણ બને છે; જેમ ચોર અથવા સાહસિક-ઢાકૂ પૈસાવાળા માણસના ધન
ચોરી જવા માટે પૈસાવાળાને મારી નાખે છે. તેની પ્રવૃત્તિથી અન્ય હવેને શારી-
રિક તથા માનસિક પરિતાપ-કલેશ ભોગવવો પડે છે. તેમજ તે પોતાની અભિ-
લાષાઓની પૂર્ત્તિ માટે દાસી-દાસ આદિ તથા ગાય-ભૈંસ આદિ કયાંયથી ચોરી
લાવીને તેનો સંગ્રહ કરવામા વ્યસ્ત રહ્યા કરે છે. જનપદ-મગધાદિ દેશોને તે
પોતાની પ્રવૃત્તિથી ત્રસ્ત-દુઃખિત કર્યા કરે છે. જેમ મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છધર્મને
અસ્વીકાર કરનારી પ્રજાને મારી નાખે છે. તેની પ્રવૃત્તિ લોકોના પરિતાપ માટે-
પ્રાણીઓને માર્મિક કષ્ટ પહોંચાડવા માટે હોય છે. અનુચિત કરણોત્ત-ટૈક્સ
લેવો, અનુચિત દંડ આપવો, ઇત્યાદિનું નામ પણ પરિતાપ છે, અધાર્મિક રાજા
પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે ધનસંગ્રહ કરવા નિમિત્ત પોતાની પ્રજાથી અનીતિ-

ક્લેશાય, યથાઽનુચિતકરગ્રહણદણ્ડાદિભિરધાર્મિકા ભૂપતયઃ । તથા—જનપદપરિ-
ગ્રહાય=મગધાદિજનપદાનાં પરિગ્રહાય ભવતિ—સ્વસ્વત્વોત્પાદનેન સ્વાયત્તીકરણાય,
યુદ્ધાદિકં કરોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

મૂલમ્—આસેવિત્તા ઇયમટ્ઠં ઇચ્છેવેગે સમુદ્ધિયા, તમ્હા તં
વીયં નો સેવે, નિસ્સારં પાસિય નાણી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—આસેવ્ય એતમ્ અર્થમ્ इत्येव एके समुत्थिताः, तस्मात्तं द्वितीयं નો
સેવતે નિઃસારં દૃષ્ટા જ્ઞાની ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—‘આસેવિત્તા’ इत्यादि । इत्येव=इच्छापूर्णां મેવ એતમ્=અર્થમ્

સંગ્રહ કરનેકે નિમિત્ત અપની પ્રજાસે અનીતિદ્વારા ધનકા સંગ્રહ કરતે
હैं । કિસીપર કરકી વૃદ્ધિ કરતે હैं; કિસીકો અભિયોગમેં ફંસા કર ઉસ
પર અધિક સે અધિક દણ્ડ ભી કર દિયા કરતે હैं । ઇસ પ્રકારકે ભૂપતિ
અપની પ્રજાકે લિયે અપને અધિકૃત દેશકે લિયે ક્લેશકારક યા પરિ-
તાપદાયક હુઆ કરતે હैं । જનપદપરિગ્રહ—અર્થાત્ દૂસરે રાજાઓં પર
ચઢાઈ કર વહ ઉનકે દેશકો અપને આધીન કરનેકા પ્રયત્ન—ચેષ્ટા કરતે
રહતે હैं । મૌકા પાકર જબ વહ ચઢાઈ કર દેતે હैं તબ ઉસ સમય વ્યર્થમેં
નરસંહાર જૈસા ભયંકર કાળ ઉપસ્થિત હો જાતા હૈ । ઉનકી ઇસ પ્રકારકી
પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિસે ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ ઇનકી ઇસ પ્રવૃત્તિસે
અન્ય જીવોંકો યા જનપદકો ક્લેશ તથા સન્તાપ હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘આસેવિત્તા’ इत्यादि ।

इच्छाकी पूर्तिके लिये सातवें सूत्रमें प्रतिपादित दूसरे जीवोंका

દારા ધનનો સંગ્રહ કરે છે, કોઈ ઉપર કરબોજની વૃદ્ધિ કરે છે. કોઈને અભિ-
યોગમાં ફસાવી તેની ઉપર અધિકમાં અધિક કાંડ પણ કરી નાંખે છે. આ પ્રકારનો
રાજા પોતાની પ્રજા માટે અગર પોતાના અધિકૃત દેશ માટે ક્લેશકારક અને પરિતા-
પદાયક થયા કરે છે. જનપદ પરિગ્રહ અર્થાત્ બીજા રાજાઓ ઉપર ચઢાઈ કરી
તેના દેશને પોતાના અધિન કરવાના પ્રયત્નમાં રહે છે સમય મળતાં જ નત્યારે તે
ચઢાઈ કરે છે ત્યારે તે વખત વ્યર્થમાં નરસંહાર જેવું ભયંકર કાંડ ઉપસ્થિત થાય છે,
તેની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિથી ઠીક નથી, કારણ કે તેની આ પ્રવૃત્તિથી
અન્ય જીવોને અને જનપદને ક્લેશ તથા સંતાપ ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘આસેવિત્તા’ इत्यादि.

इच्छानी पूर्ति माटे सातमां सूत्रमां प्रतिपादित थील जिवोनो वध परि-

અન્યવધપરિતાપપરિગ્રહાદિકમ્ આસેવ્ય પથાત્ તૃપ્તિદેતૃત્વાભાવાન્નિઃસારં વિજ્ઞાય, એકે=ભરતાદયઃ સમુત્થિતાઃ=સંયમારાધને પ્રવૃત્તાસ્તેનૈવ ભવેન સિદ્ધિં લબ્ધવન્તઃ । તસ્માદ્ યતો વાન્તવદ્ભોગં પરિત્યજ્ય પ્રતિજ્ઞા કૃતા ‘પુનર્ભોગાર્થ મયા ન પ્રવર્તિષ્યતે’ इति, તસ્માદ્ જ્ઞાની=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ વિષયભોગં નિસ્સારં દૃષ્ટ્વા, વિષયભોગે કૃતેડપિ તૃપ્ત્યભાવાદિતિ ભાવઃ; ભોગલિપ્સયા તં દ્વિતીયં=દ્વિતીયવારં નો સેવતે, ન પુનસ્ત્રાસક્તો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ન મનુષ્યાણામેવ ભોગો નિઃસારઃ કિંતુ દેવાનામપીત્યાહ ‘ઉવચાયં’ इत्यादि।

મૂલમ્—ઉવચાયં ચવણં ચ ણચ્ચા અણણં ચર માહણે ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—ઉપપાતં ચ્યવનં ચ જ્ઞાત્વા અનન્યં ચર માહન ! ॥ સૂ૦ ૯ ॥

વધ પરિતાપ એવં પરિગ્રહાદિકા સેવન કરકે મી જવ ઇચ્છાકી તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ કોઈ ભરતાદિક જૈસે મહાપુરુષ સંયમકે આરાધન કરનેમેં પ્રવૃત્ત હોતે હૈં ઓર ડસી અવમેં મુક્તિકા લાભ મી કર લિયા કરતે હૈં । હસ લિયે જો છર્દિત-વમન કિયે હુએ અન્નકે સમાન ભોગોંકા પરિત્યાગ કર “ ફિર અથ મેં ભોગોંકે સેવન કરનેમેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરૂંગા ” હસ પ્રકારકી પ્રતિજ્ઞા કર લિયા કરતે હૈં, સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન વે જ્ઞાની પુરુષ વિષયભોગોંમેં નિસ્સારતા જાન કર, અર્થાત્ “ વિષયભોગોંકે સેવન કરને પર મી જીવોંકો તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ ” હસ પ્રકાર સમજ કર ફિર ભોગોં કે સેવન કરનેકી ઇચ્છાસે દૂસરે મૃષાવાદ રૂપ પાપકા અથવા અસંયમ કા સેવન નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોંકે વિષયભોગ હી નિસ્સાર નહીં હૈં, કિન્તુ દેવોંકે મી વિષયભોગ નિસ્સાર હૈં; હસી વાતકો સમજાતે હૈં—‘ઉવચાયં’ इत्यादि ।

તાપ તેમજ પરિગ્રહાદિનું સેવન કરીને પણ ત્યારે ઇચ્છાની તૃપ્તિ થતી નથી ત્યારે કેઈ ભરતાદિક જેવો મહાપુરુષ સંયમનું આરાધન કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે અને તેજ લવમાં મુક્તિનો લાભ પણ કરી લે છે. માટે વમન કરેલા અન્ન સમાન ભોગોનો પરિત્યાગ કરી “ હવે પછી હું ભોગનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ નહિ કરું ” આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરી લે છે. સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન તે જ્ઞાની પુરુષ વિષય-ભોગોમાં નિસ્સારતા બાળીને અર્થાત્ “ વિષયભોગોનું સેવન કરવા છતાં છોવેને તૃપ્તિ થતી નથી ” એવા પ્રકારે સમજીને પછી ભોગોનું સેવન કરવાની ઇચ્છાથી ખીન્ન મૃષાવાદરૂપ પાપનું અને અસંયમનું સેવન કરતા નથી. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોનાજ વિષયભોગ નિસ્સાર છે, એમ નહિ; કિન્તુ દેવોના પણ વિષય-ભોગ નિસ્સાર છે. આ વાતને સમજાવે છે—‘ઉવચાયં’ इत्यादि.

ટીકા—હે માહન ! = હે મુને ! ઉપપાતં = દેવજન્મ, ચ્યવનં = દેવમરણં ચ જ્ઞાત્વા
 અનન્યં = અન્યો = મોક્ષમાર્ગાદિતરઃ અસંયમઃ, નાન્યોઽનન્યઃ અસંયમાદ્વિન્નઃ શ્રુતચારિ-
 ત્રાત્મકો ધર્મસ્તં ચર = સમાચર ॥ સૂ. ૮ ॥

હે મુનિ ! દેવોંકે ઉપપાત-જન્મ, ચ્યવન-મરણકો જાનકર તુમ
 અનન્ય-જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ હૈં ઉસકા સેવન કરો । ભાવાર્થ-દેવોંકી
 આયુ સાગરોંકી હોતી હૈં । ઇતની વડી આયુ હોંતે હુએ મીં વિષયભોગોંસે
 તૃપ્તિ નહીં હોતી । ઉન દેવોંકો વહ આયુ ક્ષણસદૃશ હીં લગતી હૈં ઓર
 વ્યતીત હો જાતી હૈં । વહાં કે વિષયભોગ મીં સદા સ્થિર નહીં હૈં, વેં મીં
 વિનશ્વર હૈં । જન્મ-મરણકા ચક્કર દેવગતિમેં દેવોંકો મીં ભોગના પડતા
 હૈં । અતઃ સંબોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મુનિ ! ‘મનુષ્ય-
 લોકકે વિષયભોગ હીં અસાર હૈં’ યહ વાત નહીં હૈં, કિન્તુ દેવલોકકે
 મીં વિષયભોગ હસીં તરહ અસાર હૈં । ઇસ ગતિમેં સંયમકી આરાધના
 નહીં હોતી હૈં, સંયમકી આરાધના મનુષ્યગતિકે સિવાય અન્ય કિસી
 મીં ગતિમેં નહીં હો સકતી હૈં, અતઃ ઇસ દુર્લભ મનુષ્યજન્મકો વિષય-
 ભોગોંકી ચાહનામેં અથવા ઉનકે સેવન કરનેમેં નષ્ટ કર દેના યહ બુદ્ધિ-
 માન કા કર્તવ્ય નહીં હૈં । યહ મત સમજો કિ—‘સંયમકી આરાધનાસે
 હમ દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કર વહાંકે વિષયભોગોંકો ભોગતે હુએ સુખી હો

હે મુનિ ! દેવોના ઉપપાત-જન્મ, ચ્યવન-મરણને બાણીને તમે અનન્ય
 જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે તેનું સેવન કરો.

ભાવાર્થ—દેવોનું આયુષ્ય સાગરોનું હોય છે. આટલું મોટું આયુષ્ય હોવા
 છતાં પણ વિષયલોગોથી તૃપ્તિ થતી નથી. તે દેવોને તે આયુ ક્ષણસદૃશ જ
 લાગે છે અને વ્યતીત થઈ જાય છે. ત્યાંના વિષયલોગ પણ સદા સ્થિર નથી.
 તે પણ વિનશ્વર છે. જન્મ મરણનું ચક્કર દેવગતિમાં દેવોને પણ લોગવનું પડે છે,
 માટે શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે—

હે મુનિ ! મનુષ્યલોકના વિષયલોગ જ અસાર છે એ વાત નથી પણ
 દેવલોકના પણ વિષયલોગ આ માફક અસાર છે. આ ગતિમાં સંયમની આરાધના
 થતી નથી. સંયમની આરાધના મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય બીજી કોઈ પણ ગ
 તિમાં બની શકતી નથી. માટે આ દુર્લભ મનુષ્ય જન્મને વિષયલોગોની ચાહનામાં
 અને તેનું સેવન કરવામાં નષ્ટ કરી નાખવો તે બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય નથી. એમ
 ન સમજશો કે ‘સંયમની આરાધનાથી અમે દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કરી ત્યાંના વિષય-

કિં ચ—‘સે ણ છણે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે ણ છણે ણ છણાવણ છણંતં ણાણુજાણણ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—સ ન ક્ષણુયાત્, ન ક્ષાણયેત્, ક્ષણ્વન્તં નાનુજાનીયાત્ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા—સઃ=શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરો મુનિઃ, પ્રાણિનો ન ક્ષણુયાત્=ન હન્યાત્, ન ક્ષાણયેત્=ન ઘાતયેત્, ક્ષણ્વન્તં=ઘનન્તમન્યં નાનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેદિત્યર્થઃ ॥

અથ ચતુર્થવ્રતસિદ્ધચર્યમુપદિશતિ—‘નિર્વિવદ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—નિર્વિવદ નંદિં, અરણ પયાસુ, અણોમદંસી નિસણ્ણે પાવેહિં કમ્મેહિં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—નિર્વિવદસ્વ નન્દીમ્, અરક્તઃ પ્રજાસુ, અનવમદર્શી નિષણ્ણઃ પાપેભ્યઃ કર્મભ્યઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—પ્રજાસુ=પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ=સ્ત્રિયસ્તાસુ, અરક્તઃ=અનાસક્તઃ, તથા—અવમં=નીચં નીચફલોત્પાદકત્વાદ મિથ્યાદર્શનાદિ, તદ્વિચ્છન્નમ્ અન-જાયેગે’ કારણ કિં વહાંકે વિષયભોગ મ્હી અસાર હી હૈં, અતઃ નિદાન રહિત હો કર હી તુમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરો ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ફિર મ્હી કહતે હૈં—‘સે ણ છણે’ ઇત્યાદિ ।

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમ્હેં તત્પર હુઆ મુનિ કમ્હી મ્હી સ્વયં પ્રાણિયોંકી હિંમ્મા ન કરે, દૂસરોંસે હિંસા ન કરાવે ઓર હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના મ્હી ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

इसके बाद चतुर्थव्रत (ब्रह्मचर्यव्रत) की सिद्धि के लिये उपदेश करते हैं—‘निर्विवद नंदि’ इत्यादि ।

‘પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ’ પુત્રાદિ સન્તાન જિનમ્હેં ઉત્પન્ન

ભોગોને ભોગવતાં મુખી યઈ જશું.’ કારણ કે ત્યાંના વિષયભોગ પણ અસાર જ છે. માટે નિદાનરહિત બનીને જ તમે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરો. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ફરી પણ કહે છે—‘સે ણ છણે’ ઇત્યાદિ.

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં તત્પર બનેલ મુનિ કદિ પણ સ્વયં પ્રાણીઓની હિંમ્મા ન કરે, બીજા પાસે હિંમ્મા ન કરાવે અને હિંસા કરવા-વાળાની અનુમોદના પણ ન કરે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ત્યાર બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત)ની સિદ્ધિ માટે ઉપદેશ કરે છે—‘નિર્વિવદ નંદિ’ ઇત્યાદિ.

‘પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ’—

પુત્રાદિ સંતાનજેનાં ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ પ્રજા—સ્ત્રી છે. તથા અવમનામ

વમં, તદ્ દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ—અનવમદર્શી=સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધનપરઃ, અત એવ
પાપેભ્યઃ=પાપકારણેભ્યઃ કર્મભ્યઃ=અષ્ટાદશવિધમૈથુનેભ્યઃ નિષ્પણઃ=નિવૃત્તઃ સન્
નન્દી=વૈષયિકં સુખં નિર્વિન્દસ્વ=જુગુપ્સસ્વ । કામિનીકાયસ્યાતિનિન્ધત્વાત્તત્સજ્જ-
નિતસુખસ્ય હિંસાદિપાપદેતુત્વાચ્ચ ચતુર્થવ્રતારાધને સાવધાનો ભવેત્યર્થઃ ॥સૂ૦ ૧૧॥

કિં ચ—‘કોહાહ’ ઇત્યાદિ ।

હોતી હૈં उनका नाम प्रजा-स्त्री है । तथा अवम नाम मिथ्यादर्शन आदिका
है । उससे भिन्न सम्यग्दर्शनादिक अनवम है । इस अनवमको देखनेका
जिसका स्वभाव हो वह अनवमदर्शी है । शिष्योंको ब्रह्मचर्यव्रतके पालन
करनेकी शिक्षा देते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्य ! तुम स्त्रियोंके
विषयमें आसक्तचित्त न बनो, स्वप्नमें भी उनका ध्यान न करो । तथा
जघन्य फलके उत्पादक होनेसे मिथ्यादर्शनादिक अवम हैं । उनसे वि-
परीत अनवम-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र हैं ।

इन सम्यग्दर्शनादिककी आराधनासे तुम्हें अष्ट बनानेवाले जो
पापके कारणभूत अठारह प्रकारके मैथुन हैं, उनसे निवृत्त हुए तुम नन्दी-
वૈષયિક સુખોંકી ओर सदा घृणादृष्टि रखो ।

भावार्थ—स्त्रियोंका शरीर सदा अतिनिन्द्य होता है । उसके सेवन
से उत्पन्न हुआ वैषयिक सुख हिंसादिक पापोंका कारण होता है । ऐसी
दृढश्रद्धा कर तुम चतुर्थ व्रतकी आराधनामें सावधान रहो ॥ सू० ११ ॥

फिर कहते हैं—‘कोहाइमाणं’ इत्यादि ।

મિથ્યાદર્શન આદિનું છે તેનાથી ભિન્ન સમ્યગ્દર્શનાદિક અનવમ છે. આ અનવમને
દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે અનવમદર્શી છે. શિષ્યોને બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પાલન
કરવાની શિક્ષા દેતા સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે સ્ત્રીઓ માટે આસક્ત-
ચિત્ત ન બનો. સ્વપ્નમાં પણ તેનું ધ્યાન ન કરો. તથા મિથ્યાદર્શનાદિક જઘન્ય ફલના
ઉત્પાદક હોવાથી અવમ છે. તેનાથી વિપરીત અનવમ સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન
અને સમ્યક્ચારિત્ર છે. તેની આરાધનાથી તમને અષ્ટ બનાવનાર પાપના કારણભૂત
અઠાર પ્રકારના મૈથુન છે. તેનાથી નિવૃત્ત બનીને તમે નન્દી-વૈષયિક સુખોની
તરફ સદા ધૃષ્ટાદૃષ્ટિ રાખો.

ભાવાર્થ—સ્ત્રીઓનું શરીર સદા અતિનિન્ધ હોય છે. તેના સેવનથી ઉત્પન્ન
થયેલ વૈષયિક સુખ હિંસાદિક પાપોનું કારણ બને છે એવી દૃઢ શ્રદ્ધા કરી
તમે એવા વ્રતની આરાધનામાં સાવધાન રહો ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વળી કહે છે—‘કોહાઈમાણં’ ઇત્યાદિ

મૂલમ્—ક્રોહાદિમાણં હણિયા ય વીરે, લોભસ્સ પાસે નિરયં મહંતં । તમ્હા ય વીરે વિરણ વહાઓ, છિન્દિજ્જ સોયં લહુ-ભૂયગામી ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—ક્રોધાદિમાનં ઠન્યાત્ ચ વીરઃ લોભસ્ય પથ્ય નિરયં મહાન્તમ્ । તસ્માન્ચ વીરો વિરતો વધાત્ છિન્ધાત્ શોકં લઘુભૂતગામી ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ક્રોધાદિમાનં=ક્રોધાદીનાં માનમ્ અનન્તાનુવન્ધ્યાદિવિશેષં ઠન્યાત્=નિવારયેત્ । યદ્વા-ક્રોધ આદિર્યસ્ય સ ક્રોધાદિઃ, સ ચાસૌ માનશ્ચ ક્રોધાદિમાનઃ-ક્રોધહેતુકો ગર્વસ્તં ઠન્યાદિત્યર્થઃ । લોભસ્યાનન્તાનુવન્ધ્યાદેર્વિપાકં મહાન્તં=દુસ્તરં નિરયં=નરકં પથ્ય । ઉક્તશ્ચ—‘મચ્છા મણુઆ ય સત્તમિં પુઢવિં’ ઇતિ । અતિલોભાવિષ્ઠા મનુણ્યાસ્તન્દુલમત્સ્યાદયશ્ચ સપ્તમપૃથિવી ભાજો ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

કર્મોંકે વિનાશ કરનેકી શક્તિસે સંપન્ન વીર ક્રોધાદિક કપાયોંકે અભિમાનકો અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી આદિ ક્રોધ માન માયા ઓર લોભકો દૂર કરે । અથવા-ક્રોધ હૈ આદિમેં જિસકે વહ ક્રોધાદિ હૈ । ક્રોધાદિરૂપ જો માન ઉસકા નામ ક્રોધાદિમાન હૈ । જિસ ગર્વકા હેતુ ક્રોધ હૈ ઉસ ક્રોધાદિકારણક માનકો વહ નણ્ટ કરે । અનન્તાનુવન્ધી આદિ કપાય સમ્બન્ધી લોભકે વિપાકકો સદા દુસ્તર નરક હી સમહાના ચાહિયે । કહા भी है—“ मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढविं ” अति लोभसे युक्त मनुष्य और मत्स्य-तन्दुलमत्स्य आदि मरकर सानवें नरकमें जाते हैं । जब यह निश्चित सिद्धान्त है कि लोभसे युक्त प्राणी हिंसादिक पापकर्मों में प्रवृत्तियुक्त होनेसे मरकर नरक गतिमें जाते हैं तो जो कर्मोंको नाश करनेवाली शक्तिसे युक्त वीर हैं उन्हें प्राणियोंकी हिंसासे सदा

કર્મોના વિનાશ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન વીર ક્રોધાદિક કપાયોના અભિમાનને અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી આદિ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભને દૂર કરે. અથવા ક્રોધ છે આદિમાં જેને તે ક્રોધાદિ છે. ક્રોધાદિરૂપ જે માન તેનું નામ ક્રોધાદિમાન છે. જે ગર્વનો હેતુ ક્રોધ છે, તે ક્રોધાદિકારણક માનનો તે નાશ કરે, અનન્તાનુવન્ધી આદિ કપાય સંબન્ધી લોભના વિપાકને સદા દુસ્તર નરક ન સમજવું જોઈએ, કહ્યું છે—“ मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढविं ” अति लोभधी युक्त मनुष्य અને मत्स्य-तन्दुलमत्स्य आदि मरीने नातभी नरकમાં जाय છે. ન્યારે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાંત છે કે લોભથી યુક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપ કર્મોમાં પ્રવૃત્તિ યુક્ત હોવાથી મરીને નરક ગતિમાં જાય છે તો જે કર્મોના નાશ કરવાવાળી શક્તિથી યુક્ત વીર છે તેને પ્રાણીઓની હિંસાથી સદા ચર્ચ રીતિથી દૂર ન રહેવું જોઈએ.

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘ તસ્માત્ ’ इत्यादि । लोभाविष्टाः प्राणि-
हिंसनादौ प्रवृत्त्या नरकं प्राप्नुवन्ति, तस्माद् वीरः=कर्मविदारणोत्साहयुक्तो वधात्=
प्राणिनां हिंसनाद् विरतः सर्वथा निवृत्तः स्यात् । किंच—लघुभूतगामी=लघुभूत
आत्मा येन स लघुभूतो मोक्षः, तं गन्तुं शीलमस्येति लघुभूतगामी, यद्वा—‘लघु-
भूतकामी’ इतिच्छाया, तत्र आत्मानं लघुभूतं कामयते इति लघुभूतकामी=मोक्षा-
भिलाषी, मोक्षमार्गारूढः शोकं, ‘स्रोत’ इतिच्छायापक्षे स्रोतो=भावस्रोतोवा कर्म-
कारणं, छिन्यात्=व्यपनयेत् ॥ सू० १२ ॥

સર્વરીતિસે દૂર હી રહના ચાહિયે । હિંસાદિક પાપકર્મોસે સદા ત્રીન કરણ
ત્રીન યોગસે અર્થાત્ મન, વચન ઓર કાય, એવં કૃત કારિત ઓર અનુ-
મોદના સે જો દૂર રહતા હૈં વહ કર્મબન્ધકે ભારસે ભારી નહીં હોતા હૈં ।
એસે વ્યક્તિકી આત્મામેં સ્વાભાવિક રીતિસે લાઘવ ગુણકા આવિર્ભાવ
હોતા હૈં ઓર ઉસસે ઊર્ધ્વગતિકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં । ‘લઘુભૂત’ શબ્દકા
અર્થ મોક્ષ હૈં, ક્યોં કિ મુક્તિકા લાભ ઉસી આત્માકો હોતા હૈં કિ જિસ
સે કર્મકા ભાર ઉતર જાતા હૈં । કર્મકા ભાર ઉતર જાનેસે આત્મા સ્વા-
ભાવિક રીતિસે લઘુ-હલ્કા હો જાતા હૈં । જો ચીજ વજનમેં હલ્કી હોતી
હૈં વહ સ્વભાવસે હી ઊપરકી ઓર ઉઠતી હૈં । આત્મા ભી જવ કર્મ-
બન્ધનસે રહિત હો જાતી હૈં તવ હસકા ભી સ્વભાવ સ્વતઃ ઊર્ધ્વગમન કરને
કા હો જાતા હૈં । સકલ કર્મોકા ક્ષય હોના હી આત્માકી મુક્તિ હૈં । હસ
મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈં વહ લઘુભૂતગામી હૈં । અથવા
‘લઘુભૂતગામી’ હસ પદકી છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એસી ભી હોતી હૈં ।

હિંસાદિક પાપકર્મોથી સદા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી અર્થાત્ મન વચન કાયા
અને કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી જે દૂર રહે છે તે કર્મબંધના ભારથી ભારી
થતા નથી, એવી વ્યક્તિના આત્મામાં સ્વાભાવિક રીતથી લાઘવ ગુણનો આવિ-
ર્ભાવ થાય છે અને તેનાથી ઉર્ધ્વગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે ‘લઘુભૂત’ શબ્દનો અર્થ
મોક્ષ છે. કરણ કે મુક્તિનો લાભ તે આત્માને થાય છે કે જેથી કર્મનો ભાર
ઉતરી જાય છે. કર્મનો ભાર ઉતરી જવાથી આત્મા સ્વાભાવિક રીતથી લઘુ-
હલકો બને છે. જે ચીજ વજનમાં હલકી થાય છે તે સ્વભાવથી જ ઉપરની
તરફ ઉઠે છે. આત્મા પણ જ્યારે કર્મબંધનથી રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેના
પણ સ્વભાવ સ્વતઃ ઉર્ધ્વગમન કરવાનો થઈ જાય છે. સકલ કર્મોનો ક્ષય થવો
તે જ આત્માની મુક્તિ છે. તેવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
લઘુભૂતગામી છે. અને ‘લઘુભૂતગામી’ આ પદની છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એમ પણ

કિંચ—‘ ગંથં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંથં પરિણાય ઇહજ્જ ધીરે, સોયં પરિણાય ચરિજ્જ દંતે । ઉન્મજ્જ લદ્ધું ઇહ માણુસેહિં, નો પાણિણં પાણે સમારભિજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—ગ્રન્થં પરિજ્ઞાય ઇહાઘ ધીરઃ, સ્ત્રોતઃ પરિજ્ઞાય ચરેદ્ દાન્તઃ । ઉન્મજ્જનં લબ્ધ્વા ઇહ માનુષ્યેષુ નો પ્રાણિનાં પ્રાણાન્ સમારભેથાઃ । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—ઇહ સંસારે મનુષ્યલોકે વા, અઘૈવ=કાલાનતિક્રમેણ, ધીરઃ સન્ ગ્રન્થં =વાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યા-
શ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જયેત્ । કિં ચ સ્ત્રોતઃ=ભાવસ્ત્રોતો વિષયાસક્તિરૂપં સંસારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા દાન્તઃ=ઇન્દ્રિયનોન્દ્રિયદમનશીલઃ ચરેત્=સંયમમાચરેત્ ।

इसका अर्थ यह होता है कि मोक्षका जो अभिलाषी है वह लघुभूत-
कामी है । मोक्षाभिलाषी मोक्षमार्गपर आरुढ़ होता हुआ शोक को,
अथवा कर्मोंके आस्रवके कारणभूत भावस्त्रोतको अपनी आत्मासे सदा
दूर करे ॥ सू० १२ ॥

और भी कहते हैं—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि ।

इस संसार अथवा मनुष्यलोकमें आत्मार्थी को समय बिताना
व्यर्थ है । जहां तक हो सके जल्दी से जल्दी धैर्यशाली बन कर वाह्य
और आभ्यन्तर परिग्रहको ज्ञपरिज्ञासे बन्धका कारण जानकर प्रत्या-
श्यानपरिज्ञासे उसका त्याग करे । तथा विषयोंमें आसक्तिरूप संसार
को जान कर पांच इन्द्रिय एवं मनका दमन करता हुआ संयमकी आ-
राधनामें अपनेको लगावे ।

થાય છે તેનો અર્થ એ થાય છે કે મોક્ષનો જે અભિલાષી છે તે લઘુભૂતકામી
છે. મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગ ઉપર આરુઢ થઈને શોકને અથવા કર્મોના આસ્ર-
વના કારણભૂત ભાવસ્ત્રોતને પોતાના આત્માથી સદા દૂર કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

કરી કહે છે—‘ ગંથં પરિણાય ’ ઇત્યાદિ.

આ સંસાર અને મનુષ્ય લોકમાં આત્માર્થી માટે સમય વિતાવેો વ્યર્થ
છે. જ્યાં સુધી બની શકે જલ્દીમાં જલ્દી ધૈર્યશાળી બનીને બાહ્ય અને આભ્યન્તર
પરિગ્રહને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ બણી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે,
તથા વિષયોમાં આસક્તિરૂપ સંસારને જાણીને પાંચ ઇન્દ્રિય અને મનનું દમન કરીને
સંયમની આરાધનામાં પોતાને લગાડે.

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માત્’ इत्यादि । लोभाविष्टाः प्राणि-
हिंसनादौ प्रवृत्त्या नरकं प्राप्नुवन्ति, तस्माद् वीरः=कर्मविदारणोत्साहयुक्तो वधात्=
प्राणिनां हिंसनाद् विरतः सर्वथा निवृत्तः स्यात् । किंच—लघुभूतगामी=लघुभूत
आत्मा येन स लघुभूतो मोक्षः, तं गन्तुं शीलमस्येति लघुभूतगामी, यद्वा-‘लघु-
भूतकामी’ इतिच्छाया, तत्र आत्मानं लघुभूतं कामयते इति लघुभूतकामी=मोक्षा-
भिलाषी, मोक्षमार्गारूढः शोकं, ‘स्रोत’ इतिच्छायापक्षे स्रोतो=भावस्रोतोवा कर्म-
कारणं, छिन्यात्=व्यपनयेत् ॥ सू० १२ ॥

સર્વરીતિસે દૂર હી રહના ચાહિયે । હિંસાદિક પાપકર્મોસે સદા ત્રીન કરણ
ત્રીન યોગસે અર્થાત્ મન, વચન ઓર કાય, એવં કૃત કારિત ઓર અનુ-
મોદના સે જો દૂર રહતા હૈ વહ કર્મબંધકે ભારસે ભારી નહીં હોતા હૈ ।
એસે વ્યક્તિકી આત્મામેં સ્વાભાવિક રીતિસે લાઘવ ગુણકા આર્ભાવ
હોતા હૈ ઓર ઉસસે ઊર્ધ્વગતિકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ‘લઘુભૂત’ શબ્દકા
અર્થ મોક્ષ હૈ, ક્યોં કિ મુક્તિકા લાભ ઉસી આત્માકો હોતા હૈ કિ જિસ
સે કર્મકા ભાર ઉતર જાતા હૈ । કર્મકા ભાર ઉતર જાનેસે આત્મા સ્વા-
ભાવિક રીતિસે લઘુ-હત્કા હો જાતા હૈ । જો ઓજ વજનમેં હલ્કી હોતી
હૈ વહ સ્વભાવસે હી ડપરકી ઓર ઉઠતી હૈ । આત્મા ભી જબ કર્મબ-
ન્ધનસે રહિત હો જાતી હૈ તવ હસકા ભી સ્વભાવ સ્વતઃ ઊર્ધ્વગમન કરને
કા હો જાતા હૈ । સકલ કર્મોંકા ક્ષય હોના હી આત્માકી મુક્તિ હૈ । હસ
મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ લઘુભૂતગામી હૈ । અથવા
‘લઘુભૂયગામી’ હસ પદકી છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એસી ભી હોતી હૈ ।

હિંસાદિક પાપકર્મોંથી સદા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી અર્થાત્ મન વચન કાયા
અને કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી જે દૂર રહે છે તે કર્મબંધના ભારથી ભારી
થતા નથી, એવી વ્યક્તિના આત્મામાં સ્વાભાવિક રીતથી લાઘવ ગુણનો આર્ભ-
ભાવ થાય છે અને તેનાથી ઉર્ધ્વગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે ‘લઘુભૂત’ શબ્દનો અર્થ
મોક્ષ છે. કારણ કે મુક્તિનો લાભ તે આત્માને થાય છે કે જેથી કર્મનો ભાર
ઉતરી જાય છે. કર્મનો ભાર ઉતરી જવાથી આત્મા સ્વાભાવિક રીતથી લઘુ-
હલકો બને છે. જે ચીજ વજનમાં હલકી થાય છે તે સ્વભાવથી જ ઉપરની
તરફ ઉઠે છે. આત્મા પણ ત્યારે કર્મબંધનથી રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેના
પણ સ્વભાવ સ્વતઃ ઉર્ધ્વગમન કરવાનો થઈ જાય છે. સકલ કર્મોંનો ક્ષય થવો
તે જ આત્માની મુક્તિ છે. તેવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
લઘુભૂતગામી છે. અને ‘લઘુભૂયગામી’ આ પદની છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એમ પણ

કિંચ—‘ ગંથ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંથં પરિણાય ઇહઽઽજ ધીરે, સોયં પરિણાય ચરિઽઽજ દંતે । ઉમ્મઽઽજ લદ્ધું ઇહ માણુસેહિં, નો પાણિણં પાણે સમારભિઽઽજાસિ-ત્તિ બેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—ગ્રન્થં પરિજ્ઞાય ઇહાઽ ધીરઃ, સ્રોતઃ પરિજ્ઞાય ચરેદ્ દાન્તઃ । ઉન્મઽઽજનં લબ્ધ્વા ઇહ માનુષ્યેષુ નો પ્રાણિનાં પ્રાણાન્ સમારભેથાઃ । ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—ઇહ સંસારે મનુષ્યલોકે વા, અઘૈવ=કાલાનતિક્રમેણ, ધીરઃ સન્ ગ્રન્થં =વાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યા-
ખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જયેત્ । કિં ચ સ્રોતઃ=ભાવસ્રોતો વિષયાસક્તિરૂપં સંસારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા દાન્તઃ=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયદમનશીલઃ ચરેત્=સંયમમાચરેત્ ।

इसका अर्थ यह होता है कि मोक्षका जो अभिलाषी है वह लघुभूत-
कामी है । मोक्षाभिलाषी मोक्षमार्गपर आरुढ़ होता हुआ शोक को,
अथवा कर्मोंके आस्रवके कारणभूत भावस्रोतको अपनी आत्मासे सदा
दूर करे ॥ सू० १२ ॥

और भी कहते हैं—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि ।

इस संसार अथवा मनुष्यलोकमें आत्मारथी को समय बिताना
व्यर्थ है । जहां तक हो सके जल्दी से जल्दी धैर्यशाली बन कर बाह्य
और आभ्यन्तर परिग्रहको ज्ञपरिज्ञासे बन्धका कारण जानकर प्रत्या-
ख्यानपरिज्ञासे उसका त्याग करे । तथा विषयोंमें आसक्तिरूप संसार
को जान कर पांच इन्द्रिय एवं मनका दमन करता हुआ संयमकी आ-
राधनामें अपनेको लगावे ।

થાય છે. તેનો અર્થ એ થાય છે કે મોક્ષનો જે અભિલાષી છે તે લઘુભૂતકામી
છે. મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગ ઉપર આરુઢ થઈને શોકને અથવા કર્મોના આસ્ર-
વના કારણભૂત ભાવસ્રોતને પોતાના આત્માથી સદા દૂર કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ફરી કહે છે—‘ ગંથં પરિણાય ’ ઇત્યાદિ.

આ સંસાર અને મનુષ્ય લોકમાં આત્માર્થી માટે સમય વિતાવવો વ્યર્થ
છે. ન્યાં સુધી બની શકે જલ્દીમાં જલ્દી ધૈર્યશાળી બનીને બાહ્ય અને આભ્યન્તર
પરિગ્રહને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ બાણી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે,
તથા વિષયોમાં આસક્તિરૂપ સંસારને બાણીને પાંચ ઇન્દ્રિય અને મનનું દમન કરીને
સંયમની આરાધનામાં પોતાને લગાડે.

इह संसारद्वंद्वे मनुष्येषु=मनुष्यभवेषु, उन्मज्जनं=जन्मरूपं लब्ध्वा, मनुष्य-
भवादन्यत्र संपूर्णमोक्षमार्गप्राप्त्यसंभवादिदं दुर्लभमिति भावः; प्राणिनां=जीवानां

इस संसारमें मनुष्यभवकी प्राप्ति दुर्लभ है। यदि कोई पुण्यानुबन्धी पुण्यके उदयसे इस मनुष्यभवकी प्राप्ति तुम्हें हुई है तो तुम इस अमूल्य जीवनको व्यर्थ हिंसादिक कार्यों में लगाकर नष्ट न करो। इसी बात को समझाते हुए सूत्रकार शिष्योंके प्रति कहते हैं—मनुष्यभवके सिवाय अन्य किसी भी भवमें संपूर्ण मोक्षमार्गकी प्राप्ति जीवको नहीं होती है इसीलिये ज्ञानियोंने इसकी प्राप्ति दुर्लभ बतलाई है। इसे प्राप्तकर जीवोंके दस द्रव्य प्राणों (५ इन्द्रिय, ३ बल, १ आयु और १ श्वासोच्छ्वास-१०) का वियोग करनेमें ही इसे व्यर्थ गंवा देना यह बुद्धिमान मनुष्यका काम नहीं है। इस मनुष्यभवकी प्राप्तिकी सफलता तो जब ही है कि इससे संयमका आराधन किया जाय और मुक्तिमार्गका पथिक बना जाय। इसलिये हे शिष्य ! तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस दुर्लभतम मनुष्यभवको पाकर व्यर्थ हिंसादिक कार्यों में न फंसकर मोक्षमार्गके पथिक बनो और अपने इस मनुष्यभवको सफल बनाओ, यही सूत्रका आशय है। अर्थात्—मनुष्यभवमें जन्म प्राप्त कर तुम प्राणियोंके प्राणोंका

આ સંસારમાં મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે. કદાચ કોઈ પુણ્યાનુબંધી પુણ્યના ઉદયથી આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ તમોને મળી છે તો તમો આ અમૂલ્ય ભવનને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં લગાવી નષ્ટ ન કરો. આ વાતને સમજાવતાં સૂત્રકાર શિષ્યો પ્રતિ કહે છે—મનુષ્ય ભવ મિવાય બીજા કોઈ પણ ભવમાં સંપૂર્ણ મોક્ષમાર્ગની પ્રાપ્તિ ભવને થતી નથી. માટે જ્ઞાનીઓએ તેની પ્રાપ્તિ દુર્લભ બતાવી છે. તેને પ્રાપ્ત કરી ભવોના દશદ્રવ્ય પ્રાણો (૫ ઇન્દ્રિય, ૩ બળ, ૧ આયુ અને ૧ શ્વાસોચ્છ્વાસ-૧૦) નો વિયોગ કરવામાં જ તેને વ્યર્થ ગુમાવવો તે બુદ્ધિમાન મનુષ્યનું કામ નથી.

આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિની સફળતા તો ત્યારે જ છે કે તેનાથી સંયમનું આરાધન કરવામાં આવે અને મુક્તિ માર્ગનો પથિક બની જાય, તેથી હે શિષ્ય ! તમારું કર્તવ્ય છે કે તમે આ દુર્લભ મનુષ્ય ભવ મેળવીને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં ન ફસતાં મોક્ષમાર્ગના પથિક બનો, અને પોતાના આ મનુષ્યભવને સફળ બનાવો. એ જ સૂત્રનો આશય છે. અર્થાત્ મનુષ્યભવમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી તમે પ્રાણીઓના

પ્રાણાન્=પંચેન્દ્રિયવલત્રયોચ્છ્વાસનિઃશ્વાસાયુષ્કરૂપાન્ દશત્રિધાન્ નો સમારભેથાઃ
=નાતિપાતયેરિત્યર્થઃ । પ્રાણિનાં પ્રાણાતિપાતં મા કૃથા ઇતિ ભાવઃ । ઇતિ બ્રવીમિ-
ઇતિશબ્દઃ ઉદ્દેશપરિસમાપ્તિવોધકઃ, બ્રવીમિ=યથા ભગવન્મુરુવાન્મયા શ્રુતં તથા
કથયामीત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ઇતિ તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ સમ્પૂર્ણઃ ॥ ૩-૨ ॥

વ્યપરોપણ મત્ત કરો । ‘ ઇતિ ’ શબ્દ હસ ઉદ્દેશકી સમાપ્તિકા સૂચક છે ।
“બ્રવીમિ” યહ પદ બતલાતા છે કે જેસા મૈને ભગવાન્કે મુખસે સુના
છે વૈસાહી તુમસે કહા છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥

પ્રાણોનો ઘાત ન કરો. “ ઇતિ ’ શબ્દ આ ઉદ્દેશની સમાપ્તિનું સૂચક છે “ બ્રવીમિ ”
આ પદ બતાવે છે કે જેવું મેં ભગવાનના મુખથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમોને
કહ્યું છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥



॥ अथ तृतीयाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः ॥

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके जात्या वृद्ध्या च दुःखं, तद्ध्याच्च शीतोष्णपरीषदसहनं च प्रतिबोधितम् । अथ तत्सहनमात्रेण पापकर्मानाचरणमात्रेण वा चारित्र्याचरणरहितः श्रमणो न भवतीति प्रतिबोधयितुं तृतीयोद्देशकं प्रस्तुवन् प्रथमं सूत्रमाह—
'संधिं लोगस्स' इत्यादि ।

मूलम्—संधिं लोगस्स जाणिता ॥ सू० १ ॥

छाया—सन्धिं लोकस्य ज्ञात्वा ॥ सू० १ ॥

। तीसरे अध्ययनका तीसरा उद्देश ।

इसके द्वितीय उद्देशमें प्राणियोंकी गर्भसे लगा कर बालादि वृद्धावस्था पर्यन्त सब ही अवस्थाएँ दुःखोंसे समन्वित हैं, उन दुःखोंसे भयभीत प्राणियोंको आत्मकल्याणके मार्गस्वरूप संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस आराधनामें उन्हें शीत-उष्ण परीषदोंको सहन करना चाहिये, यह सब विषय बतलाया जा चुका है, अर्थात् मोक्षाभिलाषीके लिये यह सब समझाया जा चुका है । अब इस तीसरे उद्देशमें यह समझाया जायगा कि जो चारित्र्यके आचरणसे रहित है वह भले ही शीत उष्ण परीषदोंको सहे, पापकर्मोंको न भी करे, तो भी वह श्रमण नहीं है । इसी अभिप्रायको लेकर सूत्रकार प्रथम सूत्रको कहते हैं—'संधि' इत्यादि।

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ

અગાઉના બીજા ઉદ્દેશમાં પ્રાણીઓની ગર્ભથી માંડી બાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા પર્યન્ત સઘળી અવસ્થાઓ દુઃખોથી ભરેલી છે, તે દુઃખોથી ભયભીત પ્રાણીઓને આત્મકલ્યાણના માર્ગસ્વરૂપ સંયમની આરાધના કરવી જોઈએ. આ આરાધનામાં તેણે શીત અને ઉષ્ણ પરીષદો સહન કરવા જોઈએ. આ સઘળા વિષયો બતાવવામાં આવેલ છે. અર્થાત્ મોક્ષાભિલાષીએ માટે આ સઘળું સમજવવામાં આવેલ છે. હવે આ ત્રીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજવવામાં આવશે કે જે ચારિત્રના આચરણથી રહિત છે તે ભલે શીત અને ઉષ્ણ પરીષદો સહન કરે, પાપકર્મો પણ ભલે ન કરે, તો પણ તે શ્રમણ નથી. આ અભિપ્રાયને લઈને સૂત્રકાર પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—
'સંધિં લોગસ્સ' ઇત્યાદિ.

સંધાનં સન્ધિઃ=ત્રુચ્યતઃ પુનઃ સંમીલનં, સ દ્વિધા-દ્રવ્યસન્ધિર્ભાવસન્ધિશ્ચેતિ । તત્ર દ્રવ્યસન્ધિઃ=કુલ્યવસ્ત્રાદેઃ સંધાનં, ભાવસન્ધિઃ=ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમઃ, તં જ્ઞાત્વા=વિદિત્વા જ્ઞાતવત્ इत्यर्थः, લોકસ્ય=ક્ષાયોપશમિકાદિભાવલોકસ્ય પ્રમાદઃ શ્રેયસે ન ભવતિ । યદ્વા-સન્ધિઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણો ધર્મારાધનાવસરઃ, તં જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયરૂપસ્ય દુઃખોત્પાદનં ન કુર્યાત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સર્વત્રાત્મૌપમ્યેન સુખં દુઃખં વા જાનીયાદિત્યાહ-‘આયઓ’ इत्यादि ।

મૂલમ્-આયઓ બહિયા પાસ, તમ્હા ન હંતા ન વિધાયણ ॥૨॥

હાયા-આત્મતો વહિઃ પશ્ય । તસ્માન્ન હન્તા ન વિધાતયેત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા-આત્મતઃ યથાऽऽત્મનઃ સુખં પ્રિયં, દુઃખમપ્રિયમ્, તથા-વહિઃ=આત્મવ્યતિરિક્તાનાં પ્રાણિનામપિ પશ્ય=જાનીહિ । આત્મતુલ્યં સુખં દુઃખં સર્વપ્રાણિનાં વિજ્ઞાય કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માદ્’ इत्यादि ।

ટૂટી વસ્તુકો જોડનાં હસકા નામ સંધિ હૈ । વહ દો પ્રકારકી હૈ— (૧) દ્રવ્યસન્ધિ, (૨) ભાવસન્ધિ । મીંત ઓર વસ્ત્ર આદિકા જોડના-યહ દ્રવ્યસન્ધિ, ઓર ચારિત્રમોહનીયકા ક્ષયોપશમ ભાવસન્ધિ હૈ । હસ સન્ધિકે જ્ઞાતા મુનિકો ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકકે વિષયમેં પ્રમાદ કરના ઉચિત નહીં હૈ । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનકા અવસર મી સન્ધિ હૈ । હસકો જાનકર ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો દુઃખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

‘સમસ્ત સંસારી જીવોંકો સુખ તથા દુઃખ મેરે હી સમાન પ્રિય ઓર અપ્રિય હૈ’ એસા જાનનાં ચાહિયે, હસે સ્પષ્ટ કરતે હૈ-‘આયઓ’ इ०

સંયમી જીવ સદા હસ બાતકા પૂર્ણ ધ્યાન રહે કિ-જિસ પ્રકાર મુઝે સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ ડસી પ્રકાર મુઝસે મિત્ર અન્ય સમસ્ત

ભાંગી ગયેલ વસ્તુને જોડવી તેનું નામ સંધિ છે. તે બે પ્રકારની છે. (૧) દ્રવ્યસંધિ (૨) ભાવસંધિ. ભીંત અને વસ્ત્ર આદિનું જોડવું તે દ્રવ્યસંધિ અને ચારિત્રમોહનીયનો ક્ષયોપશમ ભાવસંધિ છે. આ સંધિના જ્ઞાતા મુનિને ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકના વિષયમાં પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી. અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનનો અવસર પણ સંધિ છે તેને જાણીને ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને દુઃખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સમસ્ત સંસારી જીવોને સુખ અને દુઃખ મારી જ માફક પ્રિય અને અપ્રિય છે, એવું જાણવું જોઈએ, તેને સ્પષ્ટ કરે છે-‘આયઓ’ इत्यादि.

સંયમી જીવ સદા એ વાતનું પૂર્ણ ધ્યાન રાખે કે જે પ્રકારે મને સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે તે પ્રકારે મારાથી ભિન્ન અન્ય સમસ્ત સંસારી જીવોને

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં સુખેઽભિલાષો દુઃખે દ્વેષઃ, તસ્માત્ તેષાં ન હન્તાન્ન પ્રાણાતિપાતકઃ સ્યાત્ । અન્યૈરપિ તાન્ ન વિઘાતયેત્, ઘ્નન્તમન્યં નાનુમોદયેત્ । યદ્યપિ કુતીર્થિકા ઉદ્દિશ્યભોજિનો દ્રવ્યલિઙ્ગિનો દણ્ડિનશ્ચ સ્વયં પાકાદિભિઃ સ્થૂલાન્ પ્રાણિનો ન ઘ્નન્તિ, તથાપ્યન્યૈર્ઘાતયન્તિ ॥ સૂ. ૨ ॥

સંસારી જીવોંકો ભી યહ સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ । હસ લિયે ઉન જીવોંકે પ્રાણોંકો મૈં કિસી ભી રૂપમેં કષ્ટ ન પહુંચાઝું, દૂસરોંસે ભી ઉન્હેં મૈં કષ્ટ ન પહુંચવાઝું, કષ્ટ દેનેવાલે યા ઘાત કરનેવાલે અન્યકી મૈં અનુમોદના ભી ન કરૂં । યદ્યપિ કુતીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સન્યાસી, ઉદ્દિષ્ટભોજી, દ્રવ્યલિઙ્ગી, તથા દણ્ડી આદિ સ્વયં રસોઈ આદિ પકાકર નહીં खाते पीते हैं, હસ પ્રકાર વે સ્વયં સ્થૂલ જીવોંકી હિંસા નહીં કરતે હૈં ફિર ભી દૂસરોંસે અપને લિયે જીવોંકી હિંસા કરાતે હી હૈં, ક્યોં કિ વે અપને નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ દૂસરોંસે કરાતે હૈં, ઉસ આરંભ મૈં જો હિંસા હોતી હૈ ઉસકા નિમિત્ત ઉન્હેં હોના પડતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સચ્ચે મુનિ હોનેકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોંકા ત્યાગ મન વચન ઓર કાયસે, એવં કૃત કારિત ઓર અનુમોદનાસે કરના ચાહિયે તમી આત્મામેં સાધુતા આતી હૈ । ઉપર-ઉપરસે હિંસાદિ પાપ છોડનેસે અથવા હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરને સે મુનિપના નહીં આતા હૈ । ઉસકી પ્રાપ્તિકે લિયે જિસ પ્રકાર જીવ સ્વયં હિંસાકા ત્યાગ કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર વહ દૂસરોંસે અપને નિમિત્ત હિંસાદિક નહીં કરા સકતા હૈ, ઓર

પણ આ સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે માટે તે જીવોને હું કોઈ પણ પ્રકારે દુઃખ ન પહોંચાડું, બીજાથી પણ તેઓને દુઃખ ન પહોંચાડાવું, કષ્ટ દેવાવાળા અને ઘાત કરવાવાળા બીજાઓની હું અનુમોદના પણ ન કરું. કદાચ કુતીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સંન્યાસી ઉદ્દિષ્ટભોજી દ્રવ્યલિંગી તથા દંડી વિગેરે સ્વયં રસોઈ આદિ પકાવીને ખાતા પીતા નથી, તે પ્રકારે તેઓ સ્વયં સ્થૂલ જીવોની હિંસા કરતા નથી તો પણ બીજાથી ખોતાને માટે જીવોની હિંસા કરાવે છે જ. કારણ કે તેઓ ખોતાના નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ બીજાઓથી કરાવે છે. તે આરંભમાં જે હિંસા થાય છે તેનું નિમિત્ત તેને થવું પડે છે

ભાવાર્થ—સાચા મુનિ થવા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોને ત્યાગ મન વચન અને કાયાથી તેમજ કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી કરવો જોઈએ, ત્યારે જ આત્મામા સાધુતા આવે છે. ઉપર-ઉપરથી હિંસાદિ પાપ છોડવાથી અને હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરવાથી મુનિપણ આવતું નથી તેની પ્રાપ્તિ માટે જે પ્રકારે જીવ સ્વયં હિંસાને ત્યાગ કરે છે તે પ્રકારે તે બીજાઓથી પણ ખોતાને નિમિત્ત હિંસાદિક

પાપકર્માનાચરણમાત્રેણ શ્રમણો ન ભવતિ કિં તુ સમ્યગ્સવનિરોધેનેત્યાહ-
'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જમિણં અન્નમન્નવિતિગિચ્છાણ પઢિલેહાણ ન કરેહ
પાવં કમ્મં, કિં તત્થ મુણી કારણં સિયા ?, સમયં તત્થુવ્વેહાણ
અપ્પાણં વિપ્પસાયણ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—યદિદમ્ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પ્રત્યુપેક્ષ્ય ન કરોતિ પાપં કર્મ ।
કિં તત્ર મુનિઃ કારણં સ્યાત્ ? સમયં તત્રોત્પેક્ષ્ય આત્માને વિપ્રસાદયેત્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—યદિદં પાપં=પાપાનુવન્ધિ કર્મ=પચનપાચનપરિગ્રહાદિલક્ષણમ્ અન્યો-
ન્યવિચિકિત્સયા=વિચિકિત્સા=આશંકા મયં લજ્જા વા, અન્યોન્યસ્ય=પરસ્પરસ્ય યા
વિચિકિત્સા=આશંકા, યદ્વા-અન્યોન્યસ્માત્=પરસ્પરતો મયં લજ્જા વા, તયા પ્રત્યુ-

ન અપને લિયે હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કર સકતા હૈ । યદિ
એસા કરતા હૈ તો વહ સાધુ નહીં કહલા સકતા । જો સાધુ હો કર
જીવહિંસાકે ભયસે સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા તો નહીં કરતે હૈં પરન્તુ ઉદ્દિષ્ટ
ભોજન લેતે હૈં, તથા અપને લિયે દૂસરોંસે ભોજન તૈયાર કરવાતે હૈં વે નવ
કોટિસે હિંસા કે ત્યાગી નહીં હૈં, અતઃ વે સાધુ ભી નહીં હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પાપ કર્મ નહીં કરને માત્રસે પ્રાણી મુનિ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ કર્મોં
કે આસ્રવકો ભલી પ્રકાર રોકનેસે હી વહ મુનિ હોતા હૈ, અવ હસી
વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

જો મુનિ-અવસ્થામેં પાપકર્મોં કે નહીં કરનેકે કારણ હૈં વે પ્રત્યક્ષ
હૈં । વે ચે હૈં—આશંકા, ભય અથવા લજ્જા । અર્થાત્ મુનિ હો કર ભી જો
પાપ નહીં કરતા હૈં ઉસમેં પ્રધાન કારણ પરસ્પરકી અથવા એક દૂસરેસે

કરાવતા નથી, અને પોતાને માટે હિંસા કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા
નથી. કદાચ એવું કરે તો તેને સાધુ કહેવામાં આવતો નથી. જે સાધુ બની
જીવ હિંસાના ભયથી સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા નથી કરતા પરંતુ ઉદ્દિષ્ટ ભોજન લે છે.
તથા પોતાને માટે બીજાઓથી ભોજન તૈયાર કરાવે છે તેઓ નવ કોટિથી હિંસાના
ત્યાગી નથી તેમજ તેઓ સાચા સાધુ પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પાપકર્મ નહિ કરવા માત્રથી મુનિ બનતા નથી પણ કર્મોના આસ્રવને ભલી
પ્રકાર રોકવાથી જ મુનિ થાય છે, તે વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—'જમિણં' ઇત્યાદિ.

જે મુનિ અવસ્થામાં પાપકર્મો નહિ કરવાના કારણો છે તે પ્રત્યક્ષ છે. તે
આ છે—આશંકા ભય અથવા લજ્જા. અર્થાત્ મુનિ બનીને પણ જે પાપ કરતા નથી
તેમાં પ્રધાન કારણ પરસ્પરની અથવા એક બીજાઓથી પરસ્પરમાં આશંકા ભય

પેક્ષ્ય=મનસિ વિચાર્ય ન કરોતિ । તત્ર=પાપકર્માનાચરણે તસ્ય કિં મુનિઃ=મુનિત્વં
કારણં સ્યાત્ ? ન, યતસ્તત્ર પાપકર્માનાચરણે અન્યોન્યવિચિકિત્સૈવ કારણં, ન તુ
મુનિત્વમ્ । યસ્તુ મુનિર્ભવતિ તસ્યૈવ મુનિત્વં પાપકર્માનાચરણે કારણં ભવતીતિ ।
યદ્વા-‘કિમ્’-ઇતિ કાકવા નિર્દેશઃ । ‘મુળી’ ઇતિ સમ્પ્રત્યયન્તમ્, તતશ્ચ-‘મુનો’-
ઇતિચ્છાયા । તત્ર=તસ્મિન્ મુનો=મુનિત્વે કિં પાપકર્માનાચરણમેવ કારણમ્ ? અપિ
તુ ન, નહિ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પાપમનનુતિષ્ઠન્ મુનિર્ભવતીતિ । તર્હિ કથં મુનિર્ભ-
વતિ ? ઇત્યાહ-‘સમયં તત્થુવ્વેહા’ ઇત્યાદિ । તત્ર સમયમ્=આગમમ્ ઉત્પેક્ષ્ય=
પર્યાલોચ્ય આત્માનં વિપ્રસાદયેત્, જિનપ્રવચનરહસ્યપર્યાલોચનેનાત્માનમપ્રમાદ-
શુભભાવનાદિભિર્વિવિધૈરુપાયૈઃ પ્રસન્નં કુર્યાદિત્યર્થઃ । શુભાધ્યવસાયપૂર્વકમાગમો-
ક્તાનુસારેણ યદનુષ્ઠાનં તત્સર્વં મુનિત્વે કારણમિતિ ભાવઃ । इदं निश्चयनयाभिप्रायेण ।

પરસ્પરમેં આગ્રહા, ભય અથવા લજ્જા હૈ, ન કિ મુનિત્વ । વહ તો इन्हीं
सब बातोंको मनमें विचार कर पापानुबन्धी कर्म जो पचन पाचन एवं
परिग्रह आदि हैं उन्हें नहीं करता है ।

અથવા-પરસ્પરકી આગ્રહા યા ભયાદિસે પાપકર્મોંકા નહીં કરના ક્યા
યહી મુનિપનાકા કારણ હૈ ? इस प्रकारकी आशङ्काका उत्तर देते हैं-
‘समयं तत्थुव्वेहा’ इत्यादि । समय शब्दका अर्थ ‘आगम’ तथा
‘उत्प्रेक्ष्य’ शब्दका अर्थ ‘विचार कर’ है, अर्थात्-जिनप्रतिपादित आ-
गमके रहस्यका विचार कर ‘अप्पाणं विप्पसायए’ आत्मानं विप्रसादयेत्,
मुनि अपनी आत्माको अप्रमाद एवं शुभ भावनादिक विविध उपायों से
प्रसन्न करे । शुभ अध्यवसायपूर्वक आगमप्रतिपादित विधिके अनुसार जो
अनुष्ठान मुनि-अवस्थामें करनेयोग्य कहे गये हैं वे सब करे, ये ही अनु-
ष्ठान मुनिपनामें कारण हैं । यह कथन निश्चय नयके अभिप्रायसे किया है ।

અથવા લજ્જા છે, ન કે મુનિત્વ. તેઓ (મુનિઓ) તો આ સઘળી વાતોનો મનમાં વિચાર
કરી પાપાનુબંધી કર્મ જે પચન-પાચન અને પરિગ્રહ આદિ છે તેને કરતા નથી

અથવા—પરસ્પરની આશંકા અથવા લયાદિથી પાપકર્મોંનું નહિ કરવું તે
શું મુનિપણનું કારણ છે ? આ પ્રકારની આશંકાનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-‘સમયં
તત્થુવ્વેહા’ ઇત્યાદિ સમય શબ્દનો અર્થ ‘આગમ’ તથા ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દનો
અર્થ ‘વિચાર કરી’ છે અર્થાત્ જનપ્રતિપાદિત આગમના રહસ્યનો વિચાર કરી
‘અપ્પાણં વિપ્પસાયએ’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્-મુનિ પોતાના આત્માને અપ્રમાદ અને શુભ
ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોથી પ્રસન્ન કરે. શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિ-
અનુસાર જે અનુષ્ઠાન મુનિ અવસ્થામાં કરવાયોગ્ય કહેવામાં આવેલ છે તે સઘળા કરે
તે જ અનુષ્ઠાન મુનિપણનું કારણ છે આ કથન નિશ્ચયનયના અભિપ્રાયથી કરેલ છે.

યદ્વા-પરસ્પરાશક્કયા ભયેન લજ્જયા વા યદાધાકર્માદીનિ પરિહરતિ, યથા-કાલં પ્રતિલેખનાદીનિ કરોતિ, માસક્ષણાનિ, આતાપનાદિકં ચ સમાચરતિ, તદિદં સર્વં કિં મુનિત્વે કારણં સ્યાન્ન વા? इति शिष्याशङ्कानिराकरणाय कथयति-‘जमिणं’ इत्यादि । अत्रोच्यते-जिनशासने पदार्थतत्त्वाधिगमाय नयद्वयमुपादीयते । तत्र तावन्निश्चयनयमाश्रित्य अन्योपाध्यनावेशेन परिवर्जिताऽकल्पनीयव्यापारस्त्वमेव मुनित्वे कारणम् । मुनित्वं हि शुभान्तःकरणपरिणामेन प्रवचनोक्तविधिनाऽनुष्ठित-क्रियस्यैव भवति, नान्यस्य ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કાસે ભયસે યા લજ્જાસે જો આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ, ઔર સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ, માસસ્વમળ ઔર આતાપના આદિ યોગોંકા અનુષ્ઠાન કરતા હૈ, યે સબ ક્રિયાઈ કયા મુનિપનેમેં કારણ હૈં યા નહીં? इस प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका परिहार करनेके लिये सूत्रकारने “जमिणं” इत्यादि सूत्र कहा है । जिनशासनमें पदार्थके स्वरूपको जाननेके लिये दो नयोंका विधान है-(१) निश्चय नय और (२) व्यवहार नय । इनमें प्रथम निश्चयनयकी अपेक्षासे जो अन्य किसी सांसारिक उपाधिके संसर्गसे रहित हो कर अकल्पनीय व्यापारसे दूर हो चुका है, इस प्रकारका उसका रहन-सहन ही उसके मुनिपनेमें कारणभूत है, क्योंकि कि शुभ अन्तःकरणके परिणामसे शास्त्रोक्त विधिके अनुसार अपनी क्रियाओंको करनेवाले व्यक्तिके ही मुनिपना होता है, अन्यको नहीं ।

અથવા-પરસ્પરની આશ કાથી ભયથી, લજ્જાથી જે આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, અને સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓ કરે છે, માસખમળ અને આતાપના આદિ યોગોનું અનુષ્ઠાન કરે છે, એ સઘળી ક્રિયાઓ શું મુનિપણનું કારણ છે યા નહિ? આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનો પરિહાર કરવા માટે સૂત્રકાર “જમિણ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહેલ છે. જીનશાસનમા પદાર્થના સ્વરૂપને જાણવા માટે બે નયોનું વિધાન છે. (૧) નિશ્ચયનય અને (૨) વ્યવહારનય. તેમાં પ્રથમ નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી જે અન્ય કોઈ સાંસારિક ઉપાધિના સંસર્ગથી રહિત થઈને અકલ્પનીય વ્યાપારથી દૂર થયેલ છે, આ પ્રકારનું તેનું રહન-સહન જ તેના મુનિપણનું કારણભૂત છે કારણ કે શુભ અંત કરણના પરિણામથી શાસ્ત્રોક્ત વિધિ-અનુસાર પોતાની ક્રિયાઓને કરવાવાળી વ્યક્તિને જ મુનિપણું થાય છે. ખીજાને નહિ.

વ્યવહારનયે તુ યઃ પરસ્પરાશઙ્કયા ભયાદિના વા કેનચિત્ કારણેનાઽઽધા-
કર્માદિ પરિવર્જયતિ, પ્રતિલેખનાદિકં કરોતિ, માસક્ષપણાદિતપશ્ચાચરતિ, તસ્ય
મુનિત્વે તદનુષ્ઠાનં કારણં ભવત્યેવ, તાદૃશાનુષ્ઠાનસ્ય નિશ્ચયનયાશ્રિતમુનિત્વહેતુ-
શુભાધ્યવસાયજનકત્વાત્ । નિશ્ચયમુપલબ્ધું વ્યવહારઃ શરણીકરણીયો ભવતિ, યથા
નદ્યાદિતરણં કરચરણપ્રચાલનાદિવ્યવહારેણ વિના નોપપદ્યતે. યથા વા રજ્જુ-
સોપાનાઘાલમ્બનેન વિના પ્રસાદશિખરારોહણં ન સંજાયતે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આત્મનઃ પ્રસન્નતા સંયમારાધનતત્પરસ્ય ભવતિ, અતસ્તત્ર પ્રમાદો ન કાર્ય
ઇત્યાહ—‘ અણણપરમં ’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહાર નયકી અપેક્ષાસે તો જો પરસ્પરકી આશઙ્કા અથવા ભયા-
દિક કિસી કારણકે વશસે આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ,
સમયાનુસાર પ્રતિલેખનાદિક ક્રિયાઓંકો, એવં માસક્ષપણાદિક તપકો
આચરતા હૈ, ઉસ વ્યક્તિકે મુનિપનેમેં યે સવ ઘાતેં કારણ હોતી હૈં । વ્ય-
વહાર, નિશ્ચયકા હેતુ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકારકે વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન
નિશ્ચયનયકી અપેક્ષાસે મુનિપનેકે કારણભૂત શુભ અધ્યવસાયકે ઉત્પાદક
હોતે હૈં । નિશ્ચયકો પાનેકે લિયે વ્યવહારકા અવલમ્બન કરના હી પડતા
હૈ । જૈસે નદી આદિકા તૈરના હાથ પૈર આદિકે ચલાનેરૂપ વ્યવહાર ક્રિયા
કે વિના, અથવા રજ્જુ-રસ્સી યા સીઢી આદિકે અવલમ્બન વિના મકાન
કે ઉપર ચઢના નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આત્મામેં પ્રસન્નતા સંયમકે આરાધનમેં તત્પર મુનિકો હી હોતી હૈ ।
ઇસ લિયે સંયમકે આરાધનમેં મુનિકો પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે, ઇસ
વાતકો પ્રગટ કરતે હૈં—‘ અણણપરમં ’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહારનયની અપેક્ષાથી તો જે પરસ્પરની આશંકા અને ભયાદિક કોઈ
કારણના વશથી આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, સમયાનુસાર પ્રતિલેખ-
નાદિ ક્રિયાઓને તેમજ માસક્ષપણાદિક તપને આચરે છે, તે વ્યક્તિના મુનિપણામાં
એ સઘળી વાતો કારણ અને છે. વ્યવહાર, નિશ્ચયનો હેતુ થાય છે. આ પ્રકારના
વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી મુનિપણાના કારણભૂત શુભ અધ્ય-
વસાયના ઉત્પાદક અને છે. નિશ્ચય મેળવવા માટે વ્યવહારનું અવલંબન લેવું જ
પડે છે. જેમ નદી આદિનું તરવું હાથપગ આદિના ચલાવવારૂપ વ્યવહાર કર્યા
બગર, અને રજ્જુ-રસ્સી અગર સીડી આદિના અવલંબન વિના મકાન ઉપર
ચઢવું બની શકતું નથી ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આત્મામાં પ્રસન્નતા સંયમ આરાધનમા તત્પર મુનિને જ થાય છે, માટે
સંયમ આરાધનમા મુનિએ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ. એ વાતને પ્રગટ કરે
છે—‘ અણણપરમં ’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—અણળપરમં નાળી, નો પમાયણ કયાઈ વિ ।

આયગુત્તે સયા વીરે, જાયમાયાઈ જાવણ ॥સૂ૦ ૪॥

છાયા—અનન્યપરમં જ્ઞાની નો પ્રમાદયેત્ કદાચિદપિ ।

આત્મગુપ્તઃ સદા વીરઃ યાત્રામાત્રયા યાપયેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—જ્ઞાની=સમ્યગ્દષ્ટિઃ, અનન્યપરમં=નાન્યત્ પરમમ્ ઉત્કૃષ્ટં યસ્માત્-અનન્યપરમં=ચારિત્રં, તત્ કદાચિદપિ નો પ્રમાદયેત્=કસ્મિન્નપિ કાલે ચારિત્રે પ્રમાદં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । કેનોપાયેન પ્રમાદો વારણીયઃ? इत्यत आह—‘आत्मगुप्त’ इत्यादि । आत्मगुप्तः=आत्मना=इन्द्रियनोइन्द्रियेण गुप्तः, इन्द्रियनोइन्द्रियनिग्रही-

જ્ઞાની-સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમેં કિસી મી સમય પ્રમાદ ન કરે । ‘અનન્યપરમ’ શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોં કિ “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જિસસે દૂસરી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નહીં હૈ વહ અનન્યપરમ હૈ । શાસ્ત્રમેં સાક્ષાત્ બોક્ષકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલા ચારિત્ર હી બતલાયા ગયા હૈ અતઃ વહી સર્વોત્કૃષ્ટ હૈ । પ્રમાદ ચારિત્રકા વિઘાતક હોતા હૈ इसी लिये वह सम्यग्दृष्टिके लिये वर्जनीय कहा है । પ્રમાદકો દૂર કરનેકા ઉપાય બતલાનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘આયગુત્તે’ इत्यादि, अर्थात् मुनि को सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय और नोइन्द्रिय-मनका विजयी बनना चाहिये । इन पर जब तक विजयरूपी अङ्कुश वह प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक इनके आधीन बना हुआ साधु प्रमादसे रहित नहीं हो सकता । जिह्वा-इन्द्रियकी लोलुपतासे वह मात्रासे भी अधिक आहार ले लेता है । इस से प्रमादकी वृद्धि होती है । तथा अधिक सरस-रसीला आहार लेनेसे

જ્ઞાની-સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમાં કોઈ પણ સમય પ્રમાદ ન કરે. ‘અનન્યપરમ’ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે કારણ કે “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જેનાથી બીજી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નથી તે અનન્યપરમ છે. શાસ્ત્રમાં સાક્ષાત્ બોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર ચારિત્ર જ બતાવવામાં આવેલ છે માટે તે જ સર્વોત્કૃષ્ટ છે. પ્રમાદ ચારિત્રનો વિઘાતક બને છે, માટે તે સમ્યગ્દષ્ટિ માટે વર્જનીય કહેલ છે પ્રમાદને દૂર કરવાનો ઉપાય બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયગુત્તે’ इत्यादि. अर्थात् मुनिने सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय અને નોઇન્દ્રિય-મનના વિજયી બનવું જોઇએ તેના ઉપર જ્યાંસુધી વિજયરૂપી અકુશ તે પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તેના આધીન બનેલા સાધુ પ્રમાદથી રહિત બની શકતા નથી. જીભ ઇન્દ્રિયની લોલુપતાથી તે માત્રાથી પણ અધિક આહાર લઈ લે છે. તેનાથી પ્રમાદની વૃદ્ધિ થાય છે. તથા અધિક સરસ-રસીલા આહાર લેવાથી ઇન્દ્રિયોને પણ

ત્યર્થઃ, સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, વીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહવાન્, યાત્રામાત્રયા=યાત્રા-
સંયમયાત્રા તદર્થં યા માત્રા=જિનપ્રવચનોક્તમાહારાદિપ્રમાણં તયા, શરીરં યાપ-
યેત્=નિર્વહેત્-ગમયેદિત્યર્થઃ ।

પ્રમાણાધિકેનાહારેણ રાજપિણ્ડાદિના વા ઇન્દ્રિયનિગ્રહો ન ભવતિ, તસ્માદ્
ધર્મોપાર્જનસહાયભૂતસ્ય શરીરસ્ય ધારણાર્થં પ્રમાણોપેતમાહારમઙ્ગીકુર્યાત્ । एवं
કૃતે સતિ પ્રમાદો ન ભવતીતિ ભાવઃ । ઉક્તञ्च—

“ આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્ ” ॥૧॥ઈતિ॥મ્૦૪॥

ઈન્દ્રિયોંકો ભી ઉત્તેજના મિલતી હૈ, હસસે ચતુર્થ વ્રતકી રક્ષામેં ભી વાધા
ઉપસ્થિત હોતી હૈ । હસી વાતકા વિચારકર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જાયા-
માયા’ યાત્રામાત્રયા, ઇતિ, અર્થાત્-સંયમયાત્રાકે નિર્વાહયોગ્ય આહાર-
રાદિકકા ઉચિત પ્રમાણમેં લેના વતલાતે હૈ । મુનિ કી સદા યહી ભાવના
રહની चाहिये कि-मैं जैसे भी बने वैसे निर्दोष चारित्रकी आराधना
करता हुआ कर्मोंको नष्ट करूँ । इस तरहके उत्साहसे संपन्न वह मुनि
अपनी संयमरूपी यात्राकी निर्विघ्न परिसमाप्तिके लिये जिनप्रवचनमें
प्रतिपादित प्रमाणके अनुरूप आहारादि ग्रहण करे । इससे ही अपने
शरीरका निर्वाह करे । प्रमाणसे अधिक आहारके लेनेसे अथवा अक-
ल्पनीय राजपिण्डादिकसे इन्द्रियोंका निग्रह नहीं होता है । इसलिये
धर्मके उपार्जनमें सहायक शरीरकी रक्षाके लिये शास्त्रमें प्रतिपादित
मात्रानुसार आहार लेना चाहिये । कहा भी है—

ઉત્તેજના મળે છે. તેથી ચતુર્થ વ્રતની રક્ષામાં પણ વાધા ઉપસ્થિત થાય છે.
આ વાતને વિચાર કરી સૂત્રકાર કહે છે—“ જાયામાયા ” યાત્રામાત્રયા, ઇતિ.
અર્થાત્-સંયમયાત્રાના નિર્વાહયોગ્ય આહારાદિકનુ ઉચિત પ્રમાણમાં લેવું બતાવેલ છે
સદા મુનિની એ ભાવના રહેલી બોધ એ કે હું બ્યાંસુધી બને ત્યાં સુધી નિર્દોષ
ચારિત્રની આરાધના કરીને કર્મોનો નાશ કરું, આવા પ્રકારના ઉત્સાહથી સંપન્ન તે મુનિ
પોતાની સંયમરૂપી યાત્રાની નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિ માટે જનપ્રવચનમાં પ્રતિપા-
દિત પ્રમાણને અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે, તેનાથી જ પોતાના શરીરને નિર્વાહ
કરે. પ્રમાણથી અધિક આહાર લેવાથી અને અકલ્પનીય રાજપિંડાદિકથી ઇન્દ્રિ-
યોનો નિગ્રહ બનતો નથી માટે ધર્મના ઉપાર્જનમાં સહાયક શરીરની રક્ષા માટે
શાસ્ત્રમાં પ્રતિપાદિત માત્રાનુસાર આહાર લેવો બોધ એ, કહ્યું પણ છે—

આત્મગુપ્તઃ કથં સ્યાદિતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-વિરાગં રૂવેસુ ગચ્છિજ્ઞા મહયા ચુહુર્ણિં વા ॥સૂ૦ ૫॥

છાયા-વિરાગં રૂપેષુ ગચ્છેત્ મહત્સુ ક્ષુલ્લકેષુ વા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“આહારાર્થ કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થ, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્ ॥૧॥”

આહારકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ કરે । આહારકા ગ્રહણ પ્રાણોંકી રક્ષા કે નિમિત્ત હૈ । પ્રાણોંકી રક્ષા તત્ત્વોંકી જિજ્ઞાસાકે લિયે હૈ, ઓર તત્ત્વ-જ્ઞાન અપનેકો (જીવકો) સાંસારિક દુઃસ્વોંસે છુડાનેકે લિયે હોતા હૈ ॥

ઇસલિયે સાધુકો આહારકી પ્રાપ્તિકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ (એષણા-સમિતિયુક્ત પ્રવૃત્તિ) કરના ચાહિયે નિન્દ્ય કર્મ નહીં । પ્રાણોંકી રક્ષાકે લિયે હી આહાર ગ્રહણ કરના ચાહિયે, વિષયાદિકોંકી યા પ્રમાદકી પુષ્ટિ કે લિયે નહીં । તત્ત્વોંકી વિચારણા કરનેકે લિયે હી પ્રાણોંકી રક્ષા કરની ચાહિયે, દૂસરે જીવોંકી હિંસાદિકે લિયે નહીં । તત્ત્વજ્ઞાનકા વિચાર બી સાંસારિક દુઃસ્વોંસે છૂટનેકે લિયે કરના ચાહિયે, માન માયા આદિ કષાયકી પુષ્ટિકે લિયે નહીં । ઇસલિયે સંયમયાત્રાકા નિર્વાહકે લિયે માત્રાનુસાર આહાર લેના ચાહિયે જિસસે પ્રમાદ નહીં હો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

મુનિ-આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય ઓર મનકા નિગ્રહ કરનેવાલા કૈસે બને ? એસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસાકા સમાધાન કરતે હૈ-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ ।

“આહારાર્થ કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થ, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્” ॥૧॥

આહાર માટે અનિન્દ્ય કર્મ કરે. આહારનું ગ્રહણ પ્રાણોની રક્ષા નિમિત્ત છે. પ્રાણોની રક્ષા તત્ત્વોની જિજ્ઞાસા માટે છે, અને તત્ત્વજ્ઞાન પોતાને (જીવને) સાંસારિક દુઃખોથી છોડાવવા માટે થાય છે.

માટે સાધુએ આહારની પ્રાપ્તિ માટે અનિન્દ્ય કર્મ (એષણાસમિતિયુક્ત પ્રવૃત્તિ) કરવું જોઈએ, નિન્દ્ય કર્મ નહિ. પ્રાણોની રક્ષા માટે જ આહાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ, વિષયાદિકોની અને પ્રમાદની પુષ્ટિ માટે નહિ. તત્ત્વોની વિચારણા કરવા માટે જ પ્રાણોની રક્ષા કરવી જોઈએ - બીજા જીવોની હિંસાદિક માટે નહિ. તત્ત્વજ્ઞાનનો વિચાર પણ સાંસારિક દુઃખોથી છૂટવા માટે કરવો જોઈએ - માન માયા આદિ કષાયની પુષ્ટિ માટે નહિ માટે સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે માત્રા-નુસાર આહાર લેવો જોઈએ જેથી પ્રમાદ ન થાય. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

મુનિ, આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય અને મનનો નિગ્રહ કરનાર કેવી રીતે બને ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરે છે-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—રૂપેષુ=ચક્ષુર્વિપયીભૂતેષુ મનોજ્ઞેષુ રૂપેષુ વિરાગં ગચ્છેત્, રૂપં હિ શબ્દાદ્યપેક્ષયાઽતીવાક્ષિપતિ ચિત્તં, તસ્માદિહ રૂપગ્રહણમ્ । રૂપેષુ વૈરાગ્યસદ્ભાવે સતિ શેષવિપયેષ્વપિ તસ્ય સુતરાં સંભવાદિતિ ભાવઃ । મહત્સુ=દિવ્યભાવેન યાન્યવસ્થિતાનિ રૂપાણિ તેષુ, સૂત્રે આર્પણાદેકવચનમ્, ક્ષુલ્લકેષુ=ક્ષુદ્રેષુ રૂપેષુ યથા તિરશ્ચાં, મનુષ્યાણાં તુ મધ્યમાનિ રૂપાણિ, તેષ્વપિ વિરાગં ગચ્છેદિતિ સમ્બન્ધઃ । આદ્યન્તરૂપગ્રહણેન મધ્યમાનામપિ ગ્રહણમ્ । અત્ર સપ્તમ્યર્થે તૃતીયા પ્રાકૃતત્વાત્ । યદ્વા-એકેકં રૂપં ત્રિવિધં-દિવ્યમધ્યમક્ષુદ્રભેદાત્ । કુબ્જાદીનાં ક્ષુદ્રાણિ, અન્યેષાં મધ્યમાનિ, કેષાંચિત્ પૂર્વભવસુકૃતિનાં દિવ્યાનિ રૂપાણિ ભવન્તિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુકા કર્તવ્ય છે કે જો વહ ચક્ષુરિન્દ્રિયકે વિષયભૂત જબ જબ સુંદર રૂપ હોં તવ-તવ ઉનમેં અસારતા કી ભાવના આ કર ઉન સે વિરક્ત હોવે । સૂત્રમેં ‘સ્વેસુ-રૂપેષુ’ જો યહ પદ દિયા હૈ ઉસસે સૂત્રકાર હસ વાતકો વતલાતે હૈં કિ રૂપ હી શબ્દાદિક વિષયોંકી અપેક્ષા ચિત્તકો અપની ઓર અધિક આકૃષ્ટ કિયા કરતે હૈં । મુનિકો જબ રૂપમેં વૈરાગ્યકી જાગૃતિ હો જાવેગી તવ અન્ય રસાદિક વિષયોંમેં તો સ્વતઃ હી ઉસકે ચિત્તમેં વૈરાગ્ય જાગૃત હો જાવેગા । હસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ જો વહુત હી જ્યાદા સુંદર સ્વરૂપવાન્-દિવ્ય રૂપવાલા હૈ, જૈસે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓંમેં મધ્યમ રૂપ મનુષ્યોંમેં ઓર સામાન્ય રૂપ તિર્યશ્ચોંમેં હોતે હૈં-ઉનમેં કમી બી ઇષ્ટ-અનિષ્ટકી કલ્પના સે અપને ચિત્તકો વાસિત ન કરે, સદા ઉનમેં વિરક્ત બુદ્ધિ હી રહે । દિવ્ય, મધ્યમ ઓર ક્ષુદ્રકે ભેદસે રૂપ ત્રીન પ્રકાર કે હૈં । કુબ્જ આદિમેં ક્ષુદ્રરૂપ, હનસે અન્યસે મધ્યમ રૂપ ઓર કિન્હી પુણ્યાત્માઓંમેં દિવ્યરૂપ હોતે હૈં ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે ચક્ષુરિન્દ્રિયના વિષયભૂત ન્યા ન્યાં સુંદર રૂપ હોય ત્યાં ત્યાં તેમાં અસારતાની લાવના લાવીને તેનાથી વિરક્ત બને. સૂત્રમાં ‘સ્વેસુ-રૂપેષુ’ જે આ પદ આપેલ છે તેનાથી સૂત્રકાર જો વાતને સમજાવે છે કે રૂપ જ શબ્દાદિક વિષયોની અપેક્ષા ચિત્તને પોતાની તરફ અધિક આકૃષ્ટ કર્યા કરે છે, મુનિને ન્યારે રૂપમાં વૈરાગ્યની જાગૃતિ થઈ જશે ત્યારે અન્ય રસાદિક વિષયોમાં તો સ્વતઃ જ તેના ચિત્તમાં વૈરાગ્ય જાગૃત થઈ જશે. માટે સૂત્રકાર કહે છે કે જે ઘણા જ સુંદર સ્વરૂપવાન દિવ્ય સ્વરૂપવાળા છે-જેવી રીતે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓમાં, મધ્યમરૂપ મનુષ્યોમાં, અને સામાન્ય રૂપ તિર્યચોમાં હોય છે તેમાં કોઈ વખત પણ ઇષ્ટ-અનિષ્ટની કલ્પનાથી પોતાના ચિત્તને વાસિત ન કરે, સદા તેમાં વિરક્ત બુદ્ધિ જ રાખે દિવ્ય મધ્યમ અને ક્ષુદ્રના ભેદથી રૂપ ત્રણ પ્રકારના છે. કુબ્જ આદિમાં ક્ષુદ્રરૂપ, તેનાથી અન્ય મધ્યમરૂપ અને કોઈ પુણ્યાત્માઓમાં દિવ્ય રૂપ હોય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

‘કિમાલમ્બૈતત્ કર્તવ્યમિત્યાહ-‘ આગઈ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આગઈ ગઈ પરિણાય દોહિ વિ અંતેહિં અદિસ્સ-
માણે । સે ન છિજ્જઈ ન મિજ્જઈ ન ડજ્જઈ ન હમ્મઈ કંચણં
સઠ્ઠલોણ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—આગતિ ગતિં પરિજ્ઞાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદૃશ્યમાનઃ । સ ન છિદ્યતે
ન મિદ્યતે ન દહ્યતે ન હન્યતે કેનચિત્ સર્વલોકે ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘આગતિં ગતિ’—મિતિ, આગતિઃ=આગમનં, ગતિર્ગમનં, તત્ર તિરશ્ચાં
મનુષ્યાણાં આગતિશ્ચતુર્વિધા ભવતિ, નરકાદિચતુર્વિધગતિતસ્તેષામાગમનસદ્ભાવાત્ ।

કયા વિચાર કર રૂપાદિકોં મેં વિરક્ત બુદ્ધિવાલા બને ? સો કહતે
હે—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

દૂસરી ગતિસે આનેકા નામ આગતિ ઓર દૂસરી ગતિમેં જાનેકા
નામ ગતિ હૈ । મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચોંકી આગતિ ચાર પ્રકારસે હોતી હૈ,
અર્થાત્ ચારોં ગતિયોંસે આકર જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચ ગતિમેં જન્મ
લેતે હૈં । દેવ ઓર નારકિયોંકી આગતિ દો પ્રકારસે હોતી હૈ, અર્થાત્
તિર્યશ્ચ ઓર મનુષ્ય ગતિસે આ કર હી જીવ દેવગતિ ઓર નરકગતિમેં
ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ગતિ મીં ઉન સવકીં ઇસી તરહસે હોતી હૈ । મનુષ્ય
અં તિર્યશ્ચ ગતિકે જીવ ચારોં ગતિયોં મેં ઉત્પન્ન હો સકતે હૈં પરન્તુ દેવ-
ગતિ અં નરક ગતિકે જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચ ગતિકે સિવાય અન્ય
ગતિયોંમેં જન્મ નહીં લેતે । દેવ ચ્યવકર દૂસરે ભવમેં દેવગતિમેં ઓર

શું વિચાર કરી રૂપાદિકોમાં વિરક્તબુદ્ધિવાળા બને ? તે કહે છે—‘ આગઈ ’
ઇત્યાદિ.

બીજી ગતિથી આવવાનું નામ આગતિ અને બીજી ગતિમાં જવાનું નામ
ગતિ છે. મનુષ્ય અને તિર્યચોની આગતિ ચાર પ્રકારની હોય છે. અર્થાત્ ચારે
ગતિયોથી આવીને જીવ મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિમાં જન્મ લે છે. દેવ અને
નારકીઓની આગતિ બે પ્રકારની હોય છે, અર્થાત્ તિર્યચ અને મનુષ્ય ગતિથી
આવીને જીવ દેવગતિ અને નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ગતિ પણ તે સઘળા-
ઓની આ પ્રકારે જ હોય છે. મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિનો જીવ ચારે ગતિઓમાં
ઉત્પન્ન થઈ શકે છે પરંતુ દેવગતિ અને નરકગતિના જીવ મનુષ્ય અને તિર્યચ
ગતિના સિવાય અન્ય ગતિઓમાં જન્મ લેતા નથી. દેવ ચવીને બીજા ભવમાં

દેવાનાં નારકિણાં ચાગતિર્દ્વિવિધૈવ, તેપાં તિર્યગ્મનુષ્યગતિભ્યામેવાઽઽગમનાત્ । ગતિરપ્યેવં ભવતિ, કેવલં મનુષ્યાણાં ગતિઃ પશ્ચવિધા પ્રોક્તા, તેપાં મોક્ષગતિસંભવાત્ । તામાગતિં ગતિં ચ, પરિજાય=સંસારચક્રે ઘટીયન્ત્રવત્ પરિભ્રમણરૂપામાગતિં ગતિં ચ શુદ્ધ્વા મનુષ્યાણાં મોક્ષગતિસંભવં ચાવગત્ય સ આગતિગતિસ્વરૂપાભિજ્ઞઃ, યદ્વા-સંસારદુઃખમીતો મોક્ષગતિસુખગવેષી, રૂપાદિષુ વિષયેષુ અન્તાભ્યામ્=સ્વસત્તાયાં મુક્તેરન્તકારિત્વાદન્તૌ=રાગદ્વેષૌ તાભ્યામ્ દ્વાભ્યામપિ=રાગદ્વેષાભ્યામ્ અદૃશ્યમાનઃ=અવર્તમાનઃ, રાગદ્વેષરહિત इत्यर्थઃ, ન હિંચતે કેનચિત્=સ્વહૃદ્ગાદિના, ન મિથતે કણ્ટકમ્ચીશૂલાદિના, ન દહતે દહનાદિના, ન હન્યતે કશાદિના નરકગત્યાનુપૂ-

નરકગતિમેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા । ઇસી પ્રકાર નારકી જીવ મી નરકસે નિકલ કર દૂસરે ભવમેં દેવગતિ યા નરકગતિમેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા । મનુષ્ય એવં તિર્યચ્ચ તો મર કર દૂસરે ભવમેં મનુષ્ય, તિર્યચ્ચ, દેવ ઓર નરકગતિમેં જન્મ લે સકતા હૈ । મનુષ્યોંકી ગતિ મુક્તિપ્રાપ્તિકી અપેક્ષાસે પાંચ પ્રકારકી મી કહી ગઈ હૈ । ઇસ પ્રકાર સંસારચક્રમેં ઘટી યન્ત્રકે સમાન પરિભ્રમણરૂપ આગતિ ઓર ગતિ, એવં મનુષ્યોંમેં મોક્ષગતિકી સંભવતાકો જાનકર ડનકે સ્વરૂપકા જ્ઞાતા, અથવા સંસારકે દુઃખોં સે મયમીત હો કર મોક્ષગતિકે સુખકા ગવેષી વહ સાધુ રૂપાદિ વિષયો મેં રાગ ઓર દ્વેષસે રહિત હો કર સર્વલોકમેં ન કિસીકે દ્વારા તલવાર આદિસે હાથ પૈર આદિ મેં કમી હેદા જાતા હૈ, ન કણ્ટકસૂચી શૂલાદિસે મેદા જાતા હૈ, ન અગ્નિ આદિસે જલાયા જાતા હૈ ઓર ન કોડે આદિસે મારા જાતા હૈ ઓર ન ડસકે નરકગત્યાનુપૂર્વોં આદિકા ડદય

દેવગતિમાં અને નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થતા નથી. તે પ્રકારે નારકી જીવ પણ નરકથી નીકળી જીવન ભવમાં દેવ ગતિ અગર નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતાં નથી. મનુષ્ય અને તિર્યચ્ચ તો મરીને જીવન ભવમાં મનુષ્ય તિર્યચ્ચ દેવ અને નરકગતિમાં જન્મ લઈ શકે છે. મનુષ્યોની ગતિ મુક્તિપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી પાંચ પ્રકારની પણ કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે સંસારચક્રમાં ઘટી-યંત્રની સમાન પરિભ્રમણરૂપ આગતિ અને ગતિ તેમજ મનુષ્યોમાં મોક્ષગતિની સંભવતાને જાણીને તેના સ્વરૂપના જ્ઞાતા અને સંસારના દુઃખોથી ભયભીત બનીને મોક્ષગતિના મુખના ગવેષી તે સાધુ, રૂપાદિ વિષયોમાં રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને સર્વલોકમાં કોઈનાથી પણ તલવાર આદિથી હાથ પગ આદિમાં કદિપણ હેદવામાં આવતા નથી. તેમજ કણ્ટક સૂચી શૂલાદિથી લેદવામાં આવતા નથી. તેમજ નથી અગ્નિથી બાળવામાં આવતા, તેમજ નથી કોરડા આદિથી મારવામાં

વ્યાદિના વા । અયં ભાવઃ-તિર્યગ્મનુષ્યાદીનામાગતિગતિપરિજ્ઞાનેન રાગદ્વેષ-નિવૃત્તિઃ, તયોરભાવાચ્ચ છેદનાદિના સંસારદુઃખાનિ ન ભવન્તીતિ ॥ સૂ. ૬ ॥

હોતા હૈ । ‘અન્ત’ શબ્દકા અર્થ રાગ દ્વેષ હૈ, ક્યોં કિ યે દોનોં “અન્ત-કારિત્વાત્” અપની સત્તામેં જીવકી મુક્તિકા અન્ત-નિરોધ-કરનેવાલે હોતે હૈં, ઇન દોનોંકે સદ્ભાવમેં જીવકો સચ્ચે સ્વરૂપ-મોક્ષકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ । ઇસકા ભાવાર્થ યહ હૈ—તિર્યગ્ અથવા મનુષ્યાદિકોંકી ગતિ ઔર આગતિકે પરિજ્ઞાનસે સાધુકો અચ્છે ંવં બુરે રૂપાદિકોંમેં રાગ દ્વેષ ન હો કર પ્રત્યુત ઁનમેં મધ્યસ્થતા હી ઁસે રહતી હૈ । રાગદ્વેષકી નિવૃત્તિ સે, છેદનભેદનાદિદ્વારા સાંસારિક દુઃખોંકા જો ઁસે અનુભવ હોતા થા વહ ફિર નહીં હોતા । ક્યોં કિ દુઃખોંકા અનુભવ કરાનેવાલી જો રાગ-પરિણતિ થી વહ ઁસકી દૂર હો ચુકી હૈ । દૂસરા ઇસકા ભાવ યહ ભી હો સકતા હૈ કિ જવ મુનિકી આત્માસે રાગ દ્વેષકા અભાવ હો જાતા હૈ તો ઁસકી આત્મા અત્યન્ત નિર્મલ ંવં વિશિષ્ટ પ્રભાવશાલી હો જાતી હૈ । ઇસ અવસ્થામેં કોઈ ભી ંસી શક્તિ નહીં હૈ જો ઁસે છેદન ભેદન ંવં તાડનાદિજન્ય દુઃખ પહુંચા સકે । ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના વા’ ઇસ ટીકાકા ભાવ યહ હૈ કિ-સર્વસંયમીકે લિયે નરકગતિ ંવં તિર્યગ્ ગતિકા વન્ધ નહીં હોતા હૈ ઇસ લિયે ઁસકી આનુપૂર્વિકા ભી ઁસે ઁદય નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ. ૬ ॥

આવતાં. અને નહિ તેને નરકગત્યાનુપૂર્વી આદિનો ઉદય થાય છે. ‘અન્ત’ શબ્દનો અર્થ રાગ દ્વેષ છે કારણ કે એ બંને “અન્તકારિત્વાત્” પોતાની સત્તામાં જીવની મુક્તિનો અંત કરવાવાળા હોય છે. એ બંનેના સદ્ભાવમાં જીવને સચ્ચા સ્વરૂપ-મોક્ષ-ની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે તિર્યગ્ અથવા મનુષ્યાદિકોની ગતિ અને આગતિના પરિજ્ઞાનથી સાધુને સારા તેમજ ખરાબ રૂપાદિકોમાં રાગ દ્વેષ ન થઈને પ્રત્યુત તેમાં મધ્યસ્થતા જ તેને રહે છે. રાગદ્વેષની નિવૃત્તિથી, છેદન-ભેદનાદિ દ્વારા સાંસારિક દુઃખોનો જે તેને અનુભવ થતો હતો તે પછી થતો નથી. કારણ કે દુઃખોનો અનુભવ કરાવનારી જે રાગપરિણતિ હતી તે તેની દૂર થઈ ચૂકેલ છે. ખીજું તેનો ભાવ એ પણ થઈ શકે છે કે જ્યારે મુનિના આત્માથી રાગ દ્વેષનો અભાવ થઈ જાય છે તો તેની આત્મા અત્યન્ત નિર્મળ અને વિશિષ્ટ પ્રભાવશાળી બની જાય છે. આ અવસ્થામાં એવી કેમ પણ શક્તિ નથી કે જે તેને છેદન-ભેદન તેમજ માર મારવો આદિ દુઃખ પહોંચાડી શકે. ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના વા’ આ ટીકાનો ભાવ એ છે કે સકલસંયમી માટે નરકગતિ અને તિર્યગ્ગતિનો બંધ થતો નથી તેથી તેને તેની આનુપૂર્વીનો પણ ઉદય થતો નથી ॥ સૂ. ૬ ॥

મિથ્યાદૃષ્ટીનામાગતિગતિજ્ઞાનાભાવ ઇત્યાદિ-‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-અવરેણ પુઠ્વે ન સરંતિ એગે કિમસ્સ તીયં ? કિં વાઽઽગમ્મિસ્સં ? ભાસંતિ એગે ઇહ માણવા ડ જમસ્સ તીયં તં આગમિસ્સં ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા-અવરેણ પૂર્વ ન સ્મરંતિ એકે કિમસ્ય અતીતં ? કિં વા આગમિણ્યત્ ? ભાપન્તે એકે ઇહ માનવાસ્તુ યદસ્ય અતીતં તદ્ આગમિણ્યત્ ॥ સૂ. ૭ ॥

એકે=અન્યે મિથ્યાદૃષ્ટયઃ, અવરેણ=પશ્ચાત્કાલભાવિના સદ્, પૂર્વ=પૂર્વકાલિકં ન સ્મરંતિ, યથા-અસ્ય જીવસ્ય કિમ્=અનેન જીવેન કીદશં દુઃખં સુખં વાઽનુભૂત-મિતિ ન સ્મરંતિ । તથા-કિં વા આગમિણ્યત્=ભવિણ્યત્કાલિકે નરકાદિભવે કીદશં દુઃખં સુખં વાઽસ્ય જીવસ્ય ભાવીતિ ન સ્મરંતિ । યદિ પુનરસ્ય જીવસ્યાતીતાના-ગતગતિચિન્તનં કુર્યાત્તર્હિ વૈરાગ્યં સુતરામુદ્ભવેત્ । ઉક્તશ્ચ—

મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકો જીવોંકી ગતિ ઔર આગતિકા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ, ઇસ વાતકો કહતે હૈ-‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોંકે ભવિણ્યત્ કાલમેં હોનેવાલી અવસ્થાઓંકે સાથ પૂર્વકાલિક અવસ્થાઓંકી તથા ભવિણ્યત્કાલમેં હોનેવાલી સુખદુઃખાદિકોંકે સાથ પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોંકી સ્મૃતિ નહીં હોતી હૈ । જૈસે ઇસ જીવકા સમય પૂર્વ મેં કૈસેર સુખદુઃખાદિકોંસે ધીતા હૈ ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોંમેં ઇસ જીવને કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગે હૈ ? એવં આગામી કાલમેં નરકાદિક પર્યાયોંમેં યહ જીવ કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગેગા ? ઇસકા ઉન્હેં સ્મરણ તક નહીં હોતા । યદિ ઇસ જીવકી અતીત એવં અનાગત કાલ સમ્બન્ધી ગતિકા વાર-વાર વિચાર કિયા જાય તો જીવકો વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન હો જાવે । કહાં ભી હૈ—

મિથ્યાદૃષ્ટિઓને છવોની ગતિ અને આગતિનું જ્ઞાન થતું નથી. એ વાતને કહે છે-‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ

મિથ્યાદૃષ્ટિ છવોના ભવિણ્યકાળમાં બનવાવાળી અવસ્થાઓની સાથે પૂર્વ-કાલિક અવસ્થાઓની તથા ભવિણ્યકાળમાં થવાવાળા સુખદુઃખાદિકોની સાથે પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોની સ્મૃતિ થતી નથી. આ છવનો સમય પૂર્વમાં કેવા કેવા પ્રકારે સુખદુઃખોમાં ધીત્યો છે ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોમાં આ છવે કયા કયા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગ્યા છે ? તેમજ આગામી કાળમાં નરકાદિ પર્યાયોમાં આ છવ કેવા કેવા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવશે ? તેનું તેને સ્મરણ સુદ્ધા હોતું નથી. કદાચ આ છવની અતીત તેમજ અનાગત કાળ સંબન્ધી ગતિનો વાર વાર વિચાર કરવામાં આવે તો છવને વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન થઈ જાય, કહ્યું છે—

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી ?, કહં ઇઓ તહ પુળોઽવિ ગંતવ્વં ।

જો એત્તિયંપિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ન નિવ્વિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

ઇહ=અસ્મિન્ મનુષ્યલોકે, એકે પુનર્મહામિથ્યાદૃષ્ટ્યો માનવાઃ=મનુષ્યાઃ ભાષન્તે=કર્મવિપાકજ્ઞાનાભાવાદેવં વદન્તિ-અસ્ય જીવસ્ય યદ્ અતીતં=બ્રાહ્મણ-ક્ષત્રિય-વૈશ્ય-શૂદ્ર-ગવા-ઽશ્વ-ભવાદિ, તત્સંસ્કારવશાત્તદેવ પુનરન્યસ્મિન્ ભવેઽપિ આગમિષ્યત્=ભાવીતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યે તુ સંસારસિન્ધુસુત્તીર્ણાસ્તે પૂર્વાપરગતિવેદિનઃ સર્વજ્ઞા નૈવં વદન્તિ । તસ્માત્ કર્મક્ષણપાર્થં સંયમઃ સેવનીય ઇત્યાહ-‘નાર્દય ’૦ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નાર્દયમટ્ઠં ન ય આગમિસ્સં, અટ્ઠં નિયચ્છંતિ તહા-ગયા ઉ । વિદૂયકપ્પે ણ્યાણુપસ્સી, નિજ્ઞોસઇત્તા સ્વણ મહેસી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી ? કહં ઇઓ તહ પુળોઽવિ ગંતવ્વં ? ।

જો એત્તિયં પિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ણ નિવ્વિણ્ણો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

અર્થાત્ કિસ કારણસે મેરી ઇસ પર્યાય મેં ઉત્પત્તિ હુઈ હૈ ? કયા મુઝે યહાંસે ફિર અબ દૂસરી પર્યાયમેં જાના પડેગા ? । જો ઇતના મી વિચાર કરે તો કૌનસા એસા જીવ હૈ જિસે વૈરાગ્ય જાગ્રત ન હો જાય ॥

ઇસ સંસારમેં એસે મી મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ જો કર્મોંકે વિપાક કે જ્ઞાનસે શૂન્ય હો કર એસા કહતે હૈ કિ-ઇસ જીવકા જો ભવ, ચાહે વહ બ્રાહ્મણ સમ્બન્ધી હો, ચાહે ક્ષત્રિય સમ્બન્ધી હો, ચાહે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગો ઔર અશ્વ-ગોડા-સમ્બન્ધી હો; વ્યતીત હો ચુકા હૈ, વહી ભવ ઊનર ભવોંકે સંસ્કારકે વશસે આગામી કાલમેં ફિરસે ઇસે પ્રાપ્ત હોગા ॥૭॥

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી, કહં ઇઓ તહ પુળોઽવિ ગંતવ્વં ? ।

જો એત્તિયંપિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ણ નિવ્વિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્ કયા કારણથી મારી આ પર્યાયમાં ઉત્પત્તિ થઈ છે ? શું મને અહીંયાથી ફરીથી હવે બીજી પર્યાયમાં જવું પડશે ? . જો એટલો પણ વિચાર કરે તો કયો એવો જીવ છે જેને વૈરાગ્ય જાગ્રત ન થાય ?

આ સંસારમાં એવા પણ મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે જે કર્મના વિપાકના જ્ઞાનથી શૂન્ય બનીને એવું કહે છે કે-આ જીવનો જે ભવ મલે તે બ્રાહ્મણ સંબંધી હોય, ભલે ક્ષત્રિય સંબંધી હોય, ભલે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગાય અને અશ્વ-ગોડા સંબંધી હોય-વ્યતીત થઈ ગયેલ છે તે જ ભવ તે તે ભવોના સંસ્કારના વશથી આગામી કાળમાં ફરીથી તેને પ્રાપ્ત થશે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—નાતીતમર્થ ન ચ આગમિષ્યન્તમ્ અર્થ નિયચ્છન્તિ તથાગતાસ્તુ ।
વિધૃતકલ્પ એતદનુદર્શી નિર્જુષ્ય ક્ષપયેત્ મહર્ષિઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—તથાગતાઃ=યથા તીર્થઙ્કરેણ ભાપિતં તથૈવ ગતં-જ્ઞાનં યેપાં તે તથાગતા-
સ્તત્ત્વજ્ઞાનિનસ્તુ—અતીતમર્થ ન નિયચ્છન્તિ=ચેતસિ નાનયન્તિ, આગમિષ્યન્તમર્થ-
મપિ ન નિયચ્છન્તિ । કિં તુ કર્મપરિણામવૈચિત્ર્યાત્ કર્માનુસારિ સુખં દુઃખં વા
પ્રાણિનાં ભવતીત્યેવં નિર્ણયન્તિ । તસ્માત્—એતનુદર્શી=વર્તમાનાર્થાનુદર્શી વર્તમાન-
ભવસંપ્રાપ્તશ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપર इत्यर्थः, અતીતાનાગતસ્વર્ગાદિસુખાનભિચિન્તક
इति यावत्, તથાચોક્તમ્—

જો સંસારસાગરસે પાર હો ચુકે હૈં વે જીવોંકી પૂર્વાપર-ગતિકે
જ્ઞાતા સર્વજ્ઞ ભગવાન્ એસા નહીં કહતે હૈં, इसलिये कर्मोंको नाश करने
के लिये संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस बातको कहते हैं—
' नार्दयमद्वं ' इत्यादि ।

જૈસા તીર્થઙ્કર પ્રભુને કહા હૈં ડસીકે અનુસાર જિનકા જ્ઞાન હૈં વે
તથાગત-તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-કો ચિત્તમેં નહીં લાતે હૈં ઓર
ન આગામી અર્થ કો હી ચિત્તમેં લાતે હૈં, કિંતુ ' પ્રાણિયોંકે સુખ અથવા
દુઃખ કર્મોંકે અનુસાર હોતે હૈં ' એસા હી વે નિર્ણય કરતે હૈં । इसलिये
वर्तमान भवमें प्राप्त श्रुतचारित्ररूप धर्मकी आराधनामें तत्पर-अर्थात्
अतीत और अनागत काल सम्बन्धी स्वर्ग आदिके सुखोंका चिंतन नहीं
करनेवाला तथा विशुद्ध आचारवाला, अथवा अतीत एवं अनागतके संक-
ल्पको दूर करनेवाला महामुनि निरतिचार संयमका आराधना करके
पूर्वोपाजित कर्मों का नाश करे । ज्ञानी का स्वरूप इस प्रकार कहा है—

જે સંસારસાગરથી પાર થઈ ચુકેલ છે તે જીવોની પૂર્વાપર ગતિના જ્ઞાતા
સર્વજ્ઞ ભગવાન એવું કહેતા નથી. માટે કર્મોના નાશ કરવા માટે સંયમની
આરાધના કરવી જોઈએ. એ વાતને કહે છે—' નર્દયમદ્વં ' ઇત્યાદિ.

જેવું તીર્થઙ્કર પ્રભુએ કહ્યું છે તેના અનુસાર જેનું જ્ઞાન છે તે તથાગત-
તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-ને ચિત્તમાં લાવતા નથી. ન આગામી અર્થને
ચિત્તમાં લાવે છે. પણ ' પ્રાણિયોના સુખ અથવા દુઃખ કર્મોના અનુસાર બને
છે ' એવો જ તે નિર્ણય કરે છે. માટે વર્તમાન ભવમાં પ્રાપ્ત જે શ્રુત ચારિ-
ત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં તત્પર અર્થાત્ અતીત અને અનાગત કાળ સંબંધી
સ્વર્ગ આદિના સુખોનું ચિંતન નહિ કરવાવાળા, તથા વિશુદ્ધ આચારવાળા, અથવા
અતીત અને અનાગતના સંકલ્પને દૂર કરવાવાળા મહામુનિ નિરતિચાર સંયમની
આરાધના કરીને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના નાશ કરે. જ્ઞાનીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે કહ્યું છે—

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ” ॥ ૧ ॥

વિધૂતકલ્પઃ=વિધૂતો=વિશુદ્ધઃ કલ્પઃ=આચારો યસ્ય સઃ, યદ્વા-વિધૂતઃ=અપ-
નીતઃ કલ્પઃ=અતીતાનાગતસંકલ્પો યેન સઃ, મહર્ષિઃ=મહાશુનિઃ, નિર્જુણ્ય=સંયમં
નિરતિચારં સમારાધ્ય, ક્ષપયેત્=પૂર્વોપાર્જિતકર્માણિ નાશયેત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મક્ષપણાર્થં સમુદયતસ્ય મહર્ષેર્ધર્મધ્યાનતઃ શુક્લધ્યાનતો વા યત્ ફલં ભવતિ
તદાહ—‘કા અરર્હૈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

અર્થાત્—‘ગર્હૈ વાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાહિ ॥ ’

જો વીતી હુઈ વાતોં પર ધ્યાન નહીં દેતા, ભવિષ્યકી વાતોંકી ચાહના
નહીં કરતા, કિન્તુ વર્તમાન અવસ્થા પર હી સંમલ કર રહતા હૈ, વહી
જ્ઞાની કહલાતા હૈ ॥

હસ શ્લોકસે ટીકાકાર હસ વાતકી પુષ્ટિ કર રહે હૈં કિ તત્ત્વજ્ઞાની
ભૂત ભવિષ્યત્ કાલકે સાંસારિક સુખોંકી સ્મૃતિ એવં ઇચ્છા ન કર
વર્તમાન કાલમેં શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેરૂપ અપની અવ-
સ્થામેં હી તત્પર રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મોંકો નાશ કરનેમેં કટિબદ્ધ મહર્ષિ કો ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાન
સે જો ફલ હોતા હૈ ઉસકો વતલાતે હૈં—‘કા અરર્હૈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

એટલે—‘ગર્હૈ વાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાહિ ॥

જે વીતી ગએલી વાતો ઉપર ધ્યાન નથી દેતા, ભવિષ્યની વાતોની ચાહના
નથી કરતા, પણ વર્તમાન અવસ્થા ઉપર જ સંભાળીને રહે છે તે જ જ્ઞાની કહેવાય છે.

આ શ્લોકથી ટીકાકાર આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે તત્ત્વજ્ઞાની ભૂત ભવિષ્ય
કાળના સાંસારિક સુખોની સ્મૃતિ તેમ જ ઇચ્છા ન કરી વર્તમાનકાળમાં શ્રુતચા-
રિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવારૂપ પોતાની અવસ્થામાં જ તત્પર રહે છે. ॥સૂ૦ ૮॥

કર્મોના નાશ કરવામાં કટિબદ્ધ મહર્ષિના ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાનથી જે
ફળ થાય છે તે કહે છે—‘કા અરર્હૈ’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—કા અરઈ ? કે આણંદે ?, इत्थं पि अग्गहे चरे ।

સઠ્ઠં હાસં પરિચ્ચજ્જ, આલીનગુત્તો પરિવ્વણ ॥સૂ.૦૧॥

છાયા—કા અરતિ : ? ક આનન્દ : ? અત્રાપિ અગ્રહશ્ચરેત્ ।

સર્વં હાસ્યં પરિત્યજ્ય આલીનગુપ્ત : પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—ઈપ્સિતસ્યાપ્રાપ્ત્યા વિનાશેન વા, તથા—અનિષ્ટપ્રાપ્ત્યા વા યન્મનોદુઃખં સા અરતિઃ, અમિલપિતાર્થસ્ય પ્રાપ્તૌ સત્યાં યો હર્ષઃ સુખં વા સ આનન્દઃ, એતદ્દ્વયં ધર્મશુક્લધ્યાનલગ્નચિત્તસ્ય મહર્પેર્ન ભવતિ, તત્કારણાભાવાત્ । ઇમમેવાર્થં કથયતિ—કા અરતિઃ ક આનન્દ ઇતિ । મહર્પેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । મિથ્યાદૃષ્ટેરિવારતિરાનન્દશ્ચ મહર્પેર્ધર્મશુક્લધ્યાનાવેશાન્ન સમુદ્ભવત ઇતિ ભાવઃ । અત્રાપિ=અરતાવાનન્દે ચ, અગ્રહઃ=અવિચલિતઃ સન્ ચરેત્=ધ્યાનમાર્ગે વિહરેત્ ।

इच्छित पदार्थकी अप्राप्ति से, अथवा उसके विनाशसे या अनिष्ट पदार्थके समागमसे जो मानसिक दुःख होता है उसका नाम अरति है। इष्ट पदार्थकी प्राप्ति होने पर जो हर्ष या सुख होता है उसका नाम आनन्द है। ये दोनों धर्मध्यान या शुक्लध्यानमें लवलीन चित्तवाले महर्षिके नहीं होते हैं, क्योंकि अरति और आनन्दके कारणोंका वहां अभाव हो चुका है। महर्षिके लिये, क्या अरति? क्या आनन्द?, दोनों सम हैं। मिथ्यादृष्टिको जिस प्रकार अरति और आनन्द होते हैं उस प्रकार महर्षिके वे दोनों धर्मध्यान और शुक्लध्यानके प्रभावसे नहीं होते हैं। इसलिये अरति और आनन्दमें चञ्चलचित्त न बन कर महर्षिको अपने ध्यानके मार्गमें लवलीन रहना चाहिये।

ઇચ્છિત પદાર્થની અપ્રાપ્તિથી અથવા તેના વિનાશથી અગર અનિષ્ટ પદાર્થના સમાગમથી જે માનસિક દુઃખ થાય છે તેનું નામ અરતિ છે. ઇષ્ટ પદાર્થની પ્રાપ્તિ થવાથી જે હર્ષ અથવા સુખ થાય છે તેનું નામ આનંદ છે. એ બંને ધર્મધ્યાન અગર શુક્લ ધ્યાનના લવલીન ચિત્તવાળા મહર્ષિને થતાં નથી. કારણ કે અરતિ અને આનંદના કારણોનો ત્યા અભાવ થઇ ચુકેલ છે મહર્ષિ માટે શું અરતિ કે શું આનંદ ? બંને સરખાં છે. મિથ્યાદૃષ્ટિને જેવી રીતે અરતિ અને આનંદ થાય છે, તે પ્રકારે મહર્ષિને તે બંને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાનના પ્રભાવથી થતા નથી માટે અરતિ અને આનંદમાં ચંચળચિત્ત ન બનીને મહર્ષિએ પોતાના ધ્યાનના માર્ગમાં લવલીન રહેવું જોઇએ.

यद्वा-संयमाराधनपरायणस्य महर्षेः का अरतिः ? क आनन्दः ? । अयंभावः संयमाराधनतत्परस्य कुतश्चित् कारणात् प्रतिकूलपरीषहोपसर्गोपस्थितौ अरतिर्भवति । स हि तदानीमेवं चिन्तयति-अनेनात्मना पूर्वभवेषु नरकनिगोदादौ क्षुत्तिपासादिजनितं वधवन्धनादिजनितं च यद् घोरतरं दुःखमनन्तवारं प्राप्तं तत्पुरतः किमेभिरल्पदुःखजनकैः परीषहोपसर्गैरिति । तथा-ऋद्धि-रस-शाताद्युपस्थितौ हर्षं सुखं वा नोत्पद्यते ।

स हि तदानीमेवं विभावयति-अनेनात्मना पूर्वं देवभवेषु नरलोकदुर्लभानानाविधऋद्ध्यादिसुखमनन्तशोऽनुभूतं, तस्य समुद्रसदृशस्य दिव्यसुखस्य पुरतः

अथवा-संयमकी आराधना करनेमें दत्तावधान महर्षिको अरति और आनन्दसे कोई प्रयोजन नहीं है ।

तात्पर्य यह है-संयमकी आराधना करनेमें तत्पर महर्षिके जब किसी कारणसे प्रतिकूल परीषह और उपसर्गकी उपस्थिति होती है उस समय उसे उससे अरति नहीं होती है, किन्तु उसे उस समय यही विचार आता है कि इस आत्माने पूर्वभवमें नरकनिगोदादि गतियोंमें क्षुधा-तृषा आदि-जनित एवं वध और बन्धन आदिसे उत्पन्न हुए जो घोरतर दुःख अनन्त बार पाये हैं उनके आगे अल्पदुःखजनक ये परीषह और उपसर्ग क्या चीज हैं ? तथा ऋद्धि, रस, शाता आदिकी उपस्थिति होने पर भी उसे हर्ष या सुख नहीं होता है, क्योंकि उस समय भी वह यही विचार करता है कि इस आत्माने पूर्व-देवभवोंमें, मनुष्यलोकमें दुर्लभ ऐश्वर्य अनेक प्रकारके ऋद्धि-आदिजन्य सुखोंको अनन्त बार भोगा है तो समु-

अथवा संयमनी आराधना करवाभां दत्तावधान महर्षिने अरति अने आनन्दथी कोछ प्रयोजन न थी.

तात्पर्य એ છે કે—સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર મહર્ષિને બ્યારે કોઈ કારણથી પ્રતિકૂળ પરીષદ અને ઉપસર્ગની ઉપસ્થિતિ થાય છે તે વખત તેને તેનાથી અરતિ થતી નથી. પણ તેને તે વખત તેવો વિચાર આવે છે કે આ આત્માએ પૂર્વલવમાં નરક નિગોદાદિ ગતિયોમાં ક્ષુધા તૃષા આદિ જનિત તેમજ વધ અને બંધન આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ જે ઘોરતર દુઃખ અનન્ત વાર ભોગવેલ છે તેની અપેક્ષા અત્ય દુઃખજનક આ પરિષદ અને ઉપસર્ગ કઈ ચીજ છે ? તથા ઋદ્ધિ, રસ, શાતા આદિની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં પણ તેને હર્ષ અગર સુખ થતું નથી. કારણ કે તે સમય પણ તે એજ વિચાર કરે છે કે આ આત્માએ પૂર્વ દેવલવોમાં, મનુષ્યલોકમાં દુર્લભ એવા અનેક પ્રકારના ઋદ્ધિ આદિ જન્ય સુખોને

મૂલમ્—કા અરઈ ? કે આણંદે?, इत्थं पि अग्गहे चरे ।

સવ્વં હાસં પરિચ્ચજ્ઞ, આલીણગુત્તો પરિવ્વણ ॥સૂ૦ ૧॥

છાયા—કા અરતિ: ? ક આનન્દ: ? અત્રાપિ અગ્રહચરેત્ ।

સર્વં હાસ્યં પરિત્યજ્ય આલીનગુપ્ત: પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઈપ્સિતસ્યાપ્રાપ્ત્યા વિનાશેન વા, તથા—અનિષ્ટપ્રાપ્ત્યા વા યન્મનોદુઃખં સા અરતિઃ, અભિલપિતાર્થસ્ય પ્રાપ્તૌ સત્યાં યો હર્ષઃ સુખં વા સ આનન્દઃ, एतद्द्वयं धर्मशुक्लध्यानलग्नचित्तस्य महर्षेर्न भवति, तत्कारणाभावात् । इममेवार्थं कथयति—કા અરતિઃ ક આનન્દ ઇતિ । મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । મિથ્યાદૃષ્ટેરિવાર-તિરાનન્દશ્ચ મહર્ષેર્ધર્મશુક્લધ્યાનાવેશાન્ન સમુદ્ભવત ઇતિ ભાવઃ । અત્રાપિ=અરતાવાનન્દે ચ, અગ્રહઃ=અવિચલિતઃ સન્ ચરેત્=ધ્યાનમાર્ગે વિહરેત્ ।

इच्छित पदार्थकी अप्राप्ति से, अथवा उसके विनाशसे या अनिष्ट पदार्थके समागमसे जो मानसिक दुःख होता है उसका नाम अरति है। इष्ट पदार्थकी प्राप्ति होने पर जो हर्ष या सुख होता है उसका नाम आनन्द है। ये दोनों धर्मध्यान या शुक्लध्यानमें लवलीन चित्तवाले महर्षिके नहीं होते हैं, क्योंकि अरति और आनन्दके कारणोंका वहां अभाव हो चुका है। महर्षिके लिये, क्या अरति? क्या आनन्द?, दोनों सम हैं। मिथ्यादृष्टिको जिस प्रकार अरति और आनन्द होते हैं उस प्रकार महर्षिके वे दोनों धर्मध्यान और शुक्लध्यानके प्रभावसे नहीं होते हैं। इसलिये अरति और आनन्दमें चञ्चलचित्त न बन कर महर्षिको अपने ध्यानके मार्गमें लवलीन रहना चाहिये।

ઇચ્છિત પદાર્થની અપ્રાપ્તિથી અથવા તેના વિનાશથી અગર અનિષ્ટ પદાર્થના સમાગમથી જે માનસિક દુઃખ થાય છે તેનું નામ અરતિ છે. ઇષ્ટ પદાર્થની પ્રાપ્તિ થવાથી જે હર્ષ અથવા સુખ થાય છે તેનું નામ આનન્દ છે. એ બન્ને ધર્મધ્યાન અગર શુક્લ ધ્યાનના લવલીન ચિત્તવાળા મહર્ષિને થતાં નથી. કારણુ કે અરતિ અને આનન્દના કારણોનો ત્યાં અભાવ થઇ ચુકેલ છે મહર્ષિ માટે શું અરતિ કે શું આનન્દ ? બન્ને સરખાં છે. મિથ્યાદૃષ્ટિને જેવી રીતે અરતિ અને આનન્દ થાય છે, તે પ્રકારે મહર્ષિને તે બન્ને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાનના પ્રભાવથી થતા નથી માટે અરતિ અને આનન્દમાં ચંચળચિત્ત ન બનીને મહર્ષિએ પોતાના ધ્યાનના માર્ગમાં લવલીન રહેવું જોઇએ.

યદ્વા-સંયમારાધનપરાયણસ્ય મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । અયંભાવઃ-સંયમારાધનતત્પરસ્ય કુતશ્ચિત્ કારણાત્ પ્રતિકૂલપરીષહોપસર્ગોપસ્થિતૌ અરતિર્ન-ભવતિ । સ હિ તદાનીમેવં ચિન્તયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વભવેષુ નરકનિગોદાદૌ ક્ષુત્પિ-પાસાદિજનિતં વધવન્ધનાદિજનિતં ચ યદ્ ધોરતરં દુઃખમનન્તવારં પ્રાપ્તં તત્પુરતઃ કિમેભિરલ્પદુઃખજનકૈઃ પરીષહોપસર્ગૈરિતિ । તથા-ઋદ્ધિ-રસ-શાતાદ્યુપસ્થિતૌ હર્ષઃ સુખં વા નોત્પદ્યતે ।

સ હિ તદાનીમેવં વિભાવયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વ દેવભવેષુ નરલોકદુર્લભં નાનાવિધઋદ્ધ્યાદિસુખમનન્તશોઽનુભૂતં, તસ્ય સમુદ્રસદૃશસ્ય દિવ્યસુખસ્ય પુરતઃ

અથવા-સંયમકી આરાધના કરનેમેં દત્તાવધાન મહર્ષિકો અરતિ ઔર આનન્દસે કોઈ પ્રયોજન નહીં હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ-સંયમકી આરાધના કરનેમેં તત્પર મહર્ષિકે જબ કિસી કારણસે પ્રતિકૂલ પરીષહ ઔર ઉપસર્ગકી ઉપસ્થિતિ હોતી હૈ ઉસ સમય ઉસે ઉસસે અરતિ નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ ઉસે ઉસ સમય યહી વિચાર આતા હૈ કિ ઇસ આત્માને પૂર્વભવમેં નરકનિગોદાદિ ગતિયોમેં ક્ષુધા-તૃષા-આદિ-જનિત એવં વધ ઔર વન્ધન આદિસે ઉત્પન્ન હુએ જો ધોરતર દુઃખ અનન્ત વાર પાચે હૈં ઉનકે આગે અલ્પદુઃખજનક યે પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કયા ચીજ હૈં ? તથા ઋદ્ધિ, રસ, શાતા આદિકી ઉપસ્થિતિ હોને પર મી ઉસે હર્ષ યા સુખ નહીં હોતા હૈ, ક્યોં કિ ઉસ સમય મી વહ યહી વિચાર કરતા હૈ કિ ઇસ આત્માને પૂર્વ-દેવભવોમેં, મનુષ્યલોકમેં દુર્લભ એસે અનેક પ્રકારકે ઋદ્ધિ-આદિજન્ય સુખોંકો અનન્ત વાર ભોગા હૈ તો સમુદ્ર

અથવા સંયમની આરાધના કરવામાં દત્તાવધાન મહર્ષિને અરતિ અને આ-નંદથી કોઈ પ્રયોજન જ નથી.

તાત્પર્ય એ છે કે-સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર મહર્ષિને બ્યારે કોઈ કારણથી પ્રતિકૂળ પરીષદ અને ઉપસર્ગની ઉપસ્થિતિ થાય છે તે વખત તેને તેનાથી અરતિ થતી નથી. પણ તેને તે વખત તેવો વિચાર આવે છે કે આ આત્માએ પૂર્વભવમાં નરક નિગોદાદિ ગતિયોમા ક્ષુધા તૃષા આદિ જનિત તેમજ વધ અને બધન આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ જે ધોરતર દુઃખ અનન્ત વાર ભોગવેલ છે તેની અપેક્ષા અહ્ય દુઃખજનક આ પરીષદ અને ઉપસર્ગ કઈ ચીજ છે ? તથા ઋદ્ધિ રસ, શાતા આદિની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં પણ તેને હર્ષ અગર સુખ થતું નથી. કારણ કે તે સમય પણ તે એજ વિચાર કરે છે કે આ આત્માએ પૂર્વ દેવભવોમાં, મનુષ્યલોકમાં દુર્લભ એવા અનેક પ્રકારના ઋદ્ધિ આદિ જન્ય સુખોને

કિમનેન વિન્દુતુલ્યેન કદ્વચાદિસુખેન? ઇતિ । ઉક્તञ્ચ—

“ ન તૃપ્તોઽસિ યદા કામૈઃ, સેવિતૈરપ્યનેકશઃ ।

સ નામ તેષુ વૃત્તોઽન્તો, યતો વૈરાગ્યમાપ્નુહિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

તસ્માત્—અત્રાપિ=અસ્મિન્ અરત્યાનન્દકારણેઽપિ અગ્રહઃ=તદનપેક્ષમાણઃ—
માધ્યસ્થભાવમુપગતઃ સન્ ચરેત્=સંયમમાર્ગે વિહરેત્ ।

તથા—સર્વ=સમસ્તં હાસ્યં=હાસં, તત્સ્થાનં વા પરિત્યજ્ય, આલીનગુપ્તઃ—તત્ર—
આલીનઃ—આહુ=મર્યાદયા—ઇન્દ્રિયનિરોધાદિરૂપયા લીનઃ, ગુપ્તઃ—મનોવાકાયકર્મભિઃ,
યદ્વા—ગુપ્તઃ=કૂર્મવ્રતસંવૃતગાત્રઃ, આલીનશ્વાસૌ ગુપ્તશ્ચેત્યાલીનગુપ્તઃ, એવંભૂતઃ સન્

કે તુલ્ય ઉસ સુખકે સામને વિન્દુતુલ્ય ઇસ કદ્દિ રસ આદિકે સુખકી
કયા ગિનતી હૈ । કહા બી હૈ—

“ ન તૃપ્તોઽસિ યદા કામૈઃ, સેવિતૈરપ્યનેકશઃ ।

સ નામ તેષુ વૃત્તોઽન્તો, યતો વૈરાગ્યમાપ્નુહિ ॥ ૧ ॥ ”

હે આત્મન્ ! જવ તું અનન્તવાર સેવન કિયે ગયે ઇન કામોંસે તૃપ્ત નહીં
હુઆ; ઉલ્ટા ઇનકે ભાગને સે તેરા હી અન્ત હુઆ તો ફિર ઇન કે ભોગને સે
તુજે કયા લાભ હૈ? અતઃ અવ ઇન સે વૈરાગ્ય હી લેના સર્વશ્રેયસ્કર હૈ ।

ઇસલિયે ઉસ સંયમી કો ચાહિયે કિ વહ અરતિ ઓર આનન્દ કે
કારણોંમેં બી અગ્રહ—અનપેક્ષાવાલા વન કર અર્થાત્ માધ્યસ્થ્યભાવ
રખતા હુઆ સંયમમાર્ગમેં વિચરે ।

તથા—સમસ્ત હાસ્ય અથવા હાસ્યકે સ્થાનભૂત—જિનકી તીર્થકૂરા-
દિકોંને નિન્દા કી હૈ એસે—વિપયકપાયોંકા પરિત્યાગ કર ઇન્દ્રિયનિગ્રહી
એવં મન, વચન ઓર કાયસે સદા સાવચક્રિયાસે રહિત હોતે હુએ અથવા

અનંતવાર ભોગવેલ છે તો સમુદ્રના તુલ્ય તે સુખની સામે બિંદુ તુલ્ય આ કદ્દિ
આદિના સુખની શુ ગણના છે. કહ્યું પણ છે:—

“ ન તૃપ્તોઽસિ યદા કામૈઃ, સેવિતૈરપ્યનેકશઃ ।

સ નામ તેષુ વૃત્તોઽન્તો, યતો વૈરાગ્યમાપ્નુહિ ॥ ૧ ॥ ”

હે આત્મા ! જ્યારે અનંત વાર સેવી ચુકેલા તે કામોથી જ્યારે તું તૃપ્ત
ન થયો, ઉલટું તેના ભોગવવાથી તારેએ અંત થયો, તો પછી તેના ભોગવવાથી
તને શું લાભ છે? માટે તે વસ્તુથી વૈરાગ્ય જ લેવો સર્વ શ્રેયસ્કર છે.

તેથી તે સંયમીને બોધ એ કે તે અરતિ અને આનંદના કારણોમાં પણ
અગ્રહ—અનપેક્ષાવાળા બની અર્થાત્ માધ્યસ્થ્ય ભાવ રાખીને સંયમ માર્ગમાં વિચરે.

તથા—સમસ્ત હાસ્ય અથવા હાસ્યના ધ્યાનભૂત કે જેની તીર્થકરોંને નિન્દા
કરેલ છે, એવા વિપયકપાયોના પરિત્યાગ કરી ઇન્દ્રિયનિગ્રહી તેમજ મન, વચન

પરિવ્રજેત્-પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્-સંયમાનુષ્ઠાનવિધાયી ભવેદિત્યર્થઃ॥સૂ૦ ૯॥

સ્વાત્મનો વીર્યગુણાવલમ્બનેનૈવ મોક્ષઃ પ્રાપ્યતે ન તુ પરસાહાય્યાશ્રયણેનેતિ દર્શયિતું કથયતિ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-પુરિસા ! તુમમેવ તુમં મિત્તં, કિં બહિયા મિત્ત-મિચ્છસિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—પુરુષ ! ત્વમેવ તવ મિત્રં, કિં બહિર્મિત્રમિચ્છસિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—હે પુરુષ !=પુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! શિષ્ય ! તવ મિત્રં ત્વમેવ=આત્મનઃ કલ્યાણાર્થ સમુદ્યતસ્ય-ગૃહીતસંયમભારસ્ય તવ સહાયસ્તવાત્મૈવાસ્તીત્યર્થઃ । શ્રુત-ચારિત્રધર્માચરણકરણેનૈકાન્તતોઽત્યન્તતથ્થ પરમસુખજનકત્વાત્પમાદરહિત આત્મૈ-વાત્મનો મિત્રમુપકારી પરમાર્થતો, ન ત્વન્ય ઇતિ ભાવઃ । બહિઃ=બાહ્યં સ્વાત્મનો વ્ય-તિરિક્તં, મિત્રં=હિતકારિણં સહાયં, કિમ્=કુતઃ, ઇચ્છસિ=અન્વેષયસિ ।

કમઠ-કચ્છપકે સમાન સંવૃતશરીર હોતે હુએ વે મહર્ષિ સંયમકી આરાધના કરનેમેં સાવધાન રહે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

અપની આત્માકે વીર્યગુણકે અવલમ્બન સે હી મોક્ષ પ્રાપ્ત હોતા હૈ કિન્તુ દૂસરોંકી સહાયતાકે સહારે નહીં । ઇસ વાતકો દિશ્વલાને કે લિયે કહતે હૈ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

પુરુષાર્થ સાધન કરનેમેં સમર્થ હે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તુમ હી સ્વયં અપને મિત્ર હો-અપની આત્માકે કલ્યાણ કરનેમેં ઉદ્યત હો કર જો તુમને યહ સંયમકા ભાર અંગીકાર કિયા હૈ ઉસમેં તુમ્હારી આત્માસે અતિરિક્ત ઔર દૂસરા કોઈ સહાયક નહીં હૈ । શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આચરણ કરને સે આત્મા અપ્રમાદી વનતા હૈ । પ્રમાદ સે રહિત આત્મા હી આત્માકા એકાન્તિક

અને કાયાથી સદા સાવધ ક્રિયાઓથી રહિત થઈને, અથવા કમઠ-કચ્છપના સમાન સંવૃતશરીર થઈને તે મહર્ષિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે. ॥સૂ૦૯॥

પોતાના આત્માના વીર્યગુણના અવલંબનથી જ મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે, પણ બીજાઓની સહાયતાના સહારથી થતો નથી. આ વાતને બતલાવવા માટે કહે છે-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

પુરુષાર્થ સાધન કરવામાં સમર્થ છે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તમે પોતે જ તમારી બાતના મિત્ર છો. પોતાના આત્માનું કલ્યાણ કરવામાં ઉદ્યોગી બની જે તમે સંયમનો ભાર અંગીકાર કરેલ છે, તેમાં તમારી આત્માથી અતિરિક્ત બીજા કોઈ સહાયક નથી. શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું આચરણ કરવાથી આત્મા અપ્રમાદી

સ્યાત્મવ્યતિરિક્તસ્ય સંસારકાર્યે સાહાય્યકારિણઃ પુત્રકલત્રાદેઃ સંસારિણસ્તથા હિરણ્યમુવર્ણાદેશ્વ જન્મમરણાદિવહુવિધાનન્તવ્યસનોપનિપાતસંસારસાગરાન્તઃપતન-કારિત્વાદમિત્રં મિત્રં મન્યમાનઃ કિં મોહાર્ણવે સ્વાત્માનં નિપાતયસિ ?, પરમાર્થતઃ શ્રુતચારિત્રધર્માનુષ્ઠાનાત્સ્વાત્મૈવ મિત્રં, તદિરોધિસાવધક્રિયાનુષ્ઠાનાદમિત્રં ચ સ્વાત્મૈવાસ્તીતિ ભાવઃ । ઉક્તચ્ચ—

“અપ્યેકં મરણં કુર્યાત્, સંક્રુદ્ધો વલ્લવાનરિઃ ।

મારણાનિ ત્વનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ॥” ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

તથા આત્યન્તિક પરમ સુખકા જનક હોનેસે ઉત્કૃષ્ટ વન્ધુ હૈ । ઇસલિયે જવ આત્માકા આત્માસે અતિરિક્ત ઇસ અવસ્થામેં કોઈ વાસ્તવિક દૃષ્ટિ સે વન્ધુ-સહાયક હૈ હી નહીં; તો ફિર હે આત્મન્ ! અપને સે સદા ભિન્ન રહે હુઓંકો તુમ અપના સહાયક માનને કી ચાહના ક્યોં કરતે હો ? ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-આત્માસે સદા ભિન્ન રહે હુઃ યે સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ, વે ચાહે સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્ર આદિ હોં, ચાહે હિરણ્ય, સુવર્ણ આદિ હોં; તુજે સાંસારિક કાર્યોંમેં હી સહાયક હોતે હોં, પારમાર્થિક કાર્યોંમેં નહીં । આત્માકો ઇન્કે મમત્વસે નિરન્તર હી જન્મ જરા ઓર મરણાદિક અનેક પ્રકારસે અનેક કષ્ટોંકા સામના કરના પડતા હૈ । ઇન કષ્ટોંકે સ્થાનમ્ભૂત ઇસ સંસારસમુદ્રમેં ઉસે ઘારંવાર ગોતે ચાને પડતે હોં । ઇસલિયે ઇન્હેં અપના સહાયક માનના શત્રુકો સહાયક માનને જૈસા હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! યહ નિશ્ચય વિશ્વાસ રાખકર અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરો ઓર

ખને છે. પ્રમાદથી રહિત આત્મા જ આત્માનો એકાંતિક તથા આત્યન્તિક પરમ સુખનો જનક હોવાથી ઉત્કૃષ્ટ બંધુ છે માટે જ્યારે આત્માનો આત્માથી અતિ-રિક્ત આ અવસ્થામાં કોઈ વાસ્તવિક દૃષ્ટિથી બંધુ-સહાયક છે જ નહિ, તો પછી હે આત્મન્ ! પોતાનાથી સદા ભિન્ન રહેલાઓને તું પોતાના સહાયક માનવાની ચાહના શા માટે કરે છે ?

ભાવાર્થ—આત્માથી સદા ભિન્ન રહેલા

શ્રી પુત્ર મિત્ર આદિ હોય, ચાહે હિરણ્ય સુવર્ણ
કાર્યોમાં જ સહાયક બને માર્થિક કાર્યો
નિરંતર જ જન્મ, જરા
કરવો પડે છે. તે કષ્ટો
પડે છે માટે તેના પોતા
છે. માટે હે શિષ્ય ! એ

દિક અનેક
આ સંસાર
નવા તે
શખીને

સમસ્ત
સેય. તે
માને તે
તે ક
રંવાર
માન
યાત્ર

આત્મા યસ્ય મિત્રં સ કથં જ્ઞાતવ્યઃ ? इति शिष्यजिज्ञासयामाह—‘ जं जाणिज्जा ’ इत्यादि ।

સોચો કિં હસ યાત્રામાં મેરા સહાયક મેરી આત્મા હી હૈ, અન્ય-આત્મ-વાહ્ય-કોઈં મીં પદાર્થ નહીં । જોં હનકી સહાયતાકી અપેક્ષાવાલે બનોગે તો અપની આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમાં ડુબોનેવાલે હોઓગે । હસલિયે હનકે મોહમાં ફંસ કર આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમાં ડાલનેકી ચેષ્ટા ન કરો ઓર પરમાર્થસે યહ સમજાતે હુએ હસ યાત્રામાં આગે વઢતે રહો કિં શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મકે અનુષ્ઠાનસે આત્માકા સહાયક આત્મા હી હૈ ઓર તદ્વિ-રોધી સાવધક્રિયાઓંકે કરનેસે આત્મા હી આત્માકા શત્રુ હૈ । કહા મીં હૈ—

“ અપ્યેકમરણં કુર્યાત્, સંકુદ્ધો બલવાનરિઃ ।

મરણાનિ ત્વનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ॥ ૧ ॥ ” इति ।

અર્થ-બલવાન સે બલવાન મીં શત્રુ અગર કુદ્ધ હો કર મારે તો એક હી જન્મમાં મારતા હૈ, પરંતુ સાવધ ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બન કર અનન્તવાર અપને આપકો મારતા હૈ ઓર જન્મ લેતા હૈ । અર્થાત્ આત્મા હી અપના શત્રુ બન કર ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતા રહતા હૈ, કિન્તુ કમીં મીં મોક્ષકો પ્રાપ્ત નહીં હોતા ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કરો, અને વિચારો કે—આ યાત્રામાં મારો સહાયક મારો આત્મા જ છે. ખીલું બાહ્ય કોઈં પણ પદાર્થ નહિ બે તેની સહાયતાની અપેક્ષાવાળા બનશે તો પોતાના આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં બુડાવનારા બનશે, મારે તેના મોહમાં ફસીને આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં નાંખવાની ચેષ્ટા ન કરો, અને પરમાર્થથી એ સમજીને આ યાત્રામાં આગળ વધતા રહો. શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના અનુષ્ઠાનથી આત્માનો સહાયક આત્મા જ છે, અને તેના વિરોધી સાવધ ક્રિયાઓના કરવાથી આત્મા જ આત્માનો શત્રુ છે. કહ્યું છે—

“ અપ્યેકમરણં કુર્યાત્, સંકુદ્ધો બલવાનરિઃ ।

મરણાનિ ત્વનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ” ॥ ૧ ॥ इति ।

અર્થ:—બળવાનથી બળવાન પણ શત્રુ ક્રોધી થઈને મારે તો એક જ જન્મમાં મારે છે, પરંતુ સાવધ ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બનીને અનંત વાર પોતે પોતાને મારે છે, અને જન્મ લે છે. અર્થાત્ આત્મા જ પોતાનો શત્રુ બનીને ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતો રહે છે, કિન્તુ કદી પણ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરતો નથી ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

મૂલમ્—જં જાણિજ્ઞા ઉચ્ચાલઇયં, તં જાણિજ્ઞા દૂરાલઇયં ।

જં જાણિજ્ઞા દૂરાલઇયં, તં જાણિજ્ઞા ઉચ્ચાલઇયં ॥સૂ૦ ૧૧॥

છાયા—યં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકં તં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્ ।

યં જાનીયાત્ દૂરાલયિકં તં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકમ્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—યં પુરુષમ્ ઉચ્ચાલયિકમ્—ઉચ્ચઃ=કર્માપનયનભાવસંપન્નઃ, આલયઃ=આ=સમન્તાત્ લીયન્તે વિચારા યસ્મિન્ સ આલયઃ=અન્તઃકરણમ્, ઉચ્ચઃ આલયઃ ઉચ્ચાલયઃ, સોઽસ્યાસ્તીતિ—ઉચ્ચાલયિકસ્તમ્ કર્મણામપનેતારં જાનીયાત્, તં દૂરાલયિકં=કઠિનતરતપઃસંયમારાધનપ્રાપ્તીયત્વેન દૂરે આલયઃ દૂરાલયઃ=મોક્ષ-સ્થાનં, સોઽસ્યાસ્તીતિ દૂરાલયિકસ્તં મોક્ષગામિનં જાનીયાત્ । પરસ્પરકાર્યકારણભાવપ્રદર્શનાયોક્તમર્થં ગત-પ્રત્યાગતરૂપેણ કથયતિ—‘યં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્’

જિસકા આત્મા હી મિત્ર હૈ એસે પુરુષકી પહિચાન કૈસે હોતી હૈ ? હસપ્રકારકી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જં જાણિજ્ઞા’ ઇત્યાદિ ।

કર્મોંકા જો અપનેતા હૈ ઉસકા નામ ઉચ્ચાલયિક, તથા મોક્ષગામી કા નામ દૂરાલયિક હૈ । અર્થાત્—જો ઉચ્ચાલયિક=કર્મોંકા નાશ કરને-ચાલા હૈ વહ દૂરાલયિક=મોક્ષગામી હૈ, એસા સમજો । કઠિનતર તપ ઓર સંયમકી આરાધના સે પ્રાપ્ત હોનેવાલા હોને કે કારણ દૂર જો આલય-સ્થાન હૈ ઉસકા નામ દૂરાલય-મોક્ષ હૈ । યહ જિસકે હોતા હૈ વહ દૂરાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી હૈ । પરસ્પરમેં કાર્ય-કારણ ભાવકા પ્રદર્શન કરાનેકે લિયે ઉક્ત અર્થકો સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હિર-ફેર) રૂપસે કહતે હૈ—જો દૂરાલયિક=મોક્ષગામી-અર્થાત્ મુક્તિકે માર્ગપર આરુઢ હૈ, ઉસકો

જેનો આત્મા જ મિત્ર છે એવા પુરુષની ઓળખાણ કેવી રીતે થાય ? આ પ્રકારની શિષ્યની છજાસા થવાથી સૂત્રકાર કહે છે—‘જં જાણિજ્ઞા’ ઇત્યાદિ.

કર્મોના જે અપનેતા છે તેનું નામ ઉચ્ચાલયિક તથા મોક્ષગામીનું નામ દૂરાલયિક છે. અર્થાત્—જે ઉચ્ચાલયિક=કર્મોના નાશ કરવાવાળા છે તે દૂરાલયિક=મોક્ષગામી છે, એમ સમજો. કઠિનતર તપ અને સંયમની આરાધનાથી પ્રાપ્ત થવાવાળા હોવાના કારણે દૂર જે આલય-સ્થાન છે. તેનું નામ દૂરાલય-મોક્ષ છે. તે જેને થાય છે તે દૂરાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી છે પરસ્પરમાં કાર્યકારણ ભાવનું પ્રદર્શન કરાવવા માટે ઉક્ત અર્થને સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) રૂપથી કહે છે—જે દૂરાલયિક-મોક્ષગામી અર્થાત્ મુક્તિના માર્ગ ઉપર આરુઢ છે

ઇત્યાદિ । યં પુરુષં દૂરાલયિકં મોક્ષગામિનં મોક્ષમાર્ગારૂઢં જાનીયાત્, તમુચ્ચાલ-
યિકં=કર્મણાં તદાસ્રવદ્વારાણાં ચાપનેતારં કર્માણિ દૂરીકર્તુઃ કૃતનિશ્ચયં સોત્સાહં વદ્ધ-
પરિકરમિતિ યાવત્ જાનીયાત્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

સ્વાત્મૈવ યેન મિત્રતયાઽઙ્ગીકૃતઃ સ કિં ફલં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ।

ઉચ્ચાલયિક = કર્મ ઓર ડનકે આસ્રવોકે દ્વારોંકા નાશ કરનેવાલા સમઘ્નો । ક્યોં કિ વહ કર્મોં કો દૂર કરનેકે લિયે કૃતનિશ્ચય ઁવં ઉત્સા-
હસંપન્ન હોતા હૈ । કર્મોં કે નાશ કરનેમેં વહ કિસી ખી પ્રકારસે પીછે
પૈર નહીં રલ્ખતા હૈ, અર્થાત્ કટિવદ્ધ હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ આત્માકો હી જો સંયમયાત્રામેં સહાયક માનતા હૈ ડસકી પહિચાન ક્યા હૈ ? ડસકા સમાધાન સૂત્રકારને ડસ સૂત્રસે કિયા હૈ । વે કહતે હૈં કિ જો સંયમી ડસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ કર્મોંકે દૂર કરનેમેં સદા કટિવદ્ધ રહતા હૈ । ડસી રૂપસે વહ દૃષ્ટિપથ હોતા હૈ । ડસકી પ્રત્યેક ક્રિયાઁ ઁસી હોતી હૈં કિ જિનસે કર્મોંકા આસ્રવ રુકતા હૈ ઓર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોતી રહતી હૈ । ઁસા સંયમી મુનિ હી મોક્ષમાર્ગ પર આરૂઢ માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

અપની આત્મા કો હી જિસને મિત્રરૂપસે અંગીકાર કિયા હૈ વહ સંયમી કિસ ફલકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? ડસકેલિયે કહતે હૈં—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

તેને ઉચ્ચાલયિક-કર્મ અને તેના આસ્રવદ્વારોંનો નાશ કરવાવાળા સમઘ્ને. કારણ કે તે કર્મોંને દૂર કરવા માટે કૃતનિશ્ચય તેમજ ઉત્સાહસંપન્ન બને છે. કર્મોંનો નાશ કરવામાં તે કેઈ પણ પ્રકારે પાછળ પગલું ભરતાં નથી, અર્થાત્ કટિવદ્ધ થાય છે.

ભાવાર્થ—શિષ્યે જે આ પ્રશ્ન કરેલ હતો કે આત્માનેજ જે સંયમયાત્રામાં સહાયક માને છે તેની ઓળખાણ શુ છે ? તેનું સમાધાન સૂત્રકારે આ સૂત્રથી કરેલ છે, તે કહે છે કે જે સંયમી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે કર્મોંને દૂર કરવામાં સદા કટિવદ્ધ રહે છે. તેવા રૂપથી તે દૃષ્ટિપથ થાય છે. તેની દરેક ક્રિયાઓ ઁવી હોય છે કે જેનાથી કર્મોંનો આસ્રવ રોકાય છે, અને સંચિત કર્મોંની નિર્જરા થતી રહે છે, ઁવા સંયમી મુનિ જ મોક્ષ માર્ગ પર આરૂઢ માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

પોતાના આત્માને જ જેણે મિત્રરૂપથી અંગીકાર કરેલ છે તે સંયમી કેવા ડળને પ્રાપ્ત કરે છે તેને માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ

મૂલમ્—પુરિસા! અત્તાણમેવ અભિણિગિજ્ઞ એવં દુઃસ્વા
પમુચ્ચસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પુરુષ ! આત્માનમેવાભિનિશ્ચય એવં દુઃસ્વાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! પરમપુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! મન્ય ! આત્માનમેવ=સ્વસ્વ-
રૂપાવલોકનં શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનં વા પરિત્યજ્યાઽનાદિમિથ્યાત્વાવિરત્યાદિ-
વાસનાવશાદ્ વિષયસંગાર્થં વદિધાવમાનં સ્વાત્માનમેવ અભિનિશ્ચય=મોક્ષસાધકધ-
ર્માનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તિરસંસ્કારેણ તતઃ પ્રતિનિવર્ત્ય, એવં=પુનઃપુનરનેન પ્રકારેણ સ્વાત્માનં
જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાત્મનિષ્ઠં કુર્વન્, દુઃસ્વાત્=દુઃસ્વકારણાત્ જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મવ-
ન્ધાત્ પ્રમોક્ષ્યસે=મુક્તો ભવિષ્યસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

હે પુરુષ—અર્થાત્ પરમ પુરુષાર્થ—મોક્ષકે સાધનમેં સમર્થ હે મન્ય !
અપની આત્માકો વૈષયિક માર્ગ સે હટા કર આત્મનિષ્ઠ કરો, ઈસીસે
તુમ્હારે દુઃસ્વૌકા અન્ત હોગા ।

માવાર્થ—જો સંયમી અપની આત્માકો હી સંયમ—માર્ગકે સાધનમેં
સહાયી માનતા હૈં ઉસે મુક્તિકા લાભરૂપ ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈં । સંસાર-
દશામેં ફંસે હુણ વ્યક્તિયોસે, અથવા સંયમકી આરાધનામેં સાંસારિક
પરપદાર્થ કી સહાયતાકી હી અપેક્ષા રાખનેવાલે સંયમી સે સ્વરૂપકા અવ-
લોકન, અથવા શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મકા આરાધન નહીં હો સકતા હૈં । જવ
તક ઈસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ સંયમી મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતી હૈં તવ તક વહ
અપને કર્તવ્ય—માર્ગસે અલગ હી રહતા હૈં । ઉસકી આત્મા અનાદિકાલસે
સંસક્ત (લગા હુઆ) મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિકી ભાવનાકે વશસે

હે પુરુષ ! અર્થાત્ પરમપુરુષાર્થ—મોક્ષના સાધનમા સમર્થ હે લભ્ય !
પોતાના આત્માને વૈષયિક માર્ગથી હટાવી આત્મનિષ્ઠ કરો, તેનાથી તમારા
હુ ખોનો અંત આવશે

લાવાર્થ—જે મન્યમી પોતાના આત્માને જ સંયમ માર્ગના સાધનમાં
મહાયુક્ત માને છે. તેને મુક્તિના લાભરૂપ ફળ પ્રાપ્ત થાય છે. સંસારદશામાં
ફંસેલી વ્યક્તિયોથી, અથવા સંયમની આરાધનામાં સાંસારિક પરપદાર્થની સહા-
યતાની જ અપેક્ષા રાખવાવાળા સંયમીથી સ્વરૂપનું અવલોકન, અથવા શ્રુતચા-
રિત્રરૂપ ધર્મનું આરાધન બની શકતું નથી. જ્યાં મુખી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ
સંયમીમાં ઉત્પન્ન નથી થતી ત્યાં મુખી તે પોતાના કર્તવ્ય માર્ગથી અલગ જ
રહે છે. તેની આત્મા અનાદિ કાળથી સંસક્ત (લાગેલા) મિથ્યાત્વ અવિરતિ

અપિ ચ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પુરિસા ! સચ્ચમેવ સમભિજાણાહિ, સચ્ચસ્સ આ-
ણાણ્ણ સે ઉવટ્ઠિણ્ણ મેહાવી મારં તરહ્મ । સહિઓ ધમ્મમાયાય સેયં
સમણુપસ્સહ્મ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

વિષયોંની ઓર ચક્કર કાઢા કરતા હૈ ઓર મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુ-
ષ્ઠાનકે સંસ્કારોં સે વચ્ચિત રહતા હૈ । ઇસ બાતકા ઠ્યાલ કર સૂત્રકાર
શિષ્યજન કે શિક્ષાર્થ કહતે હૈં કિ—હે શિષ્ય ! યદિ તુમ પરમપુરુષાર્થ
મોક્ષકે સાધન કરને મેં અપનેકો શક્તિશાલી સમજતે હો તો તુમ
સ્વરૂપકા અવલોકન મેં, યા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના મેં અપને કો
વિસર્જિત કર દો । જો ઇસા નહીં કરતે, વે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ
અવિરતિ આદિકી લગી હુઈ વાસનાકે વશ સે વિષયોંકે સંગકે લિયે
બાહિરી પદાર્થોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલી અપની આત્મા કો ડસ ઓર સે હદા
નહીં સકતે । ઇસલિયે તુમ મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનકે સંસ્કાર
કો અપને આપમેં પ્રવલતર કરો, તાકિ વિષયમાર્ગકી ઓર બઢતી હુઈ
યહ તુમ્હારી આત્મા ડસ ઓર ન જા સકે—ડસ તરફસે નિવૃત્તિ હો જાવે ।
ઇસ પ્રકારકે બારં બારં કે અભ્યાસ સે આત્માકો અપને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર—મેં સ્થાપિત કરતે હુઈ તુમ દુઃખોં કે
કારણભૂત જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે બન્ધન સે મુક્તિ હો જાઓગે ॥૧૨॥

આદિ ભાવનાના વશથી વિષયોની તરફ જ લાગ્યો રહે છે, અને મોક્ષના
સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનના સંસ્કારોથી વચ્ચિત રહે છે. આ વાતનો ખ્યાલ કરી
સૂત્રકાર શિષ્યજનના શિક્ષાર્થ કહે છે કે.—હે શિષ્ય ! જો તું પરમપુરુષાર્થ
મોક્ષનું સાધન કરવામાં પોતાને શક્તિશાળી સમજતો હોય તો તું સ્વરૂપના
અવલોકનમાં અગર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં પોતાને વિસર્જિત કરી દે.
જો આમ નથી કરતા તો અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ અને અવિરતિ આદિની લાગેલી
વાસનાના વશથી વિષયોના સંગ માટે બહારના પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા
પોતાના આત્માને તે તરફથી હઠાવી શકતા નથી, માટે તમે મોક્ષના સાધક ધાર્મિક
અનુષ્ઠાનના સંસ્કારને પોતે પોતામાં પ્રબલતર કરો, જેથી વિષયમાર્ગની તરફ
વધતો એ તમારો આત્મા એ તરફ જઈ શકે નહિ—તે તરફથી નિવૃત્તિ થઈ જાય.
આ પ્રકારના વારંવારના અભ્યાસથી આત્માને—પોતાને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્-
જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર—માં સ્થાપિત કરીને તમે દુઃખોના કારણભૂત જ્ઞાનાવર-
ણીયાદિક કર્મોના બંધનથી મુક્ત થઈ જશો ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ, સત્યસ્યાજ્ઞયા સ ઉપસ્થિતો મેધાવી મારં તરતિ । સહિતો ધર્મમાદાય શ્રેયઃ સમનુપશ્યતિ ॥ મૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ—ગુરુદેવં સાક્ષીકૃત્ય યા શ્રુતચારિત્ર-ધર્મસ્ય ગ્રહણી તથાઽઽસેવની ચ શિક્ષા પરિગૃહીતા, તામ્ અવિસ્મરન્ પરિપાલયે-ત્યર્થઃ । યદ્વા—સત્યઃ=આગમસ્તમેવ સમભિજાનીહિ=ચરણકરણરૂપમાગમોક્તમર્થ પ્ર-તિપાલયેત્યર્થઃ । एतत् किमर्थमित्याह—‘સત્યસ્ય’ इत्यादि । सत्यस्य=गुरुदेवं सा-क्षीकृत्य परिगृहीतायाः श्रुतचारित्रधर्मस्य ग्रहण्या आसेवत्याश्च शिक्षायाः जिनप्र-वचनस्य वा आज्ञया=अनुसरणेन उपस्थितः सन् मेधावी=हेयोपादेयविवेककुशलः, मारं=संसारार्णवं तरति=समुत्तीर्णो भवति । किं च—सहितः=हितेन ज्ञानादिना युक्तः धर्ममादाय=श्रुतचारित्रलक्षणं धर्मं गृहीत्वा श्रेयः=शुभं मोक्षपदं समनुपश्यति, तीर्थङ्क-रादिभिर्दृष्टं सम्यगवलोकयतीत्यर्थः ॥ मू. ૧૩ ॥

ફિર કહતે હૈ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

હે પુરુષ=પરમપુરુષાર્થ કે સાધન કરને મેં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન તથા ગુરુકો સાક્ષી કરકે જો તુમને ગ્રહણી-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકો અંગીકાર કરનેવાલી एवं આસેવની=ઉસ ધર્મકો નિર્દોષ રીતિસે પાલન કરનેવાલી શિક્ષા ગ્રહણ કી હૈ, ઉસે તુમ સ્વપ્ન મેં મી મત ભૂલો । હસકા અન્તઃ-કરણસે પાલન કરો । અથવા ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ-(ચરણ-સત્તરી ઓર કરણસત્તરી) કા પાલન કરો । જિનપ્રવચનકી આજ્ઞા કે અનુસાર જો અપની પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ હેય ઓર ઉપાદેય કે ચિવેકસે કુશલ હો જાતા હૈ । હસ કુશલતાકા યહ ફલ હૈ કિ-વહ સંસારસમુદ્ર સે પાર હો જાતા હૈ । તથા—આત્માકે હિતકારી હોનેસે હિતરૂપ

દરીથી કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

હે પુરુષ ! = પરમપુરુષાર્થનું સાધન કરવામા સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન તથા ગુરુને સાક્ષી કરીને જે તમે ગ્રહણી-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને અંગીકાર કરવાવાળી, અને આસેવની-તેને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાવાળી શિક્ષા ગ્રહણ કરી છે તેને તમે સ્વપ્નમાં પણ ભૂલો નહિ. તેનું અંતઃકરણથી પાલન કરો. અને ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ (ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરી)નું ચેવન કરો. જિનપ્રવચનની આજ્ઞાનુસાર જે પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી કુશળ બની બચે છે. તે કુશળતાનું એ ફળ છે કે તે સંસારસમુદ્રથી પાર વર્ધે બચે છે, તેમજ આત્માના હિતકારી હોવાથી હિતરૂપ જ્ઞાનાદિ શુભોથી યુક્ત

પ્રમાદરહિતસ્ય મહર્ષેર્ગુણા ઉક્તાઃ, અથ પ્રમાદવતો દોષાન્ દર્શયિતુમાહ-
'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-દુહઓ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાણણપૂયણાણ, જંસિ
એગે પમાયાંતિ ॥ સૂ. ૧૪ ॥

છાયા-દ્વિહતો જીવિતસ્ય પરિવંદનમાનનપૂજનાર્થ, યસ્મિન્ એકે પ્રમાદ્યન્તિ ॥

ટીકા-દ્વિહતઃ=દ્વાભ્યાં રાગદ્વેષાભ્યાં હતઃ રાગદ્વેષવશીભતઃ જીવિતસ્ય=ચપ-
લાવિલાસચશ્ચલસ્ય ક્ષણભદ્રગુરસ્ય જીવનસ્ય, સુસ્વાર્થ, તથા પરિવંદનમાનનપૂજ-
નાર્થ-પરિવંદન=સંસ્તવઃ, યથા-'શ્રીમાન્ આયુષ્માન્ ભવે'-ત્યાદિ, તદર્થ, તથા
માનન=જનસત્કારઃ, યથા-'અભ્યુત્થાનાસનદાનાદિભિર્જના માં માનયિષ્યન્તી'-તિ
તદર્થ, તથા પૂજનં, યથા-'સમુપાર્જિતગ્રામજનપદસ્ય મમ દાનમાનપ્રણામસેવાદિભિ-
ર્જનાઃ પૂજન કરિષ્યન્તી'-તિ, તદર્થ પ્રાણાતિપાતાદિષુ પ્રવર્તતે । એવમ્-એકે=યે કે

જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે યુક્ત વહ સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કર શુભ
એવં તીર્થદ્વરાદિદ્વારા દૃષ્ટ એસે મુક્તિસ્થાનકા દર્શક હોતા હૈ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમેં પ્રમાદરહિત મહર્ષિકે ગુણોંકા કથન કિયા હૈ, અવ પ્રમા-
દસંપન્ન પ્રાણીકે દોષોંકો દિખલાતે હૈ-'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

જો મનુષ્ય, રાગ એવં દ્વેષ, હન દોનોંસે યુક્ત હૈ વહ બિજલીકે ચમકારે કે
સમાન ક્ષણભંગુર હસ જીવનકો સુખી કરનેકે લિયે 'આપ લક્ષ્મીવાન્ હોં,
ચિરંજીવી હોં' ઇત્યાદિ રૂપસે અપની સ્તુતિ કરાનેકે લિયે, 'લોગ મુઝે દેખ
કર ખડે હોંગે, આસનાદિકકે પ્રદાનસે મેરા સન્માન કરેંગે' હસ પ્રકાર
અન્ય જનોંસે સત્કાર પ્રાપ્તિકે લિયે, તથા 'મુઝે ગ્રામાધિપતિ યા નગરાધિ-
પતિ દાન, માન, પ્રણામ ઓર સેવા-શુશ્રૂષા આદિસે પ્રતિષ્ઠિત કરેંગે' હસ
પ્રકાર અપની પૂજાકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોંમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

તે સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરી શુભ તેમજ તીર્થકરાદિદ્વારા દૃષ્ટ
એવા મુક્તિસ્થાનના દર્શક બને છે ॥ સૂ. ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમાં પ્રમાદરહિત મહર્ષિના ગુણોનુ કથન કરેલ છે, હવે પ્રમાદ-
સંપન્ન પ્રાણીના દોષો કહે છે-'દુહઓ' ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય રાગ અને દ્વેષ, એ બન્નેથી યુક્ત છે તે વીજળીના ચમકારા સમાન
ક્ષણભંગુર આ જીવનને સુખી કરવા માટે 'તમે લક્ષ્મીવાન્ થાઓ ચિરંજીવી થાઓ'
ઇત્યાદિ રૂપથી પોતાની સ્તુતિ કરાવવા માટે, તથા 'લોક મને દેખીને ઉભા થશે, આસ-
નાદિકના પ્રદાનથી માંડે સન્માન કરશે' આ પ્રકારે અન્ય જનોથી સત્કાર પ્રાપ્તિ માટે, તથા
'મને ગ્રામાધિપતિ અગર નગરાધિપતિ દાન, માન, પ્રણામ અને સેવા-શુશ્રૂષા આદિથી
પ્રતિષ્ઠિત કરશે.' આ પ્રકારે પોતાની પૂજા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોમાં પ્રવૃત્તિ

ચન રાગદ્વેષાભિભૂતાઃ અસંયમરતાઃ સ્વાર્થં પરાર્થં વા યસ્મિન્=પરિવન્દનાદૌ પ્રમાદ્યન્તિ= આર્તરોદ્રધ્યાનલગ્નેન ચેતસા પરિવન્દનાદિરૂપસાવધવ્યાપારેષુ પ્રવૃત્તિરૂપં પ્રમાદં કુર્વન્તિ । તે પ્રમાદકારિણઃ સ્વલુ નિજાત્મનો દુઃખં ન ક્ષપ્યન્તિ; કિન્તુ કર્મોપચયેન સ્વાત્માનં દુઃસ્વાર્ણવે નિપાતયન્તીતિ ભાવઃ । યદ્વા-‘પમોયંતિ’ इति पाठपक्षे ‘प्रमो-दन्ते’ इति श्रूया । तस्यायमर्थः -‘जंसि’ यस्मिन् परिवन्दनादौ ‘एगे’ एके= केचित् प्रमोदन्ते=हृष्यन्ति-हर्षं प्राप्नुवन्ति, न तत्तस्य हितायेति भावः ॥ सू० १४॥

एतत्प्रतिपक्षभूतस्वप्रमादौ यत् फलं प्राप्नोति तदाह-‘सहिओ’ इत्यादि ।

इस प्रकारकी चाहनावाले जो कोई भी मुनि हैं वे राग और द्वेषसे युक्त हैं और असंयममें आसक्त हैं । ऐसे प्राणी स्वार्थ अथवा परमार्थका कुछ भी ख्याल न कर सिर्फ अपनी ख्यातिलाभ पूजादिककी चाहनाके आधीन हो आर्त और रौद्र ध्यानमें संलग्नचित्त रहा करते हैं और सावध व्यापारोंमें प्रवृत्ति करनेरूप प्रमादका सेवन करते रहते हैं । ये प्रमादकारी प्राणी निश्चित ही अपनी आत्माके दुःखोंको दूर न कर प्रत्युत कर्मोंके संचयसे स्वयं अपनी आत्माको दुःखरूपी समुद्रमें धकेलते हैं । अथवा सूत्रमें ‘पमायंति’ के स्थानमें कहीं ‘पमोयंति’ ऐसा भी पाठ है । उसका अर्थ इस प्रकार होता है-जिस परिवन्दन आदिमें कितनेक प्राणी हर्ष मनाते हैं किन्तु वह उसकी आत्मा के हितके लिये नहीं होता ॥ सू० १४॥

इससे भिन्न प्रवृत्ति करनेवाला अप्रमादी मुनि जिस फलको पाता है वह दिखलाते हैं—‘सहिओ’ इत्यादि ।

કરે છે. આ પ્રકારની આહનાવાળા જે કોઈ મુનિ છે તે રાગ અને દ્વેષથી યુક્ત છે. અને અસંયમમાં આસક્ત છે. એવા પ્રાણી સ્વાર્થ અથવા પરાર્થનો જરા પણ ખ્યાલ કરના નથી, ફક્ત પોતાની ખ્યાતિલાભ અને પૂજાદિકની આહનાને આધીન થઈ આર્ત અને રૌદ્ર ધ્યાનમાં સંલગ્નચિત્ત રહ્યા કરે છે, અને સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ કરવારૂપ પ્રમાદનું સેવન કરતા રહે છે. એ પ્રમાદકારી પ્રાણી નિશ્ચિત જ પોતાના આત્માને દુઃખોથી દૂર ન કરતાં પ્રત્યુત કર્મોના સંચયથી સ્વયં પોતાના આત્માને દુઃખરૂપી સમુદ્રમાં નાંખે છે. અથવા સૂત્રમાં ‘પમાયંતિ’ ના સ્થાનમાં ક્યાંક ‘પમોયંતિ’ એવો પણ પાઠ છે, તેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે-જે પરિવંદન આદિમાં કેટલાક પ્રાણી હર્ષ મનાવે છે, પણ તે તેના આત્માના હિત માટે હોતું નથી ॥ સૂ० ૧૪ ॥

તેનાથી ભિન્ન પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમાદી મુનિ જે ફળને પામે છે તે બતાવે છે—‘સહિઓ’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્--સહિઓ દુઃસ્વમાત્રયા પૃષ્ઠો નો ઇંજ્ઞાણતિ, પાસિમં
દવિણ લો ગાલોગપવંચાઓ મુચ્ચદ્-ત્તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

છાયા—સહિતો દુઃસ્વમાત્રયા સ્પૃષ્ઠઃ ન ઇંજ્ઞાણતિ, પશ્યેમં દ્રવિકો લોકાઽલોક-
પ્રપશ્ચાન્મુચ્યતે—ઇતિ બ્રવીમિ ॥ મૂ૦ ૧૫॥

ટીકા—સહિતઃ=જ્ઞાનચારિત્રયુક્તઃ, દુઃસ્વમાત્રયા શીતોષ્ણપરીષદસમુત્પન્નયા
વ્યાધ્યુપસર્ગજનિતયા વાઽલ્પયા મહત્યા વા સ્પૃષ્ઠો સન્ ન ઇંજ્ઞાણતિ=ન વ્યાકુલીભવતિ,
કપાયં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । કિંચ—હે શિષ્ય ! ઇમં=વક્ષ્યમાણમર્થ, યદ્વા—ઇમમુક્તમર્થ
'સંધિં લોગસ્સ જાણિત્તા' ઇત્યારમ્ય 'જો ઇંજ્ઞાણતિ' ઇત્યન્તેન પ્રતિવોધિતં,
પશ્ય=હેયોપાદેયવિવેકેન સમ્યગ્ જાનીહિ । તમેવાર્થ દર્શયિતુમાહ—'દ્રવિક'

જ્ઞાન એવં ચારિત્રસંપન્ન સંયમી મુનિ શીત-ઉષ્ણ પરીષદ્દર્શે ઉત્પન્ન
અથવા કોઈ વ્યાધિ યા ઉપસર્ગસે જનિત દુઃસ્વકી થોડી યા વહુત માત્રાસે
સ્પૃષ્ઠ હોતા હુઆ મી કમી મી આકુલિતચિત્ત નહીં હોતા હૈ । ઇસ લિયે
હે શિષ્ય ! ઇસ આગે કહે જાનેવાલે અર્થકો અથવા “સંધિં લોગસ્સ”
યહાં સે લગાકર “જો ઇંજ્ઞાણતિ” યહાં તક જો કુછ અમી તક અર્થ
પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ડસકો હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકસે વાસિતઅન્તઃ-
કરણ હો તુમ પૂર્ણરૂપસે અપને ધ્યાનમેં રલ્લો । “સંધિં લોગસ્સ” યહાંસે
પ્રારંભકર “જો ઇંજ્ઞાણતિ” યહાં તક જો કુછ મી વિષય કહા ગયા હૈ
ડસકા નિચોડ અર્થ યહી હૈ કિ-રાગદ્વેષસે રહિત મુનિ ચૌદહ (૧૪)
રાજુપ્રમાણ ઇસ લોકમેં પ્રત્યક્ષસે દિલ્લતે હુઅ ચતુર્ગતિમેં ભ્રમણરૂપ
વ્યવહારસે સદાકે લિયે મુક્ત હો જાતા હૈ ।

જ્ઞાન અને ચારિત્ર-સંપન્ન સંયમી મુનિ, શીત, ઉષ્ણ પરીષદ્દર્શી ઉત્પન્ન થયેલ,
અથવા કોઈ વ્યાધિ અગર ઉપસર્ગથી જનિત થોડી અગર વધારે દુઃખની માત્રાથી
સ્પૃષ્ઠ બનવા છતાં પણ કદિ પણ આકુલિતચિત્ત નથી થતાં. માટે હે શિષ્ય !
આગળ કહેવામાં આવશે તે અર્થને અથવા “સંધિં લોગસ્સ” અહીંયાથી
લઈને ‘જો ઇંજ્ઞાણતિ’ ત્યાં સુધી જે કંઈ અત્યાર સુધી અર્થ પ્રગટ કરેલ
છે તેને હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી વાસિતઅન્તઃકરણ બની તમે પૂર્ણરૂપથી
પોતાના ધ્યાનમાં રાખો. “સંધિં લોગસ્સ” ત્યાંથી પ્રારંભ કરી “જો ઇંજ્ઞાણતિ”
ત્યાં સુધી જે કંઈ પણ વિષય કહેવામાં આવેલ છે તેનો નિચોડ અર્થ એ છે
કે-રાગદ્વેષથી રહિત મુનિ ચૌદ (૧૪) રાજુ પ્રમાણ આ લોકમાં પ્રત્યક્ષથી દેખાતાં
ચતુર્ગતિમાં ભ્રમણરૂપ વ્યવહારથી સદાને માટે મુક્ત થઈ જાય છે.

इत्यादि । द्रविकः=रागद्वेषविनिर्मुक्तः मुनिरित्यर्थः, लोकाऽऽलोकप्रपञ्चात् चतुर्दश-
रज्ज्वात्मकलोके आलोकात्=दृश्यमानात् प्रपञ्चात्=चतुर्गतिभ्रमणरूपाद् व्यवहाराद्
मुच्यते=मुक्तो भवतीत्यर्थः । ' इति ब्रवीमि ' अस्य व्याख्यानं प्राग्वत् ॥ सू० १५ ॥

॥ तृतीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः संपूर्णः ॥ ३-३ ॥

भावार्थ—“ સંધિ લોગસ્સ ” ઇસ સૂત્રસે લગાકર “ જો હંજ્ઞાણતિ ”
યહાં તક મુનિકે સમ્બન્ધમેં જો કુછ સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ ઉસ પર
વહ મુનિ યદિ હૃદયકી લગનસે પ્રવૃત્તિયુક્ત હોતા હૈ તો યહ નિશ્ચિત હૈ
કિ વહ અવશ્ય હી રાગ ઓર દ્વેષસે રહિત હોતા હુઆ ઇસ ચૌદહ (૧૪)
રાજૂ પ્રમાણ લોકમેં ચારોં ગતિયોંકે ભ્રમણસે મુક્ત હો જાતા હૈ । ‘ તિવેમિ ’
ઇતિ બ્રવીમિ, ઇસ પદકા વ્યાખ્યાન પહિલેકે સમાન હૈ ॥ સૂ. ૧૫ ॥

॥ તૃતીય અધ્યયનકા તૃતીય ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥

ભાવાર્થ:—“ સંધિ લોગસ્સ ” એ સૂત્રથી લગાવી “ જો હંજ્ઞાણતિ ” ત્યાં
સુધી મુનિના સંબંધમાં જે કંઈ સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે તે ઉપર તે મુનિ
જે હૃદયના ભાવથી પ્રવૃત્તિયુક્ત થાય છે તેા એ નિશ્ચિત છે કે તે અવશ્ય જ
રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને આ ચૌદ (૧૪) રાજૂ પ્રમાણલોકમાં ચાર ગતિ-
ઓના ભ્રમણથી મુક્ત થઈ બચે છે ‘તિવેમિ’ ઇતિ બ્રવામિ—આ પદનુ વ્યાખ્યાન
પહેલા સમાપ્ત છે. ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥



। તૃતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થ ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशके “न केवलं पापकर्मानाचरणेन मुनिर्भवति, किंतु-अप्रमादशुभभावनापूर्वकसंयमानुष्ठानादेवे”-ति प्रतिबोधितं, तत्र शुभभावना=शुभाध्यवसायः, स च कषायवमनाद् भवति । तस्माद् वान्तवत् कषायास्त्याज्या इति बोधयितुं चतुर्थमुद्देशकं कथयन्नाद्यं सूत्रमाह ‘से वंता’ इत्यादि ।

यद्वा-श्रुतचारित्रलक्षणधर्मे जागरूको वैरोपरतः सन् जार्तिं वृद्धिं च विदित्वा निष्कर्मदर्शी यो लोकालोकप्रपञ्चात् प्रमुच्यते, स पुनरेवं प्रमुच्यते इति बोधयितुमाह-‘से वंता’ इत्यादि ।

તૃતીય અધ્યયનના ચતુર્થ ઉદ્દેશ ।

ત્રીસરે અધ્યયનકે ત્રીસરે ઉદ્દેશમેં “કેવલ પાપકર્મકે નહીં કરનેસે મુનિ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમકે અનુષ્ઠાનસે હી મુનિ-અવસ્થા પ્રાપ્ત હોતી હૈ ” યહ વિષય સમજાયા ગયા હૈ । અવ-“શુભભાવના શુભઅધ્યવસાયરૂપ હૈ । ઉસ શુભઅધ્યવસાયકી પ્રાપ્તિ કષાયોંકે ત્યાગસે હી હોતી હૈ । ઇસલિયે “વાન્ત-વમન કિયે હુઅ અન્નકી તરહ કષાય છોડને યોગ્ય હૈં” -ઇસ વિષય કો સમજાનેકે લિયે ઇસ ચતુર્થ ઉદ્દેશકકી પ્રરૂપણા કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈં-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમેં જાગરૂક સંયમી વૈરસે રહિત હોકર તથા જન્મ ઔર બાલ્યાદિ-અવસ્થાઓંકો દુઃખસહભાવિની જાન કર નિષ્કર્મદર્શી હોતા હૈ વહ લોગ મેં દૃશ્યમાન ચતુર્ગતિયોંમેં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચ

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના ત્રીજા ઉદ્દેશમાં “કેવલ પાપ કર્મ નહિ કરવાથી મુનિ થતાં નથી. પણ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમના અનુષ્ઠાનથી જ મુનિ અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે.” આ વિષય સમજાવવામા આવેલ છે. હવે શુભ ભાવના શુભ અધ્યવસાયરૂપ છે. તે શુભ અધ્યવસાયની પ્રાપ્તિ કષાયોના ત્યાગથી થાય છે. માટે વાન્ત-વમન કરેલા અન્નની માફક કષાય છોડવા યોગ્ય છે. આ વિષયને સમજાવવા માટે આ ચોથા ઉદ્દેશની પ્રરૂપણા કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ.

અથવા—જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક સંયમી વૈરથી રહિત બનીને તથા જન્મ અને બાલ્યાદિ અવસ્થાઓને દુઃખસહભાવિની બાણીને નિષ્કર્મદર્શી થાય છે તે લોકમાં દૃશ્યમાન ચતુર્ગતિયોમાં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચથી છુટી બચે છે.

મૂલમ્—સે વંતા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોભં ચ, એયં પાસગસ્સ
દંસણં, ઉવરયસત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ, આયાણં સગહભિમ ॥સૂ૦૧॥

છાયા—સ વમિતા ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ । એતત્ પશ્યકસ્ય દર્શનં
ઉપરતશસ્ત્રસ્ય પર્યન્તકરસ્ય, આદાનં સ્વકૃતમિત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—સઃ=શુભાધ્યવસાયપૂર્વકસંયમારાધનપરાયણઃ શ્રમણઃ, ક્રોધં માનં
માયાં લોભ ચ વમિતા=અપનેતા ભવતિ । અત્રૈકપદેન ક્રોધમાનમાયાલોભાનિતિ
વક્તવ્યે પૃથક્ પૃથગુપાદાનમેકૈકસ્ય ક્રોધાદેરનન્તાનુબન્ધ્યાદિભેદેન ચતુર્વિધત્વં
દર્શયતિ । તેષામુપશમો યુગપન્ન સંભવતિ, તસ્માદેકૈકસ્યોપશમાર્થં પૃથક્ પૃથક્ પ્રયત્નો

સે છૂટ જાતા હૈ । યે સવ વાતેં તીસરે ઉદ્દેશકકે અન્તિમ સૂત્રોમેં પ્રકટ કર
દી ગઈ હૈં । પરન્તુ વહ છૂટતા કૈસે હૈ ? સો કહતે હૈં—‘સે વંતા ’ ઇત્યાદિ ।

શુભાધ્યવસાયપૂર્વક સંયમકી આરાધનામેં તત્પર શ્રમણ-મુનિ
ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભકા વમિતા-અપનેતા-નાશક હોતા હૈ ।

સૂત્રમેં “ક્રોધં માનં માયાં લોભં” ઇસ પ્રકાર ઇન દ્વિતીયાન્ત પદોંકા
અલગ અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ, ડસકા કારણ ક્રોધાદિકોંમેં
ઁકઁકઁકે અનન્તાનુબન્ધી આદિકે ભેદસે ચાર-ચાર ભેદોં કો દિશ્વાના હૈ ।
અર્થાત્-સમાસ કરને પર-“ક્રોધમાનમાયાલોભાન્”-ઁસા ઁક પદ બન
જાતા હૈ, ફિર ઁી ઇસ ઁક પદકા પ્રયોગ ન કર જો પ્રત્યેક પદ સૂત્રમેં સ્વતન્ત્ર
વિભક્તિવાલે રલ્લે હૈં ડસકા કારણ ક્રોધ આદિ, અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યા-
ખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ઁવં સંજ્વલનકે ભેદસે ચાર ૨ પ્રકારકે હૈં, યહ
વતલાના હૈ । તથા ઇનકા ઉપશમ ઁક સાથ ઁક હી જગહ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ

ઁ સઘળી વાતો ત્રીજા ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રમાં તથા આ ઉદ્દેશના અન્ય સૂત્રોમાં
પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે પરન્તુ તે છુટે છે કેવી રીતે ? તે કહે છે—સે વંતા ઇત્યાદિ.

શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક સયમની આરાધનામાં તત્પર શ્રમણ-મુનિ ક્રોધ,
માન, માયા અને લોભના વમિતા-અપનેતા-નાશક બને છે.

સૂત્રમાં “ક્રોધં, માનં, માયા, લોભં” આ પ્રકારે આ દ્વિતીયાન્ત પદોના અલગ
અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કરેલ છે તેનું કારણ ક્રોધાદિકોમાં ઁક-ઁકના અનન્તાનુબન્ધી
આદિના લેહથી આર આર લેહ બતાવવાના છે. અર્થાત્ સમાસ કરવાથી “ક્રોધમાન-
માયાલોભાન્” ઁવું ઁક પદ બને છે તો પણ આ ઁક પદનો પ્રયોગ ન કરીને
ઁ પ્રત્યેક પદ સૂત્રમાં સ્વતંત્ર વિભક્તિવાળાં રાખેલ છે તેનું કારણ ક્રોધ આદિ-
અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને સંજ્વલનના લેહથી આર આર
પ્રકારે છે, તે બતાવવાનું છે તથા તેનો ઉપશમ ઁક સાથે ઁક જ જગ્યા ઉપર

વિધેય इति भावः । किं च-परमार्थतो मुनित्वं क्रोधादिकषायवमनादेव संपद्यते, नान्यथेति स्वबुद्ध्या नाहं कथयामि । किंतु तीर्थंकरस्य श्रीवर्धमानस्वामिनो निरावरणज्ञानत्वाद् दृष्टिपथावतीर्णमिति बोधयितुमाह-‘एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ इत्यादि । एतत्=यदुक्तं क्रोधादिवमनकर्ता मुनिर्भवतीति, तदेतत् पश्यकस्य=पश्यति निरावरणज्ञानत्वाद् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकस्तीर्थंकरः श्रीवर्धमानस्वामी, तस्य दर्शनम्=केवलालोकेनावलोकनम्, तदुपदेशान्मया ज्ञातमेतदिति भावः ।

भिन्न ૨ समयमें भिन्न ૨ गुणस्थानोंमें होता है । इस कारण इनके प्रत्येक का उपशम करनेके लिये पृथक्-पृथक्-रूपसे प्रयत्न करना पड़ता है । इस समस्त अभिप्रायको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रमें क्रोधादिक पदोंको असमा-सरूपसे स्वतन्त्र विभक्तिमें रखा है ।

તથા-પરમાર્થ દૃષ્ટિસે મુનિપના ક્રોધાદિકષાયોં કા નિગ્રહ કરનેસે હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, અન્ય રીતિસે નહીં । ઇસ વાતકો સુધર્મા સ્વામી કહતે હૈ-હે જમ્બૂ ! મૈં અપની નિજી કલ્પનાસે નહીં કહતા હૂં કિન્તુ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીને કિ જિનકા જ્ઞાન નિરાવરણ હૈ ઇસ વાતકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ, અતઃ ઉન્હીંકે કથનાનુસાર કહતા હૂં । ઇસ અપને અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમેં-“एयं पासगस्स दंसणं” પદ રખા હૈ । ક્રોધાદિક કષાયોંકા વમન કરનેવાલા હી મુનિ હોતા હૈ, યહ સિદ્ધાન્ત ભગવાન્ વર્ધમાન સ્વામીકા હૈ । “पश्यति=निरावरणज्ञानत्वात् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकः” નિરાવરણજ્ઞાનશાલી હોને સે જો સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પદાર્થોંકો

થતો નથી પણ ભિન્ન ભિન્ન સમયમાં ભિન્ન ભિન્ન ગુણસ્થાનોમાં થાય છે આથી પ્રત્યેકના ઉપશમ કરવા માટે પૃથક્-પૃથક્-રૂપથી પ્રયત્ન કરવો પડે છે. આ તેમાંના સમસ્ત અભિપ્રાયને સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રમાં ક્રોધાદિક પદોને અસમાસ-રૂપથી સ્વતંત્ર વિભક્તિમાં રાખેલ છે.

અને પરમાર્થ દૃષ્ટિથી મુનિપણું ક્રોધાદિ કષાયોના નિગ્રહ કરવાથી પ્રાપ્ત થાય છે. અન્ય રીતિથી નહિ. આ વાત માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે-હે જમ્બૂ ! મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી આ કહ્યું નથી પણ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામી કે જેનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. તેમણે આ વાતનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે, માટે તેમના કથનાનુસાર કહું છું. આ પોતાના અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં-“एयं पासगस्स दंसणं” પદ રાખેલ છે. ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરનારા જ મુનિ બને છે. એ સિદ્ધાંત લગવાન વર્ધમાન સ્વામીનો છે. “पश्यति=निरावरणज्ञानत्वात् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकः” નિરાવરણજ્ઞાનશાળી હોવાથી જે સમસ્ત

પશ્યકસ્ય વિશેષણમાહ—‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ ઇત્યાદિ । ઉપરતશસ્ત્રસ્ય=ઉપરતમ્-અપ-ગતં દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વદ્ગાદિ, ભાવશસ્ત્રં કષાયરૂપં ચ યસ્માત્ સકાશાત્ સ ઉપરતશસ્ત્ર-સ્તસ્ય, અર્થં ભાવઃ—ક્રોધાદિકષાયવમનમન્તરેણ તીર્થંકરસ્યાપિ સર્વપદાર્થાવભાસકં નિરાવરણજ્ઞાનં ન ભવતિ, એવં તદુપદેશાનુસારિણાઽન્યેન મુમુક્ષુણાઽપિ ક્રોધાદિકષા-યવમનં કરણીયમિતિ । અપરવિશેષણમાહ—‘ પર્યન્તકરસ્ય ’ ઇતિ । પર્યન્તં=સર્વથા વિનાશં કર્મણાં કરોતિ તચ્છીલથેતિ પર્યન્તકરસ્તસ્યૈતદ્ દર્શનમિતિ સમ્બન્ધઃ ।

યુગપત્-એકસાથ-જાનતે હૈં વે પશ્ય હૈં, પશ્યકો હી પશ્યક કહતે હૈં । ‘પશ્યક’ શબ્દ તીર્થંકર વર્ધમાન સ્વામીના વાચક હૈં । કેવલજ્ઞાનરૂપી આલોક (પ્રકાશ) સે દેખનેકા નામ દર્શન હૈં । ભગવાને યહ સમસ્ત વિષય અપને કેવલજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશસે પ્રત્યક્ષ દેખા હૈં । શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ ઉન્હીંકે ઉપદેશસે ઇસકો મૈને જાના હૈં અતઃ ઇસમેં અન્યથાપનકી આશંકા હો હી નહીં સકતી હૈં । ભગવાનકા જ્ઞાન નિરાવરણ કૈસે હુઆ ? ઇસ વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ ઇસ વિશેષણ કા પ્રયોગ કરતે હૈં । શસ્ત્ર દો પ્રકારકે હૈં—(૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર (૨) ભાવશસ્ત્ર । તલવાર આદિ દ્રવ્યશસ્ત્ર હૈં । ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર હૈં । જબ તક આત્માસે ભાવશસ્ત્રોંકા અભાવ-ઉચ્છેદ નહીં હોતા હૈં તબ તક જ્ઞાનમેં નિરાવરણતા નહીં આ સકતી । ભગવાન્ વર્ધમાન સ્વામીને ઇનકા અપની આત્માસે સર્વથા વિનાશ કર દિયા હૈં, ઇસીલિયે ઇનકા જ્ઞાન નિરાવરણ હૈં । દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર જિસસે સર્વથા દૂર હો શુકે

ત્રિકાળવર્તી પદાર્થોને યુગપત્-એક સાથે જાણે છે તે પશ્ય છે. પશ્યને જ પશ્યક કહેવામાં આવે છે. ‘ પશ્યક ’ શબ્દ તીર્થંકર વર્ધમાન સ્વામીના વાચક છે. કેવળજ્ઞાનરૂપી આલોક (પ્રકાશ) થી દેખવાનું નામ દર્શન છે. ભગવાને આ સમસ્ત વિષય પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી પ્રત્યક્ષ દેખેલ છે. શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે કે “ તેમના ઉપદેશથી તે જ્ઞાન મેં જાણેલ છે. માટે તેમાં અન્યથા-પણાની આશંકા બની શકતી જ નથી. ‘ ભગવાનનું ’ જ્ઞાન નિરાવરણ કેવી રીતે થયું ? આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર ‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ આ વિશેષણનો પ્રયોગ કરે છે. શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે. (૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર અને (૨) ભાવશસ્ત્ર. તલવાર આદિ દ્રવ્યશસ્ત્ર છે. ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર છે. જ્યાં સુધી આત્માથી ભાવશસ્ત્રોનો અભાવ-ઉચ્છેદ નથી થતો ત્યાં સુધી જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવી શકતી નથી.

ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીએ પોતાના આત્માથી તેનો સર્વથા વિનાશ કરી નાખેલ છે, માટે તેમનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્ર બેનાથી

યથા તીર્થંકરઃ કષાયશસ્ત્રવિનિવર્તનાત્ સકલકર્મણાં ક્ષપયિતા, એવમન્યોઽપિ તદુપદેશાનુસારી ભવ્યો ભવતીત્યાહ—‘આદાનમ્’ ઇત્યાદિ। આદાનમ્=આદીયતે =ગૃહ્યતે—આત્મપ્રદેશૈઃ સહ શ્લિષ્યતેઽષ્ટવિધં કર્મ યેન તદાદાનમષ્ટાદશપાપસ્થાનમ્, તત્સ્થિતિહેતુત્વાત્ કષાયા વાઽઽદાનં તદ્વમિતા સ્વકૃતભિદ્ ભવતિ। યઃ સ્વલુકર્મ-નામાદાનં કષાયાદિ નિરાકરોતિ, સ સ્વકૃતકર્મણાં મેત્તા ભવતીત્યર્થઃ ॥ મૂ૦૧ ॥

હૈં ઉસકા નામ ઉપરતશસ્ત્ર હૈં। જબ તક આત્માસે કષાયોંકા વમન નહીં હોગા તબ તક, ચાહે વે કોઈં ખી ક્યોં ન હોં; નિરાવરણશાલી નહીં હો સકતે। જ્ઞાનમેં જબ તક નિરાવરણતા નહીં આતી હૈ તબ તક કિસી ખી પદાર્થકા સાક્ષાત્કાર નહીં હો સકતા હૈ। અતઃ સમસ્ત પદાર્થોંકો હસ્તામલક-વત્ પ્રકટ કરનેવાલા જ્ઞાન સર્વજ્ઞકો કષાયોંકે વમનસે હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ। જબ યહ સિદ્ધાંત નિશ્ચિત હૈ તો ઉન્હીંકે ઉપદેશાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલેઅન્ય મોક્ષાભિલાષીજનકો ખી ક્રોધાદિક કષાયોંકા વમન કરના આવશ્યક હૈ। ક્રોધાદિક કષાયોંકે વમન કિયે વિના જ્ઞાનમેં નિરાવરણતા નહીં આતી હૈ। ઇસકી પુષ્ટિ—‘પલિયંતકરસ્સ-પર્યન્તકરસ્ય’ ઇસ પદસે કરતે હૈં। યદ્યપિ યહ પદ ષષ્ઠયન્ત હૈં ઓર પદ્યકકે વિશેષણરૂપસે હી પ્રયુક્ત હુઆ હૈં, પરન્તુ યહ ઇસ વાતકી ઘોષણા કરતા હૈં કિ તીર્થંકર કષાયરૂપ ભાવ-શસ્ત્રોંકે નાશસે હી સકલ કર્મોંકે નાશક હુએ હૈં। અતઃ ક્રોધાદિક કષાયોંકા નાશ સકલ કર્મોંકે નાશ હોનેમેં તથા ઘાતિયાકે નાશમેં એવં કેવ-લજ્ઞાનરૂપી નિરાવરણ જ્ઞાનકી પ્રાપ્તિમેં કારણ હૈં। ઇસ પ્રકાર પરમ્પરાસમ્બ-

સર્વથા દૂર થઈ ચૂકેલ છે તેનું નામ ઉપરતશસ્ત્ર છે, જ્યાં સુધી આત્માથી કષાયોનું વમન નહિ થાય ત્યાં સુધી, ભલે તેઓ કોઈ પણ કેમ ન હોય, નિરાવરણજ્ઞાનશાળી બની શકતા નથી. જ્ઞાનમાં જ્યાં સુધી નિરાવરણતા નથી આવતી ત્યાં સુધી કોઈ પણ પદાર્થનો સાક્ષાત્કાર થતો નથી. માટે સમસ્ત પદાર્થોને હસ્તામલકવત્ પ્રગટ કરવાવાળું જ્ઞાન સર્વજ્ઞને કષાયોના વમનથી જ પ્રાપ્ત થાય છે. જ્યારે આ સિદ્ધાંત નિશ્ચિત છે તો તેના ઉપદેશાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અન્ય મોક્ષાભિલાષીજનને પણ ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરવું આવશ્યક છે. ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કર્યા વગર જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવતી નથી. તેની પુષ્ટિ ‘પલિયંતકરસ્સ-પર્યન્તકરસ્ય’ આ પદથી કરે છે, જે કે આ પદ ષષ્ઠયન્ત છે, અને પર્યન્તના વિશેષણરૂપથી જ પ્રયુક્ત થયેલ છે. તો પણ આ એ વાતની ઘોષણા કરે છે કે તીર્થંકર કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રોના નાશથી જ સકળ કર્મોના નાશક બનેલ છે. માટે ક્રોધાદિક કષાયોનો નાશ સકળ કર્મોના નાશમાં તથા ઘાતિયાના નાશમાં તેમજ કેવળજ્ઞાનરૂપી નિરાવરણ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં કારણ છે. આ પ્રકારે પરમ્પરા-સંબંધથી કષાયોનું

નન્વસ્તુ હેયોપાદેયોપદેશેન પરોપકારકરણાત્ તીર્થંકરત્વમ્, કથમેતાવતા સર્વજ્ઞતા તસ્યેતિ चेन्न, यतः सम्यग्ज्ञानरहितो यथोचितं हेयोपादेयोपदेशं कर्तुं न प्रभवति, यथावस्थितैकपदार्थज्ञानमपि न भवति सर्वज्ञतामन्तरेणेति प्रतिबोधयितुमाह—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

यद्वा—ननु ‘ एतत् पश्यकस्य दर्शनम् ’ इति यदुक्तं तत्र स पश्यकः किमेकमेव पदार्थं जानाति, आहोस्वित्—अनेकम् ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

બન્ધસે કષાયોંકા વમન નિરાવરણ જ્ઞાનકા ઉત્પાદક માના જાતા હૈ । જો સકલ કર્મોંકા વિનાશ કરતા હૈ, અથવા કર્મોંકે વિનાશ કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ—“ પર્યન્તકર ” હૈ, ઉસકા યહ સિદ્ધાન્ત હૈ । જૈસે તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રની નિવૃત્તિસે સકલ કર્મોંકે વિનાશક હુએ હૈં ઉસી તરહસે ઉનકે ઉપદેશાનુસાર અપની પ્રવૃત્તિ રાખનેવાલા અન્ય ભવ્યજન ભી સકલ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ । હસી અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમૈં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રાખા હૈ । આત્માકે પ્રદેશોંકે સાથ અષ્ટવિધ કર્મ જિનસે દૂધ—પાણીની તરહ એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોકર ઠહરતે હૈં ઉનકા નામ આદાન હૈ । વે અઠારહ પાપસ્થાન હૈં । અથવા કર્મોંમૈં સ્થિતિબન્ધકા કારણ હોનેસે કષાયેં ભી આદાન હૈં, હનકા વમન કરનેવાલા ‘ સગડવિમ્ ’ સ્વકૃતભિદ્—હોતા હૈ, અર્થાત્ જો ભવ્ય કર્મોંકે આદાનભૂત કષાયાદિકોંકા નિરાકરણ—વિનાશ કરતા હૈ વહ અપને કિયે હુએ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

વમન નિરાવરણ જ્ઞાનનુ ઉત્પાદક માનવામાં આવે છે. જે સકળ કર્મોંનો વિનાશ કરે છે અથવા કર્મોંનો વિનાશ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેનું નામ “ પર્યન્તકર ” છે. તેનો એ સિદ્ધાંત છે. જેમ તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રની નિવૃત્તિથી સકળ કર્મોંના વિનાશક બને છે તે માફક તેના ઉપદેશાનુસાર પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખવાવાળા અન્ય ભવ્યજન પણ સકળ કર્મોંના વિનાશક બને છે. આ અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રાખેલ છે. આત્માના પ્રદેશોની સાથે અષ્ટવિધ કર્મોં જેનાથી દૂધ—પાણીની માફક એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ બનીને રહે છે તેનું નામ આદાન છે તે અઠાર પાપસ્થાનક છે. અથવા કર્મોંમાં સ્થિતિબંધનું કારણ હોવાથી કષાયો પણ આદાન છે. તેનું વમન કરવાવાળા ‘ સગડવિમ્ ’—સ્વકૃતભિદ્ થાય છે. અર્થાત્ જે ભવ્ય કર્મોંના આદાનભૂત કષાયાદિકોંનું નિરાકરણ—વિનાશ કરે છે તે પોતાના કરેલા કર્મોંનો વિનાશક બને છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

મૂલમ્—જે એગં જાણઈ સે સઠ્ઠં જાણઈ, જે સઠ્ઠં જાણઈ સે એગં જાણઈ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—ય એકં જાનાતિ સ સર્વં જાનાતિ, યઃ સર્વં જાનાતિ સ એકં જાનાતિ ॥ સૂ. ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઔર ઉપાદેયકા ઉપદેશ દેતે હૈં । એતાવતા પરકે ઉપકારકે કર્તૃત્વસે ઉનમેં તીર્થંકરપના ભલે હી આ જાવે । હસમેં હમેં કોઈ વિવાદ નહીં હૈ । પરન્તુ હસસે ઉનમેં સર્વજ્ઞતા કૈસે સિદ્ધ હો સકતી હૈ ? એસી શઙ્કા નહીં કરની ચાહિયે । ક્યોં કિ જબ તક આત્મા મેં પદાર્થોંકા સમ્યગ્-વાસ્તવિક જ્ઞાન નહીં હો જાતા હૈ તબ તક તીર્થંકર ભગવાન્ ઉપદેશ નહીં દેતે હૈં । જીવોંકો ઉપદેશ દેના સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્ કેવલજ્ઞાનકે આધીન હૈ । કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોનેપર ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોંકા વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમેં પ્રતિબિમ્બકી તરહ પ્રતિભાસિત હોને લગતા હૈ । કેવલજ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ હી સર્વજ્ઞતા હૈ । હસ સર્વજ્ઞતાકે વિના એક પદાર્થકા બી વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત નહીં હો સકતા હૈ । હસ વાત કો સમજ્ઞાનેકે લિયે કહતે હૈં—‘જે એગં’ હત્યાદિ ।

અથવા—યહ જો અબી કહા હૈ કિ—‘એયં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્ પશ્યકસ્ય દર્શનમ્’ સો શિષ્ય યહાં પર યહ પ્રશ્ન કરતા હૈ કિ—સર્વજ્ઞ ક્યા એક હી પદાર્થ કો જાનતા હૈ યા અનેક પદાર્થોં કો ?’ હસ પ્રકારકે શિષ્યકે પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હૈં—‘જે એગં’ હત્યાદિ ।

તીર્થંકર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઔર ઉપાદેયકા ઉપદેશ આપે છે. એતાવતા બીજના ઉપકારના કર્તૃત્વથી તેમાં તીર્થંકરપણું ભલે આવી બીજ તેમાં અમને કોઈ વિવાદ નથી, પરંતુ તેથી તેમાં સર્વજ્ઞતા કેવી રીતે સિદ્ધ થાય છે ? એવી શંકા કરવી બેઠીએ નહિ. કારણ કે બીજાં સુધી આત્મામાં પદાર્થોંનું સમ્યગ્-વાસ્તવિક જ્ઞાન થતું નથી ત્યાં સુધી તીર્થંકર ભગવાન્ ઉપદેશ આપતા નથી. જીવોંકો ઉપદેશ આપવો સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્ કેવળજ્ઞાનને આધીન છે. કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવાથી ત્રિકાળવર્તી સમસ્ત પદાર્થોંનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમાં પ્રતિબિંબની માફક પ્રતિભાસિત થવા માંડે છે કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જ સર્વજ્ઞતા છે. આ સર્વજ્ઞતા વિના એક પણ પદાર્થનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત થઈ શકતું નથી. આ વાતને સમજાવવા માટે કહે છે—‘જે એગં’ હત્યાદિ.

અથવા એ બે હમણા કહ્યું કે ‘એયં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્ પશ્યકસ્ય દર્શનમ્’ જેથી શિષ્ય આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન કરે છે કે—સર્વજ્ઞ શું એક જ પદાર્થને બોલે છે કે અનેક પદાર્થોંને ? આ પ્રકારના શિષ્યના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે ‘જે એગં’ હત્યાદિ.

ટીકા-યઃ એકં=જીવદ્રવ્યમ્ અજીવદ્રવ્યં વા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ, અતીતાનાગ-
તવર્તમાનૈઃ સર્વપર્યાયૈશ્ચ જાનાતિ, સ સર્વ જાનાતિ । સકલપદાર્થસમ્યગ્જ્ઞાનમન્તરેણ-
કસ્ય કસ્યચિત્ પદાર્થસ્ય દ્રવ્યક્ષેત્રાદિનાડતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયતથ જ્ઞાનં ન
સંભવતીતિ ભાવઃ । ઇમમેવાર્થં વોધયિતું કાર્યકારણભાવં પ્રદર્શયન્નાહ—‘ યઃ સર્વ
જાનાતિ ’ ઇત્યાદિ । યઃ સર્વ=લોકાન્તર્વર્તિ સકલં પદાર્થજાતં જાનાતિ, સ એકં
દ્રવ્યં ઘટાદિકં જાનાતિ । અતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયૈસ્તત્તત્સ્વભાવપ્રાપ્ત્યાજ્ઞા-

જો એક જીવ દ્રવ્યકો, અથવા અજીવ દ્રવ્યકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર
ભાવસે એવં અતીત અનાગત ઔર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી પર્યાયોંસે યુક્ત
જાનતા હૈ વહ સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ । સમસ્ત પદાર્થોં કો સમ્ય-
ગ્જ્ઞાન હુએ વિના કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર ભાવસે
એવં અતીત અનાગત ઔર વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોં સે નહીં જાના જા સકતા
હૈ । હસી અભિપ્રાયકો સમજ્ઞાનેકે લિયે કાર્યકારણભાવ દિખલાતે હુએ
સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ જે સર્વ જાણહ ’ ‘ યઃ સર્વ જાનાતિ ’ ઇતિ । જો હસ
લોકકે ભીતરકે સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ વહ એક ઘટાદિક દ્રવ્યકો
ભી જાનતા હૈ । ભૂત ભવિષ્યત્ ઔર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી જિતની ભી
ઉસ દ્રવ્યકી પર્યાયેં હૈ વે સમસ્ત ઉસ દ્રવ્યકે સ્વભાવ હૈ । હન પર્યાયોંસે
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાલા હોતા રહતા હૈ । હસ પ્રકાર દ્રવ્યમેં ઉનર
પર્યાયોંસે તત્તત્સ્વભાવકી પ્રાપ્તિ હોનેસે વહ દ્રવ્ય અપને અનાદિ અનન્ત-
કાલપનેસે (હસ રૂપસે હુઆ, હસ રૂપસે હો રહા હૈ ઔર હસ રૂપસે

જે એક જીવદ્રવ્યને, અથવા અજીવદ્રવ્યને દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી
તેમજ અતીત અનાગત અને વર્તમાનકાળ-સંબંધી સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત
જાણે છે તે સમસ્ત પદાર્થોને જાણે છે, સમસ્ત પદાર્થોનું સમ્યગ્જ્ઞાન થયા વિના
કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થનું જ્ઞાન દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી અને અતીત
અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોથી થઈ શકતું નથી, આ અભિપ્રાય સમ-
જાવવા માટે કાર્ય-કારણ ભાવ દરસાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—“ જે સર્વ જાણહ-
યઃ સર્વ જાનાતિ ” ઇતિ. જે આ લોકના ભીતરના સમસ્ત પદાર્થોને જાણે છે
તે એક ઘટાદિક દ્રવ્યને પણ જાણે છે. ભૂત ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળ સંબંધી
જેટલી પણ તે દ્રવ્યની પર્યાયો છે તે સમસ્ત, દ્રવ્યનો સ્વભાવ છે. તે પર્યાયોથી
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાળા બનતા રહે છે. આ પ્રકારે દ્રવ્યમાં તે તે પર્યા-
યોથી તત્તત્સ્વભાવની પ્રાપ્તિ થવાથી તે દ્રવ્ય પોતાના અનાદિ અનન્તકાળમણથી
(આ રૂપથી બન્યા; આ રૂપથી બને છે અને હવે આ રૂપથી બનશે) તે તે

ધનન્તકાલતયા સમસ્તવસ્તુસ્વભાવપરિજ્ઞાનાદિત્યર્થઃ । એકસ્ય વસ્તુનઃ સમગ્રસ્વરૂપં સર્વજ્ઞ એવ જાનાતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

એવ જાનન્ સર્વજ્ઞ એવ સર્વજીવોપકારકગુણપદેશં દદાતીત્યાહ—‘સન્વઓ’ ઇત્યાદિ ।
યદ્વા—સર્વજ્ઞઃ શિષ્યેભ્યઃ પ્રમાદદોષાન્ અપ્રમાદગુણાંશ્ચ કથયતિ—‘સન્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સન્વઓ પમત્તસ્ય અતિથિ ભયં, સન્વઓ અપ્પમત્તસ્ય નતિથિ ભયં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—સર્વતઃ પ્રમત્તસ્ય અસ્તિ ભયં, સર્વતોઽપ્રમત્તસ્ય નાસ્તિ ભયમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—પ્રમત્તસ્ય=મદ્યાદિપ્રમાદયુક્તસ્ય સર્વતઃ=દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ ભયં=ભયકારિત્વાત્ કર્મ અસ્તિ । પ્રમાદવાન્ સ્વલુ જ્ઞાનાવરણીયાદિકમષ્ટવિધં કર્મોપચિનો-

હોગા) ઉન ઉન સ્વભાવોવાલા જાન લિયા જાતા હૈ । અર્થાત્ એક વસ્તુકા સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ હી જાનતે હૈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ઇસ પ્રકાર સમસ્ત દ્રવ્યોંકો જાનનેવાલે સર્વજ્ઞ હી સમસ્ત જીવોંકે લિયે હિતકારી ઉપદેશ દેતે હૈ । ઇસ વાતકો સૂત્રકાર દિશ્વલાતે હૈ—‘સન્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—સર્વજ્ઞ સ્વયં અપને શિષ્યોંકે પ્રતિ પ્રમાદકે દોષોંકો ઓર અપ્રમાદકે ગુણોંકો પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘સન્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી વ્યક્તિ, દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવસે ભય-ભયકારી હોનેસે કર્મ-કા બન્ધ કરતા હૈ । ‘ભય’ શબ્દકા અર્થ કર્મ હૈ, ક્યોં કિ કર્મ જીવોંકો સદા ભયકારી હોતે હૈ ઇસલિયે યહાં કાર્યમેં કારણ કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । ભય, કર્મોં કા કાર્ય હૈ ઓર કર્મ, ભય કે કારણ હૈ । પ્રમાદવાલા વ્યક્તિ નિશ્ચયસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકાર

સ્વભાવોવાળા બાણી લેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એક વસ્તુનું સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ જ બાણી છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આ પ્રકારે સમસ્ત દ્રવ્યોને બાણીવાળા સર્વજ્ઞ જ સમસ્ત જીવોને માટે હિતકારી ઉપદેશ દે છે. આ વાતને સૂત્રકાર બતાવે છે—‘સન્વઓ’ ઇત્યાદિ.

અથવા સર્વજ્ઞ સ્વયં પોતાના શિષ્યો પ્રતિ પ્રમાદના દોષોને અને અપ્રમાદના ગુણોને પ્રદર્શિત કરે છે—‘સન્વઓ’ ઇત્યાદિ.

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી જીવ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી ભય-ભયકારી હોવાથી કર્મનો બંધ કરે છે. ‘ભય’ શબ્દનો અર્થ કર્મ છે. કારણ કે કર્મ જ જીવોને સદા ભયકારી હોય છે. માટે આ ઠેકાણે કાર્યમાં કારણોને ઉપચાર કરેલ છે. ભય, કર્મોનું કાર્ય છે અને કર્મ, ભયનું કારણ છે. પ્રમાદવાળો જીવ

તિ । સ ચ દ્રવ્યતઃ સર્વેરાત્મપ્રદેશૈઃ કર્મ ગૃહ્ણતિ, ક્ષેત્રતઃ=પદ્મુ દિશુ, કાલતોડ્નુ-સમયં, ભાવતોડ્ઘાદશમિઃ સ્થાનૈઃ, પञ्चविधेन वा प्रमादेन, एवं કર્મ સર્વતઃ પ્રમાદિનં વધ્નાતીત્યર્થઃ । યદ્વા-‘સર્વતઃ’ इत्यस्य ‘सर्वत्र’ इत्यर्थः । यथा चौरस्य करच्छेदन-शूलादिभेदन-कशादिताडन-कठिनतरराजकीययन्त्रणादिभयमस्मिन् लोके, परलोकेऽपि नरकनिगोदादियातनाभयं भवति, तथा-प्रमत्तस्य सर्वत्र भयमित्यर्थः । प्रमादरहितस्य तु नास्ति भयमित्याह-‘सर्वतोऽप्रमत्तस्य’ इत्यादि । अप्रमत्तस्य=प्रमादरहितस्य आत्मकल्याणाय संयमाराधने जाग्रत इत्यर्थः, सर्वतः=ऐहिकामुष्मिकदुःखकारणात् संसाराद् भयं नास्ति । प्रमादरहितस्य संसारो न भवतीत्यर्थः ॥ मृ० ३ ॥

કે કર્મોંકા બન્ધક હોતા હૈ । વહ દ્રવ્યકી અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંસે કર્મોંકા ગ્રહણ કરનેવાલા હોતા હૈ । ક્ષેત્રકી અપેક્ષા પદ્-છહ-દિશાઓં મેં, કાલકી અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમેં, ભાવકી અપેક્ષા અઠારહ (૧૮) પાપ સ્થાનોંસે, અથવા પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદસે કર્મોંકા બન્ધક હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ઉસકે સવ તરફસે કર્મોંકા બન્ધ હોતા રહતા હૈ । અથવા ‘સર્વતઃ’ ‘સર્વ પ્રકારસે’ ઇસકે સ્થાનમેં ‘સર્વત્ર’ એસા અર્થ કરને પર-પ્રમાદી કે લિયે ‘સર્વત્ર’-સવ જગહ-ભય હોતા હૈ, એસા અર્થબોધ હોતા હૈ । યહાં “ભય” શબ્દકા અર્થ ‘ડર’ હૈ જિસ પ્રકાર ચોરકે લિયે ઇસ લોકમેં હાથોંકે કટને, શૂલાદિસે ભિદને, કશા-ચાતુક આદિસે તાડને આદિ રૂપસે કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓં-કણ્ટોં-કે ભોગને કા ભય હોતા હૈ, તથા પરલોકમેં મી નરક-નિગોદાદિકકે અનેક કણ્ટોંકે સહનેકા ભય હોતા હૈ, ઇસીતરહસે પ્રમાદી પ્રાણીકો સર્વત્ર ભય હી ભય હૈ । આત્મકલ્યાણ

નિશ્ચયથી જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મોંના બંધક થાય છે. તે દ્રવ્યની અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી કર્મોંના ગ્રહણ કરવાવાળા બને છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષા પદ્-છ દિશાઓમાં, કાળની અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમાં, ભાવની અપેક્ષા અઠાર પાપસ્થાનોથી અથવા પાંચ પ્રકારના પ્રમાદથી કર્મોંના બંધક થાય છે, આ પ્રકારે તેને સઘળી બાબતથી કર્મોંના બંધ થતો રહે છે. અથવા ‘સર્વતઃ’=સર્વપ્રકારથી તેના સ્થાનમાં ‘સર્વત્ર’ એવો અર્થ કરવાથી પ્રમાદી માટે ‘સર્વત્ર’ દરેક જગ્યાએથી લય થાય છે, એવો અર્થબોધ થાય છે. આ ઠેકાણે લય શબ્દનો અર્થ ‘ડર’ છે જે પ્રકારે ચોર માટે આ લોકમાં ખડગાદિથી હાથોનું કાપવું, શૂલાદિથી લેદાવું, કશા-ચાતુક આદિથી માર ખાવો આદિરૂપ કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓ-કણ્ટો-ને ભોગવાનો લય હોય છે, તથા પરલોકમાં પણ નરકનિગોદાદિક અનેક કણ્ટોને સહનકરવાનો લય હોય છે તેવી રીતે પ્રમાદી પ્રાણીને સર્વત્ર લય જ લય છે.

इह कषायाधिकारो वर्तते, तद्वमनं द्विविधम्—उपशमनवमनं, क्षपणवमनं च । तत्रोपशमनवमनं नामनमिति पर्यायस्तदभिप्रायेणाह—‘ जे एगं नामे ’ इत्यादि ।

यद्वा—कषायाभावात् प्रमादाभावः, तदभावाच्च सकलमोहनीयाऽभावः, तस्मात् सकलकर्मक्षयः, तदेवमेकाभावे सति बहूनामभावः, बहूनामभावे सति एकाभावः; इत्येवं गतप्रत्यागतरूपेण कार्यकारणभावं दर्शयितुमाह—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

करनेके लिये जो संयमकी आराधनामें जागरूक हैं ऐसे अप्रमादी प्राणीको कहीं भी भय नहीं होता है । वे न इस लोकमें दुःखी होते हैं और न परलोकमें । अधिक क्या कहा जाय ? वे इस संसारके भयसे ही निर्मुक्त हो जाते हैं । इहलोकसम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी दुःखका कारण यह संसार ही उन्हें फिरसे प्राप्त नहीं होता, अर्थात् वे सदा के लिये मुक्त हो जाते हैं ॥ सू० ३ ॥

यहां पर कषायका अधिकार है । कषायका वमन दो प्रकारका है—(१) उपशमनवमन, (२) क्षपणवमन । कषायोंका उपशम होना यह उपशमनवमन है, तथा कषायोंका क्षय होना यह क्षपणवमन है । उपशमन-वमनका पर्यायान्तर शब्द नामन है । इस अभिप्रायसे कहते हैं—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

अथवा—कषायोंके अभावसे प्रमादका अभाव, प्रमादके अभावसे समस्त मोहनीयका अभाव, उससे सकल कर्मोंका क्षय होता है । इस प्रकार एकका अभाव होने पर बहुतोंका अभाव, बहुतोंका अभाव होने

આત્મકલ્યાણ કરવા માટે જે સંયમની આરાધનામાં બાગરૂક છે એવા અપ્રમાદી પ્રાણીઓને કાંઈ પણ ભય હોતો નથી. તેઓ નથી આ લોકમાં દુઃખી થતાં નથી પરલોકમાં દુઃખી થતાં અધિક શું કહેવું ? તેઓ આ સંસારના ભયથી જ નિર્મુક્ત થઈ બચે છે. આ-લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખનું કારણ આ સંસાર જ તેને ફરીથી પ્રાપ્ત થતો નથી, અર્થાત્ તે સદાને માટે મુક્ત થઈ બચે છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ ઠેકાણે કષાયનો અધિકાર છે કષાયોનું વમન બે પ્રકારે છે. (૧) ઉપશમવમન (૨) ક્ષપણવમન કષાયોનું ઉપશમ થવું તે ઉપશમવમન છે. તથા કષાયોનું ક્ષય થવું તે ક્ષપણવમન છે. ઉપશમવમનનો પર્યાયાન્તર શબ્દ નામન છે. આ અભિપ્રાયથી કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ.

અથવા—કષાયોના અભાવથી પ્રમાદનો અભાવ, પ્રમાદના અભાવથી સમસ્ત મોહનીયનો અભાવ, તેનાથી સકળ કર્મોનો ક્ષય થાય છે. આ પ્રકારે એકનો અભાવ થવાથી બહુનો અભાવ, બહુનો અભાવ થવાથી એકનો અભાવ થાય છે.

મૂલમ્—જે એગં નામે સે બહું નામે, જે બહું નામે સે એગં નામે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—યઃ એકં નામયતિ સ બહૂન્ નામયતિ, યો બહૂન્ નામયતિ, સ એકં નામયતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—યઃ એકમ્=અનન્તાનુવન્ધિનં ક્રોધં નામયતિ=ઉપશમયતિ સ બહૂન્=અપ્રત્યાખ્યાનાદીન્ તદ્ભેદાન્ માનાદીન્ વા નામયતિ ।

યદ્વા—યઃ એકં સપ્રકૃતિકં મોહનીયં નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ બહૂનિ=તદવશિષ્ટાનિ સપ્રકૃતિકાનિ જ્ઞાનાવરણીયાદિકાનિ સર્વાણ્યપિ નામયતિ=ઉપશમયતિ । યો બહૂન્=સ્થિતિશેપાન્ નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ એકમ્=અનન્તાનુવન્ધિનં ક્રોધં મોહનીયં વા નામયતિ=ઉપશમયતિ । અત્ર નામનમ્-ઉપશમઃ ક્ષપણં વા । તથા ચાયમપ્યર્થઃ—

પર એકકા અભાવ હોતા હૈ । હસ પ્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) સે કાર્ય-કારણ ભાવકો દિશ્વાનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ જે એગં ’ હત્યાદિ ।

જો અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા એવં અનન્તાનુવન્ધી લોભાદિકોંકા ઉપશમ કરતા હૈ । યદ્વા—જો એક મોહનીય કર્મકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ ઉસસે અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોંકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । જો સ્થિતિસે અવશિષ્ટ કર્મોંકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ એક અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । યહાં નામન શબ્દકા અર્થ ઉપશમન અથવા ક્ષપણ હૈ । ઉપશમનકી અપેક્ષાસે યહ વ્યાખ્યા કી હૈ । ક્ષપણકી અપેક્ષાસે વ્યાખ્યા હસ પ્રકાર હૈ—

આ પ્રકારે ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) થી કાર્ય કારણ ભાવને બતાવવા માટે કહે છે—‘ જે એગં ’ હત્યાદિ.

જે અનન્તાનુવન્ધી કષાયોનો અને અનન્તાનુવન્ધી લોભાદિનો ઉપશમ કરે છે, આ ઠેકાણે જે એક મોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરે છે તે તેનાથી અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોનો પણ ઉપશમ કરે છે. જે સ્થિતિથી અવશિષ્ટ કર્મોનો ઉપશમ કરે છે તે એક અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયનો પણ ઉપશમ કરે છે. આ ઠેકાણે નામન શબ્દનો અર્થ ઉપશમ અથવા ક્ષપણ છે. ઉપશમની અપેક્ષાથી આ વ્યાખ્યા કરેલ છે. ક્ષપણની અપેક્ષાથી વ્યાખ્યા આ પ્રકારે છે—

યઃ એકમ્-નામયતિ=ક્ષપયતિ, સ વહૂનપિ નામયતિ=ક્ષપયતિ । એકસ્યાનન્તાનુ-
વન્ધિનઃ ક્રોધસ્ય ક્ષપકો વહૂનાં=તદ્ભેદાનામપ્રત્યાખ્યાનાદીનાં માનાદીનાં વા કષા-
યાણાં ક્ષપકો ભવતીતિ । યદ્વા-એકસ્ય મોહનીયસ્ય ક્ષપકઃ, વહૂનાં તદવશિષ્ટાનાં સર્વાસાં
પ્રકૃતીનાં ક્ષપકો ભવતીતિ । તથા-યો વહૂનાં ક્ષપકઃ, સ એકસ્ય ક્ષપક ઇતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

વહુકર્મોપશમેનૈકકર્મોપશમેન વા વિના મોહનીયસ્યોપશમો ન ભવતિ, તથા વહુ-
કર્માભાવમન્તરેણ એકકર્માભાવમન્તરેણ વા મોહનીયકર્મણઃ ક્ષયો ન ભવતિ । ત-
સ્માદેવ કારણાજ્જન્તુનાં વહુવિધદુઃસ્વસમુદ્ભવ ઇત્યાહ-‘ દુક્ત્વં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-દુક્ત્વં લોગસ્સ જાણિન્તા વંતા લોગસ્સ સંજોગં જંતિ
ધીરા મહાજાણં, પરેણ પરં જંતિ, નાવકંત્વંતિ જીવિયં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા-દુઃસ્વં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા વાન્ત્વા લોકસ્ય સંયોગં યાન્તિ ધીરા મહાયાનં,
પરેણ પરં યાન્તિ, નાવકાહ્નન્તિ જીવિતમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જો એકકા ક્ષય કરતા હૈ વહુતોંકા ક્ષય કરતા હૈ । એક અન-
ન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા અથવા અપને
ભેદસ્વરૂપ માનાદિ-કષાયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । અથવા-એક મોહનીય
કર્મકા ક્ષપક વહુત-તદવશિષ્ટ (મોહનીય કર્મસે બાંકી રહી) સવ કર્મ-
પ્રકૃતિયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । इसी प्रकार जो वहुतोंका क्ષपक होता है वह
एकका भी क्ષपक होता है ॥ सू० ४ ॥

વહુત કર્મોંકે ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મકે ઉપશમ વિના મોહ-
નીય કર્મકા ઉપશમ નહીં હોતા હૈ, તથા વહુત કર્મોંકે અભાવ-ક્ષય-હુએ
વિના મોહનીય કર્મકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ । इसी कारणसे प्राणियोंको
अनेक प्रकारके दुःस्वोंकी उत्पत्ति होती है । इसी बातको सूत्रकार प्रकट
करते हैं-‘ दुक्त्वं ’ इत्यादि ।

જે એકનો ક્ષય કરે છે તે બહુનો ક્ષય કરે છે. એક અનન્તાનુબંધી
ક્રોધનો ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોનો અથવા પોતાના ભેદસ્વરૂપ માનાદિ
કષાયોનો ક્ષપક થાય છે. અથવા એક મોહનીય કર્મના ક્ષપક બહુ-તદવશિષ્ટ
(મોહનીય કર્મથી બાકી રહી) સઘળી કર્મપ્રકૃતિયોનો ક્ષપક થાય છે. આ
પ્રકારે બહુનો ક્ષપક થાય છે તે એકનો પણ ક્ષપક થાય છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

બહુ કર્મના ઉપશમ વિના, અથવા એક કર્મના ઉપશમ વિના મોહનીય
કર્મનો ઉપશમ થતો નથી. તથા બહુ કર્મનો અભાવ-ક્ષય વિના, અથવા એક
કર્મનો અભાવ થયા વિના મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતો નથી. તે કારણથી પ્રાણી-
યોને અનેક પ્રકારના દુઃખોની ઉત્પત્તિ થાય છે. આ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે
છે-‘ દુક્ત્વં ’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—લોકસ્ય=પદ્ધતિવનિકાયસ્ય દુઃસ્વં=દુઃસ્વકારણં કર્માસ્તીતિ જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=પુત્રકલત્રાદેસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્ચ સંયોગં=મમત્વલક્ષણં સમ્બન્ધં પરિગ્રહં વાઽષ્ટધિકર્મદેતું વાન્ત્વા=પરિત્યજ્ય ધીરાઃ=કર્મવિદારણસમર્થાં મહાયાનં=યાન્ય-નેન મોક્ષમિતિ યાનં ચારિત્રમ્, તત્ત્વ ભવકોટિદુર્લભતયા મહદસ્તીત્યાશયેન મહાયાનમિત્યુચ્યતે । યાન્તિ=ગચ્છન્તિ પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ ।

નનુ પ્રાપ્તચારિત્રસ્ય કિમેકેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, ઉત પારંપર્યેણેતિ શિષ્યજિ-જ્ઞાસાયામુભયથાઽપિ મોક્ષો ભવતીતિ વોધયિતુમાહ—‘ પરેણ પરં યાન્તિ ’ ઇતિ ।

“ इस षड्जीवनिकायरूप लोकके दुःस्वका कारण कर्म है ” ऐसा जान कर कर्मों के नाश करनेमें शक्तिशाली धीर मुनि, पुत्र स्त्री आदि से, तथा हिरण्य सुवर्ण आदिसे ‘ ममेदं ’-ममत्वभावरूप संयोगका अथवा अष्टप्रकारके कर्मोंके आस्रवके कारणरूप परिग्रहका सर्वथा त्याग कर चारित्र को अङ्गीकार करते हैं । “ यान ” शब्दका अर्थ चारित्र है—“ यान्ति अनेन मोक्षमिति यानम् ” अर्थात्-जिसके द्वारा मोक्षको प्राप्त करे उस का नाम “ यान ” है, क्योंकि इसकी प्राप्तिसे जीवोंको मुक्तिका लाभ होता है । “ यान ” के साथ जो “ महा ” विशेषण लगा हुआ है वह इसमें महत्ताका द्योतक है । चारित्रमें महत्ता इसी लिये है कि जीवोंको इसकी प्राप्ति करोड़ों भवोंमें भी दुर्लभ है । इसी अभिप्रायसे चारित्रको महायान कहा है ।

जिसको चारित्र प्राप्त हो चुका है ऐसे मुनिकी मुक्ति उसी भवसे हो सकती है ? अथवा भवपरम्परासे ?, इस प्रकारकी शिष्यकी आशङ्काका

‘ આ ‘ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકના દુઃખનું કારણ કર્મ છે.’ એવું જાણીને કર્મેના નાશ કરવામાં શક્તિશાળી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિથી, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિથી ‘મમેદં’-મમત્વભાવરૂપ સંયોગનો, અથવા અષ્ટ પ્રકારના કર્મેના આશ્રવના કારણરૂપ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરી ચારિત્રને અંગીકાર કરે છે. “યાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે. “યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્ જેના દ્વારા મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે તેનું નામ “યાન” છે, કારણ કે તેની પ્રાપ્તિથી જીવોને મુક્તિનો લાભ થાય છે. “યાન”ની સાથે જે “મહા” વિશેષણ લાગેલ છે. તે તેની મહત્તાનો દ્યોતક છે, ચારિત્રમાં મહત્તા એ માટે છે કે જીવોને તેની પ્રાપ્તિ કરેડો લવોમાં પણ દુર્લભ છે તે અભિપ્રાયથી ચારિત્રને મહાયાન કહેલ છે.

જેને ચારિત્રપ્રાપ્ત થઈ ચુકેલ છે તેવા મુનિની મુક્તિ તે લવથી થઈ શકે છે ? અથવા લવપરપરાથી ?, આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનું સમાધાન કરતાં

તથોગ્યક્ષેત્રકાલપ્રાપ્ત્યા લઘુકર્મણસ્તેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, અન્યસ્ય તુ પારમ્પર્યેણ ભવતિ, इह तदेवोच्यते—

यथा—यथाशक्तिसमाराधितसंयमा आयुषोऽन्ते सति कर्मावशेषेण सौधर्मा-
दिदेवलोकं गच्छन्ति, ततः परं पुनः कर्मभूमावार्यक्षेत्रे सुकुले जन्म लब्ध्वा श्रद्धासंय-
मादिधर्मापराधनेन सौधर्मादिदेवलોકादपि विशिष्टतरं स्वर्गमनुत्तरोपपातिकं यावत्
प्रयान्ति । ततः परं पुनरपि ततश्च्युतास्तत्समुचितमहाविदेहादिक्षेत्रं प्राप्य संपूर्ण-
श्रुतचारित्रधर्मसमाराधनेन कृत्स्नकर्मक्षयादपुनरावृत्तिकं मोक्षमुपगच्छन्ति ।

समाधान करते हुए सूत्रकार कहते हैं—उस मुनिकी मुक्ति दोनों प्रकार से होती है, इसी बातको स्पष्ट करते हैं—‘परेण परं जंति-परेण परं यान्ति’ मुक्तिप्राप्तिके योग्य क्षेत्र और कालकी प्राप्तिसे लघुकर्मी जीवों की उसी भवसे, और अन्य जीवोंकी परम्परासे-अन्य-अन्य भवोंसे मुक्ति होती है। इसी बातको टीकाकार स्पष्ट करते हैं—जैसे कितनेक जीव अपनी शक्तिके अनुसार संयमका आराधन करते हैं और संयमका आराधन करते ही वे उस भव सम्बन्धी आयु का अन्त होने पर काल कर कर्मावशेषसे सौधर्मादि देवलोकोंमें उत्पन्न होते हैं। वहांकी ऋद्धिका गृद्धिरहित हो भोग करते हैं उस भव सम्बन्धी आयुका भी अन्त करके वे कर्मभूमि आर्यक्षेत्र और सुकुलमें जन्म पा कर फिरसे श्रद्धा संयमादिक की आराधना करनेमें लवलीन होने के प्रभावसे आयुके अवसानमें सौधर्मादिक देवलोकोंसे भी आगे विशिष्टतर अनुत्तरोपपातिक विमानमें देव हो जाते हैं। वहां से च्यव कर

સૂત્રકાર કહે છે કે તે મુનિની મુક્તિ બંને પ્રકારથી થાય છે. આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—‘પરેણ પરં જંતિ-’‘પરેણ પરં યાન્તિ’ મુક્તિ પ્રાપ્તિને યોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિથી લઘુકર્મી જીવોની તે ભવથી, અને અન્ય જીવોની પરંપરાથી-અન્ય ભવોથી મુક્તિ થાય છે, આ વાતને ટીકાકાર સ્પષ્ટ કરે છે—જેવી રીતે કેટલાક જીવો પોતાની શક્તિ-અનુસાર સંયમનું આરાધન કરે છે અને સંયમનું આરાધન કરતાં કરતાં જ તે ભવસંબંધી આયુનો અંત થવાથી તે મરીને કર્માવશેષથી સૌધર્માદિ દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાંની ઋદ્ધિનો ગૃદ્ધિરહિત થઈ ભોગ કરતાં કરતાં તે ભવસંબંધી આયુનો પણ અંત કરીને તે કર્મભૂમિ આર્યક્ષેત્ર અને સુકુળમાં જન્મ પામીને ફરીથી શ્રદ્ધાસંયમાદિકની આરાધના કરવામાં લવલીન થવાના પ્રભાવથી આયુના અવસાનમાં સૌધર્માદિક દેવલોકોથી પણ આગળ વિશિષ્ટતર અનુત્તરોપપાતિક વિમાનમાં દેવ બને છે. ત્યાંથી ચલીને સંયમ આરાધનાને યોગ્ય મહાવિદેહાદિ

યદ્વા-પરેણ=ચતુર્થગુણસ્થાનેન, પરં=ચતુર્દશગુણસ્થાનં યાવત્, યાન્તિ=અધિતિષ્ઠન્તિ ।

યદ્વા—પરેણ અનન્તાનુવન્ધિકષાયક્ષયેણ, પરં=મોહનીયક્ષયં ઘાતિ-મચોપગ્રાહિ-કર્મેણાં વા ક્ષયં યાન્તિ ।

एवंभूता धीराः, जीवितं=आयुः, नावकाङ्क्षन्ति=कियद् व्यतीतं, कियदव-
शिष्टमिति न विभावयन्ति-दीर्घजीवित्वमसंयमजीवित्वं वा नेच्छन्तीत्यर्थः ॥सू०५॥

સંયમ આરાધનાકે યોગ્ય મહાવિદેહાદિ ક્ષેત્રોંમેં જન્મ પ્રાપ્ત કર ફિર સમ્પૂર્ણ શ્રુતચારિત્રધર્મકી આરાધનાકે પ્રભાવસે સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષયકર અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાન મેં જા વિરાજતે હૈં ।

भावार्थ—‘चारित्रप्राप्त मुनि उसी भवसे अथवा अन्यभव-से भी क्या मोक्ष जाते हैं?’ ऐसी शिष्यकी आशङ्काका शास्त्रकार उत्तर देते हैं कि-जो संयमकी आराधना करते हैं वे जीव उसी भवमें, अथवा उस भवमें मोक्ष न जा कर अन्य भवोंसे भी मुक्तिका लाभ कर लेते हैं । जब तक वे मुक्तिका लाभ नहीं कर लेते तब तक वे उत्तम मनुष्य-पर्याय एवं देवपर्यायमें उत्पन्न होते रहते हैं । मुक्तियोग्य क्षेत्र और काल की प्राप्ति होते ही पूर्ण संयमकी आराधनाके प्रभावसे घातिया और अधातिया कर्मोंका सर्वथा विनाश कर पंचमगति-मुक्तिका लाभ कर लेते हैं ।

अथवा—“परेण परं यान्ति” इसका यह भी अर्थ होता है कि-जो कर्मोंके नाश करनेकी शक्तिसे सम्पन्न वीर हैं वे ‘परेण’ चतुर्थ गुण-

ક્ષેત્રોમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી ફરીથી શ્રુતચારિત્ર ધર્મની આરાધનાના કારણથી સમસ્ત કર્મોંનો ક્ષય કરી અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાનમાં જઈ બિરાજે છે.

ભાવાર્થ—‘ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ તે ભવથી અથવા અન્ય ભવથી પણ શું મોક્ષ જાય છે?’ એવી શિષ્યની આશંકાનો શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દે છે કે જે સંયમની આરાધના કરે છે-તે જીવ તેજ ભવમાં અથવા તે ભવથી મોક્ષ ન જતાં અન્ય ભવોથી પણ મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. જ્યાં સુધી તે મુક્તિનો લાભ નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તે ઉત્તમ મનુષ્યપર્યાય તેમજ દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતા રહે છે, મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિ થતાં જ પૂર્ણ સંયમની આરાધનાના ભાવથી તે ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોંનો સર્વથા વિનાશ કરી પંચમગતિ-મુક્તિનો લાભ કરી લે છે.

अथवा—“परेण परं यान्ति” तेना ये पणु अर्थ थाय છે કે જે કર્મોંનો નાશ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન વીર છે તે ‘परेण’ એથા શુણ્સ્થાનથી લગાવી

સ્થાનસે લગા કર 'પર' ચૌદહવેં ગુણસ્થાનતક જાતે હૈં, અર્થાત્—
“ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” ઇન પાંચ દ્વસ્વ અક્ષરોંકે ઉચ્ચારણ કરનેમેં જિતના
સમય લગતા હૈ ઉતને સમય પ્રમાણ ઉસ ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં ઉનકી
સ્થિતિ હોતી હૈ, બાદમેં વે મુક્તિકો પ્રાસ કરતે હૈં ।

અથવા-પ્રથમ 'પર' શબ્દકા અર્થ અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય
ભી હૈ । દ્વિતીય 'પર' શબ્દકા અર્થ-મોહનીયકા નાશ, અથવા ઘાતિ
અઘાતિ કર્મોંકા વિનાશ હૈ । હસકા યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ-અનન્તા-
નુબન્ધી કષાયકે ક્ષયસે વે મોહનીય કા ક્ષય, અથવા ઘાતિ ઓર અઘાતિ
કર્મોંકા ક્ષય કરતે હૈં ।

ભાવાર્થ—વીરોંકો ચતુર્થ ગુણસ્થાનસે લગા કર જો ચૌદહવેં ગુણસ્થાન
તકકી પ્રાપ્તિ વતલાઈ ગઈ હૈ ઉસકા યહ તાત્પર્ય હૈ કિ સમકિતકી પ્રાપ્તિ
જીવોંકો ચૌથે ગુણસ્થાનમેં હો જાતી હૈ । સમકિતકા લાભ હી જીવોંકો સા-
ક્ષાત્ (ભાવચરિત્ર કી અપેક્ષાસે) યા પરમ્પરાસે મુક્તિકા કારણ હોતા હૈ ।
જિસ વ્યક્તિકો સમકિતકા લાભ હો જાતા હૈ ઉસ ભવ્યાત્માકા અર્ધપુદ્ગલ
પરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમેં રહનેકા રહતા હૈ, ઉસસે અધિક નહીં । ધીરે
વહ અપની ઉન્નતિ કરતા હુઆ આગે ૨ કે ગુણસ્થાનોં પર આરોહણ કર
પરિણામોંકી વિશુદ્ધિકે પ્રભાવસે ઘાતિયા ઓર અઘાતિયા કર્મોંકે નાશ

‘પર’ ચૌદમ્ ગુણસ્થાનક સુધી જાય છે, અર્થાત્ “ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” આ પાંચ
દ્વસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે છે તેટલા સમય પ્રમાણ
તે ચૌદમાં ગુણસ્થાનમાં તેની સ્થિતિ થાય છે, બાદમાં તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા પ્રથમ “ પર ” શબ્દનો અર્થ અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય થાય
છે. બીજો ‘ પર ’ શબ્દનો અર્થ મોહનીયનો નાશ અથવા ઘાતિ અઘાતિ કર્મોનો
વિનાશ છે. તેનો એ ફલિતાર્થ થાય છે કે અનંતાનુબંધી કષાયના ક્ષયથી મોહ-
નીયનો ક્ષય, અથવા ઘાતિ અને અઘાતિ કર્મોનો ક્ષય તે કરે છે.

ભાવાર્થ:—વીરોને ચોથા ગુણસ્થાનથી લઈને જે ચૌદમાં ગુણસ્થાન-સુધીની પ્રાપ્તિ
ખતાવવામાં આવી છે તેનો એ તાત્પર્ય છે કે સમકિતની પ્રાપ્તિ જીવોને ચોથા
ગુણસ્થાનમાં થઈ જાય છે. સમકિતનો લાભ જ જીવોને સાક્ષાત્ (ભાવચરિત્રની
અપેક્ષાથી) અગર પરંપરા-રૂપથી મુક્તિનું કારણ થાય છે. જે વ્યક્તિને સમકિતનો
લાભ થઈ જાય છે તે ભવ્યાત્માનો અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમાં
રહેવાનું રહે છે, તેનાથી અધિક નહિ. ધીરે ધીરે તે ચોતાની ઉન્નતિ કરતાં કરતાં
આગળ આગળના ગુણસ્થાનો ઉપર આરોહણ કરી પરિણામોની વિશુદ્ધિના પ્રભા-

સે પ્રાપ્ત होनेવાલી મુક્તિકા સ્વામી હો જાતા હૈ । इसी अभिप्रायको ले कर “अनन्तानुबन्धी कषायके क्षयसे मोहनीयका अथवा घाती अघाती कर्मोंका नाश कर वे मुक्तिको पाते हैं ” यह बात कही गई है, क्यों कि अनन्तानुबन्धिचतुष्क और दर्शनमोहनीयत्रिकका जब तक आत्मामें क्षय आदि नहीं होता है तब तक समकित गुणकी प्राप्ति नहीं होती है । इस लिये अनन्तानुबन्धी कषायका क्षय आदि ही मोहनीयकर्मके नाश आदिमें कारण होते हैं । मोहनीयके अभाव होते ही शेषकर्म भी बहुत शीघ्रतासे नष्ट हो जाते हैं । टीकाकारने—“परेण ” इस पदका अर्थ जो ‘अनन्तानुबन्धिकषायक्षयेण’ अर्थात्—अनन्तानुबन्धी कषायका क्षय रूप किया है, उसका अभिप्राय यह है कि शिष्यने जो यह प्रश्न किया है कि—“प्राप्तचरित्रवालेकी मुक्ति एक ही भवसे होती है या अन्य भवों से होती है ?” सो इसका समाधान “अन्य भवोंसे होती है” ऐसा तो पहिले किया जा चुका है । यहां पर तो “क्या एक भवसे होती है ?” इसका समाधान किया गया है, क्यों कि अनन्तानुबन्धिकषायचतुष्क एवं दर्शनमोहनीयत्रिकके क्षयसे जीवोंको क्षायिक—सम्यक्त्वका लाभ होता है । क्षायिकसम्यक्त्वी यदि क्षपकत्रेणि पर आरूढ होते हैं तो नियमसे उसी भवसे मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं ।

વથી ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોના નાશથી પ્રાપ્ત થવાવાળી મુક્તિનો સ્વામી થઈ જાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ‘અનંતાનુબંધી કષાયના ક્ષયથી મોહનીયનો અથવા ઘાતી અઘાતી કર્મોના નાશ કરી તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.’ એ વાત કહેવાઈ ગઈ છે. કારણ કે અનંતાનુબંધિચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકનો જ્યાં સુધી આત્મામાં ક્ષય આદિ નથી થતો ત્યાં સુધી સમકિત-ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેથી અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય આદિ મોહનીય કર્મોના નાશ આદિમાં કારણ થાય છે. મોહનીયનો અભાવ થતાં જ શેષ કર્મ પણ બહુ શીઘ્રતાથી વિનષ્ટ થઈ જાય છે. ટીકાકારે “પરેણ” આ પદનો અર્થ જે “અનન્તાનુબંધિકષાયક્ષયેણ”—અર્થાત્ અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયરૂપ કરેલ છે તેનો અભિપ્રાય છે કે શિષ્યે જે એ પ્રશ્ન કરેલ છે કે—‘પ્રાપ્તચરિત્રવાળાની મુક્તિ એક જ ભવથી થાય છે ?’ અથવા અન્ય ભવથી થાય છે.’ તો તેનું સમાધાન ‘અન્ય ભવોથી થાય છે’ એવું તો પહેલાં કહી ચુકેલ છે. આ ઠેકાણે તો ‘શું એક ભવથી થાય છે ?’ તેનું સમાધાન કરવામાં આવેલ છે. કારણ કે અનન્તાનુબંધિકષાયચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકના ક્ષયથી જીવોને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વીને ક્ષપકત્રેણી ઉપર આરૂઢ થાય છે તો તે નિયમથી તે ભવમાં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

યશ્ચાનન્તાનુવન્ધ્યાદિક્ષપણપ્રવૃત્તઃ, સ કિમેકસ્યૈવ ક્ષયે પ્રવર્તતે ઉતાનેકસ્યેત્યાહ
-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-એગં વિગિંચમાણે પુઢો વિગિંચઙ, પુઢો વિગિંચમાણે
એગં વિગિંચઙ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

એસે વીર “નાવકાઙ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્” ઇસ વાતકા વિચાર નહીં
કરતે હૈં કિ મેરી આયુ કિતની વ્યતીત હો ગઈ હૈં ઓર કિતની અવ
ઘાકી હૈં ? । ક્યોં કિ દીર્ઘ આયુષ્ય ઢી મિલા ઓર ડસમેં અસંયમ જીવન
રહા તો આત્માકા ઇસસે કોઈ હિત નહીં હો સકતા હૈં । અતઃ ડન્હેં જો
કુછ ઢી જીવન પ્રાપ્ત હોતા હૈં ડસીમેં વે સન્તુષ્ટ રહ કર અપને જીવનકો
સફલ બનાનેકા પ્રયત્ન કરતે રહતે હૈં । જિતની ઢી આયુ ડનકી વ્યતીત
હો ચુકી હૈં વહ, તથા આગે ઢી જો વ્યતીત હોતી હૈં વહ સબ આત્મોદ્ધાર
કે સદુપાયોંકે સેવન કરતે રહી વ્યતીત હોતી હૈં । અસંયમ જીવનકી
ચાહના ઇનમેં હોતી નહીં હૈં । અતઃ એસે જીવ અપની આયુકે વ્યતીત
હોનેકા ઓર ડસકે અવશિષ્ટ રહનેકા વિચાર નહીં કરતે હૈં, અર્થાત્ યે
અસંયમ જીવન ઓર દીર્ઘ જીવનકી ચાહના નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જો અનન્તાનુવન્ધી આદિકે ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત હૈં વહ ક્યા ઁકકે
હી ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? અથવા અન્યકે ઢી ક્ષય કરનેમેં
પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? ઇસ આશઙ્કાકા સમાધાન કરનેકે લિયે કહતે હૈં-‘ એગં
વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

આવા વીર “નાવકાઙ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્” ઁ વાતનો વિચાર નથી કરતા
કે મારી આયુ કેટલી વ્યતીત થઈ ગઈ છે અને હવે કેટલી બાકી છે ? કારણ
કે દીર્ઘ આયુષ્ય પણ મળે અને તેમાં અસંયમ જીવન રહ્યું તો આત્માનું તેમાં
હિત કોઈ પ્રકારે થતું નથી. માટે તેને જે કંઈ જીવન પ્રાપ્ત થાય છે તેમાં તે
સંતુષ્ટ રહી પોતાના જીવનને સફળ બનાવવા માટે પ્રયત્ન કરતા રહે છે. જેટલી
પણ આયુ તેની વ્યતીત થવાવાળી છે તે સઘળી આત્મોદ્ધારના સદુપાયોનું સેવન
કરતાં કરતાં વ્યતીત થાય છે, અસંયમ જીવનની ચાહના તેમાં થતી નથી. માટે
તેવા જીવ પોતાની આયુના વ્યતીત થવાનો તથા તેના અવશિષ્ટ રહેવાનો વિચાર
કરતા નથી. અર્થાત્ તે અસંયમ જીવન અને દીર્ઘ જીવનની ચાહના કરતા નથી.
॥ સૂ૦ ૫ ॥

જે અનન્તાનુબધી આદિનો ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત છે તે શું એકનો જ ક્ષય
કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ? અથવા અન્યનો પણ ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.
આ શંકાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ.

છાયા—एकं विवेचयन् पृथक् वेवेक्ति, पृथग् विवेचयन् एकं वेवेक्ति ॥सू०६॥

ટીકા—एकम्=अनन्तानुबन्धिनं क्रोधं, विवेचयन्=क्षपयन् क्षपकश्रेणिसमारूढः संयतः, पृथक्=अन्यदपि अनन्तानुबन्धिचतुष्टयं, मिथ्यात्व-मिश्र-सम्यक्त्व-मोहनी-यत्रयं चेति मिथ्यात्वसप्तकं, वेवेक्ति=नियमतः क्षपयति । यो बद्धायुष्कः, सोऽपि त्रीन् भवान् नातिक्रामति । तृतीये भवे नियमतो मोक्षं प्राप्नोति । अबद्धायुष्कस्तु-मोह-नीयस्य सप्तविंशति कर्माणान् नियमतः क्षपयति, चत्वारि घातिकर्माणि वा, सिध्यन् वा चत्वारि केवलिकर्माणि क्षपयति ।

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકા ક્ષય કરનેવાલા ક્ષપકશ્રેણિમેં આરૂઢ સંયત નિયમસે અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય એવં મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીય, इन सात प्रकृतियोंका क्षय करता है । जो बद्धायुष्क (आयुर्कर्मका पहले बंध कर चुका है) वह भी तीन भवों को उल्लंघन नहीं करता, अर्थात् तृतीय भवमें नियमसे मुक्तिका लाभ कर लेता है । अबद्धायुष्क—(जिसने पहले आयुर्कर्मका बन्ध नहीं किया है वह) जीव मोहनीय कर्मकी २७ सत्ताईस प्रकृतियोंका नियमसे नाश करता है । अथवा चार घातिया कर्मोंका नाश कर के अवशिष्ट चार अघातिया कर्मोंका भी नाश कर देता है ।

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિયોં કે ક્ષયસે જિસને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકા લાભ કિયા હૈ, ઔર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકો લે કર ક્ષપકશ્રેણિ પર ચઢા હૈ उस जीवकी मुक्ति नियमतः उसी भवसे हो जाती है । परंतु ऐसा जीव यदि बद्धायुष्क है तो वह उस भवसे मुक्तिका लाभ न कर

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધનો ક્ષય કરવાવાળા ક્ષપકશ્રેણિમાં આરૂઢ સંયત નિયમથી અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય અને મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય, એ સાત પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરે છે. જે બદ્ધાયુષક (આયુર્કર્મનો જે પહેલાં બંધ કરી ચુકેલ છે) તે પણ ત્રણ ભવોનું ઉલ્લંઘન નથી કરતા, અર્થાત્ ત્રીજા ભવમાં નિયમથી મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. અબદ્ધાયુષક (જેણે પહેલાં આયુર્કર્મનો બંધ નથી કર્યો તે) જીવ મોહનીય કર્મની ૨૭ સતાવીસ પ્રકૃતિઓનો નિયમથી નાશ કરે, છે અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરીને અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોનો પણ નાશ કરી નાખે છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિઓના ક્ષયથી જેણે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ કરેલ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વને લઈને ક્ષપકશ્રેણિ ચઢેલ છે તે જીવની મુક્તિ નિયમતઃ તે લવથી થઈ જાય છે, પરંતુ તેવા જીવ કદાચ બદ્ધાયુષક છે તો તે, તે

યદ્વા-પૃથક્=અન્યદપિ મિથ્યાત્વસપ્તકં વિવેચયન્=ક્ષપયન્, . એકમ્=અનન્તા-
નુવન્ધિક્રોધં વેવેક્તિ=નિયમતઃ ક્ષપયતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન ગુણેન ક્ષપકશ્રેણિયોગ્યતાં પ્રાપ્નોતીતિ વોધયિતું કર્મક્ષપણોદ્યતસ્ય વિશે-
ષણાન્યાહ-‘ સડ્ઢી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સડ્ઢી આણાઐ મેહાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—શ્રદ્ધી આજ્ઞયા મેધાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—શ્રદ્ધી=મોક્ષાભિલાષરૂપા જિનમતાભિરુચિઃ શ્રદ્ધા, સાઽસ્યાસ્તીતિ
તથાવિધઃ; સ હિ કેવલિનો ભાવિતાત્મનોઽનગારસ્ય વા સમીપે ધર્મે શ્રુત્વા સંયમં
પ્રતિપદ્યતે । આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ પ્રવર્તમાનઃ, મેધાવી=અપ્રમત્તસંયમી ક્ષપ-
કશ્રેણિયોગ્યો ભવતિ, નાન્ય ઇત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

દૂસરે અથવા ત્રીસરે ભવમેં તો નિયમસે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેવાલા હોતા
હૈ । યદિ અવદ્વાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

હસી તરહ—“ પુઢો વિગિંચમાણે એગં વિગિંચહ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વ-
સપ્તકકા ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા
નિયમસે ક્ષય કરતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કિસ ગુણસે મુનિ ક્ષપકશ્રેણિકી યોગ્યતાકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? હસ
વાતકો સમજાનેકે લિયે કર્મોંકે ક્ષય કરનેમેં ઉદ્યત મુનિકે વિશેષણોં
કો કહતે હૈ—‘ સડ્ઢી ’ ઇત્યાદિ ।

મોક્ષકી અભિલાષરૂપ જિનમતકી ઓર અભિરુચિકા નામ શ્રદ્ધા
હૈ । હસ પ્રકારકી શ્રદ્ધાસે સમ્પન્નકા નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ હૈ । શ્રદ્ધા-
વાન્ વ્યક્તિ કેવલી અથવા અન્ય કિસી ભાવિતાત્મા સાધુકે સમીપ
ધર્મકા શ્રવણ કર સંયમકો ગ્રહણ કરતા હૈ । અરિહન્તદેવદ્વારા પ્રતિ-

લવમાં મુક્તિને લાલ ન પામીને ખીળ અથવા ત્રીળ લવમાં તો નિયમથી મુક્તિને પ્રાપ્ત
કરવાવાળા થાય છે. જો અબદ્વાયુષ્ક છે તો તે તેજ લવથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

આવી રીતે “ પુઢો વિગિંચમાણે એગં વિગિંચહ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વસપ્તકનો
ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધનો નિયમથી
ક્ષય કરે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કયા ગુણથી મુનિ ક્ષપક શ્રેણીની યોગ્યતાને પ્રાપ્ત કરે છે ? આ વાતને સમ-
જાવવા માટે કર્મોના ક્ષય કરવામાં ઉદ્યત મુનિના વિશેષણોને કહે છે—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ.

મોક્ષની અભિલાષારૂપ જિનમતની તરફ અભિરૂચિનું નામ શ્રદ્ધા છે, આ
પ્રકારની શ્રદ્ધાથી સંપન્નનું નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ છે. શ્રદ્ધાવાન્ વ્યક્તિ કેવળી
અથવા અન્ય કોઈ પણ ભાવિતાત્મા સાધુની સમીપે ધર્મનું શ્રવણ કરી સંયમને ગ્રહણ

કિંચ—‘લોગં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—લોગં ચ આણાણ અભિસમિચ્ચ અકુતોભયં ॥સૂ૦ ૮॥

છાયા—લોકં ચાઽઽજ્ઞયા અભિસમેત્ય અકુતોભયમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ચ—શબ્દઃ સમુચ્ચયાર્થઃ । લોકં=પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપમ્, આજ્ઞયા=જિન-પ્રવચનેન, અભિસમેત્ય=વિદિત્વા, અકુતોભયમ્=કુતશ્ચિત્ કારણાદુત્પદ્યમાનસ્ય ભય-સ્યાભાવો યથા ભવતિ પૃથ્વીજીવનિકાયલોકસ્ય, તથારૂપં સંયમં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ૦ ૮॥

પાદિત આગમકે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપ-કશ્રેણિકે યોગ્ય હોતા હૈ, અન્ય નહીં ।

ભાવાર્થ—શ્રદ્ધાસમ્પન્ન વ્યક્તિ સંયમકી આરાધના કર જવ સપ્તમ-ગુણસ્થાનવર્તી હો જાતા હૈ તમી વહ ક્ષપકશ્રેણિપર આરૂઢ હોનેકે યોગ્ય માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ઔર મી કહતે હૈ—“લોગં ચ ” इत्यादि ।

યહાં “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થ મેં હૈ । મુનિ હસ પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકકો જિનપ્રવચન-આગમ-સે જાન કર ‘જિસ પ્રકાર ભવિષ્યમેં ઉસ પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકકો અપનેદ્વારા ભયકા અભાવ હો’ હસ પ્રકાર સંયમ કી આરાધના કરતા રહે ।

ભાવાર્થ—સંયમકી આરાધના કરનેકી આવશ્યકતા હસી લિયે હૈ કિ જિસસે અન્ય જીવોંકી રક્ષા હોતી રહે । અસંયમ પ્રવૃત્તિસે જીવોંકા ઘાત હોતા હૈ । એસે વ્યક્તિયોંકો હસ લોક ઔર પરલોકમેં સદા ભયકા

કરે છે. અરિહંતદ્વારા પ્રતિપાદિત આગમ-અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપકશ્રેણીને યોગ્ય થાય છે-અન્ય નહિ.

ભાવાર્થઃ—શ્રદ્ધાસંપન્ન વ્યક્તિ સંયમની આરાધના કરી નત્યારે સાતમા શુણ્ણસ્થાનવર્તી થઈ નય છે ત્યારે તે ક્ષપક શ્રેણી પર આરૂઢ હોવાના યોગ્ય માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી ખીલું પણ કહે છે— “લોગં ચ ” इत्यादि.

આ ઠેકાણે “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમાં છે. મુનિ આ પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકને જીનપ્રવચન-આગમથી જાણીને જે પ્રકારે ભવિષ્યમાં તે પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકને પોતાના દ્વારા લયનો અભાવ હોય એ પ્રકારે સંયમની આરાધના કરતા રહે.

ભાવાર્થ—સંયમની આરાધના કરવાની આવશ્યકતા એટલા માટે છે કે જેનાથી અન્ય જીવોની રક્ષા થતી રહે, અસંયમ પ્રવૃત્તિથી જીવોનો ઘાત થાય છે. એવી

તદપિ ભયં પદ્મજીવનિકાયલોકસ્ય શસ્ત્રાદેવ ભવતિ । તસ્ય શસ્ત્રસ્ય કિં પ્રકર્ષ-
પરમ્પરાઽસ્તિ ? નાસ્તિ વા ? इति शिष्यजिज्ञासायाम् ‘अस्ती’-ति बोधयितुमाह—
‘अत्थि’ इत्यादि ।

यद्वा-शस्त्रतो भयं भवति, अतस्तत् परिहर्तव्यमित्याशयेन-शस्त्रं कथयति-
‘अत्थि’ इत्यादि ।

मूलम्—अत्थि सत्त्वं परेण परं, नत्थि असत्त्वं परेण परं ॥सू० ९॥

छाया—अस्ति शस्त्रं परेण परम्, नास्ति अशस्त्रं परेण परम् ॥ सू० ९ ॥

टीका—શસ્ત્રં=દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં; તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વડ્ગાદિકં, તત્ પરેણ પરમ
સ્તિ, લોહકર્તૃસંસ્કારાનુસારેણ દ્રવ્યશસ્ત્રં તીવ્રાત્ તીવ્રતરમસ્તીત્યર્થઃ । યદ્વા—યત્ પીઢા-

સામના કરના પડતા હૈ । સંયમી જીવ હસ પ્રકારકે ભયસે સદા નિર્મુક્ત
રહતે હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

इस पद्मजीवनिकारूप लोकके लिये भय शस्त्रसे ही होता है । यह
घात जब निश्चित है तो क्या उस शस्त्रमें प्रकर्षकी परम्परा है या नहीं ? इस
प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका उत्तर कहते हैं—‘अत्थि सत्त्वं’ इत्यादि ।

अथवा-शस्त्रसे भय होता है; अतः उसका परिहार करना चाहिये,
इस आशयसे शस्त्रको कहते हैं—‘अत्थि सत्त्वं’ इत्यादि ।

શસ્ત્ર, દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે દો પ્રકારકા હૈ । તલવાર વગૈરહ દ્રવ્ય
શસ્ત્ર હૈ । इनमें प्रकर्षकी परम्परा, शस्त्रको बनानेवाले लुहारके संस्कार
के अनुसार आती है । कोई तलवार अत्यन्त तीक्ष्ण होती है और कोई
उससे भी अधिक । अथवा जो जीवको पीडाकारक होता है वही शस्त्र

व्यक्तियोगेन आ-લોક અને પરલોકમાં સદા લયનો સામનો કરવો પડે છે. સંયમી
જીવ આ પ્રકારના લયથી સદા નિર્મુક્ત રહે છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

આ પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકના માટે લય શસ્ત્રથી જ થાય છે. એ વાત બીજા
નિશ્ચિત છે તો શું તે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે યા નહિ ? આ પ્રકારે શિષ્યની
આશંકાનું ઉત્તર કહે છે—‘અત્થિ સત્ત્વં’ ઇત્યાદિ.

અથવા શસ્ત્રથી લય થાય છે, માટે તેનો પરિહાર કરવો જોઈએ; એ આશ-
યથી શસ્ત્રને કહે છે—‘અત્થિ સત્ત્વં’ ઇત્યાદિ.

શસ્ત્ર દ્રવ્ય અને લાવના લેહથી બે પ્રકારે છે. તલવાર વિગેરે દ્રવ્ય-શસ્ત્ર
છે. તેમાં પ્રકર્ષની પરંપરા, શસ્ત્રના બનાવવાળા લુહારના સંસ્કાર અનુસાર આવે
છે, કોઈ તલવાર અત્યંત તીક્ષ્ણ હોય છે અને કોઈ તેનાથી પણ અધિક. અથવા
બે જીવોને પીડાકારક થાય છે તે શસ્ત્ર છે, પીડાકારક એક જ વસ્તુથી અન્ય

કારકં તદેવ શસ્ત્રમિત્યુચ્યતે । એકસ્માત્ પીડાજનકાદન્યત્ પીડાજનકં પ્રાદુર્ભવતિ ।
યથા—શ્વદ્ગાભિઘાતેન શિરઃપીડા, તતો જ્વરઃ, તતોઽપિ મૂર્ચ્છાદય ઇતિ ।
ભાવશસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યં ત્વત્રૈવોદ્દેશકે ‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિનાઽનુપદં વક્ષ્યતિ ।

યથા શસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યમસ્તિ, ન તથા પારમ્પર્યમશસ્ત્રસ્યાસ્તીત્યાદિ—‘ નાસ્તિ ’
ઇત્યાદિ । અશસ્ત્રં સંયમઃ, તત્ પરેણ પરં નાસ્તિ—પ્રકર્ષપરમ્પરાયુક્તં ન ભવતીત્યર્થઃ ।
યથા પૃથિવ્યાદિજીવેષુ સ્વાત્મના સમભાવઃ કર્તવ્યઃ, તત્ર—‘ એગે આયા ’ ઇતિ
ભગવદ્વચનાદ્ મન્દતીવ્રભેદો નાસ્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમત્વસદ્ભાવાત્ સામાયિકસ્ય ન
પ્રકર્ષપારમ્પર્યમ્ । યદ્વા—શૈલશ્યવસ્થાસંયમાત્પરઃ સંયમો નાસ્તિ, તદૂર્ધ્વં ગુણસ્થાના-
ભાવાદિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૯ ॥

હૈ । પીડાકારક એક હી વસ્તુસે અન્ય અનેક વાતેં ઉત્પન્ન होती हैं, जैसे
तलवारद्वारा मारनेसे लगनेवालेके शिरमें पीडा, उससे ज्वर, उससे
भी उसे मूर्छा आदि दुःख होते हैं । ये सब बातें द्रव्यशस्त्रमें प्रकर्ष
परम्पराकी द्योतक हैं ।

ભાવશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હસી ઉદ્દેશમેં હસીકે આગે “ જે કો-
હદંસી ” હસ સૂત્રમેં કહેંગે । જિસ પ્રકાર શસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હૈ ઉસ
પ્રકાર અશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરા નહીં હૈ, હસ વાતકો “ નત્થિ ” હસ વાક્ય
સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—અશસ્ત્ર નામ સંયમકા હૈ, વહ “ પરેણ પરં
નાસ્તિ ” પ્રકર્ષપરમ્પરાસે યુક્ત નહીં હોતા હૈ । જૈસે—પૃથિવીકાયિકાદિ
જીવોમેં સંયમીકો આત્મતુલ્યતાકી ભાવના રચનીં ચાહિયે, ક્યોં કિ યહ
વચન હૈ “ એગે આયા ” આત્મા એક હૈ । હસ પ્રકારકી ભાવનારૂપ સંયમ
મેં મન્દ ઔર તીવ્ર ભેદ નહીં હૈ । હસ કારણ સમસ્ત પૃથિવીકાયિકાદિ

અનેક વાતો ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ—તલવાર દ્વારા મારવાથી લાગવાવાળાના માથામાં
પીડા, તેનાથી જ્વર, તેનાથી તેને મૂર્છા આદિ દુઃખ થાય છે એ સઘળી વાતો
દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાની દ્યોતક છે.

ભાવશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા આ જ ઉદ્દેશમાં એનાથી આગળના “ જે
કોહદંસી ” એ સૂત્રમાં કહેવામાં આવશે. જે પ્રકારે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે
તે પ્રકારે અશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરા નથી. એ વાતને “ નત્થિ ” ઇત્યાદિ વાક્યથી
સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. અશસ્ત્ર નામ સંયમનું છે, તે “ પરેણ પરં નાસ્તિ ” પ્રકર્ષ-
પરંપરાથી યુક્ત થતું નથી જેમ—પૃથિવીકાયાદિ જીવોમાં સંયમીએ આત્મ
તુલ્યતાની ભાવના રાખવી જોઈએ, કારણ કે ભગવાનનું એ વચન છે—‘ એગે આયા ’
આત્મા એક છે. આ પ્રકારની ભાવનારૂપ સંયમમાં મન્દ અને તીવ્ર ભેદ નથી.
એ કારણથી સમસ્ત પૃથિવીકાયાદિક જીવોમાં સમતાશાળી સયમીના સામાયિક

ભાવશસ્ત્રં કથં પરેણ પરમસ્તીત્યાહ—‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જે કોહદંસી સે માણદંસી, જે માણદંસી સે માયા-
દંસી, જે માયાદંસી સે લોહદંસી, જે લોહદંસી સે પેજ્ઞદંસી,
જે પેજ્ઞદંસી સે દોસદંસી, જે દોસદંસી સે મોહદંસી, જે મોહદંસી
સે ગબ્ધદંસી, જે ગબ્ધદંસી સે જમ્મદંસી, જે જમ્મદંસી સે
મારદંસી, જે મારદંસી સે નરયદંસી, જે નરયદંસી સે તિરિયદંસી,
જે તિરિયદંસી સે દુક્ખદંસી ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જીવોંમેં સમતાશાલી સંયમીકે સામાયિકરૂપ ચારિત્રમેં તીવ્રમન્દરૂપ
પ્રકર્ષકી પરમ્પરા નહીં હૈ । અથવા—શૈલેશી અવસ્થાકે સંયમસે આગે ગુણ-
સ્થાનકા અભાવ હોનેસે ઔર કોઈ પર-ઉત્કૃષ્ટ-સંયમ નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં હોતી હૈ, કયોં કિ
હસી ગુણસ્થાનમેં ચારિત્રકી પૂર્ણતા હોતી હૈ । યથાખ્યાત-ચારિત્રસે ઔર
કોઈ ચારિત્ર તો એસા ઉત્કૃષ્ટ હૈ નહીં જો હસસે મી અધિક ઉત્કૃષ્ટ હો,
હસલિયે હસ અવસ્થાકે ચારિત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરાકા નિષેધ હૈ । ચારિત્ર
કે મેદોંમેં પરસ્પર પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ મલે હી હો પરન્તુ કિસી મી ચારિત્ર
મેં નિજમેં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ નહીં હૈ । યથાખ્યાત-ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષકી
અવધિસ્વરૂપ હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરાકો સ્પષ્ટ કર અવ ‘ભાવશસ્ત્રમેં વહ પ્રકર્ષ-
પરમ્પરા કૈસે હૈ?’ હસે સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

૩૫ ચારિત્રમાં તીવ્રમંદૃષ્ય પ્રકર્ષની પરંપરા નથી. અથવા શૈલેશી અવસ્થાના
સંયમથી આગળ ગુણસ્થાનનો અભાવ થવાથી બીજો કોઈ ઉત્કૃષ્ટ સંયમ નથી.

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં થાય છે, કારણ કે તે
ગુણસ્થાનમાં ચારિત્રની પૂર્ણતા થાય છે. યથાખ્યાત-ચારિત્રથી બીજા કોઈ ચારિત્ર
તો એવું ઉત્કૃષ્ટ છે નહિ કે જે એનાથી પણ અધિક ઉત્કૃષ્ટ હોય. માટે આ અવસ્થાના
ચારિત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરાનો નિષેધ કરે છે. ચારિત્રના ભેદોમાં પરસ્પર પ્રકર્ષ-
પ્રકર્ષ વૃત્તિ ભલે હોય પરંતુ કોઈ પણ ચારિત્રમાં પોતામાં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ
નથી. યથાખ્યાત-ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષની અવધિસ્વરૂપ છે. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાને સ્પષ્ટ કરીને હવે ‘ભાવશસ્ત્રમાં તે પ્રકર્ષ
પરંપરા કેવી રીતે છે?’ તેને સ્પષ્ટ કરવા માટે કહે છે—‘જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ.

છાયા—યઃ ક્રોધદર્શી સ માનદર્શી, યઃ માનદર્શી સ માયાદર્શી, યો માયાદર્શી સ લોભદર્શી, યો લોભદર્શી સ પ્રેમદર્શી, યઃ પ્રેમદર્શી સ દ્વેષદર્શી, યો દ્વેષદર્શી સ મોહદર્શી, યો મોહદર્શી સ ગર્ભદર્શી, યો ગર્ભદર્શી સ જન્મદર્શી, યો જન્મદર્શી સ મારદર્શી, યો મારદર્શી સ નરકદર્શી, યો નરકદર્શી સ તિર્યગ્દર્શી, યસ્તિર્યગ્દર્શી સ દુઃસ્વદર્શી ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—યઃ ક્રોધદર્શી ક્રોધં પश्यति-ભાવયતિ ક્રુધ્યતીત્યર્થઃ, ક્રોધં દર્શયતીતિ યાવત્ । યથા ક્રુદ્ધસ્ય દૃષ્ટિસ્તીવ્રા, પ્રસન્નચિત્તસ્ય તુ સિતકમલવદ્ભવા ભવતિ । સ માનદર્શી માનં પश्यति-ભાવયતિ, ગર્ભં દર્શયતીતિ યાવત્ । એવમગ્રેઽપિ યોજનીયં યાવત્-‘સ મોહદર્શી’તિ । યો મોહદર્શી-મોહાઽઽક્રાન્તઃ, સ ગર્ભદર્શી ગર્ભં પश्यति-ગર્ભવાસોદ્ભૂતદુઃસ્વાનુભવી ભવતીત્યર્થઃ । एवं-‘સ તિર્યગ્દર્શી’-તિ

જો ક્રોધદર્શી હૈ અર્થાત્ ક્રોધકો દેખતા હૈ-ક્રોધ કરનેકી ભાવના કરતા હૈ-ક્રુદ્ધ હોતા હૈ, દુસરે વ્યક્તિ પર ક્રોધ દિખલાતા હૈ, જૈસે-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિકી દૃષ્ટિ તીવ્ર હોતી હૈ, પ્રસન્નચિત્તવાલેકી સફેદ કમલ જૈસી ધવલ હોતી હૈ’ । इस प्रकारसे जो दूसरोंके लिये दृष्टि वगैरह चिह्नोंसे अपनी क्रोधपरिणति दिखलाता हॆ-प्रकट करता हॆ वह मानदॆर्शी होता हॆ-मानको देखता हॆ-मान करनेकी भावना करता हॆ, मान करता हॆ-अन्यके लिये वह अपनी मानपरिणति प्रकट करता हॆ । इसी प्रकार जो मानदॆर्शी हॆ वह मायादॆर्शी होता हॆ । जो मायादॆर्शी हॆ वह लोभदॆर्शी हॆ । जो लोभदॆर्शी हॆ वह रागदॆर्शी हॆ । जो रागदॆर्शी हॆ वह द्वेषदॆर्शी हॆ । जो द्वेषदॆर्शी हॆ वह मोहदॆर्शी हॆ । जो मोहदॆर्शी होता हॆ वह गर्भदॆर्शी होता हॆ । इसका भाव यह हॆ कि-मोहदॆर्शी प्राणी गर्भा-

ને ક્રોધદર્શી છે અર્થાત્ ક્રોધને દેખે છે-ક્રોધ કરવાની ભાવના કરે છે-ક્રુદ્ધ થાય છે, બીજી વ્યક્તિના ઉપર ક્રોધ દેખાડે છે. જેમ-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિની દૃષ્ટિ તીવ્ર હોય છે. પ્રસન્ન ચિત્તવાળાની સફેદ કમળ જેવી ધવળ હોય છે.’ એવા પ્રકારથી જે બીજાઓને માટે દૃષ્ટિ વિગેરે ચિન્હોથી પોતાની ક્રોધ-પરિણતિ દેખાડે છે-પ્રકટ કરે છે તે માનદર્શી થાય છે-માનને દેખે છે-માન કરવાની ભાવના રાખે છે, માન કરે છે-બીજાને માટે તે પોતાની માન-પરિણતિ પ્રકટ કરે છે. એ પ્રકારે માનદર્શી છે તે માયાદર્શી હોય છે. જે માયાદર્શી છે તે લોભદર્શી છે, જે લોભદર્શી છે તે રાગદર્શી છે. જે રાગદર્શી છે તે દ્વેષદર્શી છે, જે દ્વેષદર્શી છે તે મોહદર્શી છે જે મોહદર્શી છે તે ગર્ભદર્શી છે. તેનો ભાવ એ છે કે-મોહદર્શી પ્રાણી ગર્ભાવાસથી ઉત્પન્ન અનન્ત

યાવદવગન્તવ્યમ્ । યસ્તિર્યગ્દર્શી=તિર્યગ્ભવનિગોદસમ્બન્ધિદુઃસ્વદર્શી, સ દુઃસ્વદર્શી
-इह दुःस्वशब्देन सर्वतः समुत्कृष्टतमं निगोदभवसम्बन्धि दुःस्वं परिगृह्यते, तत्
पश्यति=अनुभवतीत्यर्थः । एतेन गर्भदર્शीत्यादावपि दुःस्वदर्शित्वेन तिर्यग्दर्શिन
एव दुःस्वदर्शित्वकथनमयुक्तमिति शङ्कावसरो नास्तीति बोध्यम् । अनेन-पारम्पर्या-
पन्नस्य सर्वस्य भावशस्त्रस्य निदानं क्रोधः, तथा सर्वतः समुत्कृष्टदुःस्वं निगोदभ-
वेऽस्तीति ध्वनितम् ॥ सू० १० ॥

વાસસે ઉત્પન્ન અનન્ત યાતનાઓંકો ભોગતા હૈ । હસી પ્રકાર જો ગર્ભ-
દર્શી હૈ વહ જન્મદર્શી હૈ । જો જન્મદર્શી હૈ વહ મરણદર્શી હૈ । જો મર-
ણદર્શી હૈ વહ નરકદર્શી હૈ । જો નરકદર્શી હૈ વહ તિર્યગ્દર્શી હૈ, જો
તિર્યગ્દર્શી હૈ અર્થાત્ તિર્યગ્ગતિસ્વરૂપ નિગોદકે દુઃસ્વોંકા અનુભવકર્તા
હૈ વહ વહાંકે સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃસ્વોંકા અનુભવ કરતા હૈ । યહી ભાવ
“સ દુઃસ્વદર્શી ” હસ પદસે સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ । યહાં દુઃસ્વ-
શબ્દસે સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસમ્બન્ધી દુઃસ્વોંકા હી ગ્રહણ કિયા હૈ । હસ
લિયે “યો ગર્ભદર્શી ” હત્યાદિ પદ હૈં ઊનમેં શી દુઃસ્વદર્શિત્વ તો આતા
હી હૈ, ફિર શી જો તિર્યગ્દર્શી મેં હી દુઃસ્વદર્શિત્વ સ્વતન્ત્ર રૂપસે પ્રકટ
કિયા ગયા હૈ વહ અયુક્ત હૈ । હસ પ્રકારકી શઙ્કા કરનેકા યહાં અવસર
હી નહીં પ્રાપ્ત હોતા હૈ । હસ સમસ્ત કથનસે યહ ધ્વનિત હોતા હૈ કિ
હસ પ્રકર્ષપરમ્પરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રકા નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ હૈ ઔર
સબસે ઉત્કૃષ્ટ દુઃસ્વ નિગોદભવમેં હૈ ।

યાતનાઓને લોગવે છે એ પ્રકારે જે ગર્ભદર્શી છે તે જન્મદર્શી છે. જે જન્મ-
દર્શી છે તે મરણદર્શી છે, જે મરણદર્શી છે તે નરકદર્શી છે જે નરકદર્શી છે
તે તિર્યગ્દર્શી છે. જે તિર્યગ્દર્શી છે અર્થાત્ તિર્યગ્ગતિસ્વરૂપ નિગોદના દુઃખોનો
અનુભવકર્તા છે, તે ત્યાંના સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. એ જ ભાવ.
“સ દુઃસ્વદર્શી ” એ પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે. અહીં દુઃખ-શબ્દથી
સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસંબંધી દુઃખોનું જ ગ્રહણ કરેલ છે. માટે જે “ગર્ભદર્શી” ઇત્યાદિ
પદ છે તેમાં પણ દુઃખ-દર્શિત્વ તો આવેજ છે તો પણ જે તિર્યગ્દર્શીમાં જ
દુઃખ-દર્શિત્વ સ્વતંત્ર રૂપથી પ્રગટ કરેલ છે તે અયુક્ત છે. આ પ્રકારની શંકા
કરવાનો આ ઠેકાણે અવસર જ પ્રાપ્ત થતો નથી, આ સમસ્ત કથનથી એ ધ્વનિત
થાય છે કે આ પ્રકર્ષપરંપરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રનું નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ છે. અને
બધાથી ઉત્કૃષ્ટ દુઃખ નિગોદભવમાં છે.

યસ્તુ મુમુક્ષુઃ, સ ક્રોધાદિકં પરિહરેદિત્યાહ—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સે મેહાવી અભિણિવદ્વિજ્ઞા કોહં ચ માણં ચ માયં
ચ લોહં ચ પેજં ચ દોસં ચ મોહં ચ ગબ્મં ચ જમ્મં ચ મારં ચ
નરયં ચ તિરિયં ચ દુક્ખં ચ । એયં પાસગસ્સ દંસણં ઉવરયસ-
ત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—સ મેહાવી અભિનિવર્તયેત્ ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ પ્રેમ ચ
દ્વેપં ચ મોહં ચ ગર્મં ચ જન્મ ચ મારં ચ નરકં ચ તિર્યશ્ચં ચ દુઃખં ચ । એતત્ પશ્ય-
કસ્ય દર્શનમ્, ઉપરતશસ્ત્રસ્ય પર્યન્તકરસ્ય ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—સ મેહાવી ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશ્ચં, તથા—ગર્ભાદિદુઃસ્વાન્તં તત્પ્રયો-
ગફલભૂતમ્, અભિનિવર્તયેત્=પરિહરેત્—અપનયેદિત્યર્થઃ । ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશ્ચં
સર્વથા પરિવર્જયેત્, યેન ગર્ભદુઃસ્વાદારમ્ય નિગોદદુઃખં યાવત્ સર્વમપિ દુઃખં ન
પ્રાપ્નુયાદિતિ ભાવઃ ।

ભાવાર્થ—યે ક્રોધાદિક પર-ભાવ હી ભાવશસ્ત્ર હૈં ઔર ક્રોધસે
માન, માનસે માયા, માયાસે લોભ, इत्यादि रूपसे उनमें प्रकर्षपरम्परा
है; यह बात प्रकट की गई है ॥ सू० १० ॥

જો મુમુક્ષુ-મોક્ષ જાનેકી ઇચ્છા રાખનેવાલા હો ઉસકો ક્રોધાદિકા
પરિહાર કર દેના ચાહિયે, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈં—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

વહ મેહાવી મુનિ ક્રોધસે લગાકર મોહ તક ભાવશસ્ત્રકા તથા ઉન
કે પ્રયોગસે ઉત્પન્ન ઉનકે ફલસ્વરૂપ ગર્ભાવાસકે દુઃસ્વોસે લેકર નિગોદકે
દુઃસ્વો તકકા પરિહાર કરે, અર્થાત્—બુદ્ધિમાનકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ક્રોધા-
દિક કપાયરૂપ ભાવશસ્ત્રકા પરિત્યાગ કરે । કયોંકિ ક્રોધાદિકપાયોંકે કરને
સે કર્તાંકો અનેક પ્રકારકે દુઃસ્વોંકો ભોગના પડતા હૈં । ગર્ભાવાસકે દુઃસ્વોં

ભાવાર્થ.—એ ક્રોધાદિક પર-ભાવ જ ભાવશસ્ત્ર છે, અને ક્રોધથી માન,
માનથી માયા, માયાથી લોભ, इत्यादि इथથી તેમાં પ્રકર્ષ-પરંપરા છે, એ વાત
પ્રગટ કરી છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે મુમુક્ષુ-મોક્ષ જવાની ઇચ્છા રાખનારા હોય તેને ક્રોધાદિકનો પરિહાર
કરી દેવો જોઈએ, આ વાતને પ્રગટ કરે છે—‘સે મેહાવી’ इत्यादि.

તે મેહાવી મુનિ ક્રોધથી લઈ મોહ સુધી ભાવશસ્ત્રને તથા તેના પ્રયોગથી
ઉત્પન્ન તેના ફળસ્વરૂપ ગર્ભાવાસના દુઃખોથી લઈને નિગોદના દુઃખો સુધીના પરિહાર
કરે; અર્થાત્ બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય છે કે તે ક્રોધાદિકકપાયરૂપ ભાવશસ્ત્રનો પરિત્યાગ
કરે, કારણ કે ક્રોધાદિક કપાયોના કરવાથી કર્તાને તેનાથી અનેક પ્રકારના દુઃખો ભોગવા

एतच्च मया न स्वबुद्धिकल्पनया कथ्यते, किंतु भगवतस्तीर्थकरस्य समीपे तदुपदेशवचनं यथा मया श्रुतं तथा निगद्यते, इत्याशयेनाह—‘ एतत् पश्यकस्य दर्शनम् ’ इत्यादि । अत्रैवोद्देशे कृतव्याख्यानमेतत् ॥ सू० ११ ॥

असौ तीर्थकरः कथंभूतः ? इत्यत आह—‘ आयाणं ’ इत्यादि ।

मूलम्—आयाणं निसिद्धा सगडबिम्ब ॥ सू० १२ ॥

छाया—आदानं निषेद्धा स्वकृतभित् ॥ सू० १२ ॥

સે भी અનન્તશુને કષ્ટ નિગોદમેં જીવ્ ઇનકે કરનેકે હી ફલસ્વરૂપ ભોગતા હૈ । અતઃ મુનિકે લિયે ક્રોધાદિ કષાયોંકા પરિહાર કરના હી સર્વશ્રેયસ્કર હૈ । ઇનકા પરિહાર કરનેસે ફિર ઉસકો ગર્ભવાસાદિક તથા નિગોદકે અનન્ત કષ્ટોંકો નહીં સહના પડતા હૈ । ઇનકા ત્યાગ કરના હી ઉન દુઃખોંકે અભાવકા હેતુ હૈ । શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—હે જમ્બૂ ! યહ જો કુછ भी મૈને યહાં તક પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ અપની બુદ્ધિસે કલ્પિત કર નહીં કિયા હૈ; કિન્તુ ભગવાન્ તીર્થઢૂર શ્રીવર્ધમાનસ્વામીકે સમીપ ઉનકે ઉપદેશરૂપ વચન જૈસા મૈને સુના હૈ ઉસી તરહસે કહા હૈ । હસી આશયસે શ્રી સુધર્માસ્વામી “ એયં પાસગસ્સ દંસણં ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કી સાક્ષી દેતે હૈ । હસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન હસી ઉદ્દેશકે પહેલે સૂત્રમેં કિયા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

જિનકા યહ દર્શન હૈ વે તીર્થઢૂર ભગવાન્ કૈસે હોતે હૈ ? સો કહતે હૈ—‘ આયાણં ’ ઇત્યાદિ ।

પડે છે. ગર્ભાવાસના દુઃખોથી અનંતગણા કષ્ટ નિગોદમાં જીવ તેના કરવાના ક્ષણ સ્વરૂપ ભોગવે છે, અતઃ મુનિ માટે ક્રોધાદિ કષાયોનો પરિહાર કરવો જ સર્વશ્રેયસ્કર છે તેનો પરિત્યાગ કરવાથી ફરીથી તેને ગર્ભાવાસાદિકના તથા નિગોદના અનંત દુઃખોને સહન કરવા પડતા નથી. તેનો ત્યાગ કરવું જ તે દુઃખોના અભાવનો હેતુ છે.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે—હે જમ્બૂ ! આ જે કાંઈ પણ મેં અહીંયા સુધી પ્રતિપાદન કરેલ છે તે પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી કહેલ નથી, પણ ભગવાન તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના સમીપે તેના ઉપદેશરૂપ વચન જેવું મેં સાંભળેલ છે તે જ મેં કહેલ છે. તે આશયથી શ્રી સુધર્માસ્વામી “એયં પાસગસ્સ દંસણં” ઇત્યાદિ સૂત્રની સાક્ષી આપે છે. આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ ઉદ્દેશના પહેલા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

જેનુ આ દર્શન છે તે તીર્થંકર ભગવાન કેવા હોય છે ? તે કહે છે—‘આયાણં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા— આદાનમિત્તિ—આદાનં કર્મોપાદાનં ક્રોધં, નિષેદ્ધા=અપનેતા સ્વકૃત-
મિત્ત=પૂર્વોપાર્જિતકર્મક્ષપયિતા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

જમ્બૂસ્વામી પૃચ્છતિ—‘ કિમતિથિ ઉવાહી ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—કિમતિથિ ઉવાહી પાસગસ્સ ?, ન વિજ્ઞાનતિથિત્તિ
વેમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

છાયા—કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય, ન વિદ્યતે નાસ્તીતિ વ્રવીમિ ॥ ૧૩ ॥

ટીકા—પશ્યકસ્ય=કેવલિનઃ, ઉપાધિઃ ઉપાધીયતે इत्यુપાધિઃ, તત્ર દ્રવ્યો-
પાધિર્હિરણ્યસુવર્ણાદિઃ, માવોપાધિર્જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ, યદ્વા-ઉપાધીયતે વ્યપ-

આદાન=કર્મોકે ઉપાદાન—ગ્રહણ કરનેમેં પ્રધાનકારણ એસે ક્રોધકા
જો પરિહાર કરતા હૈ વહ અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોકા વિનાશક હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોકા મૂલ કારણ ક્રોધ હૈ, એસા સમજ્ઞકર
તીર્થંકર ભગવાનને હસકા સર્વથા પરિહાર કિયા હૈ । અતઃ હસકે પરિ-
હારસે વે નવીન કર્મોકે વન્ધક નહીં હુણ, ઇતના હી નહીં; ડનકી આત્મામેં
જો કુછ પૂર્વસંચિત કર્મ થે ડનકો ઢી સંવરકી પ્રાપ્તિસે ડન તીર્થંકર પ્રભુને
નષ્ટ કર દિયે । હસલિયે મોક્ષાભિલાષી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ વીતરાગ
તીર્થંકરપ્રભુકા આદર્શ સામને રવકર ડસ માર્ગકા અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

અવ ઉપાધિ કે વિષયમેં કહતે હૈ—‘ કિમતિથિ ’ इत्यादि ।

જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીસે પૂછતે હૈ કિ—હે ભદન્ત ! કેવલી
ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ કયા ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈ કિ ડનકે કિસી
ઢી પ્રકારકી ઉપાધિ નહીં હૈ । હિરણ્યસુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ ઓર

આદાન=કર્મોના ઉપાદાન—અહણ કરવામાં પ્રધાન કારણ જે ક્રોધ છે તેનો જે
પરિહાર કરે છે તે પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના વિનાશક બને છે.

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોનું મૂલ કારણ ક્રોધ છે, એવું સમજીને તીર્થંકર ભગ-
વાને તેનો સર્વથા પરિહાર કરેલ છે, માટે તેના પરિહારથી તે નવીન કર્મોના બંધક
નથી થયાં, એટલું જ નહિ, જેટલા કંઈ તેની આત્મામાં પૂર્વ સંચિત કર્મ હતા
તે સંવરની પ્રાપ્તિથી તે તીર્થંકર પ્રભુએ નષ્ટ કરી નાખ્યા. માટે મોક્ષાભિલાષી
મુનીનું કર્તવ્ય છે કે તે વીતરાગ પ્રભુનો આદેશ સામે રાખીને તે માર્ગનું
અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

હવે ઉપાધિના વિષયમાં કહે છે—‘ કિમતિથિ ’ इत्यादि.

જમ્બૂ સ્વામી સુધર્મા સ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! કેવળી ભગવાનને
ઉપાધિ છે કે નહિ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે તેને કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ
નથી. હિરણ્ય સુવર્ણાદિ રૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ અને જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મ ભાવ-ઉપાધિ આ

દિશ્યતે યેનેત્યુપાધિઃ-કર્મજનિતો નરકાદિભવઃ, અસ્તિ કિમ્ ? । શ્રીસુધર્માસ્વામી ઉત્તરયતિ-ન વિદ્યતે । ‘નાસ્તિ’ ઇતિ-ઉત્તરવાક્યાર્થસ્ય દાઢ્યવોધનાય, અધ્યયન-સમાપ્તિસૂચનાય વાઢ્યર્થતઃ પુનઃ કથનમ્ । યદ્વા-‘ન વિદ્યતે’ ઇત્યન્તં પ્રશ્નવાક્યમ્ । પશ્યકસ્યોપાધિઃ કિમસ્તિ, ઉત ન વિદ્યતે ? અત્રોત્તરમાહ-નાસ્તીતિ । અષ્ટવિધં કર્મ, કર્મજનિતનરકાદિભવો વા કેવલિનો ન ભવતીત્યર્થઃ । તથા ચોક્તં—

જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મ આવ-ઉપાધિ, ઇસ પ્રકારસે ઉપાધિકે દો ભેદ હૈં; હનમેંસે કોઈ ભી ઉપાધિ ઉનકે નહીં હૈ । અથવા કર્મજનિત જો નરકાદિ પર્યાય હૈ વહ ભી ઉપાધિ હૈ, યહ ઉપાધિ ભી ઉનમેં નહીં હૈ । પ્રશ્ન ઓર ઉત્તરકે રૂપમેં યહ સૂત્ર હૈ, જૈસે—“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ” કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ? , યહાં તક પ્રશ્નવાક્ય હૈ “ન વિજ્જહ નત્થિ”-ન વિદ્યતે નાસ્તિ, યહ ઉત્તર વાક્ય હૈ । અર્થાત્ સર્વજ્ઞ-તીર્થઢ્ઢર ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ કિ નહીં ? નહીં હૈ । યહાં પર “ન વિદ્યતે” ઇસ ક્રિયાકી પર્યાયવાચી ક્રિયા જો “નાસ્તિ” વતલાઈ હૈ, સો ઉત્તરવાક્યકે અર્થકી દઢતા સમજ્ઞાનેકે લિયે, ઓર અધ્યયનકી સમાપ્તિ સૂચન કરનેકે લિયે ।

અથવા-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જહ” યહાં તક પ્રશ્ન-વાક્ય હૈ, ઓર “નત્થિ” યહ ઉત્તરવાક્ય હૈ । અર્થાત્-સર્વજ્ઞ-તીર્થઢ્ઢરકો ઉપાધિ હૈ કિ નહીં ? યહાં તક શિષ્યકા પ્રશ્ન હૈ । ગુરુકા ઉત્તર હૈ—‘નત્થિ’-નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—કેવલી તીર્થઢ્ઢર ભગવાનકે ન અષ્ટવિધ કર્મરૂપ ઉપાધિ હૈ ઓર ન કર્મજન્ય-નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ હી હૈ, વે ઉપાધિસે નિર્મુક્ત

પ્રકારે ઉપાધિના ઁ ભેદ છે. તેમાથી કોઈ પણ ઉપાધિ તેને નથી. અથવા કર્મજનિત જે નરકાદિ પર્યાય છે તે પણ ઉપાધિ છે, તે ઉપાધિ પણ તેમનામાં નથી. પ્રશ્ન અને ઉત્તરના રૂપમા એ સૂત્ર છે, જેમ-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ”-કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ? આંહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે. “ન વિજ્જહ નત્થિ”-નવિદ્યતે નાસ્તિ એ ઉત્તર વાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થઢ્ઢર ભગવાનને ઉપાધિ છે કે નહિ ?, નથી. આ ઢેકાણે “ન વિદ્યતે” આ ક્રિયાની પર્યાયવાચી ક્રિયા જે “નાસ્તિ” બતાવી છે તે ઉત્તરવાક્યના અર્થની દઢતા સમજાવવા માટે, અને અધ્યયનની સમાપ્તિ સૂચન કરવા માટે. અથવા—“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જહ” અહીં સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે, અને ‘નત્થિ’ આ ઉત્તરવાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થઢ્ઢરને ઉપાધિ છે કે નહિ ? અહીં સુધી શિષ્યનો પ્રશ્ન છે ગુરુનો ઉત્તર છે-‘નત્થિ’ નથી.

ભાવાર્થ—કેવળી તીર્થઢ્ઢર ભગવાનને અષ્ટવિધકર્મરૂપ ઉપાધિ નથી, અને કર્મજન્ય નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ પણ નથી. તે તો ઉપાધિથી નિર્મુક્ત છે.

“દગ્ધે વીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાહુરઃ ।

કર્મવીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાહુરઃ ” ॥ ૧ ॥

इति ब्रवीमि—इति=इदं, ब्रवीमि=यथा श्रुतं भगवन्मुखात् तथा कथयामीत्यर्थः । सू० १३ ।

॥ तृतीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः समाप्तः ॥ ३-४ ॥

“તૃતીયેઽધ્યયને સુપ્તજાગરૂકૌ ચ વર્ણિતૌ ।

સુપ્તદુઃસ્વ મુનિત્વે ચ, કારણં ક્રોધવર્જનમ્ ” ॥ ૧ ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-

कलापाऽऽलापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहू-

छत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-“जैनशास्त्राचार्य”-पदभूषित-कोल्हापुर-

राजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्री-

घासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचाराङ्गमૂत्रस्याचारचिन्ता-

मणिटीकायां शीतोष्णीयाख्यं तृतीयमध्ययनं संपूर्णम् ॥ ३ ॥

हैं । क्यों कि उनके कर्मरूपी बीज जल चुका है, कहा भी है—

“દગ્ધે વીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાહુરઃ ।

કર્મવીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાહુરઃ ॥ ૧ ॥ ”

जिस प्रकार बीजके नष्ट होनेपर अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है उसी प्रकार कर्मरूपी बीजके विनाश होने पर संसाररूपी अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है । ‘ त्ति वे मि ’ ‘ इति ब्रवीमि ’ इस प्रकार मैं कहता हूँ, अर्थात्-भगवानके मुखसे मैंने जैसा सुना है वैसा ही तुमसे कहता हूँ ॥ सू० १३ ॥

તીસરે અધ્યયન કા ચોથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

इस तृतीय अध्ययनके चार उद्देशोंमें यथाक्रमसे इस प्रकार विषय वर्णित हुए हैं ।

કારણ કે તેને કર્મરૂપી બીજ બળી ગયેલ છે, કહ્યું પણ છે—

“દગ્ધે વીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાહુરઃ ।

કર્મવીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાહુરઃ ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે બીજનો નાશ થવાથી અંકુર ઉત્પન્ન થતાં નથી તે પ્રકારે કર્મ રૂપી બીજનો વિનાશ થવાથી સંસારરૂપી અંકુર ઉત્પન્ન થતો નથી.

‘ ત્તિ વેમિ ’ ‘ ઇતિ બ્રવીમિ ’—આ પ્રકારે હું કહું છું. અર્થાત્ ભગવાનના મુખથી મેં જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું. ॥ સૂ० ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

આ ત્રીજા અધ્યયનના ચાર ઉદ્દેશોમાં યથાક્રમથી આ પ્રકારે વિષય વર્ણિત થયેલ છે.—

(૧) પ્રથમ ઉદ્દેશમાં આવસુષ્ણ સંયમિયોંકે દોષ ઓર સંયમમાં જાગ-
રૂક સંયમિયોંકે ગુણ પ્રકટ કિયે હૈ ।

(૨) દ્વિતીય ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાલે સંયમિયોંકો અનેક દુઃખોંકા
અનુભવ કરના પડતા હૈ, યહ વિષય વર્ણિત કિયા ગયા હૈ ।

(૩) તૃતીય ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણકે વિના કેવલ દુઃખોંકે સહનમાત્ર
સે કોઈ સાધુ નહીં કહલા સકતા, યહ વિષય પ્રતિપાદિત કિયા હૈ ।

(૪) ચતુર્થ ઉદ્દેશમાં છર્દિત-વાન્ત-અન્નકે સમાન કષાય ત્યાગને
યોગ્ય હૈ, પાપકર્મ પરિહરણીય હૈ, તથા પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો જાનનેવાલે
સંયમીકે લિયે સંયમ આરાધનીય હૈ, ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રકટ કિયા
ગયા હૈ ॥ ૧૧ ॥

॥ યહ આચારાંગસૂત્રકે શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયનકા
હિન્દી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૩ ॥

(૧) પ્રથમ ઉદ્દેશમાં આવસુષ્ણ સંયમિયોના દોષ અને જાગરૂક સંયમિ-
યોના ગુણ પ્રકટ કરેલ છે.

(૨) બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમિયોને અનેક દુઃખોના અનુભવ
કરવો પડે છે. એ વિષય વર્ણિત કરેલ છે.

(૩) ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણ વિના કેવળ દુઃખોના સહન માત્રથી કોઈ
સાધુ કહેવાતા નથી. એ વિષય પ્રતિપાદિત કરેલ છે.

(૪) ચોથા ઉદ્દેશમાં છર્દિત—વાન્ત અન્ન સમાન કષાય ત્યાગવાયોગ્ય છે.
પાપકર્મ પરિહરણીય છે. તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી માટે
સંયમ આરાધનીય છે. ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રગટ કરેલ છે

આ આચારાંગસૂત્રના શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો

ગુજરાતી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૩ ॥



। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય સમ્યક્ત્વનામકં ચતુર્થમધ્યયનમ્ ।

નિરુપાધિકં સંયમાનુષ્ઠાનં મુનિત્વસ્ય મોક્ષસ્ય ચ કારણમિતિ પ્રાણુક્તાધ્યયન-
ત્રયેણ પ્રતિપાદિતં, તદ્વિ સમ્યક્ત્વમન્તરેણ ન સંભવતીત્યતઃ સમ્યક્ત્વાભ્યં ચતુર્થ-
મધ્યયનં કથયતિ । સમ્યક્ત્વપ્રતિવોધકત્વાદિદમધ્યયનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।
યથા ચતુઃશાલમધ્યગતઃ પ્રદીપઃ શાલાચતુષ્ટયં પ્રદ્યોતયતિ, તદ્વદિદં મધ્યગતમધ્યયનં
સર્વાધ્યયનસ્થમાચારમવભાસયતિ । પ્રસજ્જતસ્તાવત્ સમ્યક્ત્વં નિરૂપ્યતે—

સમશ્ચતિ જ્ઞાનાદિગુણં પ્રાપ્નોતીતિ સમ્યગ્=જીવસ્તસ્ય ભાવઃ સમ્યક્ત્વમ્ । તત્ત્વ
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમ્, તત્ત્વાર્થેષુ સર્વજ્ઞવીતરાગોપદિષ્ટતયા પારમાર્થિકેષુ જીવાજીવાદિ-
પદાર્થેષુ શ્રદ્ધાનં=રુચિરભિપ્રીતિઃ । ઉક્તશ્ચ—

। આચારાઙ્ગસૂત્રકા સમ્યક્ત્વનામક ચતુર્થ અધ્યયન ।

ઉપાધિરહિત સંયમકા આરાધન, મુનિપનેકા ઓર મોક્ષકા કારણ
હોતા હૈ, યહ વાત યદ્યપિ પહિલે કહે ગયે ત્રીન અધ્યયનોં મેં અછ્છી
તરહ સે પ્રકટ કી જા ચુકી હૈ । પરન્તુ વહ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વકે વિના
નહોં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે સમ્યક્ત્વ નામકા ચૌથા અધ્યયન કહા
જાતા હૈ । જૈસે આમને-સામનેકે ચાર મકાનોં કે ચૌક મેં રખા હુઆ
દીપક ઉન ચારોં હી મકાનોં કો પ્રકાશિત કરનેવાલા હોતા હૈ, ઠીક ઇસી
તરહસે સવ અધ્યયનોં કે મધ્ય મેં રહા હુઆ યહ અધ્યયન મી સમસ્ત
અધ્યયનોં કે આચાર કા પ્રકાશક હૈ । ઇસલિયે પ્રકરણવશ ડસીકા
નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ ।

જ્ઞાનાદિક ગુણોં કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ડસકા નામ સમ્યક્ હૈ । ઇસ
અપેક્ષા સે વહ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ હૈ । ડસકા જો ભાવ ડસે સમ્યક્ત્વ

આચારાંગસૂત્રનું સમ્યક્ત્વનામનું ચોથું અધ્યયન.

ઉપાધિરહિત સંયમનુ આરાધન મુનિપણાનુ તથા મોક્ષનુ કારણ થાય
છે, આ વિષય પહેલાં ત્રણ અધ્યયનોમાં સ્પષ્ટ રીતે પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે;
પણ આ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વ વિના બની શકતું નથી. માટે સમ્યક્ત્વ નામનું
ચોથું અધ્યયન કહેવામાં આવે છે. જેવી રીતે ચાર મકાનોના ચોકમાં રાખેલ
એક દીપક ચારે મકાનોને પ્રકાશિત કરે છે તેવી રીતે બધા અધ્યયનોના મધ્યમાં
સ્થિત આ અધ્યયન બધા અધ્યયનોના આચારનું પ્રકાશક છે આ માટે પ્રકરણ
વશ તેનું જ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે.

જ્ઞાનાદિક ગુણને જે પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ સમ્યક્ છે. તે અપેક્ષાએ
આ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ છે. એનો જે ભાવ તેને સમ્યક્ત્વ કહે છે. આ સમ્યક્ત્વ
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ છે. સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુદાસ ભાષિત હોવાથી પારમાર્થિક સત્ય-

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । ” इति ।

જિનોક્તતત્ત્વેષુ જીવાજીવાદિપદાર્થેષુ યા શુદ્ધા=અજ્ઞાનસંશયવિપર્યયનિરાકરણેન નિર્મલા રુચિઃ=શ્રદ્ધાનં સા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

કહતે હૈં । વહ સમ્યક્ત્વ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ હૈ । સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા કહે હુએ હોનેસે પારમાર્થિક-સત્યસ્વરૂપ જીવ અજીવાદિક પદાર્થોં મેં જો શ્રદ્ધા-રુચિ-પ્રીતિ હૈ ઉસીકા નામ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન હૈ । કહાં ભી હૈ-

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” इति ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન્ દ્વારા કહે ગયે તત્ત્વોં મેં જો નિર્દોષ રુચિ-પ્રીતિ હૈ, ઉસીકા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ ઔર હિતોપદેશી પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિ-પાદિત કિયે ગયે જો જીવ-અજીવ આદિ નૌ પદાર્થ હૈં, વે યહાં પર ‘તત્ત્વ’-શબ્દવાચ્ય હૈં । ‘તત્ત્વ’ શબ્દ કા અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તાવિક હૈ । ‘શ્રદ્ધાન’ શબ્દકા અર્થ રુચિ-દૃઢ વિશ્વાસ-આસ્થા હૈ । જીવ અજીવાદિક પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોને સે સત્ય-વાસ્તાવિક હૈં । ફલિતાર્થ ઇસકા યહી હૈ—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે હૈં, ઇસી-લિયે વે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ હૈં । ઉનમેં જો દૃઢ વિશ્વાસ હૈ ઉસી કા નામ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન હૈ । ઇસીકા નામ સમ્યગ્દર્શન હૈ ।

સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોંમાં જે શ્રદ્ધાન-રૂચિ પ્રીતિ છે એનું નામ તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન છે. કહ્યું છે—

“ જિનોક્ત તત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” इति ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા જે તત્ત્વો કહેવાયા છે એમાં જે નિર્દોષ રૂચિ-પ્રીતિ છે એનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ અને હિતોપદેશી પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત જે જીવ-અજીવ આદિ નવ પદાર્થ છે તે અહીંયા તત્ત્વશબ્દવાચ્ય છે. તત્ત્વ-શબ્દનો અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તાવિક છે. શ્રદ્ધાન-શબ્દનો અર્થ રૂચિ-દૃઢવિશ્વાસ-આસ્થા છે. જીવ અજીવ આદિ પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોવાથી સત્ય-વાસ્તાવિક છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કેઃ—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત કરેલ છે. જેથી તે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ છે, એમાં જે દૃઢ વિશ્વાસ છે તેનું નામ તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન છે. એનું જ નામ સમ્યગ્દર્શન છે

નનુ યદુચ્યતે—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વ” —મિતિ; તત્ર શ્રદ્ધાનં તથેતિ પ્રત્યયઃ, તીર્થકરેણ યથા પ્રતિવોધિતં તથૈવ વસ્તુતો જીવાજીવાદિપદાર્થાનાં સ્વરૂપમિતિ નિશ્ચયપૂર્વિકા પ્રીતિરૂપા રુચિનામ્ની માનસી પરિણતિઃ । ઇયં સ્વલ્પપર્યાપ્તકાઘવસ્થાયાં

રુચિ (પ્રીતિ) કે સાથ જો શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ દિયા ગયા હૈ ઉસકા ભાવ યહી હૈ કિ વહ રુચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન સંશય ઔર વિપર્યય, ઇન ત્રીન દોષોં સે રહિત હોની ચાહિયે, તવ હી વહ નિર્દોષ રુચિ હૈ । જિસમેં ઇન અજ્ઞાનાદિકા સદ્ભાવ હૈ વહ સત્ય રુચિ નહીં, કિન્તુ સદોપ રુચિ હૈ ।

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિકે સ્પર્શ કરનેવાલે જ્ઞાન કો ‘સંશય’ કહતે હૈં । જૈસે—યહ સ્થાણુ હૈ કિ પુરુષ હૈ ? । વિપરીત એક કોટિકા નિશ્ચય કરનેવાલા જ્ઞાન ‘વિપર્યય’ કહલાતા હૈ—જૈસે સીપ કો ચાંદી સમઝના । યહ કુછ હોગા, એસે પ્રતિભાસકો અજ્ઞાન યા અનધ્યવસાય કહતે હૈં, જૈસે માર્ગ ચલતે હુએ કો તૃણસ્પર્શ વગેરહ કા જ્ઞાન । યે ત્રીન—અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય, રુચિકે દૂષણ હૈં । ઇનસે રહિત રુચિ હી સમ્યક્-યથાર્થ રુચિ કહલાતી હૈ ।

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શનં હૈ” એસા જો સમ્યક્ત્વકા લક્ષણ કહા ગયા હૈ, વહાં “તથા” ઇસ પ્રકાર કે પ્રત્યય-વિશ્વાસ કા નામ હી શ્રદ્ધાનં હૈ । અર્થાત્—‘તીર્થકર પ્રભુને જીવાદિક પદાર્થોં કા જિસ સ્વરૂપસે પ્રતિપાદન કિયા હૈ, ઊન જીવાદિક પદાર્થોં કા વૈસા હી સ્વરૂપ હૈ’ ઇસ પ્રકાર

રૂચિ (પ્રીતિ) ની સાથે જે શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ આપવામા આવ્યુ છે તેનો ભાવ એ છે કે તે રૂચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન, સંશય અને વિપર્યય, આ ત્રણ દોષોથી રહિત હોવી જોઈએ. ત્યારેજ તે નિર્દોષ રૂચિ છે. જેમાં આ અજ્ઞાનાદિનો સદ્ભાવ છે તે સત્ય રૂચિ નહીં; પણ સદોપ રૂચિ છે.

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિના (પ્રકારના) સ્પર્શ કરવાવાળા જ્ઞાનને સંશય કહે છે, જેમ—આ સ્થાણુ છે કે પુરૂષ છે ? વિપરીત એક કોટિના નિશ્ચય કરવાવાળા જ્ઞાનને વિપર્યય કહે છે, જેમ—છીપને ચાંદી જાણવી. આ કાંઈક હશે, આવા પ્રતિભાસને અજ્ઞાન અગર અનધ્યવસાય કહે છે, જેમ—માર્ગ પર ચાલવાવાળાને તૃણસ્પર્શ વિગેરેનું જ્ઞાન, આ ત્રણ-અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય-રૂચિનાં દૂષણુ છે. એનાથી રહિત રૂચી જ સમ્યક્-યથાર્થ-રૂચી કહેવાય છે.

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શનં છે” એવું જે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહેવામાં આવે છે ત્યાં “તથા” આવા પ્રકારના પ્રત્યય-વિશ્વાસ-નું નામ જ શ્રદ્ધાનં છે. અર્થાત્ ‘તીર્થકર પ્રભુએ જીવાદિક પદાર્થોને જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કર્યા છે. એ જીવાદિક પદાર્થોના તેવા જ સ્વરૂપ છે’ આવા પ્રકારની નિશ્ચયપૂર્વક જે

નેષ્યતે, સમ્યક્ત્વં તુ તસ્યામપીઠં, પદ્મપટ્ટિસાગરોપમરૂપાયાઃ સાદ્યપર્યવસિતકાલરૂપાયાશ્ચ તસ્યોત્કૃષ્ટસ્થિતેઃ પ્રતિવોધનાદિતિ કથં નાગમવિરોધઃ ? કિંચ-તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાનસ્ય રાગાત્મકરુચિરૂપત્વેન વીતરાગે તદભાવાત્ તત્ર સમ્યક્ત્વં કથમુપપદ્યેત ?—

કી નિશ્ચયપૂર્વક જો પ્રીતિસ્વરૂપ રુચિ નામ કી માનસિક પરિણતિ હૈ વહી તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન હૈ । યહ અપર્યાસાવસ્થા મૈ ઘટિત નહીં હોતી, પરંતુ સમ્યક્ત્વ તો વહાં પર ભી માના ગયા હૈ । કારણ કિ કુછ અધિક છાસઠ ૬૬ સાગર એવં સાદિ અનન્ત ઉસ સમ્યક્ત્વ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બતલાઈ ગઈ હૈ, તબ તો આગમ સે વિરોધ હી આવેગા ।

અર્થાત્—આપ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ કરતે હૈ । લક્ષણ કે દોષ-અવ્યાસિ, અતિવ્યાસિ ઓર અસંભવ હૈ । જો લક્ષણ અપને સંપૂર્ણ લક્ષ્ય મૈ નહીં ઘટિત હોતા; વહાં અવ્યાસિ દોષ હોતા હૈ । જો અપને લક્ષ્ય મૈ રહતે હુએ અલક્ષ્ય મૈ ભી રહતા હૈ, વહાં અતિવ્યાસિ દોષ હોતા હૈ । તથા—જિસ લક્ષણ કા સમન્વય લક્ષ્ય મૈ નહીં હોતા, વહાં અસંભવ દોષ હોતા હૈ । યહાં પ્રકૃત મૈ અવ્યાસિ દોષ હોગા । ક્યોંકિ શાસ્ત્રકારોં ને ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કુછ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગરોપમ ઓર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ કી સ્થિતિ સાદિ ઓર અનન્ત માની હૈ । ક્ષાયિક યા ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ સહિત મરણ કરનેવાલે જીવ કે

પ્રીતિસ્વરૂપ રૂચિ નામની માનસિક પરિણતિ છે તે જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન છે. એ અપર્યાસાવસ્થામાં ઘટિત નથી થતી. પરંતુ સમ્યક્ત્વ તો ત્યાં પણ માનેલ છે. કારણ કે ૬૬ છાસઠ સાગર ઝાઝેરી એવં સાદિ અનંત, એ સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલી છે ત્યારે તો આગમથી વિરોધ આવશે.

અર્થાત્—આપ ‘તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વ છે.’ એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહી છે. લક્ષણના દોષ અવ્યાસિ, અતિવ્યાસિ અને અસંભવ છે. જે લક્ષણ પોતાના સમસ્ત લક્ષ્યમાં ઘટિત નથી હોતું, ત્યાં અવ્યાસિ દોષ થાય છે જે પોતાના લક્ષ્યમાં અને અલક્ષ્યમાં પણ ઘટિત થાય છે ત્યાં અતિવ્યાસિ દોષ થાય છે. અને જે લક્ષણનો સમન્વય લક્ષ્યમાં હોતો જ નથી, ત્યાં અસંભવ દોષ થાય છે. અહીં આ પ્રકૃતમાં અવ્યાસિ-દોષ આવશે, કેમ કે શાસ્ત્રકારોએ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૬૬ છાસઠ સાગરોપમ ઝાઝેરી અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદી અને અનંત માનેલી છે. ક્ષાયિક અથવા ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ સહિત મરવાવાળા જીવને

અવોચ્યતે—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વસ્ય કાર્યમ્ । સમ્યક્ત્વં તુ સમ્યગ્દર્શનાપરનામ-
ધેયો મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ પ્રશમસંવેગાદિલક્ષણઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થા મેં भी उस २ सम्यक्त्व का सद्भाव माना गया है; परन्तु तत्त्वार्थश्रद्धान वहां नहीं माना गया है। आप तो सम्यक्त्व का लक्षण तत्त्वार्थश्रद्धान कहते हैं।

तत्त्वार्थश्रद्धान अपर्याप्तावस्था के जीवों में नहीं होता; अतः वहां सम्यक्त्व का लक्षण नहीं घटेगा। लक्ष्य में लक्षणका नहीं घटना ही तो अव्याप्ति है, सो इस लक्षण में अव्याप्ति दोष अनिवार्य है। यदि आप कहेंगे कि हम अपर्याप्तावस्था के जीवों में सम्यक्त्व नहीं मानते तो आपको आगमविरोधरूप दोष आयेगा। क्योंकि आगम में अपर्याप्तावस्था के जीवों में भी सम्यक्त्व माना गया है।

तथा—सम्यक्त्व का यह लक्षण रागात्मकलक्षिरूप होने से वीतराग अवस्था में घटित नहीं होता। कारण कि उस अवस्थामें रागात्मक रसि का सर्वथा अभाव है। ऐसी परिस्थितिमें वहां सम्यक्त्व की उत्पत्ति का निर्वाह भी कैसे हो सकेगा ?

समाधान—तत्त्वार्थश्रद्धान, यह सम्यक्त्व का लक्षण नहीं है; किन्तु उसका कार्य है। सम्यक्त्व, जिसका दूसरा नाम सम्यग्दर्शन है, एवं जो मिथ्यात्व के क्षयोपशमिकादिक से उत्पन्न होता है, तथा जिसके लक्षण प्रशम, संवेगादिक हैं, वह आत्मा का शुभपरिणामविशेष है।

અપર્યાપ્તાવસ્થામાં પણ તે તે સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ માનેલ છે, પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ત્યાં માનવામાં નથી આવેલ આપ તો સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહો છો.

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં હોતું નથી, માટે ત્યાં સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ ઘટશે નહિ લક્ષ્યમાં લક્ષણનો સમન્વય નહિ થવાથી જ અવ્યાપ્તિ થાય છે. માટે આ લક્ષણમાં અવ્યાપ્તિ-દોષ અનિવાર્ય છે. કદાચ આપ કહેશો કે અમે અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં સમ્યક્ત્વ નથી માનતા તો આપને આગમવિરોધરૂપ દોષ લાગશે, કેમ કે આગમમાં અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં પણ સમ્યક્ત્વ માનેલ છે.

તથા—સમ્યક્ત્વનું એ લક્ષણ રાગાત્મકરૂચિરૂપ હોવાથી વીતરાગ અવસ્થામાં ઘટિત નથી થતું, કારણ કે આ અવસ્થામાં રાગાત્મક-રૂચિનો સર્વથા અભાવ છે, આવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનો નિર્વાહ પણ કેવી રીતે થઈ શકે ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન એ સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ નથી, પણ તેનું કાર્ય છે, સમ્યક્ત્વ જેનું ણીનું નામ સમ્યગ્દર્શન છે, અને જે મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થાય છે તથા જેનું લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક છે તે આત્માનું શુભ પરિણામવિશેષ છે.

अत्र मिथ्यात्वशब्देन मिथ्यात्वसप्तकं गृह्यते, तच्चानन्तानुबन्धिकपायचतुष्टयं मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीयत्रयं चेति । इह दर्शनमोहनीयभेदसप्तकं मिथ्यात्वमुच्यते । यद्यपि—अनन्तानुबन्धिकपायचतुष्टयं चारित्रमोहनीयस्य भेदस्तथापि मिथ्यात्वक्षयोपशमाद्यवसरे तत्पूर्वं तस्य क्षय उपशमो वाऽवश्यं भवतीति कृत्वा तदपि मिथ्यात्वशब्देन व्यपदिश्यते । एतच्चाग्रे सम्यक्त्वफलप्रकरणे स्फुटीभविष्यति ।

यहां मिथ्यात्व-शब्द से मिथ्यात्वसप्तक का ग्रहण किया गया है । वे ये हैं—अनन्तानुबन्धी कषाय ४ और मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, एवं सम्यक्त्वमोहनीय ये तीन ३ । ये सात दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कहे जाते हैं । यद्यपि अनन्तानुबन्धी ४ कषाय चारित्रमोहनीय के भेद हैं, तो भी मिथ्यात्वके क्षायोपशमादिक के अवसर में उसके पहिले उनका क्षय अथवा उपशम अवश्य ही हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्व-शब्दसे उन चारों का भी व्यपदेश होता है ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व यह उपलक्षण शब्द है । उपलक्षण का लक्षण है—“स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्” अर्थात्—जो स्वबोधक होते हुए अपने से इतर का भी बोधक होता है वह उपलक्षण है । इससे सात प्रकृतियों का ग्रहण होता है । वे ७ प्रकृतियां ये हैंः—अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी मान, अनन्तानुबन्धी माया और अनन्तानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय एवं सम्यक्त्वमोहनीय । मोहनीय कर्म के मूल भेद दो हैं—एक दर्शनमोहनीय, दूसरा चारित्रमोहनीय । इनमें दर्शन-

आ ठेकाणु मिथ्यात्व शब्दधी मिथ्यात्वसप्तकनुं अडणु ठरेल छे. ते अे छे—अनंतानुणंधी कषाय आर ४, अने मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय, अने सम्यक्त्व-मोहनीय, अे त्रणु ३, अे सात दर्शन-मोहनीयना लेहो मिथ्यात्व ठडेवाय छे. कदाय अनंतानुणंधी आर ४ कषाय, आरित्र-मोहनीयना लेहो छे तो पणु मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकना अवसरमां अेना पडेलां अेना क्षय अथवा उपशम अवश्य थछं जाय छे, तेथी मिथ्यात्व-शब्दधी आ आरनुं व्यपदेश थाय छे.

विशेषार्थः—मिथ्यात्व अे उपलक्षणु शब्द छे उपलक्षणुनु लक्षणु छे—स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्, अर्थात्—स्वबोधक होवा छतां अे पोताधी भीजनना पणु बोधक थाय छे ते उपलक्षणु छे. अेथी सात प्रकृतियोनुं अडणु थाय छे अे सात प्रकृतियो आ छेः—अनंतानुणंधी क्रोध, अनंतानुणंधी मान, अनंतानुणंधी माया अने अनंतानुणंधी लोभ, तथा मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय अने सम्यक्त्व-मोहनीय. मोहनीय कर्मना भूण लेहं अे छे. अेक दर्शन-मोहनीय, भीजे आरित्र-मोहनीय.

મોહનીય કે ત્રીણ ભેદ હૈ—મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, ઓર સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩. ઇસ કર્મ કે ઉદય મેં આત્માકા ગુણ સમ્ય-ગ્દર્શન પ્રકટ નહીં હોતા. અર્થાત્ યહ કર્મ આત્માકે સમકિત ગુણકા ઘા-તક હૈ. ચારિત્રમોહનીયકે અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; ઇવં નવ નોકપાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ ઓર નપુંસકવેદ, યે ૨૫ પચીસ ભેદ હૈ. યહ કર્મ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા ઘાતક હોતા હૈ. ઇસકે ઉદય મેં ન તો સર્વસંયમ કા હી ઉદય હોતા હૈ ઓર ન દેશસંયમ કા હી. શંકાકાર કા યહાં પર યહ કહના હૈ કિ સમ્યગ્દર્શન કી ઉત્પત્તિ મેં દર્શનમોહનીયત્રય કા હી ક્ષયોપશમાદિક કહના ચાહિયે; ક્યોં કિ વહ હી ઇસકા પ્રતિપક્ષી કર્મ હૈ. ચારિત્રમોહનીય કે ભેદ અનંતાનુબંધી-ચતુષ્ટય કા ક્ષયોપશમાદિક ડસકે સાથ ૨ ક્યોં કહા. વહ તો સિર્ફ આત્માકે ચારિત્રગુણ કા હી ઘાતક હૈ? ઇસકા યહ સમાધાન હૈ કિ-દર્શનમોહનીય કે ક્ષયોપશમાદિક કે પહિલે હી ડનકા (કષાયોં કા) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય હો જાતા હૈ, ઇસકે વિના ડસકા ક્ષયોપશમા આદિ

એમાં દર્શન—મોહનીયના ત્રણ ભેદ છે—મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, અને સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩.

આ કર્મના ઉદયમાં આત્માનો ગુણ-સમ્યગ્દર્શન-પ્રગટ નથી થતું, અર્થાત્ આ કર્મ આત્માના સમકિત ગુણનું ઘાતક છે. ચારિત્રમોહનીયના અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન—ક્રોધ—માન—માયા—લોભ અને નવ નોકપાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ અને નપુંસકવેદ, એ પચીસ ૨૫ ભેદ છે. આ કર્મ આત્માના ચારિત્રગુણનું ઘાતક છે. આના ઉદયમાં નથી સર્વસંયમનો ઉદય થતો કે નથી દેશસંયમનો. શંકાકારનું અહીંયા એ કહેવાનું છે કે સમ્યગ્દર્શનની ઉત્પત્તિમાં દર્શનમોહનીયત્રયનું ક્ષયોપશમાદિક કહેવું જોઈએ કારણ કે તે જ એનું પ્રતિપક્ષી કર્મ છે. ચારિત્રમોહનીયના ભેદ અનંતાનુબંધિચતુષ્ટયના આની સાથેર ક્ષયોપશમાદિક કેમ કહ્યા? એ તો ક્ષત આત્માના ચારિત્રગુણના ઘાતક છે? એનું એ સમાધાન છે કે—દર્શન મોહનીયના ક્ષયોપશમાદિકના પહેલાં જ એનું (કષાયોનું) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય થઈ જાય છે. આના વિના એનું (મોહનીયનું) ક્ષયોપશમા

ઉક્તઞ્ચ ચાવશ્યકસૂત્રે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે પસમ-
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ ।

છાયા—તત્ત્વ સમ્યક્ત્વં પ્રશસ્તસમ્યક્ત્વમોહનીયકર્માનુવેદનોપશમક્ષયસમુત્થઃ
પ્રશમસંવેગાદિલિઙ્ગઃ શુભઃ આત્મપરિણામઃ પ્રજ્ઞપ્ત ઇતિ ।

કાર્યે કારણોપચારાત્ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । તથા ચોક્તં—

“ જીવાઇનવપયત્થે, જો જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ઇતિ ।

હો હી નહીં સકતા । ઇસકા યુલાસા આગે સમ્યક્ત્વ કે ફલકે પ્રકરણમેં
અચ્છી તરહ સે હો જાયગા ।

આવશ્યક સૂત્રમેં યહી વાત કહી હૈ—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોવસમક્ખય-
સમુત્થે પસમસંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ । અર્થાત્—
વહ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અનુવેદન કે ઉપશમ
ઔર ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિઙ્ગોં સે જાના
જાતા હૈ, એવં યહ આત્મા કા શુભ પરિણામ કહા ગયા હૈ । તત્ત્વા-
ર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વકા કાર્ય હૈ, યહ ડપર કહા જા ચુકા હૈ ઔર સમ્ય-
ક્ત્વ ડસકા કારણ હૈ । અતઃ કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર-આરોપ સે
કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ઔ સમ્યક્ત્વરૂપ સે કહ દિયા જાતા હૈ । અન્યત્ર
ઔ એસા હી કહા હૈ—

આદિ થઈ જ શકતું નથી. એનો ખુલાસો આગળ સમ્યક્ત્વના ડેખના પ્રકરણમાં
ઘણી જ સરલ રીતે થઈ જશે.

આવશ્યકસૂત્રમા આ વાત કહી છે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોવસમક્ખયસમુત્થે પસમ-
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—આ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અનુવેદનના
ઉપશમ અને ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે; તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિંગોથી નાણુવામાં
આવે છે; અને તે આત્માના શુભ પરિણામ કહેવામાં આવે છે. તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન
સમ્યક્ત્વનું કાર્ય છે, એ ઉપર કહેવામાં આવેલ છે અને સમ્યક્ત્વ એનું કારણ
છે, એથી કાર્યમાં કારણના ઉપચાર-આરોપથી કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન પણ સમ્યક્ત્વ
રૂપથી કહેવામાં આવે છે. બીજી જગ્યાએ એમ કહેવામાં આવેલ છે—

અસ્ય ચ લક્ષણસ્ય મનરહિતેષુ સિદ્ધાદિષ્વપિ સમન્વયો ભવતિ ।

યદ્વા-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમિતિ લક્ષણં સરાગસમ્યક્ત્વસ્યૈવ, અત એવ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે પ્રોક્તમ્-

“દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્તવીયરુદ્ધમેવ ।

અભિગમવિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥

અર્થેન ચાપર્યાપ્તકાદૌ વીતરાગે ચ રુચ્યભાવેઽપિ ન ક્ષતિઃ ।

“જીવાહનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અચાણમાણે વિ સમ્મત્તં ॥ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્-જીવાદિક નવ પદાર્થોનો જો જાનતા હૈં ઉસકો સમ્યક્ત્વ હોતા હૈં । તથા નહીં જાનને પર ખી ઉનકા ભાવ સે શ્રદ્ધાન કરનેવાલે કે ખી સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈં । હસ કથન સે હસ લક્ષણકા સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોં મેં ખી હો જાતા હૈં ।

અથવા-“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન” યહ લક્ષણ સરાગ સમ્યક્ત્વકા હી સમજના ચાહિયે, હસલિયે સ્થાનાઙ્ગસૂત્રમેં “દસવિદ્દે” હત્યાદિ દસ પ્રકાર કા સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહા ગયા હૈં । જૈસે—

“દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્તવીયરુદ્ધમેવ ।

અભિગમવિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥

સરાગસમ્યગ્દર્શનકે દસ પ્રકાર યે હૈં—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

“જીવાહનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અચાણમાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્-જીવાદિક નવ પદાર્થોને જે જાણે છે તેને સમ્યક્ત્વ થાય છે. અને ન જાણવા છતાં પણ ભાવથી તેનું શ્રદ્ધાન કરવાવાળાને પણ સમ્યક્ત્વ કહેવામા આવેલ છે. આ વાક્યથી આ લક્ષણનો સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોં ખી પણ થાય છે.

અથવા-“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન” એ લક્ષણ સમ્યક્ત્વનું જ સમજવું જોઈએ; માટે સ્થાનાંગસૂત્રમાં “દસવિદ્દે” હત્યાદિ દશ પ્રકારના સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહ્યા છે. જેમ-

“દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્ત-વીય-રુદ્ધમેવ ।

અભિગમ-વિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥

સરાગ સમ્યગ્દર્શનના દશ પ્રકાર આ છે—(૧) નિર્મળચિત્તિ, (૨) ઉપ-

વસ્તુતસ્તુ-ઇદં સમ્યક્ત્વલક્ષણં ન તત્સ્વરૂપં, કિંતુ તલ્લિઙ્ગં તદ્વ્યજ્ઞકમિતિ યાવત્।
વ્યજ્ઞચભૂતં સમ્યક્ત્વં હિ મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યં શુદ્ધાત્મપરિણામરૂપં પરમાર્થ-
તોડનાખ્યેયં સ્વાનુભવગમ્યમેવ ।

યથા વદ્ધિવ્યજ્ઞકસ્ય ધૂમસ્યાસદ્ભાવેડપિ સંતપ્તાયોગોલકે વહ્નિરસ્તિ, તથા તત્ત્વા-
ર્થાભિરુચ્યભાવેડપિ આત્મપરિણામરૂપસમ્યક્ત્વમસ્ત્યેવ । અત એવોત્તરાધ્યયનમુત્રે
પ્રોક્તમ્ ।

દેશરુચિ, (૩) આજ્ઞારુચિ, (૪) સૂત્રરુચિ, (૫) બીજરુચિ, (૬) અભિગમ
રુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ, (૮) ક્રિયારુચિ, (૯) સંક્ષેપરુચિ, ૧૦ ધર્મરુચિ ॥

હસ અપેક્ષાસે અપર્યાપ્ત અવસ્થા એવં વીતરાગદશા મેં રાગાત્મક રુચિકા
અભાવ હોને પર મી ઉસકે સદ્ભાવ મેં કિસી મી પ્રકારકી ક્ષતિ નહીં આતી ।

યથાર્થ મેં તો યહ સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ-સમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ-નહીં હૈ;
કિન્તુ ઉસકા વ્યજ્ઞક એક લિઙ્ગ હૈ । જો લિઙ્ગ હોતા હૈ વહ અપને લિઙ્ગી
કા વોધક યા વ્યજ્ઞક હુઆ કરતા હૈ । મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમાદિક સે
ઉત્પન્ન હોનેવાલા, તથા શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ વહ સમ્યક્ત્વ તો
વાસ્તવમેં અનાખ્યેય-વચનકે અગોચર હી હૈ । જૈસે-અગ્નિકા અભિવ્યજ્ઞક
ધૂમ હુઆ કરતા હૈ, પરન્તુ તપ્ત અયોગોલક (લોહે કે પિંડ) મેં ઉસકે
અભાવ મેં મી અગ્નિકા સદ્ભાવ રહતા હૈ । ઉસી તરહ સે તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન
કે અભાવ મેં મી આત્મપરિણામસ્વરૂપ સમ્યક્ત્વકા સદ્ભાવ સિદ્ધાદિકોં
મેં રહતા હી હૈ । હસલિયે ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર (અધ્ય૦ ૨૮) મેં કહા હૈ-

દેશરૂચિ, (૩) આજ્ઞારૂચિ, (૪) સૂત્રરૂચિ, (૫) બીજરૂચિ, (૬) અભિગમરૂચિ,
(૭) વિસ્તારરૂચિ, (૮) ક્રિયારૂચિ, (૯) સંક્ષેપરૂચિ, (૧૦) ધર્મરૂચિ.

આ અપેક્ષાથી અપર્યાપ્ત અવસ્થા તેમજ વીતરાગ દશામાં રાગાત્મક રૂચિનો
અભાવ હોવા છતાં પણ તેના સદ્ભાવમાં કોઈ પણ પ્રકારે ક્ષતિ આવતી નથી.

યથાર્થમાં તો આ સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ-નથી, પણ તેનું
વ્યંજક એક લિંગ છે. જે લિંગ થાય છે તે પોતાના લિંગીના બોધક અગર
વ્યંજક થયા કરે છે. મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થવાવાલા, તથા શુદ્ધ
આત્મપરિણામસ્વરૂપ એ સમ્યક્ત્વ તો વાસ્તવમાં અનાખ્યેય-વચનનું અગોચર
છે, જેમ અગ્નિનો અભિવ્યંજક ધૂમ થયા કરે છે, પરંતુ તપ્ત અયોગોલક
(લોહના પિંડ)માં એના અભાવમાં પણ અગ્નિનો સદ્ભાવ રહે છે. એવી
રીતે તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનના અભાવમાં પણ આત્મપરિણામસ્વરૂપ સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ
સિદ્ધાદિકોમાં પણ રહે છે. તેથી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર અધ્ય૦ ૨૮ માં કહ્યું છે—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તદા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥૧॥ ઇતિ ।

અત્ર જ્ઞાનાદિકં જીવસ્વરૂપવ્યક્તરૂપં જીવલક્ષણમુક્તં, તેન જ્ઞાનાદીનામન-
ભિવ્યક્તાવપિ પૃથિવ્યાદિપુ જીવસદ્ભાવઃ । શુદ્ધાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં નાન્યપ્ર-
માણવિષયસ્તસ્માત્ સ્વાનુભવગમ્યમેવેતિ નિર્ણયતે ।

एतच्चात्रापि पञ्चमाध्ययने शुद्धात्मस्वरूपं प्रतिबोधतया भगवता वक्ष्यते—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તદા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્યે એવં ઉપયોગ, યે જીવકે
લક્ષણ હૈં ।

इस गाथा में ज्ञानादिकों को जीवस्वरूपादिव्यक्तक जीवलक्षण
कहा है, इससे पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीवों में ज्ञानादिककी स्पष्टतः
अभिव्यक्ति-प्रकटता नहीं प्रतीत होने पर भी वहां पर जीवत्वका सद्भाव
सिद्ध होता है । सम्यक्त्व जो शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप है और जिसे
अनाख्येय-वचनअगोचर-कहा गया है उसका कारण यही है कि वह
अन्य किसी भी प्रमाण का विषय नहीं होता है । इसीलिये तो वह
स्वानुभवगम्य कहा जाता है । यही बात आगे इसी शास्त्रके पञ्चमाध्ययन
में शुद्ध आत्मस्वरूपका कथन करते समय भगवान स्वयं कहेंगे । जैसे—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તદા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ.

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્ય અને ઉપયોગ એ જીવના લક્ષણ છે.
આ ગાથામાં જ્ઞાનાદિને જીવસ્વરૂપાભિવ્યક્તક જીવલક્ષણ કહે છે. એથી
પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જ્ઞાનાદિકની સ્પષ્ટતઃ અભિવ્યક્તિ પ્રગટ જોવામાં
આવતી નથી તો પણ આ ઠેકાણે જીવને સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે. સમ્યક્ત્વ જે
શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ છે અને જેને અનાખ્યેય-વચનઅગોચર કહ્યું છે,
એનું કારણ એ છે કે તે ખીલ કોઈ પ્રમાણનો વિષય બનતો નથી, તેથી તો
તે સ્વાનુભવગમ્ય કહેવાય છે. આ વાત આગળ આ શાસ્ત્રના પાંચમા અધ્યયનમાં
શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપનું કથન કરતી વખત ભગવાન સ્વયં કહેશે. જેમ—

“ સર્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્જઈ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ ।
છાયા-“ સર્વે સ્વરા નિવર્તન્તે, તર્કાં યત્ર ન વિદ્યતે, મતિસ્તત્ર ન ગ્રાહિતા ” ઇત્યાદિ ।
સ્વાનુભવવિષયત્વેઽપિ સમ્યક્ત્વસ્યેષુ ક્ષીરાદિરસમાધુર્યવિશેષાણામિવ વાગ્વિષય-
ત્વાઽભાવાદનાસ્ત્યેયત્વમ્ । તથા ચોક્તમ્—

“ ઇષુ-ક્ષીર-ગુડાદીનાં માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।

તથાપિ ન તદાહ્યાતું સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ” ॥ ૨ ॥

“ સર્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્જઈ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત સ્વરોંકી વહાં પર નિવૃત્તિ હોતી હૈ, તર્ક ભી વહાં પ્રવેશ નહીં કર સકતા હૈ, એવં બુદ્ધિ કે ભી વહ અગમ્ય હૈ । ઇત્યાદિ ।

શુદ્ધ સમ્યક્ત્વ કો જો વચનાતીત એવં સ્વાનુભવગમ્ય કહા હૈ વહ
ઇસ પ્રકાર સે—જૈસે—ઇષુ- (ગન્ના) ઔર દુગ્ધાદિકની મધુરતા ઉપ-
ભોક્તા કે હી અનુભવગમ્ય હોતી હૈ । ડસસે યદિ કોઈ યહ પૂછે કિ
ગન્ના કૈસા મીઠા હૈ ? દૂધ કી મધુરતા કૈસી હૈ ? , તો વહ ઇસ વાતકો
વચન સે નહીં કહ સકતા, વહ તો ડનકી મધુરતા અપને નિજી અનુભવ
સે હી જાનતા હૈ । યહી વાત અન્યત્ર ભી કહી હૈ ।

“ ઇષુ-ક્ષીર-ગુડાદીનાં, માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।

તથાપિ ન તદાહ્યાતું, સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ” ॥ ૧ ॥

યયપિ ગન્ના, દૂધ ઔર ગુડ આદિ મિષ્ટ પદાર્થોં કી મધુરતામેં
બહુત હી અન્તર હૈ, તો ભી ડનકે ડસ અન્તર કો સરસ્વતી ભી નહીં
કહ સકતી ॥ ૧ ॥

“ સર્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્જઈ । મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ.

સમસ્ત સ્વરોંની બ્ધ્યાં નિવૃત્તિ થઇ બધ છે, ત્યાં તર્ક પણ પ્રવેશ કરી
શકતો નથી. તેમ જ બુદ્ધિથી પણ તે અગમ્ય છે. ઇત્યાદિ. શુદ્ધ સમ્યક્ત્વને
જે વચનાતીત અને સ્વાનુભવગમ્ય કહેલ છે તે આ પ્રકારે કે જેવી રીતે ઇષુ
(શેરડી) અને દુગ્ધાદિકની મધુરતા ઉપલોક્તાથી અનુભવગમ્ય હોય છે. કદાચ
કોઈ તેને પૂછે કે શેરડી કેવી મીઠી છે ? દૂધની મધુરતા કેવી છે ? , તો તે આ વાતને
વચનથી કહી શકશે નહિ. તે તો તેની મધુરતાને પોતાના નિજ અનુભવથી જ બાંધે
છે. આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ કહેવામાં આવી છે—

“ ઇષુ-ક્ષીર-ગુડાદીનાં, માધુર્યસ્યાન્તર મહત્ ।

તથાપિ ન તદાહ્યાતું, સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જે કે-શેરડી, દૂધ અને ગોળ આદિ મિષ્ટ પદાર્થોંની મધુરતામાં ઘણો જ
ભેદ છે તો પણ એ ભેદને સરસ્વતી પણ કહી શકતી નથી.

સમ્યક્ત્વભેદઃ—સમ્યક્ત્વં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધમ્ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સમ્યક્ત્વં વિગોધિતા મિથ્યાત્વપુદ્ગલ એવ । વિગોધિતા હિ મિથ્યાત્વપુદ્ગલા અતિસ્વચ્છ-સૂક્ષ્મવસ્ત્રમિત્ર દૃષ્ટેરધ્યવસાયાત્મકસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાઽઽવરકા ન ભવન્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમ્યક્ત્વોપચારઃ । ભાવતસ્તુ-મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

સમ્યક્ત્વકે ભેદ—

સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ, (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે જો વિશુદ્ધ પુદ્ગલ હૈં વે દ્રવ્યસમ્યક્ત્વ હૈ । યે વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વ કે પુદ્ગલ, જિસ તરહ સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિકા રોધક નહીં હોતા उसी तरह अध्यवसायस्वरूप सत्यत्व के प्रतिबन्धक नहीं होते । अर्थात् जैसे सूक्ष्मवस्त्र दृष्टिका प्रतिबन्धक नहीं होता, ठीक इसी प्रकार से वह मिथ्यात्व का शुद्ध पुंज सम्यकदर्शनरूप दृष्टिका रोधक नहीं होना । इस कारण उसे उपचार से सत्यत्व कहा गया है । मिथ्यात्व कर्म के क्षयोपशमादिक उत्पन्न हुआ आत्माका शुभ परिणाम भाव-सत्यत्व है । अन्य प्रकार से भी सत्यत्व दो प्रकार का है—(१) नैश्च-यिक-सत्यत्व, (२) व्यावहारिक-सत्यत्व । एक पौद्गलिक-सत्यत्व, दूसरा अपौद्गलिक-सत्यत्व । एक नैसर्गिक और दूसरा आधिगमिक सत्यत्व ।

સમ્યક્ત્વના ભેદ—

સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારનું છે. (૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિના બે વિશુદ્ધ પુદ્ગલ છે તે દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ છે. જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનું રોધક નથી થતું તેવી રીતે એ વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વના પુદ્ગલ અધ્યવસાય-સ્વરૂપ સમ્યક્ત્વનાં પ્રતિબંધક નથી થતાં. અર્થાત્-જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનું પ્રતિબંધક નથી થતું, ઠીક આ પ્રકારથી તે મિથ્યાત્વના વિશુદ્ધ પુદ્ગલ પુંજ સમ્યકદર્શનરૂપ દૃષ્ટિનાં રોધક નથી થતા. આ કારણે તેને ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવે છે મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલા આત્માના શુભ પરિણામ ભાવ-સમ્યક્ત્વ છે બીજા પ્રકારે પણ સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારના છે (૧) નૈશ્ચયિક-સમ્યક્ત્વ (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ, એક પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ, બીજું અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ, એક નિર્ગર્ભ અને બીજું અધિગમ-સમ્યક્ત્વ.

પ્રકારાન્તરૈરપિ સમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્, યથા-નૈશ્વયિક-વ્યાવહારિકભેદાદ્ દ્વિ-વિધમ્, પૌદ્ગલિકાપૌદ્ગલિકભેદાદ્ દ્વિવિધમ્, નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વિવિધમિતિ ।

તત્ર મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યં શુદ્ધાત્મપરિણામવિશેષરૂપં નૈશ્વયિકં સમ્યક્ત્વમ્ । વ્યાવહારિકં તુ કુદેવકુગુરુકુધર્મપરિત્યાગપૂર્વકં નિશ્ચિતરૂપેણ સુદેવસુગુરુસુધર્મસ્વીકરણં રુચિરૂપં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનાદિકમપિ ।

તથા—અપનીતમિથ્યાત્વસ્વભાવસમ્યક્ત્વપુઞ્જગતપુદ્ગલવેદનસમુત્થં ક્ષાયોપશ-મિકં વેદકં ચ પૌદ્ગલિકં સમ્યક્ત્વમ્ । અપૌદ્ગલિકં તુ પુદ્ગલવેદનવર્જિતં કેવલજીવ-પરિણામરૂપં ક્ષાયિકમૌપશમિકં ચ । નૈસર્ગિકમાધિગમિકં ચ સમ્યક્ત્વં પ્રથમાધ્યયને તૃતીયોદેશે પ્રાગેવ વર્ણિતમ્ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વ કા જો લક્ષણ કહા હૈ વહી નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ હૈ । અર્થાત્ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક સે ઉત્પન્ન હુઆ આત્મા કા શુભ અધ્યવસાયવિશેષ હી નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । કુદેવ, કુગુરુ ઓર કુધર્મ કા પરિહાર-ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપ સે સુદેવ, સુગુરુ ઓર સુધર્મ કા સ્વીકાર કરના, તથા રુચિરૂપ સે તત્ત્વાર્થકા શ્રદ્ધાન કરના આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ હૈ । હસી પ્રકાર મિથ્યાત્વ સ્વભાવ જિસ સે દૂર હો ચુકા હૈ એસા જો સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કા પુંજ હૈ ઉસકે ખીતર રહે હુઅ પુદ્ગલોં કે વેદનસે ઉત્પન્ન હુઆ જો ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ ંવં વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ વહ પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઉસ પુદ્ગલ કે વેદન સે રહિત કેવલ જીવ કે પરિણામસ્વરૂપ જો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ ઓર ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ, વહ અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । નૈસર્ગિક ઓર આધિગમિક સમ્યક્ત્વકા વર્ણન પ્રથમ અધ્યયન કે તીસરે ઉદેશ મેં કિયા જા ચુકા હૈ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વનું જે લક્ષણ કહ્યું છે તે નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ છે. અર્થાત્ મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલ આત્માનું શુભ અધ્ય-વસાયવિશેષ જ નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ છે. કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મના પરિહાર-ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપથી સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મનો સ્વીકાર કરવો, તથા રૂચિ-રૂપથી તત્ત્વાર્થનું શ્રદ્ધાન કરવું આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વ સ્વભાવ જેનાથી દૂર થઈ ગયેલ છે એવા જે સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુંજ છે એની અંદર રહેલા પુદ્ગલોના વેદનથી ઉત્પન્ન થયેલા જે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ તેમજ વેદક-સમ્યક્ત્વ છે તે પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ છે. એ પુદ્ગલના વેદનથી રહિત કેવલ છવના પરિણામસ્વરૂપ જે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે આ અપૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ છે. નિર્સર્ગ અને અધિગમ સમ્યક્ત્વનું વર્ણન પ્રથમ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદેશમાં કરવામાં આવેલ છે.

પ્રકારાન્તરેણ સમ્યક્ત્વં દશઘા, તદ્યથા—(૧) ઔપશમિક—(૨) ક્ષાયિક—(૩) ક્ષાયોપશમિક—(૪) સાસ્વાદન—(૫) વેદકભેદાત્ પશ્ચવિધમ્ । તત્ર પ્રત્યેકં નૈર્સર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વૈવિધ્યે દશવિધત્વં ભવતિ ।

(૧) અનન્તાનુવન્ધિકપાયચતુષ્ટયોપશમાનન્તરં મિથ્યાત્વ—મિશ્ર—સમ્યક્ત્વ—મોહનીયકર્મણાં સર્વથોપશમાજ્ઞાતો જીવમ્ય તત્ત્વરુચિરૂપઃ શુભપરિણામઃ ઔપશમિકં સમ્યક્ત્વમ્ । એત્ત્વોપશમશ્રેણિપ્રતિપન્નસ્ય જીવસ્ય ભવતિ ।

(૨) તેપાં સર્વથા ક્ષયેણ નિર્વૃત્તં જીવસ્ય શુભપરિણામરૂપં ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વં પ્રોચ્યતે—અનન્તાનુવન્ધિકપાયચતુષ્ટય-

અન્ય પ્રકાર સે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકાર કા મી કહા ગયા હૈ, જૈસે—(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, ઔર (૫) વેદક । યે પાંચોં હી નિર્સર્ગ ઔર અધિગમ કે ભેદ સે દો દો પ્રકારકે હોતે હૈં, ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ત્વ કે દશ ભેદ હો જાતે હૈં ।

(૧) અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ, ઇન ચાર કપાયોં કે ઉપશમ (સત્તા મેં સ્થિત રહને)કે વાદ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્ર-મોહનીય ંવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે સર્વથા ઉપશમ સે ઉત્પન્ન હુઆ જો તત્ત્વરુચિરૂપ જીવકા શુભ પરિણામવિશેષ હૈ વહ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણિવાલે જીવ કે હોતા હૈ ૧ ।

(૨) અનન્તાનુવન્ધી આદિ (૭) સાત પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જો જીવ કો શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ૨ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર હૈ—

ખીલ પ્રકારે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના પાણુ કહેવામાં આવે છે. જેમ—(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, અને (૫) વેદક. એ પાંચે નિર્સર્ગ અને અધિગમના લેહથી બે બે પ્રકારના છે. એ રીતે સમ્યક્ત્વના દશ ભેદ થઈ જાય છે.

(૧) અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ માન માયા અને લોભ, એ ચાર કપાયોના ઉપશમ (સત્તામાં સ્થિત રહેવું) પછી મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય કર્મોના સર્વથા ઉપશમથી ઉત્પન્ન થયેલાં બે તત્ત્વરૂચિરૂપ જીવના શુભ પરિણામવિશેષ છે તે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણીવાળા જીવને થાય છે (૧).

(૨) અનન્તાનુવન્ધી આદિ ૭ સાત પ્રકૃતિયોના સર્વથા ક્ષયથી બે જીવને શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ છે (૨).

(૩) ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ આ પ્રકારે છે:—

ક્ષયાન્તરં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણાં ક્ષયોપશમાત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મણામુદયાच्च
સંજાત આત્મપરિણામઃ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વમ્ । તત્રેદમવગન્તવ્યમ્—યદુદીર્ણમુદય-
માગતં મિથ્યાત્વમોહનીયં કર્મ, તદ્દિ વિપાકોદયેન વેદિતત્વાત્ ક્ષયં પ્રાપ્તમ્, યચ્ચ
શેપસત્તાયામનુદિતં વર્તતે, તદુપશાન્તમ્ । ઉપશાન્તં નામ—અનુદયાવસ્થાપનમ્ ।
તત્ર—મિથ્યાત્વમિશ્રપુઝ્જાવાશ્રિત્યાનુદયાવસ્થાપનં સમ્યક્ત્વપુઝ્જમાશ્રિત્ય તુ અધિકાંશ-
તયા ઉદીર્ણાવસ્થાપનમ્ । તદેવમુદિતસ્ય મિથ્યાત્વસ્ય ક્ષયેણાનુદિતસ્ય ચોપશમેન સમ્ય-
ક્ત્વકર્મપુદ્ગલાનાં કિયતાશ્ચિદ્વેદનેન ચ નિર્વૃત્તં=નિષ્પન્નં ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

અનન્તાનુબન્ધી ચાર કપાયોં કે ક્ષય કે અનન્તર, મિથ્યાત્વમોહનીય
કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે, એવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે જો આત્મા
કા પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ, અર્થાત્
હસ સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વ કે કુછ ભાગકા ક્ષય હો જાતા હૈ ઓર
કુછ ભાગકા ઉપશમ રહતા હૈ, વહ હસ પ્રકાર સે કિ—મિથ્યાત્વકે
જો સર્વઘાતિસ્પર્દક હૈં ડનકા તો ઉદયભાવી ક્ષય (ઉદય મેં આયે
હુએ સર્વઘાતિસ્પર્દકોં કા વિના ફલ દિયે હી ચિર જાના) હો
જાતા હૈ, એવં ડન્હીં કે આગામી કાલમેં ઉદય આનેવાલે નિપેકોં (કર્મ
પુદ્ગલોંકે રચનાવિશેષોં) કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહતા હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ
પ્રકૃતિ જો દેશઘાતી હૈ ડસકા યહાં પર ઉદય રહતા હૈ, અતઃ યહાં પર
મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા જિતના ખી અંશ ઉદય મેં આયા હૈ, વહ તો
વિપાકરૂપ ઉદય સે વેદ લિયા ગયા હૈ, હસલિયે ડત્તને ભાગ કા તો ક્ષય
હો ચુકા હૈ, એવં જો અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ હૈ કિ જો અખી તક

અનંતાનુબન્ધી ચાર કપાયોના ક્ષયના અનન્તર મિથ્યાત્વ—મોહનીય કર્મના
ક્ષયોપશમથી અને સમ્યક્ત્વ—મોહનીય કર્મના ઉદયથી જે આત્માનો પરિણામ—ભાવ—
ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે. અર્થાત્ આ સમ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વના
કોઈ ભાગનો ક્ષય થઈ જાય છે અને કોઈ ભાગનો ઉપશમ રહે છે. તે એ
પ્રકારથી કે મિથ્યાત્વના જે સર્વઘાતી સ્પર્દક છે તેનો તો ઉદય—ભાવી ક્ષય
(ઉદયાગત સર્વઘાતિ સ્પર્દકોતું ક્ષણ આખ્યા વિના તુટી જવું) થઈ જાય છે
અને એના આગામી કાળમાં ઉદય આવવાવાળા નિપેકો (કર્મ પુદ્ગલોના રચના
વિશેષો) નો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ જે દેશઘાતી છે
એનો આંહી ઉદય રહે છે, એટલે અહીંયા મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મનો જેટલો
પણ અંશ ઉદયમાં આવ્યો તે તો વિપાકરૂપ ઉદયથી વેદવામાં આવેલ છે જેથી
એટલા ભાગનો તો ક્ષય થઈ ગયેલ છે. અને જે અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ છે

આત્મપરિણામરૂપસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાનાવારકત્વાદયં વિગોધિતપુદ્ગલપુઞ્જોડપ્યુપ-
ચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલવેદનસમુદ્ભૂતત્વાદિદં સમ્યક્ત્વં પૌદ્ગલિકમ્ ।

ઉદય મેં નહીં આયા છે—સિर्फ સત્તા મેં હી વૈઠા હુઆ છે, વસ इसीका नाम सदवस्थारूप उपशम है, इसीको अनुदित=अनुदय अवस्था भी कहते हैं । यहां पर जो मिथ्यात्व की अनुदयावस्था कही गई है वह मिथ्यात्वके कुछ भाग की तथा मिश्रपुंजकी अपेक्षा को लेकर ही कही गई है, क्योंकि इनका यहां पर उदय नहीं है तथा सम्यक्त्वप्रकृतिका ही कितनेक अंश से उदय है । इसप्रकार उदित मिथ्यात्व के क्षय से और अनुदित उसी मिथ्यात्व के उपशम से और कितनेक सम्यक्त्व—कर्मके पुद्गलों के वेदन होनेसे यह क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न होता है । इस प्रकार से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का लक्षण सुघटित हो जाता है ।

यह सम्यक्त्व आत्मपरिणामरूप सम्यक्त्व का अनावारक-आवरण करनेवाला नहीं—होने से उपचार से सम्यक्त्व कहा गया है, क्योंकि इस सम्यक्त्वमें विगोधितपुद्गलपुंज का—सम्यक्त्व—प्रकृतिका उदय है और उसीके उदयरूप वेदन से यह सम्यक्त्व हुआ है, इसलिये पुद्गलजनित होने से यह पौद्गलिक है । इस पौद्गलिक कार्य का जो सम्यक्त्व कहा गया है वह इसी हेतु से कि वह आत्मपरिणामरूप जो सम्यक्त्व है उसका आवरण नहीं करता है ।

ને હજી મુખી ઉદયમા આવેલ નથી ક્રૂત સત્તામાજ જેઠેલ છે, બસ એનું નામ સદવસ્થારૂપ ઉપશમ છે, એને અનુદિત-અનુદયઅવસ્થા પણ કહે છે. અહીંયા ને મિથ્યાત્વની અનુદયાવસ્થા કહેવાઈ છે તે મિથ્યાત્વના કોઈ ભાગની અને મિશ્ર-પુંજની અપેક્ષાએ કહેવાઈ છે. કારણ કે એનો આ જગ્યોએ ઉદય નથી, તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો થોડા ભાગે ઉદય છે. આ પ્રકારે ઉદિત મિથ્યાત્વના ક્ષયથી, અને અનુદિત એજ મિથ્યાત્વના ઉપશમથી અને કેટલાક સમ્યક્ત્વકર્મના પુદ્ગલોના વેદન હોવાથી આ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રકારથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ સુઘટિત થઈ જાય છે.

આ સમ્યક્ત્વ આત્મ-પરિણામરૂપ સમ્યક્ત્વના અનાવારક-આવરણ કરવાં વાળાં નહિ—હોવાથી ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વમાં વિગોધિતપુદ્ગલપુંજનો—સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિનો ઉદય છે અને એના ઉદયરૂપ વેદનથી એ સમ્યક્ત્વ થયેલ છે, માટે પુદ્ગલજન્ય હોવાથી આ પૌદ્ગલિક છે, અને આ પૌદ્ગલિક કાર્યને ને સમ્યક્ત્વ કહેલ છે તે આ હેતુથી કે તે આત્મપરિણામરૂપ ને સમ્યક્ત્વ છે એનું આવરણ નથી કરતું.

નનુ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્યૌપશમિકસમ્યક્ત્વવાત્કો ભેદઃ ? ઇતિ ચેદુચ્યતે—ક્ષાયોપશમિકે મિથ્યાત્વદલિકવેદનં વિપાકતો નાસ્તિ, પ્રદેશતસ્તુ વિદ્યતે । ઔપશમિકે તુ પ્રદેશતોઽપિ નાસ્તીતિ વિશેષ ઇતિ ।

(૪) અથ સાસ્વાદનં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે—આસ્વાદનેન=સમ્યક્ત્વરસાસ્વાદ-નેન સહ વર્તત ઇતિ સાસ્વાદનમ્ । યથા—ક્ષીરાન્નં શુક્ત્વા તદ્વિપયે ચિત્તવિકારેણ યદિ કથિત્ તદ્વમતિ, તદાઽસૌ વમનકાલે ક્ષીરાન્નરસમાસ્વાદયતિ, તથા મિથ્યાત્વોદયે

શંકા—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં ઔર ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં કયા ભેદ હૈ? શંકાકારકા અભિપ્રાય યહાં પર ઇતના હી હૈ કિ જૈસે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકા ઉદય નહીં હૈ, ડસી પ્રકાર સે ઉપશમસમ્યક્ત્વ મેં બી નહીં હૈ; ફિર ઇન ડોનોં મેં અન્તર કયા હૈ? ।

ઉત્તર—ઇન ડોનોં મેં અન્તર હૈ ઔર વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ કિ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકે દલિયોં કા વેદન યવપિ વિપાક-રૂપ સે નહીં હૈ પરન્તુ પ્રદેશોદય સે ડનકા વેદન વહાં પર હૈ હી । ઔપ-શમિક સમ્યક્ત્વ મેં તો ડોનોં રૂપ સે હી ડનકા વેદન નહીં હૈ ૩ ।

(૪) અવ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—

‘સહ-આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જો સમ્યક્ત્વ-રૂપ રસકે આસ્વાદન સે સહિત હો ડસકા નામ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ હૈ । જૈસે કોઈ વ્યક્તિ સ્ત્રીર સ્ત્રાકર પશ્ચાત્ ચિત્ત મેં તદ્વિષયક વિકાર હોનેપર વમન કરતા હૈ ડસ સમય મેં બી વહ ડસકે રસાસ્વાદકા અનુભવ કરતા હૈ,

શંકા—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં શો ભેદ છે ? શંકાકારને અભિપ્રાય આ ઠેકાણે એ છે કે જેવી રીતે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વનો ઉદય નથી તેવી જ રીતે ઉપશમ-સમ્યક્ત્વમાં પણ નથી તો પછી એ બન્નેમાં ભેદ શો છે ?

ઉત્તર—એ બન્નેમાં ભેદ છે અને તે આ પ્રકારે છે—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વના દલિયોનું વેદન છે, જે કે વિપાકરૂપથી નથી પરન્તુ પ્રદેશોદયથી એનું વેદન ત્યાં છે જ. ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં તો બન્ને રૂપથી તેનું વેદન છે જ નહિ. (૩)

(૪) હવે સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે:—

‘સહ આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જે સમ્યક્ત્વરૂપરસના આસ્વાદનથી સહિત છે એનું નામ સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ છે, જેમકે કોઈ વ્યક્તિ દૂધપાક જમ્યા પછી ચિત્તમાં તદ્વિષયક વિકાર થવાથી વમન કરે છે એ સમયમાં પણ તે એના રસાસ્વાદનો અનુભવ કરે છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વના ઉદયથી મિથ્યા-

સતિ મિથ્યાત્વાભિમુખતયાડનન્તાનુવન્ધિકપાયોદયાદૌપશમિકસમ્યક્ત્વોપરિ વ્ય-
લીકચિત્તસ્ય તત્સમ્યક્ત્વમુદ્ગમતસ્તદ્રસાસ્વાદનં ગધન્યતઃ સમયમાત્રે, ઉત્કર્ષતશ્ચ પહા-
વલિકાયાં ભવતિ, તસ્માદિદં સમ્યક્ત્વં સાસ્વાદનમુચ્યતે । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વેડનન્તા-
નુવન્ધિકપાયોદયસત્ત્વેનાત્મપરિણામનૈર્મળ્યાભાવાદવ્યક્તા તત્ત્વાર્થાનભિરુચિસ્તિષ્ઠતિ,
મિથ્યાત્વે તુ વ્યક્તા, इत्येव तयोर्भेदः ।

यद्वा-इदं सासादननाम्नाऽपि निगद्यते । तत्र-आयम्=औपशमिकसम्य-
क्त्वलाभं सादयति=अपनयतीत्यासादनम्=अनन्तानुवन्धिकपायवेदनम् । तस्मिन्
उसी प्रकार मिथ्यात्वके उदय होनेसे मिथ्यात्वप्राप्तिके सम्मुख हुआ
जीव भी अनन्तानुवन्धी कपाय के उदय से जब औपशमिक सम्यक्त्वके
ऊपर अरुचि-चित्तवाला होकर उसका वमन-त्याग कर देता है, अर्थात्
-जब वह सम्यक्त्व उससे छूट जाता है, तब उसका आस्वादन भी उसे
कमसे कम एक समय तक, और ज्यादा से ज्यादा छह आवलिकाल तक
बना ही रहता है । इस कारण इस सम्यक्त्व को सास्वादनसम्यक्त्व
कहा गया है । इस सम्यक्त्व में अनन्तानुवन्धी कपाय के उदय का सद्भाव
होने से (क्रोधादिकों में से किसी एक के उदयका सद्भाव होने से) आत्मा के
परिणामों में यथावत् निर्मलता-विशुद्धि-का अभाव हो जाता है । इससे
यहां तत्त्वार्थ के प्रति यद्यपि व्यक्त-प्रगट-रूप में अप्रीति-अरुचि नहीं है;
फिर भी अव्यक्त रूपसे वह यहां है ही । इसीलिये तो मिथ्यात्व और
सास्वादनमें इसी अप्रीति की व्यक्ताव्यक्तता से भेद माना गया है ।

ત્વપ્રાપ્તિના સમ્મુખ થયેલ જીવ પણ અનંતાનુબંધી કપાયના ઉદયથી ન્યારે
औपशमिक-सम्यक्त्वना ઉપર અરુચિચિત્તવાળા થઇને એનો વમન-ત્યાગ કરે
છે, અર્થાત્ ન્યારે તે સમ્યક્ત્વ છુટી જાય છે ત્યારે એનું આસ્વાદન પણ એને
ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ-આવલિકાળ સુધી
રહે છે. આ કારણે આ સમ્યક્ત્વને સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે.

આ સમ્યક્ત્વમાં અનંતાનુબંધી કપાયના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી (ક્રોધા-
દિકામાંથી કોઈ એકના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી) આત્માના પરિણામોમાં યથાવત્
નિર્મળતા-વિશુદ્ધિ-નો અભાવ થઈ જાય છે, તેથી અહીંયા તત્ત્વાર્થના પ્રતિ
યદ્યપિ વ્યક્ત-પ્રગટ-રૂપમાં અપ્રીતિ-અરુચી નથી; તો પણ અવ્યક્તરૂપથી તે
અહીંયા છે જ. તેથી તો મિથ્યાત્વ અને સાસ્વાદમાં એ જ અપ્રીતિની વ્યક્તા-
વ્યક્તતાથી ભેદ માનવામાં આવે છે.

સતિ હિ—અનન્તસુખદો નિઃશ્રેયસતરૂવીજભૂત ઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘન્યતઃ સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ પદ્મિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ । આસાદનમિત્યત્ર વૃષોદરાદિત્વાદ્ યકારલોપઃ, ‘કૃદ્વહુલ’—મિતિ કર્તૃયનટ્ । આસાદનેન સહ વર્તત—ઇતિ સાસાદનમ્ । અનન્તાનુવન્ધિકપાયોદયે સતિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વાત્ પ્રપતન્ મિથ્યાત્વસંક્રમણા-ભિમુખઃ સન્ યાવત્ મિથ્યાત્વભૂર્મિ ન પ્રાપ્નોતિ તદન્તરાલે વર્તમાનસ્ય યત્ સમ્યક્ત્વં તત્ સાસાદનં ભવતિ ।

અથવા—યહ સમ્યક્ત્વ સાસાદન કે નામ સે મી કહા જાતા હૈ, અર્થાત્ હસકા દૂસરા નામ સાસાદનસમ્યક્ત્વ મી હૈ । ‘આયં સાદયતિ—અપનયતીત્યાસાદનમ્; આસાદનેન સહ વર્તતે—ઇતિ સાસાદનમ્’ અર્થાત્—‘આય’ નામ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વકે લાભકા હૈ । ઉસ લાભકો જો હટાતા હૈ, ઉસે આસાદન કહતે હૈ । ઉસકે સહિત હોને સે વહ સાસાદન કહા જાતા હૈ । હસ સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિરૂપ લાભકો હટાનેવાલા અનંતાનુબંધી કષાય કે ઉદયકા વેદન હી હૈ । ક્યોં કિ હસકે હોને પર અનન્ત સુખદાતા ઔર નિશ્રેયસ—મોક્ષરૂપ વૃક્ષકા વીજરૂપ જો ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા લાભ—સદ્ભાવ કસ સે કમ ઇક સમય તક ઔર અધિક સે અધિક છહ આવલિકાલ તક હી રહ કર ફિર દૂર હો જાતા હૈ । હસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વમેં જો અનંતાનુબંધી કષાય કા ઉપશમ હૈ વહ અપને કાલ—અન્તર્મુહૂર્ત—તક હી રહતા હૈ । હસકે વાદ જવ ઉસ કષાય કા ઉદય હો જાતા હૈ તવ યહ જીવ ઔપ-

અથવા—આ સમ્યક્ત્વ સાસાદનના નામથી પણ કહેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એનું ‘ળીલું’ નામ સાસાદન—સમ્યક્ત્વ પણ છે. ‘આયં સાદયતિ—અપનયતીત્યાસાદનમ્, આસાદનેન સહ વર્તતે ઇતિ સાસાદનમ્’ અર્થાત્ ‘આય’ નામ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વના લાભનું છે. એ લાભને જે કહેવે છે એને આસાદન કહે છે. એના સહિત હોવાથી તે સાસાદન કહેવાય છે.

આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિરૂપ લાભને કહેવાવાળા અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયનું વેદન જ છે, કારણ કે આના હોવાથી અનન્ત સુખ દેવાવાળા અને નિશ્રેયસ—મોક્ષ—રૂપ વૃક્ષના ળીજસ્વરૂપ જે ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે એનો લાભ—સદ્ભાવ ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમા વધારે છ આવડી કાળ સુધી રહીને પછી દૂર થઈ જાય છે એનો ફલિતાર્થ એ છે કે ઔપશમિક સમ્યક્ત્વમાં જે અનંતાનુબંધી કષાયનો ઉપશમ છે તે પોતાના કાલ—અન્તર્મુહૂર્ત સુધી રહે છે. ત્યારબાદ બ્યારે એ કષાયનો ઉદય થઈ જાય છે

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વમુચ્યતે-વેદયતિ-અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનિતિ વેદ-
કોઽનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જસ્ય વહુ-
તરક્ષપિતસ્ય ચરમપુદ્ગલાનાં ગ્રાસસમયે વેદકસમ્યક્ત્વં ભવતિ । તથાહિ-ક્ષપકશ્રેણિ-
પ્રાપ્તોઽન્તાનુવંધિકપાયચતુષ્ઠયમપિ ક્ષપયિત્વા મિથ્યાત્વમિશ્રપુદ્ગલપુઞ્જાન્ ક્ષપયતિ,
શમિકસમ્યક્ત્વસે પતિત હોકર મિથ્યાત્વકે સમ્મુખ હોતા હૈ—(અમી
મિથ્યાત્વમેં પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ કિન્તુ ઉસકે સમ્મુખ હી હુઆ હૈ); સો
જવ તક યહ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિ કો પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ, અર્થાત્-
જવ તક સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વત સે ગિર કર વીચમેં હી હૈ, તવ તક ઉસ
જીવકા જો સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા નામ સાસાદન હૈ ૪ ।

(૬) વેદકસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ—

વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્-इति वેदकः=अनुभविता,
तदर्थान्तर्भूतत्वात् सम्यक्त्वमपि वेदकम् ।

અર્થાત્-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોં કા જો અનુભવ કરનેવાલા હૈ,
ઉસે વેદક-અનુભવિતા કહતે હૈં । ઉસસે અભિન્ન હોનેસે સમ્યક્ત્વ મી
વેદક કહલાતા હૈ । સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે જિતને મી પુદ્ગલપુંજ હૈં, ઉનમેં
સે અધિકતર પુદ્ગલપુંજોં કા ક્ષય હો ચુકને પર વાકી જો ચરમપુદ્ગલપુંજ
રહતે હૈં ઉનકે ગ્રાસકે સમીપ (નષ્ટ કરને કે સમય)મેં વહ વેદકસ-
મ્યક્ત્વ હોતા હૈ । ક્ષપકશ્રેણીકો પ્રાપ્ત હુઆ જીવ અનંતાનુવંધિચતુષ્ઠય

ત્યારે એ જીવ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વથી પતિત થઈ મિથ્યાત્વની સમ્મુખ થાય
છે (હજી મિથ્યાત્વમાં પ્રાપ્ત નથી થયો પણ એની સમ્મુખ થયો છે) માટે ન્યાં
સુધી એ જીવ મિથ્યાત્વથી ભૂમિને પ્રાપ્ત નથી થયો, અર્થાત્-ન્યાં સુધી
સમ્યક્ત્વથી પર્વતથી પડીને વચમાં જ છે તે સમય તે જીવનું જે સમ્યક્ત્વ
છે તેનું નામ સાસાદન છે (૪)

(૫) વેદક-સમ્યક્ત્વનુ સ્વરૂપ કહે છે—‘વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્
इति वेदकः=अनुभविता, तदर्थान्तर्भूतत्वात् सम्यक्त्वमपि वेदकम्’

અર્થાત્—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોનો જે અનુભવ કરવાવાળો છે,
એને વેદક-અનુભવિતા કહે છે. એનાથી અભિન્ન હોવાથી સમ્યક્ત્વ પણ વેદક
કહેવાય છે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના જેટલા પણ પુદ્ગલપુંજ છે, એમાંથી અધિકતર
પુદ્ગલપુન્યનો નાશ થયા પછી બાકી જે ચરમ પુદ્ગલ રહે છે એના ગ્રાસની
સમીપ (નાશ કરવાના સમય)મા તે વેદક-સમ્યક્ત્વ થાય છે. ક્ષપકશ્રેણીને
પ્રાપ્ત થયેલા જીવ અનંતાનુવંધિ-ચતુષ્ઠયનું પણ ક્ષપણ કરીને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ

ततः परं सम्यक्त्वपुञ्जमपि उदीर्योदीर्यानुभवेन निर्जरयति, तेनोदीरणीयसम्यक्त्व-पुञ्जाभावो जायते, तदेवं चरमग्रासेऽवतिष्ठमानेऽद्यापि सम्यक्त्वपुद्गलानां कियता-मपि वेद्यमानत्वात् वेदकं सम्यक्त्वमुपजायते। इदमपि सम्यक्त्वं पौद्गलिकं विज्ञेयम्।

क्षायोपशमिकसम्यक्त्वी जीवः सम्यक्त्वमोहनीयपुञ्जस्याधिकांशं क्षपयित्वा यदा सम्यक्त्वमोहनीयस्यान्तिमपुद्गलानां वेदनं करोति तदानीं जायमान आत्मप-रिणामो वेदकसम्यक्त्वमिति निष्कर्षः। वेदकसम्यक्त्वप्राप्त्यनन्तरं क्षायिकसम्यक्त्वं लभ्यत एव।

का भी क्षपण करके मिथ्यात्वप्रकृति और मिश्रप्रकृति के पुद्गलपुंजोंका जब क्षय कर देता है तब उसके बाद सम्यक्त्वप्रकृति के पुंजोंकी अपने अनुभव से उदीरणा करके निर्जरा करता है। ऐसा करने से उदीरणीय-उदीरणा करने योग्य-सम्यक्त्वप्रकृति के पुंजों का अभाव हो जाता है। इस प्रकार अन्तिम ग्रास के रहने पर उस समय भी कितनेक अंतिम अंशवर्ती सम्यक्त्वप्रकृति के पुद्गलपुंजों का अनुभव होता है। इसका अनुभव करना ही वेदक-सम्यक्त्व है। यह सम्यक्त्व भी पौद्गलिक जानना चाहिये।

इसका फलितार्थ यही है-कि क्षायोपशमिक-सम्यक्त्ववाला जीव सम्यक्त्वमोहनीय कर्म के पुद्गलपुंजके अधिकांश भागका क्षय करके जब उसी सम्यक्त्वमोहनीय कर्म के अंतिम पुद्गलों का वेदन करता है उस समय में उत्पन्न होनेवाला आत्मपरिणाम वेदक-सम्यक्त्व है। वेदकसम्यक्त्व की प्राप्तिके बाद जीव क्षायिकसम्यक्त्व को प्राप्त कर ही लेता है।

अने मिश्रप्रकृतिना पुद्गलपुंजेनो न्यारे क्षय करी नाछे छे त्यारे पछी सम्यक्त्वप्रकृतिना पुंजनी पोताना अनुभवथी उदीरणा करीने निर्जरा करे छे, अम करवाथी-उदीरणीय-उदीरणा करवा योग्य सम्यक्त्व प्रकृतिना पुंजने अलाव थछ लय छे. आ प्रकारे अन्तिम ग्रासना रहेवाथी ते समय पणु केटलाक अंतिम अंशवर्ती सम्यक्त्वप्रकृतिना पुद्गलपुंजेनो अनुभव थाय छे. जेनो अनुभव करवे ते वेदक-सम्यक्त्व छे. आ सम्यक्त्व पणु पौद्ग-लिक लणुवु लेधये.

आनो इलितार्थ जे छे के क्षायोपशमिक सम्यक्त्ववाणा एव सम्यक्त्व-मोहनीय कर्मना पुद्गलपुंजना अधिकांश लागनो क्षय करीने न्यारे जे सम्यक्त्व-मोहनीय कर्मना अन्तिम पुद्गलानु वेदन करे छे ते समयमां उत्पन्न थवावाणा आत्मपरिणाम वेदक-सम्यक्त्व छे, वेदक-सम्यक्त्वनी प्राप्ति पछी क्षायिक-सम्यक्त्वने एव प्राप्त करी जे दे छे.

નન્વેવં સતિ વેદકસ્ય ક્ષાયોપશમિકાત્ કો ભેદઃ, સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જવેદનસ્યો-
ભયત્રાપિ તુલ્યત્વાત્? અત્રોચ્યતે-વેદકે ચલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જચરમગ્રાસ-
વેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિ-
ઘ્નન્તિ, તેન તદ્વર્જિતપુદ્ગલાનાં વેદનં ભવતિ, ઇતિ વિશેષોઽવધારણીય ઇતિ। ઉક્તચ્ચ-

શંકા--યદિ યહી વાત હૈ કિ ઇન દોનોં સમ્યક્ત્વોં મેં સમ્યક્ત્વ
પ્રકૃતિ કે પુંજોં કા વેદન હોતા હૈ તો ફિર વેદકસમ્યક્ત્વકા ક્ષાયોપ-
શમિકસમ્યક્ત્વસે ભેદ હી વ્યા રહા ?

સમાધાન--વેદકસમ્યક્ત્વમેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ચરમપુદ્ગલોં કા
વેદન હોતા હૈ, ઓર ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ મેં ઇનસે અવશિષ્ટોંકા।
વસ, યહી ઇન દોનોં મેં ભેદ હૈ। ઇસી વાત કો “વેદકે ચલુ સર્વો-
દિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જચરમગ્રાસવેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલેતુ
ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિઘ્નન્તિ”। ઇન પંક્તિયોંમેં
ટીકાકારને સ્પષ્ટ કિયા હૈ। અર્થાત્-વેદકસમ્યક્ત્વ મેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે
ઉદિત હુઅ સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંમેંસે સિર્ફ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલોં કા વેદન
હોતા હૈ। ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ કે સમય મેં તો ડસ ચરમગ્રાસવર્તી
પુદ્ગલપુંજ સે અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા વેદન હોતા હૈ।
કલ્પના કીજિયે-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંકી સંખ્યા ૧૦૦ હૈ।

શંકા--જો ઓ વાત છે કે ત્યારે ઓ ણને સમ્યક્ત્વોમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃ-
તિના પુંજેનું વેદન થાય છે તો પછી વેદક-સમ્યક્ત્વના ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વથી
ભેદ જ શા રહ્યો ?

સમાધાન--વેદક-સમ્યક્ત્વમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના ચરમ પુદ્ગલોનાં વેદન થાય
છે, અને ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં ઓનાથી અવશિષ્ટોનાં વેદન થાય છે. ણસ
આજ આ ણનેમા ભેદ છે.

આજ વાતને “વેદકે ચલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જચરમગ્રાસવેદનમ્ ક્ષાયોપ-
શમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિઘ્નન્તિ”

આ પંક્તિઓમાં ટીકાકારે સ્પષ્ટ કરી છે. અર્થાત્ વેદક-સમ્યક્ત્વમાં સમ્ય-
ક્ત્વપ્રકૃતિના ઉદિત થયેલ ણધા પુદ્ગલપુંજેમાંથી ક્ષત ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગ-
લોના જ વેદન થાય છે.

ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વના સમયમાં તો આ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલપુંજથી
અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અવ્યવહિત પૂર્વવર્તી પુદ્ગલપુંજેનું વેદન થાય છે.
કલ્પના કરિયે કે સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોની સંખ્યા ૧૦૦ છે.

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलगासं ॥ १ ॥
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ।

इनमें से ९९ वें तकके पुद्गलपुंजोंका वेदन क्षायोपशमिकसम्यक्त्वमें होगा, अन्तिम १०० वें का वेदन वेदकसम्यक्त्वमें । इस अन्तिम १०० वें का वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमें नहीं होगा ५ । औपशमिकसम्यक्त्वादिकों का स्वरूप इन गाथाओंमें भी संक्षेपरूप से इस प्रकार कहा है—

गाथा—खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलगासं ॥ १ ॥
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ॥ ४ ॥ ” इति ।

आभांथी ८८ सुधीना पुद्गलपुंजेनुं वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमां थशे.
 अन्तिम १०० मानुं वेदन वेदक-सम्यक्त्वमां थशे (५).

औपशमिक-सम्यक्त्वादिकेनुं स्वरूप आ गाथाओमां पणु संक्षेपइपथी
 आ प्रकारे क्खुं छे—

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलगासं ॥ १ ॥
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउ मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायण-सम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ॥

હાયા—ક્ષીણે દર્શનમોહે, ત્રિવિધેઽપિ ક્ષાયિકં ભવતિ સમ્યક્ (સમ્યક્ત્વમ્) ।
 વેદકમિહ સર્વોદિત-ચરમકપુદ્ગલગ્રાસમ્ ॥ ૧ ॥
 ઉપશમશ્રેણિગતસ્ય તુ, ભવતિ હુ ઔપશમિકં તુ સમ્યક્ત્વમ્ ।
 યો વા અકૃતત્રિપુઞ્જ, અક્ષપિતમિથ્યાત્વો લભતે સમ્યક્ (સમ્યક્ત્વમ્) ॥૨॥
 ઉપશમસમ્યક્ત્વાત્ ચ્યુત્વા મિથ્યાત્વમપ્રાપ્નુવતઃ ।
 સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વં, તદન્તરાલે પઢાવલિકમ્ ॥ ૩ ॥
 મિથ્યાત્વં યદુદીર્ણ, તત્ક્ષીણમનુદિતં ચોપશાન્તમ્ ।
 મિશ્રીભાવપરિણતં, વેદમાનં ક્ષાયોપશમમ્ (ક્ષાયોપશમિકમ્) ॥૪॥ ઇતિ ।

મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શન-મોહનીય કર્મ કે સર્વથા ક્ષય હોને પર હી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, સવ ઉદિત પુદ્ગલોં મેં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોંકા વેદન હોના વેદકસમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૧ ॥ ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોંકો ઉપશમસમ્યક્ત્વ કા લાભ હોતા હૈ । અથવા જિસને મિથ્યાત્વકર્મ કે ત્રીન પુંજ નહીં કિયે હૈં એસે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કે, તથા જિસને મિથ્યાત્વકા ક્ષય મી નહીં કિયા હૈ કિંતુ ઉસકા ઉપશમ કિયા હૈ ઉસ જીવ કે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવકે ૭ પ્રકૃતિયોં (અનન્તાનુબંધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭) કે ઉપશમસે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ; એસા સિદ્ધાન્તકારોંને કહા હૈ । ૮વે ૯વે ૧૦વે ઓર ૧૧ વે ગુણસ્થાનમેં ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, ક્યોં કિ યે ઉપશમશ્રેણિ કે સ્થાન હૈં । તથા અનાદિ-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ

“ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શનમોહનીય કર્મનો ક્ષય તથા પછી જ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, બધા ઉદિત પુદ્ગલોમાં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોનું વેદન થવું વેદક-સમ્યક્ત્વ છે (૧)

ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત હોવાને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. અથવા જેણે મિથ્યાત્વકર્મના ત્રણ પુંજ નથી કર્યા, એવા મિથ્યાદૃષ્ટિ હોવાને તથા મિથ્યાત્વનો ક્ષય કર્યો નથી પણ તેનો ઉપશમ કર્યો છે, એ હોવાને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વ થાય છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ હોવાની સાત ૭ પ્રકૃતિયો (અનન્તાનુબંધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭)ના ઉપશમથી ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે, એવું સિદ્ધાન્તકારોએ કહ્યું છે ૮ માં, ૯ માં, ૧૦ માં અને ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે, કારણ કે એ ઉપશમશ્રેણીનું સ્થાન છે. તથા અનાદિ

યન્મિથ્યાત્વમુદીર્ણં તત્ ક્ષીણમ્ । યત્ અનુદિતમ્ અનુદીર્ણં તન્મિથ્યાત્વં, મિ-
શ્રીભાવપરિણતં=મિશ્રમોહનીયં, ચ શબ્દાત્ સમ્યક્ત્વદલિકં યદનુદીર્ણમનુદિતં તદપિ,
ઉપશાન્તમ્, અનુદીર્ણાનુદિતમિથ્યાત્વમિશ્રસમ્યક્ત્વદલિકેતિત્રયમુપશમાવસ્થમિ-
ત્યર્થઃ । વેદ્યમાનમ્=ઉદયાવસ્થાં સમાપન્નં સમ્યક્ત્વદલિકં યત્ર તત્ ક્ષાયોપશમિકં
સમ્યક્ત્વમુચ્યતે, इत्यर्थः ॥ ૪ ॥

કે સર્વપ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । યહ જીવ મિથ્યાત્વ કર્મ કે
ત્રીન પુંજ નહીં કરતા હૈ ઓર ન મિથ્યાત્વકા ક્ષય હી કરતા હૈ ॥ ૨ ॥
ઉપશમસમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત હોકર મિથ્યાત્વ કો નહીં પ્રાપ્ત હુઅ જીવ
કે હી અન્તરાલ સમય મેં કમ સે કમ ૧ સમય ઓર અધિક સે અધિક
૬ આવલીકાલ તક સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહતા હૈ ॥ ૩ ॥ ઉદય પ્રાપ્ત
મિથ્યાત્વકા નાશ ઓર અનુદિત મિથ્યાત્વકા ઉપશમ, ઇન દો અવસ્થાઓં
સે મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૪ ॥

ઇસ સમ્યક્ત્વ મેં ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વકા વિનાશ-ક્ષય હોતા હૈ
ઓર અનુદીર્ણ મિથ્યાત્વ કા ક્ષય નહીં હૈ; કિન્તુ ડસકા પરિણમન મિશ્ર
પ્રકૃતિ કેરૂપમેં હૈ, ઓર ઇસકા યહાં પર ઉપશમ હૈ । ઇસી પ્રકાર સમ્ય-
ક્ત્વપ્રકૃતિ કા પુંજ ભી જો અનુદીર્ણ હૈ વહ ભી ઉપશમ અવસ્થા મેં હૈ ।
યહ વાત ભી શ્લોકમેં આયે હુઅ ‘ચ’ શબ્દ સે પ્રકટ હૈ । અતઃ ‘જો ક્ષય
ઓર ઉપશમ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ’ ઇસ પ્રકાર

મિથ્યાદષ્ટિ જીવને સર્વ પ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે. આ જીવ મિથ્યાત્વ
કર્મના ૩ ત્રણ પુંજ નથી કરતો, તેમજ મિથ્યાત્વનો ક્ષય પણ નહિ. (૨)
ઉપશમસમ્યક્ત્વથી જીવ પડી મિથ્યાત્વને નહિ પ્રાપ્ત થયેલ જીવને અંતરાણ
સમયમાં ઓછામાં ઓછું ૧ એક સમય અને વધારેમાં વધારે ૬ છ આવલીકાળ
સુધી સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહે છે. (૩)

ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો નાશ અને અનુદિત મિથ્યાત્વનો ઉપશમ, એ બે
અવસ્થાઓથી મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ છે. (૪)

આ સમ્યક્ત્વમાં ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો વિનાશ-ક્ષય થાય છે, અને અનુ-
દીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય નથી, પણ એનું પરિણમન મિશ્રપ્રકૃતિના રૂપમાં છે, અને
તેનો અહીંયા ઉપશમ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુંજ પણ બે અનુ-
દીર્ણ છે તે પણ ઉપશમ અવસ્થામાં છે. આ વાત પણ શ્લોકમાં આવેલ “ચ”
શબ્દથી પ્રગટ છે, માટે ‘જે ક્ષય અને ઉપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્ષયો-
પશમ-સમ્યક્ત્વ છે’ એવી રીતે બે ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહ્યું છે, તે

પ્રકારાન્તરેણાપિ સમ્યક્ત્વસ્ય દશવિધત્વં સ્થાનાઙ્ગાદૌ પ્રતિવોધિતમ્, યથા-
(૧) નિસર્ગરુચિઃ, (૨) ઉપદેશરુચિઃ, (૩) આજ્ઞારુચિઃ, (૪) સૂત્રરુચિઃ, (૫) વીજ-
રુચિઃ, (૬) અધિગમરુચિઃ, (૭) વિસ્તારરુચિઃ, (૮) ક્રિયારુચિઃ, (૯) સંક્ષેપરુચિઃ
(૧૦) ધર્મરુચિરિતિ ।

તત્ર-નિસર્ગઃ સ્વભાવસ્તેન રુચિર્જિનોક્તતત્ત્વામિલાપરૂપા યસ્ય સ નિસર્ગ-
રુચિઃ ૧ । ઉપદેશો ગુર્વાદિભિર્વસ્તુતત્ત્વકથનં, તેન રુચિર્યસ્ય સ ઉપદેશરુચિઃ ૨ ।

જો ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ કહા હૈ, વહ મી સુઘટિત હો જાતા
હૈ; કારણ કિ યહાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્ય-
ક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોં કો અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ-અવસ્થા મેં રહતે હૈ
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વ કા ક્ષય હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ કો દલોંકા વર્ત-
માન મેં ઉદય હો રહા હૈ ।

પ્રકારાન્તર સે મી સમ્યક્ત્વ દસ પ્રકાર કા હૈ, વહ સ્થાનાઙ્ગ આદિ
સૂત્રોં મેં વર્ણિત હૈ, જૈસે-(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપદેશરુચિ, (૩) આજ્ઞા-
રુચિ, (૪) સૂત્રરુચિ, (૫) વીજરુચિ, (૬) અધિગમરુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ,
(૮) ક્રિયારુચિ, (૯) સંક્ષેપરુચિ, (૧૦) ધર્મરુચિ ।

નિસર્ગ નામ સ્વભાવ કા હૈ; સ્વભાવ સે હી જિસ જીવ કો
જિનોક્ત તત્ત્વોં મેં રુચિ-અમિલાષા હોતી હૈ ઉસકે યહ સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ ।
અર્થાત્-સ્વભાવ સે હી જીવ કી રુચિ જિસકે દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોં મેં
હુઆ કરતી હૈ વહ નિસર્ગરુચિ હૈ (૧) । ગુર્વાદિક કો ઉપદેશ સે તત્ત્વોં મેં જો

પણ સુઘટિત થઈ જાય છે, કારણ કે આ ઠેકાણે મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય
અને સમ્યક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોના અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ અવસ્થામાં રહે છે,
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દળિયોનો વર્તમાનમાં
ઉદય થાય છે.

પ્રકારાન્તરથી પણ સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના છે, તે સ્થાનાંગ આદિ સૂત્રોમાં
વર્ણિત છે. જેમ:-(૧) નિસર્ગરૂચિ, (૨) ઉપદેશરૂચિ, (૩) આજ્ઞારૂચિ, (૪) સૂત્ર
રૂચિ, (૫) વીજરૂચિ, (૬) અધિગમરૂચિ, (૭) વિસ્તારરૂચિ, (૮) ક્રિયારૂચિ,
(૯) સંક્ષેપરૂચિ, (૧૦) ધર્મરૂચિ.

નિસર્ગ નામ સ્વભાવનું છે; સ્વભાવથી જ જે છવને છનોક્ત તત્ત્વોમાં
રૂચિ-અમિલાષા થાય છે તેને આ સમ્યક્ત્વ થાય છે. અર્થાત્-સ્વભાવથી જ છવની
રૂચિ જેના દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોમાં થયા કરે છે, તે નિસર્ગરૂચિ છે (૧).
ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી તત્ત્વોમાં જે રૂચિ છવને માટે પેદા કરવામાં આવે

આજ્ઞા=સર્વજ્ઞવીતરાગવચનાત્મિકા, તત્ત્વ રુચિરભિલાષો યસ્ય સ આજ્ઞારુચિઃ ૩ । સૂત્રમ્-આચારાદ્વાદિકમ્, આવશ્યક-દશવૈકાલિકાદિકં ચ, તેન રુચિર્યસ્ય સ સૂત્રરુચિઃ ૪ । વીજમિવ વીજં યદેકમપ્યનેકાર્થવોધજનકં વચઃ, તેન રુચિર્યસ્ય સ વીજરુચિઃ ૫ । અધિગમેન=વિશિષ્ટપરિજ્ઞાનેન રુચિર્યસ્ય સઃ અધિગમરુચિઃ ૬ । વિસ્તારઃ=સકલદ્વાદશાંગસ્ય નયૈઃ પર્યાલોચનમ્, તેન પરિવર્ધિતા રુચિર્યસ્ય સ વિસ્તારરુચિઃ ૭ । ક્રિયા=યથાવિધિ સંયમાનુષ્ઠાનં તસ્યાં રુચિર્યસ્ય સ ક્રિયારુચિઃ ૮ । સંક્ષેપઃ=સંગ્રહઃ, તત્ત્વ રુચિર્યસ્ય સ સંક્ષેપરુચિઃ । વિસ્તારાર્થપરિજ્ઞાનાભાવેન સંક્ષેપે રુચિર્ભવતિ ૯ । ધર્માસ્તિકાયે શ્રુતધર્માદૌ વા રુચિર્યસ્ય સ ધર્મરુચિઃ ૧૦ । હહ સમ્યક્ત્વસ્ય જીવભેદેન કથનં ગુણગુણિનોઃ કથંચિદભેદોઽસ્તીતિ વોધનાર્થમ્ ।

રુચિ જીવ કે લિયે પૈદા કરાગી જાતી હૈ ઉસકા નામ ઉપદેશરુચિ હૈ (૨) સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે વચનોં મેં જો રુચિ જીવ કો હોતી હૈ ઉસે આજ્ઞા-રુચિ કહતે હૈં (૩) । આચારાદ્વાદિક આદિ અંગપ્રવિષ્ટ એવં આવશ્યક, દશ વૈકાલિક આદિ અંગવાહ્યોં કે દ્વારા તત્ત્વોં મેં જીવ કી જો પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાઈ જાતી હૈ વહ સૂત્રરુચિ નામકા સમ્યક્ત્વ હૈ (૪) । જિસ પ્રકાર એક હી વીજસે અનેક ફલોંકી ઉત્પત્તિ હુઆ કરતી હૈ ઉસી પ્રકાર જિસ એક વચન સે અનેક પદાર્થોં કી પ્રતીતિ હો ઉસકા નામ વીજ હૈ, ઉસસે જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ જાગૃત હોતી હૈ ઉસકા નામ વીજરુચિ હૈ (૫) । વિશિષ્ટ જ્ઞાનકો અધિગમ કહતે હૈં, હસકે દ્વારા જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ હોતી હૈ ઉસે અધિગમરુચિ કહતે હૈં (૬) । સમ્પૂર્ણ નયોંકે દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગ કા પર્યાલોચન કરના, હસકા નામ વિસ્તારરુચિ હૈ । હસ કે દ્વારા જીવ કી રુચિ તત્ત્વોં મેં પરિવર્ધિત કરાઈ જાતી હૈ (૭) । શાસ્ત્ર-

છે તેનું નામ ઉપદેશરુચિ છે (૨). સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુના વચનોમાં જે રુચિ જીવની થાય છે તેને આજ્ઞારુચિ કહે છે (૩) આચારાંગ આદિ અંગપ્રવિષ્ટ એમજ આવશ્યક, દશવૈકાલિક, આદિ અંગવાહ્યો દ્વારા તત્ત્વોમાં જીવની જે પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાવામાં આવે છે તે સૂત્રરુચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૪). જેવી રીતે એકજ ખીજથી અનેક ફલોની ઉત્પત્તિ થાય છે એ પ્રકારે એક જ વચનથી અનેક પદાર્થોની જે પ્રતીતિ થાય તેનું નામ વીજ છે, તેનાથીજ જીવને તત્ત્વોમાં રુચિ જાગૃત થાય છે તેનું નામ વીજરુચિ છે (૫). વિશિષ્ટ જ્ઞાનને અધિગમ કહે છે. એના દ્વારા જે જીવને તત્ત્વોમાં રુચિ થાય છે એને અધિગમરુચિ કહે છે (૬) સંપૂર્ણ નયોના દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગનું પર્યાલોચન કરવું તેનું નામ વિસ્તારરુચિ છે, એના દ્વારા જીવની રુચિ તત્ત્વોમાં પરિવર્ધિત કરવામાં આવે

વિહિત વિધિકે અનુસાર સંયમકા અનુષ્ઠાન કરના ક્રિયા છે, इसमें जिस जीवकी रुचि होती है वह क्रियारुचि नामका सम्यक्त्व है (८)। संक्षेप नाम संग्रहका है, उसमें जो रुचि हो वह संक्षेपरुचि है। अर्थात्-जिस जीवको विस्तृतरूपसे पदार्थपरिज्ञान नहीं है उसको संक्षेपमें रुचि हुआ करती है। इसी अपेक्षा से इस सम्यक्त्व का नाम संक्षेपरुचि है। इस सम्यक्त्ववाला जीव जीवादिक पदार्थों में विस्ताररूप से रुचि-संपन्न नहीं होता; किन्तु संक्षेपरूप से ही उन्हें समझ कर उनमें दृढ़ आस्थावाला हो जाता है (९)। धर्मास्तिकायादिक जो अमूर्तिक पदार्थ हैं, उनमें अथवा श्रुत एवं धर्मादिकमें जीवको जिसके द्वारा रुचि होती है वह धर्मरुचि है (१०)। यद्यपि सम्यक्त्व आत्माका निजी गुण है, परन्तु इस दस प्रकार के सम्यक्त्व कथन में जो उसका जीव से भिन्न रूपमें जो कथन किया है वह इस बातकी पुष्टि करता है कि गुण और गुणीमें कथंचित् भिन्नता और कथंचित् अभिन्नता है। द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा से गुण और गुणी अभिन्न हैं। पर्यायार्थिक नयकी विवक्षा से ये दोनों लक्षण, संख्या आदिकी अपेक्षा से भिन्न २ हैं। यह दशप्रकार के सम्यक्त्व का वर्णन हुआ (१०)।

છે (૭) શાસ્ત્રવિહિત વિધિના અનુસાર સંયમનું જે અનુષ્ઠાન કરવું તે ક્રિયા છે, તેમાં જે જીવની રુચિ થાય તે ક્રિયારુચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૮). સંક્ષેપ નામ સંગ્રહનું છે. એમાં જેની રુચિ હોય તે સંક્ષેપરુચિ છે. અર્થાત્-જે જીવને વિસ્તૃતરૂપથી પદાર્થપરિજ્ઞાન નથી તેને સંક્ષેપમાં રુચિ થયા કરે છે, એ અપેક્ષાથી એ સમ્યક્ત્વનું નામ સંક્ષેપરુચિ છે. આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ જીવાદિક પદાર્થોમાં વિસ્તારરૂપથી રુચિસંપન્ન નથી થતા; પણ સંક્ષેપરૂપથી જ તેને સમ-જીવે એમાં દૃઢ આસ્થાવાળા બની રહે છે (૯). ધર્માસ્તિકાયાદિક જે અમૂર્તિક પદાર્થ છે એમાં, અથવા શ્રુત એમજ ધર્માદિકમાં જીવની જેના દ્વારા રુચિ થાય છે તે ધર્મરુચિ છે (૧૦). યદ્યપિ સમ્યક્ત્વ આત્માનો નિજગુણ છે, પરંતુ આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વ કથનમાં તેનું જીવથી ભિન્નરૂપમાં જે કથન કર્યું છે તે જો વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે ગુણ અને ગુણીમાં કથંચિત્ ભિન્નતા અને કથંચિત્ અભિન્નતા છે. દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાથી ગુણ અને ગુણી અભિન્ન છે, પર્યાયાર્થિક નયની વિવક્ષાથી એ બન્ને લક્ષણ સંખ્યા આદિની અપેક્ષાથી ભિન્નભિન્ન છે. આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વનું વર્ણન થયું ૧૦

(૧) સમ્યક્ત્વસ્થિતિઃ ।

સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિરેકસમયમાત્રં જઘન્યતઃ, ઉત્કર્ષતસ્તુ પટાવલિકાઃ, ઔપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચાન્તર્મુહૂર્તમ્ । વેદક-સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચૈકસમયમાત્રમ્ । ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય જઘન્યા સ્થિતિરેકસમયમાત્રમ્, ઉત્કૃષ્ટા તુ કિંચિદધિકપટ્પટ્ટિસાગરોપમા, ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિઃ સાદ્યપર્યવસિતકાલરૂપા ।

(૨) સમ્યક્ત્વસ્ય પ્રાદુર્ભાવવ્યવસ્થા ॥

એકભવમાશ્રિત્યૌપશમિકસાસ્વાદનસમ્યક્ત્વે જઘન્યતઃ સકુદેવ પ્રાદુર્ભવતઃ । ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ પશ્ચવારમ્ । વેદકસમ્યક્ત્વં જઘન્યત ઉત્કૃષ્ટતથૈકવારં પ્રાદુર્ભવતિ ।

(૧) સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ ।

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર ઓર ઉત્કૃષ્ટ છઠ્ઠ ૬ આવલિકા પ્રમાણ હૈ, ઔપશમિક ઓર વેદક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ । ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી જઘન્ય એકસમયમાત્ર ઉત્કૃષ્ટ છુછ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ હૈ, ઓર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ સાદિ અનંત હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વકી ઉત્પત્તિકી વ્યવસ્થા—

એક ભવકી અપેક્ષા ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ ઓર સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર હી ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર ઉત્કૃષ્ટસે પાંચ વાર । વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટસે ઓર જઘન્ય સે એક હી વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

(૧) સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર અને ઉત્કૃષ્ટ છ આવલિકાપ્રમાણ છે. ઔપશમિક અને વેદક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્તની છે. ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની જઘન્ય એકસમયમાત્ર, ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદિ અનંત છે.

(૨) સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિની વ્યવસ્થા

એક ભવની અપેક્ષાએ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ અને સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર જ ઉત્પન્ન થાય છે. અને ઉત્કૃષ્ટથી પાંચ વાર. વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટથી અને જઘન્યથી એક જ વાર ઉત્પન્ન થાય છે. ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર અને ઉત્કૃષ્ટથી અસંખ્યાતવાર ઉત્પન્ન થાય છે.

ક્ષાયોપશમિકં જઘન્યતઃ સકૃત્, ઉત્કૃષ્ટતસ્ત્વસંખ્યાતવારમ્ । ક્ષાયિકં તુ પ્રાદુર્ભૂતં સત્ પુનર્ન પ્રતિનિવર્તતે । પ્રાદુર્ભાવાનન્તરમવિચ્છેદેન સર્વદા તિષ્ઠતિ ।

(૩) સમ્યક્ત્વસ્યાઽન્તરકાલઃ ।

ઔપશમિક-સાસ્વાદન-ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વાનાં પ્રત્યેકમન્તરકાલો જઘન્યતોઽન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ દેશોનાર્દ્રપુદ્ગલપરાવર્તનકાલઃ । વેદકસ્યાઽન્તરં ન ભવતિ, તદનન્તરં નિયમતઃ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વોત્પત્તેઃ સંભવાત્ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં સાધનન્તં ચ તસ્ય પુનર્નિવૃત્ત્યભાવાદન્તરં ન ભવતિ ।

ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર ઓર ઉત્કૃષ્ટસે અસંખ્યાત વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોનેકે વાદ ફિર નિવૃત્ત નહીં હોતા । વહ તો ઉત્પન્ન હોનેકે વાદ અવિચ્છિન્નરૂપસે સર્વદારહતા હૈ ।

(૩) સમ્યક્ત્વકા અન્તરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન, ઓર ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વમેં સે પ્રત્યેક કા વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત ઓર ઉત્કૃષ્ટ કુછ કમ અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલ પ્રમાણ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહકાલ સંભવિત નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઇસ સમ્યક્ત્વ કે અનંતર નિયમ સે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકા લાભ જીવકો હો જાતા હૈ । ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ મેં અંતરકાલ નહીં હૈ, કારણ કિ ઇસકા સદ્ભાવ હોને પર જીવ કો મુક્તિકા લાભ હો જાતા હૈ, ઇસી લિયે યહ સમ્યક્ત્વ સાદિ ઓર અનન્ત હૈ । એક વાર સમક્તિ હો કર ફિર છૂટ જાને પર ફિર સે ઇસકી પ્રાપ્તિ હોને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઇસકા નામ વિરહ-કાલ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહ-કાલકા અભાવ

ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થયા પછી ફરી નિવૃત્ત થતું નથી. તે તો ઉત્પન્ન થયા પછી અવિચ્છિન્નરૂપથી સર્વદા રહે છે.

(૩) સમ્યક્ત્વનો અંતરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન અને ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ, એ પ્રત્યેકના વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત અને ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ ઓછું અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ પ્રમાણ છે. વેદક સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળ સંભવિત નથી, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વની પછી નિયમથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ લીધે તે અર્ધ જાય છે. ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વમાં અંતરકાલ નથી, કારણ કે એનો સદ્ભાવ થવાથી લીધે મુક્તિનો લાભ વર્ધ જાય છે, તેથી આ સમ્યક્ત્વ સાદિ અને અનંત છે. એક વાર સમ્યક્ત્વ થઈને પછી બીજાં તે છુટી જાય છે ત્યારે ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ થવામાં બેટલા સમય લાગે છે તેનું નામ વિરહકાળ છે. વેદક-સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળનો અભાવ

(૪) સમ્યક્ત્વસ્ય ફલમ્—

સમ્યક્ત્વે સતિ-અસદ્ગ્રહઃ=આસવચનવાધિતાર્થેષુ પક્ષપાતો ન ભવતિ । અસદ્ગ્રહં પ્રતિ મિથ્યાત્વોદયસ્ય કારણત્વાત્ સમ્યક્ત્વસ્ય મિથ્યાત્વક્ષયોપશમજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વસદ્ભાવકાલે મિથ્યાત્વોદયાભાવાત્ ।

સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવણવાઙ્મુહા, શ્રુતચારિત્રધર્મરાગઃ, ચતુર્વિધતીર્થવૈયાવૃત્ત્ય-નિયમશ્ચ ભવતિ । એપામુત્તરોત્તરં પ્રતિ પૂર્વપૂર્વસ્ય હેતુત્વં વોચ્યમ્ ।

હૈ, ક્યોં કિ વેદક-સમ્યક્ત્વ હોને પર ઉસકે વાદ ફિર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહીં । વેદક-સમ્યક્ત્વકે છૂટને પર યદિ વેદક-સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ ફિર સે હોતી તો વિરહકાલ વહાં સંભવિત હોતા । ઇસ પ્રકાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકે હોને પર જીવ અપની સ્થિતિ કો પૂર્ણ કર મુક્તિ સ્થાનકા હી સ્વામી બન જાતા હૈ, અતઃ એક વાર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકે હોને પર ફિર ઉસી જીવકો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ નહીં કરની પડતી । અતઃ યહાં પર ભી વિરહકાલ સંભવિત નહીં ।

(૪) સમ્યક્ત્વકા ફલ—

સમ્યક્ત્વકે હોતે હી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન નહીં હોતા હૈ । ઉસકી દૃષ્ટિ-શ્રદ્ધા આસવચન સે અવાધિત પદાર્થોં મેં અનુરાગવાલી હોતી હૈ, ઇનસે ભિન્ન પદાર્થોં મેં નહીં । ક્યોંકિ કદાગ્રહ કા કારણ મિથ્યાત્વ કા ઉદય વતલાયા હૈ ઓર મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોને પર મિથ્યાત્વકા અભાવ હો જાતા હૈ । કારણ કે અભાવમેં કાર્ય કા અભાવ સુતરાં સિદ્ધ હી હૈ । કદાગ્રહ કા કારણ

છે; કારણ કે વેદક-સમ્યક્ત્વ થયા પછી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહિ. વેદક-સમ્યક્ત્વના છુટ્યા પછી જો વેદક-સમ્યક્ત્વની ફરીથી પ્રાપ્તિ થતી હોત તો વિરહકાળ ત્યાં સંભવિત થાત. એ પ્રકારે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ થયા પછી જીવ પોતાની સ્થિતિને પૂર્ણ કરીને મુક્તિસ્થાનનો સ્વામી બની જાય છે. તેથી એક વાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થતા તે જ જીવને પછીથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરવી પડતી નથી, માટે આ ઠેકાણે પણ વિરહકાળ સંભવિત નથી.

(૬) સમ્યક્ત્વનું ફલ

સમ્યક્ત્વ થવાથી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન થતો નથી, એની દૃષ્ટિ-શ્રદ્ધા આશ્રય વચનથી અવાધિત પદાર્થોમાં જ અનુરાગવાળી થાય છે, એથી ભિન્ન પદાર્થોમાં નહિ. કેમ કે કદાગ્રહનું કારણ મિથ્યાત્વનો ઉદય બતાવ્યો છે, અને મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. સમ્યક્ત્વના હોવાથી મિથ્યાત્વનો અભાવ થઈ જાય છે. કારણના અભાવમાં કાર્યનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. કદાગ્રહનું

મિશ્ર્યાત્વ હૈ । સમ્યક્ત્વી જીવકે इसका अभाव हॆ ।

સમ્યક્ત્વકે હોને પર શ્રુતશ્રવણ કી અભિલાષા, શ્રુતધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ઔર ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ, ંવં ચતુર્વિધ સંઘ કી વૈયાવૃત્તિ કરનેકા નિયમ જીવકે જાગૃત હોતા હૈ । ંનમેં આગે ૨ કે પ્રતિ પૂર્વ ૨ કો કારણતા હૈ, અર્થાત્ શ્રુતધર્મકા અનુરાગ જીવકે તવ હી જાગૃત હો સકેગા જવ ંસકે અન્તરંગમેં શ્રુતશ્રવણકી ંચ્છા હોગી, શ્રુતશ્રવણેચ્છા કે વિના શ્રુતમેં અનુરાગ નહીં હો સકતા, જવ સદ્ગુણોમેં અનુરાગ હૈ તો ંહ શ્રુતમક્તિરૂપ કાર્ય શ્રુતશ્રવણકે વિના નહીં હો સકતા, શ્રુતશ્રવણ ંહી વિના ંચ્છા કે સંભવિત નહીં । શ્રુતધર્મકે અનુરાગકે પ્રતિ શ્રુતશ્રવણ કી વાઙ્છા કારણ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ંહી જીવકો તવ હી હોગા જવ ંસકે અન્તરંગમેં શ્રુતધર્મકા અનુરાગ હોગા । શ્રુતાનુરાગકા અભિપ્રાય ંહી હૈ કિ શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દઢ આસ્થા । ંસ માર્ગ પર દઢ આસ્થાવાલા જીવ હી ચારિત્રધર્મકા સ્વયં આરાધન કરનેવાલા, અથવા ંસકે ધારક મુનિયો કે પ્રતિ અનુરાગી બનતા હૈ, અનાસ્થાવાલા નહીં, અતઃ ચારિત્રધર્મકે અનુરાગ કા કારણ શ્રુતાનુરાગ હી હૈ । ચારિત્રધર્મમેં જવ તક અનુરાગ નહીં હોગા તવ તક ંહ જીવ કિસી પ્રકાર ંહી ચતુર્વિધ સંઘ કી સેવા કરને કા નિયમકર્તા નહીં હો સકતા; અતઃ ંન

કારણ મિશ્ર્યાત્વ છે. સમ્યક્ત્વી ંવને ંનો અભાવ છે

સમ્યક્ત્વના હોવાથી શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મ પ્રતિ અનુરાગ અને ચારિત્રધર્મ પ્રતિ અનુરાગ ંભગ ચતુર્વિધ સંઘની વૈયાવૃત્તિ કરવાનો નિયમ ંવને જાગૃત થાય છે. ંમેં આગળ ૨ ના પ્રતિ પૂર્વ ૨ માં કારણતા છે. અર્થાત્ શ્રુતધર્મનો અનુરાગ ંવને ત્યારે જ જાગૃત થાય છે, ત્યારે ંના અંતરંગમાં શ્રુતશ્રવણની ંચ્છા થાય છે. શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિના શ્રુતમાં અનુરાગ થઈ જ શકતો નથી. ત્યારે સદ્ગુણોમાં અનુરાગ છે તો ં શ્રુતલક્ષિત કાર્ય શ્રુતશ્રવણ વિના નથી થતુ. શ્રુતશ્રવણ પણ વગર ંચ્છા સંભવિત નથી. શ્રુતધર્મના અનુરાગની પ્રતિ શ્રુતશ્રવણની ંચ્છા કારણ છે. ચારિત્રધર્મના પ્રતિ અનુરાગ પણ ંવને ત્યારે જ થશે ત્યારે ંના અંતરંગમાં શ્રુતધર્મનો અનુરાગ હોય. શ્રુતાનુરાગનો અભિપ્રાય ં છે કે શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દઢ આસ્થાવાળા ંવ જ ચારિત્રધર્મનું સ્વયં આરાધન કરવાવાળા, અથવા ંના ધારક મુનિયોની પ્રતિ અનુરાગી બને છે, અનાસ્થાવાળા નહિ. ંાટે ચારિત્રધર્મના અનુરાગનું કારણ શ્રુતાનુરાગ જ છે. ચારિત્રધર્મમાં ત્યાં સુધી અનુરાગ નહિ થાય ત્યાં સુધી ં ંવ કોઈ પ્રકારે પણ ચતુર્વિધ સંઘની સેવા કરવાનો નિય-

નન્વસદ્ગ્રહસ્ય મિથ્યાત્વોદયજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વે સતિ તત્ક્ષયોપશમાદસ્તુ તદભાવઃ, કિંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં જ્ઞાનચારિત્રાંશરૂપત્વેન જ્ઞાનાવરણીયચારિત્રમોહનીયવીર્યાન્તરાયકર્મક્ષયોપશમજન્યત્વાત્ કથં સમ્યક્ત્વફલરૂપત્વં તેષામ્ ? इति चेत्,

કી સેવા આદિ કરનેરૂપ નિયમ કે પ્રતિ ચારિત્રધર્મકા અનુરાગ હી કારણ હોતા હૈ ।

શંકા—માના કિ અસદ્ગ્રહ કે મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોને સે મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમ સે ઉસ અસદ્ગ્રહકા અભાવ હો જાતા હૈ, પરન્તુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગેરહ જો જ્ઞાન ઓર ચારિત્રકે અંશરૂપ હૈં, इन्हें સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે માના જા સકતા હૈ ? કારણ કિ ઇન્કે રોધક જ્ઞાનાવરણીય, ચારિત્રમોહનીય ઓર વીર્યાન્તર કર્મ હૈં, ઇન્કે ક્ષયોપશમ સે ઇન્કા પ્રાદુર્ભાવ હોતા હૈ, અતઃ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગેરહ કો સમ્યક્ત્વકા ફલ ન માનકર જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોંકે ક્ષયોપશમકા હી ફલ માનના ચાહિયે ।

વિશેષાર્થ—શંકાકારકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે નહીં હોતી હૈ; કિન્તુ વહ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમસે હી જીવ કો હોતી હૈ । શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા એક ભેદ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ જીવકા અનુરાગ ભી ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ, અતઃ ઇસે ભી સમ્યક્ત્વ કા ફલ ન માન કર ચારિત્રમોહનીય કે ક્ષયોપશમ કા હી ફલ માનના

મકર્તા નથી થતો. માટે એની સેવા કરવારૂપ નિયમની પ્રતિ ચારિત્રધર્મનો અનુરાગ જ કારણ રૂપ થાય છે.

શંકા—માન્યુ કે અસદ્ગ્રહ મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોવાથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી એ અસદ્ગ્રહનો અભાવ થઈ જાય છે. પરંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરે જે જ્ઞાન અને ચારિત્રના અંશરૂપ છે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે માનવામાં આવે ? કારણ કે એના રોધક જ્ઞાનાવરણીય ચારિત્રમોહનીય અને વીર્યાન્તરાય કર્મ છે. એના ક્ષયોપશમથી એનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે. માટે શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરેને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમનું જ ફળ માનવું જોઈએ.

વિશેષાર્થ—શંકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે:—શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી નથી થતી કિન્તુ તે શ્રુત જીવને જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે. શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો એક ભેદ છે. ચારિત્રધર્મની પ્રતિ જીવનો અનુરાગ પણ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમાધીન છે. માટે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને ચારિત્રમોહનીયના ક્ષયોપશમનું જ ફળ

અત્રોચ્યતે—મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાવસરે જ્ઞાનાવરણીયાનન્તાનુબંધિકપાયરૂપ-
ચારિત્રમોહનીયાદિકર્મણામપિ ક્ષયોપશમો ભવતીતિ કૃત્વા સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવ-
ણેચ્છાદયો ભવન્તીત્યુચ્યતે । યથા કેવલજ્ઞાનાવરણક્ષયજન્યમપિ કેવલજ્ઞાનં ચારિ-
ત્રમોહનીયાંશકપાયક્ષયે સત્યેવ ભવતીતિ । યથા વા મિથ્યાત્વક્ષયોપશમલભ્યમપિ
સમ્યક્ત્વમનન્તાનુબંધિકપાયરૂપચારિત્રમોહનીયોદયે સતિ ન લભ્યતે । ઉક્તઞ્ચ—

ઉપયુક્ત પ્રતીત હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ યહી હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકો
સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રકા હી ફલ માનના ચાહિયે, સમ્ય-
ક્ત્વ કા નહીં ।

સમાધાન—શઙ્કાકારકી શઙ્કા ટીક નહીં । કારણ કિ જિસ સમય
મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ઉસ સમય જ્ઞાનાવરણીય ઔર અનન્તા-
નુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયાદિક કર્મોં કા મો ક્ષયોપશમ હોતા
હૈ । હિસી ધ્યેય કો લેકર—‘સમ્યક્ત્વ કે હોને પર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક હોતે
હૈં’ એસા કહા ગયા હૈ । જૈસે-કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણકે ક્ષય સે
ઉત્પન્ન હોતા હૈ, પરન્તુ જય તક ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે અંશ-ભેદ-
સ્વરૂપ કપાયોં કા ક્ષય નહીં હોતા તવ તક કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ નહીં
હોતી, અતઃ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હનકે ક્ષય હોને પર હી હોતી હૈ ।
હિસી પ્રકાર સમ્યક્ત્વ મો યદ્યપિ મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમ સે હી હોતા હૈ,
પરન્તુ જય તક અનંતાનુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયકા ઉદય બના
રહતા હૈ તવ તક યહ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈ ।

માનવું ઉપયુક્ત પ્રતીત થાય છે નિષ્કર્ષ એ છે કે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોને સમ્ય-
ગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું જ ફળ માનવું જોઈએ, સમ્યક્ત્વનું નહિ.

સમાધાન—શંકાકારની શંકા ઠીક નહિ, કારણ કે જે વળતે મિથ્યાત્વનો
ક્ષયોપશમ થાય છે તે વળતે જ્ઞાનાવરણીય અને અનંતાનુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્ર
મોહનીયાદિક કર્મોનો પણ ક્ષય થાય છે.

એ ધ્યેયને લઈને જ—‘સમ્યક્ત્વના થવાથી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક થાય છે’-
એવું કહેવામાં આવ્યું છે જેવી રીતે કેવળજ્ઞાન કેવળ જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી ઉત્પન્ન
થાય છે; પરન્તુ ત્યાં સુધી ચારિત્રમોહનીય કર્મના અંશ-ભેદ-સ્વરૂપ કપાયોનો ક્ષય
નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ નથી થતી, માટે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ
એનો ક્ષય થવાથી જ થાય છે. એવી જ રીતે સમ્યક્ત્વ પણ યદ્યપિ મિથ્યાત્વના
ક્ષયોપશમથી જ થાય છે, પરન્તુ ત્યાં સુધી અનંતાનુબંધિકપાયરૂપ ચારિત્ર
મોહનીયનો ઉદય થતો રહે છે ત્યાં સુધી તે પ્રાપ્ત થતું નથી.

વિશેષાર્થ—કારણ દો પ્રકારકે હુઆ કરતે હૈં—ઁક સંનિકટ-કારણ દૂસરા વ્યવહિત-કારણ, સંનિકટ-કારણ કો મુખ્ય કારણ ઔર વ્યવહિત કારણ કો ગૌણ કારણ ઢી કહતે હૈં । પ્રકૃતમેં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, ક્યોં કિ વિના સમ્યગ્દર્શન કે ઢનકા સદ્ભાવ નહીં હો સકતા, સમ્યગ્દર્શન કે હોને પર હી યે હોતે હૈં, હસી લિયે યે સમ્યગ્દર્શન કે ફલરૂપ સે કહે ગયે હૈં । “ ઁક કાર્ય કે ંનેક કારણ ઢી હોતે હૈં, પરંતુ જો મુખ્ય હોતા હૈ વહી પ્રધાન માના જાતા હૈ । ” હસ નીતિકે ંનુસાર ંલે હી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા કારણ જ્ઞાનાવરણીય ંદિ કર્મેોં કા ક્ષયોપશમ ઢી હો, પરંતુ યે સવ વ્યવહિત કારણ હૈં । દૃષ્ટાન્ત કે લિયે—કેવલજ્ઞાનકી પ્રાપ્તિકા મુખ્ય કારણ કેવલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા ક્ષય હી હૈ, પરંતુ જવ તક મોહનીય કર્મકા ક્ષય નહીં હોતા, તવ તક કેવલજ્ઞાનાવરણીય કર્મકા ક્ષય નહીં હો સકતા ।

“ સ્ત્રીણમોહસ્સણં ંરહં ં તં કર્મ્મસા જુગવં સ્વિજ્જંતિ, તં જહા-નાણાવરણિજ્જં, દંસણાવરણિજ્જં, ંંતરાહયં ” (સ્થા. સ્થા. ૩ ડ. ૪)

યહી વાત હસ સૂત્રમેં પ્રગટ કી ગઈ હૈ । હસી તરહ સમ્યગ્દર્શન ઢી મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ, પરંતુ જવ તક ંનંતાનુબંધી કપાય

વિશેષાર્થ—કારણ ંે પ્રકારે થયા કરે છે—ંક સંનિકટ-કારણ, ંીનું વ્યવહિત-કારણ. સંનિકટ-કારણને મુખ્ય કારણ ંને વ્યવહિત કારણને ગૌણ કારણ પણ કહે છે. પ્રકૃતમા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન છે, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન વિના તેનો સદ્ભાવ નથી થતો. સમ્યગ્દર્શનના થવાથી તે થાય છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શનના ક્ષણરૂપથી કહેવામાં આવે છે. “ ંક કાર્યના ંનેક કારણો પણ થાય છે પરંતુ જે મુખ્ય થાય છે તે જ પ્રધાન માનવામાં આવે છે ” ંા નીતિ-ંનુસાર ભલે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કારણ જ્ઞાનાવરણીય ંદિ કર્મેોં કા ક્ષયોપશમ પણ હોય, પરંતુ ંે બધા વ્યવહિત કારણ છે. દૃષ્ટાન્તને માટે—કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ મુખ્ય કારણ કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય જ છે, પરંતુ ત્યાં સુધી મોહનીયકર્મનો ક્ષય નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય નથી થતો.

“ સ્ત્રીણમોહસ્સ ંં ંરહં ં તં કર્મ્મસા જુગવં સ્વિજ્જંતિ, તં જહા-નાણાવરણિજ્જં, દંસણાવરણિજ્જં ંંતરાહયં (સ્થા. સ્થા. ૩ ડ ૪)

ંા વાત ંા સૂત્રથી પ્રગટ કરી છે. ંે પ્રકારે સમ્યગ્દર્શન પણ મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી થાય છે, પરંતુ ત્યાં સુધી ંનંતાનુબંધી કપાયનો ક્ષયોપશમ નથી થતો ત્યાં સુધી મિથ્યાત્વનો ક્ષયોપશમ નથી થતો.

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે નિયમા, સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

છાયા — “પ્રાથમિકાનામુદયે નિયમાત્ સંયોજના કપાયાણામ્ ।

સમ્યગ્દર્શનલાભં, ભવસિદ્ધિકા અપિ ન લભન્તે ॥ ૧ ॥

નતુ વૈયાવૃત્ત્યનિયમસ્ય તપઃપ્રભેદત્વેન ચારિત્રાંશરૂપભાવ સમ્યક્ત્વે સતિ
ચાવશ્યંભાવાદવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિગુણસ્થાનં વિલુપ્યેત ? ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

કા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા, તવ તક મિથ્યાત્વ કા ક્ષયોપશમ નહીં હો
સકતા । હસી લિયે મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમકે અવસર મેં અનંતાનુબંધી
કપાયકા ક્ષયોપશમ અપેક્ષણીય હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકો
કા અવ્યવહિત-મુખ્ય-કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, અતઃ યે ઉસકે હી ફલ
સ્વરૂપ સે યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હેં । કહા મી હૈ—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

શઙ્કા—વૈયાવૃત્ત્યનિયમ કો આપને સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે કહ
દિયા ? કારણ કિ વહ તો અંતરંગ ચારિત્રકા એક ભેદ હૈ । યદિ હસ
વૈયાવૃત્ત્યનિયમો કા સમ્યક્ત્વ કે હોને પર અવશ્યંભાવ માના જાવે તો
ફિર અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામકા ચતુર્થ ગુણસ્થાન હી નહીં બન સકતા,
કારણ કિ હસ અવસ્થા મેં મી આંશિક રૂપસે ચારિત્રકા સદ્ભાવ હસ
માન્યતા સે સિદ્ધ હો જાતા હૈ ।

એથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમના અવસરમા અનંતાનુબંધી કપાયનો ક્ષયો
પશમ અપેક્ષણીય થાય છે નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું અવ્યવહિત-મુખ્ય-કારણ
સમ્યગ્દર્શન જ છે, માટે એ એના જ ફલસ્વરૂપથી અહીંયા પ્રગટ કરવામાં
આવેલ છે કહું પણ છે—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

શંકા—વૈયાવૃત્ત્ય નિયમને આપે સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે કહું, કારણ
કે તે તો અંતરંગ ચારિત્રનો એક ભેદ છે. યદિ સમ્યક્ત્વ થવાથી એનો અવ-
શ્યંભાવ માનવામાં આવે તો પછી અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામનું ચતુર્થ ગુણસ્થાન
બની શકતું નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં પણ આંશિક રૂપથી ચારિત્રનો સદ્ભાવ
આ માન્યતાથી સિદ્ધ થાય છે.

વૈયાઘ્રત્યનિયમરૂપચારિત્રસ્યાલ્પતમત્વેન ચારિત્રતયા તદ્વિવક્ષાયા અભાવાત્ ।
યથા-સંમૂર્છનજાનાં સંજ્ઞાસામાન્યસત્ત્વેऽપિ વિશિષ્ટસંજ્ઞાયા અભાવાદસંજ્ઞિત્વમઙ્ગી-
કૃતમ્ । વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે । યથા-એક-
રૂપ્યકમાત્રધનેન ધનવાનયમિતિ ન વ્યપદિશ્યતે, યથા વા નાપ્યેકયા ગવા ગોમાન્ ;
યથા વા એકેનૈવ શુણ્ઠીગ્રન્થિના ' પંસારી ' તિ-ભાષાપદવ્યપદેશ્યો યણિગ્ન ન ભવતીતિ ।

શંકાકારની શંકાનો ખુલાસો આ પ્રકાર છે-ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવકે ચારિત્રકા સદ્ભાવ નહીં માના ગયા છે, કારણ કે વહ અવિરત-
દશાસંપન્ન છે । ઉસકે કેવલ એક સમ્યગ્દર્શનરૂપી જ્યોતિકા પ્રાદુર્ભાવ છે,
ચારિત્ર કા નહીં । ચારિત્રકા સદ્ભાવ પંચમગુણસ્થાન સે પ્રારંભ હોતા છે ।
અથ યદિ વૈયાઘ્રત્યનિયમ કો સમ્યગ્દર્શન કા ફલ માના જાવેગા તો
સમ્યગ્દર્શન કે હોને પર હસકા સદ્ભાવ અવશ્ય માનના હી પડેગા । એસી
દશામેં ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવકે ભી આંશિકરૂપ સે ચારિત્ર કા સદ્ભાવ
સિદ્ધ હો જાતા છે, તવ વહ અવિરત ન રહ કર વિરત હી સિદ્ધ હુઆ ।

સમાધાન-વૈયાઘ્રત્યનિયમ ચારિત્ર કા એક ભેદ છે, પરન્તુ વહ પૂર્ણ
ચારિત્ર નહીં છે, આંશિક ચારિત્ર હી છે, ઓર યહ યહાં પર યહુત હી અલ્પ
દશામેં છે, હસ લિયે ઉસકી ચારિત્રરૂપ સે યહાં વિવક્ષા નહીં છે । મહા-
વ્રતાદિરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર હી ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત હોતે હેં, વે યહાં
પર નહીં હેં; અતઃ સમ્યગ્દર્શનકા અસ્તિત્વ હોને પર ભી હસ દશામેં હસ
પ્રકારકા કોઈ ભી ચારિત્ર યહાં પર નહીં છે । હસી લિયે યહ અવિરત

શંકાકારની શંકાનો ખુલાસો આ પ્રકારે છે.—ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને
ચારિત્રનો સદ્ભાવ માનવામાં નથી આવ્યો, કારણ કે તે અવિરતદશાસંપન્ન છે.
તેને ફક્ત એક સમ્યગ્દર્શનરૂપી જ્યોતિનો પ્રાદુર્ભાવ છે, ચારિત્રનો નહિ. ચારિત્રનો
સદ્ભાવ પંચમગુણસ્થાનથી પ્રારંભ થાય છે હવે જો વૈયાઘ્રત્યનિયમને સમ્ય-
ગ્દર્શનનું ફળ માનવામાં આવે તો સમ્યગ્દર્શનના થવાથી એનો સદ્ભાવ અવશ્ય
માનવો પડે. આવી દશામાં ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને પણ આંશિકરૂપથી ચારિ-
ત્રનો સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે, ત્યારે એ અવિરતિ ન રહીને વિરત જ સિદ્ધ થાય છે.

સમાધાન-વૈયાઘ્રત્યનિયમ ચારિત્રનો એક ભેદ છે, પરન્તુ તે પૂર્ણ ચારિત્ર
નથી, આંશિક ચારિત્ર છે, અને તે અર્હીયા ઘણો જ અલ્પ દશામાં છે, એથી
એના ચારિત્રરૂપથી આ ઠેકાણે વિવક્ષા નથી. મહાવ્રતાદિરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર જ
ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત થાય છે, તે આ ઠેકાણે નથી, માટે સમ્યગ્દર્શનનું અસ્તિત્વ
હોવા છતાં પણ આ દશામાં આ પ્રકારનું કોઈ પણ ચારિત્ર આ ઠેકાણે નથી,

નનૂપશાન્તમોહાદીનાં સમ્યક્ત્વે સત્યપિ કૃતકૃત્યતયા શ્રુતશ્રવણેન્છાદયો ન ભવન્તિ, તથા ચ કાર્યકારણભાવનિયામકાન્વયવ્યતિરેકવિરહાત્ તેષાં સમ્યક્ત્વ-સમ્યગ્દષ્ટિ કહલાતા હૈ । અલ્પતમ ચારિત્રકે સદ્ભાવસે યહ ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત નહીં હો સકતા હૈ । જૈસે-સંમૂર્ચ્છજન્મ સે ઉત્પન્ન હુઅ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાકા સદ્ભાવ રહને પર મી વિશિષ્ટ સંજ્ઞાકે અભાવ હોને સે અસંજ્ઞી હી કહે જાતે હૈં । હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોતા તો યહ વ્રતી કહલાતા । ક્યોં કિ-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રકે સદ્ભાવ મેં હી વ્રતિત્વ સ્વીકાર કિયા જાતા હૈ । હસી વસ્તુ કો ટીકાકાર કહતે હૈ--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ ટીક હૈ; જૈસે-માત્ર એક રૂપયા કે રહને પર કોઈ ધની નહીં માના જાતા હૈ ?, જૈસે એક હી ગાય કે અસ્તિત્વમેં કોઈ ગોપાલ નહીં કહા જાતા હૈ, ઓર જૈસે એક ગાંઠ સોંઠકે રહને સે કોઈ પંસારી નહીં હોતા હૈ, ઊસી પ્રકાર હસ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્ર કે અસ્તિત્વ સે મી સમ્યગ્દષ્ટિ (અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ) ચારિત્રી નહીં ઘન સકતા ।

શઙ્કા—ઉપશાન્તમોહવાલે જીવોં કે સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી શ્રુત-શ્રવણેન્છાદિક નહીં હોતે હૈં, કારણ કિ વે કૃતકૃત્ય હો ચુકે હૈં । હસ

તેથી આ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ કહેવાય છે અલ્પતમ ચારિત્રના સદ્ભાવથી એ ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત નથી થઈ શકતું. જેમ સમૂર્ચ્છન જન્મથી ઉત્પન્ન થયેલ હુવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાનો સદ્ભાવ હોવા છતાં પણ વિશિષ્ટ સંજ્ઞાનો અભાવ હોવાથી અસંજ્ઞી કહેવાય છે. હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોત તો તે વ્રતી કહેવાત ? કારણ કે-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રના સદ્ભાવમાં જ વ્રતિત્વ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે, એ જ વસ્તુને ટીકાકાર કહે છે--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ.

ટીક પણ છે, જેમ ફક્ત એક રૂપિયાના રહેવાથી કોઈ ધનવાન નથી કહેવાતો, જેમ એક ગાય રહેવાથી કોઈ ગોપાલ નથી કહેવાતો, અને જેમ મુંઠની એક ગાંઠ રાખવાથી કોઈ ગાંધી નથી થતો, તે પ્રકારે આ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્રના અસ્તિત્વથી પણ સમ્યગ્દષ્ટિ (અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ હુવ) ચારિત્રી બની શકતો નથી.

શંકા—ઉપશાન્તમોહવાળા હુવોને સમ્યક્ત્વ હોવા છતાં પણ શ્રુતશ્રવણેન્છાદિક નથી થતાં, કારણ કે તે કૃતકૃત્ય થયેલ છે, તેથી કાર્યકારણભાવનું નિયામક

ફલત્વ ન સંભવતીતિ ચેત્, મૈવમ્, શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં મોહોપશાન્તિફલકત્વેન ફલરૂપેણ તેષ્વપિ શ્રુતશ્રવણવાચ્છાદિસદ્ભાવાત્, યદ્વા-શ્રાવકાવસ્થાયાં યત્ સમ્યક્ત્વં તદાશ્રિત્ય શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ભવન્તીતિ વિવક્ષ્યા તેષાં સમ્યક્ત્વફલત્વં સંભવત્યેવેતિ ।

લિયે કાર્યકારણભાવકે નિયામક અન્વય ઔર વ્યતિરેકકા વિઘટન હોનેસે સમ્યક્ત્વ ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પરમેં કાર્યકારણભાવ નહીં બન સકતા ।

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા મોહોપશાન્તિ ફલવાલે હોનેસે ફલરૂપસે વહાં પર સદ્ભાવ હૈ ।

વિશેષાર્થ—અમી પ્રતિવાદીને જો સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા યહાં પર કાર્યકારણભાવ, અન્વય વ્યતિરેક કે ન ઘટનેસે નહીં સ્વીકાર કિયા થા ઉસકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં બી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા સદ્ભાવ હૈ । યદિ ઇનકા યહાં પર સદ્ભાવ ન માના જાવે તો ઇન જીવોંકી ઉપશાન્તતા હુઈ હૈ વહ ઘટિત નહીં હો સકતી । મોહકી ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા ફલ હૈ, ઔર શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનકે ફલ સ્વરૂપ હૈં, ઇતાવતા વે નિષ્ફલ હોં યહ વાત નહીં; કારણ કિ ફલ બી તો સ્વયં ફલવાન્ હુઆ કરતે હૈં, અતઃ ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફલ હૈ; નિષ્ફલ નહીં, ઇસ લિયે સમ્યગ્દર્શન

અન્વય અને વ્યતિરેકનું વિઘટન હોવાથી સમ્યક્ત્વ અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં પરસ્પરમાં કાર્યકારણભાવ બની શકતો નથી

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો મોહોપશાન્તિ ફળવાળા હોવાથી ફળરૂપથી ત્યાં પણ સદ્ભાવ છે.

વિશેષાર્થ:—અત્યારે પ્રતિવાદીએ જે સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંના આ ઠેકાણે કાર્યકારણ-ભાવ અન્વયવ્યતિરેકના નહિ ઘટવાથી સ્વીકાર કરેલ નથી, એનું સમાધાન કરતા આચાર્ય મહારાજ કહે છે કે-ભાઈ ! ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોમાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો સદ્ભાવ છે. જે તેનો ત્યાં સદ્ભાવ ન માનવામાં આવે તો આ જીવોના મોહની જે ઉપશાન્તતા થઈ છે તે ઘટિત થતી નથી. મોહની ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનું ફળ છે, અને શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનનું ફળસ્વરૂપ છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શન નિષ્ફળ થાય એવી કોઈ વાત નહિ; કારણ કે ફળ પણ સ્વયં ફળવાન થયા કરે છે, તેથી ઉપશાન્ત-મોહવાળા જીવોમાં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફળ થાય છે; નિષ્ફળ નહિ. આ માટે

ભાવતો વ્રતાદ્વીકરણમપિ સમ્યક્ત્વસ્ય ફલં ભવતિ, પરન્તુ સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિત્ તદ્ ભવતિ, કદાચિન્ન । યદપિ ગ્રન્થિભેદાદેવ સમ્યક્ત્વમુદ્ભવતિ સમ્યક્ત્વ-વાંશ્ચ વ્રતાદ્વીકરણમેવોપાદેયતરં વિજાનાતિ; તથાપિ યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વલાભો ભવતિ તાવત્યામેવ વ્રતાદ્વીકરણં ન સંભવતિ । વ્રતાદ્વીકરણં પ્રતિ ચારિત્રમોહનીયકર્મધયોપગમસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકરણકર્મધયોપશમાપેક્ષયાઽધિકત-રસ્ય કારણત્વાત્ ।

ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત હો જાતા હૈ । અથવા—સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં જો કાર્યકારણ ભાવ સંબંધ કહા ગયા હૈ વહ શ્રાવક-અવસ્થા મેં હોનેવાલે સમ્યગ્દર્શનકી અપેક્ષા સે સમજ લેના ચાહિયે । શ્રાવક-અવસ્થા મેં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા જનક વહાં પર હોતા હૈ ।

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોં કા અંગીકાર કરના મી સમ્યક્ત્વ કા ફલ હૈ । યહાં ટીકા મેં જો “અપિ” શબ્દ દિયા ગયા હૈ ડસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિકોં કા આચરણ કમી હોતા મી હૈ ઔર કમી નહીં મી હોતા । યહ નિયમ નહીં કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોં કા સદ્ભાવ જીવોં કે હોવે હી । યદપિ રાગદ્વેષકી પ્રવલ ગ્રન્થિ કે ભેદ સે હી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઔર સમ્યક્ત્વી જીવ વ્રતા-દિક અનુષ્ઠાનોં કા અંગીકાર કરના શ્રેયસ્કર માનતા હૈ, પરન્તુ જિતની કર્મ કી સ્થિતિ રહને પર સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હૈ ડતની સ્થિતિ મેં વ્રત

સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત થઈ જાય છે । અથવા—સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં જે કાર્યકારણભાવ સંબંધ કહેવામાં આવ્યો છે તે શ્રાવક-અવસ્થામાં જાનવાળાના સમ્યગ્દર્શનની અપેક્ષાથી સમજ લેવું જોઈ એ. શ્રાવક-અવસ્થામાં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવ-ણેચ્છાદિકોંને ઉત્પાદક ત્યાં અવશ્ય થાય છે.

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોં અંગીકાર કરવું તે પણ સમ્યક્ત્વનું ફળ છે. અહીં આ ટીકામાં જે “અપિ” શબ્દ આવ્યો છે એનો અભિપ્રાય એ છે કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિકોં આચરણ દોઈ વખત થાય પણ છે અને કોઈ વખત નથી પણ થતું. એ નિયમ નથી કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિક અનુ-ષ્ઠાનોનો સદ્ભાવ હોવાને થાય જ. કદાચ રાગદ્વેષની પ્રવલ પ્રેરણાને કારણે જ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે, અને સમ્યક્ત્વી હવે વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોનું અંગી-કાર કરવું શ્રેયસ્કર માને છે, પરન્તુ જેટલી કર્મની સ્થિતિ રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો

અત્રેદમવગન્તવ્યમ્-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મસ્થિતેર્હિ દ્વિપ્રવૃત્તિનવપર્યન્તસંખ્યારૂપે પલ્યોપમપૃથક્ત્વે વેદનાદપગતે સતિ ભાવતો વ્રતાઙ્ગીકરણં ભવતિ । તત્રૈવં ક્રમઃ—

મોહનીયાદિકર્મણામુત્કૃષ્ટા સ્થિતિઃ સાગરોપમકોટીકોટીસપ્ત્યાદિકા, તન્મ-
ધ્યાત્ તાવર્તીં રિથર્તિં યથાપ્રવૃત્તિકરણેનાદૌ ક્ષપયતિ, યેન પલ્યોપમાનામસંખ્યેય-
ભાગન્યૂના એકસાગરોપમકોટીકોટી શેષા સ્થિતિર્ભવતિ । તતો ગ્રન્થિભેદેન સમ્યક્ત્વં
પ્રાપ્નોતિ । તદનન્તરં શેષકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વે ક્ષપિતે સત્યણુવ્રતં લભતે,
એવમેવ ભાવતો વ્રતપ્રાપ્તિર્ભવતિ, પરન્તુ દીર્ઘતરકર્મસ્થિતૌ સત્યામપિ દ્રવ્યતોઽણુવ્રતં
મહાવ્રતં ચ ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

કા અંગીકાર કરના સંભવિત નહીં હોતા । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોના એક
વાત હૈ ઓર ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોના હસ સે ભિન્ન યાત હૈ । સમ્યક્ત્વ કી
ઉત્પત્તિકા કારણ મિધ્યાત્વ (દર્શનમોહનીયાદિક)કા ક્ષયોપશમાદિક હૈ
ઓર ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિકા કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ હૈ ।
યહ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કે કારણ કી અપેક્ષા વ્રત અંગીકાર
કરનેમેં અધિકતર રૂપસે કારણ માના ગયા હૈ । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોને
પર મી યદિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હુઆ હૈ તો ચારિત્ર
કી પ્રાપ્તિ જીવકો નહીં હોતી હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોતે હી ચારિત્રમોહનીય
કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકે હોને પર જવ જ્ઞાના-
વરણીયાદિક કર્મોં કી સ્થિતિ અપનીર સ્થિતિમેંસે દો સે લગા કર નૌ
પલ્ય તક ઓર ઘટ જાતી હૈ તવ હી જીવ ભાવકી અપેક્ષા વ્રતોંકો અંગી-
કાર કરતા હૈ । હસકા ક્રમ હસ પ્રકાર હૈ—મોહનીયાદિ કર્મોંકી જિતનીર

લાભ થાય છે તેટલી સ્થિતિમાં વ્રતનું અંગીકાર કરવું સંભવિત નથી. સમ્ય-
ક્ત્વની પ્રાપ્તિ થવી એક વાત છે અને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી એનાથી ભિન્ન
વાત છે. સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનું કારણ મિધ્યાત્વના (દર્શનમોહનીયાદિના) ક્ષયો-
પશમાદિક છે. ચારિત્રની ઉત્પત્તિનું કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ
છે. આ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના કારણની અપેક્ષાએ વ્રત અંગીકાર
કરવામાં અધિકતર રૂપથી કારણ માનવામાં આવે છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય
તો પણ જો ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ નહિ થયો હોય તો ચારિત્રની
પ્રાપ્તિ હવે નથી થતી. સમ્યક્ત્વના થવાથી જ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયો-
પશમ નથી થતો; પણ સમ્યક્ત્વના થવાથી ત્યારે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોંની
સ્થિતિ પોતાપોતાની સ્થિતિમાંથી એથી માલીને નવ પર્ય સુધી ઘટી જાય છે
ત્યારે હવે, ભાવની અપેક્ષા વ્રતોને અંગીકાર કરે છે. એના ક્રમ આ પ્રકારે છે—

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હૈ વહ જવ અન્તઃકોટાકોટીસાગર પ્રમાણ રહ જાની હૈ તવ હી જીવ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । જૈસે મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ હૈ । ઇસ સ્થિતિકો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામ સે જીવ ક્ષય કરતા હુઆ જવ પત્યકે અસંખ્યાતવે ભાગ ન્યૂન-કમ એક કોડાકોડી સાગર કી કર લેતા હૈ તવ રાગ-દ્વેષરૂપી પ્રયલ ગ્રન્થિ કે ભેદસે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । આયુકર્મકો છોડ કર ઇસી પ્રકાર શેષ કર્મોની કી સ્થિતિ ભી અન્તઃકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહ જાની ચાહિયે । કર્મોની કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ મેં ઓર જઘન્ય સ્થિતિમેં જીવ કે સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોની, યહ નિયમ હૈ । સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોની કી અન્તઃકોટાકોડ સાગરકી સ્થિતિ રહ જાને પર હી હોતી હૈ । ઇસકે બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જવ પત્યોપમપૃથક્ત્વ પ્રમાણ ક્ષીણ હો જાતી હૈ ઁસ સમય જીવ ભાવકી અપેક્ષા અણુવતરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કરતા હૈ । ઇસ કર્મસ્થિતિમેં ઇતના જવ પરિવર્તન હો જાતા હૈ તવ હી ભાવસે વ્રતપ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈ । ઇસસે યહ સાચિત હોતા હૈ કે 'સમ્યગ્દર્શનકે હોને પર જીવ ભાવસે વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કર હી લેના હૈ' યહ નિયમ નહીં હૈ । દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમેં દ્રવ્ય સે હી (ભાવશૂન્ય)

મોહનીયાદિ કર્મોની જેટલી જેટલી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે તે બ્યારે અન્તઃકોટાકોટી સાગર પ્રમાણ રહી વત્ય છે ત્યારે જ જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય થાય છે. જેમ મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સિત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ છે આ સ્થિતિનો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામથી જીવ ક્ષય કરીને બ્યારે પત્યના અસંખ્યાતમા ભાગ ન્યૂન કોડાકોડી સાગરની કરે છે ત્યારે રાગદ્વેષરૂપી પ્રયલ ગ્રન્થિના ભેદથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, આયુકર્મને છોડીને આ જ પ્રકારે શેષ કર્મોની સ્થિતિ પણ અન્તઃકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહેવી જેમજે કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં અને જઘન્ય સ્થિતિમાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિ જીવને નથી થતી, એ નિયમ છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ આયુકર્મને છોડીને શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોની એક કોડાકોડ સાગરની સ્થિતિ રહેવાથી જ થાય છે. ત્યાર બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ બ્યારે પત્યોપમપૃથક્ત્વપ્રમાણ ક્ષીણ થઈ વત્ય છે તે વખતે જીવ, ભાવની અપેક્ષા અણુવતરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ કરે છે. આ પ્રકારે કર્મસ્થિતિમાં એટલું બ્યારે પરિવર્તન થાય છે ત્યારે ભાવથી વ્રતપ્રાપ્તિ થાય છે. એથી એ સાચિત થાય છે કે 'સમ્યગ્દર્શનના થવાથી જીવ, ભાવથી વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરી જ લે છે' એ નિયમ નથી, દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમાં દ્રવ્ય-

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

હાયા—સર્વજીવાનાં યસ્માત્સૂત્રે ગ્રૈવેયકેષૂપપાતઃ ।

મણિતો જિનૈઃ સ ન ચ લિંગં મુક્ત્વા યતો મણિતમ્ ॥ ૧ ॥

યે દર્શનવ્યાપન્ના, લિંગગ્રહણં કુર્વન્તિ શ્રામણ્યે ।

તેષામપિ ચોપપાત, ઉત્તર્પો યાવદ્ ગ્રૈવેયકાન્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અયમત્ર સારાંશઃ—યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તં, તન્મધ્યાત્ પલ્યોપમપૃથક્ત્વરૂપે સ્થિતિભાગેઽનુક્રમેણ વીર્યોલ્લાસાત્ અપિતે સતિ દેશવિરતો ભવતિ।

અણુવ્રત-મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતા હૈ, जिसका फल कर्मक्षय नहीं है । द्रव्यचारित्रका अभिप्राय भावशून्य चारित्र है । यह चारित्र सम्यग्दर्शनमूलक नहीं होता । भावचारित्र ही सम्यग्दर्शनमूलक होता है । कहा भी है—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

इन सब पूर्वोक्त कथनका सारांश यही है कि-जितनी कर्मस्थितिके रह जाने पर सम्यक्त्वका लाभ हुआ है, उस स्थितिमें से कम से कम पल्योपमपृथक्त्व (दो से लगाकर ९ पल्य तक) प्रमाण स्थिति

ધીજ (ભાવશૂન્ય) આણુવ્રત મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે, જેનું ફળ કર્મ-ક્ષય નથી । દ્રવ્યચારિત્રનો અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર છે. આ ચારિત્ર સમ્યગ્દર્શન-મૂલક નથી થતું. ભાવચારિત્ર જ સમ્યગ્દર્શનમૂલક થાય છે. કહ્યું પણ છે —

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥ ૧ ॥

જે દંસણવાવણ્ણા લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિંપિ ચ ઉવવાઓ ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

આ બધા પૂર્વોક્ત કથનનો સાર એ છે કે જેટલી કર્મસ્થિતિના રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, આ સ્થિતિમાંથી ઓછામાં ઓછું પલ્યોપમ પૃથક્ત્વ (જે થી માંડી ૯ પલ્ય સુધી) પ્રમાણ સ્થિતિ વીર્યોલ્લાસથી દર્શાવેલ થઈ જાય

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હૈ વહ જવ અન્તઃકોટાકોટીસાગર પ્રમાણ રહ જાની હૈ તવ હી જીવ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । જૈસે મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ હૈ । ઇસ સ્થિતિકો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામ સે જીવ ક્ષય કરતા હુઆ જવ પત્યકે અસંખ્યાતવે ભાગ ન્યૂન-કમ એક કોડાકોડી સાગર કી કર લેતા હૈ તવ રાગ-દ્વેષરૂપી પ્રબલ ગ્રન્થિ કે ભેદસે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । આયુકર્મકો છોડ કર ઇસી પ્રકાર શેષ કર્મોં કી સ્થિતિ ભી અન્તઃકોટા-કોટીસાગરપ્રમાણ રહ જાની ચાહિયે । કર્મોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમેં ઓર જઘન્ય સ્થિતિમેં જીવ કે સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી, યહ નિયમ હૈ । સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોં કી અન્તઃ કોડાકોડ સાગરકી સ્થિતિ રહ જાને પર હી હોતી હૈ । ઇસકે બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જવ પત્યોપમપૃથક્ત્વ પ્રમાણ ક્ષીણ હો જાતી હૈ ઇસ સમય જીવ ભાવકી અપેક્ષા અણુવ્રતરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કરતા હૈ । ઇસ કર્મસ્થિતિમેં ઇતના જવ પરિવર્તન હો જાતા હૈ તવ હી ભાવસે વ્રતપ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈ । ઇસસે યહ સાબિત હોતા હૈ કે ‘સમ્ય-ગ્દર્શનકે હોને પર જીવ ભાવસે વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ’ યહ નિયમ નહીં હૈ । દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમેં દ્રવ્ય સે હી (ભાવશૂન્ય)

મોહનીયાદિ કર્મોંની જેટલી જેટલી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે તે જ્યારે અન્તઃકોટાકોટી સાગર પ્રમાણ રહી જાય છે ત્યારે જ જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય થાય છે. જેમ મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સિત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ છે. આ સ્થિતિનો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામથી જીવ ક્ષય કરીને જ્યારે પત્યના અસંખ્યાતમા ભાગ ન્યૂન કોડાકોડી સાગરની કરે છે ત્યારે રાગદ્વેષરૂપી પ્રબલ ગ્રન્થિના ભેદથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, આયુકર્મને છોડીને આ જ પ્રકારે શેષ કર્મોંની સ્થિતિ પણ અન્તઃકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહેવી જોઈએ. કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમા અને જઘન્ય સ્થિતિમાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિ જીવને નથી થતી, એ નિયમ છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ આયુકર્મને છોડીને શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોંની એક કોડાકોડ સાગરની સ્થિતિ રહેવાથી જ થાય છે. ત્યાર બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જ્યારે પત્યોપમપૃથક્ત્વપ્રમાણ ક્ષીણ થઈ જાય છે તે વખતે જીવ, ભાવની અપેક્ષા આણુવ્રતરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ કરે છે. આ પ્રકારે કર્મસ્થિતિમાં એટલું જ્યારે પરિવર્તન થાય છે ત્યારે ભાવથી વ્રતપ્રાપ્તિ થાય છે. એથી એ સાબિત થાય છે કે ‘સમ્યગ્દર્શનના થવાથી જીવ, ભાવથી વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરી જ લે છે’ એ નિયમ નથી, દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમા દ્રવ્ય-

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિં સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

છાયા—સર્વજીવાનાં યસ્માત્મુત્રે ગ્રૈવેયકેપૂપપાતઃ ।

ભણિતો જિનૈઃ સ ન ચ લિદ્ગં મુક્ત્વા યતો ભણિતમ્ ॥ ૧ ॥

યે દર્શનવ્યાપન્ના, લિદ્ગગ્રહણં કુર્વન્તિ શ્રામણ્યે ।

તેવામપિ ચોપપાત, ઉત્કર્ષો યાવદ્ ગ્રૈવેયકાન્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અયમત્ર સારાંશઃ—યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તં, તન્મધ્યાત્ પલ્યોપમપૃથક્ત્વરૂપે સ્થિતિભાગેઽનુક્રમેણ ચીર્યોલ્લાસાત્ ક્ષપિતે સતિ દેશવિરતો ભવતિ।

અણુવ્રત-મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતા હૈ, जिसका फल कर्मक्षय नहीं है । द्रव्यचारित्रका अभिप्राय भावशून्य चारित्र है । यह चारित्र सम्यग्दर्शनमूलक नहीं होता । भावचारित्र ही सम्यग्दर्शनमूलक होता है । कहा भी है—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિં સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

इन सब पूर्वोक्त कथनका सारांश यही है कि—जिनकी कर्मस्थितिके रह जाने पर सम्यक्त्वका लाभ हुआ है, उस स्थितिमें से कम से कम पल्योपमपृथक्त्व (दो से लगाकर ९ पल्य तक) प्रमाण स्थिति

ધીજ (ભાવશૂન્ય) અણુવ્રત મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે, જેનું ફળ કર્મ-ક્ષય નથી દ્રવ્યચારિત્રનો અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર છે. આ ચારિત્ર સમ્યગ્દર્શન-મૂલક નથી થતું. ભાવચારિત્ર જ સમ્યગ્દર્શનમૂલક થાય છે. કહ્યું પણ છે —

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥ ૧ ॥

જે દંસણવાવણ્ણા લિંગગ્ગહણં કરિંતિં સામન્ને ।

તેસિપિ ય ઉવવાઓ ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

આ બધા પૂર્વોક્ત કથનનો સાર એ છે કે જેટલી કર્મસ્થિતિના રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, આ સ્થિતિમાંથી ઓછામાં ઓછું પલ્યોપમ પૃથક્ત્વ (એ થી માંડી ૯ પલ્ય સુધી) પ્રમાણ સ્થિતિ વીર્યોલ્લાસથી ક્ષપિત થઈ જાય

દેશવિરતિપ્રાપ્ત્યનન્તરં સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુ સર્વવિરતિચારિત્રં લભતે । તદનન્તરમપિ સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુપશમશ્રેણિં પ્રતિપદ્યતે । તતોઽપિ સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુ ક્ષપકશ્રેણિર્ભવતિ । તતસ્તસ્મિન્નેવ ભવે મોક્ષઃ । એવં યસ્ય સમ્યક્ત્વમપ્રતિપતિતં તસ્યૈવ દેવમનુષ્યભવેષુ સંસરણં કુર્વતો દેશવિરત્યાદિ-લાભો ભવતિ । સમ્યક્ત્વં હિ અનન્તાનન્દ-રૂપાનુપમ મોક્ષસુખસ્ય કારણમ્ । ઉક્તञ્ચ—

“ જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌપધમ્ ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

વીર્યોલ્લાસ સે ક્ષપિત હો જાવે તથ દેશવિરતિકા લાભ હોતા હૈ । દેશ-વિરતિ-શ્રાવકચારિત્ર-પંચમ ગુગસ્થાન કી પ્રાપ્તિકે અનન્તર સંખ્યાત સાગરપ્રમાણ સ્થિતિકે ક્ષય હોને પર સર્વવિરતિ-મુનિવ્રત-ષષ્ઠગુણ-સ્થાનકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ઇસકે વાદ સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિકે વ્યતીત હો જાનેપર ઉપશમશ્રેણિ ઓર ફિર સંખ્યાતસાગરપ્રમાણસ્થિતિ કે ક્ષય હોને પર ક્ષપકશ્રેણિકા લાભ હોતા હૈ । ફિર ઁસી ભવસે ઁસકો મુક્તિકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ । દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રકા લાભ ઁસી જીવકે હોતા હૈ કિ જિસને અપને સમ્યક્ત્વ કી વિરાધના દેવ મનુષ્ય ભવોંમેં રહતે હુએ નહોં કી હૈ । અર્થાત્ દેવપર્યાય મેં યા મનુષ્યપર્યાય મેં જિસકે સમ્યક્ત્વકી વિરાધના હો ગઈ હૈ ઁસ જીવકે દેશવિરતિ આદિ ચારિત્ર કા લાભ નહોં હોતા । યહ સમ્યક્ત્વ અનન્તઆનન્દરૂપ અનુપમ મોક્ષ-સુખકા કારણ હૈ । જૈસે કહા હૈ—

ત્યારે દેશવિરતિનો લાભ થાય છે દેશવિરતિ-શ્રાવકચારિત્ર પાંચમા ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિની પછી સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિનો ક્ષય થવાથી સર્વવિરતિ-મુનિવ્રત-છઠ્ઠા ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ થાય છે ત્યાર બાદ સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિના વ્યતીત થઈ જવાથી ઉપશમશ્રેણિ, અને પછી સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિનો ક્ષય થવાથી ક્ષપકશ્રેણીનો લાભ થાય છે વળી એ જ લવથી તેને મુક્તિની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે. દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રનો લાભ તે જ જીવને થાય છે કે જેણે પોતાના સમ્યક્ત્વની વિરાધના દેવ મનુષ્ય ભવોમાં રહીને નથી કરી. અર્થાત્-દેવપર્યાયમાં અગર મનુષ્યપર્યાયમાં જેને સમ્યક્ત્વની વિરાધના થઈ ગઈ છે એ જીવને દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રનો લાભ નથી થતો તે સમ્યક્ત્વ અનન્ત આનન્દરૂપ અનુપમ મોક્ષસુખનું કારણ છે જેમ કહ્યું છે.—

અન્યચ્ચ—“ દ્વારં મૂલં પ્રતિષ્ઠાનમાધારો ભાજનં નિધિઃ ।

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્ ” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ—“ સસ્યાનીવોપરક્ષેત્રે, નિશ્ચિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે ” ॥ ૪ ॥ ઇતિ ।

“ જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્વોદ્યુપગમે યદ્વદ્, -વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્ ” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્ચ—“ દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩ માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬ ।

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્ ” ॥ ૩ ॥

અપરશ્ચ—“ સસ્યાનીવોપરક્ષેત્રે, નિશ્ચિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે ” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માન્ધ પુરુષકો શુભ કર્મોંકે ઉદયસે નેત્રોંકે ખુલ જાને પર જિસ પ્રકાર સદ્દર્શન (સમસ્ત વસ્તુઓંકા દીક્ષના) હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર ઇસ જીવકો સમ્યક્ત્વકા લાભ હોને પર યથાર્થ જ્ઞાન હોતા હૈં । ૧।

જિસ પ્રકાર રોગીકો શ્રેષ્ઠ ઔષધસે આરોગ્યપ્રાપ્તિ હોને પર આનન્દ હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર સદ્વોધિ (સમ્યક્ત્વ) કે પ્રાપ્તિ હોને પર ઉસ મહા-ત્મા પુરુષ કો સાત્ત્વિક અત્યાનન્દ હોતા હૈં ॥ ૨ ॥

“ જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્વોદ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્ ” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્ચ—“ દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩, -માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્ ” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ—“ સસ્યાનીવોપરક્ષેત્રે, નિશ્ચિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે ” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માંધ પુરુષને શુભ કર્મના ઉદયથી નેત્રોના ખુલવાથી તે પ્રકારે સદ્દર્શન (હરેક વસ્તુઓનું દેખવું) થાય છે, તે પ્રકારે આ હવેને સમ્યક્ત્વના લાભ થવાથી યથાર્થ જ્ઞાન થાય છે. (૧)

તે પ્રકારે રોગીને શ્રેષ્ઠ ઔષધિથી આરોગ્યપ્રાપ્તિ થવાથી આનન્દ થાય છે તે પ્રકારે સદ્વોધિ (સમ્યક્ત્વ) ની પ્રાપ્તિ થવાથી તે મહાત્મા પુરુષને સાત્ત્વિક અત્યાનન્દ થાય છે. (૨)

નનુ યદુક્તં સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિદ્ વ્રતાઙ્ગીકરણં નાપિ ભવતીતિ, તત્ કથં સંભવતિ ? ઉચ્યતે—

યદા સમ્યક્ત્વલાભાનન્તરં નવપલ્યોપમાધિકસ્થિતિકો દેવેષ્ટપદ્યતે તદા તસ્યામ-
વસ્થાયાં યાવતીં સ્થિતિં ક્ષપયતિ તાવતીમન્યાં વધ્નાતિ, તતો દેશોનસાગરોપમકોટી-
કોટીરૂપાયા અધિકૃતકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વસ્યાપગમો ન ભવતીતિ—અતો દેવમ-
વે દેશવિરતિલાભો ન સંભવતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વે સત્યપિ વ્રતાનઙ્ગીકરણં સિદ્ધમ્ ।

ઔર મી—યહ સમ્યક્ત્વ ચારહ પ્રકારકે શ્રાવક ધર્મકા દ્વાર હૈ ૧, મૂલ હૈ ૨, પ્રતિષ્ઠાન (આલમ્બન) હૈ ૩, આધાર હૈ ૪, ભાજન-પાત્ર હૈ ૫, ઔર નિધિરૂપ હૈ ૬ ॥ ૩ ॥

ફિર મી—જિસ પ્રકાર ડપર ક્ષેત્રમ્લે બોયે હુએ બીજ નહીં ડગતે હૈં
ઉસી પ્રકાર મિથ્યાત્વવાસિત જીવમ્લે વ્રતોંકા ઉદય નહીં હોતા ॥૪॥

શઙ્કા—સમ્યક્ત્વ કે હોને પર કદાચિન્ વ્રતકા લાભ નહીં મી હોતા
હૈ, યહ બાત કૈસે સંભવ હોતી હૈ ? ।

સમાધાન—સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી વ્રતકા લાભ નહીં હોતા, યહ બાત
ઁક તો ડપર કથિત પ્રકારસે પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ઔર દૂસરા પ્રકાર યહ મી હૈ—
જિસ જીવકો સમ્યક્ત્વકા લાભ હુઆ હૈ વહ અપની આયુકે અન્તમ્લે
નૌ પલ્યસે અધિક સ્થિતિકા બંધ કર દેવપર્યાય મ્લે ઉત્પન્ન હુઆ ઉસ
સમય વહ ઉસ પર્યાય મ્લે સે જિતની મી સ્થિતિકા ક્ષય કરતા હૈ ઉતની
ઔર દૂસરી સ્થિતિકા બંધ મી કરતા રહતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે ઉત્પાદનકે

ક્રી—આ સમ્યક્ત્વ ઞાર પ્રકારના શ્રાવક ધર્મનુ દ્વાર છે ૧, મૂલ છે ૨, પ્રતિ-
ષ્ઠાન (આલંબન) છે ૩, આધાર છે ૪, ભાજન-પાત્ર છે ૫ અને નિધિ છે ૬. (૩)

વળી—જે પ્રકારે ડપર ક્ષેત્રમાં વાવેલા ખીજ ડગતા નથી તે પ્રકારે મિથ્યા-
ત્વવાસિત જીવમા વ્રતનો ઉદય થતો નથી. (૪)

શંકા—સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતનો લાભ કોઈ વખત નહીં પણ થાય, આ વાત
કેમ સંભવે છે ?

સમાધાન—સમ્યક્ત્વના થવાથી પણ વ્રતનો લાભ નથી થતો, એ વાત એક તો
ડપર કથિત પ્રકારથી પ્રગટ કરી છે, અને ખીજે પ્રકાર એ પણ છે—જે જીવને સમ્યક્ત્વનો
લાભ થયો છે તે પોતાની આયુના અંતમાં નવ પલ્યથી અધિક સ્થિતિનો બંધ કરીને
દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો, તે વખત તે પર્યાયમાં જેટલી સ્થિતિનો ક્ષય કરે છે તેટલી
ખીજ સ્થિતિનો તે બંધ પણ કરે છે, એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વના ઉત્પાદનના સમયની

यस्य सम्यक्त्वनो व्रतप्राप्तिर्न भवति, स तु अव्रती सम्यग्दृष्टिः श्रावको निगद्यते ।

किंच—सम्यक्त्वाभावे सति मोक्षो न लभ्यते । मिथ्यादृष्टिर्हि कुशास्त्रप्रति-
बोधितां संयमनियमादिरूपां निवृत्तिमाचरन्नपि, स्वजनधनभोगान् परित्यजन्नपि,
शीतोष्णक्षुत्पिपासादिभिर्दुःखस्य परां काष्ठामुपगच्छन्नपि सम्यक्त्वरहितत्वेन
मोक्षसिद्धये न प्रभवति । सम्यक्त्वाभावे सति कर्मक्षयो न भवति । सम्यक्त्ववतामेव
ज्ञानतपश्चारित्राण्यपि सफलीभवन्ति । सम्यक्त्वे सत्येव चाणुव्रतगुणव्रतशिक्षाव्रतानि
भधितुमर्हन्ति, तस्मात् सम्यक्त्वं मोक्षस्य बीजमिति बोध्यम् ।

समय की कुछ कम कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमेंसे पत्योपम-
पृथक्त्वरूप स्थितिका अपगम-अभाव नहीं होनेसे देवपर्यायमें देशविरति
का लाभ संभवित नहीं होता ।

जिस सम्यक्त्वीको व्रतप्राप्ति नहीं होती है वह सम्यग्दृष्टि श्रावक
कहलाता है । इसको कभी न कभी (अर्धपुद्गलपरावर्तनकालके बाद)
मुक्तिका लाभ अवश्य हो जाता है, परन्तु जिसके मूलमें सम्यक्त्व ही
नहीं है उसको मुक्तिपद की प्राप्ति हो नहीं सकती । मिथ्यादृष्टि जीव
(द्रव्यलिङ्गी मुनि जैसा) खोटे २ शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित संयम
नियमादिरूप चारित्रका पालन करनेपर भी स्वजन धन एवं पांच इन्द्रियों
के विषयों का परित्यागी होने पर भी, और अनेक प्रकारसे शीत उष्ण,
भूख और प्यास आदि परीषद्जन्य कष्टों का कठोर से कठोर सामना
करते हुए भी सम्यक्त्व से रहित होनेके कारण ही मोक्षरूपी सिद्धि
का भागी नहीं माना गया है । यह तो अटल सिद्धान्त है कि-सम्य-

क्षां ओछी कोटाकोटीसागरौपम स्थितिभांथी पत्योपमपृथक्त्वरूप स्थितिने
अपगम-अभाव नहि थवाथी देवपर्यायमा देशविरतिने लाभ संभवित थतो नथी.

जे सम्यक्त्वने व्रतप्राप्ति नथी थती ते अविरतसम्यग्दृष्टि श्रावक
कहेवाथ छे जेने कोछ वणत (अर्धपुद्गलपरावर्तन कालनी पछी) मुक्तिने
लाभ अवश्य थथ छे. पणु जेना भूणमां सम्यक्त्व नथी तेने मुक्तिपदनी प्राप्ति
थती नथी. मिथ्यादृष्टि लव (द्रव्यलिङ्गी मुनि जेवा) जोटा जोटा शास्त्रेद्वारा
प्रतिपादित संयमनियमादिरूप चारित्रनुं पालन करवाथी स्वजन धन अने पंचे-
न्द्रियोना विषयोना परित्यागी होवा छता पणु, अने अनेक प्रकारधी शीत,
उष्ण, भूण अने प्यास आदि परिषद्जन्य कष्टोना कठोरमां कठोर सामने करवा
छता पणु सम्यक्त्वधी रहित होवाना कारणे मोक्षरूपी सिद्धिने लागी मानवामां
आवतो नथी. जे तो अटल सिद्धांत छे ते:—सम्यक्त्वप्राप्ति विना कर्म लय

નન્વાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં કથં વિજેયં ભવેદિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—સમ્યક્ત્વ-
કાર્યરૂપૈઃ શમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાસ્તિક્વૈઃ સાધુસામાચારીપ્રવૃત્ત્યાદિરૂપૈઃ સામાયિક-
પૌષ્ઠપ્રતિક્રમણત્યાગપ્રત્યાખ્યાનાદિશ્રાવકાચારરૂપૈશ્ચ વાહ્યપ્રશસ્તવ્યાપારૈરેતદવગન્તું
શક્યતે । તત્ર—

ક્ત્વપ્રાપ્તિકે વિના કર્મક્ષય હોતા હી નહીં હૈ । સમ્યક્ત્વકે વિના જ્ઞાન
ઔર ચારિત્ર નિષ્ફલ હૈ । इनकी सफलता का मूल कारण यदि कोई है
तो वह एक सम्यक्त्व ही है । सम्यक्त्वी जीव के ही ज्ञान तप चारित्र
सफल होते हैं, अणुव्रत, गुणव्रत एवं शिक्षाव्रत—रूप श्रावकका देश
चारित्र भी सम्यक्त्व के सद्भावमें ही सफल माना गया है, इस लिये
सम्यक्त्व ही मोक्षका कारण है ।

શક્તિ—સમ્યક્ત્વ તો આત્માકા એક પરિણામ હૈ, ઉસકા અસ્તિત્વ
કૈસે જાના સકતા હૈ ?

શક્તિ—આત્માકા અભિપ્રાય યહાં હિસ પ્રકારકા હૈ કિ જવ સમ્યક્ત્વ
આત્માકા એક પરિણામ હૈ તો વહ બી અમૂર્ત્ત હી હોગા । અર્થાત્—જિસ
પ્રકાર આત્મા અમૂર્ત્ત હૈ ઉસી પ્રકાર વહ સમ્યક્ત્વ બી અમૂર્ત્ત હોગા, ફિર
ઉસકે અસ્તિત્વકા બોધ કૈસે હોતા હૈ ?

હિસ શક્તિ—આત્માકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈ કિ—
વાત ઠીક હૈ; પરન્તુ ઉસકે કાર્યો સે ઉસકે અસ્તિત્વકા ભાન હોતા હૈ ।
શમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓંકી સમાચારીરૂપ
પ્રવૃત્તિ આદિ, એવં સામાયિક, પૌષ્ઠ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન

યતાં નથી, સમ્યક્ત્વ વિના જ્ઞાન અને ચારિત્ર નિષ્ફળ છે, એની સફળતાનું મૂળ
કારણ જો કોઈ હોય તો તે એક સમ્યક્ત્વ જ છે સમ્યક્ત્વી જીવને જ જ્ઞાન તપ
ચારિત્ર સફળ થાય છે. આણુવ્રત, ગુણુવ્રત અને શિક્ષાવ્રતરૂપ શ્રાવકનું દેશચારિત્ર
પણ સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમા જ સફળ મનાય છે, તેથી સમ્યક્ત્વ જ મોક્ષનું કારણ છે

શંકા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માનું એક પરિણામ છે, તેનું અસ્તિત્વ કેવી
રીતે જાણી શકાય ? શંકાકારને અભિપ્રાય આ ઠેકાણે આ પ્રકારનો છે કે બીજા
સમ્યક્ત્વ આત્માનું એક પરિણામ છે તો તે પણ અમૂર્ત્ત થશે અર્થાત્—જે પ્રકારે
આત્મા અમૂર્ત્ત છે તે પ્રકારે તે સમ્યક્ત્વ પણ અમૂર્ત્ત થશે, પછી તેના અસ્તિત્વનો
બોધ કેવી રીતે થાય ? આ શંકાનું મમાધાન કરતા આચાર્ય મહારાજ કહે છે
કે—વાત ઠીક છે, પરંતુ તેના કાર્યોથી તેના અસ્તિત્વનું ભાન થાય છે શમ, સંવેગ
નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓની સમાચારીરૂપ પ્રવૃત્તિ આદિ, અને સા-

(૧) શમરૂપેણ સમ્યક્ત્વપરિણામેન સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રતિકૂલકારિણેઽપિ ન ક્રુધ્યતિ ।

(૨) સંવેગાશ્ચ્યેન તેન 'સકલમદ્વીમણ્ડલેશ્વરસ્ય દેવેન્દ્રસ્ય ચ સુખં પરમાર્થતો દુઃખમેવ, કર્મજન્યત્વાત્ સાવસાનત્વાદસ્વાભાવિકત્વાચ્चेति मन्यमानो मोक्षादन्यत् किञ्चिन्न वाञ्छति, मोक्षो हि स्वाभाविकात्मपरिणामरूपः कर्माजन्यः पर्यवसानरहितो निरतिशयानन्दरूपश्चास्ति ।

આદિ જો બાહર કે પ્રશસ્ત વ્યાપાર હૈં યે હી ઉસકે કાર્ય હૈં । ઇનસે હી ઉસકે અસ્તિત્વકા બોધ હોતા હૈં ।

(૧) શમ—શમરૂપ સમ્યક્ત્વકે પરિણામવાલા જીવ કિસી ભી સમય અપને સે પ્રતિકૂલ આચરણ કરનેવાલોં પર ભી ક્રોધ નહીં કરતા હૈ, અર્થાત્—કષાયોં કા શમનરૂપ યહ પરિણામ હૈ, અથવા કષાયોં કા શમન હી શમ હૈ ।

(૨) સંવેગ—સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ—સંસારસે ભયભીત હોના હી સંવેગ હૈ । ઇસ પરિણામવાલા જીવ ચક્રવર્તી ઔર ઇન્દ્ર કે ભી વૈષયિક સુખોં કો અપની દૃષ્ટિસે દુઃખરૂપ હી માનતા હૈ । કારણ કિ વહ ઉનકા સુખ, કર્મ—(સાતાવેદનીય) કે ઉદયાધીન હોને સે સાન્ત—નાશવાન હૈ, એવં યહ આત્મિક સ્વભાવ સે પ્રતિકૂલ હૈ, ઔર મોક્ષ તો ઇસસે વિપરીત સ્વભાવવાલા હૈ, અનઃ ઉસકે અતિરિક્ત ઔર કોઈ ભી સાંસારિક પદાર્થ ઇસકી દૃષ્ટિ કા મોહક નહીં બન સકતા, ઇસલિએ મોક્ષ કે અતિરિક્ત ઔર કિસી ભી પદાર્થ કી પ્રાપ્તિકી વાંછા ઇસકે નહીં રહતી । 'મોક્ષ ઇસસે વિપ-

માયિક પોષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન આદિ જે જાણ પ્રશસ્ત વ્યાપાર છે તે જ તેના કાર્યો છે, તેનાથી જ તેના અસ્તિત્વનો ખોધ થાય છે.

(૧) શમ—શમરૂપ સમ્યક્ત્વના પરિણામવાળો જીવ કોઈ વખત પોતાથી પ્રતિક્રિયા આચરણ કરવાવાળા ઉપર પણ ક્રોધ કરતો નથી. અર્થાત્ કષાયોના શમનરૂપ આ પરિણામ છે, અથવા કષાયોનો શમન જ શમ છે.

(૨) સંવેગ—'સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ' સંસારથી ભયભીત થવું તે સંવેગ છે. આ પરિણામવાળા જીવ ચક્રવર્તી અને ઇન્દ્રોના વૈષયિક સુખોને પણ પોતાની દૃષ્ટિથી દુઃખરૂપ જ માને છે. કારણ કે તે એના સુખ, કર્મ (સાતાવેદનીય)ના ઉદયાધીન હોવાથી સાન્ત—નાશવાન છે, એ આત્મિકસ્વભાવથી જ પ્રતિક્રિયા છે, અને મોક્ષ તો એનાથી વિપરીત સ્વભાવવાળો છે. એથી એનાથી અતિરિક્ત બીજો કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થ એની દૃષ્ટિને મોહક નથી બની શકતો. તેથી મોક્ષના અતિરિક્ત કોઈ પણ પદાર્થની પ્રાપ્તિની વાંછના એને રહેતી નથી. મોક્ષ એથી

(૩) નિર્વેદાણ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન જીવો મન્યતે—‘નારકતિર્યક્મનુષ્યદેવ-
ભવેષુ સર્વેષ્વેવ દુઃસ્વમસ્તિ, અતઃ સર્વમેવ જગન્નિઃસાર’-મિતિ । અપિ ચ મમત્વવિપ-
વેગરહિતો ભવતિ ।

(૪) પ્રાણિવર્ગો સમન્તાદલોક્યાનુકમ્પાણ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન—‘ઇમે
સંસારચક્રપરિભ્રાન્તાઃ શારીરૈર્માનસૈશ્વ વિવિધદુઃસ્વૈઃ પરાભૂતાઃ સન્તી’-તિ મત્વા સ્વા-
ત્મોપમ્યેન તેષાં દુઃસ્વાન્યનુભૂય સ્વકીયપરકીયભાવાઽભાવપૂર્વકમભયદાનેન, પ્રાણિનાં

રીત સ્વભાવવાળા છે’ इसका तात्पर्य यही है कि वह कर्म के उदय के
आधीन नहीं हैं, अपितु आत्मा का निजस्वभाव है । एक बार जिस
जीव को इसकी प्राप्ति हो जाती है उसको फिर इस संसारमें परिभ्रमण
नहीं करना पड़ता, एवं जीव को वहां पर निरतिशय अनंत आनन्द की
प्राप्ति होती है इसलिये वह मोक्ष स्वयं अपूर्व अनंत आनन्द का एक धाम
है । संवेग परिणामवाला जीव इस प्रकारके मोक्षसुखकी ही अभिलाषा
करता है ।

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાળા જીવ—‘નરક, તિર્યક્ દેવ ઓર મનુ-
ષ્યભવમેં સર્વત્ર હી દુઃસ્વકા સામ્રાજ્ય છાયા હુઆ હૈ’ इस लिये यह समस्त
जगत दुःस्वका एक भाजन है’ ऐसा समझ कर उसको निःसार—साररहित
ही जानता है । ममत्तारूप जहर से वह दूर ही रहता है ।

(૪) અનુકંપા—દુઃસ્વી જીવોં પર દયાભાવ હોના હી અનુકંપા હૈ ।
इस गुणवाला जीव संसारस्थ समस्त प्राणिवर्ग को शारीरिक मानसिक

વિપરીત સ્વભાવવાળો છે’ એનો તાત્પર્ય એ છે કે તે કર્મના ઉદયને આધીન નથી
પણ આત્માનો નિજસ્વભાવ છે એક વાર જે જીવને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ ગઈ તો
પછી એને આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરવું પડતું નથી. અને જીવને ત્યાં નિરતિ-
શય અનંત આનંદની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે મોક્ષ પોતે અપૂર્વ અનંત
આનંદનો ધામ છે સંવેગપરિણામવાળો જીવ આવા પ્રકારના મોક્ષ—સુખનીજ
અભિલાષા કરે છે.

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાળો જીવ—‘નરક, તિર્યક, દેવ અને મનુષ્ય ભવમાં
સર્વત્ર દુઃખનુ સામ્રાજ્ય જ પથરાયેલું છે, એથી સમસ્ત આ જગત દુઃખનું એક
ભાજન છે’ એવું સમજીને તેને નિઃસાર—સારરહિત માને છે. મમતાથી ઝેરથી
તે દૂર જ રહે છે.

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવો ઉપર દયા કરવી તેનું નામ અનુકંપા છે. આ
ગુણવાળા જીવ સંસારના સમસ્ત પ્રાણિવર્ગને અનેક શારીરિક માનસિક કષ્ટોથી

રક્ષણેન, માર્યમાણાનાં સંકટાન્મોચનેન, ધર્મોપદેશેન મોક્ષમાર્ગે યોજનયા ચ યથા-સામર્થ્યમનુગ્રહં કુરુતે ।

(૫) આસ્તિક્યપરિણામેન ચ ‘યદિહ તીર્થકરૈઃ પ્રતિબોધિતં તત્ સર્વમેવ સત્યં, તથૈવ સર્વં જીવાજીવાદયોઽર્થાઃ સન્તિ નિશ્ચક્લમ્’ ઇતિ મન્યતે । સ ચ કાક્ષાદિ-વિસ્રોતસિકારહિતો ભવતિ ।

एवंभूतैः शमादिपरिणामैः सम्यक्त्वं विज्ञेयं भवितुर्महति । लब्धसम्यक्त्वश्च सम्पद्दृष्टिरित्युच्यते । स चान्तर्मुहूर्तकालमपि सम्यक्त्वेन स्पृष्टश्चेदुत्कृष्टतो देशो-

अनेक कष्टों से व्यथित ही अनुभव किया करता है, और अपने समान ही उन्हें मान कर उनके उन दुःखों का स्वयं अनुभव करके निष्पक्ष दृष्टि से युक्त हो कर उनके उन दुःखों को दूर करने की यथाशक्ति कोशिश में रहता है । अपनी शक्तिके अनुसार उनकी रक्षा करता है । मरते हुए तथा घातकद्वारा मारे जाते हुए जीवों को यथाशक्ति बचाता है और मोक्षमार्गसे विपरीत जनों को सद्धर्मके उपदेश से भावित कर उन्हें मोक्षमार्ग में लगाने की अपनी शक्तिके अनुसार चेष्टा भी करता है ।

(५) आस्तिक्य—“जो जिनेन्द्रदेवने कहा है वह सर्व ही सत्य है” इस प्रकार दृढ़ आस्थावाली मति ही आस्तिक्य भाव है । इस आस्तिक्य भाववाला जीव जिनप्रतिपादित तत्त्वों में निश्चिंक होकर दृढ़ आस्था-सम्पन्न होता है । वह जीव जिनवचनों में शंकाकाक्षादिरहित होता है ।

इन पूर्वोक्त शमादिभावरूप चिह्नोंसे सम्यक्त्व का अस्तित्व जाना जाता है । जीव यदि सम्पद्दर्शनका एक अंतर्मुहूर्त भी स्पर्श कर लेता

વ્યથિત જ અનુભવ કર્યા કરે છે. અને પોતાના સમાન જ તેઓને માનીને તેઓના તે દુઃખોનો અનુભવ સ્વયં કરીને નિષ્પક્ષદૃષ્ટિયુક્ત થઈ તેઓના તે દુઃખોને દૂર કરવાની યથાશક્તિ કોશિશમાં રહે છે, પોતાની શક્તિના પ્રમાણમાં તેની રક્ષા કરે છે. મરતા હોયને તથા ઘાતકીદ્વારા મરતા હોયને યથાશક્તિ બચાવે છે, અને મોક્ષમાર્ગથી વિપરીત જનોને સદ્ધર્મના ઉપદેશથી ભાવિત કરી તેને મોક્ષમાર્ગમાં લગાડવામાં પોતાની શક્તિ-અનુસાર ચેષ્ટા કરે છે.

(૫) આસ્તિક્ય—“જે જિનેન્દ્ર દેવે કહ્યાં છે તે સર્વે સત્ય છે.” આ પ્રકારની દૃઢ આસ્થાવાળી મતિ જ આસ્તિક્ય ભાવ છે. આ આસ્તિક્યભાવવાળાં હવ જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં નિશંક થઈને દૃઢ આસ્થાવાળા થઈ જાય છે. તે હવ જિન વચનોમાં શંકાકાંક્ષાદિરહિત હોય છે.

આ પૂર્વોક્ત શમાદિભાવરૂપ ચિહ્નોથી સમ્યક્ત્વનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે છે. હવ જો સમ્યક્દર્શનનો એક અંતર્મુહૂર્ત પણ સ્પર્શ કરી લે તો તે નિયમથી

નાર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનતરે નિયમેન મોક્ષં પ્રાપ્નોતિ । અલમધિકેન, લબ્ધસમ્યક્ત્વઃ
સુરગતિં નિયમતો લભતે । તથા ચોક્તમ્—

“અંતોમુહુત્તમિત્તં,—પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્દપુગ્ગલ,—પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—અંતર્મુહૂર્તમાત્રમપિ સ્પૃષ્ટં ભવેદ્યૈઃ સમ્યક્ત્વમ્ ।

તેષામપાર્દ્ધપુદ્ગલપરિવર્તં એવ સંસારઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપરં ચ—“સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહં ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુર્વિવ ” ॥ ૧ ॥

હૈ તો વહ નિયમસે જ્યાદા સે જ્યાદા અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાલ તક હી
હસ સંસાર મેં રહતા હૈ ઓર ઉસકે વાદ મોક્ષસ્થાનકો પ્રાપ્ત કર હી
લેતા હૈ । કહા મી હૈ—

“અંતોમુહુત્તમિત્તં,—પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્દપુગ્ગલ,—પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જિન જીવોને એક અંતર્મુહૂર્તમાત્ર મી સમ્યક્ત્વકા સ્પર્શ કિયા હૈ
ઉન જીવોં કા સંસાર અર્ધ પુદ્ગલપરાવર્તનકાલ તક હી અવશિષ્ટ રહતા
હૈ । હસ વિષયમેં અધિક ક્યા કહા જાય ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ નિયમ સે,
યદિ વહ વિગતસમ્યક્ત્વ નહીં હૈ, તથા વદ્ધાયુષ્ક નહીં હૈ તો, વૈમાનિક
દેવોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કહા મી હૈ—

“સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહં ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુર્વિવ ” ॥ ૧ ॥

વધારેમાં વધારે અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાળ સુધી જ આ સંસારમાં રહે છે, અને
ત્યાર પછી મોક્ષસ્થાનને પ્રાપ્ત કરી જ લે છે કહ્યું છે —

“અંતોમુહુત્તમિત્તં,—પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્દપુગ્ગલ,—પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જે જીવોએ એક અંતર્મુહૂર્ત માત્રપણ સમ્યક્ત્વનો સ્પર્શ કર્યો છે તે જીવોનો
સંસાર અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ સુધી જ અવશિષ્ટ રહે છે, આ વિષયમાં
વધારે શું કહેવું ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ, જે તે વિગતસમ્યક્ત્વ નથી તથા વદ્ધાયુષ્ક
નથી તો નિયમથી તે વૈમાનિક દેવોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કહ્યું છે—

“સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહં ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુર્વિવ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—સમ્યગ્દષ્ટિજીવો, ગચ્છતિ નિયમાદ્ વિમાનવાસિણુ ।

યદિ ન વિગતસમ્યક્ત્વઃ, અથવા ન વદ્ધાયુષ્કઃ પૂર્વમ્ ॥ ૧ ॥

અન્યચ્— ‘જં સક્કહ તં કીરહ, જં ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અચરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—યત્ શક્નોતિ (કર્તુ) તત્ ક્રિયતે, યચ્ચ ન શક્નોતિ તસ્મિન્ શ્રદ્ધા ।

શ્રદ્ધધાનો જીવો, વ્રજતિ અજરામરં સ્થાનમ્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

નન્વેયં સમ્યક્ત્વેનૈવ મોક્ષપ્રાપ્તિશ્ચેત્તર્હિં કિં પુનસ્તીવ્રતરક્ષણસાધ્યૈરહિંસાદિવ્રત-

સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મર કર નિયમસે વૈમાનિક દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ
યદિ ઉસકા સમ્યક્ત્વ વિગત (નષ્ટ) નહીં હુઆ હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકે
પહેલે અન્ય ગતિયોં કી આયુ નહીં વાંધી હૈ તો ॥ ૧ ॥

હસલિયે પ્રત્યેક સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
એસે સુન્દર સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરનેકા પ્રયત્ન કરતા રહે । કહા બી હૈ—

“જં સક્કહ તં કીરહ, જં ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અચરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જો શુભ કર્તવ્ય પ્રાણી સે હો સકતા હો વહ આત્મવીર્ય—બલ પરા-
ક્રમકો નહીં ગોપતે હુણ અવશ્ય કરના વાહિયે । યદિ ન વન સકે તો
બી ઉસમેં શ્રદ્ધા રાખની હી વાહિયે, ક્યોં કિ શુદ્ધ શ્રદ્ધાકે પ્રભાવસે હી
જીવ અજર—અમર પદકા અધિકારી વનતા હૈ ॥ ૧ ॥

શક્કા—યદિ એસી હી વાત હૈ તો ફિર તીવ્રતર કષ્ટોંકે દ્વારા સાધ્ય

સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મરીને નિયમથી વૈમાનિક દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. જો એના
સમ્યક્ત્વ વિગત નથી થયો અને તેને સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તિના પહેલાં અન્ય ગતિની
આયુ નહિ બાંધી હોય તો ॥ ૧ ॥

તેથી પ્રત્યેક સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા સુન્દર
સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરવા પ્રયત્ન કરતો રહે. કહ્યું છે—

“જ સક્કહ તં કીરહ, જ ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અચરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જો શુભ કર્તવ્ય પ્રાણીથી બની શકતું હોય તે આત્મવીર્ય—બલ પરાક્રમને
હુપાવ્યા વિના અવશ્ય કરવું બેઠાયો. જો ન બની શકે તો પણ તેમાં શ્રદ્ધા રાખવી
જો બેઠાયો, કારણ કે શુદ્ધ શ્રદ્ધાના પ્રભાવથી જ જીવ અજર—અમર પદનો અધિ-
કારી બને છે ॥ ૧ ॥

શંકા—જો આવી વાત છે તો પછી તીવ્રતર કષ્ટોંદ્વારા સાધ્ય શકિંસાદિ

संयमतपःसमाराधनैः, तथाहि-पर्याप्तापर्याप्तकादिभेदवतां पृथिव्यपूतेजोवायुवनस्प-
तीनां द्वीन्द्रियादिविविधत्रसानां च त्रिकरणत्रियोगैरुपमर्दनपरिहारपूर्वकरक्षणरूपम
हिंसाव्रतं, तथा स्वस्वभेदैर्बहुविधमृषावादादत्तादानमैथुनपरिग्रहपरिहाररूपाणि
व्रतानि, शीतोष्णादिकठिनतरपरिषहसहनपूर्वकसप्तदशविधसंयमसमाराधनम्, अनश-
नाद्युग्रतरद्वादशविधतपश्चरणजनितशरीरादिशोपणेन धन्यमुनिवद् घोरतरकष्टसहनं
चेति । तथा-किं पुनर्महाविस्तरदुरधिगमसामायिकादिद्वादशाङ्गरूपश्रुतज्ञानैरपि ?
इति चेन्न,

अहिंसादि महाव्रत संयम और तप आदिके पालन एवं आराधन करने
की आवश्यकता क्या है ? अर्थात्-एक सम्यग्दर्शन से ही जीवको मुक्ति
का लाभ हो जावे तो पर्याप्त और अपर्याप्त-भेदविशिष्ट एकेन्द्रिय-
पृथिवीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, और वनस्पतिकायके जीवों
की, एवं द्वीन्द्रियादिक अनेक प्रकारके त्रस जीवों की कृत कारित अनु-
मोदना और मन वचन कायसे विराधना का त्याग करना, एवं उनका
रक्षण करना जो अहिंसा-महाव्रत है उसका पालन १, तथा अनेक प्रका-
रके मृषावाद २, अनेक प्रकारके अदत्तादान-चोरी ३, मैथुन ४, एवं परि-
ग्रह ५ का त्यागरूप पांच महाव्रतों का आराधन, एवं कठिनतर परिषहों
के सहनपूर्वक (१७) सतरह प्रकारके संयम का सेवन करना, तथा धन्य
मुनिकी तरह अनशनादिक (१२) बारह प्रकारके तपके आचरणसे उत्पन्न
शरीरादिक शोषण से घोरतर कष्टों का सहन करना; ये सभी बिल्कुल
ही व्यर्थ हैं ? तथा सामायिकादिद्वादशाङ्गरूप श्रुतज्ञान, कि जो महा-

महाव्रत संयम अने तप विगैरेनुं पालन अने आराधन करवानी आवश्यकता
शी छे ? अर्थात्-एक सम्यग्दर्शनधी न लवने मुक्तिनो लाभ थछ नथ तो
पर्याप्त अने अपर्याप्त लेह-विशिष्ट ऐकेन्द्रिय-पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय,
वायुकाय, अने वनस्पतिकाय-ना लवोनी, अने गेह्मन्द्रियादिक अनेक प्रकारना
त्रस लवोनी कृत कारित अनुमोदना अने मनवचन कायाधी विराधनानो त्याग करवो,
अने तेनु रक्षण करवु ने 'अहिंसाभडाव्रत छे तेनु' पालन १, तथा अनेक प्रकारना
मृषावाद, अनेक प्रकारना अदत्तादान-चोरी ३, मैथुन ४, अने परिग्रह ५ ना त्याग
पांच भडाव्रतोनुं आराधन, अने कठिनतर परिषहोनुं सहनपूर्वक सतर प्रकारे संयमनुं
सेवन करवुं, तथा धन्यमुनिनी पेठे अनशनादिक बार प्रकारना तपना आचरणधी
उत्पन्न शरीरादिक शोषणधी घोरतर कष्टोनुं सहन करवु, ने अधा बिलकुल न

જ્ઞાનચારિત્રસમુત્પાદનદ્વારા સમ્યક્ત્વસ્ય મોક્ષં પ્રતિ કારણત્વાત્, તથાદિ-ન કેવલં સમ્યક્ત્વમાત્રેણ સિદ્ધિપદં લઘું શક્યતે, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકાર્યસ્ય તદભિ-
વ્યન્જકસ્ય ચારિત્રસ્યૈવ મોક્ષં પ્રતિ સાધાત્કારણતયા તેનૈવ તત્પ્રાપ્તિર્ભવિતુમર્હતિ,
સમ્યગ્જ્ઞાનમપિ ચારિત્રોત્પાદનદ્વારેણૈવ મોક્ષજનકમ્ । યત્ચારિત્રપરિણામેનૈવ જ્ઞાન-
મપિ મોક્ષાય પ્રભવતિ, ન કેવલં સ્વસત્તામાત્રેણ । અતઃ એવ ભગવતાઽત્રૈવ પ્રથમાધ્યયને
વિસ્તારસમ્પન્ન એવં દુરધિગમ હૈ, ઉસકા શ્રવણ, મનન આદિ કરના મી
નિસ્સાર હી હૈ ? ।

સમાધાન—જાડ્ઠાકારકી યહ જાડ્ઠા ઠીક નહીં હૈ; ક્યોં કિ સ્વતન્ત્ર
સમ્યગ્દર્શન મોક્ષકા કારણ નહીં માના ગયા હૈ । જવ તક જીવ કો સમ્ય-
ક્ત્વકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ તક ઉસકે જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મિથ્યા-
રૂપ મેં રહતે હૈં । જ્ઞાન ઓર ચારિત્રમેં સમ્યક્પના હસી સમ્યક્ત્વ કે દ્વારા
આતા હૈ, અતઃ સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિ દ્વારા હી
સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા હેતુ હોતા હૈ । હસી અભિપ્રાયકો લે કર સમ્યક્ત્વ,
મોક્ષકા કારણ કહા ગયા હૈ । જવ તક સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન ઓર પૂર્ણ
ચારિત્ર કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા તવ તક વહ મોક્ષકા કારણ નહીં હોતા ।
મુક્તિ સમ્યક્ચારિત્ર સે હી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, હસ કારણ સે સમ્યક્
ચારિત્ર હી મુક્તિકા સાક્ષાત્ કારણ હૈ । યહ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વ કા કાર્ય
ઓર ઉસકા અભિવ્યંજક-પ્રકાશક હોતા હૈ ।

વ્યર્થ છે ? તથા આભયિકાદિદ્વાદશાંગરૂપ શ્રુતજ્ઞાન, કે જે મહાવિસ્તારસંપન્ન અને
દુરધિગમ છે, તેનું શ્રવણ મનન આદિ કરવું પણ નિસ્સાર જ છે ?

સમાધાન—જાડાકારની શંકા ઠીક નથી, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન મોક્ષનું સ્વ-
તન્ત્ર કારણ માનવામાં આવ્યું નથી જ્યાં સુધી જીવને સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ નથી
થતી ત્યાં સુધી તેનું જ્ઞાન અને ચારિત્ર મિથ્યારૂપમાં રહે છે જ્ઞાન અને ચારિ-
ત્રમાં સમ્યક્પણું આ સમ્યક્ત્વદ્વારા આવે છે, જોધી સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્-
ચારિત્રની ઉત્પત્તિ દ્વારા જ સમ્યક્ત્વ મોક્ષનો હેતુ થાય છે. આ અભિપ્રાયને
લઈને જ સમ્યક્ત્વને મોક્ષનું કારણ કહેવામાં આવ્યું છે. જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વ
પૂર્ણ જ્ઞાન અને પૂર્ણ ચારિત્રને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી તે મોક્ષનું કારણ
નથી થતું. મુક્તિ સમ્યક્-ચારિત્રથી જ પ્રાપ્ત થાય છે, આ કારણથી સમ્યક્
ચારિત્ર જ મુક્તિનું સાક્ષાત્ કારણ છે. આ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વનું કાર્ય અને તેનું
અભિવ્યંજક (પ્રગટ કરવાવાળું) થાય છે.

‘સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મે’ ઇતિ પુનઃ પુનર્વદતા સમ્યક્ચારિત્રમેવ મોક્ષપ્રાપ્તિ-
કારણમિતિ પ્રતિવોધિતમ્ । ઉત્તરાધ્યયનેઽપિ—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥૧॥ (અં ૨૮)

સમ્યગ્જ્ઞાન મ્હી સમ્યક્ચારિત્રં કો ઉત્પન્ન કરતા હુઆ મોક્ષકા કારણ
માના ગયા હૈ । જ્ઞાનકી સત્તા મ્હલે હી આત્મા મ્હેં હો પરન્તુ જબ તક વ્હ
આત્મામેં ચારિત્રપરિણામ કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા, તબ તક મોક્ષકા
જનક નહીં હો સકતા । હસી અભિપ્રાય કો લેકર મ્હગવાનને હસી પ્રથમ
અધ્યયનમેં “સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મા” અર્થાત્—જો છ કાય કે
આરંભ કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગતા હૈ વ્હી
મુનિ ચારિત્રવાન્ ગિના જાતા હૈ । હસ કથન દ્વારા મ્હી સમ્યક્ચારિત્ર કો
હી મોક્ષપ્રાપ્તિકા કારણ પ્રકટ કિયા હૈ । ઉત્તરાધ્યયનકે ૨૮ વેં અધ્ય-
યનમેં મ્હી હસકી પુષ્ટિ કી ગઈ હૈ । જૈસે—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥૧॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા । સ-
મ્યગ્જ્ઞાન સે રહિત આત્મા કો ચારિત્રગુણકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી । ચારિત્ર
ગુણ કી પ્રાપ્તિ કિયે વિના મોક્ષ નહીં હોતા, એવં અમુક્તકા નિર્વાણ નહીં
હોતા ॥ ૧ ॥ ઉત્તં અં ૨૮ ॥

સમ્યગ્જ્ઞાન પણ સમ્યક્-ચારિત્રને ઉત્પન્ન કરતા મોક્ષનું કારણ માનવામાં
આવે છે જ્ઞાનની સત્તા ભલે જ આત્મામાં છે, પરંતુ જ્યાં સુધી તે આત્મામાં
ચારિત્રપરિણામને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી મોક્ષનું ઉત્પાદક નથી થતું આ
અભિપ્રાયને લઈને ભગવાને આ પ્રથમ અધ્યયનમાં “સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મા”
અર્થાત્—જે છ કાયના આરંભને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યાગે
છે તે જ મુનિ ચારિત્રવાન માનવામાં આવે છે. આ કથન દ્વારા પણ સમ્યક્-
ચારિત્રને જ મોક્ષપ્રાપ્તિનું કારણ પ્રગટ કર્યું છે. ઉત્તરાધ્યયન અધ્યયન ૨૮માં
પણ એની પુષ્ટિ કરી છે જેમ—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥૧॥ ઉત્તં અં ૨૮ ॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામાં સમ્યગ્જ્ઞાન નથી થતું. સમ્યગ્જ્ઞાનથી
રહિત આત્માને ચારિત્ર ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી. ચારિત્રગુણની પ્રાપ્તિ કર્યા વિના
મોક્ષ થતું નથી, અને અમુક્તનું (કર્મથી મુક્ત નહિ તેનું) નિર્વાણ થતું નથી. ૧

सूत्रकृताङ्गे च—“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥१॥ ” (अ० ११)

ज्ञानं हि क्रियापरिणामाऽनापन्नं सत् कमप्यर्थं साधयितुं न शक्नोति । यथा शास्त्राभ्यासनकुशलोऽपि तदर्थविज्ञाननिपुणोऽपि तदुक्तधर्मानाचरणेन तदभ्यासनादिकं सर्वं निष्फलीकुर्वन्नहि विद्वत्पदं लभते । यथा वा-औपधस्वरूपगुणप्रज्ञावतामपि वैद्यानां तत्सविधिसेवनक्रियामन्तरेण तत्प्रज्ञा नैरुज्यं न जनयति, यद्यौपधज्ञानवतामियम-वस्था, तर्हि का वार्त्ता केवलं तन्नामरटनशीलानां जनानाम् । तथा चोक्तम्—

सूत्रकृताङ्गमें भी यही लिखा है—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ (सू० अ० ११)

ज्ञान जब तक क्रियात्मक (चारित्ररूप) नहीं होता तब तक वह किसी भी इष्ट अर्थ की पुष्टि नहीं कर सकता । जैसे-शास्त्रके अभ्यास करनेमें कुशलमति व्यक्ति उसके अर्थका विनिष्ठ जाता होकर भी जब तक शास्त्रविहित मार्ग को जीवनमें क्रियात्मकरूप नहीं देता तब तक वह उसके अभ्यास या ज्ञान से अपने किसी भी इच्छित कार्य की सिद्धि नहीं कर सकता है, और न वह यथार्थ विद्वत्ता के पदसे ही विभूषित हो सकता है । अतः उसको क्रियात्मक रूप देने के बिना जैसे उसका वह अभ्यास एवं ज्ञान निष्फल है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन भी ज्ञान-क्रियाके अभाव में मोक्षका साधक नहीं होता है । वैद्यका औपधि-

सूत्रकृताङ्गमां पणु ओ न लणयु छे—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ सूत्र० अ० ११ ।

ज्ञान न्या सुधी क्रियात्मक (चारित्ररूप) नहीं धतुं त्यां सुधी ते कोष्ठ पणु छण्ट अर्थनी पुष्टि नहीं करी शक्तुं । जेम शास्त्रने अभ्यास करवां कुशलमति मनुष्य ओना अर्थने विनिष्ठ जाता होवा छतां पणु न्यां सुधी शास्त्रविहित मार्गने लवनमा क्रियात्मकउपधी नहीं उतागते त्यां सुधी ते तेना अभ्यासना जानधी पोताना कोष्ठ पणु छण्टिछत कार्यनी सिद्धि प्राप्त करी शक्तो नहीं, अने यथार्थ विद्वत्ताना पदधी पणु ते विभूषित थछ शक्तो नहीं । ओथी तेने क्रिया-त्मक उप आप्या विना जेम तेना आ अभ्यास तेमज्ज ज्ञान निष्फल छे ते प्रकारे सम्यग्दर्शन पणु ज्ञान-क्रियाना अभावमा मोक्षनु साधक धतुं नहीं । यधने औपधविषयक अभ्यास अने परिपक्व ज्ञान औपधिसेवनना विधिनी

“શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।
સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્” ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વસદ્ભાવે શમસંવેગાદયો ગુણાઃ પ્રસન્નમુદયન્તે, તદાનીં કથમપિ તદુ-
દયં પ્રતિરોદ્ધું ન કથન સમર્થો ભવતિ । ઉક્તञ્ચ—

“અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુલ્કત્વોદ્દીપને સઢિવેકઃ ।
નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં, શિવસુખતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ” ॥ ૧ ॥

વિષયક અભ્યાસ, एवं પરિપક્વ જ્ઞાન ક્યા કમી ઔષધિસેવનકે વિધિ
કી અનભિજ્ઞતા મેં નીરોગતા કા કારણ હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા ।
યદિ હો સકતા તો ફિર ઉસકા નામ રટનેવાલે રોગી પુરુષોં કી યાત હી
ક્યા કહની ? ઉન્હેં મીં ઉસસે પાયદા હો જાના ચાહિયે । કહા મીં હૈ—

“શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।
સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રોંકો પઢકર મીં મનુષ્ય મૂર્ખ રહ જાતે હૈં । જો ક્રિયાવાન્ હૈ
વહી વિદ્વાન્ હૈ । ધીમાર વ્યક્તિકો સુચિન્તિત મીં ઔષધિ નામમાત્ર
લેને સે આરોગ્યદાયક નહીં હોતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વકે સદ્ભાવમેં શમસંવેગાદિક ગુણોંકી ઉત્પત્તિ અવશ્ય
હોતી હૈ, ઉનકો રોકને કેલિયે કોઈ મીં સમર્થ નહીં હો સકતા, ક્યોં
કિ યહ સર્વગુણસમ્પન્ન હૈ । કહા મીં હૈ—

“અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ,
ભવસુખવિમુલ્કત્વોદ્દીપને સઢિવેકઃ ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં,
શિવસુખતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ” ॥ ૧ ॥

અનભિજ્ઞતામાં નીરોગતાનુ કારણ કોઈ વળત બની શકે છે ?—નથી બની શકતું
જો બની શકે તો પછી તેનુ નામ લેવાવાળા રોગી પુરુષોની વાત જ શું કહેવી ?
તેને પણ તેનાથી ક્ષયદો થવા જોઈએ. કહ્યુ પણ છે—

“શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।

સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરીને પણ મનુષ્ય મૂર્ખ રહી જાય છે. જે ક્રિયાવાન્
છે તે વિદ્વાન છે બીમાર મનુષ્યને સુચિન્તિત પણ ઔષધિ નામમાત્ર લેવાથી
આરોગ્યદાયક નથી થતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમા શમસંવેગાદિક ગુણોની ઉત્પત્તિ અવશ્ય થાય છે, એને
રોકવાને માટે કોઈ સમર્થ થતું નથી. કારણ કે તે સર્વગુણસમ્પન્ન છે. કહ્યુ પણ છે—

કિંચ—“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વવન્ધોર્નં પરોઽસ્તિ વન્ધુઃ ।
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥
તદેવં સમ્યક્ત્વમિહ મોક્ષસ્ય વીજમિતિ સિદ્ધમ્ ।

સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિક્રમઃ ।

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટેર્જીવસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તૌ યથાક્રમં ત્રીણિ કરણાનિ ભવન્તિ ।

યહ સમ્યક્ત્વ અનુપમ સુખકા નિધાન હૈ, વૈરાગ્યકી ઉત્પત્તિ કા કારણ હૈ, વૈરાગ્યકો પ્રકટ કરને મેં શુદ્ધ વિવેક હૈ, ચાર ગતિકે દુઃખોંકા ઉચ્છેદ કરને મેં કારણ હૈ ઓર મોક્ષસુખરૂપ વૃક્ષકા યહ વીજ હૈ ॥ ૧ ॥

ઓર મી કહા હૈ—

“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વવન્ધોર્નં પરોઽસ્તિ વન્ધુઃ ।
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વ-રત્નસે કોઈ ઉત્કૃષ્ટ રત્ન નહીં હૈ, ઇસસે વઢકર કોઈ વન્ધુ નહીં હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ પરમ મિત્ર હૈ, ઓર ઇસકા લાભ હી પરમલાભ હૈ ॥

ઇસસે યહ સિદ્ધ હુઆ કિ સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા મૂલ કારણ હૈ ।

સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિકા ક્રમ—

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકે સંમુખ હોતા હૈ ડસ સમય ડસકે યથાક્રમસે ત્રીન કરણ હોતે હૈ—(૧) યથાપ્રવૃત્તિકરણ, (૨) અપૂર્વકરણ, (૩) અનિવૃત્તિકરણ ।

“ અસમસુખનિધાન ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપતે સદ્વિવેકઃ ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં, શિવસુખતત્ત્વવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

આ સમ્યક્ત્વ અનુપમ સુખનું નિધાન છે. વૈરાગ્યની પ્રાપ્તિનું કારણ છે. વૈરાગ્યને પ્રગટ કરવામાં શુદ્ધ વિવેક છે આર ગતિના દુઃખના ઉચ્છેદ કરવામાં કારણ છે અને મોક્ષસુખરૂપ વૃક્ષનું એ બીજ છે ॥ ૧ ॥ વળી પણ કહ્યું છે—

“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વવન્ધોર્નં પરોઽસ્તિ વન્ધુઃ ।

સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વરત્નથી કોઈ ઉત્કૃષ્ટ રત્ન નથી એનાથી વધીને કોઈ બધું નથી.

આ સમ્યક્ત્વ પરમ મિત્ર છે, અને એનો લાભ જ પરમ લાભ છે ॥ ૧ ॥

એથી એ સિદ્ધ થયું કે સમ્યક્ત્વ મોક્ષનું મૂળ કારણ છે

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિનો ક્રમ

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ હવે જ્યારે સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિને સમ્મુખ થાય છે તે વખતે તેને યથાક્રમથી ત્રણ કરણ ધાય છે—(૧) યથાપ્રવૃત્તિકરણ (૨) અપૂર્વકરણ, (૩) અનિવૃત્તિકરણ.

યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્, અપૂર્વકરણમ્, અનિવૃત્તિકરણં ચેતિ । યથા=અનાદિસંસિદ્ધપ્રકારેણ પ્રવૃત્તિઃ=પ્રવર્તમાનં-યથાપ્રવૃત્તિ, ક્રિયતે કર્મક્ષપણમનેનેતિ કરણં-જીવપરિણામરૂપમ્ । યથાપ્રવૃત્તિ ચ તત્ કરણં ચેતિ યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્ ।

एवमुत्तरत्रापि करणशब्देन कर्मधारयो बोध्यः । एवं चानादिकालात् कर्मक्षपणप्रवृत्तोऽध्यवसायविशेषो यथाप्रवृत्तिकरणमिति फलितम् । एतानि त्रीण्यपि करणानि भव्यानां भवन्ति । अभव्यानां तु प्रथममेव यथाप्रवृत्तिकरणं भवति नेतरद्वयम् ।

अनादि परंपरा से जो प्रवर्तमान है वह यथाप्रवृत्ति है, तथा कर्म क्षय जिसके द्वारा किया जाता है वह करण है, यह करण जीवका परिणामस्वरूप ही है । यथाप्रवृत्तिरूप जो करण है उसका नाम यथाप्रवृत्तिकरण है । यह इसका निरुक्त-अर्थ है । इसी प्रकार आगे भी करण शब्द के साथ कर्मधारय समास का संबंध कर लेना चाहिये । इस प्रकार अनादि कालसे कर्मक्षय करनेमें प्रवृत्त जीवका परिणामविशेष ही यथाप्रवृत्तिकरण है, यही इसका फलितार्थ है । ये तीन करण भव्यों के होते हैं । अभव्यों के सिर्फ प्रथम ही करण होता है, अन्तके दो नहीं होते ।

यथाप्रवृत्तिकरणरूप परिणाम जीवके होता ही रहता है । इसके द्वारा जीव उदयमें आये हुए ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मोंकी प्रकृतियों का क्षय करता रहता है । इस लिये इस परिणामके कर्मक्षय का कारण होने से जीव इसके बल पर यथासंभव कर्मस्थितिका क्षय करता हुआ घन-कठिनतर रागद्वेषरूपी ग्रन्थिके समीप तक पहुँच जाता है । यह ग्रन्थि

અનાદિ પરંપરાથી જે પ્રવર્તમાન છે તે યથાપ્રવૃત્તિ છે, અને કર્મક્ષય જેના દ્વારા કરવામાં આવે છે તે કરણ છે. આ કરણ જીવના પરિણામસ્વરૂપ છે યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જે કરણ છે તેનું નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે. તે એના નિરૂક્ત-અર્થ છે. આ પ્રકારે આગળ પણ કરણ-શબ્દની સાથે કર્મધારયસમાસનો સંબંધ કરી લેવો જોઈએ. આ પ્રકારે અનાદિકાળથી કર્મક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત જીવનું પરિણામ વિશેષ જ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે, તે તેનું ફલિતાર્થ છે એ ત્રણ કરણ ભવ્યોને થાય છે. અભવ્યોને ફક્ત પ્રથમ જ કરણ થાય છે, બાકીનાં બે નથી થતાં.

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવને થતાં જ રહે છે એના દ્વારા જીવ ઉદયમાં આવેલા જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોની પ્રકૃતિયોનો ક્ષય કરતો રહે છે. તેથી આ પરિણામ કર્મક્ષયનું કારણ હોવાથી આ જીવ તેના બલ ઉપર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિનો ક્ષય કરતાં ઘન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિની સમીપ સુધી પહોંચી જાય છે. આ ગ્રન્થિ એટલી ગાઢ-અબલતમ છે કે જેનું આ

અધ્યવસાયસ્ય સર્વદૈવ ભાવાદુદયપ્રાપ્તાનાં જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટકર્મપ્રકૃતીનાં ક્ષપणेन कर्मक्षयकारणतया यथाप्रवृत्तिकरणेन यथासंभवं कर्मस्थितिं अपयतो जीवस्य घनराग-द्वेषपरिणामरूपो ग्रन्थिरवतिष्ठते, यथाप्रवृत्तिकरणस्य मन्दविशुद्धिपरिणामरूपत्वेन ग्रन्थिभेदनसामर्थ्याभावात् ।

નનુ તર્હિં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન ક્રિયતી કર્મસ્થિતિઃ ક્ષપિતા ભવતિ? ઉચ્યતે—યથા ગિરિનદ્યાં પાપાણશ્વખંડાનિ તદ્વેગતો ઘર્ષણાદિના વર્તુલાકારાણિ જાયન્તે, એવમનાદિકાલતઃ પૂર્વપૂર્વકર્મવગાચ્ચતુર્ગતિકસંસારસાગરં ગ્રાસસ્થાનન્તદુઃખાનિ સહ-માનસ્ય જીવસ્ય પરિણામસ્વભાવતયાડનાભોગનિર્વર્તિતેન યથાપ્રવૃત્તિકરણાશ્ચ્યેન વિશુદ્ધિપરિણામેન લીઘતરાડપિ કર્મસ્થિતિસ્તથા ક્ષપિતા ભવતિ યથાડડ્યુર્વર્જાનાં જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણાં સર્વેષાં સ્થિતિઃ પલ્યોપમાસંખ્યાતભાગન્યૂનૈકકોટીકોટી-સાગરોપમપ્રમાણાડ્વશેષા તિષ્ઠતિ ।

ઇતની માદ-પ્રવલનમ હોની હૈ કિ જિસકા ઇસ પરિણામકે દ્વારા ભેદન કરના સર્વથા અશક્ય કાર્ય હૈ । જીવકો ઇસ ગ્રન્થિકે દેશ તક પહુંચાના હી ઇસ પરિણામ કા કામ હૈ । ગ્રન્થિકા ભેદન ઇસકે દ્વારા ઇમ લિધે નહીં હોતા હૈ કિ યહ પરિણામ મન્દવિશુદ્ધિવાલા હૈ ।

શઙ્કા—આપકા કથન ઠીક હૈ; પરન્તુ અમી તક યહ માલૂમ નહીં હો રહા હૈ કિ ઇસ પરિણામકે દ્વારા કિતની કર્મસ્થિતિકા ક્ષય હોતા હૈ ।

ઉત્તર—જૈસે પર્વતીય નદી મેં પાપાણશ્વખંડ નદીકે પ્રવલ પ્રવાહ કે વેગસે લુઢકતે હુણ ઓર ડધર ડધર સે ટકરાતે હુણ સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકી અનવચ્છિન્ન સંતતિ (અટૂટ પરંપરા) કે વશીભૂત રહ કર ચતુર્ગતિસ્વરૂપ ઇસ સંસાર મહાસાગરમેં ગોતે

પરિણામદ્વારા ભેદન કરવું સર્વથા અશક્ય કાર્ય છે. છવને આ ગ્રન્થિકા દેશ સુધી પહોંચાડવું જ આ પરિણામનું કામ છે. ગ્રન્થિકા ભેદન એના દ્વારા તે માટે નથી થતું કે આ પરિણામ મન્દવિશુદ્ધિવાળું છે.

શંકા—આપનું કથન ઠીક છે; પરંતુ હજી સુધી એ માલૂમ નથી કે આ પરિણામદ્વારા કેટલી કર્મસ્થિતિનો ક્ષય થાય છે.

ઉત્તર—જેમ પર્વતીય નદીમાં પાપાણશ્વખંડ એના પ્રબલ પ્રવાહના વેગથી આમ-તેમ અથડાઈને ઘસાતો ઘસાતો સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોલ થઈ જાય છે, તે જ પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મની અનવચ્છિન્નસંતતિ-અતુટપરંપરાને વશીભૂત રહીને ચતુર્ગતિસ્વરૂપ આ સંસારમહાસાગરમાં ગોધા ખાતા અને અનંત દુઃખોની પરંપરાને મોકલ કરતા એ છવને સ્વાભાવિક રીતિથી-વિના કોઈ

ગ્રાતે, તથા અનંત દુઃખોંની પરંપરાકો સહતે હુણ્ણે સ્વાભાવિક રીતિ સે-વિના કિસી પ્રયત્ન કે-વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામકા પરિણામ પ્રગટ હોતા હૈ, જિસકે દ્વારા યહ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિ કો બી હતની રૂપા દેતા હૈ કિ જિસસે આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પલ્લ્ય કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ એક કોટાકોટીમાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

વિશેષાર્થ—જૈસે પર્વતપ્રદેશમેં વહનેવાલી નદીકા પથ્થર ઉસકી પ્રબલ ધારાસે આહત હો ઇધર-ઉધર ટકરા કર સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાયા કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકે વશીભૂત હોકર સંસારરૂપી સમુદ્રમેં પડા હુઆ યહ જીવરૂપી પાપાણખણ્ડ બી ચતુર્ગતિયોં કે દુઃખરૂપી પ્રવલતમ પ્રવાહોં સે રાત-દિન ટકરા કર ગોલમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર નદીકા પાપાણ વિના કિસી પ્રયત્ન એવં અનાભોગરૂપસે (સ્વાભાવિકરૂપસે) ગોલ હો જાયા કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ કરણ બી વિના કિસી પ્રયત્ન સે-સ્વાભાવિકરૂપ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હો જાયા કરતા હૈ । યહ જીવ કા વિશુદ્ધ પરિણામ હૈ । ઇસકે પ્રભાવસે ઉસકે આયુકર્મ કો છોડ કર અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટ કર પલ્લ્યકે અસં-

પ્રયત્ને વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામનુ પરિણામ પ્રાપ્ત (પ્રગટ) થાય છે. જેના દ્વારા આ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિને પણ એટલી ખપાવી દે છે કે જેથી આયુકર્મને છોડીને શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પલ્લ્યના અસંખ્યાતમાં ભાગ હીન એકકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

વિશેષાર્થ—જેમ પર્વતપ્રદેશમાં વહેવાવાળી નદીનો પથ્થર એની પ્રબલ ધારાથી અહીં-તહીં અથડાઈ કુટાઈને સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મના વશીભૂત થઈને સંસારરૂપી સમુદ્રમાં પડી રહેલા આ જીવરૂપી પાપાણખંડ પણ ચતુર્ગતિના દુઃખરૂપ પ્રબલ પ્રવાહથી રાતદિન અથડાઈને ગોળમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન થઈ જાય છે. જેમ નદીના પાપાણ, કોઈ પ્રયત્ન વિના અને અનાભોગરૂપથી (સ્વાભાવિક રૂપથી) ગોળ થયા કરે છે તે પ્રકારે આ કરણ પણ કોઈ પ્રયત્ન વિના સ્વાભાવિક રૂપમાં જ જીવને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે આ જીવનો વિશુદ્ધ પરિણામ છે. આના પ્રભાવથી એ જીવના આયુકર્મને છોડીને અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની

અત્રાન્તરે ચ જીવસ્ય કર્મજનિતો ઘનરાગદ્વેષપરિણામરૂપઃ કર્કગનિવિહચિરપ્રહ-
ઢગૃહવક્ત્રગ્રન્થિવદ્ દુર્ભેદઃ કર્મસ્થિતિવિશેષો ગ્રન્થિર્ભવતિ ।

અમલ્યોઽપિ જીવઃ સ્વલુ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન પ્રાગુક્તકર્મણાં દીર્ઘતરસ્થિતિં
હાસયન્નેકકોટીકોટીસાગરોપમપ્રમાણાં કર્તુમર્હતિ, પરન્તુ ગ્રન્થિભેદનાય ન સમર્થો
સ્થાતવૈ ભાગ કમ એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ (અન્તઃકોટીકોટી
સાગરપ્રમાણ) રહ જાતી હૈ ।

इसके बाद जीवके कर्मजनित-कर्मों से उत्पन्न की गई-और सघन
कठिनतर रागद्वेष परिणामवाली कर्मों की विशेषस्थितिरूप एक ग्रन्थि
होती है, जो अत्यन्त कठोर, सघन और पुरानी गूढ़ गांठके समान
दुर्भेद्य होती है । जैसे-बहुत पुरानी कठोर गांठका-कि जो चिकनाई
आदिके संबंधसे अत्यन्त चिपट गई है और जिसका फंदा भी नजर
नहीं आ रहा है, एवं जो टेढ़ी मेढ़ी लगी हुई है; उसका खोलना दुःशक्य
है, उसी प्रकार की यह कर्मस्थिति भी एक दुर्भेद्य गांठ है ।

અભવ્ય જીવ મી ઇસી યથાપ્રવૃત્તિકરણ દ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કો સ્વપા કર એક કોટીકોટી સાગરપ્રમાણ
કર દેતા હૈ; પરન્તુ ગ્રન્થિભેદન નહીં કર સકતા । ઇસકે પશ્ચાત્ કોઈ હી
મહાત્મા ભવ્ય જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણ સે મી અધિક વિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ
કરણ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઇસકે દ્વારા વહ ઘન રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટીને પદ્યના અસંખ્યાનમા ભાગ હીન એક કોટીકોટીસાગર
પ્રમાણ (અન્તઃકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ) રહી જાય છે.

ત્યાર બાદ જીવની કર્મજનિત-કર્મોથી ઉત્પન્ન થયેલી-અને સઘન કઠિનતર
રાગદ્વેષપરિણામવાળી કર્મોની વિશેષ સ્થિતિરૂપ એક ગ્રન્થિ હોય છે, જે
અત્યન્ત કઠોર, સઘન અને જીની ગૂઢ-ગાંઠની સમાન દુર્ભેદ્ય હોય છે. જેમ
ધણી જીની કઠણ ગાંઠનું, કે જે ચિકણાપણા વિગેરેના સંબંધથી અત્યન્ત ચોંટી
ગયેલ છે, અને જેનો આધો પણ નજર નથી આવતો, અને જે વાંકીચુકી લાગેલી
છે. એનું તોડવું જેમ અશક્ય હોય છે. તે જ પ્રકારની આ કર્મસ્થિતિ પણ
એક દુર્ભેદ્ય ગાંઠ છે

અભવ્ય જીવ પણ આ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને સ્વપાવીને એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ કરી દે
છે. પરન્તુ ગ્રન્થિભેદન કરી શકતા નથી. એના પશ્ચાત્ કોઈ પણ મહાન્મા ભવ્ય
જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણથી પણ અધિક વિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ-કરણને પ્રાપ્ત
કરે છે. એના દ્વારા તે ઘન-રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ ગ્રન્થિને સર્વ પ્રકારથી છેદી

ભવતિ । એતદનન્તરં કશ્ચિદેવ મહાત્મા ભવ્યજીવસ્તુ યથાપ્રવૃત્તિકરણાખ્યપરિણામા-
દપ્યધિકવિશુદ્ધિપરિણામં પ્રાપ્તુમર્હતિ, સ એવાપૂર્વકરણાખ્યઃ પરિણામઃ । તં પ્રાપ્યાસૌ
નિશિતકુઠારધારયેવ પરમવિશુદ્ધ્યા ઘનરાગદ્વેપાતિદ્વદસંસ્કારરૂપં ગ્રન્થિ સર્વથા
છિન્નત્તિ ભિન્નત્તિ ચ ।

યત્ પૂર્વ ન જાતં તદપૂર્વમ્, અપૂર્વં ચ તત્ કરણં ચેત્યપૂર્વકરણમ્ । અયં પરિ-
ણામઃ સકૃદેવ ભવતિ, ન તુ પુનઃ પુનરિતિ । યથાપ્રવૃત્તિકરણં ત્વમવ્યાનામપ્યનન્તશઃ
પ્રાદુર્ભવતિ । તસ્માદમવ્યા અપિ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કર્મ ક્ષપયિત્વા ગ્રન્થિ યાવદન-
ન્તશઃ સમાગચ્છન્તિ ।

અપૂર્વકરણપરિણામેન ગ્રન્થેઃ સર્વથા ભેદને કૃતે સતિ તદપેક્ષ્યાડપ્યધિકવિશુદ્ધિ-
પરિણામો ભવતિ, સ ત્વનિવૃત્તિકરણપરિણામઃ । તદવ્યવદ્વિતોત્તરકાલે જીવઃ સમ્ય-
ક્ત્વં નિયમતઃ પ્રાપ્નોતિ, ન ચાસૌ સમ્યક્ત્વમનવાપ્ય નિર્વર્તતે, તસ્માદનિવૃત્તિ-
ગ્રન્થિકો સર્વ પ્રકાર સે છિન્ન-ભિન્ન કર ડાલતા હૈ । યહ પરિણામ જીવ
કો પહિલે કમી મી પ્રાપ્ત નહીં હુઆ इसी लिये इसकी अपूर्वकरण संज्ञा
है । जो पहिले न हुआ हो वह अपूर्व है । अपूर्व जो करण वह अपूर्वकरण
है । वह परिणाम जीवके लिये एकवार ही होता है, बारंवार नहीं । यथा-
प्रवृत्तिकरण तो अभव्यों के अनन्तवार भी हो जाता है, इस लिये वे
इस के द्वारा कर्मों का क्षपण कर ग्रन्थिदेश तक अनन्तवार आ जाते हैं ।

અપૂર્વકરણ-પરિણામ સે ગ્રન્થિકા સર્વથા ભેદ હોને પર इसके
अनन्तर इस से भी अधिक विशुद्ध परिणाम उत्पन्न होता है, जिस
का नाम अनिवृत्तिकरण है । इसके द्वारा व्यवधानरहित इसीके उत्तर-
कालमें (इसी समय) जीव नियमसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति कर लेता है ।

નાંખે છે અને ભેદી નાંખે છે, આ પરિણામ જીવને પહેલાં કોઈ વખત પણ
પ્રાપ્ત નથી થયું તેથી એની અપૂર્વકરણ સંજ્ઞા છે જે પહેલા નથી થયું તે
અપૂર્વ છે, અપૂર્વ જે કરણ તે અપૂર્વ કરણ છે આ પરિણામ જીવને માટે એક
વાર જ થાય છે, વારવાર નહિ. યથાપ્રવૃત્તિકરણ તો અભવ્યોને અનંત વાર પણ
થાય છે, આથી તે એના દ્વારા કર્મોનું ક્ષપણ કરીને ગ્રન્થિદેશ સુધી અનંત-
વાર આવે છે.

અપૂર્વકરણ-પરિણામથી ગ્રન્થિનો સર્વથા ભેદ થવાથી એના પછી
આનાથી પણ અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે, જેનું નામ અનિવૃત્તિ-
કરણ છે, એના દ્વારા વ્યવધાનરહિત એના ઉત્તરકાળમાં (એ જ વખતે) જીવ
નિયમથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરી દે છે આ પરિણામ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કળાવ્યા

करणमित्युच्यते । तस्य स्थितिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, तदानीं जीवस्य वीर्यसमुच्छा-
सोऽपूर्वकरणापेक्षया परिवर्धते । तस्यान्तर्मुहूर्तप्रमाणायां स्थितौ संख्येयेषु भागेषु
गतेषु सत्स्वेकस्मिंश्च संख्येयतमे भागे शेषे तिष्ठति सति मिथ्यात्वप्रदेशवेद्यदलिका-
भावकरणरूपम् अन्तरकरणं प्रवर्तते । अन्तरकरणाख्यस्य जीवपरिणामग्यापि स्थि-
तिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, परं त्वन्तर्मुहूर्तस्यासंख्यातभेदसद्भावेनानिवृत्तिकरणकाल-
स्वरूपान्तर्मुहूर्तापेक्षया तदन्तिमभागवर्ती न्यूनोऽयमन्तरकरणकालोऽन्तर्मुहूर्तमिति ।

अनिवृत्तिकरणस्यान्तिमे भागेऽन्तरकरणस्य कार्यं प्रारम्भ्यते, तद्यथा—अपूर्वक-
रणानिवृत्तिकरणलक्षणविशुद्धिपरिणामजनितसामर्थ्यसमन्वितो भव्यस्तदव्यवहितोत्त-

यह परिणाम सम्यक्त्व प्राप्त कराये विना छूटता ही नहीं है, इसी लिये
इसका नाम “अनिवृत्तिकरण” पड़ा है । इसकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त की
है, जीवके अपूर्वकरणकी अपेक्षा इस समय अधिक मात्रामें वीर्योत्सास
बढ़ता है । अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थिति में से संख्यात भाग घटते २ जब
उसका अन्तिम संख्यातवां भाग अवशिष्ट रह जाता है उस समय
अन्तरकरण होता है । यह मिथ्यात्व के प्रदेशोंके वेदन करने योग्य द-
लियों के अभाव (क्षय) का कारण होता है । इसकी भी स्थिति अन्त-
र्मुहूर्त की है । यह अन्तर्मुहूर्त जघन्य अन्तर्मुहूर्त है । अनिवृत्तिकरण
के कालका अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है । अन्तर्मुहूर्तके भी असं-
ख्यात भेद हैं ।

अनिवृत्तिकरण के अन्तिम भागमें अन्तःकरणका कार्य प्रारम्भ होता
है । मिथ्यात्वके प्रदेशों के वेदन करने योग्य दलियों का अभाव करना ही
अन्तरकरणका कार्य है । वह कार्य इसके द्वारा जीव जिस प्रकार से करना

पराशर छुटता ४ नहीं, तेथी तेनु नाम “अनिवृत्तिकरण” पद्युं छे, ओनी
स्थिति अंतर्मुहूर्तनी छे एवने अपूर्वकरणनी अपेक्षा आश्रयये अधिक मात्रामें
वीर्योत्सास पद्ये छे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिमाथी संख्यात भाग घटतां घटतां
न्याये तेनो अन्तिम संख्यातमे भाग अवशिष्ट रही जय छे ते वणने अन्त-
रकरण धाय छे आ मिथ्यात्वना प्रदेशाना वेदन करवा योग्य दलियोना अभाव
(क्षय) नुं कारण धाय छे ओनी पद्यु स्थिति अन्तर्मुहूर्तनी छे आ अन्त-
र्मुहूर्त जघन्य अन्तर्मुहूर्त छे अनिवृत्तिकरणना कारण अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट
अंतर्मुहूर्त छे अंतर्मुहूर्तना पद्यु असंख्यात भेद छे

अनिवृत्तिकरणना अन्तिम भागमा अन्तःकरणनुं कार्य प्रारंभ धाय छे
मिथ्यात्वना प्रदेशाना वेदन करवा योग्य दलियोना अभाव करवा, ओ ४ अन्त-

રાન્તર્મુહૂર્તકાલે ઉદેખ્યમાણં મિથ્યાત્વદલિકં દ્વિધા વિધાય તત્રૈકં દલિકમનિવૃત્તિ-
 કરણાન્તિમસમયપર્યન્તે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકેષુ નિષ્પિપતિ, દ્વિતીયં દલિકં
 ત્વનિવૃત્તિકરણાવ્યવહિતોત્તરકાલિકાન્તર્મુહૂર્તસમાપ્ત્યનન્તરકાલે ઉદેખ્યમાણૈર્મિથ્યા-
 ત્વદલિકૈઃ સદ્ સંયોજયતિ । તથા ચાનિવૃત્તિકરણકાલાવ્યવહિતોત્તરકાલે પ્રથમો-
 ઽન્તર્મુહૂર્તકાલ એકસ્તાદશઃ સંજાયતે યત્ર મિથ્યાત્વકર્મણાં કિંચિદપિ દલિકં નૈવ
 તિષ્ઠતિ । તથાચાનેનાન્તરકરણેન મવ્યસ્તસ્મિન્નન્તર્મુહૂર્તે ઉદયયોગ્યમિથ્યાત્વદલિક-
 હૈ વહ કહતે હૈ—જિસકે અપૂર્વકરણ ઓર અનિવૃત્તિકરણ, ઇન દો
 વિશુદ્ધ પરિણામોં સે વિશિષ્ટ શક્તિકા વિકાસ હુઆ હૈ એસા મવ્ય જીવ
 વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણ કે ઉત્તર અન્તર્મુહૂર્ત-સમય મેં આગામી
 કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ દલિયોં કે દો ટુકડે-ભાગ કરતા હૈ।
 ઉસમેં એક ટુકડે કો અનિવૃત્તિકરણકે અન્તિમસમયપર્યન્ત ઉદયાગત
 મિથ્યાત્વકે દલિયોં મેં પ્રક્ષિપ્ત કરતા હૈ, ઓર દૂસરે ભાગકો અનિવૃત્તિ-
 કરણ કે અવ્યવહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્ત કી સમાપ્તિકે અનન્તર
 (અન્તરરહિત) કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ
 સંયુક્ત કરતા હૈ । ઇસ તરહ અનિવૃત્તિકરણ કાલકે વ્યવધાનરહિત
 ઉત્તર કાલમેં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાલ એક એસા કાલ હોતા હૈ કિ જિસમેં
 મિથ્યાત્વ કર્મકા એક સી દલિયા શેષ નહીં રહતા । ઇસ અન્તરકરણ
 પરિણામ કે દ્વારા મવ્ય જીવ ઉસ અન્તર્મુહૂર્તકાલ મેં ઉદય યોગ્ય મિથ્યાત્વ
 કે દલિયોં કે પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગકો ઉસકે પૂર્વકાલવર્ત્તી જો અ-

કરણુ કાર્ય છે, આ કાર્ય એના દ્વારા હવે જે પ્રકારથી કરે છે તે કહે છે-જેને
 અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણ, આ જે વિશુદ્ધ પરિણામોથી વિશિષ્ટ શક્તિનો
 વિકાસ થયો છે આવા ભવ્ય હવે વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણની પછી અન્તર્મુહૂર્ત
 સમયમા આગામી કાળમા ઉદય આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના જે ટુકડા-ભાગ
 કરે છે, એમાં એક ટુકડાને અનિવૃત્તિકરણના અતિમ સમયના અન્તમાં ઉદયાગત
 મિથ્યાત્વના દલિયોમા પ્રક્ષિપ્ત કરે છે અને બીજા ભાગને અનિવૃત્તિકરણના અવ્ય-
 વહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્તની સમાપ્તિના અનન્તર (અન્તરરહિત) કાળમાં ઉદય
 આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરે છે. આ રીતે અનિવૃત્તિ
 કરણકાળના વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાળ એક એવો કાળ
 થાય છે કે જેમા મિથ્યાત્વ કર્મનો એક પણ દલિયું શેષ નથી રહેતું. આ અન્તર્-
 કરણ-પરિણામદ્વારા ભવ્ય હવે આ અન્તર્મુહૂર્તકાળમાં ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના
 દલિયોના પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગને એનો પૂર્વકાળવર્ત્તી જે અનિવૃત્તિકરણનો

સ્યૈકભાગં પ્રથમસ્થિતિરૂપં તત્પૂર્વકાલવર્ત્યનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમભાગે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજ્ય સ્વોદયકાલાત્ પ્રાગેવોદયં પ્રાપયતિ, તેન તસ્ય મિથ્યાત્વદલિકસ્ય સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરૂણદ્વિ । દ્વિતીયભાગસ્યાપિ દ્વિતીયસ્થિતિનામ્નસ્તસ્માદન્તર્મુહૂર્તાદવ્યવહિતોત્તરકાલે ઉદેષ્યમાણતયા સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરોધયતિ; તદેવમનિવૃત્તિકરણાનન્તરોદયયોગ્યદલિકાનાં વ્યવધાનકરણાદન્તરકરણમિત્યુચ્યતે ।

નિવૃત્તિકરણ કા અન્તિમ ભાગ હૈં ઉસમેં ઉદયમાન મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ સંયુક્ત કરકે ઉસે અપને નિજ ઉદયકાલસે પહિલે હી ઉદયમેં લે આતા હૈં, ઇસ સે વહ ભવ્ય જીવ ઉસ મિથ્યાત્વ કે દલિયે કે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલમેં રોક દેતા હૈં । તથા દૂસરી સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વકા જો દ્વિતીય ભાગ હૈં, જો ઉસ અન્તર્મુહૂર્ત સે વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાલમેં ઉદયમેં આને યોગ્ય હૈં; ઉસકે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલમેં રોક દેતા હૈં । ઇસ પ્રકાર અનિવૃત્તિકરણ કે અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે ઉદયમેં વ્યવધાન કરનેવાલા હોને સે યહ ‘અન્તરકરણ’ કહલાતા હૈં । યહ કરણ મિથ્યાત્વકે દલિયોં કો અગલે ઔર પિછલે ભાગમેં મિલા દેતા હૈં । અનિવૃત્તિકરણ કા અંતિમ સમય પૂર્ણ હોને પર અન્તર્મુહૂર્ત તક મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા કિસી મીં તરહ સે ઉદય નહીં હો સકતા । ઉસ સમય જિન મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા ઉદય સંભવ થા, ઉનમેંસે કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલ સે પહિલે હી ઉદયમેં આને કી યોગ્યતા આતી હૈં, ઔર કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલસે

અંતિમ ભાગ છે તેમાં ઉદયમાન મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરીને તેને પોતાના નિજ ઉદયકાળથી પહેલા જ ઉદયમાં લઈ આવે છે, આ કારણે તે ભવ્ય જીવ તે મિથ્યાત્વના દલિયાના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે, અને બીજી સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વનો જે બીજો ભાગ છે જે તે અન્તર્મુહૂર્તથી વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં ઉદયમાં આવવા યોગ્ય છે તેના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે આ પ્રકારે અનિવૃત્તિકરણના અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના ઉદયમાં વ્યવધાન કરવાવાળા હોવાથી આ ‘અન્તરકરણ’ કહેવાય છે

આ કારણ મિથ્યાત્વના દલિયોને આગળ અને પાછળના ભાગમાં બેડી આવે છે, અને અનિવૃત્તિકરણનો અંતિમ સમય પૂર્ણ થતાં તેની પછી અંતર્મુહૂર્ત બુધી મિથ્યાત્વના દલિયોનો કોઈ પણ પ્રકારથી ઉદય થતો નથી. તે જે મિથ્યાત્વના દલિયોનો ઉદય સંભવ હતો, તેમાંથી કેટલાક દલિયોમાં પોતાના ઉદયકાળના પહેલાં જ ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે, અને કેટલાક દલિયોમાં પોતાના

અનિવૃત્તિકરણાન્તિમસમયે વ્યતીતે સત્તિ યાવદન્તર્મુહૂર્તં કથમપિ મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયો ન ભવતિ તદાનીં ચેપાં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભવસ્તેષુ કેપાંચિદ્ દલિકાનાં તત્પર્વકાલે, કેપાંચિત્ તત્પથાત્કાલેઽન્તરકરણેનોદયાર્હતા સંપાદ્યતે । અનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમસમયપર્યન્તં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસદ્ભાવેન તાવત્કાલપર્યન્તં જીવો મિથ્યાત્વી વર્તતે, પરં સ્થનિવૃત્તિકરણકાલે વ્યતીતે સત્તિ સપદિ જીવેનોપશમિકસમ્યક્ત્વં પ્રાપ્યતે, તદાનીં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણો વિપાકતઃ પ્રદેશતશ્ચ સર્વથોદયાભાવાત્, અત એવ જીવસ્ય સ્વાભાવિકઃ સમ્યક્ત્વપરિણામઃ પ્રકટીભવતિ । ઇદં ચ સમ્યક્ત્વમોપશમિકમિત્યુચ્યતે । ઉક્તશ્ચ—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિં સમઙ્છઓ ભવે વીચં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

છાયા—યાવદગ્રન્થિસ્તાવત્પથમં (કરણં) ગ્રન્થિ સમતિક્રામતો (ભિન્દાનસ્ય) ભવેદ્ દ્વિતીયમ્ । અનિવૃત્તિકરણં પુનઃ સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે (ભવતિ) ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પીછે ઉદયમેં આનેકી યોગ્યતા આતી હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કે ચરમ સમય પર્યન્ત મિથ્યાત્વ કે દલિયોંં કા ઉદય હોનેસે ઉતને સમય તક જીવ મિથ્યાત્વી રહતા હૈ, પરન્તુ જ્યોંંહી અનિવૃત્તિકરણ કા કાલ સમાપ્ત હો જાતા હૈ ત્યોંં હી જીવ અટિતિ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । હસ સમય મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા ન તો વિપાકોદય હી રહતા હૈ ઔર ન પ્રદેશોદય હી । સર્વપ્રકાર સે ઉસકે ઉદય કા હસ સમય અભાવ રહતા હૈ । હસી લિયે જીવ કા નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ-રૂપ પરિણામ ઉદ્ભૂત (પ્રગટ) હો જાતા હૈ । કહા ભી હૈ—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિં સમઙ્છઓ ભવે વીચં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

ગ્રન્થિદેજ તક જીવકો પહુંચા દેના ચહ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ

ઉદયકાળની પછી ઉદયમા આવવાની યોગ્યતા આવે છે અનિવૃત્તિકરણના ચરમ સમયના અંતિમભાગમા મિથ્યાત્વના ત્વિયોનો ઉદય હોવાથી એટલા સમય સુધી જીવ મિથ્યાત્વી રહે છે, પરંતુ ત્યારે અનિવૃત્તિકરણનો કાળ સમાપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે જ જીવ અટિતિ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે આ સમયે મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના નથી વિપાકોદય જ રહેતા અગર નથી પ્રદેશોદય જ. સર્વ પ્રકારથી નેના ઉદયનો આ વખત આભાવ રહે છે તેથી જીવનું નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ પ્રગટ થઈ જાય છે. કહ્યું છે—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિં સમઙ્છઓ ભવે વીચં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

અન્યચ્ચ—

“ કાઝળ ગંઠિમેયં, સહસંમહ્યાએ પાણિણો કોઈ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વાધિકારી જીવો દ્વિવિધઃ—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી, (૨) તીવ્ર-વિશુદ્ધિપરિણામી ચેતિ । તત્ર—

(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી ભવ્યોઽપૂર્વકરણમારૂઠો ગ્રન્થિભેદં વિધાયાઽપિ તીવ્રાધ્યવસાયાભાવાન્ન મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકર્તુ શક્નોતિ । તતોઽનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્યા-કરણ) કા, ઔર ડસકા ભેદન કરના—અપૂર્વકરણ (દ્વિતીય કરણ) કા, ઔર સમ્યક્ત્વકે સન્મુખ જીવકો કર દેના યહ અનિવૃત્તિકરણ (તૃતીય કરણ) કા કાર્યે હૈ ॥ ૧ ॥

ફિર મી—

“ કાઝળ ગંઠિમેયં, સહસંમહ્યાએ પાણિણો કેઈ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરકે કિતનેક પ્રાણી નિસર્ગ—સ્વભાવ—જાતિસ્મરણ આદિ સે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઔર કિતનેક પરકે ઉપદેશસે પાતે હૈં । ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) દો પ્રકાર કે હોતે હૈં—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ઔર (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ।

હનમેં સે—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલા ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામ કે અવલમ્બન સે ગ્રન્થિ કા ભેદન કરકે મી તીવ્ર અધ્યવસાય કે

ગ્રન્થિદેશ સુધી જીવને પહોંચાડવો એ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ કરણ) નું અને એનું લેદન કરવું અપૂર્વકરણ (બીજા કરણ) નું, અને સમ્યક્ત્વની સન્મુખ જીવને કરવો, એ અનિવૃત્તિકરણ (ત્રીજા કરણ) નું કાર્ય છે ॥ ૧ ॥ વળી:—

“કાઝળ ગંઠિમેયં, સહસંમહ્યાએ પાણિણો કેઈ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિલેદ કરીને કેટલાંક પ્રાણી નિસર્ગ—સ્વભાવ—જાતિસ્મરણ આદિથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, અને કેટલાંક બીજાના ઉપદેશથી મેળવે છે ॥ ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) બે પ્રકારના હોય છે. (૧) મન્દ વિશુદ્ધિપરિણામવાળાં અને (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં.

આમાંથી (૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામના અવલંબનથી ગ્રન્થિનું લેદન કરીને પણ તીવ્ર અધ્યવસાયનો અભાવ હોવાથી

અનિવૃત્તિકરણાન્તિમસમયે વ્યતીતે સતિ યાવદન્તર્મુહૂર્તં કથમપિ મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયો ન ભવતિ તદાનીં કેપાં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભવસ્તેષુ કેષાં-ચિદ્ દલિકાનાં તત્પૂર્વકાલે, કેષાંચિત્ તત્પશ્ચાત્કાલેऽન્તરકરણેનોદયાર્હતા સંપા-દ્યતે । અનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમસમયપર્યન્તં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસદ્ભાવેન તાવ-ત્કાલપર્યન્તં જીવો મિથ્યાત્વી વર્તેતે, પરં ત્વનિવૃત્તિકરણકાલે વ્યતીતે સતિ સપદિ જીવેનોપશમિકસમ્યક્ત્વં પ્રાપ્યતે, તદાનીં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણો વિપાકતઃ પ્રદે-શતશ્ચ સર્વથોદયાભાવાત્, અત એવ જીવસ્ય સ્વાભાવિકઃ સમ્યક્ત્વપરિણામઃ પ્રકટી-ભવતિ । ઇદં ચ સમ્યક્ત્વમૌપશમિકમિત્યુચ્યતે । ઉક્તશ્ચ—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિ સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલહે જીવે ” ॥ ૧ ॥

છાયા—યાવદગ્રન્થિસ્તાવત્પ્રથમં (કરણં) ગ્રન્થિ સમતિક્રામતો (મિન્દાનસ્ય) ભવેદ્ દ્વિતીયમ્ । અનિવૃત્તિકરણં પુનઃ સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે (ભવતિ) ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પીછે ઉદયમેં આનેકી યોગ્યતા આતી હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કે ચરમ સમય પર્યન્ત મિથ્યાત્વ કે દલિયોંં કા ઉદય હોનેસે ઉતને સમય તક જીવ મિથ્યાત્વી રહતા હૈ, પરન્તુ જ્યોંંહી અનિવૃત્તિકરણ કા કાલ સમાપ્ત હો જાતા હૈ ત્યોંં હી જીવ જ્ઞાતિ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । ઇસ સમય મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા ન તો વિપાકોદય હી રહતા હૈ ઔર ન પ્રદેશોદય હી । સર્વપ્રકાર સે ઉસકે ઉદય કા ઇમ સમય અભાવ રહતા હૈ । ઇસી લિયે જીવ કા નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ-રૂપ પરિણામ ઉદ્ભૂત (પ્રગટ) હો જાતા હૈ । કહા મી હૈ—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિ સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલહે જીવે ” ॥ ૧ ॥

ગ્રન્થિદેશ તક જીવકો પહુંચા દેના યહ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ

ઉદયકાળની પછી ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે. અનિવૃત્તિકરણના ચરમ સમયના અંતિમભાગમાં મિથ્યાત્વના દલિયોનો ઉદય હોવાથી એટલા સમય સુધી જીવ મિથ્યાત્વી રહે છે, પરંતુ ત્યારે અનિવૃત્તિકરણનો કાળ સમાપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે જ જીવ જ્ઞાતિ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ સમયે મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના નથી વિપાકોદય જ રહેતા અગર નથી પ્રદેશોદય જ. સર્વ પ્રકારથી નેના ઉદયનો આ વખત અભાવ રહે છે તેથી જીવનું નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ પ્રગટ થઈ જાય છે કહ્યું છે.—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિ સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલહે જીવે ” ॥ ૧ ॥

અન્યત્ત્વ—

“ કાઝળ ગંઠિમેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કોહ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વાધિકારી જીવો દ્વિવિધઃ—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી, (૨) તીવ્ર-વિશુદ્ધિપરિણામી ચેતિ । તત્ર—

(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી ભવ્યોઽપૂર્વકરણમારૂઠો ગ્રન્થિભેદં વિધાયાઽપિ તીવ્રાધ્યવસાયાભાવાન્ન મિથ્યાત્વં ત્રિપુજ્જીકર્તુ શક્નોતિ । તતોઽનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્યા-કરણ) કા, ઔર ઉસકા ભેદન કરના-અપૂર્વકરણ (દ્વિતીય કરણ) કા, ઔર સમ્યક્ત્વકે સન્મુખ જીવકો કર દેના યહ અનિવૃત્તિકરણ (તૃતીય કરણ) કા કાર્યે હૈ ॥ ૧ ॥

ફિર મ્હી—

“ કાઝળ ગંઠિમેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કેહ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરકે કિતનેક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિ સે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઔર કિતનેક પરકે ઉપદેશસે પાતે હૈં । ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) દો પ્રકાર કે હોતે હૈં—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ઔર (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ।

इनमें से—(१) मन्दविशुद्धिपरिणामवाला भव्य जीव अपूर्वकरण परिणाम के अवलम्बन से ग्रन्थि का भेदन करके भी तीव्र अध्यवसाय के

ગ્રન્થિદેશ સુધી જીવને પહોંચાડવો એ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ કરણ) નું અને એનું લેહન કરવું અપૂર્વકરણ (બીજા કરણ) નું, અને સમ્યક્ત્વની સન્મુખ જીવને કરવો, એ અનિવૃત્તિકરણ (ત્રીજા કરણ) નું કાર્ય છે ॥ ૧ ॥ વળી:—

“ કાઝળ ગંઠિમેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કેહ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિલેહ કરીને કેટલાંક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, અને કેટલાંક બીજાના ઉપદેશથી મેળવે છે ॥ ૨ ॥

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) બે પ્રકારના હોય છે. (૧) મન્દ વિશુદ્ધિપરિણામવાળાં અને (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં.

આમાંથી (૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામના અવલંબનથી ગ્રન્થિનું લેહન કરીને પણ તીવ્ર અધ્યવસાયનો અભાવ હોવાથી

નતરકરણં કૃત્વાઽનુપદોક્તરીત્યા પ્રથમમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં લભતે । અયમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમન્તર્મુહૂર્તમનુભૂય તદનન્તરમવશ્યં સર્વપ્રતિપાતેન પુનર્મિથ્યાત્વી ભવતિ ।

(૨) યસ્તીત્રવિશુદ્ધિપરિણામી ભવતિ, સ સ્વલ્પપૂર્વકરણમારુદો મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકૃત્ય તદનન્તરમનિવૃત્તિકરણે પ્રવિષ્ટઃ સમ્યક્ત્વપુઙ્ગોદયાત્ પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ, પરન્તુ કૃતત્રિપુઙ્ગોઽયં પ્રથમતયૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ન લભતે ।

ઔપશમિકસમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્—ગ્રન્થિભેદજન્યમ્, ઉપશમશ્રેણિભાવિ ચેતિ । તત્ર પ્રથમં ગ્રન્થિભેદજન્યં મન્દવિશુદ્ધિપરિણામિનો જીવસ્ય ભવતિ, દ્વિતીયં તૂપશમ-અભાવ હોનેસે મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરનેકી શક્તિ સે શૂન્ય રહતા હૈ, હસલિયે યહ અનિવૃત્તિકરણ કો પ્રાપ્ત હો કર અન્તરકરણ કરકે ઉપર્યુક્ત રીતિસે સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકી અન્તર્મુહૂર્તપરિમિત સ્થિતિકા અનુભવ કર પશ્ચાત્ ઉસકે પૂર્ણ હોતે હી અવશ્ય સર્વપ્રતિપાત સે વહ પુનઃ મિથ્યાત્વી હો જાતા હૈ ।

(૨) જો ત્રીવિશુદ્ધિપરિણામી હોતા હૈ વહ અપૂર્વકરણ મેં રહ કર મિથ્યાત્વ કે ત્રીન પુંજ કરકે પશ્ચાત્ અનિવૃત્તિકરણ મેં પ્રવિષ્ટ હોકર સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકા લાભ કરતા હૈ, ઉપશમ સમ્યક્ત્વકા નહીં ।

ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે દો ભેદ હે । (૧) ગ્રન્થિભેદજન્ય ઔર દૂસરા (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવિ । હનમેં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ, મન્દ-વિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે હોતા હૈ । દૂસરા ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય રહે છે. તેથી આ અનિવૃત્તિકરણને પ્રાપ્ત કરીને અને અન્તરકરણ કરીને ઉપર બતાવેલી રીતિથી સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે. અન્તર્મુહૂર્તની ઔપશમિક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિનો અનુભવ કરીને પછી તેના પૂર્ણ થતા જ અવશ્ય સર્વપ્રતિપાતથી તે પુનઃ મિથ્યાત્વી થઈ જાય છે.

જે (૨) ત્રીવિશુદ્ધિપરિણામી હોય છે તે અપૂર્વકરણમાં રહીને મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરીને પછી અનિવૃત્તિકરણમાં પ્રવિષ્ટ થઈને સમ્યક્ત્વમોહનીય પુંજના ઉદયથી સર્વ પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વનો લાભ કરે છે, ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો નહિ.

ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના બે ભેદ છે (૧) એક ગ્રન્થિભેદજન્ય અને બીજો (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવી. આમાં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ મન્દવિશુદ્ધિ-

શ્રેણિગતસ્ય । તત્રોપશમશ્રેણિગતઃ સમ્યક્ત્વી દેશપ્રતિપાતેન સર્વપ્રતિપાતેન વા પ્રતિ-
પતતિ-મિથ્યાત્વમવાપ્નોતિ । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વે પ્રાપ્તે સતિ જીવસ્ય પદાર્થાનાં
સ્ફુટતયા નિશ્શંકં પ્રતીતિર્જન્માન્ધસ્ય નેત્રલાભે સતીવ જાયતે । સદૌષધસેવનેન
રોગે પ્રતિનિવૃત્તે વ્યાધિતેનેવ મિથ્યાત્વમહારોગેऽપગતે સત્યપૂર્વ આનન્દોऽનુભૂયતે
જીવેન ।

ગ્રંથિભેદજન્યમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમનાદિમિથ્યાત્વિભવ્યાનાં ભવતિ । इदं च
प्रथमोपशमसम्यक्त्वमित्यपि कथ्यते । उपशमश्रेणिभाविन औपशमिकसम्यक्त्वस्य
को होता है । उपशमश्रेणिप्राप्त जीव नियमसे वहां से सर्वदेशके प्रतिपात
से अथवा एकदेशके प्रतिपात से नीचे के गुणस्थानको प्राप्त हो जाता है ।

जैसे—जन्मान्धको नेत्रके लाभ होने पर पदार्थों की प्रतीति विना
किसी सन्देह के स्फुटरूपसे होने लगती है उसी प्रकार इस सम्यक्त्व
के प्राप्त होने पर जीवादि पदार्थोंकी प्रतीति भी विना किसी सन्देह के
स्फुटरूप से जीवको होती है । तथा जिस प्रकार निर्दोष औषध के
सेवन से रोगके चले जाने पर रोगी पुरुष अपूर्व आनन्दका अनुभव
करता है, उसी प्रकार मिथ्यात्व महारोगके नष्ट होने पर इस समकित
वाला जीव भी अपूर्व आनन्दका अनुभव करता है ।

ग्रंथિભેદસે ઉત્પન્ન સમ્યક્ત્વ (ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ) અનાદિ-
મિથ્યાદૃષ્ટિભવ્યજીવોં કે હોતા હૈ । इस सम्यक्त्वका दूसरा नाम प्रथ-

પરિણામવાળા જીવને થાય છે બીજું ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવને થાય છે. ઉપશમ-
શ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ નિયમથી ત્યાંથી સર્વ દેશના પ્રતિપાતથી અથવા એક દેશના
પ્રતિપાતથી નીચેના ગુણસ્થાનોમાં આવીને આખરે મિથ્યાત્વગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત
થઈ જાય છે.

જેવી રીતે જન્માંધને નેત્રનો લાભ થતાં જ પદાર્થોની પ્રતીતિ કોઈ જાતના
સંદેહ વિના સ્ફુટરૂપથી થવા માંડે છે, તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં
જ જીવાદિ પદાર્થોની પ્રતીતિ પણ કોઈ જાતના સંદેહ વગર સ્ફુટરૂપથી જીવને
થાય છે. તથા જે પ્રકારે નિર્દોષ ઔષધના સેવનથી રોગનો નાશ થતાં જ રોગી
પુરૂષ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે તેવી રીતે મિથ્યાત્વ-મહારોગનો નાશ
થતાં જ આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ પણ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે.

અનિ-ભેદથી ઉત્પન્ન સમ્યક્ત્વ (ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ) અનાદિમિથ્યા-
દૃષ્ટિ ભવ્ય જીવોને થાય છે. આ સમ્યક્ત્વનું બીજું નામ પ્રથમોપશમ-સમ્યક્ત્વ

પ્રાપ્તિશ્ચતુર્થપન્ચમપષ્ટસપ્તમેષુ કસ્મિંશ્ચિદ્ ગુણસ્થાને ભવિતુમર્હતિ, પરં તુ અષ્ટમગુણ-સ્થાને તત્પ્રાપ્તિરવશ્યમેવ ભવતિ ।

મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકૃત્ય સમ્યક્ત્વપુન્જોદયાત્ ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ-
ઇતિ યદુક્તં, તત્રાયં ક્રમઃ—કેવલિપ્રમૃતીનાં વચઃ શ્રુત્વા, જાતિસ્મરણાદિના વા
સમ્યક્ત્વસ્વરૂપં જ્ઞાત્વાઽપૂર્વકરણે વર્ધમાનપરિણામો દર્શનમોહનીયાપરનામકમિથ્યા-
ત્વપુદ્ગલ્લ યુગપત્ ત્રિધા કરોતિ, સમ્યક્ત્વમોહનીય—મિશ્રમોહનીય—મિથ્યાત્વમોહ-
નીયભેદાત્ । તત્ર તાવત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયમુચ્યતે—

મોહમસમ્યક્ત્વ મી છે । ઉપશમશ્રેણિગત જીવોંકો જો સમકિત હોતા
હૈ વહ ઉપશમશ્રેણિભાવિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ચૌથે,
પાંચવેં, છઠવેં ઔર સાતવેં ગુણસ્થાનોં મેં સે કિસીં એક ગુણસ્થાનમેં હો
સકતા હૈ, પરન્તુ આઠવેં ગુણસ્થાનમેં તો ઉસકી પ્રાપ્તિ જીવકો અવશ્ય
હી હો જાતી હૈ ।

મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરને કે વાદ જીવ ઉન ત્રીન પુંજોં મેં સે એક
સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કિયા
કરતા હૈ । યહ જો વાત ઉપર કહી ગઈ હૈ વહાં પર હસ પ્રકારકા ક્રમ સમ-
જ્ઞાના ચાહિયે । કેવલી વગેરહ કે વચન સુન કર અથવા જાતિસ્મરણાદિકસે
સમ્યક્ત્વકે સ્વરૂપકો જાન કર અપૂર્વકરણમેં જિસકા પરિણામ વૃદ્ધિગત હો
રહા હૈ, એસા જીવ દર્શનમોહનીય કર્મ કો—જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ
પુદ્ગલ હૈ ઉસકો—એક સાથ ત્રીન ભેદોં મેં, અર્થાત્—મિથ્યાત્વમોહનીય,
મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયકે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ ।

પણ છે. ઉપશમશ્રેણિગત જીવોને જે સમ્યક્ત્વ થાય છે તે ઉપશમશ્રેણિભાવી
ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ચોથા, પાંચમા, છઠ્ઠા અને સાતમા ગુણ
સ્થાનોમાંથી કોઈ એક ગુણસ્થાનમાં થઈ શકે છે, પરંતુ આઠમા ગુણસ્થાનમાં તો
તેની પ્રાપ્તિ જીવને અવશ્ય જ થઈ જાય છે

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કર્યા બાદ જીવ આ ત્રણ પુંજોમાંથી એક સમ્યક્ત્વ-
મોહનીયપુંજના ઉદયથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કર્યા કરે છે. આ જે વાત
ઉપર કહેવાઈ ગઈ છે ત્યાં આ પ્રકારનો ક્રમ સમજવો જોઈએ—કેવળી વિગેરેનું
વચન સુણીને અથવા જાતિસ્મરણાદિકથી સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને જાણીને અપૂર્વકરણમાં
જેનો પરિણામ વૃદ્ધિગત થઈ રહ્યો છે; એવો જીવ દર્શનમોહનીય કર્મને, જેનું
ખીલું નામ મિથ્યાત્વપુદ્ગલ છે તેને એકસાથ ત્રણ ભેદોમાં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વ-
મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયના રૂપમાં પરિણમી શકે છે.

સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્ય સ્વરૂપમ્—

યસ્ય કર્મણઃ પ્રભાવાત્ જીવાજીવાદિનવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા સમુત્પદ્યતે તત્ સમ્યક્ત્વ-મોહનીયમ્ । યથા—ઉપનેત્રં નેત્રાવરકં સદપિ દૃષ્ટિ ન પ્રતિરુણદ્ધિ, તથૈવ સમ્યક્ત્વમોહનીયમાવરણસ્વરૂપમપિ સદ્ વિશુદ્ધત્વાત્ તત્ત્વાત્ શ્રદ્ધાનં નહિ વિઘાતયતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મત એવ નવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા ભવતીતિ સિદ્ધમ્ ।

અપૂર્વકરણાધ્યવસાયેન યસ્ય મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુન્નસ્ય મિથ્યાત્વસ્વભાવોઽપનીતઃ સ શોધિતમિથ્યાત્વપુદ્ગલપુન્નઃ, સ એવ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપસ્ય જીવપરિણામસ્યાનાવરકત્વાદુપચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

સમ્યક્ત્વમોહનીયકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ—જિસ કર્મકે પ્રભાવ સે જીવાદિક નૌ તત્ત્વોં મેં જીવકો શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ઉસકા નામ સમ્યક્ત્વમોહનીય હૈ । જિસ પ્રકાર ચક્ષુમા નેત્રોંકા પ્રતિબન્ધક હોતા હુઆ ભી પદાર્થોં કે દેખને મેં દૃષ્ટિકા વિઘાત નહીં કરતા, ઉસી પ્રકાર યહ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ યદ્યપિ મિથ્યાત્વકા અંશ હોને સે આવરણ સ્વરૂપ હૈ તો ભી ઉસકા શોધિત અંશ હોને કી વજહ સે વિશુદ્ધ હૈ, હસલિયે વહ તત્ત્વ-શ્રદ્ધાન કા વિઘાતક નહીં હોતા હૈ । જીવ કો નવ તત્ત્વોં મેં શ્રદ્ધા હસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કે દ્વારા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । યદ્યપિ યહ મિથ્યાત્વ કા હી અંશ હૈ તો ભી શ્રદ્ધા કા વિઘાતક નહીં હૈ, કારણ કિ અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ હસમેં સે શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશ કો, કિ જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ સ્વભાવ હૈ; દૂર કર દેતા હૈ । યહ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

સમ્યક્ત્વ મોહનીયનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે—

સમ્યક્ત્વમોહનીયનું સ્વરૂપ—જે કર્મના પ્રભાવથી જીવાદિક નવ તત્ત્વોમાં જીવને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ સમ્યક્ત્વમોહનીય છે. જેવી રીતે ચક્ષુમા નેત્રોના પ્રતિબંધક હોવા છતાં પણ પદાર્થોના દેખવામાં દૃષ્ટિનો વિઘાત નથી કરતાં તેમ આ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ જો કે મિથ્યાત્વનો અંશ હોવાથી આવરણસ્વરૂપ છે તો પણ તેના શોધિત અંશ હોવાથી વિશુદ્ધ છે, તેથી તે તત્ત્વ-શ્રદ્ધાનનો વિઘાતક નથી થતો. જીવને નવતત્ત્વોમાં શ્રદ્ધા આ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે, જો કે આ મિથ્યાત્વનો જ અંશ છે તો પણ શ્રદ્ધાનો વિઘાતક નથી. કારણ કે અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ આમાંથી શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશોને જેનું બીજું નામ મિથ્યાત્વ-સ્વભાવ છે તેને દૂર કરે છે આ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

યથા—સતુષકોદ્રવા ભક્ષણેન માદકા ભવન્તિ, ત એવ યદ્યપનીતતુપાસ્તકાદિના શોધિતાસ્તર્હિ મદં ન જનયન્તિ, તથા મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલાઃ જીવં હિતાહિત-જ્ઞાનરહિતં કુર્વન્તિ । તત્ર દ્વિસ્થાનકાદિશ્વતુઃસ્થાનકાન્તઃ સર્વઘાતી રસસ્તિષ્ઠતિ । યદિ સ્વક્રીયવિશુદ્ધપરિણામવલાત્તેષાં સર્વઘાતિરૂપં રસં ક્ષપયતિ, તદા સ્વાભાવિકસ્યૈકસ્થાનકરસસ્ય સદ્ભાવે મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલા એવ સમ્યક્ત્વમોહનીયા ઉચ્યન્તે । વિશોધિતત્વાદિદં કર્મ તત્ત્વરુચિરૂપસમ્યક્ત્વં ન પ્રતિરોધયતિ, પરં ત્વે-તત્કર્મોદયાદાત્મસ્વભાવરૂપમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં ચ ન પ્રાદુર્ભવતિ, સૂક્ષ્મતત્ત્વસમાલોચનાયાં શઙ્કાશ્ચોત્તિષ્ઠન્તિ, યતઃ સમ્યક્ત્વે માલિન્યમુપજાયતે । અસ્માદેવ દોષાદેતત્ કર્મ સમ્યક્ત્વમોહનીયં વ્યપદિશ્યતે ।

હૈ । યહી શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુજ્ઞ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવકે પરિણામ કા અનાવારક હોને કી વજહ સે કારણ મેં કાર્યકે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ ।

જૈસે—સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) યાને પર માદકતા ઉત્પન્ન કરતે હૈં; પરન્તુ જવ વે હી કોદ્રવ નિસ્તુષ કર દિયે જાતે હૈં ઔર તત્ક (છાગ) વગૈરહ કે દ્વારા ઉનકા માદક અંશ દૂર કર દિયા જાતા હૈ તવ ઉનમેં સે માદકશક્તિકા અભાવ હો જાતા હૈ ઔર યાને પર ફિર વે માદકતા પૈદા નહીં કરતે । ઠીક હસી તરહ સે યહ મિથ્યાત્વમોહનીય જવ તક અશોધિત અવસ્થા મેં રહતા હૈ તમી તક જીવ કો હિતાહિત-વિવેકસે શૂન્ય કરતા રહતા હૈ; ક્યોં કિ હસમેં દ્વિસ્થાન સે લેકર ચતુઃ-સ્થાન તક ચાલા સર્વઘાતી રસ રહતા હૈ । પરન્તુ જ્યોં હી હસમેં સે સર્વ-ઘાતી રસ કા ક્ષય હો જાતા હૈ ત્યોં હી યહ શુદ્ધ અવસ્થાવાલા પુજ્ઞ કહ-

છે. આ જ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવના પરિણામનો અનાવારક હોવાથી કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવાય છે.

જેમ સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાવાથી માદકતા ઉત્પન્ન કરે છે; પરન્તુ બ્યારે તે જ કોદ્રવ નિસ્તુષ કરી દેવામાં આવે છે અને તક (છાગ) વિગેરે દ્વારા તેનો માદક અંશ દૂર કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંથી માદક શક્તિનો અભાવ થઈ જાય છે, અને ખાવાથી ફરી તે માદકતા પેદા કરતું નથી. ઠીક આ પ્રકારે આ મિથ્યાત્વમોહનીય બ્યાં મુધી અશોધિત અવસ્થામાં રહે છે ત્યાં મુધી જીવને હિતાહિતવિવેકથી શૂન્ય કરતું રહે છે, કારણ કે આમાં દ્વિસ્થાનથી લઈને ત્રાસ્થાનવાળા સર્વઘાતી રસ રહે છે, પરંતુ બ્યારે જ તેમાંથી સર્વઘાતી રસનો ક્ષય થઈ જાય છે. ત્યારે જ શુદ્ધ અવસ્થાવાળા પુંજ

लाने लगता है। मिथ्यात्वप्रकृति यह सर्वधातिप्रकृति है। इसमें बहुत भाग सर्वधातिरस है और शेष एक भाग देशधातिरस है। कर्मा में मन्द, तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम इस प्रकारकी चार शक्तिरूप रस रहता है। इनमेंसे इस मिथ्यात्व कर्म में तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम ये तीन शक्तियां—जिन्हें सर्वधातिरस कहा गया है—हैं। यदि कोई भव्य जीव अपने विशुद्ध परिणामके बलसे इसमें से इन तीन शक्तिरूप सर्वधातिरसका क्षय कर देता है तो उसमें स्वभावतः एक स्थानक रसका ही सद्भाव रहता है। इस परिस्थिति में मिथ्यात्वमोहनीय का नामान्तर ही सम्यक्त्वमोहनीय हो जाता है। शुद्ध होनेसे यह कर्म यद्यपि तत्त्व-रुचिरूप सम्यक्त्व का प्रतिरोधक नहीं होता है तो भी इसके सद्भाव में एक तो आत्मस्वभावरूप औपशमिकसम्यक्त्व, एवं क्षायिकसम्यक्त्व का प्रादुर्भाव नहीं होता, दूसरे इसके अस्तित्व में सूक्ष्म तत्त्व की गवेषणा करते समय शङ्काओंका भी उत्थान हो जाया करता है; जिससे समकित में मलिनता आ जाती है। इसी दोषकी वजहसे इस कर्मकी “सम्यक्त्वमोहनीय” यह संज्ञा पड़ी है।

કહેવામાં આવે છે. મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ એ સર્વધાતિ પ્રકૃતિ છે. એમાં ઘણો ભાગ સર્વધાતિ રસ છે અને શેષ એક ભાગ દેશધાતિ રસ છે. કર્મોમાં મદ, તીવ્ર, તીવ્ર-તર અને તીવ્રતમ, આ પ્રકારની ચાર શક્તિરૂપ રસ રહે છે. એમાંથી આ મિથ્યાત્વ કર્મમાં તીવ્ર, તીવ્રતર અને તીવ્રતમ, એ ત્રણ શક્તિઓ—જેને સર્વ-ધાતિ રસ કહેવામાં આવે છે—રહે છે. જો કોઈ ભવ્ય જીવ પોતાના વિશુદ્ધ પરિણામના બળથી એમાંથી આ ત્રણ શક્તિરૂપ સર્વધાતિ રસનો ક્ષય કરી દે છે તો તેમાં સ્વભાવતઃ એક સ્થાનક રસનો જ સદ્ભાવ રહે છે આ પરિસ્થિતિમાં મિથ્યા-ત્વમોહનીયનું નામાન્તર જ સમ્યક્ત્વમોહનીય થઈ જાય છે. શુદ્ધ હોવાથી તે કર્મ જો કે તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વનું પ્રતિરોધક નથી થતું તો પણ એના સદ્ભાવમાં એક તો આત્મસ્વભાવરૂપ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ અને ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વનો પ્રાદુર્ભાવ નથી થતો, બીજું એના અસ્તિત્વમાં સૂક્ષ્મ તત્ત્વોની ગવેષણા કરતી સમય શંકાઓની પણ ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે; જેથી સમ્યક્ત્વમાં મલિનતા આવી જાય છે. આ દોષના કારણથી આ કર્મની “સમ્યક્ત્વમોહનીય” એ સંજ્ઞા પડી છે.

॥ મિશ્રમોહનીયમ્ ॥

येषां केचिदंशः सतुषाः केचिद् विशुद्धास्तैः कोद्रवैः साम्यं मिश्रमोहनीय-
पुद्गलानाम् । एतत्कर्मोदयात्तत्त्वरुचिर्नोत्पद्यते, न चातत्त्वरुचिरपि । मिश्रमोहनीय-
कर्मपुद्गलेषु द्विस्थानको रसः सर्वधाती विद्यते ।

॥ मिथ्यात्वमोहनीयम् ॥

सतुषकोद्रवसमा मिथ्यात्वमोहनीयपुद्गलाः, तस्मादेतत्कर्मोदयाज्जीवो हितम-
हितरूपेण जानाति, हितरूपेण चाहितमपि । मिथ्यात्वमोहनीयकर्मपुद्गलेषु चतु-
स्थानकस्त्रिस्थानको द्विस्थानकश्च रसो भवति ।

મિશ્રમોહનીય—

જિન કોદ્રવોં કા કુઢેક અંશ સતુષ હૈં ઔર કુઢેક અંશ નિસ્તુષ હૈં, ઉન કોદ્રવોં કે સાથ મિશ્રમોહનીય કે પુદ્ગલોં કી સમાનતા જાનના ચા-
હિયે । ઇસ કર્મ કે ઉદયસે ન તો તત્ત્વરુચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈં,
ઔર ન અતત્ત્વરુચિ મિથ્યાત્વ હી । ઇસ કર્મ કે પુદ્ગલોં મેં સર્વધાતિરસ
કા દ્વિતીય (તીવ્રતર) અંશ હૈં ।

મિથ્યાત્વમોહનીય—

સતુષ કોદ્રવોં કે સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીય કે પુદ્ગલ હૈં । ઇસ
કર્મ કે ઉદય સે જીવ અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી ઔર હિતકારી
પદાર્થોં કો અહિતકારી માનતા રહતા હૈં । ઇસ કર્મ કે પુદ્ગલોં મેં ચતુ-
સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક ઔર દ્વિસ્થાનક રસ રહતા હૈં ।

મિશ્રમોહનીય —

એ કોદ્રવોના કોઈ કોઈ અંશ સતુષ છે અને કોઈ કોઈ અંશ નિસ્તુષ
છે, એ કોદ્રવોની સાથે મિશ્રમોહનીયના પુદ્ગલોની સમાનતા સમજવી જોઈએ. આ
કર્મના ઉદયથી નથી તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થતું અને નથી અતત્ત્વરૂચિ
રૂપ મિથ્યાત્વજ. આ કર્મના પુદ્ગલોમાં સર્વધાતિ રસનો બીજો (તીવ્રતર) અંશ છે.

મિથ્યાત્વમોહનીય—

સતુષ કોદ્રવોના સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીયના પુદ્ગલો છે. આ કર્મના
ઉદયથી છવ અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી, અને હિતકારી પદાર્થોને અહિતકારી
માનતો રહે છે. આ કર્મના પુદ્ગલોમાં ચતુસ્થાનક, ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિ-
સ્થાનક રસ રહે છે.

एकस्य चतुर्थांशश्चतुःस्थानकः, तृतीयांशत्रिस्थानकः, द्वितीयांशो द्विस्थानक उच्यते । यश्च रसः स्वाभाविकः स एकस्थानक इति बोध्यम् । शुभाशुभफलप्रदा कर्मणां तीव्रतमा शक्तिश्चतुःस्थानकरसः, तथा तीव्रतरा शक्तिस्त्रिस्थानकरसः, तीव्रा शक्तिर्द्विस्थानकरसोऽवगन्तव्यः । मन्दशक्तिस्त्वेकस्थानको रस इत्यन्यत्र विस्तरः ।

अथैतेषां त्रिविधानां पुद्गलानां किं परस्परं संक्रमो भवति, किं वा न ? उच्यते- भवतीति । प्रवर्धमानपरिणामः सम्यग्दृष्टिः मिथ्यात्वदलिकात् पुद्गलानाकृष्य मिश्रे सम्यक्त्वे च संक्रमयति । मिश्रपुद्गलानां संक्रमो द्वयोर्भवति-सम्यक्त्वे

एक रस का चतुर्थांश चतुःस्थानक, तृतीय अंश त्रिस्थानक, और द्वितीय अंश द्विस्थानक होता है । अर्थात् शुभ और अशुभरूप अपने-२ फल देनेवाले प्रत्येक कर्मों के तीव्रतम अंश की चतुःस्थानक, तीव्रतर अंश की त्रिस्थानक और द्वितीय तीव्र अंश की द्विस्थानक एवं प्रथम मन्द अंश की एक स्थानक संज्ञा है । प्रथम अंश स्वाभाविक है । इसीलिये उसे एक स्थानक कहा है । इस विषयका खुलासा अन्य शास्त्रों में विस्तार से किया गया है ।

प्रश्न—इन तीन प्रकार के पुद्गलों का परस्पर में संक्रमण होता है या नहीं ?

उत्तर—हां, होता है । जिसका अध्यवसाय अहर्निश वृद्धिगत हो रहा है ऐसा सम्यक्त्वी जीव मिथ्यात्वके दलिये से पुद्गलपुञ्जको खींच कर मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति के पुद्गलपुञ्जोंमें उन्हें संक्रमित करता है । मिश्रप्रकृति के पुद्गलोंका संक्रमण मिथ्यात्व और सम्यक्त्व, इन दोनों प्रकृतियों में होता है । प्रवर्धमानपरिणामवाला सम्यग्दृष्टि जीव

એક રસનો ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અંશ ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિતીય અંશ દ્વિસ્થાનક હોય છે. અર્થાત્ શુભ અને અશુભ-૩૫ પોતાપોતાનાં ફળ દેવાવાળાં પ્રત્યેક કર્મોની તીવ્રતમ અંશની ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અંશની ત્રિસ્થાનક અને દ્વિતીય તીવ્ર અંશની દ્વિસ્થાનક અને પ્રથમ મંદ અંશની એકસ્થાનક સંજ્ઞા છે. પ્રથમ અંશ સ્વાભાવિક છે, તેથી તેને એક સ્થાનક કહે છે આ વિષયનો ખુલાસો ખીજા શાસ્ત્રોમાં વિસ્તારથી આપ્યો છે.

પ્રશ્ન—આ ત્રણ પ્રકારના પુદ્ગલોના પરસ્પરમાં સંક્રમણ થાય છે કે નહિ ?

ઉત્તર—હાં, થાય છે. જેનો અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત થતો રહે છે એવો સમ્યક્ત્વી જીવ મિથ્યાત્વના દલિયાથી પુદ્ગલપુંજને ખેંચીને મિશ્ર અને સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના પુદ્ગલ પુંજોમાં એને સંક્રમિત કરે છે. મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલોના સંક્રમણ મિથ્યાત્વ અને સમ્યક્ત્વ, એ બે પ્રકૃતિઓમાં થાય છે. પ્રવર્ધમાન

મિથ્યાત્વે ચ । તત્ર પ્રવર્ધમાનપરિણામઃ સમ્યગ્દષ્ટિર્મિશ્રપુદ્ગલાન્ સમ્યક્ત્વે સંક્રમયતિ, મિથ્યાદષ્ટિસ્તુ તાન્ મિથ્યાત્વે । સ ચ સમ્યક્ત્વદલિકાત્ પુદ્ગલાન્ આકૃણ્ય મિથ્યાત્વ એવ સંક્રમયતિ, ન તુ મિથ્રે । તસ્ય સમ્યક્ત્વશંભાવાત્ ।

સમ્યગ્દર્શનપ્રાપ્તૌ સત્યાં હીયમાનપરિણામસ્તુ મિશ્રપુદ્ગલાન્ મિથ્યાત્વપુદ્ગલાંશ્ચ ન સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્ કરોતિ, ન ચ તસ્ય કેચિદન્યે શોધિતપુદ્ગલાઃ સન્તિ, યાન્ સંપ્રતિ પ્રસ્તુતસમ્યક્ત્વપુણ્નિષ્ઠાકાલે વેદયેત્ । તતઃ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનામન્તિમગ્રાસં વેદયિત્વા પૂર્વ લબ્ધસમ્યક્ત્વોઽપિ પશ્ચાન્મિથ્યાત્વમેવ સંક્રામતિ ।

મિશ્રપ્રકૃતિ સે મિશ્રપુદ્ગલપુણ્ન કો સ્વીચ કર સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે સ્વપ્ને, ઔર મિથ્યાદષ્ટિ જીવ ઁન્હીં પુદ્ગલોં કો મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે સ્વપ્ને પરિણમાતા હૈ । તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે દલિયે સે પુદ્ગલોં કો લેલે કર વહી મિથ્યાદષ્ટિ જીવ મિથ્યાત્વ મેં હી ઁનકા સંક્રમણ કિયા કરતા હૈ, મિશ્રમેં નહીં; કારણ કિ ઁસકે સમ્યક્ત્વકા અંશ હી નહીં હૈ ।

સમ્યગ્દર્શન કી પ્રાપ્તિ હોને પર હી જિસકા પરિણામ હીયમાન હૈ એસા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા, એવ મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંકા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંમેં સંક્રમણ નહીં કરતા; કારણ કિ ઁસકે નિકટ દૂસરે કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નહીં હૈ કિ જિન્હેં વહ વર્તમાન મેં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોંકે સમાપ્તિ કાલ મેં વેદન કર સકે । હસલિયે વહ જીવ યદ્યપિ લબ્ધસમ્યક્ત્વ હૈ તો હી હીયમાનપરિણામવાલા હોને સે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે અન્તિમ ગ્રાસ કા વેદન કર પીછે સે મિથ્યાત્વ મેં હી સંક્રમણ કરતા હૈ ।

પરિણામવાળા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિથી મિશ્ર પુદ્ગલપુંજને જોવાને સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના રૂપમાં, અને મિથ્યાદષ્ટિ જીવ તે જ પુદ્ગલોને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના રૂપમાં પરિણમાવે છે. તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દલિયાથી પુદ્ગલોને લઈ-લઈને તે મિથ્યાદષ્ટિ જીવ મિથ્યાત્વમાં જ તેનું સંક્રમણ કર્યા કરે છે, મિશ્રમાં નહિ; કારણ કે તેને સમ્યક્ત્વનો અંશ પણ નથી.

સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થતાં પણ જેના પરિણામ હીયમાન છે એવો સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું અને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેમાં સંક્રમણ નથી કરતો, કારણ કે એની નહોતી બીજી કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નથી કે જેને તે વર્તમાનમાં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોની સમાપ્તિ કાળમાં વેદન કરી શકે. તેથી તે જીવ જે કે લબ્ધસમ્યક્ત્વ છે તો પણ હીયમાન પરિણામવાળા હોવાથી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અન્તિમ ગ્રાસનો વેદન કરી પછીથી મિથ્યાત્વમાં જ સંક્રમણ કરે છે.

मिथ्यात्वपुञ्जस्य क्षयाभावे यः सम्यग्दृष्टिः स त्रिपुञ्जी, क्षीणे तु मिथ्यात्व-पुञ्जे द्विपुञ्जी, मिथ्यात्वपुञ्जस्य मिश्रपुञ्जस्य च क्षये त्वेकपुञ्जी, सम्यक्त्वपुञ्जस्यापि क्षये तु क्षायिकसम्यक्त्वी भवतीति ।

कारणवशात् सम्यक्त्वप्राप्तावष्टौ दृष्टान्ताः सन्ति । यथा—(१) गिरिनदीप्रस्तरः (२) पन्थाः, (३) ज्वरः, (४) वस्त्रम्, (५) जलम्, (६) पिपीलिका, (७) पुरुषः (८) कोद्रवश्चेति ।

(१) यथाप्रवृत्ताख्ये करणे गिरिनदीप्रस्तरदृष्टान्तः, यथा गिरिनद्यां प्रस्तर-खण्डास्तद्वेगतो घर्षणादिना वर्तुला जायन्ते, एवं यथाप्रवृत्तकरणप्रभावाद् दीर्घत-राया अपि कर्मस्थितेस्तावत् क्षपणं भवति यावता ग्रन्थिरूपः शेषोऽवतिष्ठते ।

मिथ्यात्वपुंज का जिसने क्षय नहीं किया है ऐसा जीव सम-कित की प्राप्ति होने पर त्रिपुंजी, मिथ्यात्व के क्षय होने पर द्विपुंजी, और मिथ्यात्वपुंज एवं मिश्रपुंजके क्षय होनेपर एकपुंजी (सम्यक्त्वपुंजवाला) होता है, तथा एक पुंज-सम्यक्त्वप्रकृति के क्षय होने पर क्षायिकसम्य-क्त्वी हो जाता है ।

समकितप्राप्ति में आठ दृष्टान्त हैं—(१) गिरिनदीप्रस्तर, (२) मार्ग, (३) ज्वर, (४) वस्त्र, (५) जल, (६) कीड़ी, (७) पुरुष, और ८वां कोद्रव । इनका खुलासा अर्थ इस प्रकार है—

(१) पहिला दृष्टान्त यथाप्रवृत्तिनामक करणमें है । जैसे-पर्वत ऊपरसे बहनेवाली नदीमें पत्थरों के टुकड़े उसके प्रवाह के वेगसे इधर-उधर घिसे जाकर गोल हो जाते हैं, इसीप्रकार यथाप्रवृत्तिकरण के प्रभाव से उ-त्कृष्ट भी कर्मस्थिति घटते २ इतनी कम रह जाती है जिसकी वजह से

मिथ्यात्वपुंजनो જેણે ક્ષય નથી કર્યો એવો જીવ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં ત્રિપુજી, મિથ્યાત્વનો ક્ષય થતાં દ્વિપુજી, મિથ્યાત્વપુંજ અને મિશ્રપુંજનો ક્ષય થતાં એકપુજી (સમ્યક્ત્વપુંજવાળો) થાય છે, તથા એક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો ક્ષય થતાં જ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી થઈ જાય છે.

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિમાં આઠ દૃષ્ટાન્તો છે. (૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જળ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, અને (૮) કોદ્રવ. એનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—

(૧) પહેલો દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામવાળા કરણમાં છે. જેમ પર્વતથી વહેવાવાળી નદીમાં પત્થરનો ટુકડો તેના પ્રવાહના વેગથી અહીં-તહીં ઘસડાઈ જેમ ગોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે યથાપ્રવૃત્તિકરણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી

(૨) અનિવૃત્તિકરણં સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે ભવતિ । કથં તત્ સમ્યક્ત્વં ભવતિ ?
 ઉચ્યતે—ઉપદેશતઃ સ્વયં વા । તત્ર પથિદૃષ્ટાન્તઃ—યથા કશ્ચિન્નષ્ટપથઃ પુરુષોઽન્યં
 દૃષ્ટ્વા તદુપદેશતો માર્ગમારોહતિ, કશ્ચિત્ સ્વયમેવોદ્ધાપોહં કૃત્વા, તથા કશ્ચિદાચાર્યા
 દીનામુપદેશતઃ સમ્યક્ત્વં લભતે, કશ્ચિત્ સ્વયમેવ જાતિસ્મરણાદિના ।

(૩) જ્વરદૃષ્ટાન્તોઽપ્યત્રૈવ, યથા—જ્વરિતઃ કશ્ચિદૌપધાદારોગ્યં લભતે, કશ્ચિત્ તદ્
 વિનૈવ લઘ્વનાદિના; તથાઽત્રાપિ કસ્યચિન્મિથ્યાત્વં શુર્વાદ્યુપદેશતો નશ્યતિ, કસ્ય-
 ચિત્ સ્વયમેવ તત્ત્વપર્યાલોચનતઃ ।

યહ જીવ ગ્રન્થિદેશ તક પહુંચ જાતા હૈ । અર્થાત્—હસ કરણ કે પ્રભાવ
 સે ઉત્કૃષ્ટ મ્હી કર્મસ્થિતિ ક્ષય હોતે ૨ ગ્રંથિ રૂપમેં અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વ કે સંમુખ હુએ જીવ કે અનિવૃત્તિકરણ હોતા હૈ । સમ-
 કિત્ત કી પ્રાપ્તિ કે દો ઉપાય હૈ—(૧) શુર્વાદિકકા ઉપદેશ, (૨) નિસર્ગ । યહાં
 પર માર્ગ કા દૃષ્ટાન્ત હૈ । જૈસે—કોઈ ૨ માર્ગ ભૂલા પથિક ઉસી માર્ગ પર
 ચલતે હુએ દુસરે કો દેખ કર યા ઉસસે પૂછ કર તથા કોઈ ૨ સ્વયં તર્ક-
 વિતર્ક કરકે અપને માર્ગ કી પ્રાપ્તિ કર લિયા કરતે હૈ, ઉસી તરહ કોઈ ૨
 પ્રાણી આચાર્યાદિક ગુરુઓં કે ઉપદેશ સે, ઓર કોઈ ૨ સ્વયં અપને
 આપ જાતિસ્મરણાદિક સાધનોં સે સમકિત કા લાભ કર લેતે હૈ ।

(૩) જ્વર કા દૃષ્ટાન્ત મ્હી યહીં પર ઘટિત હોતા હૈ । જૈસે—કિસી
 રોગી કા જ્વર ઓપધિ કે સેવન સે ઓર કિસી ૨ કા વિના ઓપધિ કે
 કેવલ લંઘનાદિક કરને સે શાન્ત હો જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર કિસી ૨ જીવ

કર્મસ્થિતિ ઘટતી ઘટતી એટલી ઓછી રહી જાય છે કે જેના કારણથી એ
 છવ ગ્રન્થિદેશ સુધી પહોંચી જાય છે, અર્થાત્ આ કારણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી
 કર્મસ્થિતિ ક્ષય થતાં થતા ગ્રન્થિરૂપમા અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

(૨) સમ્યક્ત્વના સંમુખ થયેલ છવને અનિવૃત્તિકરણ થાય છે. સમ્ય-
 ક્ત્વની પ્રાપ્તિના બે ઉપાયો છે—(૧) શુર્વાદિકનો ઉપદેશ, (૨) નિસર્ગ. આ ઠેકાણે
 માર્ગનો દૃષ્ટાન્ત છે. જેમ કોઈ કોઈ માર્ગભૂત્યા મુસાફર તે માર્ગ પર ચાલતાં
 બીજાને દેખીને અગર તેને પૂછીને, તથા કોઈ કોઈ સ્વયં તર્ક વિતર્ક કરીને
 પોતાના માર્ગની પ્રાપ્તિ કરી લે છે. તેવી રીતે કોઈ કોઈ પ્રાણી આચાર્યાદિક
 ગુરુઓના ઉપદેશથી અને કોઈ સ્વયં પોતે પોતાના જાતિસ્મરણાદિક સાધનોથી
 સમ્યક્ત્વનો લાભ કરી લે છે.

(૩) જ્વરનો દાખલો પણ આ ઠેકાણે ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ કોઈ રોગીને
 જ્વર ઓપધીના સેવનથી, અને કોઈ કોઈને ઓપધિ વિના લંઘનાદિક કરવાથી

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામિજીવસ્ય પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વં ભવતિ, તત્ સ્વલ્પપૂર્વકરણવશાત્ । તત્રાપૂર્વકરણેન જીવો મિથ્યાત્વદલિકં ત્રિધાં કરોતિ, તદ્વથા-(૧) મિથ્યાત્વં, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વં, (૩) સમ્યક્ત્વં ચેતિ । તત્ર (૪) વસ્ત્રં, (૫) જલં ચેતિ દૃષ્ટાન્તદ્વયમ્ । યથા કિંચિદ્ વસ્ત્રં જલં વા મલિનં ભવતિ, કિંચિદીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ શુદ્ધમ્, તથા મિથ્યાત્વદલિકમપ્યપૂર્વકરણવશાત્ કિંચિન્મિથ્યાત્વરૂપં મલિનં ભવતિ, કિંચિત્ સમ્યગ્મિથ્યાત્વરૂપમીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ સમ્યક્ત્વરૂપં શુદ્ધમ્ ।

કા મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિક કે ઉપદેશ સે, ઔર કિસી ૨ કા અપને આપ તત્ત્વોં કી પર્યાલોચના સે નષ્ટ હો જાતા હૈ ।

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે હી જીવ મિથ્યાત્વ કે (૩) તીન ભાગ કરતા હૈ—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ । યહાં પર વસ્ત્ર ઔર જલ યે દો દૃષ્ટાન્ત ઘટિત હોતે હૈ । જૈસે—કોઈ વસ્ત્ર અથવા જલ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈ, ઔર કોઈ ઉસસે કુછ કમ મલિન, ઔર કોઈ ૨ બિલ્કુલ સાફ-નિર્મલ હોતા હૈ, ઉસી તરહ સે જીવ અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે મિથ્યાત્વ કે તીન ટુકડે કર દેતા હૈ, ઉનમેં કોઈ ટુકડા બિલ્કુલ મલિન, ઔર કોઈ ટુકડા કુછ કમ મલિન, ંવં કોઈ ટુકડા બિલ્કુલ સાફ-શુદ્ધ હોતા હૈ । બિલ્કુલ મલિન ટુકડે કા નામ મિથ્યાત્વ, કુછ કમ મલિન ટુકડે કા નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, ઔર સર્વથા શુદ્ધ ટુકડે કા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

શાંત થઇ જાય છે, તે પ્રમાણે કોઈ કોઈ જીવનો મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી, અને કોઈ કોઈનો પોતાની મેળે તત્ત્વોની પર્યાલોચનાથી નષ્ટ થઇ જાય છે.

(૪-૫) તીવ્ર વિશુદ્ધ પરિણામવાળા જીવને અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી સર્વ-પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે. અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી જ જીવ મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરે છે—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ. આઠેકાણે વસ્ત્ર અને જળ, આ બે દૃષ્ટાન્ત ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ વસ્ત્ર અથવા જળ અત્યન્ત મલિન છે, અને કોઈ એનાથી ઓછું મલિન, અને કોઈ કોઈ બિલ્કુલ સાફ-નિર્મળ હોય છે, તેમજ જીવ અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરી નાંખે છે. તેમાં કોઈ ભાગ બિલ્કુલ મલિન અને કોઈ ભાગ થોડો મલિન, કોઈ ભાગ તદ્દન સાફ-શુદ્ધ હોય છે. તદ્દન મલિન ભાગનું નામ મિથ્યાત્વ, થોડા ઓછા મલિન ભાગનું નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, અને સર્વથા શુદ્ધ ભાગનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

(૬) નન્વભવ્યાઃ કથં તસ્મિન્ યથાપ્રવૃત્તિકરણેઽવતિષ્ઠન્તે, કથં વા તતઃ પ્રતિ-
પતન્તિ, ?, ભવ્યા વા ગ્રન્થિ મિત્વા કથં તતઃ પરતો ગચ્છન્તિ ?; અત્રોચ્યતે—
પિપીલિકાદૃષ્ટાન્તાત્ । તથાહિ—કાશ્વિત્ પિપીલિકા અનાભોગતો વિલા-
ન્નિસ્સૃત્ય ઇતસ્તતો ગન્તું પ્રવૃત્તાઃ, કાશ્વિદપૂર્વકરણેન વૃક્ષાદાવારુઢાઃ, તાસામપિ
મધ્યે પક્ષરહિતાસ્તત્રૈવ તિષ્ઠન્તિ, તતઃ પ્રત્યવરોહન્તિ ચ । કાશ્વિત્ પક્ષોદ્ભવેન તત
ઉડ્ડીયન્તે । ઇહ યથા પિપીલિકાનામિતસ્તતો ગમનં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન, વૃક્ષાદાવા-
રોહણમપૂર્વકરણેન, ઉડ્ડયનમનિવૃત્તિકરણેન, તથાઽત્રાપિ ગ્રન્થિદેશગમનં યથાપ્રવૃત્તિ-

(૬) અભવ્ય જીવ કૈસે યથાપ્રવૃત્તિકરણમેં સ્થિત હોતે હૈં ? ઔર કૈસે
ફિર વહાં સે ચ્યુત હો જાતે હૈં ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિ કા ભેદન કર
કૈસે ઉસસે આગે ચઢ જાતે હૈં ?, ऐसी शंका को दूर करने के लिए पिपी-
लिका-दृष्टान्त की सार्थकता है ।

જૈસે કિતનેક પિપીલિકાઈ (કીડિયાં) યૉં હી અપને ચિલસે વાહર
નિકલ કર ઢધર-ઉધર ઘુમને લગતી હૈં, ઔર इनमेंसे कितनीक पिपी-
लिकाएँ अपूर्वकरण से वृक्षादिक के ऊपर चढ़ जाती हैं । अनन्तर उनमें
पांखरहित कितनीक वहीं पर रह जाती हैं, ઔર કિતનીક વહાં સે ઉતર
આતી હૈં, ઔર કિતનીક પિપીલિકાઈં કિ જિનકે પર હોતે હૈં વે વહાંસે
ઉડ જાતી હૈં । જૈસે પિપીલિકાઈૉં કા ઢધર-ઉધર ભ્રમણ યથાપ્રવૃત્તિ-
કરણસે હોતા હૈ, વૃક્ષાદિક પર ઉનકા ચઢના અપૂર્વકરણ સે હોતા હૈ,
एवं वहां से उनका उड़ जाना अनिवृत्तिकरणसे होता है, उसी प्रकार
जीवका ग्रन्थिदेश तक जाना-यथाप्रवृत्तिकरणके द्वारा होता है, ग्रन्थिका

(૬) અભવ્ય જીવ કેવીરીતે યથાપ્રવૃત્તિકરણ કરે છે ? અને કેવી રીતે
પક્ષી ત્યાંથી પતિત થઈ નાથ છે ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિનુ ભેદન કરીને કેવી
રીતે એનાથી આગળ વધી નાથ છે ? આવી શંકાને દૂર કરવાને માટે પિપીલિકા
ઓ (કીડીઓ)ના દૃષ્ટાન્તની સાર્થકતા છે. જેમ કેટલીક પિપીલિકાઓ (કીડીઓ)
એમજ પોતાના ઘરથી બાહર નિકળીને અહીંતહીં ફરવા લાગે છે, અને તેઓમાંથી
કેટલીક કીડીઓ વૃક્ષાદિકની ઉપર ચઢી નાથ છે. બાદમાં તેઓમાંથી પાંખરહિત
કેટલીક કીડીઓ ત્યાં જ રહી નાથ છે, અને કેટલીક કીડીઓ ત્યાંથી ઉતરી આવે
છે, તથા કેટલીક કીડીઓ-કે જેઓ પાંખસહિત હોય છે તેઓ ત્યાંથી ઉડી નાથ
છે. જેમ કીડીઓનુ અહીંતહીં ફરવું યથાપ્રવૃત્તિકરણથી થાય છે, વૃક્ષાદિકની ઉપર
તેઓનુ ચઢવું અપૂર્વકરણથી થાય છે, અને ત્યાંથી તેઓનુ ઉડવું અનિવૃત્તિકરણથી
થાય છે; તે જ પ્રમાણે જીવનું ગ્રન્થિદેશ સુધી જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા થાય

કરણેન, ગ્રન્થિભેદનમપૂર્વકરણેન, સમ્યક્ત્વમનિવૃત્તિકરણેન । પક્ષરહિતાસ્તુ યથા વૃક્ષાદૌ સ્થિતાસ્તતઃ પ્રત્યવરોહન્તિ, તથાઽધ્યવસાયસ્ય માન્દ્યાત્ કોઽપિ તીવ્રવિશોધિ-રહિતોઽપૂર્વકરણેન ગ્રન્થિભેદં કર્તુમુદ્યતોઽપિ તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામોદયાત્ તત્રૈવ તિષ્ઠતિ, પશ્ચાત્ તત એવ પરાવર્તતે ।

(૭) અત્રૈવ પુરુષદૃષ્ટાન્તોઽપિ—યથા ત્રયો મનુષ્યાઃ મયક્કરં પન્થાનં મયેન ગચ્છન્તઃ સાયંકાલે સમાગતે ત્વરમાણા વ્રજન્તિ । અત્રાન્તરે ચ્વડ્ગહસ્તૌ દ્વૌ ચૌરૌ પાર્શ્વદ્વયતઃ સંપ્રાપ્નોતૌતૌચૈવમાક્ષિપતઃ—“ક્વ ગચ્છથ યૂયં ? યુષ્માકમિદાનીં મરણં ભેદન કરના યહ અપૂર્વકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ, ઓર સમકિત કી પ્રાપ્તિ કરના યહ અનિવૃત્તિકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ । પક્ષરહિત પિપીલિકાઈ જેસે વૃક્ષાદિક પર ચઢ કર વહાં સે ફિર ઉતરતી હૈં ડસી પ્રકાર અધ્યવ-સાય કી મન્દતાસે જીવ મી તીવ્રવિશુદ્ધિસમ્પન્ન પરિણામ કે વિના અપૂર્વકરણ કે દ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરનેમ્ ઉદ્યત હોતા હુઆ મી તીવ્ર રાગ-દ્વેષ પરિણામકે ઉદયસે વહીં પર ઠહર જાતા હૈ ઓર પીછે વહાં સે લૌટ આતા હૈ; આગે નહીં બઢ સકતા ।

(૭) યહીં પર પુરુષકા દૃષ્ટાન્ત મી લાગૂ પડતા હૈ । જેસે ત્રીન મનુષ્ય મય સે સંત્રસ્ત હો વિકટ માર્ગ સે જાતે હુએ સાયંકાલ કે સમય અપને સ્થાનકી ઓર વહુત હી શીઘ્રતાસે આગે બઢ રહે થે, ઇનમ્ સે એકકે પાસ હી તલવાર થી । ઇસી સમય તલવાર લિયે હુએ દો ચોર મી જો ઇનકે પીછે લગે હુએ થે, વે ડનકે સામને આ કર બોલે—‘તુમ લોગ કહાં જાતે હો ? જો કુછ હો હમ્ દે દો, નહીં તો તુમ્હારી ઇસ સમય મૃત્યુ નિકટ

છે. ગ્રન્થિનું ભેદન કરવું, તે અપૂર્વકરણદ્વારા થાય છે, અને સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવી તે અનિવૃત્તિકરણ દ્વારા થાય છે. પાંખરહિત કીડિઓ જેમ વૃક્ષાદિની ઉપર ચઢીને ઉતરે છે. તે પ્રમાણે અધ્યવસાયની મન્દતાથી જીવ પણ તીવ્ર વિશુદ્ધ-સંપન્ન પરિણામના અભાવે અપૂર્વકરણદ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરવામાં તૈયાર હોવા છતાં પણ તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામના ઉદયથી ત્યાં જ રોકાઈ જાય છે અને પછી ત્યાંથી ફરી આવે છે અને આગળ વધી શકતાં નથી.

(૭) એ જ ઠેકાણે પુરુષનો દૃષ્ટાન્ત પણ લાગુ પડે છે જેમ—સાયંકાળની વખત વિકટ માર્ગથી જતાં ત્રણ મનુષ્ય લયથી ડુઃખી હતા, અને પોતાના સ્થાનની તરફ ઘણી જ શીઘ્રતાથી આગળ વધી રહ્યા હતા તેમાં એકની પાસે તલવાર હતી. આ વખતે તલવારવાળા બે ચોર જે તેમની પછવાડે પડ્યાં હતાં તે એમની સામે આવી ખોટ્યા ‘—તમે લોક કયાં જાઓ છો ? તમારી પાસે જે હોય

સમાયાતમ્ ” ઇતિ । તત્રૈકઃ પુરુષસ્તૌ સમાપતન્તૌ ત્રિલોક્ય પ્રથમત એવ નિવૃત્તઃ, દ્વિતીયસ્તદ્વાક્યશ્રવણેન સ્વદ્ગદર્શનેન ચ સંજાતભયસ્તત્રૈવ સ્થિતઃ, તૃતીયસ્તુ પરમ-સાહસિકઃ પ્રકટીકૃતકૃપાણસ્તૌ દ્વાવપિ ચૌરૌ પથ્થાત્કૃત્ય તત્ સ્થાનમતિક્રાન્તઃ ।

इह त्रयाणामपि या प्रथमतः क्रमेण गतिः सा यथाप्रवृत्तिकरणम्, यत्तु तद्भयं तदपूर्वकरणम्, यच्च तौ पराजित्य तत्परतो गमनं तत् तृतीयमनिवृत्तिकरणं द्रष्टव्यम् । यच्च ततः पलायनं तत् पतनम् ।

(૮) અપૂર્વકરણેન મિથ્યાત્વં ત્રિધા કરોતીતિ યદુક્તં તત્ર કોદ્રવદ્દષ્ટાન્તઃ । સ નુ પ્રાગેવ નિરૂપિતઃ ।

है' यह सुनते ही उनमें से एक पुरुष तो पहिले से ही कहीं भाग गया । दूसरा उनकी बात सुन कर और तलवार देख कर वहीं पर चुपचाप खड़ा रह गया । तीसरेने जो परमसाहसी था अपनी तलवार निकाल कर उनका सामना किया और उन्हें परास्त कर आगे बढ़ गया । यहां तीनों का गमन करना यह यथाप्रवृत्तिकरण के, तथा उनमें से दूसरे का भयान्वित हो कर वहीं पर खड़े रहना यह अपूर्वकरणके और तीसरे का चोरोंको परास्त कर आगे बढ़ना यह अनिवृत्तिकरणके स्थानापन्न समझना चाहिए । तथा भागना यह पतन का स्थानापन्न है ।

(૮) અપૂર્વકરણ-પરિણામ કે ધારા યહ જીવ જો મિથ્યાત્વકે ત્રીન સ્વપ્ન કરતા હૈં વહાં પર કોદ્રવ્ય કા દૃષ્ટાન્ત લાગુ પડતા હૈં । ઇસ દૃષ્ટાન્ત કા સમન્વય પહિલે કિયા જા ચુકા હૈં ।

તે અમોને આપી ઘો, નહિ તો તમારો મોત આ વખતે નજીક છે' આ સાંભળતાં જ તેમાંથી એક પુરુષ તો પહેલેથી જ ક્યાંક ભાગી ગયો, બીજો તેમની વાત સાંભળી અને તલવાર દેખીને ચુપચાપ ઉભો રહ્યો, ત્રીજો જે ઘણો સાહસિક હતો તેણે પોતાની તલવાર કાઢીને સામે ધધ ગયો અને તેમને ભગાડીને આગળ વધી ગયો

આ ઠેકાણે ત્રણેનું જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણનું, તથા આમાંથી બીજાનું ભયભીત થઈ ત્યાં રોકાઈ જવું તે અપૂર્વકરણનું, અને ત્રીજાનું ચોરાને હરાવીને આગળ વધવું તે અનિવૃત્તિકરણનું સ્થાનાપન્ન સમજવું જોઈએ. જે ભાગવું તે પતનનું સ્થાનાપન્ન છે

(૮) અપૂર્વકરણ પરિણામ દ્વારા આ જીવ જે મિથ્યાત્વના ત્રણ ખંડ કરે છે ત્યાં કોદ્રવ્યનો દૃષ્ટાન્ત લાગુ પડે છે. આ દૃષ્ટાન્તનો સમન્વય પહેલાં જ કહેવામાં આવ્યો છે.

અર્હતધર્મ એવ શ્રદ્ધેય ઇતિ બોધયિતું શ્રીસુધર્માસ્વામી કથયતિ-‘સે વેમિ’
 ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે વેમિ, જે અર્હયા જે ય પહુપ્પન્ના જે ય આગમિ-
 સ્સા અરહંતા ભગવંતો તે સઠ્ઠેવિ એવમાઙ્કલંતિ એવં ભાસંતિ
 એવં પળ્લવિંતિ એવં પરૂવિંતિ--સઠ્ઠે પાળા સઠ્ઠે ભૂયા સઠ્ઠે
 જીવા સઠ્ઠે સત્તા ન હંતઠ્ઠા, ન અજ્જાવેયઠ્ઠા, ન પરિઘેત્તઠ્ઠા,
 ન પરિયાવેયઠ્ઠા, ન ઉદ્ધવેયઠ્ઠા ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—તદ્ બ્રવીમિ, યે અતીતા યે ચ પ્રત્યુપન્નાઃ યે ચાગમિષ્યન્તઃ અર્હન્તો
 ભગવન્તસ્તે સર્વેઽપિ એવમાખ્યાન્તિ, એવં ભાષન્તે, એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ, એવં પ્રરૂપયન્તિ—
 સર્વે પ્રાણાઃ સર્વે ભૂતાઃ સર્વે જીવાઃ સર્વે સત્ત્વાઃ ન હન્તવ્યાઃ, ન આજ્ઞાપયિતવ્યાઃ,
 ન પરિગ્રહીતવ્યાઃ, ન પરિતાપયિતવ્યાઃ, નાપદ્રાવયિતવ્યાઃ ॥ સૂ૦ ॥ ૧ ॥

તીર્થકરૈર્ગણધરૈશ્ચ સ્વસ્વશિષ્યેભ્યો યત્ સમ્યક્ત્વમુક્તં તદહં બ્રવીમિ=કથયામિ ।
 યદ્વા-‘સે’ ઇત્યસ્ય સ ઇતિ-છાયા । યેન મયા ભગવતઃ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિન-
 સ્તીર્થકરસ્ય સકાશે તદ્વચનેન તત્ત્વજ્ઞાનં લબ્ધં, સોઽહં બ્રવીમિ । ભગવદુક્તમેવાર્થ
 કથયામિ, તસ્માન્મમ વાક્યં શ્રદ્ધેયમિતિ ભાવઃ ।

અર્હન્ત પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મ હી શ્રદ્ધા કરનેકે યોગ્ય હૈ । હસ
 વાતકા પ્રતિબોધ કરાનેકે લિયે શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈ—
 —‘સે વેમિ’ ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! તીર્થઢ્ઢરોં ને એવં ગણધરાદિકોં ને અપને ૨ શિષ્યોંકે લિયે
 જિસ સમ્યક્ત્વકા ઉપદેશ દિયા હૈ ડસી સમ્યક્ત્વકા મૈં વ્યાખ્યાન કરતા
 હૂં । અથવા ભગવાન શ્રીવર્ધમાન તીર્થઢ્ઢર કે નિકટ જો ડનકે વચનોંદ્વારા
 સુના હૈ, વહી મૈં કહતા હૂં, કિન્તુ અપની તર્ફસે કુછ ભી નહીં કહતા હૂં ।

‘અર્હત પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મ જ શ્રદ્ધા કરવાયોગ્ય છે’ આ વાતનો
 પ્રતિબોધ કરવાને માટે શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે-‘સે વેમિ’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! તીર્થકરોએ તેમ જ ગણધરાદિકોએ પોતપોતાના શિષ્યોને માટે
 જે સમ્યક્ત્વનો ઉપદેશ આપ્યો છે તે સમ્યક્ત્વનું હું પણ વ્યાખ્યાન કરું છું.
 અથવા ભગવાન શ્રી વર્ધમાન તીર્થકર પાસે તેમના વચનોથી જે સાંભળ્યું છે તે
 હું કહું છું પણ મારી તરફથી કંઈ પણ કહેતો નથી.

અતીતાઃ=અતીતકાલિકા અનન્તાઃ, એ ચ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ-પશ્ચ-
ભરતેષુ પશ્ચૈરવતેષુ પશ્ચમહાવિદેહેષુ વર્તમાનાઃ, એ ચ આગમિષ્યન્તઃ=ભવિષ્યત્કાલે
આગમિનોજન્તાઃ, તે સર્વે=અર્હન્તો ભગવન્તઃ એવં=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ, આહ્યાન્તિ=
પરપ્રશ્નાવસરે કથયન્તિ ।

અત્ર વર્તમાનગ્રહણમુપલક્ષણં, તેનાતીતાનાગતયોરપિ ગ્રહણમ્ । તથા ચ-એવમાચ-
હ્યુઃ, એવાહ્યાસ્યન્તીત્યપિ યોજનીયમ્ । એવં સર્વત્ર ક્રિયાસુ યોજનીયમ્ । તથા-
એવં ભાપન્તે=સુરનરપરિપદિ સર્વજીવાનાં સ્વસ્વભાષાપરિણામિન્યાઽર્ધમાગધ્યા
ભાષયા દ્રુવન્તિ । તથા-એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ=હેતુદૃષ્ટાન્તાદિના પ્રકર્ષેણ વોધયન્તિ । તથા
-એવં પ્રરૂપયન્તિ=તત્તદ્ભેદં પ્રદર્શ્ય પ્રકર્ષેણ નિર્ણયન્તિ ।

અતીતકાલ મેં જિતને મી અનન્ત તીર્થઢ્ઢર હુએ હેં, તથા પાંચ ભરત,
પાંચ ઁરવત ઓર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં જિતને વિદ્યમાન હેં, ઓર
ભવિષ્યત્કાલમેં જિતને મી તીર્થઢ્ઢર હોંગે ડન સવોને દૂસરોં કે પ્રદનાવસરમેં
હસી પ્રકાર સે કહા હૈ, કહતે હેં ઓર કહેંગે । યહાં પર “ આહ્યાન્તિ ”
યહ વર્તમાનકાલિક ક્રિયા હૈ, હસસે ભૂત ઓર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયા
મી સમઙ્ઢ લેના ઑહિએ । આગે મી જહાં પર વર્તમાન ક્રિયાપદકા પ્રયોગ
હો, વહાં પર ભૂત ઓર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયાપદકા ઉપલક્ષણ સે અધ્યા-
હાર કર લેના ઑહિયે ।

“ એવં ભાપન્તે ” ડન સમસ્ત તીર્થઢ્ઢર મહાપ્રભુઓંને દેવ, મનુષ્યોં
કી સભામેં અપની અર્ધમાગધી ભાષાકે ઢારા, જો ભાષા સમસ્ત જીવોંકી
ભાષામેં પરિણત હો જાતી હૈ; હસ પ્રકાર સ્પષ્ટ કહા હૈ ।

અતીતકાળમાં જેટલા પણ અનંત તીર્થઢ્ઢર થયાં છે, તથા પાંચ ભરત પાંચ ઐર-
વત અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં જેટલાં વિદ્યમાન છે, અને ભવિષ્યકાળમાં જેટલાં
પણ તીર્થઢ્ઢર થશે તે બધા બીજાના પ્રશ્નાવસરમાં આ પ્રકારથી કહ્યું છે, કહે છે
અને કહેશે. આ ઠેકાણે “ આહ્યાન્તિ ” તે વર્તમાનકાલિક ક્રિયા છે, એથી ભૂત
અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા પણ સમજી લેવી જોઈએ. આગળ પણ જે ઠેકાણે
વર્તમાનકાલિક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ છે, ત્યાં પણ ભૂત અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા-
પદનો ઉપલક્ષણથી અધ્યાહાર કરી લેવો જોઈએ.

“ એવં ભાપન્તે ” આ સમસ્ત તીર્થઢ્ઢર મહાપ્રભુઓંએ દેવ મનુષ્યોંની સભામાં
પોતાની અર્ધમાગધીભાષાદ્વારા-જે ભાષા સમસ્ત જીવોંની ભાષામાં પરિણત થઈ
જાય છે-આ પ્રકારે સ્પષ્ટ કહ્યું છે.

સર્વેર્હન્તો ભગવન્ત એવં કિમાચ્યાન્તીતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—‘સર્વે પાણા’
 ઇત્યાદિ । સર્વે=નિરવશેષાઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પૃથિવ્યાદયઃ સ્થાવરાઃ, દ્વીન્દ્રિયાદિ-
 પચ્ચેન્દ્રિયપર્યન્તાઃ ત્રસાચ્ચેત્યર્થઃ, ઇન્દ્રિયાદિપ્રાણાનાં યથાસંભવં ધારણાત્ તેષુ પ્રા-
 ણિત્વમસ્તીતિ ભાવઃ । તથા સર્વે ભૂતાઃ=ભવન્તિ ભવિષ્યન્ત્યભૂવન્નિતિ ચ ભૂતાઃ ચતુર્દશ-
 ભૂતગ્રામરૂપાઃ, તથા—સર્વે જીવાઃ=જીવન્તિ જીવિષ્યન્ત્યજીવિષુરિતિ જીવાઃ નાર-
 કતિર્યદ્મનુવ્યદેવરૂપાશ્ચતુર્ગતિકાઃ, તથા સર્વે સત્ત્વાઃ=સ્વકૃતકર્મજન્યસુખદુઃસ્વ-
 સત્તાવન્તઃ । તત્ત્વાનાં ભેદપર્યાયૈઃ પ્રતિબોધનમર્હન્તો ભગવન્તઃ કુર્વન્તીતિ કૃત્વા પર્યાયશ-
 વ્દનિર્દેશઃ । યદ્વા—સર્વપ્રાણિષુ પુનઃ પુનર્દયાભાવસમુત્પાદનાય પર્યાયશવ્દનિર્દેશઃ । ન
 હન્તવ્યાઃ=દણ્ડાદિભિર્ન તાડયિતવ્યા ઇત્યર્થઃ । નાજ્ઞાપયિતવ્યાઃ=અનભિમતકાર્યેષુ ન
 પ્રવર્તયિતવ્યાઃ, ન પરિગ્રહીતવ્યાઃ=એમે ભૃત્યાદયો મમેતિ કૃત્વા પરિગ્રહરૂપેણસ્વાધીન-
 તયા ન સ્વીકર્તવ્યાઃ, ન પરિતાપયિતવ્યાઃ=ન અન્નપાનાદ્યવરોધનેન ગ્રીષ્માતપાદૌ
 સ્થાપનેન ચ પીડનીયાઃ, નાપદ્રાવયિતવ્યાઃ=ન વિપશસ્ત્રાદિના મારયિતવ્યાઃ ॥સૂ૦ ૧॥

‘એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ’ હેતુ દૃષ્ટાન્તાદિક કે દ્વારા અચ્છી તરહ સે સમજ્ઞાયા હૈ,
 ઔર ‘એવં પ્રરૂપયન્તિ’ ભેદપ્રભેદપૂર્વક સ્પષ્ટ રીતિ સે નિર્ણય ક્રિયા હૈ ।

સમસ્ત તીર્થદ્ધરોં ને ક્યા કહા ? ઇસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા હોને પર
 ભગવાન્ કહતે હૈ—‘સર્વે પાણા’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઔર સમસ્ત સત્ત્વોં કો
 અર્થાત્ કિસી કો ખી ‘ન હંતવ્વા’ હંડે આદિ સે ન હને । ‘ન અજ્જાવે-
 યવ્વા’ ન ઇનકો મારનેકે લિયે આજ્ઞા દે । ‘ન પરિચેતવ્વા’ ‘ચે ભૃત્યાદિક
 મેરે અધીન હૈં’ એસા સમજ્ઞ કર ઉન્હેં દાસ નહીં બનાવેં । ‘ન પરિચાવેયવ્વા’
 અન્નપાની આદિ બંધ કરકે તથા ધૂપ આદિમેં રચ કર ન પીડા પહુંચાવે
 ‘ન કિલામેયવ્વા’ બન્ધનાદિ સે ન રેદ પહુંચાવે ‘ન હવેયવ્વા’ ઇનકા

‘એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ’ હેતુદૃષ્ટાન્તાદિકથી સારી રીતે સમજાવ્યું છે અને
 “ એવં પ્રરૂપયન્તિ ” ભેદપ્રભેદપૂર્વક સ્પષ્ટ રીતિથી નિર્ણય કર્યો છે

સમસ્ત તીર્થદેશોએ શું કહ્યું ? આ પ્રકારની બાણુવાની ઈચ્છા થવાથી લગ-
 વાન કહે છે—‘સર્વે પાણા’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વોને અર્થાત્ કોઈને
 પણ ‘ન હંતવ્વા’ લાકડી આદિથી ન મારે ‘ન અજ્જાવેયવ્વા’ ન મારવાને માટે આજ્ઞા
 આપે, ‘ન પરિચેતવ્વા’ ‘આ નોકરાદિ મારી આજ્ઞામા છે’ એવું સમજીને
 તેઓને દાસ ન બનાવે. ‘ન પરિચાવેયવ્વા’ અન્ન પાણી આદિ બંધ કરીને તથા
 તડકા આદિમાં રાખીને ન પીડા પહોંચાડે. ‘ન કિલામેયવ્વા’ બંધનાદિથી એક ન

વિષ શસ્ત્રાદિક સે પ્રાણવિયોગ ન કરે. પ્રાણી, ભૂત, જીવ ઓર સત્ત્વ, યે યદ્યપિ જીવ કે હી પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ, ફિર ખી ભિન્નરૂપસે જો इनका यहां पर निर्देश किया है वह पर्यायभेद मान कर ही किया है, और पर्यायभेद से अर्थभेद होता है इसलिये यहां पुनरुक्ति दोषकी संभावना नहीं है। जो इन्द्रियादિક दश प्राणोंको यथासंभव धारण करते हैं वे प्राणी कहलाते हैं। वे त्रस और स्थावरके भेद से दो प्रकारके होते हैं। द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियपर्यन्त जीव त्रस, और एकेन्द्रिय-पृथिवीकायादिक जीव स्थावर हैं। ये सब हैं, होंगे एवं हुए हैं, इसलिये भूत कहलाते हैं। ये चौदह प्रकारके हैं। ये सब जीते हैं, आगे भी जीयेंगे और भूतकाल में जीये, इसलिये इनकी 'जीव' संज्ञा सार्थक है। नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य और देवके भेदसे ये चार गतिवाले हैं। तथा ये समस्त ही अपने-कर्मोदयजन्य सुख दुःखोंकी सत्तावाले होते रहते हैं; इसलिये सत्त्व हैं।

તીર્થંકર પ્રભુ તત્ત્વોં કી વિવેચના, ભેદ ઓર પર્યાયોં કે દ્વારા કિયા કરતે હૈ, હસ કારણસે પર્યાય-શબ્દોંકા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈ। અથવા 'સર્વ જીવોં કે ઉપર અત્યંત દયા રાખની ચાહિયે' હસ વાત કો વાર વાર સમજાને કે અભિપ્રાય સે ખી હન પર્યાય શબ્દોંકા કથન હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

પહોંચાઠે. 'ન હદ્વેયઞ્ચા' વિષ શસ્ત્રાદિકથી તેના પ્રાણોનો વિયોગ ન કરે. પ્રાણી, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ, આ બધા શબ્દો જો કે જીવના જ પર્યાય શબ્દો છે તે પણ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી જોયોનો આ ઠેકાણે નિર્દેશ કર્યો છે તે પર્યાયભેદ માનીને જ કર્યો છે, અને પર્યાયભેદથી અર્થભેદ થાય છે, માટે આ ઠેકાણે પુનઃરૂક્તિ દોષની સંભાવના નથી. જે ઇન્દ્રિયાદિક દશ પ્રાણોને યથામત્ર લવ ધારણ કરે છે તે પ્રાણી કહેવાય છે તે ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી બે પ્રકારે હોય છે. બેઇન્દ્રિયથી લઈને પંચેન્દ્રિયપર્યાન્ત જીવ ત્રસ, અને એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાયાદિક જીવ સ્થાવર છે. આ બધા-છે; થશે તેમજ થએલ છે, તેથી ભૂત કહેવાય છે તે ચૌદ પ્રકારના છે. એ બધા જીવે છે આગળ પણ જીવશે અને ભૂતકાળમાં જીવ્યા તેથી તેની 'જીવ' સંજ્ઞા સાર્થક છે. નારકી, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના ભેદથી એ ચાર ગતિવાળા છે. તથા એ સમસ્ત પોતપોતાનાં કર્મોદયજન્ય સુખ દુઃખોની સત્તાવાળા હોય છે તેથી સત્ત્વ છે.

તીર્થંકરપ્રભુ તત્ત્વોની વિવેચના, ભેદ અને પર્યાયો દ્વારા કરે છે. આ ખ્યાલથી પણ પર્યાય-શબ્દોનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે. અથવા 'સર્વ જીવોની ઉપર અત્યંત દયા રાખવી જોઈએ' આ વાતને વારવાર સમજાવવાના અભિપ્રાયથી આ પર્યાય-શબ્દોનું કથન છે ॥ સૂ. ૧ ॥

સમ્યક્ત્વસુદ્ધાવયિતુમ્ આર્હતધર્મસ્ય મહિમાનમાહ—‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એસ ધમ્મે સુદ્ધે નિદ્દેસુ સાસણ સમિચ્છ લોયં સ્વેય-
ણ્ણેહિં પવેદ્દેસુ, તં જહા—ઉદ્દેસુ વા અણુદ્દેસુ વા, ઉવદ્દેસુ
વા અણુવદ્દેસુ વા, ઉવરયદંડેસુ વા અણુવરયદંડેસુ વા, સોવહિ-
ણ્ણેસુ વા અણોવહિણ્ણેસુ વા, સંજોગરણ્ણેસુ વા અસંજોગરણ્ણેસુ વા । સૂ. ૦૨ ॥

છાયા—એષ ધર્મઃ શુદ્ધઃ નિત્યઃ શાશ્વતઃ સમેત્ય લોકં સ્વેદજ્ઞૈઃ પ્રવેદિતઃ । તદ્
યથા—ઉત્થિતેષુ વા અનુત્થિતેષુ વા, ઉપસ્થિતેષુ વા અનુપસ્થિતેષુ વા, ઉપરતદ્દંડેષુ
વા અનુપરતદ્દંડેષુ વા, સોપધિકેષુ વા અનુપધિકેષુ વા, સંયોગરતેષુ વા
અસંયોગરતેષુ વા ॥ સૂ. ૦૨ ॥

ટીકા—એષઃ=અનન્તરોક્તઃ સર્વાર્હદ્ભગવત્પ્રરૂપિતઃ, ધર્મઃ=સર્વપ્રાણિપ્રાણાતિપા-
તવિરમણાદિરૂપઃ, શુદ્ધઃ=નિર્મલઃ—પાપાનુબન્ધરહિત ઇત્યર્થઃ । આર્હતધર્માદન્યસ્તુ
ધર્મત્વેન યઃ શાક્યાદેરભિમતઃ સ સ્વલ્પસર્વજ્ઞસરાગોપદિષ્ટત્વેન હિંસાદિદોષાનુબ-
ન્ધસદ્ભાવેન ચ ન શુદ્ધ ઇતિ ભાવઃ ।

સમ્યક્ત્વકા ઉદ્ધાવન કરનેકે લિયે જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત ધર્મકી મહિમા
કહતે હૈં—‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત જીવોં કે ઘાત કરનેકા નિષેધરૂપ યહી ધર્મ—જિસે સમસ્ત
તીર્થંકરોંને પ્રતિપાદિત કિયા હૈ—પાપાનુબંધ સે રહિત હોનેસે નિર્મલ હૈ,
ઈસકે અતિરિક્ત બૌદ્ધાદિકોં કા અભિમત જો સિદ્ધાન્ત હૈ વહ હિંસાદિ-
દોષવિશિષ્ટ હોનેસે નિર્મલ નહીં હૈ; યહ બાત ‘નિર્મલ’ ઇસ પદ સે પ્રકટ
હોતી હૈ । પશ્ચમહાવિદેહોં મેં સદા વર્તમાન હોને કે કારણ યહ અવિનાશી-
ધ્રૌવ્યસ્થિતિવાલા હૈ, શાશ્વતગતિ—મોક્ષકા કારણ હોનેસે, અથવા નિત્ય
હોનેસે યહ શાશ્વત હૈ, અતઃ યહી ધર્મ શ્રદ્ધા કરને યોગ્ય એવં ગ્રહણ કરને

સમ્યક્ત્વ પ્રગટ કરવા માટે જિનેન્દ્ર પ્રતિપાદિત ધર્મનો મહિમા કહે છે—
‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત જીવોના ઘાત કરવાના નિષેધરૂપ આ જ ધર્મ કે જેને સમસ્ત
તીર્થંકરોએ પ્રતિપાદિત કર્યો છે, પાપાનુબંધથી રહિત હોવાથી નિર્મળ છે. એનાથી
અતિરિક્ત બૌદ્ધાદિકોના અભિમત જે સિદ્ધાન્ત છે તે હિંસાદિદોષવિશિષ્ટ
હોવાથી નિર્મળ નથી, આ વાત “નિર્મલ” આ પદથી પ્રગટ થાય છે. પંચ-
મહાવિદેહોમા સદા વર્તમાન હોવાથી આ અવિનાશી—ધ્રુવ સ્થિતિવાળો છે. શાશ્વત-
ગતિ—મોક્ષનું કારણ હોવાથી, અથવા નિત્ય હોવાથી તે શાશ્વત છે. તેથી આ જ

અત એવૈષ નિત્યઃ=અવિનાશી, સર્વદા પશ્ચસુ મહાવિદેહેષુ સદ્ભાવાત્ । તથા શાશ્વતઃ શાશ્વતગતિકારણત્વાત્, યદ્વા-યતો નિત્યસ્તસ્માચ્છાશ્વતઃ । અયમેવ ધર્મઃ શ્રદ્ધેયો ગ્રાહ્યથેત્યત્ર હેતું પ્રદર્શયન્ વિશેષણાન્તરમાહ-‘ સમેત્ય ’ ઇત્યાદિ । લોકં= પદ્મજીવનિકાયં દુઃસ્વદાવાનલાન્તઃપતિતં, સમેત્ય=કેવલજ્ઞાનેન પ્રત્યક્ષતયા વિજ્ઞાય, સ્વેદજ્ઞૈઃ=સર્વપ્રાણિદુઃસ્વાભિજ્ઞૈસ્તીર્થકરૈઃ, પ્રવેદિતઃ=પ્રતિવોધિતઃ । ધર્મોઽયં મયા ન સ્વમનીયાકલ્પિત ઇતિ ચ મુધર્મસ્વામિના શિષ્યમુદિશ્ય સૂચિતમ્ ।

તીર્થકરાણામુપદેશો યથા ભવતિ, તં પ્રકારમાહ—તદ્ યથેત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ તત્ પ્રતિવોધિતં તત્ પ્રદર્શયામીત્યર્થઃ । ઉત્થિતેષુ વા-ઉત્થિતાઃ=ધર્માચરણાર્થમુદ્યતાઃ, તેષુ વા, તથા-અનુત્થિતેષુ=અનુત્થિતાઃ-તદ્વિપરીતાસ્તેષુ વા । ઉત્થિતાઽનુત્થિતસાધારણસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

યોગ્ય હૈ । યદ અન્ય વિશેષણોં કે દ્વારા સ્વુલાસા કરતે હુએ શ્રીસુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ-સમસ્ત જીવોં કે નાના પ્રકારકે વલેશોંકે જ્ઞાતા શ્રીતીર્થદ્ધર પ્રમુને દુઃસ્વરૂપી દાવાનલસે જલતે હુએ ઇસ પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપ લોક કો અપને કેવલજ્ઞાનસે પ્રત્યક્ષ કર ઇસી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા હૈ, અતઃ ધર્મકે આદિ પ્રવર્તક શ્રી તીર્થદ્ધર પ્રમુ હી હૈં । ઇસ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી અપને શિષ્ય જમ્બૂસ્વામીસે સૂચિત કિયા હૈ કિ મૈને અપની કલ્પના સે કુઝ બી નહીં કહા હૈ ।

અન તીર્થદ્ધરોંકા ઉપદેશ-પ્રવાહ જિસ એકરૂપસે જહાં ર વહા ડસી કો પ્રકટ કરતે હુએ શ્રીસુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ-અનકા ઉપદેશ સિર્ફ અન્હીં જીવોંકે લિયે નહીં હુઆ જો ધર્માચરણ કરનેમેં ઉત્થિત-ઉદ્યત થે, કિન્તુ જો અનુત્થિત-અનુદ્યત થે અન્હેં બી પ્રમુને ધર્મ સમજાયા, અર્થાત્

ધર્મ, શ્રદ્ધા કરવા યોગ્ય અને ગ્રહણ કરવાયોગ્ય છે, આ વાતનો અન્ય વિશેષણોંદ્વારા ખુલાસો કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે-સમસ્ત જીવોના નાના પ્રકારના કલેશોના જ્ઞાતા શ્રી તીર્થકરપ્રમુએ દુઃસ્વરૂપી દાવાનળથી જળતાં આ પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપ લોકને પોતાના કેવળજ્ઞાનથી પ્રત્યક્ષ કરીને આ જ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે. એથી આ ધર્મના આદિપ્રવર્તક શ્રી તીર્થકરપ્રમુ જ છે, આ પ્રકારે શ્રીસુધર્માસ્વામી પોતાના શિષ્ય જમ્બૂસ્વામીને સૂચિત કરે છે કે-મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કાંઈ પણ નથી કહ્યું

આ તીર્થકરોના ઉપદેશ-પ્રવાહ જે એકરૂપથી લ્યા લ્યાં થયો તેને જ પ્રકાશિત કરતાં શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે-એમનો ઉપદેશ કેવલ તેવા જીવો માટે નથી થયો કે જે ધર્માચરણ કરવામાં ઉદ્યત હતા, કિન્તુ જે જીવો ધર્માચરણ કરવામાં અનુદ્યત હતા તેમને પણ પ્રમુએ ધર્મ સમજાવ્યો. અર્થાત્ એમનો ઉપ-

યદ્વા—દ્રવ્યતઃ યે ઉત્થિતાઃ, અનુત્થિતાઃ, તેષુ તેષુ વા । યથા—ઉત્થિતેષ્વે-
કાદશસુ ગણધરેષુ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના ભગવતા ધર્મ ઉપદિષ્ટઃ । અનુત્થિતેષુ યથા
ચણ્ડકૌશિકાદિષુ । તથા—ઉપસ્થિતેષુ વા =ધર્મે શ્રોતું ગ્રહીતું વા યે વાઙ્છન્તિ
તે ઉપસ્થિતાસ્તેષુ વા, યથા ચિલાતિપુત્રાદિષુ । અનુપસ્થિતેષુ વા=તદ્વિપરીતા
અનુપસ્થિતાઃ તેષુ વા, યથા—ઇન્દ્રનાગાદિષુ, અનિચ્છયાઽપિ શ્રવણેન કર્મપરિણામ-
વૈચિત્ર્યાત્ તેષાં ક્ષયોપશમસંભવાત્, યથા રોહકચોરસ્ય ક્ષયોપશમઃ સંજાતઃ ।
ઉપસ્થિતાનુપસ્થિતેષ્વપિ સમાનસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

उनके उपदेशका प्रवाह उभयसाधारण (दोनोंके लिये समान) था । अथवा
जो जीव धर्माचरण से उस समय बाह्य भी थे, किंतु भगवानके दिव्य उप-
देशका पान कर जो सुमार्ग में आनेकी योग्यता रखते थे; उन्हें भी प्रभुने
धर्मका उपदेश दिया । जैसे—ग्यारह (११) गणधर जो द्रव्यतः उत्थित थे
उन्हें श्रीवर्धमानप्रभुने सद्धर्मका स्वरूप समझा कर सन्मार्गगामी किया ।
अनुत्थितों में भी इसी प्रकार से प्रभुके उपदेशका प्रवाह बहा है,
जैसे चण्डकौशिकादिकों में । धर्मको सुननेकी अभिलाषा रखनेवाला
चिलातिपुत्रादिकोंको, और अनुपस्थित—इससे बहिर्भूत इन्द्रनागा-
दिकों को भी प्रभुने अपने धर्मके उपदेशका पान कराया है । धर्मके
जाननेकी अभिलाषा से रहित प्राणी को भी जो धर्म सुनाया जाता
है उसका कारण यही है कि जिस प्रकार अनिच्छा से पिया हुआ
भी अमृत अपने गुण को प्रकट करता है उसी प्रकार श्रुतधर्म भी कर्म के
परिणामनकी विचित्रता से क्षयोपशम का कारण होता हुआ अपना प्रभाव

દેશપ્રવાહ બનનેને માટે સાધારણ—ગરાળર છે. અથવા જે જીવો ધર્માચરણથી
તે વળત બહાર પણ હતા, કિંતુ ભગવાનના દિવ્ય ઉપદેશનું પાન કરીને જે
સુમાર્ગમાં આવવાની યોગ્યતા રાખતા હતા, તેને પણ ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો
જેમ ગ્યારહ (૧૧) ગણધરો જે દ્રવ્યથી ઉત્થિત હતા તેઓને શ્રીવર્ધમાન પ્રભુએ
સદ્ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવીને સન્માર્ગ તરફ વાળ્યા. અનુત્થિતોમાં પણ આ પ્રકારે
પ્રભુને ઉપદેશપ્રવાહ ગાળ્યો છે, જેમ ચંડકૌશિકાદિકોમાં ઉપસ્થિત—ધર્મને
સાંભળવાની અભિલાષા રાખવાવાળા ચિલાતિપુત્રાદિકોને, અને અનુપસ્થિત—
એનાથી બહિર્ભૂત ઇન્દ્રનાગાદિકોને પણ પ્રભુએ પોતાના ધર્મના ઉપદેશનું પાન
કરાવ્યું છે ધર્મ સાંભળવાની અભિલાષાથી રહિત પ્રાણીને પણ જે ધર્મ સાંભળા-
વવામાં આવે છે તેનું કારણ એ જ છે કે જે પ્રકારે અનિચ્છાથી પિવાયેલું પણ
અમૃત પોતાના ગુણને પ્રગટ કરે છે, તે જ પ્રકારે શ્રુતધર્મ પણ કર્મના
પરિણામનની વિચિત્રતાથી ક્ષયોપશમનું કારણ થતાં પોતાનો પ્રભાવ પ્રગટ કરે છે.

તથા-ઉપરતદ્દંડેષુ વા-એકેન્દ્રિયાદીન્ પ્રાણિનો દ્વંડયતીતિ દ્વંડો મનોવા-કાયરૂપઃ, ઉપરતો દ્વંડો યેષાં તે ઉપરતદ્દંડાઃ-મુનયઃ, તેષુ વા, તદ્વિપરીતા અનુ-પરતદ્દંડાઃ-ગૃહસ્થાઃ, તેષુ વા । એતદુભયસાધારણોઽપ્યુપદેશસ્તેષામિત્યર્થઃ ।

તથા-સોપધિકેષુ વા ઇતિ । ઉપધીયતે=ગૃહ્યતે ઇત્યુપધિઃ દ્રવ્યતો હિરણ્યસુવ-ર્ણાદિઃ, ભાવતો રાગદ્વેષાદિઃ, સહોપધિના વર્તન્ત ઇતિ સોપધિકા-ભરતાદયસ્તેષુ વા । અનુપધિકેષુ વા=ન વિદ્યતે ઉપધિર્યેષાં તેઽનુપધિકાઃ-કાષ્ઠહારાદયસ્તેષુ વા । એતદ્વયેઽપિ તીર્થંકરોપદેશઃ સમાન એવ ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રકટ કરતા હૈ । હસ વિષયમેં રોહતક ચોરકા દૃષ્ટાન્ત શાસ્ત્રોં મેં પ્રસિદ્ધ હી હૈ । હસી પ્રકાર ઉપસ્થિતોં ઔર અનુપસ્થિતોં મેં, ઉપરતદંડવાલોં મેં ઔર અનુપરતદંડવાલોં મેં, સોપધિકોં મેં ઔર નિરૂપધિકોં મેં, તથા સંયોગરતોં મેં ઔર અસંયોગરતોં મેં બી પ્રમુકા ધાર્મિક ઉપદેશ એક હી સરીખા હુઆ હૈ । જો પ્રમુ કા ધાર્મિક ઉપદેશ સુનનેકી અમિલાપાસે સમવસરણ મેં આતે હૈં વે ‘ઉપસ્થિત’ કહલાતે હૈં, ઔર હસસે વિપરીત ‘અનુપસ્થિત’ । એકેન્દ્રિયા-દિક સ્થાવર ઔર હીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કી હિંસાકે કારણભૂત માન-સિક, વાચિક એવં કાયિક વ્યાપારોં સે જો નિવૃત્ત હો ચુકે હૈં વે ‘ઉપ-રતદ્દંડ’ કહે જાતે હૈં, જૈસે મુનિરાજ । હસસે ઉલ્ટે ‘અનુપરતદ્દંડ’ હૈં જૈસે ગૃહસ્થ । જો ગ્રહણ કી જાવે ઉસે ‘ઉપધિ’ કહતે હૈં । યહ દો પ્રકાર કી હૈ-એક ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’ દૂસરી ‘ભાવ-ઉપધિ’ । ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’-હિરણ્ય-સુવર્ણાદિ, ઔર ‘ભાવ-ઉપધિ’ રાગદ્વેષાદિ હૈં । હસ ઉપધિસે યુક્ત જો હોતે હૈં વે ‘સોપધિક’ જૈસે ભરતાદિક, ઔર હસ ઉપધિસે રહિત જો હૈં

આ વિષયમાં શેડનક ચોરનો દૃષ્ટાન્ત શાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ છે. આ પ્રકારે ઉપસ્થિતો અને અનુપસ્થિતોમાં, ઉપરતદંડવાળામાં અને અનુપરતદંડવાળામાં, સોપધિકોમાં અને નિરૂપધિકોમાં, તથા સંયોગરતોમાં અને અસંયોગરતોમાં પણ પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ એક જ સરળો છે. જે પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળવાની ભાવનાથી સમવસરણમાં આવે છે તેઓ ‘ઉપસ્થિત’ કહેવાય છે. અને તેનાથી વિપરીત ‘અનુપસ્થિત.’ એકેન્દ્રિયાદિક સ્થાવર અને હેન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોની હિંસાના કારણભૂત માનસિક વાચિક અને કાયિક વ્યાપારોથી જે નિવૃત્ત થઈ ચુકેલાં તે ‘ઉપરતદ્દંડ’ કહેવાય છે, જેમ મુનિઓ. એનાથી ઉલટાં “અનુપરતદ્દંડ” છે, જેમ ગૃહસ્થો. જે ગ્રહણ કરવામાં આવે તેને ‘ઉપધિ’ કહે છે આ જે પ્રકારની છે. એક દ્રવ્ય-ઉપધિ અને બીજી ભાવ-ઉપધિ. દ્રવ્ય-ઉપધિ હિરણ્યસુવર્ણાદિ અને ભાવ-ઉપધિ રાગદ્વેષાદિ છે. આ ઉપધિરહિત જે હોય છે તે ‘સોપધિક’ જેમ

તથા-સંયોગરતેષુ વા-સંયોગઃ પુત્રકલત્રાદિસમ્બન્ધસ્તસ્મિન્ રતા=આસક્તાઃ
સંયોગરતાઃ=ગૃહસ્થા દેશવિરતિશ્રાવકાસ્તેષુ વા । અસંયોગરતેષુ-અસંયોગઃ=સંયમ-
સ્ત્ર રતા અસંયોગરતાઃ=ઉપશમશ્રેણ્યાદિસમ્પન્નાસ્તેષુ વા । એતદુભયવિષેષ્વપિ
સમાન એવ તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

અયં ભાવઃ—તીર્થકરાણામુપદેશઃ સૂર્યોદય ઇવ પ્રવોધ્યવિશેષમનપેક્ષ્ય પ્રવ-
ર્તેતે, તસ્માત્ તત્ર નાસ્તિ રાગદ્વેષપક્ષપાતાદિદોષલેશાવસર ઇતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વસ્ય સ્વરૂપમાહ—‘તત્ત્વં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્ત્વં ચેયં તદ્વા ચેયં અર્સિસ ચેયં પવુચ્ચઈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—તથ્યં ચેદં તથા ચેદં અર્સિસચેદં પ્રોચ્યતે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—ઈદં=ભગવદ્વચનં તથ્યં ચ=સત્યમેવ । અત્ર સૂત્રે ચકારો નિયમાર્થઃ ।

વે ‘નિરુપધિક’ હૈં, જૈસે કઠિયારાદિક । પુત્રકલત્રાદિક કે મોહમૈં જો
ફંસે હુએ હૈં એસે ગૃહસ્થ ‘સંયોગરત’ જૈસે દેશવિરતિ શ્રાવક, ઓર ઇનકે
ત્યાગી સંયમી સાધુ ‘અસંયોગરત’ કહલાતે હૈં જૈસે ઉપશમશ્રેણ્યાદિસંપન્ન ।
હસકા ફલિતાર્થ યહી હૈં કિ જિસ પ્રકાર સૂર્યકા ઉદય ઝંચનીચ કે પક્ષપાત
સે રહિત હો કર સમસ્ત જગતકો પ્રકાશ દેતા હૈં ઠીક ડસી તરહ પ્રભુકા
દિવ્ય ધાર્મિક ઉપદેશ મી ઉત્થિત ઓર અનુત્થિતાદિકોં કે પક્ષપાત વિના
સમસ્ત જીવોંકે હિતકે લિયે એક હી જૈસા હોતા હૈં, કારણ કિ પક્ષપાતા-
દિદોષોં કો કારણ રાગદ્વેષ હી હૈં, ઓર પ્રભુ વીતરાગી હૈં, હસલિયે વે
પક્ષપાતાદિ દોષોં સે રહિત હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વ કે સ્વરૂપ કો પ્રકટ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—
‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થંકર પ્રભુકે વે વચન સત્ય હી હૈં, કારણ કિ જિન પ-

ભરતાદિક અને આ ઉપધિરહિત જે છે તે ‘નિરુપધિક’ છે, જેમ કઠિયારાદિક.
પુત્રકલત્રાદિના મોહમાં જે ફસેલા છે એવા ગૃહસ્થી ‘સંયોગરત’ જેમ દેશવિરતિ
શ્રાવક, અને તેના ત્યાગી સંયમી સાધુ ‘અસંયોગરત’ કહેવાય છે, જેમ ઉપશમ-
શ્રેણ્યાદિસંપન્ન. એનો ભાવ એ છે કે જેમ સૂર્યનો ઉદય ઝંચનીચના પક્ષપાતથી
રહિત થઈને સમસ્ત જગતને પ્રકાશ આપે છે તે જ માફક પ્રભુનો દિવ્ય ધાર્મિક
ઉપદેશ પણ ઉત્થિત અને અનુત્થિતાદિકોના પક્ષપાતથી રહિત થઈને સમસ્ત
જીવના હિતને માટે એક જ સરખો હોય છે, કેમ કે પક્ષપાતાદિ દોષોનું
કારણ રાગ-દ્વેષ જ છે અને પ્રભુ વીતરાગી છે, તેથી તે પક્ષપાતાદિદોષથી
રહિત છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને પ્રકટ કરીને શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે—‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ.
ભગવાન તીર્થંકર પ્રભુના તે વચનો સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોનું જે

ઇદં=તદ્વાક્યાર્થરૂપં વસ્તુ, તથા ચ=તથૈવ-તીર્થકરભગવદ્ભિર્યથા પ્રરૂપિતં તથૈવ વસ્તુસદ્ભાવોડપીત્યર્થઃ । એકેન્દ્રિયાદિપન્થેન્દ્રિયાન્તાઃ સ્થાવરત્રસરૂપાઃ સર્વે પ્રાણિનો ન દન્તવ્યાઃ, એપ ધર્મઃ શુદ્ધો નિત્યઃ શાશ્વત ઇત્યાદિ યથા પ્રરૂપિતં તદ્વાક્યાર્થોડપિ તથૈવ વિદ્યતે, તસ્માત્ સત્યમેવેદં વચનમિતિ ભાવઃ । અનેન શ્રદ્ધાનલક્ષણં સમ્યક્ત્વં પ્રરૂપિતમ્ । અસ્મિન્થેદં પ્રોચ્યતે ઇતિ-ઇદં=શ્રદ્ધાનલક્ષણં સમ્યક્ત્વમ્, અસ્મિન્થ=આર્હતપ્રવચનવિષય એવ પ્રોચ્યતે=વિથ્રેયતયા પ્રકર્ષેણોપદિશ્યતે । કેવલમાર્હત-પ્રવચનવિષયે પુનઃ પુનરતિશયેન વા શ્રદ્ધાનલક્ષણં સમ્યક્ત્વમાસ્થેયમિત્યુપદિશ્યતે તિર્થકરૈરિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

પદાર્થોં કા જિસ સ્વરૂપ કા ભગવાને અપની દિવ્યવાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કિયા હૈ ડન પદાર્થોં કા સ્વરૂપ ઓર ડનકા અસ્તિત્વ ડસી પ્રકાર સે હૈ; અન્યથા નહીં । ઇસ પ્રકારકા તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ સિર્ફ અર્હન્ત પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોં મેં હી વિશ્વાસ રખને સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

ઇસ સૂત્રમેં ત્રીન વાર “ચ” શબ્દકા પ્રયોગ કિયા હૈ વહ નિયમ કા ઘોતક હૈ । ઇસસે યહ સમજના ચાહિયે કિ ભગવાને જો ત્રસ સ્થાવર જીવોં કો નહીં મારનેરૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મ કે ઉપદેશરૂપ વચન કહે હૈં વે સત્ય હૈં । કારણ કિ જિન પદાર્થોં કા પ્રતિપાદન પ્રભુને અપની વાણી દ્વારા કિયા હૈ ડન પદાર્થોં કા સ્વરૂપ ટીક વૈસા હી હૈ, અર્થાત્—ભગવાન્ કે વચન ઇસલિયે પ્રમાણ હૈં કિ ડન વચનોં કે પ્રતિપાદ્ય અર્થમેં કિસી ભી પ્રકાર સે વિસંવાદાદિક નહીં દેખા જાતા । અર્થ

સ્વરૂપમા ભગવાને પોતાની દિવ્ય વાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પદાર્થોંનું સ્વરૂપ અને તેનું અસ્તિત્વ તે પ્રકારનું જ છે, અન્યથા નહિ. આ પ્રકારનું તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ કક્ત અર્હતપ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોમાં જ વિશ્વાસ રાખવાથી છવાંને પ્રાપ્ત થાય છે.

આ સૂત્રમાં જે ત્રણ વાર “ચ” શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે નિયમનો ઘોતક છે. તેથી જ સમજવાનું છે કે ભગવાને જે ત્રસ સ્થાવર છવાંને નહિ મારવારૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મના ઉપદેશરૂપ વચન કહ્યું છે તે સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોંનું પ્રતિપાદન પ્રભુએ પોતાની વાણીદ્વારા કર્યું છે તે પદાર્થોંનું સ્વરૂપ તેવું જ છે. અર્થાત્ ભગવાનનું વચન જોટલા માટે પ્રમાણ છે કે તે વચનોના પ્રતિપાદ્ય અર્થમાં કોઈ પણ પ્રકારથી વિસંવાદાદિક નથી દેખાતું.

उक्तरीत्या सम्यक्त्वरूपं प्रदर्श्य, तत्प्राप्त्यनन्तरं तत्र स्थिरीकरणाय सम्यग्गृह्णतेः कर्तव्यं प्रतिबोधयति—‘ तं आइत्तु ’ इत्यादि ।

मूलम्—तं आइत्तु न निहे न निक्खिखे जाणित्तु, धम्मं जहा—तहा ॥ सू० ४ ॥

छाया—तत् आदाय न निहुवीत, न निक्षिपेत्, ज्ञात्वा धर्मं यथा—तथा ॥४॥

टीका—तत्=सम्यग्दर्शनापरनामकं सम्यक्त्वम्, आदाय=गृहीत्वा प्राप्येति यावत्, धर्मं=श्रुतचारित्ररूपं, यथा—तथा=येन केनापि प्रकारेण गुरूपदेशादिना ज्ञात्वा, यद्वा—धर्मं वस्तुस्वभावं ज्ञात्वा न निहुवीत, सम्यक्त्वं तत्कार्याऽकरणेन नाऽऽच्छादयेदित्यर्थः । प्रशमसंवेगनिर्वेदानुकम्पादिभिः सम्यक्त्वं प्रकाशयेदिति

की प्रमाणतासे ही वचनमें प्रमाणता आती है । जब प्रतिपाद्य अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदि से रहित है तो फिर क्यों नहीं उसके प्रतिपादक वचनों में सत्यता आवेगी ? अवश्य ही आवेगी । इस प्रकारकी दृढ़ आस्था ही तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यक्त्व है ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिसे सम्यक्त्वका स्वरूप प्रकट कर उसकी प्राप्ति के बाद उसमें सुस्थिर करनेके लिये सम्यग्गृहि जीव का कर्तव्य प्रकट करते हुए श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि ।

जीव उस समकित को प्राप्त कर गुरूपदेशादिकरूप जिस किसी भी प्रकारसे श्रुतचारित्ररूप धर्म को अथवा वस्तुस्वभावको जान कर उस समकित को आच्छादित नहीं करे और न उसको छोड़े । समकित को प्राप्त कर लेने पर समकित जीव को प्रशम, संवेग, निर्वेद और

अर्धनी प्रभाणुताथी न वयनभा प्रभाणुता आवे छे. न्यारे प्रतिपाद्य—अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदिथी रहित छे तो पछी तेना प्रतिपादक वयनोभां केम सत्यता न आवे ? अवश्य न आवे. आ प्रकारनी दृढ आस्था न तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यक्त्व छे ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिथी सम्यक्त्वनुं स्वइय प्रगट करीने तेनी प्राप्ति पछी तेमां सुस्थिर करवाने माटे सम्यग्गृहि जीवनुं कर्तव्य प्रगट करतां श्रीसुधर्मास्वामी छोडे छे—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि.

एव ते समकितने प्राप्त करी गुइ—उपदेश आदि कोछ पछु प्रकारे श्रुत चारित्ररूप धर्मने अथवा वस्तुस्वभावने ज्ञानीने ते समकितने छोडे नाछे, अने तेने छोडे पछु नछि. समकित भेजव्या पछी समकित जीवने शम, संवेग निर्वेद

ભાવઃ । ન નિષ્કિપેદિતિ તત્ સમ્યક્ત્વં ન ત્યજેત્ । યદિ સંસર્ગાદિના મિથ્યાદૃષ્ટ્યો મિથ્યાત્વં સ્થાપયેયુઃ, તદા સ્વાત્મનઃ સામર્થ્યગુણં પ્રકાશયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ન નિષ્કિપેદિતિ—નિષ્કેપણં=છર્દનં વ્રમનમિત્યર્થઃ, યથા કશ્ચિદ્ આચાર્ય સમીપે વ્રતાનિ ગૃહીત્વા પશ્ચાત્ કાલાન્તરે તત્પરતો નિષ્કિપ્યોત્પવ્રજતિ, પુનરાગત્ય ગૃહ્ણતિ, તથા ન સમ્યક્ત્વં કદાપિ પરિત્યજેત્, કિંતુ યાવજ્જીવમનુપાલયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ધર્મ= યથાઽવસ્થિતં ધર્મં શ્રુતચારિત્રરૂપં, તથા તેનૈવ પ્રકારેણ જ્ઞાત્વા તં શ્રુતધર્મં ચારિત્ર-ધર્મં ચ ન નિષ્કિપેત્=ન ત્યજેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

અનુકમ્પા આદિ જો સમકિત કે કાર્ય હૈં વે પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, ઉનસે હી સમકિતકા અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈ, અતઃ ઇન કાર્યોં કો કરને સે સમ-કિત કા પ્રકાશ હોતા હૈ, નહીં કરને પર ઉસકા આચ્છાદન હોતા હૈ । યદિ કદાચિત્ મિથ્યાદૃષ્ટિયોં કી સંગતિ મી હો જાવે ઓર વે મિથ્યાત્વ કી ઓર લે જાને કા પ્રયત્ન મી કરે તો મી ઉસ સમય અપની શક્તિ કા પ્રકાશન કર સમકિત કા પરિત્યાગ નહીં કરના ચાહિયે । અથવા જૈસે કોઈ જીવ આચાર્ય કે સમીપ વ્રતોં કો ધારણ કર પશ્ચાત્ કાલાન્તર મેં ઉનકે નિકટ ઉનકા વ્રમન-ત્યાગ કર ચલા જાતા હૈ, ઓર ફિર આકર ઉન્હેં ધારણ કર લેતા હૈ, ઉસ પ્રકાર ઇસ સમ્યક્ત્વકા વ્રમન નહીં કરના ચાહિયે, કિંતુ પ્રાપ્ત હોને પર ઇસકો પ્રયત્નપૂર્વક યાવજ્જીવન પાલતે રહના ચાહિયે । અથવા-સમકિત કે કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્રધર્મ કી જિસ પ્રકાર સે અવસ્થિતિ હૈ ઉસી રૂપસે ઉન્હેં જાન કર ફિર નહીં છોડના ચાહિયે ॥૪॥

અને અનુકમ્પા આદિ જે સમકિતના કાર્ય છે તે પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. તેનાથી જ સમકિતનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે છે માટે તે કાર્યોને કરવાથી સમકિતનો પ્રકાશ થાય છે, અને નહિ કરવાથી તે ઢંકાય જાય છે, અને કદાચ મિથ્યાદૃષ્ટિ-ઓની સંગત પણ થઈ જાય અને તેને મિથ્યાત્વની તરફ લઈ જવાનો પ્રયાસ પણ કરે તો પણ તે વળત પોતાની શક્તિનો પ્રકાશ કરી સમકિતનો ત્યાગ નહિ કરવો જોઈએ અથવા જેમ કોઈ છવ આચાર્યની સમીપ વ્રતોને ધારણ કરીને પછી કાલાન્તરમાં તેની નજીક તેનો વ્રમન-ત્યાગ કરી આવ્યો જાય છે અને ફરી આવીને જેમ તેને ધારણ કરી લે છે તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વનો વ્રમન-ત્યાગ કરવો નહિ જોઈએ, પણ પ્રાપ્ત થયા પછી તેને પ્રયત્નપૂર્વક જાવજ્જીવ-જીવનપર્યન્ત પાળનાં રહેવું જોઈએ. અથવા સમકિતના કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્ર ધર્મની જે પ્રકારે અવસ્થિતિ છે તે રૂપમાં તેને જાણીને છોડવું ન જોઈએ ॥સૂ૦ ૪॥

અપરં ચ સમ્યગ્દષ્ટિકતવ્યમાહ—‘દિદ્દેહિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દિદ્દેહિં નિર્વેયં ગચ્છજ્જા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—દૃષ્ટેષુ નિર્વેદં ગચ્છેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—દૃષ્ટેષુ=દૃષ્ટિપથસમાગતેષુ એહિકેષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયેષુ, અસ્યો-
પલક્ષણાર્થત્વાત્ સ્વર્ગાદિસમ્બન્ધિષ્વપિ, નિર્વેદં=વૈરાગ્યં, ગચ્છેત્=કુર્યાદિત્યર્થઃ ।
યદા યદા-શબ્દાઃ શ્રવણગોચરાઃ, રસા આસ્વાદિતાઃ, ગન્ધા આગ્રાતાઃ, સ્પર્શા વા
સ્પૃષ્ટા ભવન્તિ, તદા તદા ભાવયેત્-શબ્દાદયઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્ત એવ કદાચિત્ પ્રિય-
શબ્દાદિરુપેણ કદાચિદપ્રિયશબ્દાદિરુપેણ પરિણમન્તે, અતઃ તેષુ પુદ્ગલપરિણા-
નામરુપેષુ કો રાગઃ કથં વા દ્વેષ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

और भी सम्यग्दृष्टिका कर्तव्य कहते हैं—‘दिदेहिं’ इत्यादि ।

દૃષ્ટ પદાર્થોં મેં નિર્વેદ-ઇષ્ટાનિષ્ટ શબ્દાદિ વિષયોંમેં વિરક્તભાવ હો,
સંસાર કે જિતને મી મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયભૂત શ-
બ્દાદિ પદાર્થ હેં ઉનમેં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવકો વિરક્ત ભાવ રાખના ચાહિયે,
કારણ કિ યે શબ્દાદિ સબ પૌદ્ગલિક હેં । જો કમી મનોજ્ઞ પ્રતીત હોતે હેં વે
હી કાલાન્તર મેં અમનોજ્ઞ રુપસે મી પરિણમિત હોતે હુએ દેરે જાતે હેં । અથવા
જો એક કી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હેં વે હી દૂસરે કી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હો જાતે
હેં । નિમ્બ હમારી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હૈ પરન્તુ ઝૂંટકી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હૈ ।
ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ સંસાર કા કોઈ મી પદાર્થ સર્વથા ન મનોજ્ઞ હૈ ન
અમોજ્ઞ હૈ, મનકી કલ્પનાશક્તિ હી ઉસકો મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ રુપસે
માન કરાતી હૈ, અતઃ ઉનમેં રાગ દ્વેષ કરના સમક્તિતી જીવકા કર્તવ્ય

બીજી પણ સમ્યગ્દષ્ટિનુ કર્તવ્ય કહે છે—“દિદ્દેહિં” . ઇત્યાદિ.

દેખીત પદાર્થોંમાં નિર્વેદ-ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિ નિષયોંમાં વિરક્તભાવ
હોય, સંસારના જેટલા પણ મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોના વિષયભૂત શબ્દ આદિ
પદાર્થ છે તેમાં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને વિરક્તભાવ રાખવો જોઈએ, કારણ કે એ બધા
પૌદ્ગલિક છે જે કોઈ વખત મનોજ્ઞ પ્રતીત થાય છે તે જ કાલાન્તરમાં અમ-
નોજ્ઞરૂપથી પણ પરિણમિત થતાં દેખવામાં આવે છે. અથવા જે એકની અપેક્ષા
મનોજ્ઞ છે, તે બીજાની અપેક્ષા અમનોજ્ઞ થઈ જાય છે લીંબડો આપણી અપેક્ષાએ
મનોજ્ઞ છે, પરંતુ ઊંટની અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે. ફલિતાર્થ એ છે કે સંસારનો
કોઈ પણ પદાર્થ સર્વથા મનોજ્ઞ પણ નથી તેમજ અમનોજ્ઞ પણ નથી મનની
કલ્પના-શક્તિ જ તેને મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પ્રતિક્ષિત કરાવે છે, માટે તેમા
રાગદ્વેષ કરવો તે સમક્તિતી જીવનું કર્તવ્ય નથી. એ જ પ્રકારે સ્વર્ગાદિક સુખોની

કિંચ—“ નો લોગસ્સે. ” ત્યાદિ ।

મૂલમ્—નો લોગસ્સેસણં ચરે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—નો લોકસ્યૈપણાં ચરેત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—લોકસ્ય પ્રાણિવર્ગસ્ય, એપણામ્—એપણા=અનુકૂલેષુ શબ્દાદિવિષયેષુપા-

નહીં હૈ । इसी प्रकार स्वर्गादिक सुखोंकी वाञ्छा करना भी समकितीके लिये योग्य नहीं । अनुकूल शब्दों के सुनने से हर्षित होना, एवं प्रतिकूल शब्दों के सुनने से दुःखित होना, स्वादिष्ट रसादिकों के मिलनेसे आनन्द मानना, और प्रतिकूल रसादिकोंकी प्राप्तिमें आकुलित हो जाना, सुगन्धित पदार्थों के सूंघनेमें प्रेम प्रदर्शित करना, और दुर्गन्धित वस्तुओं पर अरुचि रखना, कोमलादि स्पर्शों में प्रमुदितमन होना, एवं कठिनादि स्पर्शों के होने पर भ्रान्तवदन होना; यह समकिती के लिये सर्वथा अयोग्य ही है । समकिती तो समदृष्टि होता है । इस तरह की रागद्वेषमयी विषमदृष्टि उसमें नहीं होनी चाहिये । प्रतिकूल और अनुकूल शब्दादिकों की प्राप्ति में उसे यही भावना करनी चाहिये कि ये सब पुद्गल की पर्यायें सदा बदलती रहती हैं—पर्यायें स्थिररूप नहीं हैं, अतः इन अस्थिर पर्यायों में राग करनेसे और द्वेष रखने से मुझे कौनसा लाभ हो सकता है ? ॥ सू० ५ ॥

तथा—‘ नो लोगस्स ’ इत्यादि ।

सम्यग्दृष्टि जीव लोकैपणा न करे, जिस प्रकार लोक, अनुकूल

ઇચ્છા પણ સમકિતીને માટે યોગ્ય નથી અનુકૂળ શબ્દ સાંભળીને હર્ષિત થવું, અને પ્રતિકૂળ શબ્દ સાંભળીને દુઃખી થવું, સ્વાદિષ્ટ રસાદિક મળવાથી આનંદ માનવો, અને પ્રતિકૂળ રસાદિકથી વ્યાકુળ થવું, સુગંધિત પદાર્થોના સૂંઘવામાં પ્રેમ દેખાડવો અને દુર્ગંધિત વસ્તુઓ ઉપર અરુચિ રાખવી, કોમલાદિ સ્પર્શમાં આનંદિત થવું અને કઠણ આદિ સ્પર્શોમાં મોઢું બગાડવું, આ બધું સમકિતીને માટે સર્વથા અયોગ્ય જ છે, સમકિતી તો સમદૃષ્ટિ હોય છે. આવા પ્રકારની રાગદ્વેષવાળી વિષમદૃષ્ટિ તેને હોવી જોઈએ નહિ પ્રતિકૂળ અને અનુકૂળ શબ્દ વિશેષમાં તેણે ભાવના રાખવી જોઈએ કે આ બધા પર્યાયો છે. પર્યાય સદા બદલાતી જ રહે છે, પર્યાય સ્થિરરૂપ નથી, માટે આ અસ્થિર પર્યાયોમાં રાગ કરવાથી અને દ્વેષ રાખવાથી મને શું લાભ થવાનો છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સે ’ ઇત્યાદિ.

સમ્યગ્દૃષ્ટિ છવ લોકૈપણા કરે નહિ, અર્થાત્—જે પ્રકારે લોક, અનુકૂળ શબ્દો

દેયબુદ્ધિઃ, પ્રતિકૂલેષુ હેયબુદ્ધિસ્તાં ન ચરેત્=ન કુર્યાત્ ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણાચરણસ્ય ફલમાહ—“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ । યદ્વા-સમ્યક્ત્વા-
લાભે સમ્યગ્જ્ઞાનં ન ભવતીત્યાહ—“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ ઇમા જાઈ અણ્ણા તસ્સ કઓં સિયા ॥ ૭ ॥

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ ઇયં જાતિઃ અન્યા તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ. ૭ ॥

દીકા—યસ્ય સાધોઃ ઇયં જાતિઃ=લોકૈષણાબુદ્ધિઃ નાસ્તિ, તસ્ય અન્યા=અન્ય-
વિધા સાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તિઃ કુતઃ સ્યાત્ । ભોગેચ્છા હિ લોકૈષણા, તત્પરિત્યાગેન
સાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિર્નોપજાયતે, ઇતિ ભાવઃ ।

શબ્દાદિકોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ એવં પ્રતિકૂલ વિષકણ્ટકાદિકોં મેં હેય-બુદ્ધિ
રખતે હૈં' ઉસ પ્રકાર સમકિતી જીવકો અનુકૂલ પદાર્થોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ
ઔર પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયબુદ્ધિ નહીં રખનીં ચાહિયે, અપિ તુ મધ્યસ્થ-
ભાવ રખના ચાહિયે ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણા કા ફલ કહતે હૈં—“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ ।

હસ પ્રકાર લોકૈષણા કી બુદ્ધિ રખનેવાલે જીવકે સાવધ વ્યાપારોં
સે નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી હૈ । ભોગેચ્છારૂપ હી લોકૈષણા હૈ । જિસ
સાધુ કો હસ પ્રકારકી લોકૈષણા નહીં હૈ' ઉસકી પ્રવૃત્તિ શબ્દાદિ વિષયોં
મેં નહીં હોતી હૈ' । અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયોપાદેયબુદ્ધિ રખનેવાલા
વ્યક્તિ નિયમતઃ હસ પ્રકાર કે કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ કર અપની મનોવૃત્તિકો
દૂષિત કિયા કરતા હૈ, જબકિ સમકિતી નિરન્તર અપની પ્રવૃત્તિ કો
નિર્મલ બનાને કી હી કોશિશ મેં રહતા હૈ, અતઃ હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ

આદિમાં ઉપાદેય બુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ વિષકાંટા વિગેરેમાં હેયબુદ્ધિ રાખે છે તે પ્રમાણે
આ સમકિતી જીવને અનુકૂળ પદાર્થોમાં ઉપાદેયબુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં
હેયબુદ્ધિ રાખવી જોઈએ નહિ, બદલે મધ્યસ્થ ભાવ રાખવો જોઈએ ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણાનું કૃણ કહે છે—“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારની લોકૈષણાની બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવને વ્યાપારોમાંથી નિવૃત્તિ
થતી નથી લોગેચ્છાક્રમ જ લોકૈષણા છે. જે સાધુને આ પ્રકારની લોકૈષણા નથી
થતી તેની પ્રવૃત્તિ શબ્દ આદિ વિષયોમાં થતી નથી. અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં
હેય-ઉપાદેય-બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવ નિયમથી આ પ્રકારના કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ
કરીને પોતાની મનોવૃત્તિને દૂષિત કર્યા કરે છે, જ્યારે સમકિતી હમેશા પોતાની
પ્રવૃત્તિને નિર્મળ બનાવવાની મહેનત કર્યા કરે છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ

યદ્વા-ઇયમ્=ઉપક્રાન્તા, જ્ઞાતિઃ=સમ્યક્ત્વરૂપા પરિણતિઃ, યસ્ય નાસ્તિ, તસ્યા-
ન્યા=વિવેકિની પરિણતિઃ સાવધાનુષ્ઠાનપરિહારકારિણી કુતઃ સ્યાદિત્યર્થઃ ॥મૂં૭॥

સમ્યક્ત્વે શિષ્યમતિસ્થિરીકરણાર્થં પુનરાહ-‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દિટ્ઠં સુયં મયં વિષ્ણુનાયં જં ઇયં પરિકહિજ્જહ ॥સૂં૮॥

છાયા—દૃષ્ટં શ્રુતં મતં વિજ્ઞાતં યદેતત્ પરિકથ્યતે ॥ મૂં ૮ ॥

ટીકા—યદેતત્ સમ્યક્ત્વં મયા પરિકથ્યતે, તત્ દૃષ્ટં=તીર્થકરૈઃ કેવલાલો-
કેનાવલોકિતમ્, તતઃ શ્રુતં=ગણધરાદિભિઃ શ્રવણવિષયીકૃતં, મતં=લઘુકર્મણાં
મનોવૃત્તિ કો દૂષિત કરનેવાલી હોને સે હી સમકિતી કે લિયે હેય
ચતલાઈ ગઈ હૈ ।

અથવા—‘સમ્યક્ત્વ કી અપ્રાપ્તિ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ’
ઇસ ચાત કો ખી ઇસી સૂત્ર મેં કહતે હૈ—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

જિસ જીવકે પાસ સમ્યક્ત્વપરિણતિ નહીં હૈ ઉસકો સાવધ વ્યા-
પારોસે હટાનેવાલી વિવેકપરિણતિ ખી કૈસે હો સકતી હૈ? અર્થાત્ નહીં
હો સકતી હૈ ॥ મૂં ૭ ॥

સમ્યક્ત્વમેં શિષ્યકી બુદ્ધિકો દૃઢ કરને કે લિયે સુધર્માસ્વામી ફિરસે
કહતે હૈ—‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

જિસ સમકિતકા મૈને વર્ણન કિયા હૈ વહ દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત ઓર
વિજ્ઞાત હૈ । યહાં પર સુધર્માસ્વામી સમકિતકે વિષયમેં છુલાસા કરતે
હુણ કહતે હૈ કિ—હે જમ્મૂ! જિસ સમકિતકા યહાં વર્ણન કિયા ગયા હૈ
વહ મૈને અપની બુદ્ધિ સે નહીં કહા હૈ; કિંતુ ‘દૃષ્ટં’—તીર્થદ્ધરોને ઉસકા

મનોવૃત્તિને દૂષિત કરવાવાળી હોવાથી જ સમકિતીને માટે હેય છે, એમ કહ્યું છે.

અથવા સમ્યક્ત્વની અપ્રાપ્તિમાં સમ્યગ્જ્ઞાન થતું નથી આ વાતને પણ આ
સૂત્રમાં કહે છે—‘જસ્સનત્થિ’ ઇત્યાદિ

જે જીવની પાસે સમ્યક્ત્વપરિણતિ નથી તેને સાવધ વ્યાપારોથી દૂર
કરવાવાળી વિવેકપરિણતિ પણ કેવી રીતે થઈ શકે? અર્થાત્ થઈ શકતી નથી ॥સૂં૭॥

સમ્યક્ત્વમા શિષ્યની બુદ્ધિને દૃઢ કરવાને માટે સુધર્માસ્વામી ફરીથી કહે
છે—‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ.

જે સમકિતનું મેં વર્ણન કર્યું છે તે દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત અને વિજ્ઞાત છે.
આ ઠેકાણે સુધર્માસ્વામી સમકિતવિષયમા છુલાસો કરીને કહે છે કે—હે જમ્મૂ!
જે સમકિતનું આ ઠેકાણે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે મેં પોતાની બુદ્ધિથી
નથી કર્યું, પણ ‘દૃષ્ટં’ તીર્થદરેએ તેનો પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપી પ્રદાનથી આજ્ઞા-

ભવ્યાનાં મતં, વિજ્ઞાતં=જ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમાત્, અતઃ સમ્યક્ત્વલાભે તદ્રક્ષણે ચ પ્રયતિતવ્યમિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

યે તુ સમ્યક્ત્વમુપેક્ષન્તે તેષામનન્તદુઃખમયી સંસારગતિર્નૈવ વિરમતીત્યાહ-
'સમેમાણા પલેમાણા' इत्यादि ।

મૂલમ્—સમેમાણા પલેમાણા પુણો પુણો જાઈં પકપ્પંતિ ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—સમાયન્તઃ પ્રલીયમાનાઃ પુનઃ પુનર્જાતિં પ્રકલ્પયન્તિ ॥સૂ૦ ૯॥

ટીકા—સમાયન્તઃ=સમાગચ્છન્તઃ=આર્હતાગમવિષયે શ્રદ્ધાનલક્ષણસમ્યક્ત્વા-
કરણેન માતાપિત્રાદિભિઃ સહ સંસારસમ્બન્ધં કુર્વન્તઃ, પ્રલીયમાનાઃ=મૃત્યુવશાદ્
માતાપિત્રાદિભ્યો વિયુજ્યમાનાઃ, યદ્વા-પ્રલીયમાનાઃ=શબ્દાદિવિષયેષુ સમાસર્ત્તિ
કુર્વાણાઃ પુનઃ પુનઃ=અનન્તશઃ જાતિમ્=એકેન્દ્રિયાદિરૂપાં પ્રકલ્પયન્તિ । સમ્યક્ત્વ-
મનવાપ્તાઃ સંસારદુઃખતો ન મુચ્યન્તે इति भावः ॥ सू० ९ ॥

અપને કેવલજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશ સે સાક્ષાત્કાર ક્રિયા હૈ, 'શ્રુતં'—ગણધરા-
દિકોનેં ઉનસે સુના હૈ, 'મતં'—હલુકર્મી ભવ્યોનેં ઉસે માના હૈ, ઓર
'વિજ્ઞાતમ્'—અપને જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાનુસાર ઉન્હોનેં હસે
જાના હૈ, અતઃ સમ્યક્ત્વકા લાભ હોને પર ઉસ કી રક્ષા કરને મેં સદા
સાવધાન રહના ચાહિયે ॥સૂ૦ ૮॥

જો વ્યક્તિ હસ સુન્દર સમકિતકે પ્રતિ ઉપેક્ષા ભાવ રખતા હૈ ઉસકે
હસ અનન્ત દુઃખરૂપ સંસારકા અન્ત નહીં આતા, યહી બાત કહતે હૈ—
“સમેમાણા ” इत्यादि ।

જો પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમકી શ્રદ્ધારૂપ હસ સમકિતસે શૂન્ય
રહતા હૈ વહ સંયોગ વિયોગ કો પાતા હુઆ જન્મ મરણ કર બારંબાર એકે-
ન્દ્રિયાદિક ભવોં મેં ભટકતા ફિરતા હૈ ।

હાર કયોં છે. 'શ્રુતં' ગણધરાદિકોએ તેમનાથી સાંભળ્યું છે. 'મતં' હલુકર્મી
ભવ્યોએ તે માન્યું છે, અને 'વિજ્ઞાતમ્' પોતાના જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપ-
શમ અનુસાર તેઓને તેમણે બહુયા છે, તેથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થઈ ગયા પછી
તેની રક્ષા કરવામાં હમેશાં સાવધાન રહેવું જોઈએ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે જીવ આ સુંદર સમકિત પ્રત્યે ઉપેક્ષાભાવ રાખે છે તેનો આ અનંત
હ.અર્થ સંસારનો અંત આવતો નથી. આ વાત કહે છે—'સમેમાણા' इत्यादि.

જે પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમની શ્રદ્ધારૂપ આ સમકિતથી શૂન્ય રહે
છે તે સંયોગ-વિયોગને મેળવતો જન્મ મરણ કરીને વારંવાર એકેન્દ્રિયાદિક
ભવોમાં ભટકતો ફરે છે.

યદ્યેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—“અહો ય રાઓ ય” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અહો અ રાઓ ય જયમાણે ધીરે સયા આગયપણાણે પમત્તે વહિયા પાસ અપ્પમત્તે સયા પરિક્કમિજ્જાસિ—ત્તિવેમિ । સૂ. ૧૦ ।

॥ પદમો ઉદેસો સમત્તો ॥ ૪-૧ ॥

છાયા—અહથ રાત્રિં ચ યતમાનો ધીરઃ સદા આગતપ્રજ્ઞાનઃ પ્રમત્તાન્ વહિઃ પઞ્ચ, અપ્રમત્તઃ સદા પરાક્રમેથાઃ, ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મ્. ૧૦ ॥

॥ પ્રથમ ઉદેશઃ સમાપ્તઃ ॥

ટીકા—અહથ રાત્રિં ચ=અહર્નિશં, યતમાનઃ=મોક્ષપ્રાપ્તયે સમુદ્યુક્તઃ, ધીરઃ=મિથ્યાદૃષ્ટિમિઃ સંસર્ગાદિના સ્થાપિતેઽપિ મિથ્યાત્વે વિશુદ્ધિપરિણામધારામનવરુ-

જો પ્રાણી इस समकित के लाभसे वंचित रहता है वह अनन्त काल तक अनन्त बार माता-पिताके साथ ‘ये मेरे माता-पिता हैं, मैं इनका पुत्र हूँ’ इस प्रकारका संबंध करता है, और अन्तमें मृत्युका ग्रास बनकर एकेन्द्रियादिक कुयोनियों में भ्रमण करता है ।

अथवा शब्दादिविषयों में आसक्ति धारण कर अनन्तवार एकेन्द्रियादिक पर्यायों में उत्पन्न होता रहता है, तथा वहाँके अनन्त कष्टोंको सहन करता रहता है । अर्थात्-असम्यक्त्वो जीव संसार के दुःखसे कभी भी छुटकारा कहीं पाता ॥ सू० ९ ॥

अगर ऐसा हो तो क्या करना चाहिये ? सो कहते हैं—‘अहो य राओ य’ इत्यादि ।

हे जन्म ! तुम अहर्निश मोक्षप्राप्तिके लिये प्रयत्नशील बनो, और धीर धीर बन कर सदा उत्तरोत्तर हेयोपादेयके विवेक से विशिष्ट

જે પ્રાણી આ સમકિતના લાભથી વંચિત રહે છે તે અનંતકાળપ્રમુદી અનંતી વાર માતા-પિતાની સાથે ‘આ મારા માતા-પિતા છે, હું એમનો પુત્ર છું’ આ પ્રકારના સંબંધ કરે છે, અને છેવટમાં મરીને એકેન્દ્રિયાદિક કુયોનિઓમાં ભ્રમણ કરે છે અથવા શબ્દ આદિ વિષયોમાં આસક્તિ ધારણ કરી અનંતીવાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તથા ત્યાંના અનંત દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. અર્થાત્-અસમ્યક્ત્વો જીવ સંસારના દુઃખોથી ક્યારે પણ છુટતો નથી. ॥સૂ.૦૯॥

તે આ પ્રમાણે છે તો શું કરવું જોઈએ ? તે કહે છે—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ.

હે જન્મ ! તમે અહર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિને માટે પ્રયત્નશીલ બનો, અને ધીર ધીર બનીને હમેશાં ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયના વિવેકથી વિશિષ્ટ બનીને અસંયમી

ન્ધાનઃ, અતઃ એવ સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, આગતપ્રજ્ઞાનઃ=ઉત્તરોત્તરપ્રવર્ધમાનહેયો-
પાદેયવિવેકપરિણામઃ સન્, પ્રમત્તાન્=અસંયતાન્, વહિઃ=આર્હતધર્માદ્વહિરવસ્થિ-
તાન્ અલબ્ધસમ્યક્ત્વાન્ ઇતિ યાવત્, પશ્ય। દૃષ્ટ્વા ચ અપ્રમત્તઃ=પશ્ચવિધપ્રમાદરહિતઃ
સન્ સદા=અવિચ્છેદેન પરાક્રમેથાઃ=મોક્ષતરુવીજસ્ય સમ્યક્ત્વસ્ય લાભાર્થં રક્ષણાર્થં ચ

હો કર અસંયમી જીવોં કે સંસર્ગ સે સદા દૂર રહો। એવં સ્વકર્તવ્યમેં
અપ્રમત્ત હો સમ્યગ્દર્શન કી પ્રાપ્તિ ઓર ઉસકા રક્ષણ કરને કે લિએ, અથવા
કર્મ શત્રુઓં પર વિજય પાનેકે લિએ કટિબદ્ધ રહો। હે જમ્બૂ! મૈને જૈસા
ભગવાન સે સુના હૈ વૈસા હી તુમ્હેં કહતા હૂં।

હસ સૂત્રમેં જમ્બૂસ્વામીકો સંવોધન કરતે હુએ શ્રીસુધર્માસ્વામી
કહતે હૈં કિ-હે જમ્બૂ! જવ પ્રત્યેક પ્રાણીકા લક્ષ્ય મોક્ષકી પ્રાપ્તિ કરનેકા
હૈ તો ઉસકા યહ પ્રધાન કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સર્વપ્રથમ સમ્યગ્દર્શન કી
પ્રાપ્તિ કરનેકે લિએ અહર્નિશ-સદા કટિબદ્ધ રહે, કારણ કિ—એક તો
હસકે અભાવમેં મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, દૂસરે સાંસારિક
અનન્ત કષ્ટોં કા અન્ત ભી નહીં આ સકતા। યદ્યપિ યહ વાત નિશ્ચિત
હૈ કિ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ અપને સંસર્ગ સે મિથ્યાત્વકી સ્થાપના કરનેમેં
કસર નહીં રખતે હૈં તો ભી ભવ્ય જીવકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ એસે સમયમેં
અપની વિશુદ્ધ પરિણામધારાકો ન રોકે; કિન્તુ પરિણામોં મેં વિશુદ્ધતા
જિસ પ્રકારસે વઢે ઉસ પ્રકાર સે ઉસકો વઢાને કા ઉત્તરોત્તર પ્રયત્ન કરતા

જીવોના સંસર્ગથી સદા દૂર રહો, અને સ્વકર્તવ્યમાં અપ્રમત્ત થાવ, સમ્યગ્દર્શનની
પ્રાપ્તિ અને તેના રક્ષણને માટે, અથવા કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવાને
માટે કટિબદ્ધ રહો. હે જમ્બુ! મેં જેમ ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેમ
તમને કહું છું.

આ સૂત્રમાં જમ્બૂસ્વામીને સંવોધન કરીને શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે—
હે જમ્બૂ! જ્યારે દરેક પ્રાણીનું લક્ષ્ય મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરવાનું છે તો તેનું એ
મુખ્ય કર્તવ્ય છે કે પહેલાં સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ કરવાને માટે હમેશાં તૈયાર
રહે, કારણ કે એક તો તેના અભાવમાં મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી, તેમજ બીજું
સાંસારિક અનંત દુઃખોનો અત પણુ નથી આવતો જો કે આ વાત નિશ્ચિત છે
કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પોતાના સંસર્ગથી મિથ્યાત્વની સ્થાપના કરવામાં કસર રાખતો
નથી, તો પણુ ભવ્ય જીવનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા સમયમાં પોતાની વિશુદ્ધ
પરિણામધારાને ન રોકી રાખે; પણુ પરિણામોમાં વિશુદ્ધતા જે પ્રકારે વધે તે પ્રકારે,
તેને વધારવામાં ઉત્તરોત્તર પ્રયત્ન કરતા રહે. એનાથી હેયોપાદેયનો વિવેક બગશે

વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્ષે સોત્સાહં પ્રયત્નમાનો ભવ । યદ્વા-પરાક્રમેધાઃ=અદ્વિધકર્મશ-
ત્તૂન્ વિજેતું વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્ષેણ વીર્યગુણસામર્થ્યમુદ્ભાવયેત્યર્થઃ । ઇતિ=અધિ-
કારપરિસમાપ્તૌ, ત્રવીમિ=ભગવન્મુલાદ્યથા શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

॥ ઇતિ ચતુર્થાધ્યયને પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સંપૂર્ણઃ ॥ ૪-૧ ॥

રહે । इससे हेयोपादेयका विवेक जागृत होगा और इस विवेकबुद्धिसे वह यह समझ सकेगा कि 'जो समकित्तसे शून्य हैं वे इस धर्मसे यहि-
भूत हैं अतः मैं भी पांच प्रकारके प्रमादोंका त्याग कर मोक्षतरु का बीज-
स्वरूप समकित्तकी प्राप्ति करनेमें, और प्राप्त समकित्त की रक्षा करनेमें
कारणभूत विशुद्ध परिणाम धाराके बढ़ानेमें सदा यत्न करता रहूँ ।'
अथवा 'इस अनन्त संसारमें अनन्तकष्टप्रदाता कर्मरूप शत्रु ही हैं; अतः
इन्हें परास्त करनेके लिये भी मैं अपने भीतर विशुद्ध परिणामोंकी धारा
बढ़ा कर वीर्यगुणस्वरूप अपनी शक्तिका विकास करूँ तो अवश्य ही
सफलता प्राप्त कर लूँगा' इस प्रकार सदा उस भव्य जीव को उत्साहित
रहना चाहिये ॥ सू. १० ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देशक संपूर्ण ॥ ४-१ ॥

અને આ વિવેકબુદ્ધિથી તે એ સમજી શકશે કે 'જે સમકિત્તથી શૂન્ય છે તે આ
ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, તેથી હું પણ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોને ત્યાગીને મોક્ષવૃક્ષના
બીજસ્વરૂપ સમકિત્તની પ્રાપ્તિ કરવામાં, અને મેળવેલાં સમકિત્તની રક્ષા કરવામાં
કારણભૂત વિશુદ્ધ પરિણામધારાને વધારવામાં હમેશાં યત્ન કરતો રહું.' અથવા-
'આ અનન્ત સંસારમાં અનંત દુઃખ આપવાવાળા કર્મરૂપ શત્રુ જ છે, તેનો પરાજય
કરવાને માટે પણ મારા અંતરની વિશુદ્ધ પરિણામોની ધારા વહાવીને વીર્યગુણ-
સ્વરૂપ મારી શક્તિનો વિકાસ કરું તો અવશ્ય સફળતા પ્રાપ્ત થશે' એવા પ્રકારે
હમેશાં ભવ્ય હૃદયે ઉત્સાહી રહેવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

એવા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સંપૂર્ણ ॥ ૪-૧ ॥



॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः ॥

इहानन्तरप्रथमोद्देशके सम्यग्दर्शनं प्रतिबोधितम् । तच्च नवतत्त्वश्रद्धानात्मकम् । तत्र—किं तत्त्वं संसारकारणं ? किं च मोक्षकारणम् ? इत्युभयोर्निर्णयमन्तरेण मुमुक्षोः सम्यग्दर्शनं न संभवतीत्यतः सम्यक्त्वप्रतिबोधनप्रसङ्गागते आस्रवनिर्जरे संसार-मोक्षहेतुभूते प्रतिबोधयितुमाह—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

मूलम्—जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा ।

जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥सू०१॥

छाया—ये आस्रवास्ते परिस्सवाः, ये परिस्सवास्ते आस्रवा ।

ये अनास्रवास्ते अपरिस्सवाः, ये अपरिस्सवास्ते अनास्रवाः ॥ सू० १ ॥

॥ चौथे अध्ययन का दूसरा उद्देश ॥

सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययनके प्रथम उद्देशकमें सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझा दिया गया है । वहां यह कहा गया है कि—वह सम्यग्दर्शन नव तत्त्वों की श्रद्धास्वरूप है । वे नवतत्त्व ये हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बन्ध और ९ मोक्ष । मोक्षाभिलाषी को जब तक यह निश्चय नहीं हो जाता कि इनमें से कौनसा तत्त्व संसारका कारण है और कौनसा मोक्षका, तब तक उसके समकित की प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः उसके लिये इस सम्यक्त्वबोधन के प्रकरणमें आये हुए तत्त्वों मेंसे ‘आस्रव संसार का और निर्जरा मोक्षका कारण है’ इस बातको स्पष्ट करने के लिए कहते हैं—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

ચોથા અધ્યાયના બીજો ઉદ્દેશ

સમ્યક્ત્વ નામના ચોથા અધ્યયનના પહેલા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દર્શનનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવ્યું છે ત્યાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે—તે સમ્યગ્દર્શન નવ તત્ત્વોની શ્રદ્ધાસ્વરૂપ છે. આ નવ તત્ત્વ નીચે પ્રમાણે છે:—

જીવ ૧, અજીવ ૨, પુણ્ય ૩, પાપ ૪, આસ્રવ ૫, સંવર ૬, નિર્જરા ૭, બંધ ૮, અને મોક્ષ ૯. ત્યાં સુધી મોક્ષાભિલાષીને એ નિશ્ચય નથી થતો કે આમાંથી કયું તત્ત્વ સંસારનું કારણ છે ? અને કયું મોક્ષનું ? , ત્યાં સુધી તેને સમકિતની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એથી તેને માટે આ સમ્યક્ત્વબોધનના પ્રકરણમાં આવેલ તત્ત્વોમાંથી આસ્રવ સંસારનું અને નિર્જરા મોક્ષનું કારણ છે, આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે કહે છે— ‘જે આસવા’ ઇત્યાદિ.

વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકરણે સોત્સાહં પ્રયત્નમાનો ભવ । યદ્વા-પરાક્રમેધાઃ=અષ્ટવિધકર્મસ-
ત્ત્વં વિજેતું વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકરણે વીર્યગુણસામર્થ્યમુદ્ભાવયેત્યર્થઃ । ઇતિ=અધિ-
કારપરિસમાપ્તો, ત્રવીમિ=ભગવન્મુલાદ્યથા શ્રુતં તથા કથયમામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

॥ ઇતિ ચતુર્થાધ્યયને પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સંપૂર્ણઃ ॥ ૪-૧ ॥

રહે । હસસે હેયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હોગા ઓર હસ વિવેકબુદ્ધિસે
વહ્ ગહ્ સમક્ષ સકેગા કિ ‘જો સમક્ષિતસે શૂન્ય હૈં વે હસ ધર્મસે યદિ-
ભૂત હૈં અતઃ મૈં મી પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદોંકા ત્યાગ કર મોક્ષતરુ કા ધીજ-
સ્વરૂપ સમક્ષિતકી પ્રાપ્તિ કરનેમૈં, ઓર પ્રાપ્ત સમક્ષિત કી રક્ષા કરનેમૈં
કારણભૂત વિશુદ્ધ પરિણામ ધારાકે વધાનેમૈં સદા યત્ન કરતા રહૂં ।’
અથવા ‘હસ અનન્ત સંસારમૈં અનન્તકષ્ટપ્રદાતા કર્મરૂપ શત્રુ હી હૈં; અતઃ
હન્હેં પરાસ્ત કરનેકે લિયે મી મૈં અપને મીતર વિશુદ્ધ પરિણામોંકી ધારા
યદ્વા કર વીર્યગુણસ્વરૂપ અપની શક્તિકા વિકાસ કરૂં તો અવશ્ય હી
સફલતા પ્રાપ્ત કર લૂંગા’ હસ પ્રકાર સદા ડસ ભવ્ય જીવ કો ઉત્સાહિત
રહના ચાહિયે ॥ સૂ. ૧૦ ॥

॥ ચતુર્થ અધ્યયન કા પ્રથમ ઉદ્દેશક સંપૂર્ણ ॥ ૪-૧ ॥

અને આ વિવેકબુદ્ધિથી તે એ સમગ્ર શકશે કે ‘જે સમક્ષિતથી શૂન્ય છે તે આ
ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, તેથી હું પણ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોને ત્યાગીને મોક્ષવૃક્ષના
ધીજસ્વરૂપ સમક્ષિતની પ્રાપ્તિ કરવામાં, અને મેળવેલા સમક્ષિતની રક્ષા કરવામાં
કારણભૂત વિશુદ્ધ પરિણામધારાને વધારવામાં હમેશાં યત્ન કરતો રહૂં.’ અથવા-
‘આ અનન્ત સંસારમાં અનન્ત દુઃખ આપવાવાળા કર્મરૂપ શત્રુ જ છે, તેનો પરાજય
કરવાને માટે પણ મારા અંતરની વિશુદ્ધ પરિણામોની ધારા વહાવીને વીર્યગુણ-
સ્વરૂપ મારી શક્તિનો વિકાસ કરૂં તો અવશ્ય સફળતા પ્રાપ્ત થશે’ એવા પ્રકારે
હમેશાં ભવ્ય હવે ઉત્સાહી રહેવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

એવા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સંપૂર્ણ ॥ ૪-૧ ॥



॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः ॥

इहानन्तरप्रथमोद्देशके सम्यग्दर्शनं प्रतिबोधितम् । तच्च नवतत्त्वश्रद्धानात्मकम् । तत्र—किं तत्त्वं संसारकारणं ? किं च मोक्षकारणम् ? इत्युभयोर्निर्णयमन्तरेण मुमुक्षोः सम्यग्दर्शनं न संभवतीत्यतः सम्यक्त्वप्रतिबोधनप्रसङ्गागते आस्रवनिर्जरे संसार-मोक्षहेतुभूते प्रतिबोधयितुमाह—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

मूलम्—जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा ।

जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥सू०१॥

छाया—ये आस्रवास्ते परिस्सवाः, ये परिस्सवास्ते आस्रवा ।

ये अनास्रवास्ते अपरिस्सवाः, ये अपरिस्सवास्ते अनास्रवाः ॥ सू० १ ॥

॥ चौथे अध्ययन का दूसरा उद्देश ॥

सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययनके प्रथम उद्देशकमें सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझा दिया गया है । वहां यह कहा गया है कि—वह सम्यग्दर्शन नव तत्त्वों की श्रद्धास्वरूप है । वे नवतत्त्व ये हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बन्ध और ९ मोक्ष । मोक्षाभिलाषी को जब तक यह निश्चय नहीं हो जाता कि इनमें से कौनसा तत्त्व संसारका कारण है और कौनसा मोक्षका, तब तक उसके समकित की प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः उसके लिये इस सम्यक्त्वबोधन के प्रकरणमें आये हुए तत्त्वों मेंसे ‘आस्रव संसार का और निर्जरा मोक्षका कारण है’ इस बातको स्पष्ट करने के लिए कहते हैं—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

ચોથા અધ્યાયનો બીજો ઉદ્દેશ

સમ્યક્ત્વ નામના ચોથા અધ્યયનના પહેલા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દર્શનનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવ્યું છે ત્યાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે—તે સમ્યગ્દર્શન નવ તત્ત્વોની શ્રદ્ધાસ્વરૂપ છે. આ નવ તત્ત્વ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવ ૧, અજીવ ૨, પુણ્ય ૩, પાપ ૪, આસ્રવ ૫, સંવર ૬, નિર્જરા ૭, બંધ ૮, અને મોક્ષ ૯. ત્યાં સુધી મોક્ષાભિલાષીને એ નિશ્ચય નથી થતો કે આમાંથી કયું તત્ત્વ સંસારનું કારણ છે ? અને કયું મોક્ષનું ? , ત્યાં સુધી તેને સમકિતની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એથી તેને માટે આ સમ્યક્ત્વબોધનના પ્રકરણમાં આવેલા તત્ત્વોમાંથી આસ્રવ સંસારનું અને નિર્જરા મોક્ષનું કારણ છે, આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે કહે છે— ‘જે આસવા’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—યે આસ્રવાઃ=અષ્ટવિધં કર્માસ્રવતિયૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધહેતવો વિપયાઃ, તે પરિસ્રવાઃ=પરિ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=અપગચ્છતિ અષ્ટપ્રકારં કર્મયૈસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાહેતવઃ, વિપયસુખાઽઽસક્તાનાં સ્વચ્ચન્દનવનિતાદયો વિપયાઃ કર્મવન્ધજનકત્વાદાસ્રવા ભવન્તિ, ત એવ સેવનચિન્તનાદિભિઃ સંસારાનન્તદુઃસ્વકરણતયા પ્રતીયમાના હેયોપાદેયવિવેકવતાં તત્ત્વજ્ઞાનિનાં વૈરાગ્યજનકત્વાત્ પરિસ્રવા ભવન્તિ । યથા ભરતસ્ય આસ્રવાઃ પરિસ્રવરૂપેણ પરિણતા વભૂવુઃ, યથા વા-સમુદ્રપાલસ્ય, યથા વા નમિરાજર્ણેઃ । તથા ચોક્તમ્—

‘યે આસ્રવાઃ’ જો કિસી અપેક્ષાસે કર્મવન્ધકે હેતુ હૈં ‘તે પરિસ્રવાઃ’ વે હી કિસી દુસરી અપેક્ષાસે કર્મોંકી નિર્જરાકે ભી હેતુ હૈં । ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જો નિર્જરાકે હેતુ હૈં ‘તે આસ્રવાઃ’ વે આસ્રવકે ભી હેતુ હૈં । ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જો આસ્રવસે ભિન્ન હૈં ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ વે કર્મવન્ધકે ભી કારણ હૈં । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જો કર્મવન્ધકે કારણ હૈં ‘તે અનાસ્રવા’ વે કર્મવન્ધકે કારણ નહીં ભી હૈં ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારકે કર્મ જિનકે દ્વારા આતે હૈં એસે કર્મવન્ધકે કારણરૂપ જો વિપયકપાયાદિક હૈં ઉન્હેં આસ્રવ કહતે હૈં । તથા જિનકે દ્વારા અષ્ટ પ્રકારકે કર્મ સર્વથા નિર્જરિત હોતે હૈં, એસે નિર્જરાકે કારણ જો તપસંયમાદિક હૈં ઉન્હેં પરિસ્રવ કહતે હૈં । વિપયસુખોંમેં આસક્ત મનવાલેકે લિયે મારા ચન્દન એવં વનિતાદિક જો પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિપય હૈં વે કર્મવન્ધકે કારણ હોનેસે આસ્રવ હોતે હૈં, કારણ કિ વહું ઉન્કે સેવનસે અપને કો પરમસુખી માનતા હૈ, એવં ઉન્હેં

‘યે આસ્રવાઃ’ જે કોઈ અપેક્ષાથી કર્મબંધના હેતુ છે ‘તે પરિસ્રવાઃ’ તે જ કોઈ ખીલ અપેક્ષાથી કર્મોની નિર્જરના હેતુ છે. ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જે નિર્જરના હેતુ છે ‘તે આસ્રવાઃ’ તે આસ્રવના પણ હેતુ છે. ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જે આસ્રવથી ભિન્ન છે ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના પણ કારણ છે. ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જે કર્મબંધના કારણ છે ‘તે અનાસ્રવા’ તે કર્મબંધના કારણ હોતા પણ નહીં.

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણ આવે છે એવા કર્મબંધના કારણરૂપ જે વિપય તથા જે દ્વારા આઠ પ્રકારના કર્મ સર્વથા નિર્જર કારણ છે તેને પરિસ્રવ કહે છે. વિપયસુખોમા અને સીધા પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિપય છે આસ્રવ જે તે તેના સેવનથી પોતાના કર્મ જે દ્વારા તેને આસ્રવ કહેવામાં આવે છે એવા નિર્જરના અને માણા, કારણ માને છે,

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણમુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમદ્વિતા છે, ‘યે મેરે હૈં ઓર મૈં ઇનકા હૂં’ ઇસ પ્રકારકી ડસકી સદા માન્યતા હોતી છે, ડનકે બિગાડમેં અપના બિગાડ, ઓર ડનકે સુધારમેં અપના સુધાર માનતા છે, તબ જ્ઞાની કી જિસકે હૃદયમેં હેયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હો રહા છે ઓર જો કર્મ કે ડદયસે ઇનકા સેવન બી કરતા છે ફિર બી ઇનસે અપનેકો જલમેં કમલ કી તરહ સર્વથા ભિન્ન હી દેખતા છે, યે હી પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય ડસકો સાંસારિક અનન્ત કષ્ટોંકે કારણરૂપ પ્રતીત હોનેસે વૈરાગ્ય કે જનક, પરિસ્ત્રવ-હોતે હૈં, ઇસ કારણ ડસકે લિયે યે આસ્રવ કર્મકી નિર્જરાકે હી કારણ હૈં । જૈસે છહ રાજ્ડોં કા રાજ્ય કરનેવાલે ભરતચક્રવર્તી કે લિયે ંવં સમુદ્રપાલ તથા નમિ રાજર્ષિકે લિયે વે હી પદાર્થ જો અજ્ઞાનીકે લિયે આસ્રવ કે કારણ થે, નિર્જરા કે હી કારણ હું । જૈસે કહા છે—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણમુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જિસ પ્રકારકે જિતને સંસારપરિભ્રમણ કે કારણ હોતે હૈં, ડનસે વિપરીત પ્રકારકે ડતને હી મોક્ષસુખકે કારણ હોતે હૈં ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમજે છે. ‘આ મારા છે અને હુ તેમનો છુ’ આ પ્રકારની તેની સદા માન્યતા રહે છે. તેના બગડવામાં પોતાનુ બરાણ થયેલ, અને તેના સુધારામાં પોતાનો સુધારો માન્યા કરે છે. ત્યારે જ્ઞાની કે જેના હૃદયમાં હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થયેલ છે અને કર્મના ઉદયથી તેનું સેવન પણ કરે છે તો પણ તેનાથી પોતાને જળમાં કમળની માફક સર્વથા ભિન્નપણે દેખે છે. આ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો ને સાંસારિક અનન્ત દુઃખોનું કારણરૂપ પ્રતીત થવાથી તેના માટે તેવિરાગ્યના કર્તા બને છે, આ કારણ તેના માટે તે કર્મની નિર્જરાના જ કારણ છે. જેમ છ બંડનું રાજ્ય કરવાવાળા ભરત ચક્રવર્તીને માટે અને સમુદ્રપાલ તથા નમિરાજર્ષિને માટે તે જ પદાર્થો, જે અજ્ઞાનીને માટે આસ્રવના કારણ હતા; નિર્જરાના જ કારણ થયા. જેમ કહ્યું છે—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણમુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જે પ્રકારના જેટલા સંસારપરિભ્રમણના કારણ થાય છે, તેનાથી વિપરીત પ્રકારના તેટલા જ મોક્ષસુખના કારણ થાય છે. (૧)

ટીકા—યે આસ્રવાઃ=અષ્ટવિધં કર્માસ્રવતિયૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધહેતવો વિપયાઃ, તે પરિસ્રવાઃ=પરિ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=અપગચ્છતિ અષ્ટપ્રકારં કર્મયૈસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાહેતવઃ, વિપયસુખાઽસક્તાનાં સ્વચ્ચન્દનવનિતાદયો વિપયાઃ કર્મવન્ધજનકત્વાદાસ્રવા ભવન્તિ, ત એવ સેવનચિન્તનાદિભિઃ સંસારાનન્તદુઃસ્વકરણતયા પ્રતીયમાના દ્વેયોપાદેયવિવેકવતાં તત્ત્વજ્ઞાનિનાં વૈરાગ્યજનકત્વાત્ પરિસ્રવા ભવન્તિ । યથા ભરતસ્ય આસ્રવાઃ પરિસ્રવરૂપેણ પરિણતા વભૂવુઃ, યથા વા-સમુદ્રપાલસ્ય, યથા વા નમિરાજર્ણેઃ । તથા ચોક્તમ્—

‘યે આસ્રવાઃ’ જો કિસી અપેક્ષાસે કર્મવન્ધકે હેતુ હૈં ‘તે પરિસ્રવાઃ’ વે હી કિસી દૂસરી અપેક્ષાસે કર્મોંકી નિર્જરાકે ભી હેતુ હૈં । ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જો નિર્જરાકે હેતુ હૈં ‘તે આસ્રવાઃ’ વે આસ્રવકે ભી હેતુ હૈં । ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જો આસ્રવસે ભિન્ન હૈં ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ વે કર્મવન્ધકે ભી કારણ હૈં । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જો કર્મવન્ધકે કારણ હૈં ‘તે અનાસ્રવા’ વે કર્મવન્ધકે કારણ નહીં ભી હૈં ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારકે કર્મ જિનકે ઢારા આતે હૈં એસે કર્મવન્ધકે કારણરૂપ જો વિષયકષાયાદિક હૈં ઉન્હેં આસ્રવ કહતે હૈં । તથા જિનકે ઢારા અષ્ટ પ્રકારકે કર્મ સર્વથા નિર્જરિત હોતે હૈં, એસે નિર્જરાકે કારણ જો તપસંયમાદિક હૈં ઉન્હેં પરિસ્રવ કહતે હૈં । વિપયસુખોંમેં આસક્ત મનવાલેકે લિયે માલા ચન્દન एवं વનિતાદિક જો પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિપય હૈં વે કર્મવન્ધકે કારણ હોનેસે આસ્રવ હોતે હૈં, કારણ કિ વહ ઉનકે સેવનસે અપને કો પરમસુગ્રી માનતા હૈ, एवं ઉન્હેં

‘યે આસ્રવાઃ’ ને કોઈ અપેક્ષાથી કર્મબંધના હેતુ છે ‘તે પરિસ્રવાઃ’ તે જ કોઈ બીજી અપેક્ષાથી કર્મોની નિર્જરના હેતુ છે ‘યે પરિસ્રવાઃ’ ને નિર્જરના હેતુ છે ‘તે આસ્રવાઃ’ તે આસ્રવના પણ હેતુ છે. ‘યે અનાસ્રવાઃ’ ને આસ્રવથી ભિન્ન છે ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના પણ કારણ છે ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ ને કર્મબંધના કારણ છે ‘તે અનાસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના કારણ હોતા પણ નથી.

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના કર્મ ને દ્વારા આવે છે એવા કર્મબંધના કારણરૂપ ને વિષયકષાયાદિક છે તેને આસ્રવ કહે છે. તથા ને દ્વારા આઠ પ્રકારના કર્મ સર્વથા નિર્જરિત થાય છે, એવા નિર્જરના ને કારણ છે તેને પરિસ્રવ કહે છે. વિષયસુખોમા આગ્રહ્યમનવાણાને માણા, ચંદન અને સ્રી આદિક ને પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય છે તે કર્મબંધનાં કારણ હોવાથી આસ્રવ થાય છે, કારણ કે તે તેના સેવનથી પોતાને ઘણા સુખી માને છે, અને તેને

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ સંસારાવેશહેતવઃ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ” ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમજતા હૈ, ‘યે મેરે હૈં ઓર મૈં ઇનકા હૂં’ ઇસ પ્રકારકી ઉસકી સદા માન્યતા હોતી હૈ, ઉનકે વિગાડમૈં અપના વિગાડ, ઓર ઉનકે સુધારમૈં અપના સુધાર માનતા હૈ, તબ જ્ઞાની કિ જિસકે હૃદયમૈં હૈયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હો રહા હૈ ઓર જો કર્મ કે ઉદયસે ઇનકા સેવન ભી કરતા હૈ ફિર ભી ઇનસે અપનેકો જલમૈં કમલ કી તરહ સર્વથા ભિન્ન હી દેખતા હૈ, યે હી પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય ઉસકો સાંસારિક અનન્ત કષ્ટોંકે કારણરૂપ પ્રતીત હોનેસે વૈરાગ્ય કે જનક, પરિસ્વ-હોતે હૈં, ઇસ કારણ ઉસકે લિયે યે આસ્રવ કર્મકી નિર્જરાકે હી કારણ હૈં। જૈસે છહ ઘણડોં કા રાજ્ય કરનેવાલે ભરતચક્રવર્તી કે લિયે ઇવં સમુદ્રપાલ તથા નમિ રાજર્ષિકે લિયે વે હી પદાર્થ જો અજ્ઞાનીકે લિયે આસ્રવ કે કારણ થે, નિર્જરા કે હી કારણ હુઐ। જૈસે કહા હૈ—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જિસ પ્રકારકે જિતને સંસારપરિભ્રમણ કે કારણ હોતે હૈં, ઉનસે વિપરીત પ્રકારકે ઉતને હી મોક્ષસુખકે કારણ હોતે હૈં ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમજે છે ‘આ મારા છે અને હું તેમનો છું’ આ પ્રકારની તેની સદા માન્યતા રહે છે. તેના બગડવામાં પોતાનું ખરાબ થયેલ, અને તેના સુધારામાં પોતાનો સુધારો માન્યા કરે છે. ત્યારે જ્ઞાની કે જેના હૃદયમાં હૈયોપાદેયનો વિવેક બ્રહ્મત થયેલ છે અને કર્મના ઉદયથી તેનું સેવન પણ કરે છે તો પણ તેનાથી પોતાને જળમાં કમળની માફક સર્વથા ભિન્નપણે દેખે છે. આ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો તને સાંસારિક અનન્ત કષ્ટોંકું કારણરૂપ પ્રતીત થવાથી તેના માટે તેવૈરાગ્યના કર્તા બને છે, આ કારણ તેના માટે તે કર્મની નિર્જરાના જ કારણ છે જેમ છ બહુ રાજ્ય કરવાવાળા ભરત ચક્રવર્તીને માટે અને સમુદ્રપાલ તથા નમિરાજર્ષિને માટે તે જ પદાર્થો, જે અજ્ઞાનીને માટે આસ્રવના કારણ હતા; નિર્જરાના જ કારણ થયા. જેમ કહ્યું છે—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જે પ્રકારના જેટલા સંસારપરિભ્રમણના કારણ થાય છે, તેનાથી વિપરીત પ્રકારના તેટલા જ મોક્ષસુખના કારણ થાય છે. (૧)

રાગદ્વેપમલ્લિનમનસો વૈષયિકસુખોન્મુલ્યસ્ય સર્વે સંસારકારણં ભવતિ, યથા નિમ્બરસાક્રાન્તરસનસ્ય ક્ષીરગર્કરાદિકં સર્વં મધુરં કદુતયા પરિણમતે । સમ્યગ્દૃષ્ટે-સ્તુ વિષયવિતૃષ્ણસ્ય સર્વં મ્ચકૂચન્દનવનિતાઽઽદિકમથુચિ દુઃસ્વકારણં ચેતિ ભાવયતઃ પ્રાદુર્ભૂતસંવેગમ્ય તદેવ મોક્ષજનકં ભવતિ ।

ઉક્તાર્થમેવ દ્રઢયિતું પરાવૃત્ય કથયતિ—“ જે પરિસ્સવા ” ઇત્યાદિ । ય એવ પરિસ્સવાઃ=નિર્જરાહેતવસ્તપઃસંયમાદયસ્ત એવ કર્મોદયપ્રતિરુદ્ધશુભપરિણામસ્ય સાવધક્રિયાપ્રવૃત્તસ્ય જન્તોર્કદ્ધિરસસાતગૌરવપ્રાપ્તિમનસઃ આસ્ત્રવા ભવન્તિ । કર્મ-નિર્જરાર્થં યાવન્તિ સંયમસ્થાનાનિ તાવન્ત્યેવ કર્મવન્ધનાયાસંયમસ્થાનાનિ । યથા નાગેશ્વરીત્રાહ્મણ્યાઃ પરિસ્ત્રવા આસ્ત્રવરૂપેણ પરિણતા વમ્ભુઃ ॥

રાગ દ્વેપસે આકુલ एवं વૈષયિક સુખમેં લવલીન જીવકે લિયે પંચેન્દ્રિયોંકે સમી વિષય સંસારકે કારણ હોતે હૈં । જૈસે-નીમ કે રસપાન કરનેસે જિમકી જીમકા સ્વાદ કદુ (કદુઆ) હો ચુકા હૈં એસે વ્યક્તિ કે લિયે મીઠા પદાર્થ મી કદુઆ પ્રતીત હોતા હૈં । સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે લિયે, કિ જિસકા ચિત્ત વિષયાદિકોંસે વિતૃષ્ણ-તૃષ્ણારહિત હો ચુકા હૈં, વે હી માલા ચન્દન આદિ સમસ્ત વિષય અપવિત્ર ઓર દુઃસ્વકે હી કારણરૂપ પ્રતીત હોતે હૈં, અત્ત ઇનસે ડનકા ચિત્ત સદા વિરક્ત રહા કરતા હૈં, ઇસલિયે ડનકે પ્રતિ સંવેગભાવ કી જાગૃતિ હોનેસે વે હી વસ્તુનું ડનકે લિયે નિર્જરાકા કામ કરતી હૈં ।

નિર્જરા હી મોક્ષકા કારણ હૈં, ઇસી વાતકો દૃઢ કરનેકે લિયે ડપર કહે હુણ અર્થકો હી ડુમાકર કહતે હૈં-(૨) “ વે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ ” ઇત્યાદિ । જો તપમંયમાદિક ભાવ જ્ઞાની કે ‘ પરિસ્ત્રવાઃ ’ નિર્જરા કે કારણ હોતે હૈં, વે હી અજ્ઞાની કે કિ-જિસ કી અપને કર્મકે

રાગદ્વેપથી વ્યાપુણ તેમજ વૈષયિક સુખમા રચેલાં હવેને માટે પાંચ ઇન્દ્રિયોના બધા વિષયો સંસારના કારણ થાય છે, જેમ લીંબડાનો રસ પીવાથી જેની હબને સ્વાદ કડવો બનેલ છે તેવી વ્યક્તિને માટે મીઠો પદાર્થ પણ કડવો લાગે છે. સમ્યગ્દૃષ્ટિ હવ કે જેનું ચિત્ત વિષયાદિકની તૃપ્તિથી સંહિત છે તે માણા, ચન્દન આદિ સમસ્ત વિષયોને અપવિત્ર અને દુઃખાનુ કારણ માને છે, તેથી તે વિષયોથી તેનું ચિત્ત હમેશા વિરક્ત રહ્યા કરે છે. આ માટે તેના પ્રતિ સંવેગભાવની જાગૃતિ થવાથી તેજ વસ્તુઓ તેને માટે નિર્જરાનું કામ કરે છે.

નિર્જરાજ મોક્ષનુ કારણ છે. આ વાતને દૃઢ કરવાને માટે ડપર કહેલા અર્થને જરૂરથીને કહે છે-(૨) ‘ વે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ ’ ઇત્યાદિ. જે તપ, સંયમ આદિ બાવો જ્ઞાની માટે ‘ પરિસ્ત્રવાઃ ’ નિર્જરાના કારણ થાય છે, તે અજ્ઞાની માટે-

ये अनास्रवाः=आस्रवेतराः-व्रतविशेषाः, तेऽपि कर्मोदयवशादशुभाध्यवसायवतो जन्तोरपरिस्रवाः=कर्मबन्धकारणानि भवन्ति, यथा वान्तसम्यक्त्वस्य मुनेः । तथा-ये अपरिस्रवाः=कर्मबन्धहेतवः ते प्रवचनोपकारादिना क्रियमाणाः अनास्रवाः भवन्ति, कर्मबन्धजनका न भवन्तीत्यर्थः, यथा बालजनानाद्यर्थं नित्यपिण्डादिग्राहकस्य ।

यद्वा—अत्र सूत्रे चतुर्भङ्गी प्रोच्यते, तथाहि—

उदयसे शुभ परिणामधारा रुकी हुई है, सावद्य क्रियाओं के करनेमें ही जिसकी प्रवृत्ति चालू रहती है, और जो ऋद्धि, रस, सात गौरवकी प्राप्ति करनेके अभिप्राय से ही तप संयमादिकोंका आराधन करता है उसके आस्रव-नवीन २ कर्मों के आने के द्वार होते हैं । समकितके बिना की गई समस्त ही क्रियाएं कर्मबन्धका कारण होती हैं । अज्ञानियों के तपसंयमादिक, समकित के अभावमें मिथ्यारूप-असंयमरूप होते हैं, अनः वे उसके निर्जराके हेतु न हो कर उल्टे आस्रवके ही कारण बनते हैं । समकितके कर्मनिर्जराके लिये जितने भी संयमस्थान हैं उतने ही अज्ञानियों के कर्मबन्धके लिये असंयमस्थान भी हैं । इस विषयमें नागेश्वरी ब्राह्मणीका दृष्टान्त प्रसिद्ध है, उसके लिए परिस्रव आस्रवरूपसे परिणत हुए हैं ।

(३) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः'—जिनसे कर्मबन्ध नहीं होता ऐसे जो व्रतविशेष हैं वे भी, कर्मोदयके वशसे जिसके अध्यवसाय अशुभ हो रहे हैं ऐसे अज्ञानी जीवके लिये कर्मबन्धके ही कारण होते हैं ।

जेनी पोताना कर्मना उदयथी शुभपरिणामधारा बन्ध छे, सावद्य-क्रियाओ करवामां न जेनी प्रवृत्ति आतु छे, अने जे ऋद्धि, रस, सात गौरवनी प्राप्ति करवामां न तपसंयमादितुं आराधन करे छे तेने माटे आस्रवना-नवा नवा कर्मोना आववाना-द्वार थाय छे समकित वगर करवामां आवेदी भधी क्रियाओ कर्म-बन्धना कारण थाय छे अज्ञानियोना तप संयमादि समकितना आवामां मिथ्यारूप-असंयमरूप थाय छे, तेथी ते निर्जराना हेतु न थधने आस्रवना न कारण बने छे. समकितना कर्मनिर्जराने माटे जेटला पणु संयम-स्थानो छे तेटला न अज्ञानियोना कर्मबन्धना माटे असंयम-स्थानो पणु छे. आ विषयमा नागेश्वरी ब्राह्मणीनुं दृष्टान्त प्रसिद्ध छे. तेने माटे परिस्रव, आस्रवरूपथी परिणत थयेल छे.

(३) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः' जेनाथी कर्मबन्ध नथी थता जेवा जे व्रत-विशेष छे ते पणु कर्मोदयना वशथी जेना अध्यवसाय अशुभ न रहेला छे, जेवा अज्ञानी जेवने माटे कर्मबन्धना न कारण बने छे.

- (૧) યે આમ્રવાસ્તે પરિસ્ત્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્ત્રવાઃ,
(૩) યે અનામ્રવાસ્તે પરિસ્ત્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્ત્રવાઃ,

(૧) યે આમ્રવાઃ—આસ્રવન્તિ=કર્મ સંચિન્વન્તીત્યાસ્રવાઃ=કર્મબન્ધકર્તારો જીવાઃ, ત એવ પરિસ્ત્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારઃ । અસ્મિન્ પ્રથમભક્તે સર્વે સંસારિણો જીવાઃ પ્રવિષ્ટાઃ, તે દિ પ્રતિક્ષણમિથ્યાત્વાદિભિરાગન્તુકાનાં કર્મણાં વન્થં, પૂર્વાર્જિતાનાં ચ નિર્જરાં કુર્વન્તિ ।

તથા—(૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્ત્રવાઃ, इति द्वितीयभङ्गवर्तिनो जीवाः

(૪) ‘યે અપરિસ્ત્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ’ જો કર્મકે બન્ધ કરાને મેં કારણ હોતે હે વે હી પ્રવચનકે ઉપકારકે અભિપ્રાયસે ક્રિયે હુગ હોને સે કર્મ-બન્ધકે કારણ નહીં હોતે, જૈસે ચાલગ્લાનાદિકે લિયે નિત્યપિષ્ઠાદિ કા ગ્રહણ કરના । હસ સૂત્રમેં આદિ અંત કે દો હી ભંગ વતલાયે ગયે હૈં, મધ્ય કે નહીં, ઉનકા ગ્રહણ કરને પર હસ સૂત્રમેં ચતુર્ભક્તી હસ પ્રકાર સે ઘનતી હૈ—

(૧) યે આસ્રવાઃ—તે પરિસ્ત્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ—તે અપરિસ્ત્રવાઃ

(૩) યે અનાસ્રવાઃ—તે પરિસ્ત્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ—તે અપરિસ્ત્રવાઃ

૧—યહાં પર પ્રથમ ભક્ત મેં સમસ્ત સંસારી જીવોં કા સમાવેશ હો જાના હૈ, કારણ કિ વે હી જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જો કર્મબન્ધકે કારણ હૈં ઉનસે કર્મોંકા બન્ધ કરતે રહતે હૈં, ઓર પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભા કિયા કરતે હૈં ।

૨—દ્વિતીય ભક્ત શૂન્ય હૈ; કારણ—એસે કોઈ બી જીવ નહીં હૈં જો

(૪) ‘યે અપરિસ્ત્રવાઃ તે અનાસ્રવાઃ’ જે કર્મબંધ કરાવવામાં કારણ બને છે, પ્રવચનના ઉપકાર કરવાના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવેલ તે જ કર્મબંધના કારણ થતા નથી, જેમ જાળ-ગ્લાનાદિ માટે નિત્યપિંડાદિનું ગ્રહણ કરવું. આ સૂત્રમાં આદિઅંતના બે ભંગ બતાવેલ છે. મધ્યના નહિ. આના ગ્રહણ કરવાથી આ સૂત્રમાં ચતુર્ભંગી આ પ્રકારે બને છે—

(૧) યે આમ્રવાઃ — તે પરિસ્ત્રવાઃ, (૨) યે આમ્રવાઃ — તે અપરિસ્ત્રવાઃ,

(૩) યે અનામ્રવાઃ — તે પરિસ્ત્રવાઃ, (૪) યે અનામ્રવાઃ — તે અપરિસ્ત્રવાઃ ।

(૧) અહીં પ્રથમ ભંગમાં સમસ્ત સંસારી જીવોના સમાવેશ થઈ બત્ય છે. કારણ કે તે જ એવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જે કર્મબંધના કારણ છે તે-ઓથી કર્મનો બંધ કરે છે, અને પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરે છે.

(૨) બીજો ભંગ શૂન્ય છે; કારણ કે એવો કોઈ પણ જીવ નથી જે આસ્રવકર્તા

કેડપિ નોપલભ્યન્તે, કુતઃ ? યે-આસ્રવાઃ-કર્મવન્ધકર્ત્તારસ્તેડવશ્યમેવ કર્મ-નિર્જરાકર્ત્તારો ભવન્તિ, તસ્માત્તે-અપરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાયાઃ અકર્ત્તારો ન ભવન્તિ ।

તથા-(૩) યે અનાસ્રવાઃ=કર્મવન્ધસ્યાડકર્ત્તારસ્તે પરિસ્રવાઃ=પૂર્વકર્મનિર્જરા-કર્ત્તારઃ, ઇત્યેતસ્મિન્ તૃતીયભક્તે ચાયોગિકેવલિનશ્ચતુર્દશગુણસ્થાનવર્તિનઃ સન્તિ ।

તથા—(૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, ઇતિ ચતુર્થભક્તે સિદ્ધાઃ સન્તિ, તેષા-મનાસ્રવત્વાદપરિસ્રવત્વાચ્ચ । અત્રાઘન્તભક્તો મૂત્રે ગૃહીતૌ । આઘન્તભક્તગ્રહણેન મધ્યમ-ભક્તદ્વયં મુતરાં ગૃહ્યતે ॥

યદ્વા-યે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકર્ત્તારો જીવાસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્ત્તારો ભવન્તિ । તથા-યે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્ત્તારસ્તે આસ્રવાઃ=પુનર્નવીનકર્મવન્ધ-કર્ત્તારો ભવન્તિ ।

આસ્રવકર્તા હોતે હુણ્ મી નિર્જરા કે કર્તા નહીં, જો કર્મવન્ધકે કર્તા હોતે હૈં વે અવશ્ય હી કર્મકી નિર્જરા કે મી કર્તા હોતે હૈં ।

૩-તૃતીય ભક્તમેં અયોગિકેવલિનામક ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં રહ-નેવાલે જીવોંકા ગ્રહણ હૈ, કારણ કિ ઉનકે નવીન કર્મોંકે વન્ધકા અભાવ હૈ, ઓર પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કી નિર્જરા કા સદ્ભાવ હૈ ।

૪-ચતુર્થ ભક્ત મેં સિદ્ધ જીવોંકા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, વહાં પર ન કર્મોં કા આસ્રવ હૈ ઓર ન ઉનકી નિર્જરા હી હૈ ।

અથવા-જો જીવ આસ્રવ-કર્મવન્ધકે કરનેવાલે હૈં વે પરિસ્રવ-કર્મ-નિર્જરાકે કરનેવાલે હૈં, તથા-જો પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરા કે કરનેવાલે હૈં વે આસ્રવ-ફિરસે નવીન કર્મોં કે વન્ધ કરનેવાલે હૈં ।

હોવા છતાં નિર્જરાનો કર્તા ન હોય ? જે કર્મબંધનો કર્તા હોય છે તે અવશ્ય જ કર્મની નિર્જરાનો પણ કર્તા હોય છે

(૩) ત્રીજા ભંગમા અયોગિકેવળી નામના ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં રહેવાવાળા જીવોતું ગ્રહણ છે, કારણ કે તેને નવા કર્મના બંધનો અભાવ છે, અને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોની નિર્જરાનો સદ્ભાવ છે.

(૪) ચોથા ભંગમાં સિદ્ધ જીવોતું ગ્રહણ કરેલું છે. ત્યાં નથી કર્મોતું આસ્રવ અને નથી તેઓની નિર્જરા.

અથવા-જે જીવો આસ્રવ-કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે તે પરિસ્રવ-કર્મ-નિર્જરાના કરવાવાળા છે, તથા જે પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરાના કરવાવાળા છે તે આસ્રવ-ફરી નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે.

નન્વેવં 'યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ' ઇતિ સ્વીકારે ત્રયોદશે સયોગિકેવલિ-ગુણસ્થાને ઈર્યાપથિકક્રિયયા સમાગતં કર્મ નિર્જરયતો મુનેઃ પુનર્નવીનકર્મવન્ધાપત્તૌ સત્યાં કર્મવન્ધપરમ્પરોચ્છેદઃ કદાપિ ન સ્યાત્, તથા ચ-આગમોક્તમોક્ષવાદસ્ય વૈયથ્યં પ્રસજ્યેત ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—

ત્રયોદશગુણસ્થાનસમાગતકર્મણો નિર્જરા યદિ જીવેન પ્રયત્નવિશેષેણ ક્રિયેત તર્હિ યથોક્તરીત્યા તન્નિર્જરાકર્તુર્મુનેઃ પુનરપિ નવીનકર્મવન્ધકર્તૃત્વમાપદ્યેત, પરન્તુ નૈવં ભવતિ, યતઃ—તસ્ય કર્મણો નિર્જરા સ્વભાવાદેવ જાયતે ।

શંકા—“જો નિર્જરા કરનેવાલે હૈં વે નવીન કર્મકા વન્ધ કરનેવાલે હૈં ” ઇસ પ્રકારકે પૂર્વોક્ત ભક્તકી સ્વીકૃતિમેં સયોગિ-કેવલિનામક તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તીં જીવોં કે ભી નવીન કર્મવન્ધકા સદ્ભાવ માનના પડેગા; કારણ કિ વહાં પર નિર્જરા ભી હોતી હૈં ઔર ઈર્યાપથ ક્રિયાસે નવીન કર્મોંકા વન્ધ ભી હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા કે અનુસાર તો વહાં કમી ભી કર્મવન્ધ કી પરમ્પરા કા ઉચ્છેદ હીં નહીં હો સકેગા; ફિર આગમમેં જિસ મુક્તિવાદ કા સમર્થન કિયા હુઆ મિલતા હૈં વહ સર્વથા અસંગત હી ઠહરેગા ?

ઉત્તર—યહ આપકા કહના તવ ઠીક હો સકતા, જવ કિ ત્રયોદશ ગુણસ્થાનવર્તીં જીવકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિમી પ્રયત્ન વિશેષસે સાધ્ય હોતી માની જાતી, પરંતુ એસી માન્યતા તો હૈં હી નહીં, ક્યોં કિ વહાં પર આગત કર્મોં કી નિર્જરા સ્વતઃ-સ્વભાવસે હી હોતી હૈં ।

શંકા—‘યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ’ અર્થાત્—“ જે નિર્જરા કરવાવાળા છે તે નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે. ” આ પ્રકારે જે માનવામાં આવે તો સયોગિકેવળીનામના તેરમાં ગુણસ્થાનવર્તીં હોવોને પણ નવા કર્મના બંધનો સદ્ભાવ માનવો પડશે, કારણ કે ત્યાં નિર્જરા પણ થાય છે અને ઈર્યાપથિક્રિયાથી નવા કર્મનો બંધ પણ થાય છે. આવા પ્રકારની માન્યતાના અનુસારે તો ત્યાં કોઈ વખત પણ કર્મબંધની પરંપરાનો ઉચ્છેદ થઈ શકે નહિ, તો પછી આગમમાં જે મુક્તિવાદનું સમર્થન કરેલું છે તે સર્વથા અસંગત જ થઈ જશે.

ઉત્તર—આ આપનું કહેવું ત્યારે સંગત થાય, ત્યારે ત્રયોદશગુણસ્થાન-વર્તીં હોવાના આગત-કર્મોની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન માનવામાં આવે, પરંતુ એવી માન્યતા તો છે જ નહિ, કેમ કે તે ઠંકાણે આગત (આવેલા) કર્મોની નિર્જરા સ્વભાવથી જ થાય છે.

અત્ર પરિસ્ત્રવપદાર્થે જીવપ્રયત્નકૃતા નિર્જરા પરિગૃહ્યતે, एवं च नोक्तदोषप्रसङ्गः । त्रयोदशगुणस्थाने उक्तकर्मेव जीवो निर्जरयति, प्रथमसमये ऐर्यापथिककर्मणो बन्धः, द्वितीये तद्वेदनं, तृतीये च तन्निर्जरेत्येवं क्रमेण बन्धो निर्जरा चेति द्वयं स-योगिकेवल्लिगुणस्थानं यावत् प्रवर्तते । तत्रत्या निर्जरा न जीवप्रयत्नजनिता किंतु स्वभावादेवेति पुनः पुनः स्मृतिपथमानेतव्यम् ।

तथा—चतुर्दशगुणस्थानवर्तिजीवोऽपि नैतद्वाक्यविषयः । तस्याघातिकर्मचतुष्टय-निर्जराकर्तृत्वं प्रयत्नविशेषमनपेक्ष्य भवति, केवलज्ञानोत्पत्तौ सत्यां तत्सामर्थ्या-दवशिष्टकर्मचतुष्टयनिर्जराया अवश्यम्भावनिष्पत्तेः ।

“પરિસ્ત્રવ” હસ શબ્દ મેં જીવકે પ્રયત્ન સે હોનેવાલી નિર્જરા કા હી ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, અતઃ ઉસ ગુણસ્થાનવર્તી જીવકે નવીન કર્મબંધ કે પ્રતિ કર્તાપન કિસી પ્રકાર ખી સંભવિત નહીં હો સકતા હૈ । વહાં પ્રથમ સમય મેં ઈર્યાપથ ક્રિયાસે આગત કર્મકા વંધ હોતા હૈ, ઢિતીય સમયમેં ઉસકા વેદન ઔર તૃતીય સમયમેં ઉસકી નિર્જરા । હસ પ્રકારકા ક્રમ ઉસ જીવ કે તવ તક ચાલૂ રહતા હૈ જવ તક ઉસ જીવ કે ઉસ ગુણસ્થાનવર્તીપના રહતા હૈ, અતઃ યહ માનના કિ—ઉસકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્નવિશેષાધીન હોતી હૈ, યહ ંક ભ્રમ હી હૈ, ક્યોં કિ ઉન કર્મોં કી નિર્જરા તો સ્વાભાવિક હી હૈ ।

તથા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવમેં અવશિષ્ટ અઘાતિયા કર્મોંકી નિર્જરા કે પ્રતિ કર્તૃત્વ પ્રયત્નવિશેષકે વિના સ્વતઃ હી હૈ, કારણ કિ કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ હોને પર ઉસકે પ્રભાવસે ઉન અઘાતિયા કર્મોંકી

“પરિસ્ત્રવ” આ શબ્દમાં ઊવના પ્રયત્નથી થવાવાળી નિર્જરાનુ જ અહુણ કરેલ છે, તેથી આ ગુણસ્થાનવર્તી ઊવનુ નવીન કર્મબંધ કરવામાં કર્તાપણુ કોઈ પણ પ્રકારે સંભવિત થઈ શકતું નથી. ત્યા પ્રથમ સમયમાં ઈર્યાપથક્રિયાથી આગત (આવતા) કર્મનો બંધ થાય છે, બીજા સમયમાં તેનુ વેદન અને ત્રીજા સમયમાં તેની નિર્જરા આ પ્રકારનો કર્મ તે ઊવને ત્યાં સુધી ચાલુ રહે છે જ્યાં સુધી તે ઊવને તે ગુણસ્થાનવર્તીપણુ રહે છે. આથી એમ માનવુ કે ‘ તેના આગત કર્મની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન હોય છે. ’ એ એક ભ્રમ જ છે, કારણ કે તે કર્મોની નિર્જરા તો સ્વાભાવથી જ થાય છે.

તથા—ચૌદમી ગુણસ્થાનવર્તી ઊવમાં અવશિષ્ટ (બાકી રહેલા) અઘાતિયા કર્મોની નિર્જરા પ્રતિ કર્તાપણુ કોઈ એક પ્રયત્ન વગર સ્વતઃ જ છે. તેનું કારણ એ છે કે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થતાં જ તેના પ્રભાવથી તે અઘાતિયા કર્મોની

અર્થ—‘યે આમ્રવાસ્તે પરિમ્રવાઃ, યે પરિમ્રવાસ્તે આમ્રવા.’ ઇતિ પૂર્વાર્થવાક્યં ચતુર્ગતિભ્રમણાધિકારિજીવાભિપ્રાયેણ કથિતમ્ । ‘યે અનામ્રવાસ્તે અપરિમ્રવાઃ, યે અપરિમ્રવાસ્તે અનામ્રવાઃ’ ઇત્યુત્તરાર્થવાક્યં તુ સિદ્ધાપેક્ષયા; તે દિ—નવીનકર્મવન્ધકર્તૃત્વાઽભાવાદનામ્રવાઃ, સકલપૂર્વકર્મક્ષયેણ નવીનકર્મવન્ધાભાવેન ચ નિર્જરણીયકર્માભાવાત્કર્મનિર્જરાયા અર્ક્તારસ્તસ્માદપરિમ્રવાઃ ।

તથા—સકલપૂર્વકર્મક્ષયેણ નવીનકર્માનાગમનેન ચ નિર્જરણીયકર્માભાવાત્કર્મ-નિર્જરાયા અર્ક્તૃત્વાદ્ અપરિમ્રવાઃ, નવીનકર્મવન્ધકર્તૃત્વાભાવાન્ચ અનામ્રવાઃ, ઇતિ । નિર્જરા નિયમસે હોની હૈ, હસે રોકનેવાલી કોઈ મી શક્તિ નહીં હૈ, હમલિયે ચૌદહવે ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવકે પ્રતિ મી યહ આક્ષેપ નહીં હોતા ।

હસ પ્રકાર “યે આમ્રવાસ્તે પરિમ્રવાઃ, યે પરિમ્રવાસ્તે આમ્રવાઃ” યહ પૂર્વાર્થ વાક્ય ચતુર્ગતિયોં મેં ભ્રમણ કરનેકે અધિકારી જીવોં કી અપેક્ષા સે હી કહા ગયા હૈ । તથા—“યે અનામ્રવાસ્તે અપરિમ્રવાઃ, અપરિમ્રવાસ્તે અનામ્રવાઃ” યહ ઉત્તરાર્થ વાક્ય સિદ્ધોં કી અપેક્ષાસે કહા ગયા હૈ, કારણ કિ ણક તો વે નવીન કર્મવન્ધકે કર્તા નહીં હેં હસસે વે અનામ્રવ હેં । દૂસરે હનમેં પૂર્વકે સકલ કર્મોંકા ક્ષય ઓર આગામી નવીન કર્મવન્ધકા અભાવ મી હો ચુકા હૈ, હસલિયે નિર્જરાકે મી કર્તા નહીં માને ગયે હેં । હસલિયે વે અપરિમ્રવ હેં । તથા—હનમેં પૂર્વસંચિત સકલ કર્મ કે ક્ષય સે ઓર નવીન કર્મોં કે નહીં આને કે કારણ નિર્જરા કરને યોગ્ય કર્મોંકે અભાવ સે કર્મોંકી નિર્જરાકે કર્તા નહીં હોને કે કારણ વે અપરિમ્રવ હેં, ઓર નવીન કર્મોંકે વન્ધ નહીં કરને કે કારણ વે અનામ્રવ હેં ।

નિર્જગ નિયમથી થઈ નય છે, તેને રોકવાવાળી કોઈ પણ શક્તિ નથી, માટે ચૌદમા ગુણસ્થાનવર્ત્તી હવતા પ્રતિ પણ આ આક્ષેપ થઈ શકતો નથી.

આ પ્રકારે “યે આમ્રવાસ્તે પરિમ્રવાઃ, યે પરિમ્રવાસ્તે આમ્રવાઃ” આ પૂર્વાર્થ વાક્ય ચતુર્ગતિયોંના ભ્રમણ દરવાવાળા હવેની અપેક્ષાથી જ કહેલ છે તથા—“યે અનામ્રવાસ્તે અપરિમ્રવાઃ, યે અપરિમ્રવાસ્તે અનામ્રવાઃ” આ ઉત્તરાર્થ વાક્ય સિદ્ધાંતની અપેક્ષાએ કહેલ છે. કારણ કે એક તો તે નવા કર્મબંધના કર્તા નથી તેથી તે અનામ્રવ છે જોવા તેમાં પૂર્વના મરણ કર્મના ક્ષય અને આગામી નવા કર્મબંધનો અભાવ પણ થઈ ચુકેલ છે, માટે નિર્જગ દરવાયોગ્ય કર્મોના અભાવ થવાથી તે નિર્જગના પણ કર્તા માનવામાં આવેલ નથી, માટે તે અપરિમ્રવ છે તથા—તેમાં પૂર્વસંચિત મરણ કર્મના ક્ષયથી, અને નવીન કર્મોનાં નહિ આવવાથી, નિર્જગ દરવાયોગ્ય કર્મોના અભાવ થવાથી કર્મોના નિર્જગના કર્તા નહીં હોવાને લીધે તે અપરિમ્રવ છે, અને નવીન કર્મો તો બંધ નહીં દરવાથી તે અનામ્રવ છે.

યદ્વા—અનાસ્રવાપરિસ્રવયોઃ ક્રમં દર્શયતિ—‘યેઽનાસ્રવાસ્તેઽપરિસ્રવાઃ’ ઇતિ । યે પ્રથમે સમયેઽનાસ્રવા ભવન્તિ—કર્મવન્ધકા ન ભવન્તિ, તે તત્પશ્ચાત્ સમયે અપરિસ્રવા ભવન્તિ—કર્મનિર્જરકા ન ભવન્તિ, વદ્વસ્યૈવ કર્મણો નિર્જરણીયત્વાત્ । એવં યેઽપરિસ્રવાસ્તેઽનાસ્રવા ઇતિ બોધ્યમ્ । એતદપિ વ્યાખ્યાનં સિદ્ધાપેક્ષયા ॥ સૂ૦ ૧ ॥

યદ્યેવં તતઃ કિમ્ ? ઇત્યાહ—‘એ એ પપ્પ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એ એ સંબુજ્જમાણે લોયં ચ આણાણ અભિસમિચ્છા પુઢો પવેઙ્ગયં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—એતાનિ પદાનિ સંબુઢ્યમાનઃ લોકં ચાજ્ઞયાઽભિસમેત્ય પૃથક્ પવેદિતમ્ । ૨ ।

ટીકા—એતાનિ=અનન્તરોક્તાનિ, પદાનિ=‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ ઇત્યાદીનિ સંબુઢ્યમાનઃ=સમ્યગ્ જાનન્, તથા લોકં=પદ્ધતિજીવનિકાયમ્ આસ્રવાગતકર્મણા

અથવા—અનાસ્રવ ઓર અપરિસ્રવ કે ક્રમકો દિશ્વાતે હૈ—“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ” જો પ્રથમ સમયમેં અનાસ્રવ હૈ—કર્મવન્ધ કે કર્તા નહીં હૈ, વે ઉસકે વાદ કે સમયમેં અપરિસ્રવ હૈ—કર્મ કી નિર્જરા કરનેવાલે નહીં હૈ, કારણ કિ જો કર્મોસે વંધા હુઆ હોતા હૈ વહી ઉનકી નિર્જરા કરનેવાલા ભી હોતા હૈ । જો કર્મોસે વંધા હુઆ હી નહીં હૈ વહ નિર્જરા ભી કિસકી કરેગા । હસી પ્રકાર “યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” યહ વાક્ય ભી સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । યહ વિવરણ ભી સિદ્ધોંકી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા હૈ એસા સમજ્ઞના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

યદિ એસા હૈ તો હસસે કયા? હસકા ઉત્તર કહતે હૈ—‘એ એ સંબુજ્જમાણે’ ઇત્યાદિ ।

હન પૂર્વોક્ત પદોં કો અચ્છી તરહસે જાનનેવાલા કૌનસા એસા પ્રાણી હોગા જો આસ્રવસે આયે હુએ કર્મોં સે વંધે હુએ, ઓર તપ એવં સંયમ કે

અથવા—અનાસ્રવ અને અપરિસ્રવના ક્રમને બતાવે છે—

“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ” જે પ્રથમ સમયમા અનાસ્રવ છે—કર્મબંધના કર્તા નથી તે ત્યારબાદના સમયમાં અપરિસ્રવ છે—કર્મની નિર્જરા કરવાવાળાં નથી, કારણ કે જે કર્મોથી બંધાયેલા રહે છે તે તેની નિર્જરા કરવાવાળા પણ હોય છે. જે કર્મોથી બંધાયેલા નથી તે નિર્જરા પણ કેવી રીતે? આ બંધ પ્રકારે “યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” આ વાક્ય પણ સમજી લેવું જોઈએ આ વિવેચન પણ સિદ્ધોની અપેક્ષાથી ન કરેલ છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જે એમ છે તો તેનાથી શું? આનું ઉત્તર કહે છે—‘એ એ સંબુજ્જમાણે’ ઇત્યાદિ । તે પૂર્વોક્ત પદોને ઘણી સારી રીતે બાણનાર કોણ તેવો પ્રાણી હશે જે આસ્રવથી આવેલા કર્મોથી બંધાયેલા અને તપ સંયમના આશયથી રહિત આ

વ્યયમાનં, તપઃસંયમસમારાધનેન ચ મુચ્યમાનમ્, આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ, અભિસમેત્ય=સમ્યગ્ વિજ્ઞાય, પૃથક્=અન્યાન્યપ્રકારેણ પ્રવેદિતં ચ=અતીતાનાગતવર્તમાનૈઃ સર્વતીર્થકરૈઃ પ્રયોધિતં વન્ધકારણં નિર્જરાકારણં ચ, અભિસમેત્ય=જ્ઞાત્વા, કો નામ ધર્માચરણે પ્રવૃત્તો ન ભવેત્? અપિ તુ ભવે દેવે દિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આર્હતપ્રવચનાનુસારી ચતુર્દશપૂર્વધરાદિરપિ જીવાનાં હિતાય પ્રવેદયતીત્યાહ-
' આઘાહ નાળી ' इत्यादि ।

મૂલમ્—આઘાહ નાળી इह माणवाणं संसारपडिवण्णाणं संबुज्झमाणाणं विन्नाणपत्ताणं अट्टावि संता अदुवा पमत्ता अहा-
सच्चमिणं—तिबेमि ॥ सू० ३ ॥

છાયા—આખ્યાતિ જ્ઞાની इह मानवेभ्यः संसारप्रतिपन्नेभ्यः संबुध्यमानेभ्यः
विज्ञानप्राप्तेभ्यः, आर्ता अपि सन्तः अथवा प्रमत्ताः यथासत्यमिदम् इति ब्रवीमि ॥३॥

ટીકા—જ્ઞાની=પ્રવચનજ્ઞાનસંપન્ન, इह=પ્રવચને પ્રોક્તં ધર્મ માનવેભ્યઃ, આ-
ખ્યાતિ—इत्यन्वयः, मनुष्याणां सर्वसंवरचारित्रसंभवात्तेभ्य उपदिशतीत्यर्थः ।

આરાધનસે રહિત इस षड्जीवनिकायरूप लोकको तथा अतीत, अना-
गत और वर्तमान समस्त तीर्थङ्करों द्वारा भिन्न २ प्रकारसे उपदिष्ट बंधके
कारणों एवं निर्जरा के कारणों को जिनागमसे जान कर धर्माचरण करने
में प्रवृत्त नहीं होगा ? अपितु अवश्य ही होगा ॥ सू० २ ॥

અર્હત પ્રમુકે પ્રવચનાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ચતુર્દશપૂર્વ કે પાઠી
ગણધરાદિક ખી જીવોં કે હિતકે લિયે હી ઉપદેશ કરતે હૈં; યહી વાત
પ્રકટ કી જાતી હૈ—' આઘાહ નાળી ' इत्यादि ।

जिनेन्द्रोपदिष्ट प्रवचनके ज्ञानसे संपन्न ज्ञानी गणधरादिक शास्त्र-
विहित धर्मका प्रतिपादन, हेयोपादेय-विवेकशील संसारी मनुष्यों के

षड्जीवनिकायइष लोकने, तथा अतीत अनागत अने वर्तमान समस्त तीर्थंकरों
द्वारा बुद्धा बुद्धा प्रकारથી ઉપદિષ્ટ બંધના કારણોને અને નિર્જરાના કારણોને જ્ઞા-
નથી જાણીને ધર્માચરણ કરવામાં પ્રવૃત્ત ન થાય ? પરંતુ અવશ્ય જ થાય. ॥સૂ૦૨॥

અર્હન્ત પ્રભુના પ્રવચન અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનાર ચતુર્દશ-ગૌહ પૂર્વના
પાઠી ગણધરાદિક પણ જીવના હિતને માટે જ ઉપદેશ કરે છે. આ વાત પ્રગટ
કરવામાં આવે છે—' આઘાહ નાળી ' इत्यादि.

જીનેન્દ્ર લગવાને કહેલાં પ્રવચનના જ્ઞાનથી સંપન્ન જ્ઞાની ગણધરાદિક શાસ્ત્રવિહિત
ધર્મનું પ્રતિપાદન હેયોપાદેયવિવેકશીલ સંસારી મનુષ્યોને માટે કરે છે. આ સૂત્રમાં

કયંભૂતેભ્યો માનવેભ્યઃ ? સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ=ચતુર્ગતિષુ વર્તમાનેભ્યઃ, કેવલિપ્રમૃતીનામૃપદેશશ્રવણપ્રયોજનં નાસ્તીતિ ભાવઃ । સંસારિષ્વપિ ધર્મગ્રહણયોગ્યા એવ ઉપદેશાર્હાં इत्यत आह—संबुध्यमानेभ्य इति, यथोपदिष्टं धर्मज्ञातृभ्य इत्यर्थः । असंज्ञिनो नोપદેશાર્હાં, इत्यतस्तान् व्यावर्तयितुं विशेषणान्तरमाह—विज्ञानप्राप्तेभ्य इति हेयोपादेयज्ञानवद्भ्यः—सर्वथापर्याप्तकेभ्यः संज्ञिभ्य इत्यर्थः ।

લિયે કરતે હૈં । इस सूत्रमें जिनेन्द्रप्रतिपादित सद्धर्मका उपदेश संसारी मानवों के लिये जो प्रकट किया गया है उसका कारण यही है कि उनमें ही सर्वसंवर और सर्वविरतिरूप चारित्र के आराधन करने की योग्यता रही हुई है । उनमें भी जो धर्मग्रहण करनेकी योग्यता से सम्पन्न होते हैं उन्हें ही धर्मका उपदेश दिया जाता है, और वहीं पर वह असरकारक होता है । जो अपर्याप्तावस्थामें रहे हुए हैं वे धार्मिक उपदेशके पात्र नहीं हैं । यही बात 'संबुध्यमान' और 'विज्ञानप्राप्त' इन दो विशेषणों से प्रकट की गई है । जो धार्मिक उपदेशको यथावत् नहीं समझ सकते वे उस उपदेश से लाभ भी कुछ नहीं प्राप्त कर सकते । एवं जो अपर्याप्त हैं, असंज्ञी हैं, उन पर भी उपदेश अपना कुछ भी प्रभाव नहीं दिखा सकता । मनके बिना विचारशक्तिका अभाव होनेसे वे उस लाभसे सर्वथा वंचित ही रहते हैं, अतः जो संज्ञी हैं, जिनमें 'यह हेय है यह उपादेय है' इस प्रकारका ज्ञान जागृत हो रहा है, वहीं पर दिया गया धार्मिक उपदेश अपना प्रभाव प्रकट करता है ।

जिनेन्द्रप्रतिपादित सद्धर्मनो उपदेश संसारी लोकोने माटे ने प्रगट કરવામાં આવેલ છે તેનું કારણ એ જ છે કે તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ ચારિત્રનું આરાધન કરવાની યોગ્યતા રહેલી છે. તેમાં પણ ને ધર્મ ગ્રહણ કરવાની યોગ્યતાથી સંપન્ન હોય છે તેને જ ધર્મનો ઉપદેશ આપવામાં આવે છે, અને ત્યાં જ તે અસરકારક પણ થાય છે. ને અપર્યાપ્તાવસ્થામાં રહેલાં છે તે ધાર્મિક ઉપદેશને પાત્ર નથી, આ વાત 'સંબુદ્ધમાન' અને 'વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત' આ બે વિશેષણોથી પ્રગટ કરેલ છે. ને ધાર્મિક ઉપદેશને યથાવત્ નથી સમજી શકતા તે એ ઉપદેશથી કાંઈ પણ લાભ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેમજ ને અપર્યાપ્ત છે—અસંજી છે તેની ઉપર પણ ઉપદેશ પોતાનો કાંઈ પણ પ્રભાવ પાડી શકતો નથી. મન વગર વિચાર-શક્તિનો અભાવ હોવાથી તે એ લાભથી સર્વથા દૂર જ રહે છે, પણ ને સંજી છે એમાં 'આ હેય છે, આ ઉપાદેય છે' આવા પ્રકારના જ્ઞાનની જાગૃતિ છે તેવાઓને ધર્મનો ઉપદેશ પોતાનો પ્રભાવ બતાવી શકે છે.

જ્ઞાનીકા દિવા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશ હસ પદ્ધતિ કા હોતા હૈ જો પૂર્વોક્ત-વિશેષણવિશિષ્ટ માનવોંમેં અપને કર્તવ્ય માર્ગકી અવશ્ય ૨ જાગૃતિ કરતા હુઆ ઉન્હેં ધર્મકી ભાવનાસે ભાવિત કર દેના હૈ । યદિ કોઈ કિસી કારણ સે આતુર-પીડિત યા પ્રમત્ત-પ્રમાદદશાવાલા ભી હો તો ભી વહ ઉસ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત હો જાતા હૈ । યહી “અદ્વા વિ સંતા અદુવા પમત્તા ” હસ પદ સે સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ । કિસી કારણવશજો આર્તધ્યાનમેં લવલીન હૈ, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોંસે યા વૈષયિક કિસી ભી સંબંધ સે જો પ્રમત્ત હો રહે હૈ; એસે માનવ ભી જ્ઞાની કે દિવ્ય ઉપદેશ સે ધાર્મિક લાભસે સંપન્ન હુએ હૈ । જૈસે-આર્ત ચિલાતિપુત્ર વગૈરહ ઓર પ્રમત્ત શાલિભદ્રાદિકોંને ધર્મકા લાભ જ્ઞાનીકે ઉપદેશસે લિયા હૈ ।

હસ સૂત્રમેં “ મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈ ” યહ જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈ, ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ-ઉનમેં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરનેકી અધિકારિતા હૈ । યદ્યપિ પ્રમુકા ધાર્મિક આચ્યાન-સ્રોત મેઘધારાકી તરહ એકસી ધારામેં સર્વત્ર પક્ષપાત રહિત વહતા હૈ । ઉનકી પર્વદા-સમવસરણ-મેં જો (૧૨) વારહ પ્રકારકી પરિષદ હોતી હૈ ઉસમેં સવકે લિયે પ્રમુકી દિવ્યવાણી એકરૂપમેં વિના કિસી ભેદભાવકે ઉન ૨ જીવોંકી ભાષામેં પરિણત હોતી હૈ ।

જ્ઞાનીએ આપેલ ધાર્મિક ઉપદેશ પણ આ પદ્ધતિનો હોય છે જે પૂર્વોક્ત વિશેષણ-વિશિષ્ટ મનુષ્યોમાં પોતાના કર્તવ્ય માર્ગની અવશ્ય અવશ્ય જાગૃતિ કરતાં કરતાં તેમાં ધર્મની લાવના ભરી દે છે. કદાચ કોઈ કોઈ કારણથી પીડિત અગર પ્રમાદદશાવાળા પણ હોય તો પણ તે આ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત થઈ જાય છે, માટે “અદ્વા વિ સંતા અદુવા પમત્તા ” આ પદોથી સ્પષ્ટ કરેલ છે. કોઈ કારણ વશ જે આર્તધ્યાનમાં તત્પર છે, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોથી યા વૈષયિક કોઈ પણ સંબંધથી જે પ્રમત્ત થઈ રહ્યા છે; એવા મનુષ્ય પણ જ્ઞાનીના દિવ્ય ઉપદેશથી ધાર્મિક લાભ પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ આર્ત-ચિલાતિપુત્ર વિગેરે, અને પ્રમત્ત-શાલિભદ્રાદિકોએ ધર્મનો લાભ જ્ઞાનીના ઉપદેશથી લીધો છે.

આ સૂત્રમાં “ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ” આ જે પ્રગટ કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે-તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. પ્રભુનું ધાર્મિક આખ્યાનસ્રોત વરસાદધારાની માફક એક ધારાથી સર્વત્ર પક્ષપાતરહિત વહે છે તેમની પર્વદા-સમવસરણ-માં જે બાર પ્રકારની પરિષદ ભરાય છે તેમાં બધાને માટે પ્રભુની દિવ્ય વાણી કોઈ પણ ભેદભાવ વિના-એક રૂપમાં તે તે જીવોની ભાષામાં પરિણત થાય છે,

જ્ઞાની યથા ધર્મમારુ્યાતિ તથા દર્શયતિ-‘આર્તાંઅપિ’ ઇત્યાદિ । આર્તાંઅપિ =કુતશ્ચિત્ કારણાત્ આતુરા અપિ, અથવા રાગદ્વેષોદયાત્ અન્યસ્માદ્ વા વિપય-સંગવશાત્ પ્રમત્તા અપિ સન્તઃ પ્રતિબુદ્ધ્યન્તે, યથા-આર્તાશ્ચિલાતિપુત્રાદયઃ, પ્રમત્તાઃ શાલિભદ્રાદયો ધર્મં વિદન્તિ સ્મ, તથા જ્ઞાની પુરુષો ધર્મમુપદિગતીત્યર્થઃ । एतस्मिन् વિપયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ દર્શયિતુમાહ-‘યથાસત્યમિદમ્’ ઇતિ । મયા યત્ કથિતં કથ્યમાનં ચ તદિદં યથાસત્યં સત્યમનતિક્રમ્ય વર્તતે-ઇત્યર્થઃ, મુમુક્ષુર-ફિર મી જો યહાં પર મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઉસકા કારણ ઉનમેં સર્વસંવર ઔર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરને કી યોગ્યતા હી હૈ । ઔર ઉસી યોગ્યતા કો લક્ષમેં રલ્લ કર યહ કહા ગયા હૈ ।

મનુષ્યોં કે સિવાય અન્યગતિયોં કે જીવોં મેં યહ યોગ્યતા નહીં હૈ । તિર્યચ્ચગતિકે જીવ (૫) પાંચ ગુણસ્થાનોં સે આગે નહીં વઢ સકતે હૈ । દેવગતિ કે જીવોં મેં (૪) ચાર ગુણસ્થાન હી પાવે જાતે હૈં, અન્ય ગુણસ્થાન નહીં । મનુષ્યોં મેં હી (૧૪) ચૌદહ ગુણસ્થાનોંકે આરાધન કરનેકી યોગ્યતા હૈ । ઇતના હોને પર મી જો પર્યાસ નહીં હૈં કિન્તુ અપર્યાસદશાવર્તીં હૈં, વે ઉપદેશકે પાત્ર હી નહીં હૈ ।

‘નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક’ વે હૈં-જિનકી અમી પર્યાસિયાં પૂર્ણ નહીં હુઈ હૈં, ઇક અન્તર્મુદ્ધર્ત મેં નિયમ સે પૂર્ણ હો જાવેગી । ‘લલ્લપર્યાસક’ વે હૈં-જો પર્યાસિયોં કી પૂર્ણતાસે રહિત હૈં, ઔર અન્તર્મુદ્ધર્ત મેં જિનકા મરણ

તો પણ ને આ ઠેકાણે ‘મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે’ આપું ને કહેવામા આવ્યું છે તેનું કારણ તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા જ છે. અને તે યોગ્યતાને ધ્યાનમાં રાખીને આ કહેવામાં આવેલ છે.

મનુષ્ય સિવાય બીજી ગતિઓના જીવોમાં આ યોગ્યતા નથી. તિર્યચ્ચ ગતિના જીવો પાંચ ગુણસ્થાનથી આગળ વધી શકતા નથી. દેવગતિમાં જીવોને ચાર ગુણસ્થાન જ દેવાય છે, બીજા ગુણસ્થાનો નથી. મનુષ્યોમાં જ ચૌદ ગુણસ્થાન આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. આટલું હોવા છતાં ને પર્યાસ નથી પણ અપર્યાસદશાવર્તીં છે તે ઉપદેશને પાત્ર નથી

‘નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક’ તે છે, જેની હજી પર્યાસિઓ પુરી થઈ નથી, એક અન્તર્મુદ્ધર્તમાં નિયમથી પૂર્ણ થશે. ‘લલ્લપર્યાસક’ તે છે જે પર્યાસિઓની પૂર્ણતાથી રહિત છે, અને અન્તર્મુદ્ધર્તમાં જેનું મરણ અવશ્યભાવી છે, તે સંમૂર્દ્ધિમ

સ્મિન્ વિષયે સમ્યક્ત્વં કુર્યાદિતિ ભાવઃ । ઇતિ=ઈદં બ્રવીમિ=યથા મયા ભગવદ્વાક્યં શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ । દુર્લભં સમ્યક્ત્વં ચારિત્રં વા પ્રાપ્ય પ્રમાદો ન કર્તવ્ય ઇતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

પ્રમાદવતાં સંસારિણાં પુનઃ પુનર્મરણં જન્મ ચ નિરવસાનં ભવતીતિ बोधयितुमाह —‘ નાનાગમો ’ ઇત્યાદિ ।

અવશ્યંભાવી છે । ये संमूर्च्छिम मनुष्य होते हैं । इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्र में ‘ संबुध्यमान ’ और ‘ विज्ञानप्राप्त ’ ये दो विशेषण दिये गये हैं ।

કૈસી ૨ દશાસંપન્ન જીવોં ને પ્રભુકી ધર્મદેશના સે ધર્મલાભ લિયા છે, યહ વાત ચિલાતિપુત્ર ઓર શાલિભદ્ર આદિકે દષ્ટાન્તસે સ્પષ્ટ કી ગઈ છે । इनका कथानक शास्त्रों में वर्णित है ।

हे जम्बू ! इस विषयमें जो मैंने कहा है, अथवा आगे भी जो कहा जायगा वह सब सर्वथा सत्य ही है । मुमुक्षुका कर्तव्य है कि वह इस विषयमें पूर्ण श्रद्धालु हो, कारण कि प्रभुके मुख से जैसा सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूं, अतः हे जम्बू ! दुर्लभ सम्यक्त्व और चारित्रको प्राप्त कर प्रमादका सेवन न करो, यही बारबार कहना है ॥सू. ३॥

પ્રમાદી સંસારી જીવોંકા પુનઃ પુનઃ મરણ ઓર જન્મ નિરંતર હોતા રહતા છે, યહી પ્રકટ કિયા જાતા છે—‘ નાનાગમો ’ ઇત્યાદિ ।

મનુષ્ય હોય છે, આ જ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રમાં ‘ સંબુદ્યમાન ’ અને ‘ વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત ’ એ એ વિશેષણો આપેલા છે

કેવી કેવી દશાવાળા જીવોને પ્રભુની ધર્મદેશનાથી ધર્મનો લાભ થયેલ છે તે વાત ચિલાતિપુત્ર અને શાલિભદ્ર આદિના દષ્ટાન્તથી સ્પષ્ટ છે. (આની કથા શાસ્ત્રોમાં વર્ણવેલી છે)

હે જમ્બૂ ! આ વિષયમાં જે મેં કહ્યું છે અને આગળ પણ જે કહેવામાં આવશે તે બધું સાચું જ છે. મોક્ષાલિલાધીનું કર્તવ્ય છે કે તે આ વિષયમાં પૂર્ણ શ્રદ્ધાળુ રહે; કારણ કે પ્રભુના મુખથી જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું, માટે હે જમ્બૂ ! દુર્લભ સમ્યક્ત્વ અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરીને પ્રમાદનું સેવન ન કરો, એ જ વારંવાર કહેવાનું છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

પ્રમાદી સંસારી જીવોના વારંવાર મરણ અને જન્મ નિરંતર થયા કરે છે, તેને પ્રગટ કરવામાં આવે છે—‘ નાનાગમો ’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—नाणागमो मच्चुमुहस्स अत्थि, इच्छा पणीया वंकानि-
केया कालग्गहीया निचये निविट्ठा पुढो पुढो जाइं पक्कपयंति । सू० ४।

छाया—नाऽनागमो मृत्युमुखस्यास्ति, इच्छा प्रणीता वृद्धानिकेताः, काल-
गृहीता निचये निविष्टाः पृथक् पृथक् जार्ति प्रकल्पयन्ति ॥ सू० ४ ॥

टीका—मृत्युमुखस्यानागमः संसारिणां नास्तीत्यन्वयः । एवंभूतः कश्चिदपि
संसारी नास्ति, य उपक्रमेण निरुपक्रमेण वा मृत्युमुखे नाऽऽपततीत्यर्थः । उपक्रमो
= निमित्तं-दण्डकशाशस्त्ररज्जुविषादयः, निरुपक्रमो=निमित्ताभावः । तथा चोक्तम्—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनं क्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति,

ऐसा कोई संसारी जीव नहीं है जो कि उपक्रम-निमित्तसे अथवा
अनुपक्रम-विना निमित्त से मृत्युके मुखमें नहीं पड़ता हो । कहा भी है—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ॥ १ ॥ ” इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युके भयसे चाहे कहीं भग जाय, या मृत्यु
की लाचारी करे, कहीं चला जाय, कोई प्रपञ्च करे, अथवा अमर होनेके
लिये रसायन क्रिया (कायाकल्प) करे, तथा बड़े २ व्रत करे, पहाड़ों की
गुफाओं में छिप जावे, अनेक प्रकारके तप तपे, परिमित खोराक खावे,

येवो केह संसारी ७व नथी ने निमित्तथी अथवा वगर निमित्तथी
मृत्युना मुअमां न पडता होय. उह्य छे—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युना लयथी लवे केह जग्याये लागी नय,
अथवा मृत्युनी लाचारी करे, केह जग्याये यादी नय, केह प्रपञ्च करे, अथवा
अमर धवाने माटे रसायन क्रिया (कायाकल्प) करे, तथा मोटा व्रत करे, पहाड़ोनी
गुफाओमां छुपाई नय, अनेक प्रकारना तप करे, परिमित भोराक भाय, मन्त्र-

યે તુ રાગાન્વતયા પ્રમત્તા ધર્મ નામિજાનન્તિ તે કિંમૂતા ભવન્તીત્યાહ—‘ઈચ્છા’
 इत्यादि । इच्छया=विषयसुखवाञ्छया, प्रणीताः=विषयाभिमुखं प्रकर्षेण नीताः,
 इच्छापरतन्त्रा इत्यर्थः । यद्वा—इहेन्द्रियाद्यनुकूला प्रवृत्तिरिच्छा, तया संसाराभिमुखं
 मन्त्रसाधना करे; तो भी वह कराल कालके तीखे दांतों से चीरा ही जाता
 है, अर्थात् किसी प्रकार भी प्राणी मृत्यु से नहीं बच सकता ॥१॥

उपक्रम—मृत्युका निमित्त कारण । जैसे—दण्ड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी,
 विष आदि । निरूपक्रम—निमित्त रहित—आयुके पूर्ण होने पर अपने—
 आप मृत्युको प्राप्त होना ।

इस सूत्र में यह प्रकट किया जा रहा है कि जो राग और द्वेषसे
 अन्धे होकर प्रमादी हुए हैं और धर्म को नहीं जान रहे हैं वे विषय-
 सुख की वाञ्छा से ही विषयों में आसक्त होते हैं । अपनी उस अभि-
 लाषा की पूर्त्तिकरनामात्र ही वे अपना परम कर्तव्य समझते हैं । इस
 समय उन्हें न्याय अन्याय का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है । इच्छा की पूर्ति
 करनामात्र ही एक लक्ष्य होता है । इन्द्रियों के अनुकूल प्रवृत्तिका नाम
 ही इच्छा है । जो इन्द्रियोंके इन्हें अनुकूल जचा उसमें ही अन्धे होकर
 ये गिर पड़ते हैं, ‘इसका भविष्यमें क्या परिणाम होगा ?’ यह विचार
 इन्हें नहीं रहता । इच्छाओंके आधीन बने हुए मनुष्य संसारकी ओर
 ही दौड़ लगा रहे हैं । निवृत्तिमार्गसे वे दूर हैं । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति

साधना કરે તો પણ તે કરણકાળના તીખા દાંતથી ચિરાઈ જ બચ છે, અર્થાત્
 પ્રાણી મૃત્યુથી કોઈ પ્રકારે પણ બચી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

उपक्रम—मृत्युतुं निमित्तकारण, जेम—दंड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी, विष आदि.

निरूपक्रम—निमित्तरहित—आयुष्य पुरं यवाधी आपमेणे मृत्युने वश थवुं.

આ સૂત્રમાં એમ કહેવામાં આવેલ છે કે જેઓ રાગ અને દ્વેષથી અંધ
 બનીને પ્રમાદી બને છે અને ધર્મને બાણતા નથી તેઓ વિષયસુખની ઇચ્છાથી
 વિષયોમાં આસક્ત બને છે. પોતાની આ ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવામાં જ પોતાનું પરમ
 કર્તવ્ય મમળે છે આ વખતે ન્યાય અન્યાયનો કોઈ ખ્યાલ રાખતો નથી. ઇચ્છાને
 પૂર્ણ કરવાનો જ માત્ર એક ખ્યાલ રાખે છે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ પ્રવૃત્તિનું નામ
 જ ઇચ્છા છે. જે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ગમ્યું તેમાં જ અંધ બનીને તેઓ પડે
 છે. ‘એનું ભવિષ્યમાં શું પરિણામ આવશે ?’ આ વિચાર એને નથી આવતો.
 ઇચ્છાઓને આધીન બનેલો મનુષ્ય સંસારની તરફ જ દોટ લગાવે છે. નિવૃત્તિ
 માર્ગથી તે દૂર છે. નિવૃત્તિ માર્ગની પ્રાપ્તિ વિના ઇચ્છાઓ પર અંકુશ થતો

પ્રણીતા इत्यर्थः । अत एव-वृद्धानिकेताः वृद्धः असंयमस्तस्य आ-समन्तात् निकेताः आश्रयाः, अत एव-कालगृहीताः=कालेन-मृत्युना गृहीताः-पुनःपुनर्मरणदुःखभागिनः, यद्वा-कालगृहीताः-गृहीतः कालो यैस्ते कालगृहीताः, आर्पत्वान्निष्ठान्तस्य परनिपातः, धर्माचरणाय कालाभिसन्धायिनः-‘वृद्धावस्थायां परुद् वा परारि वा तनय-दुहितृपरिणयानन्तरं वा धर्मं करिष्यामः’ इत्येवं संकल्पकारिण इत्यर्थः । अत एव निचये निविष्टाः=द्रव्यतो हिरण्याद्युपचये, भावतः कर्मोपचये निविष्टाः=संलग्नाः सन्तः, पृथक् पृथक् अन्यामन्याम् जातिम्=एकेन्द्रियादिकाम् अनन्तवारं प्रकल्पयन्ति

विना, इच्छाओं पर अंकुश नहीं हो सकता है, यह निर्विवाद सिद्ध है । जहां तक प्रवृत्तिमार्ग है वहीं तक संसार है । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति ही संसारका साक्षात् या परम्परारूपसे अन्त है । इच्छाओं पर विजय पाना यही तो संयमभाव है । इसके विपरीत असंयमभाव है । असंयमी जीव धर्मकी प्राप्ति करने से काल-समयका वहाना किया करते हैं—
“ अभी तो जवानीका समय है सांसारिक आनन्द भोग लूं, वृद्धावस्था आने पर धर्म धारण कर लूंगा । अथवा आगामी वर्ष में या उसके बाद के वर्ष में अथवा पुत्र-पुत्रियों का विवाह करके फिर धर्म करूंगा । ” इस प्रकार का विचार करते २ ही वे काल के ग्रास बन जाते हैं और धर्मके लाभ से वंचित रह जाते हैं । विषयेच्छा के आधीन बना हुआ संसारी मनुष्य जिस किसी प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादिक परिग्रहके संचय करने में ही अपने जीवन के अधिकांश भाग को नष्ट कर देता है, और उपाजित कर्मानुसार एकेन्द्रियादिक योनियोंमें अनन्तवार जन्ममरण के अनन्त

નથી, તે નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે. ન્યા સુધી પ્રવૃત્તિમાર્ગ છે ત્યા સુધી સંસાર છે. નિવૃત્તિમાર્ગની પ્રાપ્તિ સંસારનો સાક્ષાત્ અગર પરંપરાથી અંત છે. ઇચ્છાઓ ઉપર વિજય મેળવવો તે જ સંયમ-ભાવ છે. તેથી વિપરીત અસંયમભાવ છે. અસંયમી જીવ ધર્મની પ્રાપ્તિ કરવામાં સમયનુ બાંહેધરી આપે છે—‘હજી તો જુવાનીનો સમય છે, સાંસારિક આનંદ ભોગવી લઉં, વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પછી ધર્મ ધારણ કરી લઉંશ. અથવા-આગામી વર્ષમાં, અગર તેના બાદના વર્ષમાં, અથવા પુત્ર-પુત્રીઓના વિવાહ થયા પછી ધર્મ કરીશ ’ આવા પ્રકારના વિચાર કરી કરીને તે કાળનો ગ્રાસ બની જાય છે, અને ધર્મના લાભથી વંચિત રહી જાય છે. વિષયેચ્છાને આધીન બનેલા સંસારી મનુષ્ય જે કોઈ પ્રકારથી હિરણ્ય-સુવર્ણાદિક પરિગ્રહનો સંચય કરવામાં જ પોતાના જીવનના અધિકાંશ લાગવો નષ્ટ કરે છે, અને ઉપાર્જિત-કર્માનુસાર એકેન્દ્રિયાદિક યોનિઓમાં અનંત વાર જન્મ મરણના

=જનયન્તિ । રાગદ્વેષવશાત્પ્રમાદિનઃ સંસારિણો ધર્મમનવબુદ્ધ્ય ઇન્દ્રિયાનુકૂલવિષયે મોહં પ્રાપ્ય પુનઃ પુનઃ કર્મોપચયં કુર્વન્તસ્તદ્વન્ધ્યાત્ પ્રચ્યુતા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥૪॥

પ્રમાદવતાં પુનઃ પુનર્જાતિપ્રકલ્પને કા હાનિર્ભવતીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—
'ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ' इत्यादि ।

મૂલમ્—ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ સંથવો ભવઈ । અહોવવાઈએ
પાસે પડિસંવેયાંતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—ઇહૈકેપાં તત્ર તત્ર સંસ્તવો ભવતિ । અધઔપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિ
સંવેદયન્તિ ॥ મૃ૦ ૫ ॥

ટીકા—અસ્મિન્ લોકે, એકેપાં=મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયવતાં, તત્ર-તત્ર=
નરકાદિયાતનાસ્થાનેષુ, સંસ્તવઃ=પ્રકર્ષેણ પરિચયો ભવતિ, તત્ર પુનઃ-પુનર્ગમનવશા-
કષ્ટોં કો સહન કરતા રહતા હૈ । સારાંશ યહ હૈ કિ-રાગદ્વેષકે વશ સે
સંસારી જીવ ધર્મ કો નહોં સમક્ષ કર ઇન્દ્રિયાં ઔર મન કે અનુકૂલ
વિષયોં મેં મુગ્ધ હોકર વારંવાર કર્મપરંપરા કી વૃદ્ધિ કરતા હુઆ કર્મોં સે
રહિત નહોં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદશાલી જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરને
પર ક્યા હાનિ હોતી હૈ ? એસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર ઉત્તર દેતે
હૈ—'ઇહમેગેસિં' इत्यादि ।

इस संसार में मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद और कषायवाले जीवों
का छेदन, भेदन, बन्धन आदि कष्टों के स्थानभूत नरकादिमें बारम्बार
उत्पन्न होने से उन नरकादिकोंके साथ अधिक परिचय हो जाता है,
इससे वे वहाँ के दुःखोंको भोगते रहते हैं ।

અનંત દુઃખોને સહન કરતા રહે છે. આ કથનનો સાર એ છે કે—રાગ દ્વેષના
કારણથી સંસારી જીવ ધર્મને નહિ સમજીને ઇન્દ્રિયો અને મનના અનુકૂળ
વિષયોમાં મુગ્ધ થઈને વારંવાર કર્મપરંપરાની વૃદ્ધિ કરે છે, અને કર્મોથી
રહિત થતા નથી. ॥સૂ૦ ૪॥

પ્રમાદશાળી જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરવાથી શું નુક-
સાન થાય છે ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી ઉત્તર આપે છે—'ઇહમેગેસિં' इत्यादि.

આ સંસારમાં મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ અને કષાયવાળા જીવોને છેદન
ભેદન, બન્ધન આદિ દુઃખોના સ્થાનભૂત નરકાદિમાં વારંવાર ઉત્પન્ન થવાથી તે
નરકાદિઓની સાથે અધિક પરિચય થઈ જાય છે, તે ત્યાંના દુઃખોને ભોગવતા રહે છે.

દિતિ ભાવઃ । તત્પરિચયે સતિ કિં ભવતીત્યાહ—‘અધઔપપાતિકાન્’-ઇત્યાદિ ।
ભોગેચ્છાપરતન્ત્રતયેન્દ્રિયાનુકૂલાઽઽચરણેન નરકાદિસ્થાનં સંપ્રાપ્તાઃ, અધઔપપા-
તિકાન્=નરકાદિસમ્બન્ધિનઃ, સ્પર્શાન્=દુઃસ્વાનિ પ્રતિસંવેદયન્તિ=અનુભવન્તિ ॥૫॥

નનુ ભોગેચ્છાવિવશાઃ સર્વેઽપિ અધઔપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિસંવેદયન્તિ,
કિં વા તેષુ કશ્ચિદેવેતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—‘ચિદ્દં કૂરેહિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ચિદ્દં કૂરેહિં કમ્મેહિં ચિદ્દં પારિચિદ્દઈ । અચિદ્દં કૂરેહિં
કમ્મેહિં નો ચિદ્દં પારિચિદ્દઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તિષ્ઠન્ ક્રૂરેષુ કર્મસુ ભૃશં પરિતિષ્ઠતિ । અતિષ્ઠન્ ક્રૂરેષુ કર્મસુ નો
ભૃશં પરિતિષ્ઠતિ ।

યદ્વા—ભૃશં ક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ ભૃશં પરિતિષ્ઠતિ । અમૃશં ક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ નો ભૃશં
પરિતિષ્ઠતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો કર્મબન્ધ કે કારણ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ ઔર કષાય કે
સેવન કરનેમેં હી રાતદિન સંલગ્ન રહતે હૈં, એવં વિષયભોગોં કી ઇચ્છા
કે આધીન હોને સે ધાર્મિક આચારવિચાર સે શૂન્ય હૈં, ઇન્દ્રિયોં કે અ-
નુકૂલ આચરણ કરનેમેં હી જો લગે હૈં વે મૃત્યુ કે ગ્રાસ બનકર નરકાદિ-
યોનિયોં મેં—કિ જહાં પર છેદન, ભેદન, બન્ધનાદિ અપાર કષ્ટ હૈં—વાર વાર
ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઔર વહાં કે ડન અનન્ત કષ્ટોં કો ભોગતે રહતે હૈં ॥સૂ૦૫॥

કયા વિષયભોગોંકી ઇચ્છા કે પરાધીન બને હુએ સમસ્ત હી પ્રાણી
નરકાદિયોનિયોં કે કષ્ટોં કો ભોગતે હૈં યા ડનમેં સે કોઈ ૨ ? ઇસ
પ્રકાર કે પ્રશ્નકા ઉત્તર કહતે હૈં—‘ચિદ્દં કૂરેહિં’ ઇત્યાદિ ।

જે મનુષ્ય કર્મબંધના કારણ મિથ્યાત્વ અવિરતિ પ્રમાદ અને કષાયના
સેવન કરવામાં રાત-દિન રચ્યો-પચ્યો રહે છે, અને વિષયભોગોની ઇચ્છાને અધીન
હોવાથી ધાર્મિક આચાર વિચારથી શૂન્ય છે, ઇન્દ્રિયોના અનુકુળ આચરણ કર-
વામાં જ જે લાગેલ છે, તે મૃત્યુનો ગ્રાસ બનીને નરકાદિ યોનિયોમાં કે જે
ઠેકાણે છેદન-ભેદન બંધનાદિ અપાર દુઃખો છે, ત્યાં વારંવાર ઉત્પન્ન થાય છે અને
ત્યાંના તે અનન્ત દુઃખોને ભોગવતો રહે છે. ॥સૂ૦ ૫॥

શું વિષયભોગોની ઇચ્છાને પરાધીન બનેલા સમસ્ત પ્રાણી નરકાદિ યોનિયોમાં
દુઃખોને ભોગવે છે કે તેમાંથી કોઈ કોઈ ભોગવે છે ? આ પ્રકારના પ્રશ્નના જવાબમાં
કહે છે—‘ચિદ્દં કૂરેહિં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—કૂરેપુ=ઘોરતરપરિણામેષુ વધવન્ધાદિષુ, કર્મસુ=ક્રિયાસુ, તિષ્ઠન્=પ્રવૃત્તિઃ, મૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ—તત્ર વૈતરણીતરણાઽસિપત્રપાતાઽઽદિ-જનિતં ઘોરતરં દુઃસ્વમનુભવન્ દીર્ઘકાલમવસ્થિતો ભવતીત્યર્થઃ । કૂરેષુ કર્મસુ અતિ-ષ્ઠન્=અપ્રવૃત્તસ્તુ મૃશં=સર્વથા નરકે નો પરિતિષ્ઠતિ=ઉપસ્થિતો ન ભવતિ, ન તત્રોત્પ-દ્યતે इत्यર્થઃ ।

યદ્વા—મૃશં કૂરૈઃ=અતિકુટિલૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિભિઃ કર્મભિઃ=વ્યાપારૈઃ, મૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ । એવમ્ અમૃશં કૂરૈઃ=મન્દકૂરૈઃ કર્મભિઃ નરકે મૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નો પરિતિષ્ઠતિ, શ્રેણિકવત્ ॥ સૂ. ૬ ॥

જિનકા પરિણામ ઘોરતર હૈ, એસે વધ-વંધનાદિક જો કૂર કર્મ હૈં ઉનમેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા પ્રાણી મરકર નરકોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઓર ચિરકાલ તક અનેક સાગરપર્યન્ત વહાં કે દુઃસ્વ ભોગના, વૈતરણી નદી મેં તૈરના, શાત્મલી-સેમર જાતકે વૃક્ષોંકે તલવાર કી ધાર કે સદૃશ પત્તોં કે ગિરને સે દેહ કા ચીરે જાના આદિ જો અચંકર દુઃસ્વ હૈં ઉન્હેં ભોગતા હુઆ વહીં પર અપની મુજ્યમાન આયુકો વ્યતીત કરતા હૈ । જો ઇન કૂર કર્મોં કે સેવન મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરતા હૈ વહ નરક-નિગોદ મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ।

અથવા—અતિકુટિલ જો પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મ હૈં ઉનકે દ્વારા યહ પ્રાણી ચિરકાલ તક નરક મેં નિવાસ કરતા હૈ ઓર મન્દ કૂર કર્મોં કે દ્વારા વહાં ચિરકાલ તક નહીં, કિન્તુ કુછ કાલ તક હી શ્રેણિક રાજા કી તરહ રહતા હૈ ॥ સૂ. ૬ ॥

જેના પરિણામ ઘોરતર છે એવા વધ વંધનાદિક જે જે કૂર કર્મ છે તેમા પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પ્રાણી મરીને નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે, અને ચિરકાળ સુધી અનેક સાગર પર્યન્ત ત્યાંના દુઃખને ભોગવવું, વૈતરણી નદીમાં તરવું, શાત્મલી-સેમર જાતના વૃક્ષોના તલવારની ધાર જેવા પાંદડાઓના પડવાથી દેહનું ચીરાઈ જવું આદિ જે ભયંકર દુઃખો છે તેઓને ભોગવતાં ભોગવતા ત્યાં જ પોતાના ભુજ્યમાન આયુષ્યને વ્યતીત કરે છે. જે આવા કૂર કર્મોનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતા નથી તે નરક-નિગોદમાં ઉત્પન્ન થતા નથી.

અથવા—અતિકુટિલ જે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મો છે તેઓ દ્વારા આવા પ્રાણી ચિરકાળ સુધી નરકમાં નિવાસ કરે છે, અને મંદ કૂર કર્મો દ્વારા ત્યાં ચિરકાળ સુધી નહિ પણ કાંઈક ઓછા સમય સુધી શ્રેણિક રાજાની માફક રહે છે. ॥સૂ. ૬॥

एवं को वदति, यस्य वचनेऽस्माकं श्रद्धा समुत्पद्येत ? इति जिज्ञासायामाह—
' एगे वयंति ' इत्यादि ।

मूलम्—एगे वयंति अदुवावि नाणी, नाणी वयंति अदुवावि
एगे ॥ सू० ७ ॥

छाया—एके वदन्ति अथवाऽपि ज्ञानिनः । ज्ञानिनो वदन्ति अथवाऽपि एके ॥७॥

टीका—एके=चतुर्दशपूर्वधराः श्रुतकेवलिनो यद् वदन्ति, अथवा ज्ञानिनः निरा-
वरणज्ञानवन्तः सर्वज्ञा अपि तदेव वदन्ति । उक्तार्थमेव परावर्त्य कथयति—' ज्ञानिनः'
इत्यादि । ज्ञानिनः=निरावरणज्ञानवन्तः केवलिनो यद् वदन्ति, अथवा—एकेऽपि=

श्री जम्बूस्वामी श्रीसुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि—हे भदन्त ! ऐसी
प्ररूपणा कौन करते हैं कि जिनके वचनों में हम श्रद्धा करें ? श्री सुधर्मा
स्वामी कहते हैं—' एगे वयंति ' इत्यादि ।

इस प्रकारका प्रतिपादन चतुर्दश पूर्व के पाठी श्रुतकेवली श्रीगण-
धरादिक देव करते हैं, और यही बात निरावरणज्ञानशाली श्री सर्वज्ञ
भगवान भी कहते हैं । दोनों का इस विषयमें एक मत है । इस विषय
की आचार्य महाराज फिर पुष्टि करते हैं कि—जिस अर्थका प्रतिपादन
केवली करते हैं उसीका प्रतिपादन श्रुतकेवली महाराज करते हैं । कारण
कि केवली और श्रुतकेवली के कथनमें रंचमात्र भी फरक नहीं होता है ।
केवली भगवान केवलज्ञानविशिष्ट होते हैं, और श्रुतकेवली चौदह पूर्व
के पाठी होते हैं; अतः ये दोनों यथार्थवक्ता हैं । यद्यपि केवली और
श्रुतकेवली के ज्ञानमें प्रत्यक्ष और परोक्ष के रूपसे भिन्नता है; परन्तु वस्तु-

श्री જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે—હે ભદ્રન્ત ! આવી પ્રરૂપણા
કેણુ કરે છે જે તેના વચનોમાં અમે શ્રદ્ધા કરીએ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે—
—' એગે વયંતિ ' ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારનો પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વના પાઠી, શ્રુતકેવળી, શ્રીગણધરાદિક
દેવ કરે છે, અને આ વાત નિરાવરણજ્ઞાનશાળી શ્રી સર્વજ્ઞ ભગવાન પણ કહે છે.
આ વિષયમાં બન્નેના એકે મત છે આ વિષયની આચાર્ય મહારાજ કરીથી પુષ્ટિ
કરે છે કે જે અર્થનું પ્રતિપાદન કેવળી કરે છે તેજ અર્થનું પ્રતિપાદન શ્રુતકેવળી
મહારાજ કરે છે, કારણ કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના વચનોમાં જરા પણ ફરક પડતો
નથી કેવળી ભગવાન કેવળજ્ઞાન-વિશિષ્ટ છે અને શ્રુતકેવળી ચૌદ પૂર્વના પાઠી
છે, માટે આ બન્ને યથાર્થવક્તા છે. જે કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના જ્ઞાનમાં પ્રત્યક્ષ
અને પરોક્ષ રૂપથી ભિન્નતા છે પરન્તુ વસ્તુસ્વરૂપના પ્રતિપાદન કરવામાં અગર

શ્રુતકેવલિનોડપિ તદેવ વદન્તિ । દિવ્યજ્ઞાનવન્તઃ કેવલિનઃ, ચતુર્દશપૂર્વધરાઃ શ્રુત-
કેવલિનશ્ચેત્યુભયે યથાર્થવાદિત્વાદેકમેવાર્થે વદન્તિ, ન તુ વિરુદ્ધમિતિ ભાવઃ ॥૭॥
एवं वक्ष्यमाणेऽप्यर्थे तेपामेकवाक्यताऽस्तीत्याह—‘आवंती’ इत्यादि ।

મૂલમ્—આવંતી કેયાવંતી લોયંસિ સમણા ય માહુણા ય
પુઢો વિવાયં વયંતિ—“સે દિઢં ચ ણે, સુયં ચ ણે, મયં ચ ણે, વિણ્ણાયં
ચ ણે, ઉઢ્ઢં અહં તિરિયં દિસાસુ સવ્વઓ સુપહિલેહિયં ચ ણે—
સવ્વે પાણા સવ્વે ભૂયા સવ્વે જીવા સવ્વે સત્તા હંતવ્વા
અજ્ઞાવેયવ્વા પરિઘેતવ્વા પરિયાવેયવ્વા ઉદ્ધવેયવ્વા, ઇત્થવિ જાણહ,
નત્થિત્થ દોષો, ”—અજ્ઞારિયવયણમેયં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—યાવન્તઃ કિયન્તો લોકે શ્રમણાશ્ચ બ્રાહ્મણાશ્ચ પૃથક્ વિવાદં વદન્તિ—
“તત્ દૃષ્ટં ચ નઃ, શ્રુતં ચ નઃ, મતં ચ નઃ, વિજ્ઞાતં ચ નઃ, ઊર્ધ્વમધસ્તિર્યગ્ દિશાસુ
સર્વત્ર સુપતિલેખિતં ચ નઃ—સર્વે પ્રાણાઃ, સર્વે ભૂતાઃ સર્વે જીવાઃ સર્વે સત્ત્વાઃ હન્ત-
વ્યાઃ આજ્ઞાપયિતવ્યાઃ પરિગ્રહીતવ્યાઃ પરિતાપયિતવ્યાઃ અપદ્રાવયિતવ્યાઃ, અત્રાપિ
જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ ” અનાર્યવચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—લોકે=મનુષ્યલોકે યાવન્તઃ કિયન્તઃ=વહત્વ ઇત્યર્થઃ શ્રમણાઃ=દણ્ડિ-
શાક્યાદયઃ, બ્રાહ્મણાઃ=ઔદેશિકભોજિનઃ પૃથક્=અન્યપ્રકારેણ વિવાદં=ધર્મવિરુદ્ધ-
વચનં વદન્તિ । તદ્વિવાદસ્વરૂપં દર્શયિતુમાહ—‘તદ્ દૃષ્ટમ્’ ઇત્યારમ્બ યાવત્
स्वरूप के प्रतिपादन करने में जरा भी भिन्नता नहीं है । केवली और
શ્રુતકેવલી યથાર્થવક્તા હોનેસે એક હી અર્થકા પ્રતિપાદન કરતે હૈં, વિરુદ્ધ
અર્થકા નહીં ॥ મ્૦ ૭ ॥

इसी प्रकार आगे कहे जानेवाले अर्थ में भी एकवाक्यता होती है;
वह दिखलाते हैं—“आवंती केयावंती” इत्यादि ।

इस लोकमें जितने भी श्रमण और ब्राह्मण हैं वे सब धर्मके विरुद्ध
पृथक् २ रूपसे प्ररूपणा करते हैं और कहते हैं कि—“जो कुछ भी हमारी

તેને જાણવામાં બનેના જ્ઞાનમાં જરા પણ ભિન્નતા નથી. કેવળી અને શ્રુતકેવળી
યથાર્થવક્તા હોવાથી એક જ અર્થનો પ્રતિપાદન કરે છે, વિરુદ્ધ અર્થનો નહિ. ॥સૂ૦ ૭॥

આ જ પ્રકારે આગળ કહેવામાં આવનારા અર્થમાં પણ એકવાક્યતા થાય
છે, તે બતાવે છે—‘આવંતી કેયાવંતી’ ઇત્યાદિ

આ લોકમાં જેટલા પણ શ્રમણ એટલે દંડી શાક્યાદિક અને બ્રાહ્મણ એટલે
ઔદેશિક આહાર લેવાવાળા છે તે બધા, ધર્મની વિરુદ્ધ બુદ્ધ બુદ્ધ રૂપે પ્રરૂપણા

‘नास्त्यत्र दोषः’ इति । ‘तद् दृष्टं च नः’ इति, यद्वयं वक्ष्यामस्तदस्माकं दृष्टम्-दिव्य-
ज्ञानेन प्रत्यक्षीकृतम् । ‘नः’ इति कर्तुः सम्बन्धसामान्यविवक्षायां पठ्यी । यद्वा
-अस्माकमाचार्यैर्दृष्टम् । श्रुतं च नः=अस्माकं श्रुतं च आचार्यादिभ्यः । मतं च
नः=युक्तियुक्तत्वादस्माकम् अस्मदाचार्याणां वा अभिमतम् । विज्ञातं च नः=पदार्थानां
भेदपर्यायैरस्माकम्, अस्मदाचार्याणां वा विज्ञातम् । एतच्च-ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्यक्षु
दिशासु-दशसु दिक्षु इत्यर्थः; सर्वतः=प्रत्यक्षादिभिः सर्वैः प्रमाणैः सर्वप्रकारेण वा
सुप्रतिलेखितं च नः=मनःप्रणिधानादिनाऽस्माकमस्मदाचार्याणां वा सुष्ठु पर्या-
लोचितं च । यद् दृष्टं श्रुतं मतं विज्ञातं सुप्रतिलेखितं, तत्स्वरूपं प्रदर्शयति-“सर्वे
प्राणाः” इत्यादि । सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वा हन्तव्याः, आज्ञाप-
यितव्याः, परिग्रहीतव्याः, परितापयितव्याः, अपद्रावयितव्याः, एतद् वाक्यं प्राग्-

मान्यता है वह हमारी देखी हुई है, हमारी सुनी हुई है, हमारी मानी
हुई है और हमारी जानी हुई है, तथा ऊर्ध्व (उंची) अधः (नीची) और
तिर्यग् (तिरछी), इन समस्त दिशाओं में हमने अथवा हमारे आचा-
र्यों ने अच्छी तरह से इसका पर्यालोचन भी किया है कि—समस्त प्राणी,
समस्त भूत, समस्त जीव, और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेके
लिए आज्ञा देने के योग्य हैं, मारनेके लिए ग्रहण करनेके योग्य हैं, परि-
तापित करनेके योग्य हैं और विष-शस्त्रादिक के द्वारा वध करने योग्य
हैं । यह हमारा अभिमत निर्दोष है । ” ये सब अनार्यों के वचन हैं,
आर्यों के नहीं ।

स्पष्टार्थ—परस्परविरुद्धार्थ का कथन अल्पज्ञता के होने पर ही होता
है । केवली और श्रुतकेवली पदार्थों के जानकार होते हैं; अतः उन्होंने

કરે છે અને કહે છે—“ જે કાંઈ અમારી માન્યતા છે તે અમારી દેખેલી છે,
અમારી સાંભળેલી છે, અમારી માનેલી છે અને અમારી જાણેલી છે
તથા ઉર્ધ્વ—(ઉચી) અધઃ (નીચી) અને તિર્યગ્ (તિરછી) આ સમસ્ત
દિશાઓમા અમે તથા અમારા આચાર્યોએ ઘણી સારી રીતે તેનું પર્યાલોચન
કર્યું છે કે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા
યોગ્ય છે, મારવા માટે આજ્ઞા આપવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય
છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષ શસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આ
અમારા અભિપ્રાય નિર્દોષ છે. ” આ બધા અનાર્યોના વચન છે, આર્યોના નથી.

સ્પષ્ટાર્થ—પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થનું કથન અલ્પજ્ઞતા હોવાથી થાય છે. કેવળી
અને શ્રુતકેવળી પદાર્થોના જાણકાર છે, માટે તેમણે જે કાંઈ પ્રતિપાદન કર્યું

જો કુછ બી પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ નિર્દોષ એવં પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થતા સે રહિત હૈ । અલ્પજ્ઞોં કે વચનોં મેં યહ વાત નહીં પાઈ જાતી, ઉનકે વચન સદોષ ઔર પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હુઆ કરતે હૈં । યહી વાત ઇસ સૂત્ર મેં ભાષ્યરૂપસે પ્રકટ કાં ગઈ હૈ ।

દુનિયા મેં જિતને બી બ્રાહ્મણ યા શ્રમણ, દળ્હી, બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ હૈં વે સય ધર્મતત્ત્વ કે યથાર્થ સ્વરૂપસે અનભિજ્ઞ હૈં । ઉનકી માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હૈ । હિંસાદિક પાપોં કે સેવન કરનેમેં ઇનકી માન્યતાનુસાર કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

વે એસે હી ઇન અકૃત્યોં કી પુષ્ટિ કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—જો કુછ હમારે યહાં કહા ગયા હૈ વહ કપોલકલ્પિત—અસત્ય નહીં હૈ; કિંતુ હમને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । અથવા—હમારે આચાર્યોં ને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । હમને યહ અપને આચાર્યાદિકોં સે સુના હૈ । યુક્તિયુક્ત હોનેસે હમેં યા હમારે આચાર્યોંકે લિયે યહ માન્ય હૈ । પદાર્થોં કા ભેદ પર્યાયોં દ્વારા વિશ્લેષણ કરને સે હમને ઔર હમારે આચાર્યોં ને યહ ભેદ અચ્છી તરહ જાન બી લિયા હૈ । પ્રત્યેક દિશામેં હમને તથા હમારે આચાર્યોં ને પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોં સે ઇસકા ભલી-પ્રકાર જ્ઞાન્તચિત્ત હોકર નિર્ણય બી કર લિયા હૈ કિ—સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત

છે તે નિર્દોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થી રહિત છે. અલ્પજ્ઞોના વચનોમાં આવતા દોષવામાં આવતી નથી તેના વચન સદોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક થયા કરે છે. આ વાત આ સૂત્રમાં ભાષ્યરૂપથી પ્રગટ કરેલ છે.

સંસારમાં બેટલા શ્રમણ, દંડી બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ છે અને બ્રાહ્મણ—ઔદેશિક આહરના લેવાવાળા છે ધર્મતત્ત્વના યથાર્થ સ્વરૂપથી અનભિજ્ઞ છે, તેમની માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક છે, હિંસાદિક પાપોનું સેવન કરવામાં તેમની માન્યતા મુજબ કોઈ દોષ નથી તે આવા કૃત્યોની પુષ્ટિ કરતા કહે છે કે—જે કંઈ અમેને કહેવામાં આવ્યું છે તે કપોળકલ્પિત—અસત્ય નથી; પણ અમે પોતાના દિવ્યજ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અથવા—અમારા આચાર્યોએ પોતાના દિવ્ય જ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અમેએ આ અમારા આચાર્યોદિકોથી સાંભળ્યું છે. યુક્તિયુક્ત હોવાથી અમેને તેમજ અમારા આચાર્યોને માટે માન્ય છે, પદાર્થોના લેદ પર્યાયોદ્વારા પૃથક્કરણ કરવાથી અમે અને અમારા આચાર્યોએ આ ભેદો સારી રીતે જાણી લીધેલ છે પ્રત્યેક દિશામાં અમે તથા અમારા આચાર્યોએ પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી તેનો સારી રીતે જ્ઞાન્તચિત્તે નિર્ણય પણ કર્યો છે કે—સમસ્ત પ્રાણી,

વ્યાખ્યાતમ્ । અત્ર ધર્મવિષયે-મન્દિરનિર્માણપ્રતિમાપ્રતિષ્ઠાદૌ, અપિશબ્દાદૌદેશિકે, તથા-વિહારાદૌ શ્રાવકં સાર્થીકૃત્ય સ્વસેવાદ્યર્થમનુજ્ઞાપ્ય તત્કૃતાઽઽહારાદિગ્રહણે ચ જાનીત, અત્ર=અસ્મિન્નુક્તવિષયે નાસ્તિ દોષઃ=નાસ્તિ પાપાનુવન્ધ इति । અનાર્ય-વચનમેતદિતિ । આરાદ્ યાતાઃ=સર્વસાવધવ્યાપારેભ્યો દૂરં ગતા इति-આર્યાઃ, તદ્વિ-પરીતા અનાર્યાઃ-ક્રૂરકર્માણઃ, તેષાં પ્રાણ્યુપમર્દકં વચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

શૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ મારને યોગ્ય હૈ, મારનેકી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈ, મારને કે લિયે ગ્રહણ કરને યોગ્ય હૈ, પરિતાપિત કરને યોગ્ય હૈ ઓર વિષશસ્ત્રાદિકોં કે દ્વારા વધ કરને યોગ્ય હૈ । પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોં કા વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહિલે પ્રકટ કિયા જા ચુકા હૈ ।

इसी प्रकार जिनप्रतिपादित धर्म में भी मंदिरादिक के निर्माण करने की एवं जिनप्रतिमा बनवा कर उसकी प्रतिष्ठा करने की जो प्रथा चालू है वह पद्धति भी सदोष है, उपादेय नहीं है । तथा साधुओं में औद्देशिक आहार ग्रहण करने की एवं विहारादिक करते समय अपनी सेवा करवाने के वहाने से श्रावकों को साथ लेकर उनके द्वारा तैयार किये आहारादिक लेनेकी एक प्रकार की जो प्रथा सी चल पड़ी है, और उसमें जो दोष-पापानुबंध नहीं मानते हैं, प्रत्युत इसका किसी दूसरे रूपसे समर्थन करते हैं; यह सब पूर्वोक्त कथन अनार्यों का ही समझना चाहिये ।

સાવધ વ્યાપાર સે જો દૂર રહતે હૈં ડનકી આર્યસંજ્ઞા ઓર વિપ-

સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય છે, મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષશસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે. પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોનો વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહેલાં જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે

આ પ્રકારે જનપ્રતિપાદિત ધર્મમાં પણ મંદિરાદિકનિર્માણ કરવાનું, તેમજ જિનપ્રતિમા બનાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરવાની જે પ્રથા ચાલુ છે તે પદ્ધતિ પણ સદોષ છે, ઉપાદેય નથી. તથા સાધુઓમાં ઔદેશિક આહાર લેવાની તેમજ વિહારાદિક કરતી વખતે પોતાની સેવા કરવાના બહાને શ્રાવકોને સાથે લઈને તેના દ્વારા તૈયાર કરેલા આહાર પ્રાણી લેવાની એક પ્રકારની જે પ્રથા ચાલુ થઈ છે, અને તેમાં જે દોષ-પાપાનુબંધ નથી માનતા, અને દરેક તે બાબતને બીજા રૂપથી સમર્થન કરે છે તે બધા પૂર્વોક્ત કથન અનાર્યોના જ સમજવા લેખ્ય છે

સાવધ વ્યાપારથી જે દૂર રહે છે તેની આર્ય સંજ્ઞા, અને તેનાથી વિપરીતની

યે તુ આર્યાસ્તે કિં વદન્તીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—‘તત્થ જે’ इत्यादि ।

મૂલમ—તત્થ જે આરિયા તે એવં વયાસી—“સે દુદ્ધિદં ચ મે, દુસ્સુયં ચ મે, દુમ્મયં ચ મે, દુવિણ્ણયં ચ મે, ઉદ્ધં અહં તિરિયં દિસાસુ સવ્વઓ દુપ્પહિલેહિયં ચ મે; જંણં તુબ્બમે એવં આઙ્કલ્લહ, એવં ભાસહ, એવં પરુવેહ, એવં પણ્ણવેહ—સવ્વે પાણા ૪, હંતવા ૫, इत्थं वि जाणह नत्थित्थ दोसो” अणारियवयणमेयं ॥ सू० ९॥

છાયા—તત્ર યે આર્યાસ્ત એવમવાદિપુઃ—તદ્ દુર્દૃષ્ટં ચ વઃ, દુઃશ્રુતં ચ વઃ, દુર્મતં ચ વઃ, દુર્વિજ્ઞાતં ચ વઃ, ઝર્વમ્ અધઃ તિર્યગ્ દિશાસુ સર્વતઃ દુષ્પતિછેચિતં ચ વઃ, યત્ સ્વલુ યુયમેવમ્ આલ્યાથ, એવં ભાપધ્વે, એવં પરુપયથ, એવં પ્રજ્ઞાપયથ—સર્વે પ્રાણાઃ ૪ હન્તવ્યાઃ ૫ । અત્રાપિ જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ । ” અનાર્ય-વચનમેતત્ ॥ મ્ ૦ ૯ ॥

ટીકા—યે દેશતો ભાપાતશ્ચારિત્રતશ્ચાર્યાસ્તે, તત્ર=ઉક્તવિષયે, એવં વક્ષ્યમા-ણપ્રકારેણ અવાદિપુઃ=ઉક્તવન્તઃ—‘તદ્ દુર્દૃષ્ટં ચ વઃ’ इत्यादि । યુષ્માભિર્ય-દુક્તં—‘તદ્ દૃષ્ટં ચ નઃ’ इति, તદ્ વઃ=યુષ્માકં યુષ્મદાચાર્યાણાં વા દૃષ્ટં દુર્દૃષ્ટમ્=રીત કી અનાર્યસંજ્ઞા હૈ । યે ક્રૂરકર્મી હોતે હૈં । યહ પ્રાણિયોં કે પીડા-કારક સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન ઇન્હોં અનાર્યોં કા પ્રતિપાદિત કિયા હુઆ હૈ । ૮।

યદિ યહ પૂર્વોક્ત સમસ્ત ધર્મવિરુદ્ધ કથન અનાર્યોં કા હૈ તો ફિર આર્યોં કી માન્યતા કૈસી હૈ ? ઇસ પ્રકાર શિષ્યકી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કિયા જાતા હૈ—‘તત્થ જે આરિયા’ इत्यादि ।

ઇસ પૂર્વોક્ત કથનમેં આર્યોં કી ઇસ પ્રકાર કી પ્રત્યુત્તરરૂપ માન્યતા હૈ, અર્થાત્—દેશ સે, ભાપા સે ઓર ચારિત્ર સે જો આર્ય હૈં ઊનકા ઇસ પ્રકાર કા કથન હૈ કિ—આપને વ આપકે આચાર્યોં ને જો દેશા હૈ, જો

अनार्य संज्ञा छे. ते क्रूरकर्मी होय छे प्राणीओने माटे पीडाकारक आ सभस्त पूर्वोक्त कथन आ अनार्योंना न प्रतिपादित करेलां छे. ॥ सू० ८ ॥

आ पूर्वोक्त सभस्त धर्मविरुद्ध कथन अनार्योंना छे तो पक्षी आर्योंनी मान्यता केवी छे ? आ प्रकारनी शिष्यनी शङ्कनु समाधान करे छे—‘तत्थं जे आरिया’ इत्यादि.

आ पूर्वोक्त कथनमां आर्योंनी आ प्रकारनी प्रत्युत्तररूप मान्यता छे, अर्थात्—देशथी लापाथी अने चारित्रथी ने आर्य छे तेनुं आ प्रकारनुं कथन छे हे—तमेओ तमाश आचार्योंओ ने हेभ्युं छे, सालज्युं छे, मान्युं छे अने ने

=दुष्टं दृष्टं न तु सम्यग् दृष्टमित्यर्थः । एवं यावत् “ दुष्प्रतिलेखितं च वः ” इति स्वयमूहनीयम् । पुनरपि त एवार्थाः प्रागुक्तश्रमणादिवचनं हिंसादिप्रवर्तक-तया सदोषमिति बोधयितुं यद्वत्तादिपुस्तदाह—‘ यत् खलु यूयमेवम् ’ इत्यादि । एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण यूयं यद्वचनमाख्याय, एवं यद् भाषध्वे, एवं यत् प्रज्ञापयथ, एवं यत् प्ररूपयथ—सर्वे प्राणाः ४ हन्तव्याः ५ इत्यादि, यावत्-नास्त्यत्र दोष इति, तदेतत् सर्वमनार्यवचनं=हिंसादिप्रवर्तकतया पापातुवन्धि वचनं युष्मदाचार्याणां वेत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

सुना है, जो माना है, और जो जाना है एवं प्रत्येक दिशामें जिसकी प्रत्यक्षादि प्रमाणों के द्वारा अच्छीतरह से ज्ञान-बीन की है; वह सर्वथा सदोष है—वह आपका व आपके आचार्यों का देखना, सुनना, मानना, एवं जानना और पर्यालोचना करना दोषोंसे रिक्त नहीं है, अतः आपने व आपके आचार्यों ने जो देखा है वह सुन्दर निर्दोष नहीं देखा, जो सुना है वह निर्दोष नहीं सुना, जो माना है वह निर्दोष नहीं माना, जो जाना है वह निर्दोष नहीं जाना, एवं जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा प्रत्येक दिशामें पर्यालोचना की है वह भी निर्दोष नहीं की । यह सब उनका व आपका नाममात्रका ही देखना सुनना वगैरह हुआ है, कारण कि यह आपका पूर्वोक्त कथन जीवों की हिंसादिक पापों में प्रवृत्ति की जागृति करानेवाला है, अतः ‘समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारने की आज्ञा देनेयोग्य है, मारने के लिए ग्रहण करने योग्य हैं, परिनापित करनेयोग्य है और विष-श-

जलज्युं छे तेमज्ज प्रत्येक दिशामा जेनी प्रत्यक्षादि प्रमाणोद्वारा सारी रीते शोध करी छे ते सर्वथा सदोष छे. ते तमाइं तेमज्ज तमासा आचार्योंनुं देणवुं, सालणवुं, मानवु, तेमज्ज जलज्यु अने पर्यालोचना करवी ते दोषोर्था मुक्त नथी, भाटे तमाजे तेमज्ज तमासा आचार्योंजे जे देण्युं छे ते सुद्धर-निर्दोष नथी देण्युं, जे सालज्युं छे निर्दोष नथी सालज्यु, जे मान्युं ते निर्दोष नथी मान्युं, तेमज्ज जे जलज्यु छे ते निर्दोष नथी जलज्यु, अने जे प्रत्यक्षादिप्रमाणोद्वारा प्रत्येक दिशामां पर्यालोचना करी छे ते पणु निर्दोष नथी करी, आ जधु तेज्यानुं तेमज्ज तमाइं नाममात्रनु देणवु सालणवु विगेरे थयु छे, काण्णु छे तमाइं पूर्वोक्त कथन जेवानी हिंसादिक पापेमा प्रवृत्ति जमत्त करवावाणु छे, भाटे ‘समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जल, अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य छे, मारवानी

एवं केवलिनो दण्डिशाक्यादीनां वादे हिंसादिदोषसद्भावाद्विरोधं प्रदर्श्य
स्वमतं प्रतिबोधयितुं वदन्ति—‘ वयं पुण ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વયં પુણ એવમાઝક્રવામો, એવં ભાસામો, એવં પન્ન-
વેમો, એવં પરુવેમો—સવે પાણા, સવે ભૂયા, સવે જીવા, સવે સત્તા
ળ હંતવા, ણ અજ્ઞાવેયવા, ણ પરિઘેતવા, ણ પરિયાવેયવા, ણ ઉદ્ધવે-
યવા । એતથવિ જાણહ, ણતિથત્થ દોસો । આરિયવચનમેયં ॥ સૂ. ૧૦ ॥

આદિકોં કે દ્વારા વધ કરને યોગ્ય હૈ, इसमें कोई दोष नहीं है ।
यह जो आपका कथन है, आपका भाषण है, आपकी प्रज्ञापना है,
आपकी प्ररूपणा है, तथा इसे जो आपने निर्दोष प्रकट किया है; वे सब
अनार्यों के ही वचन हैं और सदोष हैं, कारण कि आपके व आपके
आचार्यों के इन वचनों में प्रवृत्ति करनेवाला प्राणी केवल पापका ही उपा-
र्जन करनेवाला होता है, धर्मका नहीं, अतः अनार्यवचन होने से ये
त्याज्य ही हैं । इस पूर्वोक्त कथन का तात्पर्य यही है कि यह सब कथन
धर्मविरुद्ध होनेसे जीवोंमें असदाचार की प्रवृत्ति का कारण होनेसे
सदोष एवं पापानुबन्ध का हेतु है, अतः अनार्य वचन होने से यह सर्वथा
निन्दनीय एवं गर्हणीय है ॥ सू. ९ ॥

केवली भगवान इस प्रकार दुण्डी शाक्यादिकों के कथन में हिंसा-
दिक दोषों का सद्भाव होनेसे धर्मविरुद्धता प्रदर्शित कर अपना सिद्धान्त
प्रकट करनेके लिये कहते हैं—‘ वयं पुण ’ इत्यादि ।

આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવાને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય
છે, અને વિપશ્યાદિકો દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આમા કાંઈ પણ દોષ નથી
આ પ્રકારે જે તમારું કથન છે, તમારું ભાષણ છે, તમારી પ્રજ્ઞાપના છે,
તમારી પ્રરૂપણા છે, તથા એને જે તમેએ નિર્દોષ પ્રગટ કરેલ છે તે બધા
અનાર્યોના જ વચનો છે અને સદોષ છે, કારણ કે તમારા તેમજ તમારા આચા-
ર્યોના આ વચનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં પ્રાણી કેવળ પાપના જ ઉપાર્જન કરવાવાળા
બને છે, ધર્મના નહીં, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે તજવા યોગ્ય છે આ
પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બધા કથન ધર્મ-વિરુદ્ધ હોવાથી એવાને
અસદાચારની પ્રવૃત્તિનું કારણ હોવાથી મદોષ અને પાપાનુબંધનો હેતુ છે, માટે
અનાર્યવચન હોવાથી તે સર્વથા નિન્દનીય તેમજ ગર્હણીય છે. ॥ સૂ. ૯ ॥

કેવળી ભગવાન આ પ્રકારે દુન્ડી શાક્યાદિકોના કથનમાં હિંસાદિક દોષોનો
મદ્ભાવ હોવાથી ધર્મ-વિરુદ્ધતા પ્રદર્શિત કરી પોતાનો નિદ્ધાન્ત પ્રગટ કરવાને
માટે કહે છે—‘ વયં પુણ ’ ઇત્યાદિ.

छाया—वयं पुनरेवमाख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः- सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः, सर्वे जीवाः, सर्वे सत्त्वाः, न हन्तव्याः १, न आज्ञापयितव्याः २, न परिग्रहीतव्याः ३, न परितापयितव्याः ४, न अपद्रावयितव्याः ५ । अत्रापि जानीत, नास्त्यत्र दोषः । आयवचनमेतत् ॥ सू० १० ॥

टीका—वयं पुनरित्यादि । अत्र पुनः—शब्द उक्तश्रमणादिवैलक्षण्यद्योतनाय । यथा धर्मविरुद्धवादो न भवति, तथा वयम् एवं=वक्ष्यमाणरीत्या आख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५ । एतानि पदानि प्राग् व्याख्यातानि । अत्रापि—अत्रैव=अस्मिन् उक्तविषये—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५, इत्यत्रैव जानीत=युयमवबुध्यध्वम्, अत्र=अस्मिन्—अस्मद्वाक्ये

इस सूत्रमें “पुनः” यह शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकों की मान्यतासे केवलियों की मान्यतामें भिन्नप्रकारता का द्योतन करनेवाला है, अर्थात् केवलियों का कथन इस प्रकारका नहीं है, किन्तु ऐसा है कि जिससे उसमें किसी भी प्रकार धर्मसे विरोध नहीं आ सकता है । उनका कहना है कि हम तो इस प्रकार का कथन करते हैं, भाषण करते हैं, प्रज्ञापना करते हैं, प्ररूपणा करते हैं कि—समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व न मारने योग्य हैं, न मारनेकी आज्ञा देने योग्य हैं, न मारनेके लिए ग्रहण करने योग्य हैं, न परितापित करने योग्य हैं और न विषशस्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य ही हैं । (इन समस्त पदों का विवरण पहिले लिखा जा चुका है) यह हमारा कथन हिंसादिक पापों में जीवों की प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होनेसे प्रमाणरूप निर्दोष है । यह आप अच्छी तरहसे समझ लें । यही

आ सूत्रमा ‘पुनः’ आ शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकोनी मान्यताथी केवणी-योनी मान्यतामां भिन्न-प्रकारता प्रकाशित करे छे. अर्थात्—केवणीओनुं कथन आ प्रकारनुं नथी પણ आम छे बेनाथी केछ પણ प्रकारे धर्मथी विरोध आवी शकते नथी. ओमनुं कहेवुं छे के—अमे तो आ प्रकारनु कथन करीओ छीओ, लापण करीओ छीओ, प्रज्ञापना करीओ छीओ अने प्ररूपण करीओ छीओ के समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जिव अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य नथी, मारवानी आज्ञा देवा योग्य नथी, मारवाने माटे ग्रहण करवा योग्य नथी, परितापित करवा योग्य नथी, तेमज विष अने शस्त्रादिकोथी वध करवाने योग्य नथी. (आ समस्त पदार्थोनुं विवेचन पहेलां करवामां आव्युं छे) आ अमाहुं कथन हिंसादिक पापेमां लुवोनी प्रवृत्ति करवावाणु नहिं होवार्थी प्रमाणरूप निर्दोष छे. ओ तमे सारी रीते समस्त

एवं केवलिनो दण्डिशाक्यादीनां वादे हिंसादिदोषसद्भावाद्विरोधं प्रदर्श्य स्वमतं प्रतिबोधयितुं वदन्ति—‘वयं पुण’ इत्यादि ।

मूलम्—वयं पुण एवमाइक्खामो, एवं भासामो, एवं पन्न-वेमो, एवं परूवेमो—सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता ण हंतवा, ण अज्जावेयवा, ण परिघेतवा, ण परियावेयवा, ण उद्देव-यवा । एत्थवि जाणह, णत्थित्थ दोसो । आरियवयणमेयं ॥ सू० १० ॥

स्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य हैं, इसमें कोई दोष नहीं है ।’ यह जो आपका कथन है, आपका भाषण है, आपकी प्रज्ञापना है, आपकी प्ररूपणा है, तथा इसे जो आपने निर्दोष प्रकट किया है; वे सब अनार्यों के ही वचन हैं और सदोष हैं, कारण कि आपके व आपके आचार्यों के इन वचनों में प्रवृत्ति करनेवाला प्राणी केवल पापका ही उपा-र्जन करनेवाला होता है, धर्मका नहीं, अतः अनार्यवचन होने से ये त्याज्य ही हैं । इस पूर्वोक्त कथन का तात्पर्य यही है कि यह सब कथन धर्मविरुद्ध होनेसे जीवोंमें असदाचार की प्रवृत्ति का कारण होने से सदोष एवं पापानुबन्ध का हेतु है, अतः अनार्य वचन होने से यह सर्वथा निन्दनीय एवं गर्हणीय है ॥ सू० ९ ॥

केवली भगवान इस प्रकार दण्डी शाक्यादिकों के कथन में हिंसा-दिक दोषों का सद्भाव होनेसे धर्मविरुद्धता प्रदर्शित कर अपना सिद्धान्त प्रकट करनेके लिये कहते हैं—‘वयं पुण’ इत्यादि ।

આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવાને અણુ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિપશ્ચાદિકો દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આમા કાંઈ પણ દોષ નથી’ આ પ્રકારે જે તમારું કથન છે, તમારું ભાષણ છે, તમારી પ્રજાપના છે, તમારી પ્રરૂપણા છે, તથા એને જે તમેએ નિર્દોષ પ્રગટ કરેલ છે તે બધા અનાર્યોના જ વચનો છે અને સદોષ છે. કારણ કે તમારા તેમજ તમારા આચાર્યોના આ વચનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં પ્રાણી કેવળ પાપના જ ઉપાર્જન કરવાવાળાં બને છે, ધર્મના નહીં, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે તજવા યોગ્ય છે. આ પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બધા કથન ધર્મ-વિરુદ્ધ હોવાથી એવોને અસદાચારની પ્રવૃત્તિનું કારણ હોવાથી સદોષ અને પાપાનુબંધનો હેતુ છે, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે સર્વથા નિન્દનીય તેમજ ગર્હણીય છે ॥સૂ. ૯॥

દેવળી ભગવાન આ પ્રકારે દંડી શાક્યાદિકોના કથનમાં હિંસાદિક દોષોનો મદ્ભાવ હોવાથી ધર્મ-વિરુદ્ધતા પ્રદર્શિત કરી પોતાનો સિદ્ધાંત પ્રગટ કરવાને માટે કહે છે—‘વયં પુણ’ ઇત્યાદિ.

છાયા—વયં પુનરેવમાખ્યામઃ, એવં ભાષામહે, એવં પ્રજ્ઞાપયામઃ, એવં પ્રરૂપયામઃ—સર્વે પ્રાણાઃ સર્વે ભૂતાઃ, સર્વે જીવાઃ, સર્વે સત્ત્વાઃ, ન હન્તવ્યાઃ ૧, ન આજ્ઞાપયિતવ્યાઃ ૨, ન પરિગ્રહીતવ્યાઃ ૩, ન પરિતાપયિતવ્યાઃ ૪, ન અપદ્રાવયિતવ્યાઃ ૫ । અત્રાપિ જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ । આર્યવચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—વયં પુનરિત્યાદિ । અત્ર પુનઃ—શબ્દ ઉક્તશ્રમણાદિવૈલક્ષણ્યઘોતનાય । યથા ધર્મવિરુદ્ધવાદો ન ભવતિ, તથા વયમ્ એવં=વધ્યમાણરીત્યા આખ્યામઃ, એવં ભાષામહે, એવં પ્રજ્ઞાપયામઃ, એવં પ્રરૂપયામઃ—સર્વે પ્રાણાઃ ૪ ન હન્તવ્યાઃ ૫ । એતાનિ પદાનિ પ્રાગ્ વ્યાખ્યાતાનિ । અત્રાદિ—અત્રૈવ=અસ્મિન્ ઉક્તવિષયે—સર્વે પ્રાણાઃ ૪ ન હન્તવ્યાઃ ૫, इत्यत्रैव જાનીત=યૂયમવબુદ્ધ્યધ્વમ્, અત્ર=અસ્મિન્—અસ્મદ્વાક્યે

इस सूत्रमें “पुनः” यह शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकों की मान्यतासे केवलियों की मान्यतामें भिन्नप्रकारता का द्योतन करनेवाला है, अर्थात् केवलियों का कथन इस प्रकारका नहीं है, किन्तु ऐसा है कि जिससे उसमें किसी भी प्रकार धर्मसे विरोध नहीं आ सकता है । उनका कहना है कि हम तो इस प्रकार का कथन करते हैं, भाषण करते हैं, प्रज्ञापना करते हैं, प्ररूपणा करते हैं कि—समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व न मारने योग्य हैं, न मारनेकी आज्ञा देने योग्य हैं, न मारनेके लिए ग्रहण करने योग्य हैं, न परितापित करने योग्य हैं और न विषशस्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य ही हैं । (इन समस्त पदों का विवरण पहिले लिखा जा चुका है) यह हमारा कथन हिंसादिक पापों में जीवों की प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होनेसे प्रमाणरूप निर्दोष है । यह आप अच्छी तरहसे समझ लें । यही

આ સૂત્રમાં ‘પુનઃ’ આ શબ્દ પૂર્વોક્ત શ્રમણાદિકોની માન્યતાથી કેવળી-યોની માન્યતામાં ભિન્ન-પ્રકારતા પ્રકાશિત કરે છે. અર્થાત્—કેવળીઓનું કથન આ પ્રકારનું નથી પણ આમ છે જેનાથી કોઈ પણ પ્રકારે ધર્મથી વિરોધ આવી શકતો નથી. એમનું કહેવું છે કે—અમે તો આ પ્રકારનું કથન કરીએ છીએ, લાપણ કરીએ છીએ, પ્રજ્ઞાપના કરીએ છીએ અને પ્રરૂપણા કરીએ છીએ કે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય નથી, મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય નથી, મારવાને માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય નથી, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય નથી, તેમજ વિષ અને શસ્ત્રાદિકોથી વધ કરવાને યોગ્ય નથી. (આ સમસ્ત પદાર્થોનું વિવેચન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે) આ અમારું કથન હિંસાદિક પાપોમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ કરવાવાળું નહિ હોવાથી પ્રમાણરૂપ નિર્દોષ છે. એ તમે સારી રીતે સમજ

दोषो नास्ति; हिंसादिप्रवर्तकत्वाभावादिति भावः । एतच्च आर्यवचनम्=देशतो भापातचारित्रतश्च ये आर्यास्तेषां वाक्यं, तस्मान्नास्त्यत्र दोष इत्यर्थः ॥ सू० १० ॥

दण्डिशाक्यादीनां पापण्डिनां धर्मविरुद्धवादप्रगमनाय केवलिनो यद् वदन्ति तदाह—‘ पुञ्च निकाय ’ इत्यादि ।

मूलम्—पुञ्चं निकाय समयं पत्तेयं पत्तेयं पुच्छिस्सामो, हं भो पवाउया ! किं भे सायं दुक्खं असायं ? समिया पडिवण्णे यावि एवं वृया—सवेसिं पाणाणं सवेसिं भूयाणं सवेसिं जीवाणं सवेसिं सत्ताणं असायं अपरिनिव्वाणं महब्भयं दुक्खं-तिवेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—पूर्वं निकाय्य समयं प्रत्येकं प्रत्येकं प्रक्ष्यामः, हं भोः प्रावादुकाः ! किं युष्माकं सातं दुःखम् असातम् ? सम्यक्प्रतिपन्नांश्च अप्येवं वृयात्—सर्वेषां प्राणानां सर्वेषां भूतानां सर्वेषां जीवानां सर्वेषां सत्त्वानां असातम् अपरिनिव्वाणं महाभयं दुःखम्—इति ब्रवीमि ॥ म० ११ ॥

टीका—भोः प्रावादुकाः ! त्रयं पूर्वम्=आदौ, समयम्=आगमम् आगमोक्त-मर्थं, निकाय्य=व्यवस्थाप्य, युष्मान् प्रत्येकं प्रत्येकं प्रक्ष्यामः, दुःखं युष्माकं किं सातं=मनोऽनुकूलं, किं वा असातम्=मनःप्रतिकूलम् ?

देहसे, भापासे और चारित्रसे जो आर्य हैं उनका कथन है, इसी कारण यह निर्दोष है । आर्य देहमें जो उत्पन्न हुए हैं वे देहसे आर्य, आर्योंकी भापा जो बोलते हैं वे भापासे आर्य और चारित्र का जो आराधन करते हैं वे चारित्रसे आर्य कहलाते हैं ॥ सू० १० ॥

दण्डीशाक्यादिक पाण्डिण्डियों के धर्मविरुद्ध कथनको शान्त करने के लिये केवलियों का जो कथन है वह कहा जाता है—‘ पुञ्च निकाय ’ इत्यादि ।

हे वादियों ! हम सबसे प्रथम आगमोक्त-अर्थतत्त्वकी व्यवस्था कर के आप लोगों में से प्रत्येक को यह पूछते हैं कि आप दुःख किसे मानते

हैं। देशधी, लापाधी अने चारित्रधी ने आर्य छे तेनुं आ न कथन छे, आ भाटे न आ निर्दोष छे, आर्य देशमां ने उत्पन्न थया छे त देशधी आर्य, आर्योंनी लापा जोखे छे भाटे लापाधी आर्य अने चारित्रनुं ने आराधन करे छे ते चारित्रधी आर्य छेवाथ छे ॥ सू० १० ॥

दण्डीशाक्यादिक पाण्डिण्डिना धर्मविरुद्ध कथनने शांत करवा भाटे केव-लीयोनुं ने कथन छे ते छे छे—‘ पुञ्च निकाय ’ इत्यादि

हे वादनियाद करवावाणा ! अमे सीधी प्रथम आगमोक्त अर्थ-तत्त्व नी व्यवस्था करीने तभारे दोहोभाधी दरेकने पूछीजे छीअ छे तभा दुःख कोने माने छे ? ने

एवं पृष्ठाः सन्तो यदि ते 'दुःखं सातम्' इति ब्रूयुस्तदा तेषां प्रत्यक्ष-
मलोकविरोध आपद्येत, यदि तु दुःखमसातम्' इति वदेयुस्तदा सम्यक्-
प्रतिपन्नान्=यथार्थमर्थं ज्ञातवतः प्रावादुकान् स्वतः स्तम्भितवाक्प्रचारान्, अप्येवम्-
अपिशब्दः संभावनार्थद्योतकः; एवं संभाव्यते-दुःखं भवतामेव नासातरूपं, किंतु
सर्वेषामपि प्राणिनां सर्वेषामपि भूतानां सर्वेषामपि जीवानां सर्वेषामपि सत्त्वानां
दुःखम्-असातं=मनःप्रतिकूलम्-अप्रियमित्यर्थः । तथा-अपरिनिर्वाणम्=अशान्तं
हैं ? जो शाता-मनके अनुकूल है वह दुःख है ? या जो अशाता-मनके
प्रतिकूल है वह दुःख है ?

मनके अनुकूल शाताको यदि दुःख माना जावे तो इसमें प्रत्यक्ष
तथा आगम प्रमाणसे और लोकसे भी विरोध आता है, कारण कि
मन अपने अनुकूल पदार्थके सेवनमें सुख मानता है, यह प्रत्यक्षसिद्ध
बात है । आगममें भी 'मनोऽनुकूलं सुखं' यह लिखा हुआ है, अर्थात्
मनोऽनुकूल पदार्थों की प्राप्ति शातावेदनीय कर्मके उदयसे ही जीवोंको
प्राप्त होती है, ऐसा शास्त्रका वचन है । लोक भी मनोऽनुकूल पदार्थके
सेवनमें सुख है-ऐसा ही कहते और मानते हैं ।

मनके प्रतिकूल अशाता को यदि दुःख माना जावे तो जो यथार्थवक्ता-
समझदार प्रवादी है और जो इस विषय में केवल मौन हैं उनसे हम
यही कहेंगे कि जिस प्रकार अशाता तुम्हें दुःखरूप प्रतीत होती है उसी
तरहसे समस्त प्राणियों को, समस्त भूतों को, समस्त जीवों को और
समस्त सत्त्वों को यह अशाता महाघोर और उनके प्राणों को कष्ट

शाता-મનને અનુકૂળ છે તે દુઃખ છે ? અગર જે અશાતા-મનને પ્રતિકૂળ છે તે
દુઃખ છે ?

મનને અનુકૂળ-શાતાને કદાચ દુઃખ માનવામા આવે તો તેમાં પ્રત્યક્ષ તથા
આગમપ્રમાણથી અને લોકથી પણ વિરોધ આવે છે, કારણ કે મન પોતાના અનુ-
કૂળ પદાર્થના સેવનમાં સુખ માને છે એ પ્રત્યક્ષ-સિદ્ધ વાત છે આગમમા પણ
'મનોઽનુકૂલં સુખં' એમ લખેલ છે, અર્થાત્-મનના અનુકૂળ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ
જીવોને શાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, એવું શાસ્ત્રનું વચન છે, લોક પણ
'મનને અનુકૂલ પદાર્થના સેવનમાં સુખ છે' એવું જ કહે છે તેમ જ માને છે મનને
પ્રતિકૂળ અશાતાને કદાચ દુઃખ માનવામા આવે તો જે યથાર્થવક્તા-સમજદાર
પ્રવાદી છે અને જે આ વિષયમાં કેવળ મૌન છે તેને પણ અમે એ જ કહીશું કે
—જે પ્રકારે અશાતા તમોને દુઃખરૂપ પ્રતીત થાય છે તે માફક સમસ્ત પ્રાણિ-
સમસ્ત ભૂતો, સમસ્ત જીવો અને સમસ્ત સત્ત્વોને આ અશાતા મહાઘોર

ધોરમિત્યર્થઃ । તથા-મહાભયમ્=નિશ્ચિલપ્રાણિપ્રાણોદ્વેજકત્વાન્મહાભયરૂપમ્ । इत्येवं
 વ્યાત્=‘પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં ગણયિત્વા, સર્વે પ્રાણિનો ન હન્તવ્યા નાજ્ઞાપયિતવ્યા ન પરિ-
 ગ્રહીતવ્યા ન પરિતાપયિતવ્યાઃ, નાપદ્રાવયિતવ્યાઃ, યતો હિંસાદિકરણે દોષઃ
 પ્રસજ્યેત’ इत्येवं વચનં વદેદિત્યર્થઃ । યસ્તુ હિંસાદિકરણે દોષો નાસ્તીતિ વદતિ,
 તદનાર્થવચનમ્-इति પ્રત્યક્ષાનુમાનોપમાદિપ્રમાણैઃ સિદ્ધમિતિ ભાવઃ । इति ब्रवीमीति
 પૂર્વવદ્ વ્યાગ્રવ્યાઽવગન્તવ્યા ॥ મૃ ૧૧ ॥

॥ ચતુર્થાધ્યયનસ્ય ઈતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૪-૨ ॥

પહુંચાનેવાલી હોનેસે મહાભયરૂપ પ્રતીત હોતી હૈ, અતઃ સમસ્ત પ્રાણી,
 સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ ન મારને યોગ્ય હૈ, ન મારને
 કી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈં, ન મારનેકે લિખ ગ્રહણ કરનેયોગ્ય હૈં ન પરિ-
 તાપિત કરને યોગ્ય હૈં ઓર ન વધ કરને યોગ્ય હૈં । અશાતા દેનેસે
 હિંસાદિક દોષોં કા ભાગી હોના પડતા હૈ । જો હિંસાદિક પાપોં કે કરને મેં
 દોષ નહીં માનતે હૈં વે અનાર્થ હૈં ઓર “ હિંસાદિક પાપોં કે કરને મેં
 દોષ નહીં હૈ ” ઉનકે યે વચન અનાર્થવચન હી હૈં । શ્રી સુધર્માસ્વામી
 કહતે હૈ—હે જમ્બૂ ! જૈસા મૈને ભગવાન કે સમીપ સુના હૈ વૈસા હી
 કહતા હૂં ॥ મૃ ૧૧ ॥

॥ ચૌથે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૨ ॥

તેમના પ્રાણને દુઃખ પહોચાડવાવાળી હોવાથી મહાભયરૂપ પ્રતીત થાય છે, માટે
 સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ નહિ મારવાયોગ્ય
 છે, નહિ મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, નહિ મારવાને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે,
 નહિ પરિતાપિત કરવાને યોગ્ય છે, નહિ વધ કરવા યોગ્ય છે અશાતા દેવાથી
 હિંસાદિક દોષોનું લાગી જાવું પડે છે. જે હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી
 માનતા તે અનાર્થ છે, અને “ હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી ” એમ જે
 તેનું વચન છે આ અનાર્થવચન છે. સુધર્માસ્વામી કહે છે—હે જમ્બૂ ! જેવું મેં
 ભગવાન સમીપે સાંભળ્યું છે તેવું કહું છું. ॥ મૃ ૧૧ ॥

એથા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૨ ॥

અથ ચતુર્થાધ્યયનસ્ય તૃતીય ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके दण्डिशाक्यादिपापण्डिमत्तिराकरणेन सम्यक्तवं स्थिरीकृतम् । सत्यपि सम्यक्तवे निरवद्यतपश्चरणमन्तरेण कर्मक्षयो न भवतीत्यत स्तत्र प्रवर्तयितुं तृतीयोद्देशकं कथयति । तत्र प्रथमं धर्मबहिष्क्रान्तस्यानार्यतया तदुपेक्षा करणीयेति बोधयितुमाह—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ઉવેહિ ણં બહિયા ય લોગં, સે સવ્વલોગંમિ જે કેહુ વિણ્ણૂ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—ઉપેક્ષસ્ય खलु बहिश्च लोकम्, स सर्वलोके ये केचिद् विज्ञः ॥ सू० १ ॥

टीका—बहिः=धर्माद् बहिष्क्रान्तं लोकं खलु=निश्चयेन उपेक्षस्य=मा अनुसर । दण्डिशाक्यादिपापण्डिमत्तं मा अनुमन्यस्वेत्यर्थः । धर्मबहिष्क्रान्तलोकोपेक्ष-

चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश

इस पीछेके द्वितीय उद्देश में दण्डी शाक्यादिक पाण्डिण्डियोंकी मान्यताका निराकरण करके सम्यक्त्वको सुस्थिर किया; परन्तु इतने मात्र से कर्मक्षय नहीं हो सकना, कर्मक्षय तो निरतिचार तपश्चरण से ही होता है, इसलिये उस तपमें जीवोंकी प्रवृत्ति कराने के लिये इस तृतीय उद्देशका कथन प्रारंभ किया जाता है। इसमें सर्वप्रथम धर्मसे बहिर्भूत जो व्यक्ति हैं वे अनार्य हैं और उनके साथ रागद्वेष न करते हुए उपेक्षाभाव ही रखना चाहिये, इस बातका परिज्ञान कराने के लिये कहते हैं—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

ધર્મસે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં કી સદા ઉપેક્ષા હી કરની યાહિણ । અર્થાત્—દણ્ડી શાક્યાદિક જો ધર્મસે બહિર્ભૂત હૈં, ધર્મકા યથાર્થ સ્વરૂપ

ચોથા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ.

પાછળનાં બીજા ઉદ્દેશમાં દડી-શાક્યાદિક પાળડીઓની માન્યતાનું નિરાકરણ કરીને સમ્યક્ત્વને સુસ્થિર કર્યું, પણ આટલાથી જ કર્મક્ષય થઇ શકે નહિ. કર્મક્ષય તો નિરતિચાર તપશ્ચરણથી જ થાય છે, માટે તે તપમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ કરવાને માટે આ ત્રીજા ઉદ્દેશના કથનનો પ્રારંભ કરવામાં આવે છે. આમાં સર્વપ્રથમ ધર્મથી બહિર્ભૂત જે વ્યક્તિ છે તે અનાર્ય છે અને તેની સાથે રાગ દ્વેષ ન કરતા ઉપેક્ષા ભાવ જ રાખવો જોઇએ, આ વાતનું પરિજ્ઞાન કરવાને માટે કહે છે—‘ઉવેહિ ણં’ ઇત્યાદિ

ધર્મથી બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોની સદા ઉપેક્ષા જ રાખવી જોઇએ. અર્થાત્—દડી શાક્યાદિક જે ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, ધર્મનું યથાર્થ સ્વરૂપ નથી બાળતા તેમજ

યસ્ય ગુણમાહ-‘સ સર્વલોકે’ इत्यादि । योजनार्थं मत्वा धर्मवहिष्क्रान्तलोकं
 नानुसरति, स सर्वलोके=समस्ते मनुष्यलोके, ये केचिद् विद्वांसस्ततोऽप्यधिको
 विज्ञः=विद्वानित्यर्थः ॥ मृ० १ ॥

નહીં જાનતે હેં એવં હિંસાદિક પાપ કાર્યોં મેં જીવોં કો પ્રવર્તિત કરાને કે
 લિયે મિથ્યા ઉપદેશ કરતે હેં, ડનકા અનુસરણ નહીં કરના ચાહિયે ।
 જિસ પ્રકાર ઘામકે તૃણ કે ઉપર સમઞ્જદાર જીવકે હૃદયમેં ન રાગ હોના
 હૈ ઓર ન દ્વેષ હી હોના હૈ; કિન્તુ સદા માધ્યસ્થ્યભાવ રહતા હૈ । ઈસી
 પ્રકાર જો આર્હત ધર્મકે વિપરીત ચલનેવાલે હૈ ઓર ડસસે અપની વૃત્તિ
 કો વિશ્દ્ધ બનાયે હુગ હૈ ડનકે પ્રતિ ભી ભગવાન્ કા યહી આદેશ હૈ કિ હૈ
 મહાનુભાવોં ! તુમ ભી રાગ દ્વેષ ન કરકે ડનકે પ્રતિ ઉપેશ્તાભાવ હી રક્ષવોં;
 કારણ કિ ઈમ ઉપેશ્તાભાવસે આત્મામેં જ્ઞાનિ કી માત્રા અધિક રૂપમેં
 જાગૃત હોતી રહતી હૈ । નવીન કર્મોં કા બંધ, જો ડમકે પ્રતિ રાગદ્વેષ
 કરને સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ રુક જાતા હૈ, અતઃ ધર્મવહિર્ભૂત મનુષ્યોં કો
 અનાર્થ સમઞ્જ કર જો ડનકા અનુસરણ નહીં કરના હૈ વહ મનુષ્ય ઈસ
 લોકમેં જિતને ભી વિદ્વાન્ હેં ડન સવસે અધિક વિજ્ઞ-વિદ્વાન્ હૈ । યહાં પર
 જો ડમ વ્યક્તિ કો સમસ્ત વિદ્વાનોં સે અધિક વિદ્વાન્ બતલાયા ગયા હૈ,
 વહ તત્ત્વોં કા સમ્યક્ પ્રકારસે જાનનેવાલે હોનેસે હી સમઞ્જના ચાહિયે,
 કારણ કિ વહ સમકિતી જીવ અપને પ્રયોજનભૂત તત્ત્વોં સે હી મતલબ

હિંસાદિક પાપ કાર્યોંમા છવોની પ્રવૃત્તિ કરાવવામાં મિથ્યા ઉપદેશ આપે છે તેનું
 અનુસરણ નહિ કરવું જોઈએ. જેમ ઘાસના તણખલા ઉપર સમજદાર છવના
 હૃદયમાં રાગ તેમજ દ્વેષ હોતો નથી પણ હમેશા મધ્યસ્થ ભાવ રહે છે, તે
 પ્રકારે જે આર્હત ધર્મથી વિપરીત ચાલવાવાળા છે, અને તેનાથી જેની વૃત્તિ વિશ્દ્ધ
 બનેલી છે તેના પ્રત્યે પણ ભગવાનનો એ જ આદેશ છે કે-હે દેવાનુપ્રિય ! તમે
 રાગ દ્વેષ ન કરતા તે પ્રત્યે ઉપેશ્તા ભાવજ રખો, કારણ કે આ ઉપેશ્તાભાવથી
 આત્મામાં જ્ઞાનિની માત્રા અધિક રૂપમાં બંધત થાય છે. નવીન કર્મોના બંધ, જે
 તે પ્રત્યે રાગ દ્વેષ કરવાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે રોકાઈ બંધ છે, તેથી ધર્મવિમુખ
 મનુષ્યોને અનાર્થ સમજીને જે તેનું અનુસરણ નથી કરતા તે મનુષ્ય આ લોકમાં
 જેટલા વિદ્વાને છે તે બધા કરતા પણ અધિક વિદ્વાન છે, પણ આ ઠેકાણે તે વ્યક્તિ
 જેને બધા વિદ્વાનો કરતા વધારે બાળવાવાળો બતાવેલ છે તે તત્ત્વોના સમ્યક્
 પ્રકારથી બાળવાવાળા હોવાથી જ સમજવું જોઈએ. કારણ કે તે સમકિતી છવ
 પોતાના પ્રયોજન-ભૂત તત્ત્વોથી જ મતલબ રાખે છે. એનાથી વિમુખ તત્ત્વોમાં

નનુ તે વિદ્વાંસ. કથં વિન્નેયાઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘अणुवीड्’ इत्यादि ।

મૂલમ્—અણુવીડ્ પાસ, નિર્મિલત્તદંડા જે કેડ સત્તા પલિયં ચયાંતિ, નરા મુયચ્ચા ધમ્મવિઉ-ત્તિ અંજૂ, આરંભજં દુક્ખમિણં-તિ ણચ્ચા, એવમાહુ સંમત્તદંસિણો ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—અનુવિચિન્ત્ય પદ્ય, નિક્ષિપ્તદણ્ડાઃ યે કેડપિ સત્ત્વાઃ પલિતં ત્યજન્તિ, નરા મૃતાર્ચા ધર્મવિદઃ ઋજવઃ આરમ્ભજં દુઃખમ્ ઇદમિતિ જ્ઞાત્વા એવમાહુઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—અનુવિચિન્ત્ય=પુનઃ પુનઃ પર્યાલોચ્ય, પદ્ય=જ્ઞાનદૃષ્ટ્યા વિલોક્ય, યે કેડપિ સત્ત્વાઃ=જીવાઃ, નિક્ષિપ્તદણ્ડાઃ=પરિત્યક્તમનોવાકાયમયસાવધવ્યાપારરૂપ-દણ્ડાઃ સન્તઃ, પલિતં=પુરાતનં કર્મેત્યર્થઃ, અનાદિકાલવસ્થાયિત્વેન ચિરન્તનં કર્માપિ

રખતા હૈ, इनसे बहिर्भूत तत्त्वोंमें उसकी सदा उपेक्षा ही बनी रहती है। जहाँ अपने में स्वपरका विवेक जागृत हो रहा है वही दुनियां में विद्वानों से भी अधिक विद्वान् है। अनेक शास्त्रों का अध्येता हो कर भी जो इस ज्ञानसे शून्य है वह विद्वान् होकर भी सिद्धान्तज्ञों की दृष्टि में मूर्ख ही है ॥ सू० १ ॥

જિનધર્મ સે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરને-વાલા મનુષ્ય વિદ્વાન્ ક્ર્યોં બનલાયા ગયા હૈ? હસ પ્રકાર શિષ્ય કી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈ—‘ અણુવીડ્ ’ ઇત્યાદિ।

જો મનુષ્ય બારંબાર વિચાર કરકે તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિ સે દેશ્વકર મન, વચન ઔર કાયકે સાવધવ્યાપારરૂપ દણ્ડોં સે રહિત હો જાતા હૈ વહી અનાદિકાલસે આત્માકે સાથ એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોને સે આયદ્ધ ચિર-

તેની સદા ઉપેક્ષા જ રહે છે. જે જીવમાં સ્વ-પરનો વિવેક જાગ્રત રહે છે તે જ સંસારમાં સૌ વિદ્વાનો કરતા પણ અધિક વિદ્વાન છે. અનેક શાસ્ત્રોનો જાણકાર હોવા છતાં પણ જે જ્ઞાનથી શૂન્ય છે તે વિદ્વાન હોવા છતાં પણ સિદ્ધાંતોની દૃષ્ટિમાં મૂર્ખ જ છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જિનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિયો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળા મનુષ્યને વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવેલ છે? આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી કહે છે—‘ અણુવીડ્ ’ ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય વારંવાર વિચાર કરીને તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિથી જોઈ મન, વચન અને કાયના સાવધવ્યાપારરૂપ દૃષ્ટિથી રહિત થઈ જાય છે તે જ અનાદિ કાળથી એક જ ક્ષેત્રમાં રહેવાવાળા હોવાથી આત્માની સાથે જોધાયેલા પુરાતન અષ્ટવિધ

પલિતસાદૃશ્યાત્પલિતમિત્યુચ્યતે; ત્યજન્તિ, આત્મનો માલિન્યકરણાદ્રોરૂપમષ્ટવિધં કર્માપનયન્તિ તે વિદ્વાંસ इति भावः । ये निक्षिप्तदण्डाः सन्तोऽष्टविधं कर्म क्षपय-
यन्ति, एवंभूताः के जीवविशेषाः सन्तीति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘नरा’इत्यादि।

નત્તન અષ્ટવિધ કર્મોં કો, જો વસ્ત્રાદિકોં કો ધૂલકે સમાન આત્મા કો મલિન કર રહે હેં; અપનેસે દૂર કર દેતા હૈ, ઓર વહી વિદ્વાન્ બી હૈ। શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન ક્રિયા થા કિ ‘જિનધર્મ સે ગ્રહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં મેં ડપેક્ષાભાવ ધારણ કરનેવાલા વ્યક્તિ ઉત્તમ વિદ્વાન્ કયોં ઘન જાતા હૈ?’ ડસકા હી યહ સમાધાન હૈ—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જિસકે ભીતર સ્વપર કા વિવેક જાગૃત હો રહા હૈ વહી વિદ્વાન્ હૈ। ડસ પ્રકારકી વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરનેકે લિયે સર્વપ્રથમ ડસ વાતકા જ્ઞાનદષ્ટિસે અવશ્ય વિચાર કરના ચાહિયે કિ યે કર્મ જો અનાદિ કાલસે મેરી આત્મા કે સાથ ક્ષીર-નીરકી તરહ સંબંધિત હો રહે હેં, ડસકા કારણ કયા હૈ?, સૂક્ષ્મ વિચાર કરને પર જ્ઞાત હોગા કિ ડનકે સાથ અબી તક સંબંધ હોનેકા કારણ મન, વચન ઓર કાયકી સાવચ પ્રવૃત્તિ હી હૈ, અતઃ જૈસે ૨ યહ પ્રવૃત્તિ રુકેગી વૈસે ૨ નવીન કર્મોં કા આસ્ત્રવ રુકેગા ઓર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોગી। મન ઓર કાયકી સાવચ પ્રવૃત્તિ કો રોકનેકે લિયે તપ સંયમ કે આરાધન કરનેકી પૂર્ણ આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોં ને વતલાઈ હૈ। તપ સંયમ કે આરાધન કરને સે સાવચ વ્યાપારોં કા જિનને ૨ અંશ મેં અભાવ હોગા ડતને ૨

કર્મોને-ધૂળ જેમ વસ્ત્રાદિકોને મલિન કરે છે તેમ આત્માને જેથી મલિન કરી રહ્યા છે તેઓને-પોતાથી દૂર કરી નાખે છે, અને તે જ વિદ્વાન પણ છે. શિષ્યે જે પ્રશ્ન કરેલો હતો કે ‘જનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિઓમાં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળી વ્યક્તિને ઉત્તમ વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવે છે?’ તેનું આ સમાધાન છે—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જેની અંદર સ્વ-પરનો વિવેક જાગૃત છે તે જ વિદ્વાન છે. આ પ્રકારની વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરવા માટે સર્વ પ્રથમ આ વાતનું જ્ઞાનદષ્ટિથી વિચાર અવશ્ય કરવો જોઈએ કે આ કર્મો જે અનાદિ કાળથી મારા આત્માની સાથે રૂઢ-પાણીની માફક એક થઈ રહ્યા છે તેનું કારણ શું છે? સૂક્ષ્મ વિચાર કરવાથી જાત થશે કે એની સાથે હજી સુધી સંબંધ રહેવાનું કારણ મન, વચન અને કાયની સાવચ પ્રવૃત્તિ જ છે, માટે જેમ જેમ આ પ્રવૃત્તિ રોકશે તેમ તેમ નવા કર્મોનો આસ્ત્રવ અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થશે. મન, વચન અને કાયની સાવચ પ્રવૃત્તિ રોકવાને માટે તપ સંયમ આરાધન કરવાની આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે. તપ સંયમની આરાધના કરવાથી સાવચ વ્યાપારોનો જેટલા જેટલા અંશે અભાવ થશે, તેટલા તેટલા અંશે આત્મામાં

नराः=मनुष्याः, तेषामेव निरवशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यमस्तीति भावः । तत्रापि साधारणतया न सर्वे मनुष्या अशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यवन्तः—इति बोधयितुं तद्विशेषणमाह—‘मृतार्चा’ इति ।

अंशमें आत्मा में निर्मलता जागृत होगी । इस निर्मलता के आते ही स्वतः शब्दादि विषयों में जीवको उपेक्षाभावकी जागृति हो जाती है । मनुष्य को तप संयम ही उत्तम विद्वत्ता के स्थान पर लाकर रखने-वाला होता है, इसीलिये सिद्धान्तकारों ने ऐसे मनुष्यको विद्वानों में श्रेष्ठ माना है ।

यहां पर ‘पलित’ शब्द का अर्थ ‘पुरातनकर्म’ है । अनादिकालिक होने के कारण पुरातन कर्म भी पलित=श्वेतकेश सदृश हैं, अतः उन्हें यहाँ पलित कहा गया है । इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार मनुष्य पलित-सफेद केश को शीघ्र उखाड़ डालता है उसी प्रकार मन, वचन और कायकी सावध प्रवृत्ति को त्याग करनेवाला मनुष्य भी उन पुरातन कर्मों को शीघ्र नष्ट कर देता है । यह काम सामान्य जीवों से नहीं हो सकना इसलिये इस कार्य के करनेवाले विशेष जीव ही होते हैं, इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रकार इस सूत्रमें “नराः” इस पदका विन्यास करते हैं; क्यों कि समस्त कर्मों के विनष्ट करने की साक्षात् शक्ति मनुष्य में ही रही हुई है । इनमें भी सभी मनुष्य समस्त कर्मों के क्षपण करने में समर्थ नहीं होते हैं; यही बात “मृतार्चा” इस पदसे प्रकट की गई है ।

निर्भणता जागृत थશે. આ નિર્ભણતા આવવાથી શબ્દાદિવિષયોમાં જીવને ઉપેક્ષા ભાવની જાગૃતિ થાય છે. મનુષ્યને તપ સંયમ જ વિદ્વત્તાના સ્થાન પર લાવીને રાખવાવાળાં છે, માટે સિદ્ધાંતકારોએ આવા મનુષ્યને વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ માનેલ છે.

આ ઠેકાણે ‘પલિત’ શબ્દનો અર્થ ‘પુરાતનકર્મ’ છે. અનાદિકાલિક હોવાના કારણે પુરાતન કર્મો પણ પલિત-શ્વેતકેશસદૃશ છે, માટે તેઓને અહીં પલિત કહ્યા છે. આનો અભિપ્રાય આ છે કે—જે પ્રકારે મનુષ્ય પલિત-સફેદ વાળને શીઘ્ર ઉખાડી નાખે છે તે પ્રકારે મન વચન કાયાની સાવધ પ્રવૃત્તિનો ત્યાગ કરવાવાળા મનુષ્ય પણ આ પુરાણા કર્મોને શીઘ્ર નષ્ટ કરી દે છે. આ કામ સામાન્ય જીવથી થઈ શકતું નથી, માટે આ કાર્યને કરવાવાળા કોઈક જ જીવ હોય છે. આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં “નરાઃ” આ પદ રાખ્યું છે; કેમ કે બધા કર્મોનો નાશ કરવાની સાક્ષાત્ શક્તિ મનુષ્યમાં જ રહેલી છે. આમાં પણ બધા મનુષ્યો સકળ કર્મોનો ક્ષય કરવામાં સમર્થ થતા નથી. આ વાત ‘મૃતાર્ચા’ આ શબ્દથી પ્રગટ કરવામાં આવી છે.

સંસ્કારરાહિત્યાદ્ મૃતેવ મૃતા-અર્ચા શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ, શુશ્રૂપાવિભૂપાદિવર્જિતશરીરા इत्यर्थः । યદ્વા-અર્ચા અર્ચિઃ, તત્સાદૃશ્યાત્ ક્રોધોષ્પ્યર્ચા, સ ચ કપાયમાત્રોપલક્ષણમ્ । તથા ચ-મૃતા નષ્ટા અર્ચા કપાયરૂપા યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ, કપાયરહિતા इत्यर्थः । કિંચ-ધર્મવિદઃ=શ્રુતચારિત્રધર્મજ્ઞાનવન્તઃ,

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્-શારીરિક-શુશ્રૂપાવિભૂપારૂપસંસ્કારરહિત હોનેસે મૃતકે સમાન હૈ શરીર જિનકા એસે અપને શરીરમેં નિષ્પૃહવૃત્તિ રખનેવાલે મનુષ્યશિરોમણિ હી ઇન કર્મો પર વિજય લાભ કરતે હૈં । અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ” અર્થ હૈ જ્વાલા । જિસ પ્રકાર અગ્નિકી જ્વાલા લાલ હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર ક્રોધ બી લાલ હોતા હૈ; અતઃ જ્વાલાકે સાદૃશ્ય સે ક્રોધ કો બી અર્ચા કહા હૈ । ક્રોધ ગ્રહ અન્ય કપાયોંકા ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે માન, માયા ઓર લોભ કા બી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । જિનકી આત્માસે કપાયરૂપ અર્ચા નષ્ટ હો ચુકી હૈ, અર્થાત્ જો કપાયરહિત હો ચુકે હૈં વે મનુષ્ય હી અષ્ટવિધ કર્મોં કે નષ્ટ કરનેમેં વિશિષ્ટશક્તિશાલી હોતે હૈં । સંસારમેં વહુત સે એસે બી વહુત સે મનુષ્ય હોતે હૈં કિ જિન્હેં શારીરિક શૃંગાર કરને કા જીવન મેં અવસર તક હી પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ, ભીલ આદિ એસે હી મનુષ્યોં મેં હૈં; અતઃ ઇનકી બી ગ્રહ અવસ્થા કર્મક્ષપણ કે યોગ્ય માની જાની ચાહિયે ? ઇસ પ્રકારકી આશંકાકો દૂર કરનેકે લિયે હી “મૃતાર્ચા”

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા=શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્ શારીરિક શુશ્રૂપા વિભૂપાદિપ સંસ્કાર રહિત હોવાથી મૃતકસદૃશ જેનું શરીર છે, આવા પોતાના શરીરમાં નિષ્પૃહ વૃત્તિ રાખવાવાળા મનુષ્યગિરોમણિ જ આ કર્મો ઉપર વિનય લાલ કરે છે. અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ”નો અર્થ જ્વાળા છે. જે પ્રકારે અગ્નિની જ્વાળા લાલ હોય છે તે પ્રકારે ક્રોધ પણ લાલ છે, માટે જ્વાળાની સદૃશતાથી ક્રોધને પણ અર્ચા કહે છે, ક્રોધ-શબ્દ બીજા કપાયોનું ઉપલક્ષણ છે. આમાં માન, માયા અને લોભનો પણ સમાવેશ થાય છે જેના આત્માથી કપાયરૂપી અર્ચાનો નાશ થયેલ છે, અર્થાત્-જે કપાયરહિત છે તે જ મનુષ્ય આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરવામાં વિશિષ્ટશક્તિશાળી છે. સંસારમાં એવા પણ ઘણા માણસો છે કે જેને શારીરિક શૃંગાર કરવાનો અવસર જીવનમાં કોઈ વખત પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, ભીલ આદિ એવા મનુષ્યો છે, માટે તેની પણ આ અવસ્થા કર્મક્ષપણયોગ્ય માનવી જોઈએ ? આ પ્રકારની શંકાને દૂર કરવાને માટે જ “મૃતાર્ચા” શબ્દનો અર્થ “કપાયરહિત”

અત એવ ઋજવઃ=સરલહૃદયાઃ, અમાયિન ઇત્યર્થ. । મનુષ્યાઃ કિં કૃત્વા એવં ભવન્તી-
તી જિજ્ઞાસાયમાહ—‘ આરમ્ભજમ્ ’ ઇત્યાદિ । ઇદં સર્વપ્રાણિપ્રત્યક્ષં દુઃસ્વપ્ન
શબ્દકા અર્થ “ કષાયરહિત ” ક્રિયા છે । યદ્યપિ અસાતા-અશુભ કર્મ કે
તીવ્ર ઉદય હોને સે વે ઉસ પ્રકારકી સામગ્રી સે રહિત હૈં ફિર ખી વે ઉસ
જાતકી કષાય સે રહિત નહીં હૈં, અતઃ શારીરિક સંસ્કાર સે રહિત હોકર
ખી જો કષાયોસે રહિત હોતે હૈં વે હી કર્મક્ષપણ કરનેમેં શક્તિ-સમ્પન્ન
હોતે હૈં । સચ્ચે શારીરિક સંસ્કાર સે વિહીન વે હોંગે જો ઇસ શરીર કો
અપવિત્ર એવં મલ, રુધિર, રાઘ (પીવ) કી થૈલી માન કર નિસ્સાર સમ-
ક્ષેંગે । શારીરિક સંસ્કાર કરના યહ એક જાતકી કષાય છે । ઇસ પ્રકાર
કે મનોભાવ કી જાગૃતિ આત્મામેં વિના શ્રુતચારિત્ર ધર્મ કે જ્ઞાન હુએ
નહીં હો સકતી, અતઃ ‘ ધર્મવિદઃ ’ યહ વિશેષણ ઇસી વાતકી પુષ્ટિ
કરતા છે । ધર્મકે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાન કર ઉસ પર શ્રદ્ધા રાખનેવાલા
મનુષ્ય હી ધાર્મિક નિયમોં કો અપની આત્મામેં ઉતારનેકી ચેષ્ટા યા
ઉત્સાહ સે સમ્પન્ન હોતા છે । ધાર્મિક જ્ઞાન ખી ઉસીકી આત્મામેં અપના
પ્રભાવ પ્રકટ કરતા છે ઓર વહી ‘ અમાયાવી ’ સરલ હૃદયવાલા હોતા
છે । માયાવી-દુરંગી ચાલ ચલને વાલે-મનુષ્ય ધર્મકા સેવન કરતે હુએ ખી
ઉસસે જૈસા ફલ પ્રાપ્ત ઉન્હેં હોના ચાહિયે વૈસે ફલસે સદા વંચિત હી
રહતે હૈં । યહી વાત સૂત્રકારને “ ઋજવઃ ” ઇસ પદસે સ્પષ્ટ કી છે ।

કયોં છે, જો કે અસાતા-અશુભ કર્મ-નો તીવ્ર ઉદય હોવાથી તે તેવા પ્રકારની
સામગ્રીથી રહિત છે તો પણ તે તેવા પ્રકારના કષાયથી રહિત નથી, માટે શારી-
રિક સંસ્કારથી રહિત થઈને પણ જે કષાયોથી રહિત થાય છે તે જ કર્મક્ષપણ
કરવામાં શક્તિસંપન્ન થાય છે સાથા શારીરિક સંસ્કારથી દૂર તેજ થશે જે આ
શરીરને અપવિત્ર અને મળ, લોહી, રક્તની થેલી માનીને નિસ્સાર સમજશે.
શારીરિક સંસ્કાર કરવો તે પણ એક બાતનો કષાય છે. આ પ્રકારના મનોભાવની
જાગૃતિ આત્મામાં શ્રુતચારિત્ર ધર્મનું જ્ઞાન થયા વગર થતી નથી માટે ‘ ધર્મ-
વિદઃ ’ આ વિશેષણ આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે. ધર્મના યથાર્થ સ્વરૂપને જાણીને
તેના ઉપર શ્રદ્ધા રાખવાવાળા મનુષ્ય જ ધાર્મિક નિયમોને પોતાના આત્મામાં
ઉતારવાની ચેષ્ટા અને ઉત્સાહ રાખે છે. ધાર્મિક જ્ઞાન પણ તેના જ આત્મામાં
પોતાનો પ્રભાવ પાડે છે, અને તે જ ‘ અમાયાવી ’ અરણ હૃદયવાળો હોય છે.
માયાવી—માયા-કષ્ટથી ચાલવાવાળો—મનુષ્ય ભલે તે ધર્મનું સેવન કરતો હોય
તો પણ જેવું જ તેને મળવું જોઈએ તેજા ફળથી તે સદા વંચિત જ રહે છે.
આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકારે “ ઋજવઃ ” આ પદથી કર્યું છે.

આરમ્ભજન્મ=કૃપિવાણિજ્યાદિસકલસાવચ્ચવ્યાપાર આરમ્ભઃ, તસ્માજ્ઞાતમ્, इति
 જાત્વા=‘આરમ્ભે કૃતે સતિ પ્રાણિનાં દુઃસ્વઉત્પન્નયતે’ इति વિદિત્વા તતો નિવૃત્તા
 નરાઃ સર્વં કર્મ ક્ષયયન્તીત્યર્થઃ । અસ્મિન્ વિષયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ વોધયિતુમાહ
 -एवमाहुः सम्यक्त्वदर्शिन इति । सम्यक्त्वदर्शिनः=सम्यक्त्व प्राप्ताः केवलि-
 प्रभृतयः, અથવા સમત્વદર્શિનઃ=રાગદ્વેષાભાવેન એકેન્દ્રિયાદિસર્વજીવે તુલ્યભાવેના-
 વલોકિનઃ એવમ્=ઉક્તરીત્યા આહુઃ=વદન્તિ । તસ્માદવ શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિભાવઃ । ૨।

કુતઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનો વદન્તીતિ જિજ્ઞાસાયામાહ-‘તે સન્વે’ इत्यादि ।

કૃપિ-ચેતી, વાણિજ્ય-વ્યાપાર આદિ સાવચ્ચ કાર્યોંકા નામ આરંભ હૈ ।
 इस आरम्भ से ही समस्त जीवों को दुःस्व उत्पन्न होता है और इस दुःस्वका
 समस्त ही जीव अपने २ स्वानुभवरूप प्रत्यक्ष से साक्षात् अनुभव करते हैं,
 ऐसा समझ कर जो मनुष्य उस सावच व्यापारसे निवृत्त हो जाते हैं वे ही
 समस्त कर्मों का क्षय करते हैं । इस प्रकार के इस कथनमें भव्य प्राणियों
 को श्रद्धा करना चाहिये । इस प्रकारकी सूचना करते हुए सूत्रकार कहते
 हैं कि-इस प्रकार का यह कथन समस्तिन को प्राप्त हुए केवली आदि
 महापुरुषोंने, अथवा जो समदर्शी हैं, समस्त जीवोंको राग द्वेष के अभाव
 होनेसे अपने तुल्य समझते हैं-उन्होंने किया है । इस विषयमें निश्शङ्क
 होकर दृढ श्रद्धा ही करनी चाहिये ॥ सू० २ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવલી આદિ એસા ક્યોં કહતે હે ? इस प्रकारकी शि-
 ष्यकी जिज्ञासा शान्त करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं-‘ते सन्वे’ इत्यादि ।

જેતી, વ્યાપાર આદિ સાવચ્ચ કાર્યોંનું નામ આરંભ છે. આ આરંભથી જ
 સર્વ જીવોને દુઃખ ઉત્પન્ન થાય છે, અને આ દુઃખને સર્વ જીવ પોતપોતાના
 સ્વાનુભવરૂપ પ્રત્યક્ષથી સાક્ષાત્ અનુભવ કરે છે. એવું સમજીને જે મનુષ્ય આવા
 સાવચ્ચ વ્યાપારથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તે જ સર્વ કર્મોનો ક્ષય કરે છે. આવા
 પ્રકારના આ કથનમાં ભવ્ય પ્રાણિઓએ શ્રદ્ધા રાખવી જોઈએ. આ પ્રકારની
 સૂચના કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે-આવા પ્રકારનું આ કથન સમક્ષિતને પ્રાપ્ત
 થયેલાં કેવળી આદિ મહાપુરુષોએ, અથવા સમદર્શી છે, રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી
 સર્વ જીવોને પોતાના તુલ્ય માને છે, તેઓએ કયું છે, આ વિષયમાં નિશ્શંક
 થઈને દૃઢ શ્રદ્ધા જ રાખવી જોઈએ ॥ સૂ. ૨ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવળી આદિ આ પ્રકારે કેમ કહે છે ? આ પ્રકારની
 શિષ્યની જિજ્ઞાસાને શાન્ત કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-‘તે સન્વે’ इत्यादि.

मूलम्—ते सर्वे पावाइया दुःखस्स कुसला परिणमुदाहरन्ति
इय कम्म परिणाय सर्वसो ॥ सू० ३ ॥

छाया—ते सर्वे प्रावादिकाः दुःखस्य कुशलाः परिज्ञामुदाहरन्ति इति कर्म
परिज्ञाय सर्वशः ॥ सू० ३ ॥

टीका—यतस्ते सर्वे सर्वविदः, प्रावादिकाः=प्र=प्रकर्षेण आ=धर्ममर्यादापुर-
स्सरं वदितुं शीलं येषां ते प्रावादिनस्त एव प्रावादिकाः—यथावस्थितार्थं प्रतिबो-
धयितुं वाग्मिन इत्यर्थः । दुःखस्य=शारीरमानसदुःखकारणस्य, कारणे कार्योपचा-
रात् अष्टविधकर्मण इति यावत्, अपनोदने कुशलाः=प्रवीणाः सन्तः, सर्वशः=
सर्वप्रकारैः मूलोत्तरप्रकृतिप्रकारैरित्यर्थः, कर्म परिज्ञाय इति=अनया रीत्या परिज्ञां

वे समस्त सर्वज्ञ केवली भगवान् कि जिनका स्वभाव धार्मिक-
मर्यादा के अनुसार ही बोलने-उपदेश देनेका है, अर्थात्—जो वाग्मी-
यथावस्थित पदार्थका प्रतिबोधन करनेमें पटु हैं और जो शारीरिक और
मानसिक दुःखके कारणभूत अष्टविध कर्म को नष्ट करने में कुशल हैं,
मूल और उत्तर प्रकृति के भेदसे विविधरूप (८ और १४८) कर्म को
जान कर ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञाके भेदसे दो प्रकार की परिज्ञाका
प्रतिपादन करते हैं, अर्थात्—‘ज्ञ’ परिज्ञा से अष्ट प्रकार के कर्म को जान कर
‘प्रत्याख्यान’ परिज्ञा से उस समस्त कर्मका परिहार करे, ऐसा कहते हैं ।

परिज्ञा दो प्रकारकी है (१) ज्ञपरिज्ञा, (२) प्रत्याख्यानपरिज्ञा । ज्ञाना
ज्ञपरिज्ञासे कर्मों के स्वरूपादिक को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञासे—ज्ञान-
पूर्वक त्यागसे उनके नाश करने में उद्यमशील होता है । कर्मों की मूल

ते બધા સર્વજ્ઞ કેવળી ભગવાન, જેઓનો સ્વભાવ ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ
બોલવાનો—ઉપદેશ દેવાનો—છે, અર્થાત્ જે વાગ્મી યથાવસ્થિત પદાર્થનું પ્રતિ-
બોધન કરવામાં કુશળ છે, અને જે શારીરિક અને માનસિક દુઃખના કારણભૂત
આઠ પ્રકારના કર્મોનો નાશ કરવામાં કુશળ છે, મૂળ અને ઉત્તર પ્રકૃતિના ભેદથી
વિવિધરૂપ (આઠ કર્મ અને એકસો અડતાલીસ પ્રકૃતિરૂપ કર્મ) કર્મને જાણીને જ-
પરિજ્ઞા અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાના ભેદથી બે પ્રકારની પરિજ્ઞાનું પ્રતિપાદન કરે છે.
અર્થાત્—‘જ્ઞ’ પરિજ્ઞાથી આઠપ્રકારના કર્મને જાણીને ‘પ્રત્યાખ્યાન’ પરિજ્ઞાથી તે
સમસ્ત કર્મનો નાશ કરે, એમ કહે છે.

પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે (૧) જ-પરિજ્ઞા, (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા. જ્ઞાના
જ-પરિજ્ઞાથી કર્મોના સ્વરૂપાદિક જાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી જ્ઞાનપૂર્વક ત્યાગથી
તેનો નાશ કરવામાં ઉદ્યમશીલ રહે છે. કર્મોની મૂળ પ્રકૃતિઓ ૮ છે, અને ઉત્તર

તપત્યાશ્યાનભેદાદ્ દ્વિવિધામ્, ઉદાહરન્તિ=કથયન્તિ । જપરિજ્ઞયા અષ્ટવિધં કર્મ સર્વથા પરિજ્ઞાય, તપત્યાશ્યાનપરિજ્ઞયા તત્ સર્વં પરિહરેદિતિ વદન્તીત્યર્થઃ ॥૩॥

યદિ સર્વજ્ઞાઃ કર્મપરિજ્ઞામુદાહરન્તિ, તસ્માત્ કિં કર્તવ્યમ્ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ इह आणाकंखी ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—इह आणाकंखी पंडिए अणिहे, एगमप्पाणं संपेहाए धुणे सरीरं ॥ सू० ४ ॥

છાયા—इह आज्ञाकाङ्क्षी पण्डितः अस्मिन्, एकमात्मानं संपेक्ष्य धुनीयात् शरीरम् ॥ सू० ४ ॥

પ્રકૃતિયાં ૮ હેં ઓર ઉત્તરપ્રકૃતિયાં ૧૪૮ હેં । સૂત્રમેં ‘ દુઃખ ’ શબ્દ સે ઉસકે કારણભૂત કર્મોં કા કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે ગ્રહણ કિયા હૈ । કેવલી ભગવાન્ વે હેં જો સમસ્ત જીવોં કો ધાર્મિક મર્યાદા કે અનુસાર હી હિતકા ઉપદેશ દેતે હેં ઓર સ્વયં જો અષ્ટ કર્મોં મેં સે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ચુકે હૈ, અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોં કા નાશ કરને મેં જો લગેદુણ હેં, શારીરિક ઓર માનસિક આધિ વ્યાધિ જિનમેં નહોં હેં, ઓર જો યહી પ્રવચન કરતે હેં કિ જો દુઃખસે છૂટને કી અભિલાષા રખતે હેં, ઊનકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે પહિલે દુઃખકે કારણભૂત કર્મોં કે જ્ઞાતા બનેં ઓર ફિર જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રકે આરાધન સે ઊનકા સમૂલ વિચ્છેદ કરે ॥ સૂ० ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન્ કર્મપરિજ્ઞા કા કથન કરતે હેં તો હસસે ભવ્ય જીવોં કા કયા કર્તવ્ય હૈ ? ऐसी शिष्य की जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘ इह आणाकंखी ’ इत्यादि ।

પ્રકૃતિઓ ૧૪૮ છે, મુત્રમા ‘ દુઃખ ’ શબ્દથી તેના કારણભૂત કર્મોનું કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી પ્રકળ કરેલ છે. કેવળી ભગવાન તે છેને સર્વ જીવોને ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ હિતનો ઉપદેશ આપે છે, અને પોતે આઠ કર્મમાંથી ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરી ચૂક્યા છે, અવશિષ્ટ રહેલા ચાર અઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરવામા જે લાગેલ છે, શારીરિક અને માનસિક આધિ-વ્યાધિ જેઓમા નથી, અને જેઓનું પ્રવચન આ પ્રકારનું છે કે-જે દુઃખથી છૂટવાની અભિલાષા રાખે છે તેમનું કર્તવ્ય એ છે કે-પહેલા દુઃખના કારણભૂત કર્મોને બાંધો અને પછી જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રનું આરાધન કરવાથી તેનો સમૂળો નાશ કરે ॥ સૂ० ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન કર્મ પરિજ્ઞાનુ કથન કરે છે તો તેથી ભવ્ય જીવોનું કુ કર્તવ્ય છે ? ऐसी शिष्यनी जिज्ञासा धरायी कहे છે—‘ इह आणाकंखी ’ इत्यादि.

टीका—इह=अस्मिन् मनुष्यलोके, आज्ञां=सर्वज्ञनिदेशं काङ्क्षितं शीलमस्येति आज्ञाकाङ्क्षी सम्यक्त्वस्य दृढीकरणेन पुनः पुनरार्हतागमश्रवणमननसमाराधनशीलः, अत एव पण्डितः=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, अत एव अस्निहः=स्निह्यतीति स्निहः रागवान्, न स्निह इत्यस्निहः, स्निह इत्युपलक्षणं, तेन रागद्वेषरहित इत्यर्थः, आत्मानम् एकं=स्वजनधनशरीरादिभ्यः पृथग्भूतं संप्रेक्ष्य=विविच्य-पर्यालोच्य शरीरं=स्वदेह धुनीयात्=निर्ममत्वभावेन निराद्रियेत, कञ्चुके सर्प इव शरीरे ममत्वं परित्यजेदित्यर्थः। अयं भावः—स्वजनधनशरीरादिषु क्षणभङ्गुरत्वादितोषदर्शनेन रागापगमो भवति। तदनन्तरमयमात्मा—एक एवास्तीति पर्यालोचयति। यथा—

इस मनुष्यलोकमें सर्वज्ञ भगवानकी एकमात्र आज्ञाके समाराधन करनेके स्वभाववाला हेयोपादेय के विवेक करनेमें निपुणमतिवाला और रागद्वेषसे विरक्तधुद्धिवाला भव्य जीव अपनी आत्माकी पर्यालोचना करके शरीर को निर्ममत्व-भावसे रखे।

शरीर में जितना अधिक ममत्व होगा उतना ही अधिक इस संसार के चक्रमें फँसेगा। 'ममेदं' भावसे शरीरकी सेवा ही आत्मकल्याण से विमुख होनेकी निशानी है, अतः सूत्रकार यहां पर इसी बातका उल्लेख करते हुए उपदेश देते हैं कि—हे भव्य ! तुम सर्वप्रथम समकित को दृढ करो। इसकी दृढता होने पर तुम्हें अपने कल्याण का मार्ग अपने आप ज्ञात होने लगेगा। उस समय तुम्हारा आत्मस्वभाव शब्दादि विषयों की ओर न झुक कर प्रभुप्रतिपादित आगमके श्रवण, मनन और उसके समाराधन की ओर ही झुकेगा। उससे तुम समझ सकोगे कि हमारा

आ मनुष्यलोकमां सर्वज्ञ भगवाननी ओके मात्र आज्ञानुं आराधन करवानां स्वभाववाणा, हेयोपादेयना विवेक करवानां निपुण मतिवाणा अने राग द्वेषधी विरक्त धुद्धिवाणा भव्य एव पोताना आत्मानी पर्यालोचना करीने शरीरने निर्ममत्व लावधी राजे।

शरीरमां जेटलो अधिक ममत्व छुशे तेटलो न अधिक आससारना चक्रमां इसाशे। 'ममेदं' लावधी—'आ भाइं छे'—ओवा लावधी शरीरनी सेवा न आत्म-कल्याणधी विमुण धवानी निशानी छे, भाटे सूत्रकार आ ठेकाछे आ बातने उल्लेख करीने उपदेश आपे छे के—हे भव्य ! तमो पडेलो समकितने दृढ करो. समकितनी दृढता डोवाधी तमने तमाश कल्याणने मार्ग आपमेणे लखुवामां आवशे. ओवे वणते तमाशे आत्मस्वभाव शब्दादि विषयानी तरङ्ग न जतां प्रभुप्रतिपादित आगमनु श्रवण मनन अने तेना आराधननी तरङ्ग न वणशे,

ઉપાદેય કયા છે ઔર હેય કયા છે ? ઇસ પ્રકાર કા પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જવ આત્મામેં સ્થિરતા ધારણ કર લેગા તવ બાહ્ય પદાર્થોં મેં જો રાગ ઔર દેષકી ભાવના જાગૃત હો જાયા કરતી છે વહ મ્ક જાઘગી, યહાં તક કિ જો શરીર, આત્માકા અત્યન્ત નિકટ સમ્બન્ધી છે ઁસકે પ્રતિ મી 'મમેદં' ભાવકા સર્વથા હાસ હો જાવેગા ઔર 'તપ-સંયમ હી ઉપાદેય વસ્તુ છે' ઇસકા ભાન અચ્છી તરહ સે હોને લેગેગા ।

તાત્પર્ય ઇસકા યહી છે કિ કર્મ કે સ્વરૂપકો જાન કર મનુષ્ય સાંસારિક પદાર્થોં કી ઔર સે ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે । ઇસસે મોહ કી ન્યૂનતા હોતે ૨ સમકિત કી ઉત્પત્તિ ઔર પુષ્ટિ હોગી । ઇસકી પુષ્ટિ હોને પર આર્હત પ્રવચનકે આરાધન કી ઔર હી ધ્યાન આકૃષ્ટ હોગા । ઇસસે હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હોકર આત્માકો પરપદાર્થોં કી ઔર રાગદેષ કી પરિણતિ સે રહિત કરેગા; તવ જ્ઞાત હોગા કિ યહ આત્મા સ્વજન-સ્ત્રી-પુત્ર-મિત્રાદિકોં સે ઔર શરીર સે સર્વથા ભિન્ન-જુદા છે, ઁનકે સાથ ઇસકા કિસીમી પ્રકાર કા સમ્બન્ધ નહીં છે । ઁનકે સુધાર-ચિગાઢ મેં ઇસકા યત્કિંચિત્ મી સુધાર-ચિગાઢ નહીં છે । ઇસ પ્રકાર કી ધારણા પરિપુષ્ટ હોને પર જ્ઞાની આત્મા જૈસે કચ્ચુક (કાંચલી) કો સર્પ નિર્મમત્વ-ભાવસે છોઢ દેતા છે ઁસી પ્રકાર ઇસ શરીર મેં 'મમત્વ' ભાવ

અને તેથી તેમો સમજ શકશે કે આમાં ઉપાદેય શું છે અને હેય શું છે ? આ પ્રકારનો પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક ત્યારે આત્મામાં સ્થિર થશે ત્યારે જ બહારના પદાર્થોમાં જે રાગ દેષની લાવના જાગૃત થાય છે તે રોકાઈ જશે, ત્યાં સુધી કે શરીર આત્માનું અત્યંત નિકટ સંબંધી છે તેના પ્રતિ પણ 'મમેદં' લાવના- 'આ માં છે' એવા લાવના સર્વધાનાશ થઈ જશે, અને 'તપ સયમ જ ઉપાદેય વસ્તુ છે' તેનું લાન સારી રીતે થઈ જશે.

આનો અભિપ્રાય એ છે-મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સાંસારિક પદાર્થો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે આથી મોહની અસ્પતા થતાં થતાં સમકિતની ઉત્પત્તિ અને પુષ્ટિ થશે. સમકિતની પુષ્ટિ થતાં જ આર્હત પ્રવચનનું આરાધન કરવાની તરફ ધ્યાન દોરાશે, અને તેથી હેયોપાદેયના વિવેક જાગૃત થઈ આત્માને પરપદાર્થોની તરફ રાગદેષપરિણતિરહિત કરશે, ત્યારે લાન થશે કે આ આત્મા સ્વજન સ્ત્રી પુત્ર મિત્રાદિકોથી અને શરીરથી સર્વથા જુદો છે, તેની સાથે આત્માનો કોઈ પ્રકારનો સંબંધ નથી. તેમના સુધરવા બગડવામાં તેનો એટલો આત્માનો જરા પણ સુધારા-બગારો નથી. આ પ્રકારની ધારણા પાકી થવાથી સાપ જેમ કાંચળીને મમતા વગર છોડી દે છે તે રીતે જ તે જ્ઞાની

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित् सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

का परित्याग करता है । वह जानता है कि इन स्वजन धन और शरीरादिकों के साथ जो इस ज्ञाता द्रष्टा आत्मा का सम्बन्ध हुआ है वह केवल संयोगमात्र है । संयोगसम्बन्धवालों का वियोग अवश्यंभावी है । ज्ञान और आत्मा का जिस प्रकार तादात्म्यसम्बन्ध है उस प्रकार का सम्बन्ध इसके साथ इनका नहीं है, अतः इनका यह संयोग क्षणभंगुर है, और आत्माका स्वभाव शाश्वत है, फिर क्षणिक पदार्थोंके साथ राग करनेसे लाभ ही क्या है ? । इस प्रकारके विवेकपूर्ण सच्चिद्विचारों से जब उनके प्रति उसकी दृष्टि रागरहित होती है और आत्मस्वभावकी ओर विशेष उन्मुख होती है तब वह विचारता है कि—मैं एकाकी हूँ, संसारमें मेरा कोई नहीं है और मैं भी किसीका नहीं हूँ । कहा भी है—

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भंगुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित्सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

आत्मा आ शरीरना भभत्वभावनो त्याग करे छे ते ज्ञानी ज्ञाते छे के—आ स्वजन धन अने शरीरादिकोनी साथे जे आ ज्ञाता द्रष्टा आत्मानो संघंध थयेल छे ते केवल संयोगमात्र छे । संयोग—संघंधवाणाओनो वियोग अवश्यंभावी छे । ज्ञान अने आत्मानो जे प्रकारे तादात्म्य संघंध छे ते प्रकारनो संघंध तेनी साथे तेनो नथी, भाटे आ तेनो संयोग क्षणभंगुर छे, अने आत्मानो स्वभाव शाश्वत छे, पछी क्षणिक पदार्थोनी साथे राग करवाथी लाल जे शुं छे ? , आवा प्रकारना विवेकपूर्ण अविचारोथी ल्यारे तेना प्रति तेनी दृष्टि राग-रहित थाय छे, अने आत्मस्वभावनी तरङ्ग विशेष उन्मुख थाय छे त्यारे आ रीते विचार छे के—हुं ओकेलो जे छुं, संसारमां माइं ओछी नथी, अने हुं पण ओछनो नथी । कहूं पण छे—

“ कायः संनिहितापायः, संपदः पदमापदाम् ।
समागमाः सापगमाः, सर्वमुत्पादि भंगुरम् ॥ १ ॥
नायमत्यन्तसंवासः, कस्यचित् केनचित्सह ।
अपि स्वेन शरीरेण, किमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ २ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥

अपरं च—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक, -एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

अन्यच्च —“ सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

किंच —“ न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वश्याः

तदतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

तस्मात् स्वजनधनशरीरादिषु ममत्वं परिवर्जयेदिति ॥ सू० ४ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा “ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक, -एको याति भवान्तरम् ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वश्याः,

तदतरुमाप इवापगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक, -एको याति भवान्तरम् ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वश्याः,

तदतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

યહ શરીર જો મુક્તે પ્રાપ્ત હુઆ હૈં ઉસકા પતન અવશ્યંભાવી હૈં । સંપત્તિ અનેક વિપત્તિયોં કી જનની હૈં । ઇષ્ટમિત્રાદિકોં કા સમાગમ ધ્રુવ નહીં હૈં । સબ પદાર્થ ઉત્પત્તિ ઓર વિનાશ સ્વભાવવાલે હૈં ॥ ૧ ॥ યહાં પર કિસી કા કિસી કે સાથ નિવાસ સ્થિર નહીં હૈં । દૂસરોં કી તો વાત હી કયા કરની ? અરે ! હસ શરીર કે સાથ મી તો આત્માકા સમ્બન્ધ સ્થિર નહીં હૈં ॥ ૨ ॥ હસ અનન્ત સંસારમેં જો મેરે હજારોં માતા-પિતા હો ગયેવે દૂસરે હી થે, અમી જો હૈં વે દૂસરે હી હૈં; આગે જો હોંગે વે મી દૂસરે હી હોંગે ॥ ૩ ॥ ફિર મી કહા હૈં—

યહાં પર જીવ અકેલા હી શુભાશુભ કર્મોંકા કર્તા હૈં ઓર અકેલા હી શુભાશુભ ફલોંકા ભોક્તા હૈં । યહ અકેલા હી મરતા હૈં ઓર અકેલા હી ભવાન્તરમેં જાતા હૈં ॥ ૪ ॥

મેં સદા અકેલા હૂં, ન મેરા કોઈ હૈં ઓર ન મેં કિસીકા હૂં । મેં જિનકા હૂં એસે અપને પિતા-પિતામહાદિકોં કો આજ નહીં દેખ રહા હૂં, કયોં કિ વે કાલકવલિત હો ગયે । ઓર એસા મી કોઈ નહીં હોગા જિસકા મેં હોઝું । અર્થાત્-મેરે કાલકવલિત હો જાને પર મેં મી અપને પુત્રાદિકોં કા નહીં રહૂંગા ॥ ૫ ॥ જો હસ સંસારસે પરલોકવાસી હો ગયે હૈં વે અવ મિલનેકે

આ શરીર જે મને પ્રાપ્ત થયેલ છે, તેનો નાશ જરૂર છે. સંપત્તિ અનેક વિપત્તિઓની માતા છે. ઇષ્ટ મિત્રોનો સમાગમ પણ ધ્રુવ નથી. જે ઉત્પત્તિશીલ પદાર્થો છે તે બધા ક્ષણભર છે. (૧) અહીં આ કોઈનો કોઈની સાથે નિવાસ સ્થિર નથી. બીજાની તો વાત જ શી કરવી ? અરે ! આ શરીરની સાથે આત્માનો સંબંધ પણ સ્થિર નથી. (૨) આ અનંત સંસારમાં જે મારા હંડારો માતા પિતા અને સંકટો પુત્રો અને સ્ત્રીઓ થઈ ગયા તે બીજા જ હતા, અને જે અત્યારે છે તે પણ બીજા જ છે, અને જે આગળ થશે તે પણ બીજા જ થશે. ॥૩॥ વળી પણ કહું છે—

અહીં જીવ એકલો જ શુભાશુભ કર્મોની કર્તા છે, અને એકલો જ શુભાશુભ ફળોનો ભોક્તા છે. તે એકલો જ મરે છે અને એકલો જ ભવાન્તરમાં જાય છે. (૪)

હુમેશાં હું એકલો છું, મારો કોઈ નથી, તેમ જ હું પણ કોઈનો નથી. જેનો હું છું એવા પોતાના બાપ દાદાઓને આજે હું જોતો નથી, કેમ કે—તે બધા કાળકવણિત થઈ ગયા, અને એવો પણ કોઈ નહિ થશે જેનો હું થાઉં. અર્થાત્—મારું શરીર છુટ્યા પછી હું પણ પોતાના પુત્રાદિકોનો રહીશ નહિ (૫) જે આ સંસારથી પરલોકવાસી થયા છે તે હવે મળવાના નથી, જે બાલ

કિંચ—કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કસેહિ અપ્પાણં જરેહિ અપ્પાણં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—કૃશં કુરુ આત્માનં જારય આત્માનમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—આત્માનં=શરીરમ્, इह आत्मशब्दः शरीरवाची गृह्यते; कृशं कुरु= तपश्चरणादिना शरीरशोषणे प्रवृत्तो भवेदित्यर्थः । तथा—आत्मानं=शरीरं जारय= जीर्णं कुरु, तपश्चरणेन तथा कुरु यथा जराजीर्णमिव भवेदित्यर्थः । शुश्रूषाविभूषापरि-
हारेण शरीरस्य निःसारस्तामापादय, स्वदेहं निर्वलं रूक्षं च कुरुष्वेति भावः ॥મૂ૦ ૫॥

નહીં; જો અમી સાથમેં રહ રહે હેં વે મી સદા સાથ રહનેકે નહીં । જિસ પ્રકાર નદિયોં કે તટ પર રવડે હુણ વૃક્ષોંકો ઉનકા જલ ઉગ્વાડ કર ફેંક દેતા હેં उसी प्रकार मेरे ये स्वजनादिक मुझे हर तरह से आत्मस्वरूप से उखाड़ देनेकी कोशिश में लगे हुए हैं ॥ ६ ॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि इन संयोगी पदार्थों से ममत्वरहित होकर आत्मकल्याणके मार्गका पथिक बने ॥ सू० ४ ॥

ભગવાન્ અપની દિવ્યદેશનામેં ભવ્ય જીવોંકો સમજાતે હુણ કહતે હેં—
' કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ ।

• હે ભવ્ય ! તું इस शरीरका तपस्या आदि शुभ साधनों के द्वारा शोषण कर, तथा तपस्या भी ऐसी कर कि जिससे यह शरीर जरा-
वृद्धावस्था से जीर्ण हुए के समान हो जावे ।

શરીરકે પ્રતિ મમતા રાખ કર उसकी सेवा शुश्रूषा और विभूषा
આદિ ન કર; કિન્તુ તપશ્ચર્યા કે દ્વારા इसे निर्वल और रूक्ष बना ॥મૂ૦ ૫॥

સાથે રહે છે તે પણ હમેશાં સાથે રહેનાર નથી. જેવી રીતે નદીના કિનારા ઉપરના
વૃક્ષોને તેનુ પાણી ઉપાડીને કેંદ્રી દે છે તેવી જ રીતે મારા આ સ્વજનાદિક મને કોઈ
પ્રકારે આત્મસ્વરૂપથી ઉપાડી દેવાની કેશિશમાં લાગેલાં છે. (૬)

માટે મનુષ્યેને સમજવું જોઈએ કે—આ સંયોગી પદાર્થોથી મમત્વ-રહિત
ધર્મને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં આગળ વધે ॥સૂ૦ ૪॥

ભગવાન પોતાની દિવ્યદેશનામાં ભવ્ય હોવાને સમજાવતા રહે છે—
' કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ.

હે ભવ્ય ! તું આ શરીરનું તપ આદિ શુભસાધનદ્વારા શોષણ કર, અને
તપ પણ એવી રીતે કર કે જેથી નાફ આ શરીર જરા-વૃદ્ધાવસ્થાથી છુટી જાય
ધર્મ તથા શરીર પ્રતિ મમતા રાખીને તેની સેવા શુશ્રૂષા અને વિભૂષા આદિ ન
કર, કિન્તુ તપશ્ચર્યાદ્વારા તેને નિર્જળ અને રૂક્ષ બનાવ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

કિમર્થમ્ इत्येतदिति जिज्ञासायामाह--‘जहा जुन्नाइं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જહા જુન્નાઈં કઢાઈં હવવાહો પમત્થઈ, એવં અત્તસ-
માહિણ અણિહે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા--યથા જીર્ણાનિકાષ્ઠાનિ હવ્યવાદ્ પ્રમથ્નાતિ, એવમ્ આત્મસમાહિતઃ
અસ્નિહઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યથા હવ્યવાદ્=અગ્નિઃ, જીર્ણાનિ=અસારાણિ શુષ્કાણિ, કાષ્ઠાનિ પ્રમ-
થ્નાતિ=ત્વરિતં ભસ્મસાત્ કરોતિ, એવમ્=અનેન પ્રકારેણ અસ્નિહઃ=શબ્દાદિવિપ-
યેષુ રાગરહિતઃ સન્, શરીરાદૌ નિર્મમો ભૂત્વા, ઇતિ ફલિતાર્થઃ; આત્મસમાહિતઃ=
આત્મનિ=આત્મનઃ શુભપરિણામે સમ્યગ્દર્શનાદૌ સમાહિતઃ=સાવધાનઃ આત્મનિષ્ઠ
इत्यर्थः, અતએવ-અસ્નિહઃ શબ્દાદિવિપયેષુ રાગરહિતઃ સન્ જ્ઞાનાવરણીયાઘઘવિધ-
કર્મકાષ્ઠાનિ પ્રમથ્નાતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

इय प्रकार शरीरको निर्बल और रुक्ष करनेकी आवश्यकता क्यों
है ? इसको कहते हैं—‘ जहा जुन्नाइं ’ इत्यादि ।

जिस प्रकार शुष्क काष्ठको अग्नि शीघ्र भस्म कर देती है उसी
प्रकार शब्दादि विषयों में निर्मम होकर केवल आत्माके शुभपरिणाम-
रूप समकित आदिमें सावधान-आत्मनिष्ठ हुआ मनुष्य ज्ञानावरणी-
यादिक अष्ट प्रकारके कर्मरूप काष्ठको जला देता है-नष्ट कर देता है ।

शरीरमें जब तक समत्वभाव रहता है तब तक यथावत् तपश्चर्यादिक
साधनों का अनुष्ठान नहीं हो सकता है, अतः यथावत् तपश्चर्यादिक
अनुष्ठानों को करने के लिये शरीरमें निर्ममत्व भावकी जागृति अवश्य
आवश्यकीय है । ऐसा होने पर यथावत् अनुष्ठित तपश्चर्यादिक साधनों
से कर्मों का नाश अवश्यभावी है ॥ सू० ६ ॥

આ પ્રકારે શરીરને નિર્બળ અને રૂક્ષ બનાવવાની આવશ્યકતા શા માટે ?
તો કહે છે—‘ જહા જુન્નાઈં ’ ઇત્યાદિ.

જેમ સુકા લાકડાને અગ્નિ જલદી બાળી નાંખે છે તેમ શબ્દાદિ વિષયોમાં
મમતા વગર થઈને દૃષ્ટ આત્માના શુભપરિણામરૂપ સમકિત આદિમાં સાવ-
ધાન-આત્મનિષ્ઠ થયેલો મનુષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપ કાષ્ઠોને
બાળી નાંખે છે-નાશ કરે છે.

શરીરમાં જ્યાં સુધી મમતાલાવ રહે છે ત્યાં સુધી બરોણર રીતે તપશ્ચર્યા-
દિક સાધનોનું અનુષ્ઠાન બનતું નથી, માટે બરોણર રીતે તપશ્ચર્યાદિક અનુષ્ઠાનોને
કરવા શરીરમાં નિર્મમત્વ લાવની જાગૃતિની ખાસ જરૂર છે. આમ થવાથી સરખી
રીતે અનુષ્ઠિત તપશ્ચર્યાદિક સાધનોદ્વારા કર્મોનો અવશ્ય નાશ થાય છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ઉક્તરીત્યા રાગનિવૃત્તિ પ્રદર્શ્ય દ્વેષનિવૃત્તિમાહ-‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-વિગિંચ કોહં અવિકંપમાણેઽમં નિરુદ્ધાઉયં સંપેહાપ ॥૭॥

ઢાયા-વેવિક્ષ્વ ક્રોધમ્ અવિકમ્પમાનઃ ઇમં નિરુદ્ધાયુક્તં સંપ્રેક્ષ્ય ॥ મૂ० ૭ ॥

ટીકા--ઁમં=મનુષ્યલોકં, નિરુદ્ધાયુક્તમ્=અવર્ધિતાયુક્તં સંપ્રેક્ષ્ય=પર્યાલોચ્ય, અવિકમ્પમાનઃ ક્રોધજનિતકમ્પરહિતઃ પ્રશમગુણસમન્વિતઃ સન્નિત્યર્થઃ, ક્રોધમ્-પ્રજ્વલનરૂપાતિક્રૂરાધ્યવસાયઃ ક્રોધસ્તં વેવિક્ષ્વ=પરિત્યજ, ક્રોધમિતિપદં સકલક-પાયોપલશ્ચણમ્ ॥ મૂ० ૭ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિસે રાગકી નિવૃત્તિ પ્રકટ કર અચ દેષકી નિવૃત્તિ કહતે હૈં । ‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ ।

હસ મનુષ્યલોકકો અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાલા જાન ક્રોધસે ઉત્પન્ન હુપ વિકાર-પરિણામસે રહિત હોકર અર્થાત્ પ્રશમગુણસમ્પન્ન હોકર આત્માકો જલનેવાલે ક્રૂર અધ્યવસાયસ્વરૂપ હસ ક્રોધકા, ઉપલ શ્ચણસે-માન, માયા ઓર લોભકા મી ત્યાગ કર ।

તાત્પર્ય યદ્ હૈં કિ જિસ પ્રકાર રાગભાવ ત્યાજ્ય હૈં ડસી પ્રકાર દેષભાવ મી ત્યાજ્ય હૈં, અનઃ જવ કિસી મી સચેતન, અચેતન વસ્તુ પર દેષ હોતા હૈં તવ આત્મામેં ક્રોધ પૈદા હોતા હૈં; ક્રોધસે શરીરમેં કંપ કી જાગૃતિ હોતી હૈં; જાસૌરિક કંપ સે આત્માકે પ્રદેશોમેં મી ંક પ્રકાર કી પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા હોતી હૈં જિસસે ડસ હાલતમેં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચલને લગતે હૈં, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોં કે ચલને સે આયુકર્મ કે અવિભાગી પ્રતિચ્છેદોં-વિભાગોં-કા દાસ હોતા હૈં, ંર ડસ તરહસે અકાલમેં હી આયુ-

પૂર્વોક્ત રીતિથી રાગની નિવૃત્તિ પ્રગટ કરી, હવે દેષની નિવૃત્તિ કહે છે- ‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ

આ મનુષ્યલોકને અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાળો જાણીને ક્રોધથી ઉત્પન્ન થયેલ વિકારપરિણામથી રહિત થઈ અર્થાત્ પ્રશમગુણસમ્પન્ન થઈ આત્માને જાગવાવાળા ક્રૂરાધ્યવસાયસ્વરૂપ આ ક્રોધનો, ઉપલક્ષણથી માન માયા અને લોભનો ત્યાગ કર. તાત્પર્ય એ છે કે-જે પ્રકારે રાગભાવ ત્યાગ્ય છે તે પ્રકારે દેષભાવ પણ ત્યાગ્ય છે, માટે જ્યારે ક્રોધ પણ સચેત-અચેત વસ્તુ ઉપર દેષ થાય છે ત્યારે આત્મામાં ક્રોધ પેદા થાય છે ક્રોધથી શરીર ધ્રુજવા માટે છે શરીરના ધ્રુજવાથી આત્માના પ્રદેશોમાં પણ એક પ્રકારની પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા થાય છે જેથી તેની હાલતમાં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચાલવા લાગે છે, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોના આઘવાથી આયુકર્મના અવિલાસ્ય પ્રતિષેદો-વિભાગો-નો દામ

કિંચ--‘દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ--દુઃખં ચ જાણ અદુ આગમેસ્સં, પુઠો ફાસાઈં ચ ફાસે, લોયં ચ પાસ વિફંદમાણં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા--દુઃખં ચ જાનીહિ અથ આગામિ, પૃથક્ સ્પર્શાન્ ચ સ્પૃશેત્, લોકં ચ પશ્ય વિસ્પન્દમાનમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા--ક્રોધાદિવશાત્ ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિકરણે સમુત્પદ્યમાનં કર્મ કી સ્થિતિ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અનઃ ભગવાન્ કા કથન હૈ કિ કષાય-રૂપ ક્રોધ કરતે સમય હસ વાતકા પ્રત્યેક આત્મહિતૈપી જીવકો વિચાર કરના ચાહિયે કિ જિસ પ્રકાર ઘડી કી ચાવી ઉસકે નીચે ચલતે હુએ ગોલે કો અધિક--ચારંચાર ઘુમાનેસે અસમયમેં ચ્વાલી હો જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર કષાયાદિ કરને સે આયુકર્મ કી સ્થિતિ ભી અસમયમેં ચિર જાતી હૈ । આયુકર્મ કી નિર્જરા તો હોની હૈ પરન્તુ વદ્ધ આયુ મેં ઉત્કર્ષણ (અધિકતા) નહીં હોતા । જિસ પ્રકાર જીવ સાત કર્મેં કો પ્રત્યેક સમય બાંધતા ઓર નિર્જોર્ણ કરતા હૈ ઉસ પ્રકાર આયુકર્મ કો નહીં બાંધતા । જિતની કુછ આયુકર્મ કી સ્થિતિ બંધ ચુકી વહ ઉતની હી રહેગી, ઉસમેં ફિર વૃદ્ધિ નહીં હો સકતી । હાં ! બાહ્ય નિમિત્તોં કો લેકર ઉસમેં અપ-કર્ષણ (હાસ) જસ્તર હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ફિર ભગવાન કહતે હૈ--‘દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

ચહ નિશ્ચિત હૈ કિ--ક્રોધાદિક કષાયકે આધીન હોકર જવ જીવ

થાય છે, અને આવી રીતે અકાળે આયુકર્મની સ્થિતિ પૂર્ણ થઈ જાય છે, માટે લગ-વાનતું કથન છે કે--કષાયરૂપ કાષ કરતી વખતે પ્રત્યેક આત્મહિતૈપી જીવને વિચાર કરવો જોઈએ કે જેમ ઘડીયાળની આવી તેની નીચે ચાલતા લોકને વારંવાર અધિક ઘુમાવવાથી અસમયમાં ખાલી થઈ જાય છે, તેમ કષાયાદિ કરવાથી આયુ-કર્મની સ્થિતિ પણ અસમયમાં ખલાસ થઈ જાય છે, આયુ કર્મની નિર્જરા તો થાય છે પણ બદ્ધ-બાંધેલા આયુમાં ઉત્કર્ષણ (અધિકપણ) નથી હોતું. જેવી રીતે જીવ સાત કર્મેને પ્રત્યેક સમય બાંધે છે, અને તેની નિર્જરા કરે છે, તેવી રીતે આયુકર્મને નથી બાંધતો જેટલી પણ આયુકર્મની સ્થિતિ બાંધાએલી છે તે તેટલી જ રહેશે. તેમાં વધારો થઈ શકતો નથી. હા, બાહ્ય નિમિત્તો લઈને તેમાં અપકર્ષણ (હાસ) અવશ્ય થાય છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી લગવાન કહે છે--‘દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ.

એ નિશ્ચિત છે કે--ક્રોધાદિક કષાયને આધીન થઈ જ્યારે જીવ કરવું,

પ્રાણિનાં દુઃખં જાનીહિ, યદ્વા-ક્રોધાદિના પ્રજ્વલિતાત્મનો યન્માનસં દુઃખમુપજા-
યતે તજ્જાનીહિ । અથ-આગમિ=ક્રોધજનિતકર્મવિપાકોદયાજ્ઞાયમાનમનાગતકા-
લિકં દુઃખં ચ જાનીહિ । આગમિનો દુઃખસ્ય પ્રાપ્તિસ્થાનમાહ-‘પૃથક્’ इत्यादि ।
પૃથક્=અન્યત્ર નરકનિગોદાદૌ સ્પર્શાન્-દુઃખાનિ ચ ક્રોધી સ્પૃશેત્=અનુભવેત્ ।
અત્ર ચકારઃ સમુચ્ચયાર્થઃ, ક્રોધપ્રજ્વલિતાત્મનો ન કેવલં વર્તમાનકાલિક એવ મનસ્તાપઃ
કિંતુ ભવિષ્યત્કાલેऽપિ નરકાદૌ ક્રોધજનિતકર્મફલભૂતં દુઃખં ભવતીત્યર્થઃ । મોક્ષ-

करना कराना और अनुमोदना, इन तीन करणों से, एवं मन, वचन
तथा काय से दमरे जीवों की हिंसादिक करने में प्रवृत्त होता है तब उन
प्राणियों को दुःख अवश्य उत्पन्न होता है । अथवा-क्रोधादि कपाय से
आत्मा जब संतप्त हो जाता है तब उसके लिये अवश्य मानसिक कष्ट
होता है । तथा क्रोध कपाय करते समय जीव जिन कर्मों का बंध करता
है और जब वे तीव्र अनुभागरूपसे उदयमें आते हैं तब उनका फल
दुःखरूप ही होता है । इस फलकी प्राप्ति जीवको नरकनिगोदादि गतियों
में वहां के अनंत कष्टों को भोगने के रूपमें होती है ।

यहां पर ‘चकार’ समुच्चय अर्थ को प्रकट करता है, अर्थात्-
क्रोधसे संतप्त आत्मा केवल वर्तमानकालमें (उसी भवमें) ही मनस्ताप-
रूप दुःखको नहीं भोगता है; किन्तु आगामी कालमें (परभवमें) भी
नरकादि गतियों में उस क्रोधसे जनित कर्मके फलरूप दुःखका अनुभव
करना है, इसलिये क्रोधादिक कपायों को छोड़ कर मोक्ष मार्गमें प्रवृत्ति

કરાવવું, અને અનુમોદવું, આ ત્રણ કારણોથી, અને મન, વચન, કાયાથી બીજા
જીવોની હિંસા આદિ કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે આ પ્રાણીએને દુઃખ અવશ્ય
થાય છે. અથવા-ક્રોધાદિ કપાયથી આત્મા ન્યાયે સંતપ્ત થઈ નિત્ય છે ત્યારે તેને
માટે માનસિક કષ્ટ અવશ્ય થાય છે તથા ક્રોધકપાય કરતી વખતે જીવ જે
કર્મોનો બાંધ કરે છે, અને ન્યાયે તે તીવ્ર અનુભાગરૂપથી ઉદયમા આવે છે
ત્યારે તેનું કળ દુઃખરૂપ જ થાય છે. આ કળની પ્રાપ્તિ જીવને નરકનિગોદાદિ
ગતિઓમા ત્યાંના અનંત કષ્ટોના ભોગવવારૂપે થાય છે.

આ ઠેકાણે ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થને પ્રગટ કરે છે, અર્થાત્-ક્રોધથી સંતપ્ત
આત્મા કેવળ વર્તમાનકાળમાં (આ ભવમા જ) મનસ્તાપરૂપી દુઃખને ભોગવતો
નથી, પરંતુ આગામી કાળમાં (પરભવમાં) પણ નરકાદિ ગતિઓમાં તે ક્રોધથી
ઉત્પન્ન થયેલાં કર્મના કળરૂપ દુઃખનો અનુભવ કરે છે, માટે ક્રોધાદિકપાયોને

માર્ગે પ્રવર્તયિતુમાહ—‘લોકં ચ’ इत्यादि । विस्पन्दमानं=दुःखागमभयात् कम्पमानं लोकं=जीवनिकायं पश्य, प्रशमसमन्वितः सन् दुःखभयात्कम्पमानं जीवलोकं दयादृष्ट्याऽवलोकयेत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

કરારને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હેં કિ-હે ભવ્ય ! દુઃખકી પ્રાપ્તિ કે ભયસે કંપાયમાન ઇસ ષડ્જીવનિકાય કો તું દેખ, અર્થાત્ પ્રશમભાવ સે યુક્ત હોકર દુઃખકે ભયસે વ્રસ્ત જીવલોક કો સદા તું દયાદૃષ્ટિસે દેખ ।

બન્ધ ચાર પ્રકારકા હૈ—પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ, અનુભાગબન્ધ ઓર પ્રદેશબન્ધ । ઇનમેં યોગસે પ્રકૃતિબન્ધ ઓર પ્રદેશબન્ધ હોતે હેં । કષાયસે સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ હોતે હેં । રંગકા કામ કપડેકો રંગને કા હૈ પરન્તુ હરાર ઓર ફિટકરી કે સમાગમસે જિસ પ્રકાર વહ રંગ કપડે પર ગહરા હો જાતા હૈ ડસી પ્રકાર કષાય કી અલ્પતા ઓર અધિકતા કર્મેંકે સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધકી અલ્પતા ઓર અધિકતા મેં કારણ હોતી હૈ, અત એવ કષાય યદિ તીવ્ર હોગી, તો કર્મેં કા તીવ્ર સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ હોગા । કષાય મધ્યમાંશવાલી હોગી તો ડનકા મધ્યમાંશ બંધ હોગા । બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવચ વ્યાપાર કરતે સમય જીવકો અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકષાય કા તીવ્રતમ અંશ હોતા હૈ, ંસી હાલતમેં જીવકો જો કર્મેં કા બંધ હોગા વહ તીવ્રતમ સ્થિતિ ઓર અનુભાગબંધ કો હી લેકર હોગા । ંસી હાલતમેં

છોડીને મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરાવવા સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ભવ્ય ! દુઃખના ભયથી કંપાયમાન આ ષડ્જીવનિકાયને તું દેખ, અર્થાત્-પ્રશમભાવથી યુક્ત થઈ દુઃખના ભયથી ત્રાસેલા જીવલોકને સદા તું દયાદૃષ્ટિથી દેખ.

બંધ ચાર પ્રકારના છે-પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ. આમાં યોગથી પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ થાય છે. કષાયથી સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ થાય છે. રંગનું કામ કપડાને રંગવાનું છે પરંતુ હરડા અને ફટકડીથી જે પ્રકારે તે રંગ વધારે જાય છે તે પ્રકારે કષાયની અલ્પતા અને અધિકતા કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અલ્પતા અને અધિકતામાં કારણ થાય છે, માટે કષાય જે તીવ્ર હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ તીવ્ર થશે. કષાય મધ્યમાંશવાળો હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ મધ્યમ થશે. બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવચ વ્યાપાર કરતી વખતે જીવને અનંતાનુબંધી ક્રોધકષાયનો તીવ્રતમ અંશ થાય છે, તેવી હાલતમાં જીવને જે તે સમયે કર્મોનો બંધ થશે તે તીવ્રતમ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધને જ લઈને

જ્યે તેના અપને અવાધાકાલ કો છોડ કર ઉદય આવેગા તય વહ ખી તીવ્રતમ રૂપસે હી અપના ફલ દેગા, અતઃ જીવ યા તો ઇસી ભવમેં તજ્જન્ય દુઃખાદિકોં કા પૂર્ણ ભોક્તા હોગા, ઓર યદિ અવશિષ્ટ વર્ચેગે તો તેના ફલ ઉસે નરકનિગોદાદિ મેં જાકર ભોગના પડેગા। યહી વાત ઇસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ। ‘ચકાર’ શબ્દ જો સૂત્રમેં પડા હૈ વહ યહ ખી પ્રકટ કરતા હૈ કિ-ક્રોધકપાય કે વશ હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા જીવ તજ્જન્ય દુઃખ કો ઇસ ભવમેં ઓર પર-ભવમેં (નરકનિગોદાદિકોં મેં) ખી ભોગતા હૈ।

ક્રોધકપાય સે જિસ સમય આત્મા સંતસ હો જાતા હૈ ઉસ સમય ઉસ આત્મા કા મન સંતસ હોતા હૈ, મનકા સંતસ હોના હી ભાવહિંસા હૈ। મનકે સંતાપ સે અશુભ કર્મોં કા આસ્રવ હોતા હૈ।

અન્તમેં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે હુણ કહતે હેં કિ જયે ક્રોધાદિક કપાયોં કે કરને સે જીવોં કો દુઃખ ભોગના પડતા હૈ ઓર સંસાર મેં કોઈ ખી પ્રાણી દુઃખ કો નહીં ચાહતા, સવ સુખકે હી અભિલાષી હેં, તો ભવ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ દુઃખ કે અભાવરૂપ મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરે। સંસાર મેં થોડા સા ખી સુખ નહીં હૈ। જિસે જીવને સુખ માન રખા હૈ વહ કાલ્પનિક હૈ। આકુલના કા જયે તક સર્વથા અન્ત નહીં હો

થશે એવી સ્થિતિમાં ત્યારે પોતાના અણાધાકાળને છોડીને તેના ઉદય થશે ત્યારે તે પણ તીવ્રતમરૂપથી જ પોતાનું દુઃખ આપશે, માટે છવ કાં તો આ લવમા જ તજ્જન્ય દુઃખાદિકોને પૂર્ણરૂપે ભોગવશે, અને બે અવશિષ્ટ બચશે તો તેનું દુઃખ તેણે નરક નિગોદાદિમાં જઈને ભોગવવું પડશે આ જ વાત આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે. ‘ચકાર’ શબ્દ બે સૂત્રમાં છે. તે એમ પ્રગટ કરે છે કે—ક્રોધ-ક્રપાયને વશ થઈ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં છવ તજ્જન્ય દુઃખને આ લવમાં અને પરલવમા (નરકનિગોદાદિકામાં) પણ ભોગવે છે.

ક્રોધ-ક્રપાયથી જે વળતે આત્મા સંતસ થઈ બચે, તે વળતે તે આત્માનું મન સંતસ થાય છે મનનું સંતસ થવું એ જ ભાવહિંસા છે

મનના સંતાપથી અશુભ કર્મોના આસ્રવ થાય છે. સંતાપમાં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે—ત્યારે ક્રોધાદિક કપાયો કરવાથી છવોને દુઃખ ભોગવવું પડે છે અને સંસારમાં કોઈ પણ પ્રાણી દુઃખને નથી ચાહતો, બધા સુખના જ અભિલાષી છે. ત્યારે લવ્ય પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે આ દુઃખના અલાવરૂપ મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે. સંસારમાં થોડું પણ સુખ નથી, એવે ભંને સુખ માન્યું છે તે કાલ્પનિક છે. આકુળતાના ત્યાં સુધી સર્વથા અંત નથી થતો ત્યાં

યે તુ એવં ન સન્તિ, તે કથં ભવન્તિ ? ઇત્યત આહ—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ ।
મૂલમ્—જે નિવ્વુડા પાવેહિં કમ્મેહિં અણિયાણા તે વિચાહિયા ॥૧॥

છાયા—યે નિર્વૃતાઃ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાનાઃ તે વ્યાખ્યાતાઃ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—યે ભગવત્તીર્થકરોપદેશે શ્રદ્ધાવન્તસ્તદુપદેશધારણયા ક્રોધાદિકપા-
યાનલપ્રશમનાન્નિર્વૃતાઃ=શીતીભૂતાઃ, અત એવ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાનાઃ=નિદાન-
રહિતાઃ, તે વ્યાખ્યાતાઃ=મોક્ષસુખસ્થાનરૂપેણ કથિતાઃ, ઇહ લોકે ઔષ્ઠમિકસુગ્ધ-
વત્ત્વેન રૂપાતિમુપગતા ભવન્તીત્યર્થઃ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

જાતા, તથ તક સુખ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । સાંસારિક જીવન કા
એક ખી ક્ષણ વિના આકુલતા કે નહીં હૈ । ડસ આકુલતારૂપ
પરિણતિ કા અભાવ તો મોક્ષમાર્ગ મેં હી હૈ, ઇસલિયે પ્રત્યેક આત્મક-
લ્યાણાભિલાષી જીવકો ડસ માર્ગ મેં હી લગને કી પરમાવશ્યકતા હૈ ।
જવતક ડસ માર્ગ મેં નહીં લગા જાવેગા તથ તક દુઃખ ઓર આકુલતા કા
અન્ત નહીં હો સકતા । મોક્ષમાર્ગ મેં લગા હુઆ પ્રાણી અવશ્ય હી દુઃખ
કી પ્રાપ્તિ કે ભય સે ત્રસ્ત ઇસ પ્રત્યક્ષ મેં દિઁવનેવાલે પડ્જીવનિકાયકો
પ્રશમભાવસે સમન્વિત હોકર દયાદષ્ટિ સે દેલેગા । કિસીકો ખી
સ્વપ્ન તક મેં સતાને કી ભાવના નહીં કરેગા । ડસકી ભાવના યહી સદા
રહેગી કિ યે દુઃખ સે કૈસે છૂટે ? ॥ મૂ૦ ૮ ॥

જો ક્રોધાદિ કષાયોં સે રહિત હોતે હૈં વે કૈસે હોતે હૈં ? સો કહતે હૈં
—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થકરના કે ડપદેશ મેં જો શ્રદ્ધાસમ્પન્ન હૈં, અર્થાત્—ડનકે
દિવ્ય ડપદેશ કી ધારણા સે જો ક્રોધાદિક કષાય રૂપ અગ્નિકે ગમન હોને

સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી, સાસારિક જીવનમા એક પણ ક્ષણ આકુળતા વગર નથી.
આ આકુળતારૂપ પરિણતિનો અભાવ તો મોક્ષમાર્ગમાં જ છે, માટે આત્મકલ્યાણ
ધ્યેયવાણા પ્રત્યેક જીવને તે માર્ગમાં જ લાગવાની પરમ આવશ્યકતા છે ત્યા
સુધી જીવ તે માર્ગમાં નહિ જશે, ત્યાં સુધી દુઃખ અને આકુળતાનો અંત ધર્ષ
શકતો નથી મોક્ષમાર્ગમાં લાગેલા પ્રાણી જરૂર જ દુઃખ આવવાના ભયથી ત્રાસેલા
આ પ્રત્યક્ષમા દેખાતા પરજીવનિકાયને પ્રશમભાવથી સમન્વિત ધર્ષ દયાદષ્ટિથી
ભેશે, કેઈને પણ સ્વપ્નમાં પણ સતાવવાની ભાવના ગળશે નહિ. તેની ભાવના
સદા એવી જ રહેવાની કે ક્યારે આ પ્રાણી દુઃખથી છૂટે ॥ મૂ૦ ૮ ॥

જે ક્રોધાદિ કષાયોથી રહિત છે તે કેવા છે ? તે કહે છે—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ.

ભગવાન તીર્થકરના ઉપદેશમા જેને શ્રદ્ધા છે અર્થાત્—પ્રભુના દિવ્ય
ઉપદેશની ધારણાથી જેનો ક્રોધાદિકકષાયરૂપ અગ્નિ શાંત ધર્ષ ગયેલ છે, અને તેથી

સે સર્વદા શાંતિ હો ચુકે હૈં, ઓર હસીલિયે પાપકર્મોં મેં જો નિદાનચન્ધ સે રહિત હૈં વે પરમ સુખ કે સ્થાનરૂપ સે કહે ગયે હૈં ।

ટીકાકારને જો ક્રોધાદિક કપાયોં કે લિયે અગ્નિ કી ઉપમા લી હૈં વહ સાર્થક હૈં, કારણ કિ જિસ પ્રકાર અગ્નિ સે અત્યન્ત તપ લોહે કા ગોળા પાની મેં ઢાલને પર અપને ચારોં ઓર કે પાની કો ચીંચતા હૈં ઉસી પ્રકાર યહ આત્માની જવ કપાયોં સે અત્યન્ત સંતપ હો જાતા હૈં તવ અપની ચારોં ઓર ભરી હુઈ કાર્મણવર્ગણાઓં કો મન, વચન, કાયરૂપ નાલિયોં સે ચીંચતા હૈં । જાયા હુઆ અન્ન જિસ પ્રકાર રસ-રુધિર-આદિ રૂપમેં પરિણત હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર ગૃહીત વે કાર્મણવર્ગણાં ભી જ્ઞાનાવરણાદિક-કર્મરૂપસે એકહી સાથ પરિણત હો જાતી હૈં । કર્મરૂપ સે બંધી હુઈ ઇન કાર્મણવર્ગણાઓં કી ચાર પ્રકાર કી અવસ્થાં હોતી હૈં, પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિ-બંધ અનુભાગબંધ ઓર પ્રદેશબંધ । યહ નિશ્ચિત હૈં કિ જવ કોઈ એક પદાર્થ કિસી દુસરે પદાર્થ કો આવૃત કરતા હૈં યા ઉસકી શક્તિ કા ઘાત કરતા હૈં તવ આવરણ કરનેવાલે પદાર્થમેં-‘આવરણ કરને કા સ્વભાવ, આવરણ કરને કા કાલ, આવરણકી શક્તિ કી હીનાધિકતા ઓર આવરણ કરને-વાલે પદાર્થ કા પરિમાણ, વે ચાર અવસ્થાં એક સાથ પ્રકટ હોતી હૈં । યહી ઘાત ઇન બંધ કે ભેદોં મેં ભી સમજના ચાહિયે । આત્મા આત્રિયમાણ હૈં

તે મર્ચા ઘાત થયેલ છે. આથી જે પાપકર્મોમાં નિદાનબંધથી રહિત છે તેને પરમ સુખતા સ્થાનરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. ટીકાકારે ક્રોધાદિક કપાયોને માટે જે અગ્નિની ઉપમા આપી છે તે બરાબર છે, કારણ કે જે પ્રકારે અગ્નિથી અત્યન્ત તપાવેલો લોખંડનો ગોળો પાણીમાં નાંખવાથી પોતાના ચારે બાજુના પાણીને જોડે છે તે પ્રકારે ન્યારે આત્મા પણ કપાયોથી અત્યન્ત સંતપ થાય છે ત્યારે પોતાની ચારે બાજુ ભરેલી કાર્મણવર્ગણાઓને મન-વચન-કાયરૂપ નાળિયેથી જોડે છે. જેવી રીતે બાંધેલું અનાજ રમ રુધિર આદિ રૂપમાં પરિણત થાય છે તે પ્રકારે ગૃહીત આ કાર્મણવર્ગણાઓ પણ જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મરૂપથી એક જ સાથે પરિણત થઈ જાય છે. કર્મરૂપથી બાંધેલી આ કાર્મણવર્ગણાઓની ચાર પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે-પ્રકૃતિબંધ ત્રિશ્ચિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ, એ નિશ્ચિત છે કે ન્યારે કોઈ એક પદાર્થ કોઈ બીજા પદાર્થને આવૃત કરે છે અગર તેની શક્તિનો ઘાત કરે છે ત્યારે આવરણ કરનાર પદાર્થોમાં-આવરણ કરવાનો સ્વભાવ ૧, આવરણ કરવાનો કાળ ૨, આવરણની શક્તિની હીનાધિકતા ૩, અને આવરણ કરનાર પદાર્થનું પરિમાણ ૪. આ ચાર અવસ્થાઓ એક સાથે પ્રકટ થાય છે, આ વાત બંધના ભેદોમાં પણ સમજવી

और कर्म आवरण हैं, अतः कर्म की भी बंध के समय में चार अवस्थाएँ प्रगट होती हैं। ये चारों अवस्थाएँ कर्मबंध के प्रथम समय में ही सुनिश्चित हो जाती हैं। उदाहरणार्थ—जिस समय हम लालटेन को वस्त्र से ढांकते हैं उसी समय उस आवरण करनेवाले वस्त्र में चार अवस्थाएँ स्पष्टतः प्रतिभासित होती हैं—

(१) वस्त्र का स्वभाव लालटेन के प्रकाश को आवृत करना (२) निश्चित काल तक लालटेन के प्रकाश को आवृत किये रहना (३) लालटेन के प्रकाश आवृत करने की शक्ति का वस्त्र में हीनाधिक रूप से पाया जाना और (४) आवृत करने वाले वस्त्र का परिमाण।

उन गृहीत कर्मणवर्गणाओं का प्रत्येक कर्म में बदवारा इस प्रकार से होता है। यदि आयुर्कर्म का भी बंध हो रहा है तो आयुर्कर्म को सब से थोड़ा द्रव्य मिलता है। नामगोत्र में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इन दोनों कर्मों का द्रव्य समान रहता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इनका द्रव्य परस्पर समान होता है। इससे मोहनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है और इससे वेदनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है। घातिया कर्मों को जो द्रव्य मिलता है इसमें जो सर्वघाति द्रव्य है

જોઈએ. આત્મા આત્રિયમાણ છે અને કર્મ આવરણ છે, માટે બંધ સમયમાં કર્મની પણ ચાર અવસ્થાઓ પ્રગટ થાય છે. આ ચારે અવસ્થાઓ કર્મ-બંધના પ્રથમ સમયમાં જ સુનિશ્ચિત થઈ જાય છે. દાખલા તરીકે ત્યારે જતીને વસ્ત્રથી ઢાંકીએ ત્યારે આવરણ કરવાવાળા તે વસ્ત્રમાં ચાર અવસ્થાઓ સ્પષ્ટ પ્રતિભાસિત થાય છે—

(૧) વસ્ત્રનો સ્વભાવ જતીના પ્રકાશને રોકવું. (૨) નિશ્ચિત સમય સુધી જતીના પ્રકાશને રોકી રાખવો. (૩) જતીનો પ્રકાશ આવૃત કરવાની શક્તિનો વસ્ત્રમાં હીનાધિક રૂપથી સદ્ભાવ. (૪) આવૃત કરનાર વસ્ત્રનું પરિમાણ. ગ્રહણ કરવામાં આવેલી તે કાર્મણવર્ણાઓની વહેંચણી પ્રત્યેક કર્મમાં આ પ્રકારે થાય છે—જો આયુ કર્મનો બંધ થઈ રહ્યો છે તો આયુ કર્મને બધાથી થોડું દ્રવ્ય મળે છે, નામ-ગોત્રમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે તો પણ આ જાનને કર્મોના દ્રવ્ય સમાન રહે છે. જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અંતરાયમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે છે તો પણ તેઓનું દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોય છે. જોનાથી મોહનીય કર્મને અધિક દ્રવ્ય મળે છે અને વેદનીય કર્મને જોનાથી પણ અધિક દ્રવ્ય મળે છે. ઘાતિયા કર્મોને જે દ્રવ્ય મળે છે તેમાં જે સર્વઘાતિક દ્રવ્ય છે તે સર્વઘાતિક દ્રવ્યનો

ઉક્તાર્થમુપસંહરન્નાહ--‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તમ્હા અતિવિજ્ઞો નો પડિસંજલિજ્ઞાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—તસ્માત્ અતિવિદ્વાન્ ન પ્રતિસંજ્વલેઃ—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૃ ૧૦ ॥

ટીકા—હે શિષ્ય ! તસ્માત્=યતઃ ક્રોધાદિકપાયવાન્ અનન્તદુઃખં પ્રાપ્નોતિ તસ્માત્, ત્વમ્-અતિવિદ્વાન્-આર્હતાગમપરિશીલનજનિતસમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ સન્ ન પ્રતિસંજ્વલેઃ=ક્રોધચ્છિન્નાઽઽત્માનં ન પ્રતાપયેરિત્યર્થઃ । કપાયેષુ ક્રોધસ્ય પ્રાધા-
વહ સર્વધાનિ દ્રવ્ય કા અનન્તવાં ભાગ હોના હૈં, ઓર જો દેશધાતિ દ્રવ્ય હૈં વહ દેશધાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તવહુભાગ હોતા હૈં । હસમેં ભી દેશધાતિ દ્રવ્ય કા વદવારા દેશધાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોના હૈં, સર્વધાનિ દ્રવ્ય કા વદવારા સર્વધાની દેશધાની દોનોં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોતા હૈં, ઓર નોં નોકપાયોં કો દેશધાની દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોના હૈં, સર્વધાની નહીં ॥ મૃ ૦ ॥

ઉક્ત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘તમ્હા અતિ-
વિજ્ઞો’ ઇત્યાદિ ।

જવ યહ નિર્વિવાદ સિદ્ધ હૈં કિ ક્રોધાદિક કપાયવાલે જીવ અનન્ત યાતનાઓં કો હસ લોક ઓર પરલોક મેં ભોગતે હૈં તો હે શિષ્ય ! અર્હત-
પ્રતિપાદિત આગમ કે પરિશીલન સે સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોતે હુણ તુમ ક્રોધ-
રૂપ અગ્નિ સે અપની આત્મા કો કમી ભી પ્રજ્વલિત નહીં કરના । યહાં

અનંતમે ભાગ હોય છે, અને જે દેશધાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશધાતિક દ્રવ્યને
અનંત બાદુલાગ હોય છે. આમા પણ દેશધાતી દ્રવ્યની વહેંચણી દેશધાતિ
પ્રકૃતિયોમા જ થાય છે, સર્વધાતિ દ્રવ્યની વહેંચણી સર્વધાતિ દેશધાતિ બન્ને
પ્રકારની પ્રકૃતિયોમાં થાય છે, અને નવનોડપાયોને દેશધાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય
છે, સર્વધાતિ નહિ ॥ મૃ ૦ ૬ ॥

ઉક્ત અર્થને ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘તમ્હા અતિવિજ્ઞો’ ઇત્યાદિ.

ત્યાદિ આ નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે કે ક્રોધાદિક કપાયવાળો જીવ અનંત યાત-
નાઓને આ લોકમાં અને પરલોકમાં ભોગવે છે ત્યાદિ હે શિષ્ય ! અતિવિદ્વાન્-અર્થ ત
પ્રતિપાદિત આગમના પરિશીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનન પત્ત થતાં તમે ક્રોધરૂપ અગ્નિથી
ચોનાના આત્માને કોઈ વખતે પણ જળગાવશો નહિ આ જગ્યાએ ક્રોધની પ્રધા-

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कपायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथा श्रुंतं तथा कथ-
यामीत्यर्थः ॥ मू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३ ॥

पर क्रोध की प्रधानता बनलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

नता अतावी छे तेथी भीन्न उपायोनो पणु परित्याग समझ देवो नेछो.
हे जम्बू ! भगवाननी पासो जेवुं मे' सांलज्युं छे तेवुं न तने कहुं छुं.
ओथा अध्ययननो त्रीजे उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥



। अथ चतुर्थाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देशः ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशकेऽनवद्यतपो वर्णितम् । तच्च संयमव्यवस्थितस्यैव संपूर्णतया भवति, तस्मान् संयमं प्रतिबोधयितुं चतुर्थोद्देशकं कथयन्नादौ गृहीतप्रव्रज्यस्य कर्तव्यमाह—‘ आचीलए ’ इत्यादि ।

मूलम्—आचीलए पचीलए निप्पीलए जहिच्चा पुव्वसंजोगं हिच्चा उव्वसमं ॥ सू० १ ॥

छाया—आपीडयेत् प्रपीडयेत् निप्पीडयेत् त्यक्त्वा पूर्वसंयोगं हित्वा उपशमम् ॥

टीका—पूर्वसंयोगं=पूर्वकालिकं मातापित्रादिसम्बन्धं, उपलक्षणात्पश्चात्संयोगं श्वशुरादिगम्यन्धमपि त्यक्त्वा, यद्वा—पूर्वः=अनादिभक्तसमायातत्वेन प्राक्तनोऽसंयमः, तेन सह संयोगः पूर्वसंयोगस्तं त्यक्त्वा, तथा—उपशमं=कर्मोपशमकार-

॥ चौथे अध्ययनका चौथा उद्देश ॥

इसके पहिले तृतीय उद्देशक में निरवद्य-निर्दोष तप का वर्णन किया जा चुका है, परन्तु निर्दोष तप की आराधना संपूर्ण रीति से जय तक जीव संयम में स्थित नहीं हो सकता तब तक उससे नहीं हो सकती; अतः संयम को प्रतिबोधित करने के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्राग्भूत किया जाना है । उसमें भी जिसने दीक्षा धारण की है, उसका सर्व प्रथम क्या कर्तव्य है ? इसका निरूपण सूत्रकार करते हैं—‘ आचीलए ’ इत्यादि ।

पूर्वकालिक—पूर्वकाल से सम्बन्ध रखनेवाले मातापिता आदि के तथा पश्चात्कालिक-श्वशुरादि के सम्बन्ध को, अथवा अनादि जन्मपरम्परा से संबंधित होने के कारण प्राक्तन असंयम भाव के अभी तक के

चौथा अध्ययनको चौथा उद्देश.

આ પહેલાં ત્રીજા ઉદ્દેશમાં નિરવધ-નિર્દોષ તપનું વર્ણન કરેલ છે, પરંતુ નિર્દોષ તપની આરાધના સંપૂર્ણ રીતિથી ત્યાં સુધી જીવ સંયમમાં સ્થિત નથી થતો ત્યાં સુધી તપ શકતી નથી; માટે સંયમને પ્રતિબોધિત કરવાને માટે આ ચોથા ઉદ્દેશનો પ્રારભ થાય છે. તેમાં પણ જોણે દીક્ષા ધારણ કરેલી છે. તેનું સર્વ પ્રથમ શું કર્તવ્ય છે તેનું નિરૂપણ સૂત્રકાર કરે છે—‘ આચીલણ ’ ઇત્યાદિ.

પૂર્વકાળથી સંબંધ રાખનાર માતા પિતા આદિના, તથા પછીના કાળમાં સંબંધ રાખવાવાળા શ્વશુરઆદિના સંબંધને, અથવા અનાદિ જન્મપરંપરાથી સંબંધિત રહેવાને કારણે પૂર્વકાલિક જે અસંયમભાવ છે તેના આજ સુધીના સંબંધને છેડી

મૂલમ્—દુરનુચરો મગ્ગો વીરાણં અનિયટ્થગામીણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—દુરનુચરો માર્ગો વીરાણામનિવૃત્તગામિનામ્ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—માર્ગઃ=સંયમરૂપઃ પન્થાઃ અનિવૃત્તગામિનાં=ન નિવર્તતે યસ્માત્ સઃ—અનિવૃત્તો=મોક્ષઃ, તત્ર ગન્તું શીલં યેપાં તે—અનિવૃત્તગામિનસ્તેપાં, વીરાણાં=કર્મ-વિદારણસમર્થાનાં પ્રમાદરહિતાનાં દુરનુચરઃ—દુઃસ્થેન સદ્ અનુ=પૂર્વપૂર્વતીર્થકરેભ્યઃ પશ્ચાત્ ચર્યતે=ગમ્યતે इति દુરનુચરઃ=દુઃસ્થાનુગમ્યઃ—સદુઃગમનુસેવ્યોઽસ્તિ, તસ્માત્ પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશઃ ક્રિયત્ इति ભાવઃ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

તન્માર્ગાનુચરણં પ્રમાદપરિત્યાગાદ્ ભવતીત્યાહ—‘વિગિંચ’ इत्याદિ ।

મૂલમ્—વિગિંચ મંસસોણિયં, एस पुरिसे दविण् वीरे आया-
णिज्जे वियाहिण् जे धुणाइ समुस्सयं वसित्ता वंमचेरांसि ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—વેવિક્ષ્વ માંસશોણિતમ્, एष पुरुषो द्रविको वीर आदानीयो व्या-
ख्यातो यो धुनाति समुच्छ्रयम् उपित्वा ब्रह्मचर्ये ॥ મૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—માંસશોણિતં સ્વશરીરસ્થં વેવિક્ષ્વ=અપનય-અન્તપ્રાન્તાહારાદિના અન-

યહ સંયમ રૂપ માર્ગ, મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છાવાલે પુરુષ જો કિ વીર-કર્મો કે નષ્ટ કરને મેં શક્તિશાલી એવં અપ્રમાદી હૈં ઉનકે લિયે મી દુરનુચર-અર્થાત્ અતિકષ્ણસાધ્ય હૈ, ક્યોં કિ પૂર્વ-પૂર્વ તીર્થકરોં ને હસ કે આચરણ કરને કી જો વિધિ પ્રદર્શિત કી હૈં ઉસી કે અનુસાર યહ આચરિત ક્રિયા જાના હૈ, અનઃ હસકે અનુષ્ઠાન કરને કા વારંવાર ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ઉસ સંયમરૂપ માર્ગકા આચરણ પ્રમાદ કે ત્યાગ સે હોના હૈ, ઇસી યાત કી પુષ્ટિ કરને હૈં—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्याદિ ।

સંયમી અપને શરીર કે માંસશોણિત કો સુસ્વાદે, અર્થાત્ અન્તપ્રાન્ત

આ મંથમરૂપ માર્ગ, મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છનાર પુરુષ જે વીર એટલે કે ઈર્મને ક્ષય કરવામા શક્તિશાળી અને અપ્રમાદી છે તેના માટે પણ દુરનુ-
ચર અર્થાત્ અતિક્ષણસાધ્ય છે, કારણ કે પહેલાંના તીર્થકરોં તેનુ આચરણ કરવાની જે વિધિ બતાવી છે તદનુસાર જ એનુ આચરણ કરવામાં આવે છે, માટે એનુ અનુષ્ઠાન કરવાનો ઉપદેશ વારંવાર કરવામા આવેલ છે. ॥ ૪૦ ૩ ॥

આ સંયમરૂપ માર્ગનુ આચરણ પ્રમાદના ત્યાગથી થાય છે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે—‘વિગિંચ મસસોણિયં’ इत्याદિ

મંથમી પોતાના શરીરના માંસ લોહીને મુકાયે, અર્થાત્ અન્ત-પ્રાન્ત આહા-

उपशमाश्रयणस्य फलं प्रदर्शयन् गृहीतमव्रज्यस्य मुमुक्षोः कर्तव्यमाह—
'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

मूलम्—तम्हा अविमणे वीरे सारए समिए सहिए सया
जए ॥ सू० २ ॥

छाया—तस्मात् अविमना वीरः स्वारतः समितः सदा यतेत ॥ सू० २ ॥

टीका—तस्मात्=उपशमाश्रयणात्, वीरः=कर्मविदारणसमर्थः अविमनाः=संय-
माराधने खेदरहितः, अत एव स्वारतः=सुष्ठु आरतः=यावज्जीवनमर्यादया संय-
माऽऽचरणे तत्परः, समितः=समितिसमन्वितः, सदितः=हितेन सह सहितः=सम्यग्-
ज्ञानादिगुणयुक्तः, सदा=सर्वकालं यतेत=संयमाराधनमारोढहनमतिशामक्रीकृत्य
तत्परिपालनार्थं प्रयतमानो भवेदित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयमानुष्ठानोपदेशे हेतुं प्रदर्शयन्नाह—'दुरणुचरो' इत्यादि।

उपशमसंयम के आश्रय करने के फलको दिखाने हुए सूत्रकार
जिसने वीक्षा अंगीकार कर ली हैं ऐसे मोक्षाभिलाषी मुनि का कर्तव्य
बतलाते हैं—'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

उपशमसंयम के आश्रय करनेसे कर्म को नष्ट करने की शक्ति से
संपन्न जीव संयम के आराधन करने में खेदरहित होकर यावज्जीवन
संयम के आराधना में तत्पर होता हुआ समिति से और सम्यग्दर्शन-
ज्ञानादि गुणों से युक्त होकर सर्वदा संयम के आराधनरूपी भार को
बहन करने की प्रतिज्ञा को अंगीकार कर उसके पालन करने में प्रयत्न
शील बने ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयम के अनुष्ठान करने के उपदेश में कारण प्रकट करते
हुए सूत्रकार कहते हैं—'दुरणुचरो' इत्यादि।

उपशम-संयमना आश्रय कर्त्तव्यता इत्यने देखाउता सूत्रकार जेहे वीक्षा अंगी
कार कइली छे जेवा मोक्षाभिलाषी मुनिनुं कर्त्तव्य छडे छे—'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

उपशम-संयमना आश्रय कर्त्तव्यता इत्यने नष्ट कर्त्तव्यता शक्तिवाणां एव
संयमनुं आराधन कर्त्तव्यता खेदरहित बहने यावज्जीवन संयमना आराधनमां
तत्पर बनने समितिशी अन्य सम्यग्दर्शनज्ञानादि गुणोधी युक्त बहने उभेशां
संयमना आराधनउधी लारने बदन कर्त्तव्यता नियमने अंगीकार कइने तेनुं
पालन कर्त्तव्यता प्रयत्नशील बने ॥ सू० २ ॥

बारबार संयमनु अनुष्ठान कर्त्तव्यता उपदेशमां कारण प्रकट कइने सूत्र-
कार छडे छे—'दुरणुचरो' इत्यादि।

સંયમી પોતાના શરીરના માસ લોહીને ચકાવે, અર્થાત્ અન-પ્રાંત આહાર.

अनादितपसा वा शरीरं शोषयेत्यर्थः । शरीरशोषणस्य फलमाह—‘एष’ इत्यादि ।
 एष = स्वशरीरशोषकः पुरुषः—मोक्षार्थी जनो द्रविकः=द्रवः=संयमः स विद्यते यस्या-
 मो, संयमीत्यर्थः, तथा—वीरः=कर्मविदारणसमर्थः, तथा—आदानीयः=भव्यानां ग्राह्यः
 श्रद्धेयवचन इत्यर्थः, व्याख्यातः=तीर्थकरैः कथितः । यश्च ब्रह्मचर्ये=ब्रह्मचर्यान्व्य-
 मदाव्रते संयमे वा उपित्वा=स्थित्वा—तत्परो भूत्वेति यावत्, समुच्छ्रयं=कर्मोपचयं
 धुनाति=हासयति—अवयतीत्यर्थः, सोऽपि—आदानीयो व्याख्यात इति सम्बन्धः । १४।

प्रमादरहितानां गुणान् प्रदर्श्य प्रमादवृत्तां दोषानाह—‘नित्तेहिं’ इत्यादि ।

मूलम्—नित्तेहिं पलिच्छिन्नेहिं आयाणसोयगडिण्ण वाले
 अव्वोच्छिन्नवंधणे अणभिक्रंतसंजोए तमंसि अविआणओ
 आणाए लंभो नत्थि-त्ति वेमि ॥ सू० ५ ॥

छाया—नेत्रैः प्रतिच्छन्नैः आदानस्रोतोऽवृद्धो बालः अव्युच्छिन्नवन्धनः अन-
 भिक्रान्तसंयोगः तमसि अविजानत आजाया लभो नास्ति—इति ब्रवीमि ॥ सू० ५ ॥

टीका—नेत्रैः=चक्षुरादिभिरिन्द्रियैः, प्रतिच्छन्नैः=स्वस्वविषयतोऽपवारितैः—
 आहारादिक से अथवा अनशननादिक तप के द्वारा शरीर का शोषण करे ।
 इस क्रिया का आचरण करनेवाला वह मोक्षाभिलाषी संयमी जीव
 कर्मों को नष्ट करने की शक्ति से समन्वित होता हुआ भव्य पुरुषों के
 लिये उपादेयवचनवाला होता है, ऐसा तीर्थङ्करों ने कहा है । तथा जो
 ब्रह्मचर्य में अथवा संयम में तत्पर होकर कर्मों को नष्ट करता है वह
 भी भव्यों के लिये माननीयवचनवाला होता है ॥ सू० ४ ॥

प्रमादमहित व्यक्तियों में क्या क्या दोष उत्पन्न होते हैं ? यह बात
 सूत्रकार कहते हैं—‘नित्तेहिं’ इत्यादि ।

अपने-२ विषयों से अपवारित—प्रतिरुद्ध चक्षुरादिक इन्द्रियों से युक्त
 शक्तिश्री अथवा अनशननादिक तप द्वारा शरीरनु शोषण करे.

आ कियात आगरान् कस्वावाणो ते भोक्षाभिलाषी संयमी एव कर्मोने
 नए द्दवानी शक्तिश्री तपस्य वह लव्य पुरुषो भाटे उपादेय वचनवाणो धर्ध लव्य
 छे, ओन निर्ध द्दोअं कहु छे, तथा ते ब्रह्मचर्यगा अने नयभगा तत्पर धर्ध
 कर्मोने नाश द्दरे छे ते पातु लव्याने भाटे माननीय-वचनवाणो धाय छे, ॥ सू० ४ ॥

प्रमादमहित व्यक्तिआभा शुं शुं दोष उत्पन्न धाय छे ? आ बात सूत्र-
 कार द्दरे छे—‘नित्तेहिं’ इत्यादि.

पानपोषाना विषयोधी निवारित यद्वा—आदि इन्द्रियोधी युद्धा यर्धने, ब्रह्म-

प्रतिस्फूर्द्युक्तोऽपि, ब्रह्मचर्ये स्थितोऽपि, आदानीयो भूत्वाऽपि, यदि-आदानस्रोतो-
गृद्धः=आदीयते=गृह्यते सावद्यक्रियाप्रवृत्तेन यत्-तदादानं=संसारबीजरूपं कर्म, तस्य
स्रोतांसि=शब्दादिविषयभोगाः, तत्र गृद्धः=आसक्तो भवति, तर्हि स बालः=मोहोद-
यान्मूढः सन् अव्युच्छिन्नबन्धनः=अव्युच्छिन्नं बन्धनं यस्य स तथोक्तः-अव्रुटित-
कर्मबन्धः स्यादित्यर्थः । किं च—स बालः अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यन्वयः ।
अनभिक्रान्तः=अनतिलङ्घितः संयोगः=मातापित्रादिसम्बन्धः, अथवा-असंयमसंब-
न्धो येन सः-अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यर्थः । यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद्
विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि समूढः कदापि=अतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं
नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसंसारिकसम्बन्धावसानं पश्यतीति वर्तुलार्थः ।

होकर भी, ब्रह्मचर्य में स्थित रह कर भी, तथा आदानीय-लोकमान्य हो
कर भी जो आदानस्रोतोगृद्ध, अर्थात् शब्दादि विषयभोगों में आसक्त
हो जाता है उस बाल-अज्ञानी का कर्मबन्ध कभी भी नष्ट नहीं होता,
और न वह माता-पिता आदि के सम्बन्ध को, अथवा असंयम के भाव
को ही अपने से दूर कर सकता है ।

तथा-अज्ञानरूप अंधकार में रहने वाला वह बाल अज्ञानी, कि जो
अपने हितको ही नहीं समझता है, भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेशरूप प्रव-
चनका लाभ नहीं ले सकता ।

विशेषार्थः—संयम का लक्षण सिद्धान्तकारों ने ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः
संयमः ' इन्द्रियों की वृत्ति का निरोध करना ही बतलाया है । इन्द्रियों की
वृत्ति का निरोध कर लेने पर भी यदि संयमी व्यक्ति के हृदय में उनके
विषयभूत पदार्थों के सेवन के प्रति लालसा याने रागभाव बना हुआ है

अर्थमां स्थित रहने अने आदानीय-लोकमान्य पणु यधने ने आदानस्रोतो-
गृद्ध-अर्थात् शब्दादि विषयभोगोमां आसक्त गनी जय छे ते पाण-अज्ञानीने।
कर्मबन्ध क्यारे पणु छूटतो नथी अने ते माता-पिता-आदिना संयधने अथवा
असंयमभावने पोताथी द्वर करी शकतो नथी. तथा अज्ञानरूप अंधकारमां रडे-
नार ते पाण अज्ञानी ने पोताना छितने पणु समजतो नथी तेने लगवान
तीर्थङकरना उपदेशरूप प्रवचनने लाभ पणु भणी शकतो नथी.

विशेषार्थः—संयमनुं लक्षणु सिद्धान्तकारेअ ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः संयमः '
इन्द्रियोनी वृत्तिने निरोध करेवो, तेभ गतावेव छे इन्द्रियोनी वृत्तिने निरोध
करी लेवा छता पणु ने संयमी व्यक्तिना हृदयमां तेना विषयभूत पदार्थोना
सेवन करवानी लालसा ओटले रागभाव थाय तो शास्त्रकारनी दृष्टिमां ते व्यक्ति

તસ્ય વાચ્યમ્ય તમસિ=મોહરૂપે ભાગ્યન્ધકારે વર્તમાનસ્ય, અત એવ-અવિજાનતઃ= આત્મદિત્તમનવવૃદ્ધ્યમાનમ્ય આશ્રયાઃ=ભગવત્તીર્થકરોપદેશરૂપસ્ય પ્રવચનસ્ય લાભો નામ્તિ । અનાદિમિથ્યાત્વપ્રતિચ્છન્નવિવેકજ્ઞાનસ્ય મહામોહવશાદાઽઽર્હતપ્રવચન-શ્રવણે પ્રવૃત્ત્યભાવાદ્ દેયોપાદેયવિવેકાનર્હત્વાચ્ચ સમ્યક્ત્વલાભાસંભવ इति ભાવઃ । યદ્વા-આજ્ઞા=વૌધિઃ-સમ્યક્ત્વમ્, તસ્યા લાભો નાસ્તીત્યર્થઃ । इति=एतद् प्रवीमि यथा भगवद्वचनं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ મૃ૦ ૫ ॥

તો શાસ્ત્રકારોંની દૃષ્ટિमें વહ વ્યક્તિ અસંયમી હી હૈ । વહ उनर पदार्थों का सेवन नहीं कर रहा है, ब्रह्मचर्य जैसे महाव्रतमें वह स्थित हो, अन्य भव्य प्राणी भी उसके उपदेश को श्रद्धाकी दृष्टि से देखते और मानते हों; तो भी उसके संसार के कारणभूत कर्मों का बन्ध कभी भी नष्ट नहीं हो सकता । ऐमा व्यक्ति एक प्रकार का 'वकृत्ति' ही है । वह उपर से शुभ-निर्दोष प्रतीत होते हुए भी भीतर से अशुभ-मलिन ही हैं । दिखाने के लिये ही उसने वाच्यरूपमें माता-पितादिक अथवा असंयम-भावों से संबंध छोड़ रक्खा है, भीतर से नहीं, अतः ऐसे व्यक्तियों को-कि जिन्हें वास्तविक रीति से हेयोपादेय का विवेक नहीं है, जो यह भी नहीं समझते हैं कि मेरा स्वयंका हित किस में है ? इतने गहरे अंध-कारमें पड़े हुए हैं उन्हें वीतराग प्रभु की वाणीका रसास्वाद कभी भी नहीं आ सकता ।

'आदीयते यत्-तत् आदानम्' अर्थात्-साવચ ક્રિયા में પ્રવૃત્તિ રાખ-

અચયમી ન છે, ભલે તે પદાર્થોનું સેવન તે ન કરતો હોય, બ્રહ્મચર્ય જેવા મહા વ્રતમાં ભલે તે સ્થિત હોય, ખીજા ભવ્ય પ્રાણી પણ તેના ઉપદેશને શ્રદ્ધાની દૃષ્ટિથી દેખતા અને માનતા હોય, તો પણ તેના સંસારના કારણભૂત કર્મોનો બંધ કોઈ વળત પણ નષ્ટ થતો નથી એવી વ્યક્તિ એક પ્રકારના 'વકૃત્તિ' ન છે. તે ઉપરથી શુભ-નિર્દોષ દેખાતા છતાં પણ અંતરથી અશુભ-મલિન ન છે. દેખાડવાને ન માટે તેણે બાહ્યરૂપમાં માતા-પિતાદિક, અથવા અસંયમ બાવોથી ગંબધ છોડી નીધેલ હોય છે, પણ અંતરથી નહિ, માટે આવી વ્યક્તિ-ઓને-કે જેઓને વાસ્તવિક રીતિથી હેયોપાદેયનો વિવેક હોતો નથી, અને જેઓ એટલા ગાઢ અધકારમાં પડેલા હોય છે કે મારું સ્વયંનું-પોતાનું હિત શેમાં છે ? એની પણ જેઓને ગમજ હોતી નથી; તેઓને વીતરાગ પ્રભુની વાણીનો રસાસ્વાદ કયાદે પણ આવી શકતો નથી.

આદીયતે ચત તત્ આદાનમ્—અર્થાત્-સાવચ ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ રાખનાર પ્રાણી હારા જે મધ્યમ કર્મમાં આવે છે તે આદાન-કર્મ છે, અને તે સંસારના ખીજરૂપ

नेवाले प्राणी के द्वारा जो ग्रहण किया जाता है वह आदान-कर्म है, और वह संसार का बीजरूप है। बीज से ही वृक्ष तैयार होता है, बिना बीज के नहीं; यह संसाररूप महावृक्ष भी इस कर्मरूप बीज का ही फल है। इस से यह फलितार्थ निकलता है कि बीज की किसी निमित्त से अंकुरोत्पादन शक्ति विनष्ट हो जाती है तब वह जिस प्रकार अपने कार्य को नहीं कर सकता है उसी प्रकार राग-द्वेषादिक कषायों के अभाव में गृहीत कर्म-णवर्गणाओं की भी जीवको परतन्त्रादिरूप करने की, अथवा जीव के ज्ञानादिक गुणों का घात आदि करने की शक्ति नष्ट हो जाती है। इस आदान का स्रोत शब्दादिक इन्द्रियों के विषयभोग ही हैं, उनमें जो गृह-आसक्त है वह आदानस्रोतोगृह है। जो मोह के उदय से पर-पदार्थों में तल्लीन है एवं हेयोपादेय के ज्ञान से विकल है वही यहां पर बाल है। जो मोहाधीन-आत्मज्ञान से रहित है-चाहे वह व्याकरणादिक एवं न्यायशास्त्रादि ग्रन्थों का अध्येता भी क्यों न हो वह बाल-मूर्ख ही है। संयम को ग्रहण कर पश्चात् प्रबल मोह के उदय से असंयमभाव को प्राप्त करनेवाले बड़े से बड़े विद्वान् भी शास्त्रों में 'बाल' नामसे वर्णित किये गये हैं। यही बात टीकाकार इस प्रकार से प्रकट करते हैं—

छे भीजथी ज वृक्ष तैयार थाय छे, भीज बिना नहि. आ संसाररूप महा-वृक्ष पणु आ कर्मरूप भीजनु ज रूप छे. आथी ओ साराश निकणे छे કે—
न्याये कोर्छ पणु निमित्तथी भीजनी अकुरोत्पादनशक्ति नष्ट थर्छ जय छे
त्यारे ते जे प्रकारे पोताना कार्यने नथी करी शकतुं ते प्रभाणु रागद्वेषादिक
कषायेना अभावमां गृहीत कर्मणवर्गणांओनी पणु जवने परतन्त्रादिरूप
करवानी, अथवा जवना ज्ञानादिक गुणोना घात आदि करवानी शक्तिनो नाश
थाय छे. आ 'आदान'नुं स्रोत (भार्ग) शब्दादिक इन्द्रियोना विषयभोग ज
छे, आमां जे गृह-आसक्त छे ते आदानस्रोतोगृह छे, ओटले कर्म आववाना
कारणोमा गृह रहि छे जे मोहना उदयथी परपदार्थोमा आसक्त छे तेमज
हेयोपादेयना ज्ञानथी विकल छे ते ज आ ठेकाणु जाण छे. जे मोहाधीन-आत्म-
ज्ञानथी रहित छे, लले ते व्याकरणादिक अने न्याय शास्त्रोना ग्रंथोना अभ्यासी
केम न होय तो पणु ते जाण-मूर्ख ज छे. मोटाभा मोटो विद्वान पणु संय-
मने अछणु करी पाछणथी प्रणज मोहना उदयथी असंयमलावने प्राप्त करवा-
वाजो मोटाभा मोटो विद्वान पणु शास्त्रोमा 'जाण' आ नामथी कडेवामां
आओ छे. ओ ज वातने टीकाकार आ साराशथी प्रकट करे छे—

“યઃ પૂર્વે ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ પશ્ચાદ્ વિષયભોગાસક્તો ભવતિ ચેત્તર્હિ સ મૃદઃ કદાપિ=શતસહસ્રમવાન્તેઽપિ કર્મવન્ધોચ્છેદં નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિકસંબંધાવસાનં પश्यतीતિ ।”

જો પહેલે દીક્રા અંગીકાર કર કે ખી ફિર પીછે મોહ કે પ્રવલ ઉદય સે પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષયભોગોં મેં આસક્ત હો જાતા હૈં વહ મૃદ હૈં-વાલ હૈં । ઉસકે કર્મ કે વન્ધ કા ઉચ્છેદ-અવસાન લાઘવોં અર્થોં મેં ખી નહીં હો સક્તા, ઔર ન વહ માતાપિતાદિકરૂપ સાંસારિક સંબંધ કા અંત હી કર સક્તા હૈં । ‘તમસિ’ યહ પદ ગાઢ અન્ધકાર કા વાચક સ્વસમી વિભક્તિ કા ણક વચન હૈં । જિમ પ્રકાર અન્ધકાર મેં વર્તમાન વ્યક્તિ અપને હાથ પર ખી રમ્બી હુઈ વસ્તુ કા અવલોકન નહીં કર સક્તા હૈં, ટીક ઇસી પ્રકાર મોહરૂપ ભાવાન્ધકાર મેં રહ્યા હુઆ વ્યક્તિ ખી અપની આત્મા મેં હી સમાયે હુઆ અપને હિતરૂપ કર્તવ્ય કો નહીં જાન સક્તા હૈં । એસે જીવ કે લિયે ભગવાન્ તીર્થંકુર પ્રભુ કી ઉપદેશરૂપ વાણી કા ખી લાભ નહીં હો સક્તા હૈં, કારણ કિ અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ સે ઉસકા વિવેકજ્ઞાન લુપ્ત હો રહ્યા હૈં, ઔર પ્રવલ મોહ કે ઉદય સે અર્હન્તપ્રભુ કી વાણી કા લાભ લેને મેં અસમર્થ બન રહ્યા હૈં, અતઃ ઉસ કી ઉનકી વાણીકે શ્રવણ કરને મેં અન્નરંગ

“યઃ પૂર્વે ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ પશ્ચાદ્ વિષયભોગાસક્તો ભવતિ ચેત્તર્હિ સ મૃદઃ કદાપિ=શતસહસ્રમવાન્તેઽપિ કર્મવન્ધોચ્છેદં નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિક-સન્નવાવસાનં પश्यतीતિ ।”

જે પહેલા દીક્રા અંગીકાર કરીને પછી મોહના પ્રબળ ઉદયથી પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયભોગોમા આગ્રસ્ત થઈ જાય છે તે મૃદ છે-બાળ છે, તેના કર્મના બંધનો ઉચ્છેદ લાખો ભવોમાં પણ નથી થતો, તેમ જ તે માતાપિતાદિરૂપ સંબંધનો પણ અંત લાવી શકતો નથી

“તમસિ” આ પદ ગાઢ અંધકારનું વાચક સાતગી વિલક્ષિતનું એકવચન છે જે પ્રકારે અંધકારમાં કોઈ માણસ પોતાના હાથ ઉપર પણ ગળેલી વસ્તુને દેખી શકતો નથી તે પ્રકારે મોહરૂપ ભાવ-અંધકારમા રહેલો જીવ પણ આત્મામા રહેલાં પોતાના હિતરૂપ કર્તવ્યને જાણી શકતો નથી, એવા જીવને ભગવાન તીર્થંકુર પ્રભુની ઉપદેશ વાણીનો પણ લાભ થઈ શકતો નથી, કારણ કે અનાદિ કાળમા મિથ્યાત્વથી તેનું વિવેકજ્ઞાન લુપ્ત થયેલું છે, અને પ્રબળ મોહના ઉદયથી તે અર્હન્તપ્રભુની વાણીનો લાભ લેવામા અશક્ત બનેલ છે, તેથી તેને તેમની વાણીનું શ્રવણ કરવામાં અંતરંગથી પ્રવૃત્તિ પણ થતી નથી, અથવા હેયો

ભાવતમસિ વર્તમાનસ્ય ચાલસ્ય કથં સમ્યક્ત્વલાભાસમ્ભવઃ ? इति जिज्ञासा-
यामाह—‘जस्स नत्थि’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ પુરા પચ્છા સજ્ઞે તસ્સ કુઓસિયા ?! ૬।

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ પુરા પશ્ચાત્ મધ્યે તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યસ્ય=મોહતમસિ વર્તમાનસ્ય જીવસ્ય પુરા=પૂર્વસ્મિન્ કાલે પશ્ચાત્=મવિષ્યત્કાલે નાસ્તિ=પૂર્વ સમ્યક્ત્વં નાભૂત્, અગ્રેऽપિ ન તદ્ મવિષ્યતિ, તસ્ય મધ્યે =મધ્યમવે=વર્તમાનજન્મનિ, કુતઃ રયાત્=કથં ભવેત્-ન ભવેદિત્યર્થ । “આદા-વન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા ” ઇતિ લોકન્યાયસ્ય સર્વાનુભવસિદ્ધત્વા-દિતિ ભાવઃ । અવ્યવહારરાશ્યપેક્ષયૈતત્ ।

સે પ્રવૃત્તિ હી નહીં હોતી । અથવા હેયોપાદેય કે વિવેક કે અયોગ્ય હોને સે એસે મનુષ્ય કો સમ્યક્ત્વ કા લાભ અસમ્ભવ હૈ, યહ બી “ આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ ” હસ વાક્ય કા અર્થ હોતા હૈ, ક્યોંકિ-‘ આજ્ઞા ’ કા દ્વિતીય અર્થ બોધિ-સમક્રિત હૈ ઉસકા લાભ એસે મનુષ્ય કો હોતા નહીં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

માવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ ચાલ જીવ સમ્યક્ત્વ કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ । હસીકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરતે હૈ—‘ જસ્સ નત્થિ પુરા ’ ઇત્યાદિ ।

મોહરૂપી અન્ધકાર મેં રહનેવાલા અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમેં ઔર આગામી જન્મમેં સમક્રિત કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ તો મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મ મેં વહ સમક્રિત કા લાભ કર લેગા યહ કૈસે સમ્ભવ હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । “ આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમા-નેऽપિ તત્તથા ” જિસકી સત્તા આદિ ઔર અન્ત મેં નહીં હૈ ઉસકી સત્તા વર્તમાન મેં બી નહીં હોતી હૈ । યહ એક સામાન્ય સા નિયમ હૈ ।

પાદેયના વિવેકને અયોગ્ય હોવાથી આવા મનુષ્યને સમ્યક્ત્વનો લાભ અસંભવ છે આ પછુ “ આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ ” આ વાક્યનો અર્થ થાય છે, કેમ કે ‘ આજ્ઞા ’ નો બીજો અર્થ બોધિ એટલે સમક્રિત છે, તેનો લાભ આવા મનુષ્યને થતો નથી. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

લાવ-અંધકારમાં રહેલાં બાળ છવ સમ્યક્ત્વના લાભથી વચિત રહે છે આની પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરે છે-‘ જસ્સ નત્થિ પુરા ’ ઇત્યાદિ.

મોહરૂપી અંધકારમાં રહેનાર અજ્ઞાની છવ પૂર્વ જન્મમાં અને આવતા જન્મમાં સમક્રિતના લાભથી વચિત રહે છે, તો પછી મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મમાં તે સમક્રિતનો લાભ કરી લેશે, તેનો સંભવ કેવી રીતે હોય ? અર્થાત્ સંભવ હોતો નથી. “ આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા ”-જેની સત્તા આદિ અને અંતમાં નથી તેની સત્તા વર્તમાનમાં પછુ નથી હોતી, એ એક સામાન્ય નિયમ છે.

યદ્વા-યસ્ત્વતીતં મુગ્ધં ન સ્મરતિ, નાપિ ભવિષ્યત્કાલિકં વાઙ્મતિ, તસ્ય વર્ત-
માનમુખેઽપિ રાગો નૈવ રયાદિત્યાહ-‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ । યસ્ય ભોગવિપાકં
જાનતઃ, પુરા=પૂર્વ-પૂર્વશુક્તસુખાનુસ્મરણં નાસ્તિ, પથાત્=પથાદ્વાવી-આગામિ-
ભોગાભિલાષો નાસ્તિ. તસ્ય મધ્યે=વર્તમાનકાલે કુતઃ ભોગેચ્છા સ્યાત્ । મોહનીય-
કર્મોપશમાત્તસ્ય ભોગેચ્છા નૈવ ભવેદિતિ ભાવઃ ॥ મૃ ૬ ॥

પ્રશ્ન—જિન્હોં ને પૂર્વ મેં સમકિત પ્રાપ્ત નહીં કર્યા હૈં ઓર
ભવિષ્ય મેં જો નહીં પ્રાપ્ત કરેંગે, એસે હી જીવ તો વર્તમાનમેં સમ-
કિત કી પ્રાપ્તિ કરતે હૈં । યદિ “ આદાવન્તેઽપિ યન્નાસ્તિ વર્તમા-
નેઽપિ તત્તથા ” યહ અટલ નિયમ માન લિયા જાવેગા તો ફિર કિસીં ખી
જીવકો સમકિત કા લાભ નહીં હો સકેગા ?

ઉત્તર—યહ કથન અવ્યવહાર રાગિમેં રહેતેવાલે જીવોં કી અપેક્ષા
સે હી સમઘના ચાહિયે । વ્યવહાર રાગિમેં રહે હુણ જીવોંકી અપેક્ષાસે નહીં ।

અથવા ઇસ મૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસ પ્રકારસે ખી હોતા હૈ—

‘ભોગોં કૈ વિપાક કો મહા કષ્ટપ્રદ જાન કર જો પૂર્વમેં ભોગે હુણ પાંચ
ઇન્દ્રિયોંકૈ વિપયસુખ કા સ્મરણ નક નહીં કરના હૈં ઓર ઉસ સુખ કી
ભવિષ્યત્કાલિક પ્રાપ્તિ કી વાઙ્મતિ સે સર્વથા દૂર હૈં, એસે વ્યક્તિ કો વર્ત-
માનકાલ મેં પ્રાપ્ત વહ સુખ ભોગેચ્છારૂપ રાગ કા કારણ કૈસે હો જકના
હૈં ? અર્થાત્ નહીં હો સકના ।

પ્રશ્ન—લેઓએ પૂર્વમા સમકિત પ્રાપ્ત નથી કર્યું અને આવના કાળમાં પણ
લેઓ સમકિત પ્રાપ્ત કરશે નહિ, આ પ્રકારના જ હવે વર્તમાનમા સમકિતની પ્રાપ્તિ
કરે છે. તો “ આદાવન્તેઽપિ યન્નામિ વર્તમાનેઽપિ તત્તથા ” આ અટલ નિયમ માન-
વામાં આવે તો પછી કોઈ પણ હવેને સમકિતનો લાભ થઈ શકે નહિ ?

ઉત્તર—આ કથન અવ્યવહાર-રાગિમાં રહેનાર હવેના અપેક્ષાર્થી જ
સમજવું જોઈએ, વ્યવહાર-રાગિમાં રહેતાં હવેના અપેક્ષાએ નહિ.

અથવા આ મૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ પ્રકારે પણ થાય છે—લોગોના વિષાદને મહા
કષ્ટપ્રદ બનાવેલે પૂર્વમા ભોગવેલા પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિપયસુખનું સ્મરણ સુદાંત
કરતો નથી, અને તે સુખની ભવિષ્યમા પણ પ્રાપ્તિની વાતથી સર્વથા દૂર છે,
એવા હવેને વર્તમાનકાળમા પ્રાપ્ત તે સુખ ભોગેચ્છાદિ ચગતુ કારણ કેવીરીતે
કાંઈ શકે ? અર્થાત્ નથી થતું.

યસ્ય કાલત્રયેऽપિ ભોગેચ્છા નાસ્તિ, સ કિંભૂતઃ સ્યાદિત્યાહ—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે હુ પન્નાણમંતે બુદ્ધે આરંભોવરણ । સમ્મમેયંતિ પાસહ । જેણ વંધં વહં ઘોરં પરિયાવં ચ દારુણં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—સ હુ પ્રજ્ઞાનવાન્ બુદ્ધઃ આરમ્ભોપરતઃ । સમ્યગેતદિતિ પશ્યત । યેન વન્ધં વંધં ઘોરં પરિતાપં ચ દારુણમ્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—હુ=યતઃ—ભોગાભિલાપરહિતઃ, તસ્માત્ સ પ્રજ્ઞાનવાન્=જીવાજીવાદિ-પદાર્થાનાં સમ્યગ્જ્ઞાતા, અત એવ બુદ્ધઃ=તત્ત્વજ્ઞઃ, આરમ્ભોપરતઃ=આરમ્ભઃ=સાવધ-વ્યાપારસ્તસ્માદુપરતો=નિવૃત્તઃ । એતદ્=આરમ્ભોપરમણં, સમ્યક્=સમ્યક્ત્વમસ્તિ । સમ્યક્ત્વે સતિ હિ આરમ્ભનિવૃત્તિરુપજાયતે, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વકાર્યતયાઽરમ્ભોપ-

વાત મી ટીક હૈ; જિસકે મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ હો ચુકા હૈ ઉસ વ્યક્તિ કે લિયે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોં કો ભોગને કી લાલસા-હો હી કૈસે સકતી હૈ? ભોગેચ્છા યહ મોહનીય કર્મ કા હી એક કાર્ય હૈ, અતઃ જબ મોહનીય કર્મ હી ઉપશમ અવસ્થામેં હૈ તવ ભોગેચ્છારૂપ કાર્ય કા આવિર્ભાવ હો મી કૈસે સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જિસકે ત્રિકાલ મેં મી ભોગેચ્છા નહીં હૈ ઉસકી પ્રશંસા કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

ભોગોં કો ભોગને કી અભિલાષા સે રિત્ત હોને કે કારણ વહ સંયમી જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોં કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા જ્ઞાતા વન કર તત્ત્વજ્ઞ હોતા હુઆ આરમ્ભ-સાવધવ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિ-સે પરે હો જાતા હૈ, યહી સમ્યક્ત્વ હૈ । યદ્યપિ આરમ્ભનિવૃત્તિ, સમક્રિત કા કાર્ય હૈ; ક્યોં

વાત પણ ઠીક છે, જેને મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થયેલ છે તે વ્યક્તિને માટે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોને ભોગવવાની લાલસા જ કેવી રીતે થઈ શકે ?, ભોગેચ્છા તે મોહનીય કર્મનું જ એક કાર્ય છે, માટે ન્યારે મોહનીય કર્મ જ ઉપશમ અવસ્થામાં છે ત્યારે ભોગેચ્છારૂપ કાર્યનો આવિર્ભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ? અર્થાત્—થઈ શકતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેને ત્રણ કાળમાં પણ ભોગેચ્છા નથી તેની પ્રશંસા કરતાં સૂત્રકાર કહે કે—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ.

ભોગોને ભોગવવાની અભિલાષાથી રિત્ત હોવાના કારણે જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોના વાસ્તવિક સ્વરૂપના જ્ઞાતા તે સંયમી તત્ત્વજ્ઞાનીને આરંભ-સાવધ વ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિથી દૂર થઈ જાય છે, એ જ સમ્યક્ત્વ છે, જે કે આરંભની

રમણમપિ સમ્યક્ત્વગદ્વ્યવપદેશ્યમિતિ ભાવઃ । ઇતિ=એવં પશ્યત=યૂયં જાનીત । યતઃ-
 યેન=આરમ્ભોપરમણરૂપેણ કારણેન ધોરં=ધોરદુઃસ્વજનકં કર્મવન્ધં, વધં, દારુણં=
 દુઃસહં પરિતાપં=શારીરં માનસં ચ દુઃખં નાપ્નોતીત્યર્થઃ, તસ્માત્ સકલસાવધવ્યાપા-
 રેભ્યો નિવર્તિતવ્યમિતિ ભાવઃ । યદ્વા-યેન=આરમ્ભેણ સાવધાનુષ્ઠાનેન ધોરં વન્ધં વધં
 દારુણં પરિતાપં ચ પ્રાપ્નોતિ તસ્માદારમ્ભાદુપરતો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

કિ સમક્તિ કે હોને પર હી આરમ્ભનિવૃત્તિ હોતી હૈ, તો બી કારણમેં
 કાર્ય કે ઉપચાર સે હી આરમ્ભનિવૃત્તિ કો સમક્તિ કહા ગયા હૈ, એસા
 સમજના ચાહિયે ।

જીવ હસ સાવધ વ્યાપાર કે પરિત્યાગ સે હી કર્મવન્ધ, વધ ઔર
 ઔર દુઃસહ શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોં સે સદા બચતા હૈ, હસ લિયે
 આત્મહિનૈપી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ હસ સાવધવ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે
 સદા દૂર રહે ।

વિશેષાર્થ—યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ સાવધ વ્યાપાર સે જીવોં
 કે પરિણામોં મેં દુર્વૃત્તિ સદા જાગૃત રહતી હૈ । ડસસે જીવ તરહ-તરહ
 કે સાધનોં કે જુટાને મેં હી અપને જીવન કો વિતા દેતા હૈ । એસા કયોં
 હોતા હૈ ? જવ હમ હસકા સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણ કરતે હૈ તો હમેં હસ કી તહ
 કા પતા અચ્છી તરહ સે લગ જાતા હૈ કિ વહ યહ વિષયભોગેચ્છા હી હૈ ।

હસકે પંદમેં ફસા હુઆ જીવ જ્ઞાતા એવં તત્ત્વજ્ઞ બનને કા ઢોંગ હી
 કરતા હૈ । ડસકે પાસ મેં નિજ કે હિત કે લિયે કુછ બી નહીં હોતા ।

નિવૃત્તિ સમક્તિનુ કાર્ય છે, કારણ કે સમક્તિના થવાથી જ આરભનિવૃત્તિ થાય
 છે, તે પણ કારણમા કાર્યના ઉપચારથી આરભનિવૃત્તિને જ સમક્તિ કહેવામા
 આવેલ છે, એમ સમજવુ નેમએ

હવ આ સાવધ-વ્યાપારના પરિત્યાગથી કર્મબંધ, વધ અને દુઃસહ શારી-
 રિક માનસિક કષ્ટોથી મદા બચે છે, માટે આત્મહિતૈર્પીનુ કર્તવ્ય છે કે તે સદા
 આ સાવધ-વ્યાપારથી દૂર રહે.

વિશેષાર્થ—એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે સાવધ વ્યાપારથી હવેના પરિ-
 ણામોમા સદા દુર્વૃત્તિ જાગૃત રહે છે, તે થકી હવ તરહ-તરહના સાધનોને
 એકત્રિત કરવામા જ પોતાના હવનને વ્યતીત કરી દે છે. એમ કેમ બને છે ?
 બ્યારે અમે તેનું સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણ કરીએ છીએ ત્યારે અમોને ચોક્કસપણે તેનું
 અમાધાન મળી જાય છે કે તે આ વિષય ભોગો જ છે

એની પકડમા ફસેલા હવ જાતા અને તત્ત્વજ્ઞ બનવાના ઢોંગ જ કરે છે
 તેની પાસે પોતાના હિતને માટે કાઈ પણ હોતું નથી, પોતાના વિષય કપાયની

અપને વિષયકષાય કી પુષ્ટિ જૈસે બી હો, ડસકે લિયે વહ વિહિત અ-વિહિત સવ તરહ કે ડપાયોં કો કામ મેં લાતા હૈ । ડપર સે હી વહ સાધુ-વેષધારી હૈ, બીતર સે વહ અપને સચ્ચે હિતકે સાધનોં કા નાશ કરતા હૈ । સંસાર મેં ધર્મકા પતન બી ઇસી કી ડોટ લેકર હુપ હેં ડૌર હો રહે હેં તથા ડાગે બી હોંગે ।

યહ વઢી વલવતી વ્યાધિ હૈ । ઇસકી ચિકિત્સા સદ્ગુરુ હી કર સકતે હેં, અતઃ ડનકા કથન હૈ કિ સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જીવ ઇસકી ચિકિત્સા કરાને કે લિયે અપને મેં યોગ્યતા લાવે । યહ યોગ્યતા ંક હી ભવમેં જીવ કો પ્રાપ્ત નહીં હો સકની । જો બી વર્તમાન ભવમેં યોગ્ય હુપ હેં વે સવ પૂર્વકે આરાધક જીવ થે, અતઃ ઇસ વ્યાધિ કી ચિકિત્સા કરાને કી યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરને કી જીવમેં કટિબદ્ધતા હોની ચાહિયે । યહ કટિબદ્ધતા હી સમકિત હૈ, ચાહે યહ સ્વભાવ સે હો યા પરકે ડપદેશ સે ।

યહ તો નિશ્ચિત હૈ કિ ઇસ પ્રકાર કી યોગ્યતા સે સંપન્ન આત્મા ભોગોં મેં લાલસાવાલા નહીં હોતા । ડસકી પ્રવૃત્તિ વહાં પર તપે હુપ લોહે પર પાંવ રખને જૈસી હી હોતી હૈ, અતઃ ધીરે ર અપની ડન્નતિ કરતા હુઆ વિષય-ભોગેચ્છા સે સદા કે લિયે દૂર હો જાતા હૈ ડૌર સાવચ વ્યાપારોં કો ડનેક

પુષ્ટિ માટે તે વિહિત અવિહિત ંધા પ્રકારના ડપાયો ડરે છે. ડપરથી જ તે સાધુવેષધારી છે પણ અતરથી તે પોતાના સાચા હિતના સાધનોનો નાશ જ કરે છે. સંસારમાં ધર્મનું પતન પણ આવા જીવોના નિમિત્તે થયું છે, થઈ રહેલું છે અને આગળ પણ થશે

આ મોટી ંજવાન વ્યાધિ છે એની ચિકિત્સા સદ્ગુરુ જ કરી શકે છે. માટે તેમનું કથન છે-સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જીવ તેની ચિકિત્સા કરાવવા માટે પોતાનામાં યોગ્યતા લાવે. યોગ્યતા એક જ ભવમા જીવને પ્રાપ્ત થતી નથી. જે વર્તમાન ભવમા યોગ્ય થયેલ છે તે ંધા પૂર્વના આરાધક જીવ હતા, માટે આ વ્યાધિની ચિકિત્સા કરાવવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરવા માટે જીવમાં કટિબદ્ધતા હોવી જોઈએ આ કટિબદ્ધતા જ સમકિત છે, ભલે તે સ્વભાવથી હોય અગર પારકાના ડપદેશથી હોય.

આ નિશ્ચિત છે કે આવી યોગ્યતાથી સંપન્ન આત્મા ભોગોમા લાલસા રાખનાર નથી થતા તેની પ્રવૃત્તિ ત્યાં તપેલા લોઢા ડપર પગ રાખવા જેવી થાય છે, માટે તે ધીરે ધીરે પોતાની યુક્તિ-પ્રયુક્તિથી વિષય ભોગેચ્છાથી સદાને માટે દૂર

કિં કૃત્વા સાવધવ્યાપારં પરિત્યજેદિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘પલિચ્છિદિય’ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પલિચ્છિદિય બાહિરંગં ચ સોયં, નિકમ્મદંસી ઇહ મચ્ચિવણ્હિ ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—પ્રતિચ્છિદ્ય વાહ્યકં ચ સ્રોતઃ નિષ્કર્મદર્શીં ઇહ મર્ત્યેષુ ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—વાહ્યકં=વહિર્ભવં હિરણ્યરજતમાતાપિત્રાદિસમ્બન્ધરૂપં, યદ્વા-પ્રાણા-તિપાતાદિકં સ્રોતઃ=આસ્રવં કર્મવન્ધકારણં, ચ-શબ્દાદ્ રાગદ્વેષાત્મકં વિપયાભિલાપ-રૂપં વા આન્તરં સ્રોતો વા પ્રતિચ્છિદ્ય=પતિરુદ્ધ્ય, ઇહ=અસ્મિન્ લોકે, મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ મધ્યે નિષ્કર્મદર્શીં=કર્મણો નિષ્ક્રાન્તઃ નિષ્કર્મા=મોક્ષઃ, તં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ નિષ્કર્મદર્શીં=મોક્ષાભિલાપી સન્ સાવધવ્યાપારં પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ઇહ=અસ્મિન્ લોકે મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ વાહ્યકં સ્રોતઃ પ્રતિચ્છિદ્ય નિષ્કર્મદર્શીં ભવતિ, મોક્ષં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

પ્રકાર કે ધોર વધ, બંધન ઓર દારુણ પરિતાપ કા કારણ સમજા કર ઉનસે સર્વથા વિરક્ત હી રહતા હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

इसी विषयकी पुष्टि करते हुए सूत्रकार कहते हैं-‘पलिच्छिदिय’इत्यादि

माता-पिता आदिक सचित्त, सुवर्ण-रजतादिक अचित्त परिग्रहरूप अथवा हिंसादिक पापरूप बहिरङ्ग स्रोतका एवं रागद्वेष अथवा विषयाभिलाषरूप अन्तरंग स्रोत का निरोध कर इस लोक के अन्दर मनुष्योंमें बसनेवाला निष्कर्मदर्शी--मोक्षाभिलाषी जीव सावध व्यापार का परित्याग करे ।

शास्त्रकारोंने परिग्रह दो प्रकार का बतलाया है । (१) बाह्य परिग्रह और (२) अन्तरङ्ग परिग्रह । धनधान्यादिक और मातापितादिक बाह्य परिग्रह है, विषयाभिलाषादिक तथा द्वेषादिक अन्तरङ्ग परिग्रह है । ‘परिग्रह’

થઈ જાય છે, અને સાવધ વ્યાપારોને અનેક પ્રકારના ધોર બધ, બંધન અને દારૂણ-પરિતાપનુ કારણ સમજીને તેનાંથી સર્વથા વિરક્તજ રહે છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

આ વિષયની પુષ્ટિ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘પલિચ્છિદિય’ ઇત્યાદિ.

માતા-પિતા-આદિક સચિત્ત, સુવર્ણ રજતાદિક અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ અથવા હિંસાદિક-પાપરૂપ બહિરંગ સ્રોત (માર્ગ) નો તેમજ રાગ દ્વેષ અથવા વિષયાભિલાષારૂપ અંતરંગ સ્રોતનો નિરોધ કરી આ લોકની અદર મનુષ્યોમાં વસવાવાળો નિષ્કર્મદર્શી-મોક્ષાભિલાષી જીવ સાવધ વ્યાપારનો પરિત્યાગ કરે.

શાસ્ત્રકારોએ પરિગ્રહ બે પ્રકારનો બતાવેલ છે (૧) બાહ્ય પરિગ્રહ અને (૨) અંતરંગ પરિગ્રહ. ધન-ધાન્યાદિક અને માતા-પિતાદિક બાહ્ય પરિગ્રહ છે, અને વિષયાભિલાષાદિક, તથા રાગ-દ્વેષાદિક અંતરંગ પરિગ્રહ છે. પરિગ્રહ શબ્દનો

शब्द का अर्थ यही है कि जिससे जीव कर्मों का ग्रहण करे। अर्थात् ममत्वभावसे ग्रहण करने को परिग्रह कहते हैं। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये सब अन्तरङ्ग-परिग्रह हैं। इन्हींसे जीव नवीन २ कर्मों का बन्ध किया करता है।

जिस प्रकार नौकामें पानी आने का कारण छिद्र होता है, उसी प्रकार आत्मामें नवीन २ कर्मों के आनेके लिये परिग्रह छिद्र के स्थानापन्न माना गया है। जैसे-मिथ्यादर्शनजन्य कर्मों का बंध (१) प्रथम गुणस्थान तक; अविरतिजन्य कर्मों का बन्ध (४) चतुर्थ गुणस्थान तक, प्रमादजन्य कर्मों का बन्ध (६) षष्ठ गुणस्थान तक, कषायजन्य कर्मों का बन्ध (१०) दशवें गुणस्थान तक, और योगजन्य कर्मों का बन्ध सयोगकेवलीनामक (१३) तेरहवें गुणस्थान तक जीवोंके होता है। स्रोत शब्द का अर्थ प्रवाह भी है। जिस प्रकार जलाशयों में प्रवाह के द्वारा पानी आता है उसी प्रकार अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग परिग्रहरूप प्रवाहद्वारा आत्मामें नवीन २ कर्मों का बंध हुआ करता है, अतः संयमी जीव बाह्य परिग्रह से सर्वथा विरक्त हो जाता है। अन्तरङ्ग परिग्रह से भी वह अपने पदके अनुसार विरक्त ही रहता है। इसीलिये सूत्रकार कहते हैं कि जिस संयमी मुनिका लक्ष एक मोक्ष प्राप्ति करने का ही है वह मनुष्यलोकमें रहता हुआ भी सावध्य

अर्थ એજ છે કે જેનાથી જીવ કર્મોને ગ્રહણ કરે, અર્થાત્ મમત્વ-ભાવથી ગ્રહણ કરવું તેને પરિગ્રહ કહે છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ બધા અંતરંગ-પરિગ્રહ છે, એનાથી જ જીવ નવા નવા કર્મોનો બંધ કરે છે

જેમ નૌકામાં પાણી આવવાનું કારણ છિદ્ર છે તેમ આત્મામાં નવા નવા કર્મોને આવવાને માટે પરિગ્રહ છિદ્ર છે. મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોનો બંધ, પ્રથમ ગુણસ્થાન સુધી, અવિરતિજન્ય કર્મોનો બંધ ચોથા ગુણસ્થાન સુધી, પ્રમાદજન્ય કર્મોનો બંધ છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી, કષાયજન્ય કર્મોનો બંધ દશમા ગુણસ્થાન સુધી અને યોગજન્ય કર્મોનો બંધ સયોગકેવળીનામક તેરમા ગુણસ્થાન સુધી જીવોને થાય છે. સ્રોત શબ્દનો અર્થ પ્રવાહ પણ છે, જેમ જળાશયોમાં પ્રવાહ-દ્વારા પાણી આવે છે તેમ આ અંતરંગ અને બહિરંગ પરિગ્રહરૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામાં નવા નવા કર્મોનો બંધ થયા કરે છે, માટે સંયમી જીવ બાહ્ય-પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત થઈ જાય છે અંતરંગ પરિગ્રહથી પણ તે પોતાના પદના અનુસાર વિરક્ત જ છે આ માટે જ સૂત્રકારનું કથન છે કે જે સંયમી મુનિનું લક્ષ્ય એક મોક્ષપ્રાપ્તિ કરવાનું જ છે તે મનુષ્ય લોકમાં રહેવા છતાં પણ સાવધ

નનુ કર્મોપાદાનરૂપં સ્ત્રોતઃ કિં કૃત્વા પ્રતિષ્ઠેધમિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ--
'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કમ્મુણો સફલત્તં દટ્ટૂણં તઓ નિજ્જાઇ વેયવી ॥ સૂ. ૦ ૯ ॥

છાયા—કર્મણઃ સફલત્વં દટ્ટા તતો નિર્યાતિ વેદવિત્ ॥ સૂ. ૦ ૯ ॥

ટીકા—મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકપાયયોગૈઃ ક્રિયતે ઇતિ કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ-
કમ્, તસ્ય, સફલત્વં=જ્ઞાનાવરણાદિસ્વસ્વફલજનનાવશ્યમ્ભાવં, દટ્ટા વેદવિત્—વેદ્યતે
તત્ત્વાન્યનેતિ વેદઃ=આર્હતાગમઃ, તં વેત્તીતિ વેદવિત્—સર્વજ્ઞોપદેશજન્યસમ્યગ્જ્ઞાન-
વાનિત્યર્થઃ, તત્=કર્મણઃ કર્મવન્ધકરણાત્ નિર્યાતિ=દૂરીભવતિ, કર્મવન્ધનનિવન્ધન-
સકલસાવધવ્યાપારં પરિવર્જયતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૦ ૯ ॥

વ્યાપારોં સે સદા વિરક્ત રહે । જિસસે જીવોં કો થોડે સે भी कष्टादिक
का अनुभव हो ऐसी कोई भी क्रिया वह न करे । सावधक्रिया करने-
वाले मनुष्यों के सम्पर्कमें रहते हुए भी अपने को उस व्यापार से बचा
कर रखना यही तो संयमी मुनिकी विशेषता है ।

निष्कर्मदर्शी—इस शब्द का अर्थ मोक्षाभिलाषी है, क्योंकि कर्मों
के सम्वन्ध से रहित जो स्थान है वह निष्कर्म है, उस स्थान को देखने
का जिस का स्वभाव है ऐसा जीव निष्कर्मदर्शी कहलाता है । सूत्रमें
“च” शब्द अन्तरङ्ग परिग्रह का बोधक है ॥ सू. ० ८ ॥

સંયમી મુનિ કયા સમજ્ઞ કર કર્મોં કો આને મેં કારણરૂપ હસ સ્ત્રોત
કો બન્દ કરે ? હસ પ્રકારની જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરતે હુએ સૂત્રકાર
કહતે હેં—'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

કર્મોં કો અપને ૨ ફલ કા દેનેવાલા જાનકર વહ જ્ઞાની—સંયમી મુનિ
उन कर्मों से और उनके कारणों से दूर ही रहता है ।

વ્યાપારોં સે સદા વિરક્ત રહે. જેનાથી છુવોને થોડો પણ કષ્ટાદિકનો અનુભવ થાય
તેવું કોઈ કાર્ય તેઓ ન કરે. સાવધ—વ્યાપાર કરવાવાળા મનુષ્યોનાં સંપર્કમાં રહેવા છતાં
પણ પોતાની જાતને તેવા વ્યાપારથી દૂર રાખવું, એ જ સંયમી મુનિની વિશેષતા છે.

‘નિષ્કર્મદર્શી’ આ શબ્દનો અર્થ મોક્ષાભિલાષી છે, કારણ કે કર્મોના સંબંધથી
રહિત જે સ્થાન છે તે નિષ્કર્મ છે; તે સ્થાનને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેવો છવ
નિષ્કર્મદર્શી કહેવાય છે. સૂત્રમાં “ચ” શબ્દ અતરંગ પરિગ્રહનો બોધક છે. ॥ સૂ. ૦ ૮ ॥

શું સમજીને સંયમી મુનિ કર્મોને આવવાના કારણરૂપ આ સ્ત્રોતને બંધ કરે ?
આ પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.—‘કમ્મુણો’ ઇત્યાદિ.

કર્મોને પોતપોતાના ફળને દેવાવાળા જાણીને તે સંયમી મુનિ તે કર્મોથી
અને તેના કારણોથી દૂર જ રહે છે.

ममैव नायमाशयः किन्तु सर्वेषामर्हतामिति दर्शयितुं भगवान् प्राह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

यद्वा—सम्यक्त्वमुक्तं, निरवद्यं तपश्चारित्रमपि, इदानीं तत्फलमाह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मूलम्—जे खलु भो ! वीरा समिया सहिया सयाजया संघ-
उदंसिणो आओवरया अहातहा लोयं उवेहमाणा पाईणं पडीणं
दाहिणं उईणं इय सच्चंसि परिविचिट्टिसु ॥ सू० १० ॥

छाया-ये खलु भो ! वीराः समिताः सहिताः सदायताः संघटदर्शिनः, आत्मोपरताः
यथातथा लोकमुपेक्षमाणाः प्राचीनं प्रतीचीनं दक्षिणम्, इति सत्ये परिव्यस्थुः ॥ १० ॥

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगों के द्वारा जो किये जाते हैं वे कर्म हैं । ये ज्ञानावरणीयादिक के भेद से आठ प्रकारके हैं । आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध अनादिकाल से हो रहा है । कोई भी कर्म जब तक अपना फल नहीं देता तब तक वह आत्मा से नष्ट नहीं होता; यह नियम है, अतः वह वेदवित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मों से और उन कर्मों के कारण मिथ्यादर्शनादिकों से, तथा मिथ्यादर्शनादिके कारण कषायों से सदा दूर ही रहता है । अर्थात् कर्मबन्ध के कारणभूत समस्त सावध व्यापार का वह त्याग कर देता है ॥ सू० ९ ॥

इस कथन में सब तीर्थङ्करों की सम्मति प्रदर्शित करते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि । अथवा समकित को कहा और निर्दोष तप चारित्र को भी कहा; अब उसका फल कहते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय अने योगद्वारा जे करवाभां आवे छे ते कर्म छे । ते जानावरणीयादिकना लेदथी आठ प्रकारना छे । आत्माना साथे तेनो संघंध अनादि काणथी थछ रह्यो छे । कोछ पणु कर्म ज्यां सुधी पोतानु दण नथी आपतुं त्या सुधी ते आत्माथी नष्ट थतुं नथी; अने नियम छे । तेथी ते वेद-वित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मोथी अने ते कर्मोना कारण मिथ्या-दर्शनादिको अने मिथ्यादर्शनादिकोना कारण कषायोथी सदा दूरज रह्ये छे । अर्थात् कर्मबंधना कारणभूत समस्त सावध व्यापारना ते सदा त्याग करी दे छे ॥ सू० ९ ॥

आ कथनमा यथा तीर्थङ्करोनी संमति प्रदर्शित करे छे—‘जे खलु भो’ इत्यादि । अथवा समकित कह्यु, निर्दोष तप चारित्र पणु कह्यु; उवे तेनुं दण कह्ये छे—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

ટીકા—‘મો’ ઇતિ શિષ્યામન્ત્રણાર્થઃ । સ વક્ષ્યમાણવિષયે શિષ્યસ્ય પુનઃ પુનરવધાનાર્થમામન્ત્રણં ઘોતયતિ । મોઃ શિષ્ય ! યે કેચન વીરાઃ=કર્મવિદારણાર્થમુત્સાહવન્તઃ, સમિતાઃ=સમિતિયુક્તાઃ, સહિતાઃ=સ્વહિતાર્થમુદ્યુક્તાઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિ-યુક્તા વા, સદાયતાઃ=સર્વદા સંયમારાધનસાવધાનાઃ, સંઘટદર્શિનઃ=હેયોપાદેયસ્ય નિરન્તરદર્શિનઃ, યદ્વા-અવ્યાવાધાનન્દસ્વરૂપમોક્ષાભિલાષિણઃ, આત્મોપરતાઃ-

પાંચ સમિતિયોં મેં લવલીન, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં ઉદ્યમી અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોં સે યુક્ત, સર્વદા સંયમ કી આરાધના કરનેમેં સાવધાન, હેયોપાદેય કે વિવેક સે યુક્ત અથવા અવ્યાવાધ-આનન્દ-સ્વરૂપ મોક્ષકે અભિલાષી, કપાયવિશિષ્ટઆત્માસે સદા પરે રહનેવાલે ઔર યથાવસ્થિતકર્મલોક કી અથવા શબ્દાદિવિષયોં કી સદા ઉપેક્ષા કરને વાલે, કસોં કો વિદારણ કરને મેં ઉત્સાહગાલી જો કોઈ ભવ્ય વીર પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર ઔર દક્ષિણ દિશા મેં હુયે હેં વે સવ સત્ય-મોક્ષસ્થાનમેં સ્થિત હો ચુકે હેં ।

સૂત્રકાર ઇસ સૂત્ર મેં નિર્દોષ તપ-ચારિત્ર કી આરાધના કા ફલ પ્રકટ કરતે હુણ શિષ્યોં સે કહ રહે હેં કિ જિન ભવ્યવીરોં ને પાંચ સમિતિયોં કા નિર્દોષ રીતિસે પાલન કિયા હેં, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં જિન્હોંને કુછ ભી નહીં યાકી રહ્યા, નિર્દોષ સંયમ કી આરાધના કરને મેં હી જિન્હોં ને અપને જીવન કો વિતાયા, હેયોપાદેય કે સુન્દર વિવેકસે જિન્હોંને મોહ-મમત્વ પર વિજય પ્રાપ્ત કી, જિન્હોંને કપાય કે ઉદ્ય કો

પાંચ સમિતિઓમાં રાચવાવાળા, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં ઉદ્યમી, અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોથી યુક્ત, સર્વદા સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન, હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત, અથવા અવ્યાવાધ-આનન્દસ્વરૂપ મોક્ષના અભિલાષી, કપાયવિશિષ્ટ આત્માથી મદા દૂર રહેવાવાળાં, અને યથાવસ્થિત કર્મલોકની અથવા શબ્દાદિવિષયોની સદા ઉપેક્ષા કરવાવાળાં કર્મોત્તુ વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહશાળી જે ભવ્ય વીરો, પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશાઓમાં યથાં છે તે બધા સત્ય-મોક્ષસ્થાનમાં સ્થિત થઈ ચૂકેલ છે.

સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં નિર્દોષ તપ-ચારિત્રની આરાધનાનું ફળ પ્રગટ કરીને શિષ્યોને કહે છે કે જે ભવ્ય વીરોએ પાંચ સમિતિઓનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કર્યું છે, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં જેમણે કાંઈ પણ ખાટી ન રાખ્યું, નિર્દોષ સંયમની આરાધના કરવામાં જે જેમણે પોતાના હૃવનને વીતાવ્યા, હેયોપાદેયના સુન્દર વિવેકથી જેઓએ મોહ મમત્વ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કર્યો, જેઓએ કપાયના

આત્મનઃ=કપાયાત્મન ઉપરતાઃ=નિવૃત્તાઃ યથાતથા=યથાવસ્થિતં, લોકં=કર્મલોકં, શબ્દાદિવિષયલોકં વા, ઉપેક્ષમાણાઃ=દૃષ્ટ્યાઽપશ્યન્ત આસન્, તે પ્રાચ્યાદિદિક્ષ્વ-સ્થિતાઃ, સત્યે=સત્યસુખજનકત્વાત્ સત્યો=મોક્ષમાર્ગઃ, તત્ર, પરિવ્યસ્થુઃ=સ્થિતવન્તઃ, इदमुपलक्षणम्—નેનાનાગતવર્તમાનયોરપિ ક્રિયાપદે સંયોજનીયે, યથા—યે વીરાઃ સન્તિ તે વર્તમાનકાલે પશ્ચદશકર્મભૂમિષુ સંખ્યેયાસ્તિષ્ઠન્તિ, યે ચ ભવિષ્યન્તિ, તે ચાનાગતકાલેઽનન્તાઃ સ્થાસ્યન્તીતિ ॥ મૂ. ૧૦ ॥

નિષ્ફલ ક્રિયા ઓર હસ કર્મસય લોક કી અથવા શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોં કી વિષયોં કી તરફ થોડા સા ધ્યાન નહીં દિયા, ડન મન્યવીરોં ને-ચાહે વે કિસી મી દિશા મેં ક્યોં ન રહેં હોં-નિયમ સે મોક્ષ કો અપને હાથ મેં કર લિયા હૈ । સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી ંકતા કી ચિના મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, યહ જૈનસિદ્ધાન્ત કા અટલ નિયમ હૈ । પાંચસમિતિ વગૈરહ કી પાલન મેં અપને કો વિસર્જિત કર દેના યહ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી આરાધના સે હી આત્માકો ઉપલબ્ધ હોતી હૈ । સૂત્ર મેં “વીર” શબ્દ ઈસી વાત કી પુષ્ટિ કરતા હૈ । વાહ્ય જગત મેં શત્રુઓં પર વિજય પ્રાપ્ત કરનેવાલે લાગ્વોં ક્યા કરોડોં મી મનુષ્ય મિલ સકતે હૈ, પરન્તુ જો અપને આત્મશત્રુઓં-કર્મોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી કોશિશ મેં હૈં વે લાગ્વોં મેં ક્યા કરોડોં મેં મી ંક દો મિલેંગે । પાંચ સમિતિયોં મેં લવલીન રહના, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં સદા ઉદ્યમ કરતે રહના, સર્વદા સંયમ કી આરાધના મેં જરા મી પ્રમાદશીલ ન વનના, હેયોપાદેય કી વિવેક મેં થોડી સી

ઉદ્યમે નિષ્કળ ંનાવ્યો અને આ કર્મમય લોકની અથવા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોની તરફ થોડું પણ ધ્યાન નથી આપ્યું તેવા ભવ્ય વીરોએ ભલે તેઓ કોઈ પણ દિશામાં હોય તો પણ નિયમથી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ છે. સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની એકતા વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એ જૈન-સિદ્ધાંતનો અટલ નિયમ છે પાંચ સમિતિ વિગેરેના પાલનમાં પોતાને વિસર્જીત કરી દેવું, એ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની આરાધનાથી જ આત્માને ઉપલબ્ધ થાય છે સૂત્રમાં જે “વીર” શબ્દ છે તે આ વાતની જ પુષ્ટિ કરે છે. વાહ્ય જગતમાં શત્રુઓ પર વિજય કરનારાઓ લાગે તો શું પણ કરોડો મનુષ્યો મળી રહેશે, પરંતુ પોતાના આત્મશત્રુઓ-કર્મ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની કોશિશમાં હોય તેવા લાગે બદ્ધે કરોડોમાં પણ એક-એ મળશે. પાંચ સમિતિઓમાં રચ્યા રહેવું, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં સદા ઉદ્યમ કરતા રહેવું, સર્વદા સંયમની આરાધનામાં જરા પણ પ્રમાદશીલ ન બનવું, હેયોપાદેયના

भी मूल न आने देना, कषायों से सदा सावधान रहना और शब्दादिक विषयों में सदा उपेक्षाभाव रखना, ये सब बातें—क्रियाएँ कर्मशत्रुओं पर विजय पाने में सैन्य का काम देती हैं। मोक्षाभिलाषी आत्मा सेनापति है, कर्मों की मूल-उत्तर-प्रकृतिरूप सेना शत्रुसैन्य है, उस पर विजय प्राप्त करने में इस योद्धा की ये पूर्वोक्त क्रियाएँ एक अक्षौहिणी सेना जैसी हैं, अतः यह आत्मा नियमसे कर्मसेना का पराभव कर अपने स्वभाव से ही मोक्ष का पूर्ण भोक्ता बन जाता है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

सूत्र में “भो” शब्द शिष्यों के संबोधन के लिये आया है। वह भगवान् के कहे गये वचनों में शिष्यों का पुनः पुनः ध्यान आकर्षित करने के लिये कहा गया है। मूल में ‘परिविचिर्द्विसु’ यह भूतकालिक क्रियापद है। यह वर्तमान और भविष्यत्कालिक क्रियापद का भी उपलक्षण है। इसका अभिप्राय यह है कि भूतकाल में जितने भी वीर हुए हैं उन सबने तो मोक्ष का मार्ग प्राप्त कर ही लिया है, वर्तमान में भी जो पांच भरतक्षेत्र, पांच ऐरवत क्षेत्र और पांच महाविदेह क्षेत्र में संख्यात वीर हैं वे और अनागत कालमें जो अनंत वीर होंगे वे सब मोक्षके भोक्ता बनेंगे।

कर्मों के विदारण करने में उत्साहसम्पन्न को ‘वीर,’ पांच समितियों

વિવેકમાં જરા પણ ભૂલ ન આવવા દેવી, કષાયોથી સદા સાવધાન રહેવું, આ બધી વાતો—ક્રિયાઓ—કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવામાં સૈન્યનું કામ કરે છે. મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ છે. કર્મોની મૂળ—ઉત્તરપ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય છે, તેના ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં આ યોદ્ધાની તે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઓ એક અક્ષૌહિણી સેના જેવી છે, માટે તે આત્મા નિયમથી કર્મસેનાનો પરાભવ કરીને પોતાના સ્વભાવથી જ મોક્ષનો પૂર્ણ ભોક્તા બની જાય છે, તેમાં જરા પણ સંદેહ નથી.

સૂત્રમાં “ભો” શબ્દ શિષ્યોના સંબોધનને માટે આવેલ છે, તે ભગવાને કહેલા વચનોમાં શિષ્યોનું વારંવાર ધ્યાન આકર્ષિત કરવાને માટે કહેવામાં આવેલ છે. મૂળમાં ‘પરિવિચિર્દ્વિસુ’ આ ભૂતકાલિક ક્રિયાપદ છે. આ વર્તમાન અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયાપદનું પણ ઉપલક્ષણ છે, આનો અભિપ્રાય એ છે કે—ભૂતકાળમાં જેટલા વીરો થયેલા છે તે બધાએ મોક્ષનો માર્ગ પ્રાપ્ત કરી જ લીધેલ છે. વર્તમાનમાં પણ જે પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઐરવત ક્ષેત્ર અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સંખ્યાત વીરો છે, તેઓ અને આવતા કાળમાં જે અનંત વીરો થશે તેઓ બધા મોક્ષના ભોક્તા બનશે.

કર્મોનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહસમ્પન્નને ‘વીર,’ પાંચ અમિતિઓનું પાલન

तेषां सत्यावस्थायिनां ज्ञानमाह—‘साहिस्सामो’ इत्यादि ।

मूलम्—साहिस्सामो नाणं वीराणं समियाणं सहियाणं सया-
जयाणं संघटदंसीणं आओवरयाणं अहातहा लोयमुवेहमाणानं,
किमत्थि उवाही? पासगस्सन विज्जइ, नत्थि-त्ति बेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—साधयिष्यामो ज्ञानं वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघ-
टदर्शिनाम् आत्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां, किमस्ति उपाधिः पश्य-
कस्य? न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि ॥ सू० ११ ॥

टीका—तेषां वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघटदर्शिनाम् आ-
त्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां ज्ञानम्=अभिप्रायं, साधयिष्यामः=कथ-

के पालन करनेवाले को ‘समित,’ आत्मकल्याण में उद्यमशाली अथवा
ज्ञानादिक गुणों से युक्त को ‘सहित,’ सर्वदा संयम की आराधना में
सावधान को ‘सदायत,’ हेयोपादेय के विवेक से युक्त अथवा अव्याबाध
आनन्दस्वरूप मोक्ष की अभिलाषावाले को ‘संघटदर्शी’ और कषायों
से उपरत—निवृत्त जीवों को ‘आत्मोपरत’ कहते हैं ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्ग में रहनेवाले उन वीर-आत्माओं के ज्ञान के विषय में
सूत्रकार कहते हैं:—‘साहिस्सामो नाणं’ इत्यादि ।

हम वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत, यथा-
वस्थित लोक की उपेक्षा करनेवाले उन मोक्षमार्ग के पथिकों के ज्ञान के
विषय में आगे कथन करेंगे । अभी तो इतना ही कहते हैं कि उन
वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्माओं के कर्मजनित कोई भी उपाधिनहीं है ।

करवावाणाने ‘समित,’ आत्मकल्याणमा उद्यमशाली अथवा ज्ञानादिक गुणोत्थी
युक्तने ‘सहित,’ सर्वदा संयमनी आराधनामां सावधानने ‘सदायत,’ हेयोपादेयना
विवेकथी युक्त अथवा अव्याबाधआनन्दस्वरूप मोक्षनी अभिलाषावाणाने ‘संघ-
टदर्शी’ अने कषायोत्थी उपरत—निवृत्त जीवोने ‘आत्मोपरत’ कहे छे. ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्गमा रहवावाणा ते वीर-आत्माओना ज्ञानना विषयमां सूत्रकार
कहे छे—“साहिस्सामो नाणं” इत्यादि

अमे वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत अने यथा-
वस्थित लोकनी उपेक्षा करवावाणां ते मोक्षना पथिकोना ज्ञानना विषयमा आगण
कहीशुं. हमणा तो आटलु कहीअे छीअे के ते वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्मा-
ओने कर्मजनित (कर्मथी थनारी) कोटियणु उपाधि नथी.

વિવ્યામઃ । વીરાદિવિશેષણશબ્દા અનન્તરપૂર્વમ્ત્રે વ્યાખ્યાતાઃ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-
 કિમસ્મિ ઉપાધિરિતિ । કિં તેષાં મદ્વાપુરુષાણામુપાધિરસ્તિ ?, ઉત્તરવાક્યમાહ-
 ‘પઞ્ચકસ્ય’ इत्यादि । पश्यकस्य=सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षमार्गं पश्यतीति पश्यः,
 स एव पश्यकः, तस्य कर्मजनितोपाधिर्न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि=मया यथा
 भगवद्वाक्यं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ११ ॥

चतुर्थ्याव्ययनस्य चतुर्थोद्देशः समाप्तः ॥ ४-४ ॥

ભાવાર્થ—જવ તક જીવ અપને શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનન્દ-સ્વરૂપ
 મુક્તિકો પ્રાપ્ત નહીં કર લેના હૈ તવ તક વહ કર્મોંસે નિર્લિપ્ત નહીં હો
 સકના હૈ । ऐसी अवस्था में जब तक सांसारिक दशा है अथवा संसार
 में रहना है तब तक कर्मों के चक्र में प्रत्येक प्राणी फँसा हुआ ही है ।
 जो कर्मों का कर्ता है वह उसके फल का भी भोक्ता माना जाता है ।
 यद्यपि यह नियम अटल है परन्तु ज्ञानी जीव उसके अपवादस्वरूप हैं,
 क्योंकि चारित्रमोहनीय के उदयसे जब तक चारित्र का अभाव उनकी
 आत्मामें नहीं हुआ है तब तक दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न
 होनेवाला कर्मबन्ध उनको नहीं होना है । जितने अंशमें परપदार्थों से
 निवृत्ति है उतने अंशोंमें आत्मा में शुद्धि का सङ्भाव भी है, अर्थात्
 दर्शनमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय और क्षयोपशमसे जितनी भी
 आत्मा से अतत्त्वશ્રદ્ધાનપરિણતિ का अंत होगा उतनी ही आत्मजागृति-
 रूप शुद्धपरिणति का विकास वहां पर होगा ।

ભાવાર્થ—જ્યા સુધી જીવ પોતાના શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનન્દ-સ્વરૂપ
 મુક્તિને પ્રાપ્ત નથી કરી લેતો, ત્યાં સુધી તે કર્મોંથી નિર્લિપ્ત થતો નથી. આવી
 અવસ્થામાં જ્યાં સુધી સાંસારિક દશા છે, અથવા સંસારમાં રહેવાનું છે ત્યાં
 સુધી કર્મોંના ચક્રમાં પ્રત્યેક પ્રાણી ફસાયેલાં જ છે. જે કર્મોંના કર્તા છે તે
 તેના ફળનો પણ ભોક્તા મનાય છે. જે કે આ નિયમ અટલ છે છતાં પણ જ્ઞાની જીવ
 તેના અપવાદસ્વરૂપ છે, કેમ કે ચારિત્રમોહનીયના ઉદયથી જ્યાં સુધી ચારિત્રનો
 અભાવ તેના આત્મામાં નથી થયો ત્યાં સુધી દર્શન-મોહનીય કર્મના ઉદયથી
 ઉત્પન્ન થનાર કર્મબંધ તેને થતું નથી. જેટલા અંશમાં પરપદાર્થોની નિવૃત્તિ છે
 તેટલા અંશોમાં આત્મામાં શુદ્ધિનો સંભાવ પણ છે, અર્થાત્ દર્શન-મોહનીય
 કર્મના ઉપશમ, ક્ષય, અને ક્ષયોપશમથી આત્મામાં જેટલી પણ અતત્ત્વશ્રદ્ધાન
 પરિણતિનો અંત થશે તેટલી જ આત્મજાગૃતિરૂપ શુદ્ધ પરિણતિનો વિકાસ ત્યાં થશે.

સમ્યક્ત્વકરયા, ચુકત્યા, સમ્યક્ત્વં તત્ફલાનિ ચ ।

વિદૂષ્યાનાર્યવચનં, ચતુર્થેઽધ્યયનેઽબ્રવીત્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

॥ ઇતિશ્રી-વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુહ-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશમાષાકલિતલલિત-
કલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક-શાહ-
છત્રપતિ-કોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત-“ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ”-પદ્મભૂષિત-
કોલ્હાપુરરાજગુરુ-બાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર
પૂજ્ય-શ્રીઘાસીલાલ-વ્રતિચિરચિતાયામ્ આચારાદ્યમૂત્ર-
સ્યાઽઽચારચિન્તામણિટીકાયાં સમ્યક્ત્વાખ્યં ચતુર્થ-
મધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૪ ॥

સમકિત કે પ્રાપ્ત હોતે હી આત્મા મેં આત્મસ્વરૂપ કા ખાન હોને સે આંશિક રૂપ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સ્વાનુભવ મેં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર મી સમકિતી કો ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, અતઃ યહાં પર સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગ કે પથિકોં કો કર્મજન્ય ઉપાધિકા અભાવ બતલાતે હૈં, ક્યોં કિ અજ્ઞાની જીવોં કો હી કર્મજન્ય ઉપાધિ હુઆ કરતી હૈ, જ્ઞાની જીવોં કે નહીં ।

હસ પ્રકરણ કી સમાપ્તિ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ હે જમ્નુ ! જિસ પ્રકાર સે મૈને યહ ભગવાન કે સમીપ સુના હૈ ઉસી પ્રકાર મૈં કહતા હું ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ચૌથે અધ્યયનકા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથે અધ્યયન મેં જો વિષય કહે ગયે હૈં ડનકા સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોક દ્વારા કરતે હૈં—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ ।

સમકિત પ્રાપ્ત થતાં જ આત્મામાં આત્મસ્વરૂપનું જ્ઞાન થવાથી આશિક રૂપમાં સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાનુભવમાં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર પણ સમકિતીને ઉત્પન્ન થાય છે, માટે આ ઠેકાણે સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગના પથિકોને કર્મજન્ય ઉપાધિને અભાવ બતાવે છે, કેમકે અજ્ઞાની જીવોને જ કર્મજન્ય ઉપાધિ થાય છે, જ્ઞાની જીવોને નહિ.

આ પ્રકરણની સમાપ્તિ કરતા શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે હે જમ્નુ ! જે પ્રકારે મેં ભગવાનની સમીપ આ સાંભળ્યું છે તે પ્રકારે હું કહું છું. ॥સૂ૦ ૧૧॥

ચૌથા અધ્યયનનો ચૌથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથા અધ્યયનમાં જે વિષય કહેવાયા છે તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોકદ્વારા કરે છે—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ.

सम्यक्त्व को पुष्ट करनेवाली युक्ति से सम्यक्त्व का वर्णन तथा अनार्यों के वचनों का निराकरण करके सम्यक्त्व का फल इस चौथे अध्ययन में कहा गया है ॥ १ ॥

यह आचाराङ्गसूत्रके सम्यक्त्व नामके चौथे अध्ययनकी आचार-
चिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद सम्पूर्ण ॥ ४ ॥

सम्यक्त्वने पुष्ट करवावाणी युक्तिथी सम्यक्त्वनुं वर्णन, तथा अनार्योंना
वचनोनो निराकरण करीने सम्यक्त्वनुं क्षण आ योथा अध्ययनभां कहूं छे, ॥ १ ॥

आ आचाराङ्गसूत्रना सम्यक्त्वनामना योथा अध्ययननी आचार-
चिन्तामणि-टीकानो गुजराती अनुवाद सम्पूर्ण ॥ ४ ॥



શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કુવા રોડ - ઝીન લોજ પાસે

રાજકોટ



સમિતિની શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી
તા. ૩૧-૧-૫૭ સુધીમાં દાનવીર મહાશયો
તરફથી મળેલી રકમોની નામાવલી.



(રૂ. ૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી.)



આદ્ય મુરખખીશ્રી-૪

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧૦૦૦૦	શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ, પ્રમુખ સાહેબ	અમદાવાદ
૬૦૦૦	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ	ભાણુવડ
	(હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, જેયંદભાઈ, નગીનદાસભાઈ, વૃન્દલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ)	
૫૨૫૧	કોઠારી જેયંદભાઈ અજરમર હા. હરગોવિંદભાઈ જેયંદ	રાજકોટ
૫૦૦૧	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	સોલાપુર

સુરખખીશ્રીઓ-૨૦

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૩૬૦૫	વકીલ જીવરાજ વર્ધમાન હા. કોઠારી કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર
૩૬૦૪	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	રાજકોટ
૩૨૮૬૧૧-૧૧	મહેતા શુભાખચંદ પાનાચંદ	"
૩૧૦૧	સંઘવી પીતરખરદાસ શુભાખચંદ	જામનગર
૨૫૦૦	શેઠ શામજીભાઈ વેલજી વીરાણી	રાજકોટ
૨૦૦૦	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસીંહજી બહાદુર	મોરબી
૨૦૦૦	શેઠ લહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદભાઈ લહેરચંદ	સીધપુર
૨૦૦૦	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ
૧૯૬૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	મોરબી
૧૦૦૧	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ
૧૦૦૧	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર
૧૦૦૦	શેઠ સોમચંદ તુલસીદાસ	રતલામ
૧૦૦૦	કોઠારી છગીલદાસ હરખચંદ	મુંબઈ
૧૦૦૦	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદ	શીહોર
૧૦૦૨	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર
૧૦૦૧	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી મહેતા (રેલ્વે મેનેજર સાહેબ) કલકત્તા	
૧૦૦૧	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામનગર
૧૦૦૧	મહેતા મોમચંદ નેણશીભાઈ (કરાંચીવાળા)	મોરબી
૧૦૦૧	શાહ હરીલાલ અનુપચંદ	ખંભાત
૧૦૦૨	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામ કપુરચંદ દોશી	જામ નેધપુર

સહાયક મેમ્બરો-૨૧

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર)

૭૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ઝુઝાલાઈ વેલસીભાઈ	વઢવાણ શહેર
૭૫૦	મોદી કેશવલાલ હરચંદ	સાબરમતી
૭૦૦	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	જોરાવરનગર
૫૦૧	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ	લીંબડી
૫૦૦	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	યાનગઢ
૫૦૦	શેઠ તારાચંદજી પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ઔરંગાબાદ
૧૫૦	શેઠ શેષમલજી જીવરાજજી	
૧૨૫	„ અનરાજજી લાલચંદજી	
૧૨૫	„ ધુકડચંદજી રૂપચંદજી	
૧૦૦	„ હગડુમલજી ચાંદમલજી	
૫૦૦		
૫૦૦	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ
૫૦૦	શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ	રાજકોટ
૫૦૦	મહેતા મુળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા હર્લભજીભાઈ ધ્રાશ	
૫૦૦	શેઠ હરખચંદ પરસોત્તમ હા ભાઈ ઈન્દુકુમાર	ચોરવાડ
૫૦૧	શેઠ ખીમજી બાવાભાઈ હા. તેમના પુત્રો કુલચંદભાઈ નાગરદાસભાઈ, શુલાખચંદભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ	મુંબઈ
૫૦૧	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. શેઠ મુલજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ	
૫૦૧	શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૫૦૧	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	સ્વ કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ	મુંબઈ
૫૦૦	અ. સૌ. બેન માણીગૌરી મગનલાલ તે મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ	રતલામ
૫૦૧	સ્વ પીતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હ. વેણીચંદ શાંતીલાલ (બાળુઆવાળા)	મેઘનગર

૭૫૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	કામદાર રતીલાલ ફુલ્લભજી જેતપુરવાળા	સુબઈ

પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો-૧૮૫

(ઝોછામાં ઝોછી રકમ રૂ. ૨૫૦ આપનાર)

૪૦૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ધાક્ષ
૪૦૦	ધી વાડીલાલ ડાઇંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ	રાજકોટ
૩૫૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	ભાભોધપુર
૩૦૧	શેઠ જ્યેષ્ઠભાઈ માણેકચંદ	ભાણુવડ
૨૫૧	સઘવી માણેકચંદ માધવજી	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા)	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ રામજી ઝીણાભાઈ	ભાણુવડ
૨૫૧	પંચમીયા ભવાનભાઈ ઠાળાભાઈ	વડીઆ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	વાંઠાનેર
૨૫૧	શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ	રાજકોટ
૨૫૦	બાબુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ (ઉદેપુરવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મગનલાલ છગનલાલ વિશ્રામ (ધાક્ષવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	ઉપલેટા
૨૫૧	સ્થ બહેન સંતોષ કચરા હા. ઓતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ	
	તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	ઉપલેટા
૨૫૧	શેઠ ખુશાલચંદભાઈ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ	ઉપલેટા
૪૭૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખાખીનળીયા
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ કેશવજી	ભાભનગર
૨૫૧	શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ	જેતલસર જંકશન
૨૫૧	શાહ ચતુરદાસ ઠાકરશીભાઈ	ભાભનગર
૨૫૧	ખ ઢેરીયા ઠાન્વીલાલ ત્રંબકલાલ (સ્ટેશન માસ્તર)	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શાહ કેશવલાલ જ્યેષ્ઠ	વેરાવલ
૨૫૧	શાહ ખીમચંદ સોભાગચંદ વસનજી	વેરાવલ
૨૫૧	સ્વ. બાબડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમળાબાઈ	
	તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ	ગોંડલ
૨૫૧	શેઠ છગનલાલ નાગજીભાઈ	સુબઈ
૨૫૧	ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ	જુનારદેવ

૨૫૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	ગોસલિયા હરિલાલ લાલચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ પ્રેમચંદ માણેકચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ	ખંભાત
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ મોહનલાલ ઈન્દિરામ ખંભાત	ખંભાત
૨૫૧	શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી	આણંદ
૨૫૧	બહેન સુરીબહેન (લક્ષ્મીબેન)	
	હા. મહેતા હરીલાલ પીતારામદાસ	પાલણપુર
૨૫૦	શેઠ વાડીલાલ નેમચંદ વકીલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ વીઠલદાસ મોદી માસ્તર	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ મણીલાલ જીવણલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ વાધજીભાઈ	અમલનેર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	અમલનેર
૨૫૧	શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (ઈન્જીનીયર સાહેબ)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ	
	[તેમનાં ધર્મપત્નીના વરસીતપ્રસંગે ખુશાલીના]	રાજકોટ
૨૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. ચંપાલાલજી મારવે	ડોંડાઈચા
૨૫૧	શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડ	ઉદેપુર
૨૫૦	શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેન્કર્સ	યાદગીરી
૨૫૦	શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ	હાટીના માળીયા
૨૫૧	ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ [વકીલ]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ પ્રભારામ વીઠલજી	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા	મદ્રાસ
૨૫૧	પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી	કોલકી
૩૦૨	પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી	કોલકી
૨૫૧	શેઠ હકીમચંદ દીપચંદ ગોંડલવાળા [સ્ટેશન માસ્તર ભક્તિનગર]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ વસનજી નારણજી	જામખંભાળીયા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	જામખંભાળીયા
૨૫૧	શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ	ખીચન (પાલી)
૨૫૧	શેઠ પદમસી ભીમજી ફેફરીયા	લાણુવડ

૨૫૧	અ. સૌ. બહેન બચીબહેન બાબુભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શેઠ નેમચંદ સવલ્લભાઈ મોદી	લાલપુર
૨૫૦	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પ્રમુખ શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ	નંદુરબાર
૨૫૧	શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ જસાપરવાળા હા. નરસેરામભાઈ	જેતપુર
૨૫૧	દોશી છોટાલાલ વનેચંદ	જેતપુર
૨૫૧	કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની	
	બાઈ ઝબકબહેન તરફથી હા. ભાઈ શાંતિલાલ	જેતલસર
૨૮૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	જામજોધપુર
૨૫૧	સ્વ. બહેન વિન્યાગૌરી રાયચંદ હા. શેઠ રાયચંદ પાનાચંદ	ધોરાજી
૨૫૦	ગાંધી પોપટલાલ જેયદભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	
	હા. પ્રમુખ રાયચંદ વૃજલાલ અજમેરા	વીંધીયા
૨૫૧	શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ	
	તથા જેસીંગલાલભાઈ	લાલપુર
૨૫૧	શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરિલાલભાઈ	
	હાટીના માળીયાવાળા	જીનાગઢ
૨૫૧	સ્વ. વસાણી હરગોવીંદદાસ જગનલાલના સ્મરણાર્થે	
	તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ જબલબેન તરફથી	ખોટાદ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ચુડા (ઝાલાવાડ)
૨૫૧	શેઠ મગનલાલજી બાગરેયા	ઉદેપુર
૨૫૧	શેઠ ચાપશીભાઈ સુખલાલ	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખોટાદ
૨૫૧	સ્વ. પૂજ્ય માતૃશ્રી સમરતમાઈના સ્મરણાર્થે	
	હા. ડોકટર આરોપ નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા	રાણપુર
૨૫૧	સ્વ તુરખીયા લહેરચંદ માલેકચંદ સુદામઠાવાળાના સ્મરણાર્થે	
	તેમનાં ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા જયંતીલાલ લહેરચંદ ડલાસ	
૨૫૧	શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ	ધ્રાંગધ્રા
૨૫૧	શાહ દીલીપકુંવર સવાઈલાલ	
	હા શેઠ સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ છોટુભાઈ હરગોવીંદદાસ કટોરીવાળા	મુંબઈ
૨૫૧	રા. રા નાથલાલ ડી. મહેતા	મોંમ્બાસા
૨૫૧	સંઘવી પ્રાણલાલ લવજીભાઈ	જામખંભાળીયા

૨૫૧	બાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ મણીબેન તરફથી હા. ભાઈ રસીકલાલ, અનીલકાંત તથા વિનોદરાય	આસનસોલ
૨૫૦	શેઠ માણેકલાલ અમુલખરાય મહેતા	ઘાટકોપર
૨૫૧	ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ	ધંધુકા
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ ધનજીભાઈ	ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હા. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ	ધંધુકા
૨૫૧	શેઠ ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી	ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી તરફથી	બરવાળા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	પાણીશણ (લીંબડી)
૨૫૧	સદાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો જયંતિલાલભાઈ તથા રમણીકલાલભાઈ	ઉપલેટા
૨૫૧	શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હા. જીવનલાલ ગફલદાસ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	ખડેન સુર્યબાળા નૌતમલાલ જસાણી [વરસીતપનાં પારણાંની ખુશાલીમાં]	રાજકોટ
૨૫૧	શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ શાંતીલાલ રાયચંદ	લખતર
૨૫૧	ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ	લખતર
૨૫૧	શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી	લખતર
૨૫૧	શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ	લખતર
૨૫૧	શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી	વઢવાણ શહેર

- ૨૫૧ શાહ જાદવજી ઓઘડભાઈ સદાકવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ શાંતીલાલ જાદવજી લખતર
- ૨૫૧ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદભાઈ સુરેન્દ્રનગર
- ૨૫૧ શ્રી વર્ધમાન સ્વેતામ્બર સ્થા. શ્રાવક સંઘ
હા. શેઠ કેસરીમલજી અનોપચંદજી ગુગળીયા મલાડ (મુંબઈ)
- ૨૫૧ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની સમરતબેન વૃજલાલ તરફથી
હા. ભાઈ જયંતિલાલ ઠાકરશી લખતર
- ૩૦૦ શાહ અમુલખ ઉર્ફે ખચુભાઈ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની
અ. સૌ. બેન લીલાવંતીના વરસી તપનાં પારણાની
ખુશાલીમાં હા. ભાઈ કાંતીલાલ નાગરદાસ વીરમગામ
- ૨૫૧ કામદાર કેશવલાલ હીમતરામ પ્રોફેસરસાહેબ (ગોંડલવાળા) વડોદરા
- ૨૫૧ શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા મુંબઈ
- ૨૫૧ શેઠ ધનરાજ મુળચંદ મુથા લોનાવાલા (પુના)
- ૨૫૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની
સ્વ. ચંચળબેન તથા પુરીબેનના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ મુ. વણી (વીરમગામ)
- ૨૫૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરળીવાળા મુ. શાલબની (ખંભાળ)
- ૩૦૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ સાણંદ
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ જોઠાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૈ. કાંતાબેન
રમણીકલાલ (ધાંગધ્રાવાળા) મુંબઈ
- ૨૫૧ ડોકટર મયાચંદ મગનલાલ હા. ડૉ. રતનચંદ મયાચંદ કલોલ
- ૨૫૧ સ્વ. શાહ નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. દરીયાપુરી જૈન સંઘ હા. ભાવસાર
દામોદરદાસ ધર્મરભાઈ કડી
- ૨૫૧ શાહ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ કલોલ
- ૨૫૧ અ. સૈા. ચંપાબેન હા. શેઠ હવરાજ લાલચંદ દોગી સાણંદ
- ૨૫૧ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ સાણંદ

૨૫૧	શાહ શાકરચંદ કાનજીભાઈ	સાણુંદ
૨૫૧	શાહ હીંમતલાલ હરજીવનદાસ	મુંબઈ
૨૫૧	શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	અ. સૌ. સમરતબેન પ્રેમચંદ % પ્રેમચંદ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	શા. કાંતીલાલ ત્રીભોવનદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	સંઘવી જયંદભાઈ નારાણદાસ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ વેલશી કન્યાજવાળા	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા તરફથી મોટીબેનના સ્મરણાર્થે	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નારાણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીભાઈનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. નારંગીબેનના વરસીતપ નિમીત્તે હા. શાંતીભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૨૫૦	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	અમદાવાદ
૩૫૧	લાલા પુરણચંદ જૈન (સેન્ટ્રલબેંકવાલા)	દીલ્લી
૨૫૧	સ્વ. છબીલદાસ ગોઠળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મ- પત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. મણુલા કુમારી	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	”
૨૫૧	અ. સૌ. કમળાબેન તે દામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્નિ (વઢવાણવાળા)	રંજુન
૨૫૧	વેરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વેરા નાનચંદ શીવલાલ	વઢવાણ શહેર

- ૨૫૧ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા.
વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ વઠવાણ શહેર
- ૨૫૧ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કહાનજીભાઈ અમદાવાદ
અમૃતલાલ દોશી
- ૨૫૧ શ્રી વીરમગામ સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સઘ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. ત્રિલોચનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળ
જેનના સ્મરણાર્થે હા. ડોક્ટર હિંમતલાલ મુખવાલ ”
- ૨૫૧ શાહ મુલચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. શાહ નાગરદાસ
ઓઘડભાઈ ”
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા. ભાઈ કેશવલાલ તથા
મનમુખલાલભાઈ ”
- ૨૫૧ શાહ રતનશી મોણશીની કુ. મુંબઈ
- ૨૫૧ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ અમદાવાદ
- ૨૫૧ શાહ શીવજી માણેકભાઈ ભેરાગા કચ્છ
- ૨૫૧ શાહ લુણાજી ગુલાબચંદ (સંજેલી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ (સંજેલી)
- ૨૫૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ (લીમડી) ”
- ૨૫૧ શાહ પાનાચંદ સંઘજીભાઈ હા. વંખકલાલ રતીલાલ મુંબઈ
- ૩૦૧ શાહ અમુલખભાઈ મુળજી હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ હારીજ
- ૩૦૧ સ્વ. જેન ચંદ્રકાંતાના સ્મરણાર્થે હા. અમુલખ મુળજીભાઈ ”
- ૨૫૧ સ્વ. પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદમશી મેસાણા
- ૨૫૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી એડન કેમ્પ
- ૨૫૧ બાટવીયા ગીરધરલાલ પ્રભાણંદ હા. અમીચંદ
ગીરધરલાલ ગાખીનળીયા
- ૨૫૧ શ્રીમતિ અ. સૌ. જેન ચંદ્રાવતી તે શ્રીમાન ગહોતલાલજી
નાહરનાં ધર્મપત્નિ હા. શેઠ રણજીત લાલજી હીંગડ ઉદેપુર
- ૨૫૧ સ્વ. શેઠ વીરચંદભાઈ જેસીંગ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ મુંબઈ
- ૨૫૧= ઝાજેડ ઘાસીરામ ગુલાબચંદ (લીમડી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ ધોરાજી
- ૩૦૧ શ્રીમતી હીરાબેન નયુભાઈના વરસીતપ નીમીતે
હા. નયુભાઈ નાનચંદ શાહ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. મણિયાર પરસોતમ મુંદરજીના સ્મરણાર્થે
હા. સાકરચંદ પરસોતમ ”

૨૫૧	શેઠ મણીલાલ શીવલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા	જામજોધપુર
૨૫૧	શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ	અમદાવાદ
૩૦૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ	ગોધરા
૨૫૧	શાહ નરસીદાસ ત્રીભોવનદાસ	અમદાવાદ
૩૦૧	ખીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી	રાણપુર
	હા. ગોપાણી ચુનીલાલ માણેકચંદ	
૨૫૧	શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા.	
	વહીવટ કરનાર શેઠ ઈશ્વરદાસ પુરષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ	
	હ. શેઠ ચંદુલાલ અમૃતલાલ	”
૨૭૭	શ્રી સ્થાનઠવાસી છકોટી જૈન સંઘ	
	હ મહેતા ચુનીલાલ વેલજી	માડવી (કચ્છ)
૨૫૧	વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ મહેતા	વડોદરા
૨૫૧	વેરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શાહ ચીનુભાઈ ખાલાભાઈ C/o શાહ ખાલાભાઈ મહાસુખરામ ,,	
૨૫૧	શા. ભાઈલાલ ગિજમશી	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. કેશવલાલ સુળજીભાઈનાં ધર્મપત્ની, સ્વ. અમૃતભાઈના	
	સ્મરણાર્થે હ ભાઈલાલ કેશવલાલ થાનગઢવાળા	શુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીમડીવાળાના	
	સ્મરણાર્થે હ. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી	સાણુદ
૨૫૧	પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હ. ભીખાલાલ નેમચંદ	સાણુદ
૨૫૧	સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે	
	હ જયંતીલાલ નારણદાસ	સાણુદ
૨૫૧	શા. પ્રવિણચંદ્ર નરસીદાસ સાણુદવાળા	ગોડેલી (ગુજરાત)
૨૫૧	મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ સીવીલ ઈન્જીનીયર સાહેબ	લાખેરી
		(રાજસ્થાન)
૨૫૧	ડા. કુ. સરસ્વતી ખડેન શેઠ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ	અમદાવાદ

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં
બનાવેલાં સૂત્રો.

કારમીર.....થી.....કન્યાકુમારી

તેમજ

કરાંચી.....થી..... કલકત્તા

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વંચાય છે.

કારણ કે

આવી રીતે શાસ્ત્રો તૈયાર કરવાનું અનોખું કાર્ય
હજી સુધી કોઈ કરી શક્યું નથી

*

*

*

શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ

ઉપરાંત

શ્રી દેરાવાસી સંપ્રદાયના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી
તથા અન્ય મુનિવરોએ

તેમજ

તેરાપથી મહુસલા કલકત્તાવાળાએ આ સૂત્રો અપનાવ્યાં છે.

*

*

*

દેશ-પરદેશના મેમ્બરો સૂત્રો વાંચી જૈન ધર્મના શ્રુતજ્ઞાનનો અણમોલો
લાલ લઈ રહ્યા છે.

હસણાંજ લંડનની ઈન્ડિયા ઓફીસ લાયબ્રેરીએ આ સૂત્રો મંગાવ્યા છે.

*

*

*

આપરૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેમ્બર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે
લગલગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતના શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકે છે.

વધુ વિગત માટે લખો :

દે. ગ્રીન લોન્ડ પાસે,
ગરેડીઆકુવા રોડ
રાજકોટ.

મત્રિ
શ્રી અખિલ ભારત પ્રવે. સ્થા. જૈન
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

આપ આ સમિતિના કાર્યમાં કઈ રીતે મદદગાર થઈ શકો ?

૩૧. ૫૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને સંસ્થાના આદ્ય મુરખીશ્રી તરીકે મુખ્યારક નામ લખાવી શકો છો, આપનો ફોટો તથા આપનું જીવનચરિત્ર શાસ્ત્રમાં છાપવામાં આવે છે.
૩૧. ૩૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને આપના વડીલના સ્મરણાર્થે એક શાસ્ત્ર આપના નામથી છપાવી શકો છો સમીતિને એક શાસ્ત્ર છપાવવામાં લગભગ રૂ. ૬૦૦૦) થી રૂ. ૮૦૦૦) ખર્ચ થાય છે. તે છતાં ત્રણ હજારમાં આપને નામે શાસ્ત્ર બહાર પાડવામાં આવશે.
૩૧. ૨૫૧] ઓછામાં ઓછા આપીને લાઈફ મેમ્બર તરીકે આપનું નામ દાખલ કરાવી શકો છો આપને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ ભાગો મફત મળી શકે છે. (રૂ. ૫૦૦ ની કીંમતનાં શાસ્ત્રો હકૂતે હકૂતે આપને મળી શકે છે.)

સ્થાનકવાસી સમાજમાં આ એક જ સંસ્થા શાસ્ત્રો ચાર ભાષામાં પ્રગટ કરીને સર્વ ઉપયોગી વાંચન રજુ કરે છે આપને જ્યારે કોઈ શાસ્ત્રની જરૂર હોય ત્યારે તેમજ કોઈ સાધુ મુનીરાજને વહોરાવવાની ઈચ્છા હોય ત્યારે શાસ્ત્ર બીજેથી નહિ મંગાવતાં આ સમિતિ પાસેથી મંગાવી લેવા વિનંતી છે.

એક અપીલ

હીક્ષા પ્રસંગે

વરસીતપ અને બીજી તપશ્ચર્યાઓનાં પારણા પ્રસંગે

મહાવીર જયંતી, પર્યુષણ, તથા હીવાળી જેવા તહેવાર પ્રસંગે

લગ્નપ્રસંગ તથા પુત્ર જન્મની ખુશાલીમાં.

વડીલોના સ્મરણાર્થે તેમની તીથી પ્રસંગે તેમજ બીજા સર અવસરે બનતી

મદદ આ સંસ્થાને મોકલવા ખાસ નોંધ રાખશો.

પુજ્ય મહાત્મા તથા મહાસતિજીને

નમ્ર પ્રાર્થના

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજશ્રી રાત દીવસના અથાગ પરીશ્રમ સાથે એક કંતાનના કકડા પર બેસીને સમાજના ભવિષ્યના વારસદાર માટે આગમ સંશોધન કરી અણુમોલો વારસો તૈયાર કરી રહ્યા છે, તે કાર્યમાં અનેક મહાત્માઓ પ્રશંસા બતાવીને સકીય સહકાર આપી રહ્યા છે. આપને અમારી નમ્ર વિનંતી છે કે આવા મહદ કાર્યમાં ઉપદેશ દ્વારા મદદગાર થઈ શકો તેટલી સમાજને આપની જરૂર છે માટે વગર વીલંબે સારા જૈન સમાજના ઉત્કર્ષ કાર્યમાં આપનો ફાળો નોંધાવો.

